

| | | | |
|---|---------|---|-----|
| योगमूर्तिमें सेरवा | ७२० | पुद्गलका लक्षण | ८०३ |
| गुणस्वानामोंमें सेरवा | ७२१ | परमाणुता स्वरूप | ८०४ |
| देवोंमें सेरवा | ७२३ | एह इन्द्रियोंका लक्षण | ८०४ |
| अगुण सेरवावालोंकी संख्या | ७२८ | कालद्रव्यका स्वरूप | ८०५ |
| गुण सेरवावालोंकी संख्या | ७३३ | अमूर्त इन्द्रियोंमें परिणमन कैसे | ८०७ |
| सेरवावालोंका क्षेत्र | ७३५ | पर्यायका काल | ८०८ |
| उपसाद क्षेत्रानयन | ७४६ | समय और प्रदेशका स्वरूप | ८०८ |
| गुणसेरवाका क्षेत्र | ७५८ | आवली, उच्छ्वास, स्तोत्र और लवण स्वरूप | ८०९ |
| अगुण सेरवाओंका स्पर्शन | ७६० | नाली मुहूर्त और मित्र मुहूर्तका स्वरूप | ८१० |
| तेजोसेरवाका स्पर्शन छानेके लिए गणितकी प्रक्रिया | ७६२ | भयवहारकाल मनुष्यलोकमें | ८११ |
| सब द्वीप-यमुदोंका प्रमाण | ७६८ | अतीतकालका प्रमाण | ८११ |
| एक योजनके अंगुल | ७६९ | वर्तमानकालका प्रमाण | ८१२ |
| राज्यका प्रमाण | ७७१ | भाविकालका प्रमाण | ८१२ |
| पद्म सेरवावालोंका स्पर्शन | ७७६ | एह इन्द्रियोंका अवस्थानकाल | ८१३ |
| गुणल सेरवावालोंका स्पर्शन | ७७७ | एह इन्द्रियोंका अवस्थान क्षेत्र | ८१४ |
| एह सेरवाओंका काल | ७७९ | पुद्गल इन्द्र्य और कालानुके प्रदेश | ८१६ |
| ” ” का अन्तर | ७८० | लोककाल और अलोककाल | ८१७ |
| सेरवारहित जीव | ७८५ | इन्द्रियोंकी संख्या | ८१७ |
| | | प्रदेशके तीन प्रकार | ८२१ |
| १६. भय्यमार्गणाधिकार | ७८६-८०० | षल, अषल षलाषल | ८२१ |
| भय्य और अमय्य जीव | ७८६ | पुद्गल धर्मणाके तैर्दस भेद | ८२२ |
| बो भय्य नी नहीं और अमय्य भी नहीं | ७८७ | धर्मणाओंका स्वरूप | ८२३ |
| अमय्य और भय्य जीवोंकी संख्या | ७८७ | धर्मणाओंमें अघन्य-उत्कृष्ट भेद | ८२८ |
| लोकमें इन्द्र्य परिवर्तन | ७८८ | पुद्गल इन्द्र्यके एह भेद | ८४६ |
| कर्म इन्द्र्य परिवर्तन | ७९० | स्कन्ध, देश और प्रदेश | ८४७ |
| स्वक्षेत्र परिवर्तन | ७९३ | इन्द्रियोंका उपकार | ८४८ |
| परक्षेत्र परिवर्तन | ७९३ | जीव और पुद्गलका उपकार | ८५० |
| काल परिवर्तन | ७९४ | कर्म पौद्गलिक है | ८५० |
| भव परिवर्तन | ७९५ | वचन अमूर्तिक नहीं है | ८५१ |
| भाव परिवर्तन | ७९६ | मनके पृथक् इन्द्र्य और परमाणुरूप होनेका निराकरण | ८५२ |
| | | पाँच प्राण धर्मणाओंका कार्य | ८५४ |
| १७. सम्पत्त्व मार्गणाधिकार | ८०१-८२१ | परमाणुओंके भय्यका कारण | ८५४ |
| सम्पत्त्वका लक्षण | ८०१ | उषा उसके नियम | ८५६ |
| सम्पत्त्वदर्शनके दो भेद | ८०१ | पाँच अस्तिकाय | ८६० |
| इन्द्र्य, अर्थ और तत्त्व नाम क्यों ? | ८०२ | नी-उदाय | ८६१ |
| एह इन्द्र्योंके अधिकार | ८०२ | गुणस्वानामोंमें जीवसंख्या | ८६२ |
| एह इन्द्र्योंके नामादि | ८०३ | उपशम धेणिमं जीवसंख्या | ८६४ |

विषय-सूची

| गुणस्थानों और मार्गणाओंमें | श्रीस प्ररूपणाओंका कथन | १५० | सामान्य नारक पर्याप्त असंयतमें | श्रीस प्ररूपणाओंका कथन | १५१ |
|------------------------------------|------------------------|-----|----------------------------------|------------------------|-----|
| पर्याप्त गुणस्थानोंमें | " | " | सामान्य नारक अपर्याप्त असंयत | " | |
| अपर्याप्त गुणस्थानोंमें | " | " | धर्मा सामान्य नारक | " | |
| सामान्य मिथ्यादृष्टियोंमें | " | १५१ | धर्मा सामान्य नारक पर्याप्त | " | |
| पर्याप्त मिथ्यादृष्टियोंमें | " | " | धर्मा सामान्य नारक अपर्याप्त | " | |
| अपर्याप्त मिथ्यादृष्टियोंमें | " | " | धर्मा मिथ्यादृष्टि | " | १५२ |
| सासादन गुणस्थानवालोंके | " | " | धर्मा नारक पर्याप्त मिथ्यादृष्टि | " | |
| पर्याप्तक सासादन गुण. | " | १५२ | धर्मा नारक अपर्याप्त | " | |
| अपर्याप्त सासादन गुण. | " | " | धर्मा पर्याप्त सासादन | " | |
| सम्यग्मिथ्यादृष्टिके | " | " | धर्मा मिथ्र गु. | " | |
| असंयत गुणस्थानवर्तीके | " | " | धर्मा असंयत गु. | " | |
| असंयत गुणस्थानवर्ती पर्याप्तके | " | १५२ | धर्मा पर्याप्त असंयत | " | १५३ |
| असंयत गुणस्थानवर्ती अपर्याप्तके | " | १५३ | धर्मा अपर्याप्त असंयत | " | |
| देशसंयत गुणस्थानवर्तीके | " | " | द्वितीयादि पृथ्वी नारक सामान्य | " | |
| प्रमत्त गुणस्थानवर्तीके | " | " | द्वितीयादि पृथ्वी नारक पर्याप्त | " | |
| क्षप्रमत्त गुणस्थानवर्तीके | " | " | द्वितीयादि पृथ्वी नारक अपर्याप्त | " | १५४ |
| अपूर्वकरण, गुणस्थानवर्तीके | " | " | द्वितीयादि पृथ्वी नारक सामान्य | " | |
| प्रथम भाग अनिवृत्तिकरणमें | " | १५४ | मिथ्यादृष्टि | " | |
| द्वितीय भाग | " | " | द्वितीयादि पृथ्वी नारक पर्याप्त | " | |
| तृतीय भाग | " | " | मिथ्यादृष्टि | " | |
| चतुर्थ भाग | " | " | द्वितीयादि पृथ्वी नारक अपर्याप्त | " | |
| पंचम भाग | " | " | मिथ्यादृष्टि | " | |
| सूक्ष्म साम्प्रदाय | " | १५५ | द्वितीयादि पृथ्वी नारक सासादन | " | |
| उपशान्त कथाय | " | " | द्वितीयादि पृथ्वी नारक सम्यग्- | " | |
| शीणकथाय | " | " | मिथ्यादृष्टि | " | १५६ |
| सयोगकेबली | " | " | द्वितीयादि पृथ्वी नारक असंयत | " | |
| अयोगकेबली | " | " | सम्यग्दृष्टि | " | |
| सिद्ध परमेष्ठी | " | " | सामान्य त्रिपंच | " | |
| सामान्य नारक | " | १५६ | त्रिपंच सामान्य पर्याप्तक | " | |
| सामान्य नारक पर्याप्त | " | " | त्रिपंच सामान्य अपर्याप्तक | " | |
| सामान्य नारक अपर्याप्त | " | " | " | " | १५७ |
| सामान्य नारक मिथ्यादृष्टि | " | " | " | " | |
| सामान्य नारक पर्याप्त मिथ्यादृष्टि | " | १५७ | " | " | |
| सामान्य नारक अपर्याप्त मि. | " | " | " | " | |
| सामान्य नारक सासादन | " | " | " | " | |
| सामान्य नारक मिथ्र | " | " | " | " | १५८ |
| सामान्य नारक असंयत | " | " | " | " | |

| | | | | |
|---|------|----------------------|--------------|------|
| वैक्रियिक काययोगी मिथ्यादृष्टि बौध प्ररूपणा | १०१२ | नपुंसकवेदि पर्याप्तक | बोध प्ररूपणा | १०२० |
| " " सासादन | " " | " अपर्याप्तक | " | १०२१ |
| " " सम्यग्मिथ्यादृष्टि | १०१३ | " मिथ्यादृष्टि | " | " |
| " " असंयत | " " | " " पर्याप्तक | " | " |
| वैक्रियिक मिथ्याबाध० | " " | " " अपर्याप्तक | " | " |
| " " मिथ्यादृष्टि | " " | " सासादन | " | १०२२ |
| " " सासादन | " " | " " पर्याप्तक | " | " |
| " " असंयत | १०१४ | " " अपर्याप्तक | " | " |
| आहारक काययोगी | " " | " सम्यग्मिथ्यादृष्टि | " | " |
| आहारक मिथ्यकाययोगी | " " | " असंयतसम्यग्दृष्टि | " | १०२३ |
| कामण काययोगी | " " | " " पर्याप्तक | " | " |
| " " मिथ्यादृष्टि | " " | " " अपर्याप्तक | " | " |
| " " सासादन सम्यग्दृष्टि | १०१५ | " " देशविरत | " | " |
| " " असंयत सम्यग्दृष्टि | " " | अपयत वेद | " | १०२४ |
| " " सयोगवैवलि | " " | श्रीषड्वयी | " | " |
| स्त्रीवेदी | " " | " पर्याप्तक | " | " |
| स्त्रीवेदि पर्याप्तक | १०१६ | " अपर्याप्तक | " | " |
| स्त्रीवेदि अपर्याप्तक | " " | " मिथ्यादृष्टि | " | १०२५ |
| स्त्रीवेदि मिथ्यादृष्टि | " " | " " पर्याप्तक | " | " |
| " " पर्याप्तक | " " | " " अपर्याप्तक | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " " | " सासादन | " | " |
| " " सासादन | १०१७ | " " पर्याप्तक | " | १०२६ |
| " " पर्याप्तक | " " | " " अपर्याप्तक | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " " | " सम्यग्मिथ्यादृष्टि | " | " |
| " " सम्यग्मिथ्यादृष्टि | " " | " असंयत सम्यग्दृष्टि | " | " |
| " " असंयत | १०१८ | " " पर्याप्तक | " | " |
| स्त्रीवेदि देशविरत | " " | " " अपर्याप्तक | " | १०२७ |
| स्त्रीवेदि प्रमत्त | " " | " " देशविरत | " | " |
| " " अप्रमत्त | " " | " " प्रमत्तसंयत | " | " |
| " " अपूर्वकरण | " " | " " अप्रमत्तसंयत | " | " |
| " " अनिपुत्तिकरण | १०१९ | " " अपूर्वकरण | " | " |
| पुंवेदि | " " | " " प्रथम अतिकृति. | " | १०२८ |
| " " पर्याप्तक | " " | " " द्वितीय अतिकृति | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " " | अक्षय | " | " |
| " " मिथ्यादृष्टि | १०२० | कुचति कुचुप्रशानि | " | " |
| " " पर्याप्तक | " " | " " पर्याप्तक | " | १०२९ |
| " " अपर्याप्तक | " " | " " अपर्याप्तक | " | " |
| नपुंसकवेदि | " " | " " मिथ्यादृष्टि | " | " |

| विक काययोगी | मिथ्यादृष्टि | वीस प्ररूपणा | १०१२ | नपुंसकवेदि पर्याप्तक | शोस प्ररूपणा | १०२० |
|-----------------------|---------------------|--------------|------|----------------------|--------------|------|
| " | सासादन | " | " | अपर्याप्तक | " | १०२१ |
| " | सम्यग्मिथ्यादृष्टि | " | १०१३ | मिथ्यादृष्टि | " | " |
| " | असंयत | " | " | पर्याप्तक | " | " |
| विक मिथ्यकाय० | " | " | " | अपर्याप्तक | " | " |
| " | मिथ्यादृष्टि | " | " | सासादन | " | १०२२ |
| " | सासादन | " | " | पर्याप्तक | " | " |
| " | असंयत | " | १०१४ | अपर्याप्तक | " | " |
| हारक काययोगी | " | " | " | सम्यग्मिथ्यादृष्टि | " | " |
| हारक मिथ्यकाययोगी | " | " | " | असंयतसम्यग्दृष्टि | " | १०२३ |
| मर्मण काययोगी | " | " | " | पर्याप्तक | " | " |
| " | मिथ्यादृष्टि | " | " | अपर्याप्तक | " | " |
| " | सासादन सम्यग्दृष्टि | " | १०१५ | देशविरत | " | " |
| " | असंयत सम्यग्दृष्टि | " | " | अपगत वेद | " | १०२४ |
| " | सयोगकेवलि | " | " | क्रोशकपायी | " | " |
| श्रीवेदी | " | " | " | पर्याप्तक | " | " |
| श्रीवेदि पर्याप्तक | " | " | १०१६ | अपर्याप्तक | " | " |
| श्रीवेदि अपर्याप्तक | " | " | " | मिथ्यादृष्टि | " | १०२५ |
| श्रीवेदि मिथ्यादृष्टि | " | " | " | पर्याप्तक | " | " |
| " | पर्याप्तक | " | " | अपर्याप्तक | " | " |
| " | अपर्याप्तक | " | " | सासादन | " | " |
| " | सासादन | " | १०१७ | पर्याप्तक | " | १०२६ |
| " | पर्याप्तक | " | " | अपर्याप्तक | " | " |
| " | अपर्याप्तक | " | " | सम्यग्मिथ्यादृष्टि | " | " |
| " | सम्यग्मिथ्यादृष्टि | " | " | असंयत सम्यग्दृष्टि | " | " |
| " | असंयत | " | १०१८ | पर्याप्तक | " | " |
| श्रीवेदि देशविरत | " | " | " | अपर्याप्तक | " | १०२७ |
| श्रीवेदि प्रमत्त | " | " | " | देशविरत | " | " |
| " | अप्रमत्त | " | " | प्रमत्तसंयत | " | " |
| " | अपूर्वकरण | " | " | अप्रमत्तसंयत | " | " |
| " | अनिवृत्तिकरण | " | १०१९ | अपूर्वकरण | " | " |
| पुंवेदि | " | " | " | प्रथम अनिवृत्ति. | " | १०२८ |
| " | पर्याप्तक | " | " | द्वितीय अनिवृत्ति | " | " |
| " | अपर्याप्तक | " | " | अकपाय | " | " |
| " | मिथ्यादृष्टि | " | १०२० | कुमति कुपुतमानि | " | " |
| " | पर्याप्तक | " | " | पर्याप्तक | " | १०२९ |
| " | अपर्याप्तक | " | " | अपर्याप्तक | " | " |
| " | " | " | " | मिथ्यादृष्टि | " | " |

| वैदिक काययोगी | मिथ्यादृष्टि | बीस प्ररूपणा | १०१२ | नपुंगकवेदि पर्याप्तक | बीस प्ररूपणा | १०२० |
|-------------------------|--------------------|--------------|------|----------------------|--------------|------|
| " | सासादन | " | " | अपर्याप्तक | " | १०२१ |
| " | साम्यमिथ्यादृष्टि | " | १०१३ | मिथ्यादृष्टि | " | " |
| " | असंयत | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| वैदिक मिश्रणाय० | " | " | " | अपर्याप्तक | " | " |
| " | मिथ्यादृष्टि | " | " | सासादन | " | १०२२ |
| " | सासादन | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| " | असंयत | " | १०१४ | " अपर्याप्तक | " | " |
| आहारक काययोगी | " | " | " | साम्यमिथ्यादृष्टि | " | " |
| आहारक मिश्रणाययोगी | " | " | " | असंयतसाम्यदृष्टि | " | १०२३ |
| कामण काययोगी | " | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| " | मिथ्यादृष्टि | " | " | " अपर्याप्तक | " | " |
| " | सासादन साम्यदृष्टि | " | १०१५ | " देहाविरत | " | १०२४ |
| " | असंयत साम्यदृष्टि | " | " | अपगत वेद | " | " |
| " | सयोगत्रेवलि | " | " | क्रोधकपायी | " | " |
| स्त्रीवेदी | " | " | " | पर्याप्तक | " | " |
| स्त्रीवेदि पर्याप्तक | " | " | १०१६ | " अपर्याप्तक | " | " |
| स्त्रीवेदि अपर्याप्तक | " | " | " | मिथ्यादृष्टि | " | १०२५ |
| स्त्रीवेदि मिथ्यादृष्टि | " | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| " | पर्याप्तक | " | " | " अपर्याप्तक | " | " |
| " | अपर्याप्तक | " | " | सासादन | " | " |
| " | सासादन | " | १०१७ | " पर्याप्तक | " | १०२६ |
| " | पर्याप्तक | " | " | " अपर्याप्तक | " | " |
| " | अपर्याप्तक | " | " | साम्यमिथ्यादृष्टि | " | " |
| " | साम्यमिथ्यादृष्टि | " | " | असंयत साम्यदृष्टि | " | " |
| " | असंयत | " | १०१८ | " पर्याप्तक | " | " |
| स्त्रीवेदि देहाविरत | " | " | " | " अपर्याप्तक | " | १०२७ |
| स्त्रीवेदि प्रमत्त | " | " | " | देहाविरत | " | " |
| " | अप्रमत्त | " | " | प्रमत्तसंयत | " | " |
| " | अपूर्वकरण | " | " | अप्रमत्तसंयत | " | " |
| " | अनिवृत्तिकरण | " | १०१९ | अपूर्वकरण | " | " |
| पुंवेदि | " | " | " | प्रथम अनिवृत्ति. | " | १०२८ |
| " | पर्याप्तक | " | " | द्वितीय अनिवृत्ति | " | " |
| " | अपर्याप्तक | " | " | अकपाय | " | " |
| " | मिथ्यादृष्टि | " | १०२० | कुमति कुशुलजानि | " | " |
| " | पर्याप्तक | " | " | " पर्याप्तक | " | १०२९ |
| " | अपर्याप्तक | " | " | " अपर्याप्तक | " | " |
| नपुंगकवेदि | " | " | " | " मिथ्यादृष्टि | " | " |

| तेजोल्लेख्या सम्मन्निध्या. | बीस प्ररूपणा | १०४७ | दुबललेख्या अग्रमतसंयत | बीस प्ररूपणा | १०५५ |
|----------------------------|--------------|------|-------------------------|--------------|------|
| " असंयत | " | " | अभव्य | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | १०४८ | सम्यग्दृष्टि अपर्याप्तक | " | १०५६ |
| " देशविरत | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| " प्रमत | " | " | " अपर्याप्तक | " | " |
| " अग्रमत | " | " | वाग्यिक सम्यग्दृष्टि | " | १०५७ |
| पद्मलेख्या | " | १०४९ | " पर्याप्तक | " | " |
| " पर्याप्तक | " | " | अपर्याप्तक | " | " |
| " अपर्याप्तक | " | " | असंयत | " | " |
| " भिख्यादृष्टि | " | " | पर्याप्त असंयत | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | अपर्याप्त असंयत | " | १०५८ |
| " " अपर्याप्तक | " | १०५० | " देशविरत | " | " |
| " सासादन | " | " | वेदक सम्यग्दृष्टि | " | " |
| " " पर्याप्त | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| " " अपर्याप्त | " | " | " अपर्याप्तक | " | " |
| " सम्यग्मिध्यादृष्टि | " | " | असंयत | " | १०५९ |
| " असंयत सम्य. | " | १०५१ | " " पर्याप्तक | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | " " अपर्याप्तक | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | " | " देशविरत | " | " |
| " देशविरत | " | " | " प्रमतसंयत | " | " |
| " प्रमतसंयत | " | " | " अग्रमतसंयत | " | १०६० |
| " अग्रमतसंयत | " | १०५२ | उपशम सम्यग्दृष्टि | " | " |
| शुक्ललेख्या | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| " पर्याप्तक | " | " | अपर्याप्तक | " | " |
| " अपर्याप्तक | " | " | असंयत | " | " |
| " भिख्यादृष्टि | " | " | " " पर्याप्तक | " | १०६१ |
| " " पर्याप्तक | " | १०५३ | " " अपर्याप्तक | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | " | " देशविरत | " | " |
| " सासादन | " | " | " प्रमत | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | " अग्रमत | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | " | संज्ञी | " | १०६२ |
| " सम्यग्मिध्यादृष्टि | " | १०५४ | संज्ञी पर्याप्तक | " | " |
| " असंयत सम्य. | " | " | संज्ञी अपर्याप्तक | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | संज्ञी भिख्यादृष्टि | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | " | " " पर्याप्तक | " | " |
| " देशविरत | " | " | " " अपर्याप्तक | " | १०६३ |
| " प्रमत संयत | " | १०५५ | " सासादन | " | " |

| तेजोलेखा सम्बन्धिता. | बीस प्रकरण | १०४७ | गुरुजलेखा अग्रमतसंयुक्त | बीस प्रकरण | १०५९ |
|-------------------------|------------|------|--------------------------|------------|------|
| " अंत्यत | " | " | " अमन्य | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | १०४८ | सम्पन्नदृष्टि अपर्याप्तक | " | १०५६ |
| " देहाविरत | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| " प्रमत्त | " | " | " अपर्याप्तक | " | " |
| " अग्रमत्त | " | " | शाब्दिक सम्पन्नदृष्टि | " | १०५७ |
| पञ्चलेखा | " | १०४९ | " पर्याप्तक | " | " |
| " पर्याप्तक | " | " | " अपर्याप्तक | " | " |
| " अपर्याप्तक | " | " | " अंत्यत | " | " |
| " सिध्दादृष्टि | " | " | " पर्याप्त अंत्यत | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | " अपर्याप्त अंत्यत | " | १०५८ |
| " " अपर्याप्तक | " | १०५० | " देहाविरत | " | " |
| " शास्त्रादन | " | " | वेदक सम्पन्नदृष्टि | " | " |
| " " पर्याप्त | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| " " अपर्याप्त | " | " | " अपर्याप्तक | " | " |
| " सम्बन्धिसम्पन्नदृष्टि | " | " | " अंत्यत | " | १०५९ |
| " अंत्यत सम्ब. | " | १०५१ | " " पर्याप्तक | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | " " अपर्याप्तक | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | " | " देहाविरत | " | " |
| " देहाविरत | " | " | " प्रमत्तसंयुक्त | " | " |
| " प्रमत्तसंयुक्त | " | " | " अग्रमतसंयुक्त | " | १०६० |
| " अग्रमतसंयुक्त | " | १०५२ | उपरम सम्पन्नदृष्टि | " | " |
| गुरुजलेखा | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| " पर्याप्तक | " | " | " अपर्याप्तक | " | " |
| " अपर्याप्तक | " | " | " अंत्यत | " | " |
| " सिध्दादृष्टि | " | " | " " पर्याप्तक | " | १०६१ |
| " " पर्याप्तक | " | १०५३ | " " अपर्याप्तक | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | " | " देहाविरत | " | " |
| " शास्त्रादन | " | " | " प्रमत्त | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | " अग्रमत्त | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | " | संज्ञी | " | १०६२ |
| " सम्बन्धिसम्पन्नदृष्टि | " | १०५४ | संज्ञी पर्याप्तक | " | " |
| " अंत्यत सम्ब. | " | " | संज्ञी अपर्याप्तक | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | संज्ञी सिध्दादृष्टि | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | " | " " पर्याप्तक | " | " |
| " देहाविरत | " | " | " " अपर्याप्तक | " | १०६३ |
| " प्रमत्तसंयुक्त | " | १०५५ | " शास्त्रादन | " | " |

ज्ञानमार्गणाधिकारः ॥१२॥

अनंतरं धीनेमिचंद्रसैद्धांतचक्रवर्तिगच्छु ज्ञानमार्गणेयं पेञ्चलुपक्रमिति निरुक्तिपूर्वकं ज्ञानसामान्यलक्षणं पेञ्चपद ।

जाणइ तिकालेविसए दळ्वगुणे पज्जए य बहुभेदे ।

पच्चकरं च परोक्षं अणेण णाणेचि षं वेत्ति ॥२९॥

जानाति त्रिकालैविषयान् द्रव्यगुणान् पर्यायांश्च बहुभेदान् । प्रत्यक्षं परोक्षमनेन ज्ञानमिति इदं श्रुतिं ॥

त्रिकालविषयान् घृतवत्सर्वद्वर्तमानकालगोचरंगच्छुप बहुभेदान् जीवादि ज्ञानादि स्यादरादि नानाप्रकारंगच्छुप द्रव्यगुणान् जीवपुद्गलधर्माध्यर्माऽऽकाशकालंगच्छे च द्रव्यंगच्छुपं ज्ञानवर्दान्तसम्यक्त्वगुणव्योर्ध्यादिवच्छुपं स्वसारसंगंधवर्णादिवच्छुपं गतिस्वित्त्ववगाहनवर्तनाहेतुत्वाविवच्छुपं धी गुणंगच्छुपं पर्यायांश्च स्यादरत्यप्रसत्त्वंगच्छुपमणुत्वस्कंधत्वंगच्छुपं अर्थव्यंजनभेदंगच्छुपं पेरुगुणं धी पर्यायंगच्छुपनात्मं प्रत्यक्षं स्पष्टं परोक्षं च अस्पष्टमुमागि अनेन जानातीति अरिगुमिदरिते दितु ज्ञानमितीदं ज्ञानमेदितीदं करणभूतमप्य स्यात्संध्यवसायात्मकमप्य जीवगुणं श्रुतिं पेञ्चरहंशादिवच्छुपं ज्ञानमे

शास्रवैः पूज्यपादारजं समवगुविरांसिद्धयम् ।

ऽदरां तीर्षंशरं वागुगुणं जिनं स्तुवे ॥१२॥

अथ धीनेमिचन्द्रसैद्धांतचक्रवर्ती ज्ञानमार्गणामुपक्रममाधो निरुक्तिपूर्वकं ज्ञानसामान्यलक्षणमाह—

त्रिकालविषयान् घृतवत्सर्वद्वर्तमानकालगोचरान् बहुभेदान्—जीवादिज्ञानादिस्थावरादिनानाप्रकारान् द्रव्याणि जीवपुद्गलधर्माध्यर्माऽऽकाशकालाश्चानि, गुणान् ज्ञानवर्दान्तसम्यक्त्वगुणव्योर्ध्यादीन् स्वसारसंगंधवर्णादीन् गतिस्वित्त्ववगाहनवर्तनाहेतुत्वादीन् पर्यायांश्च स्यादरत्यप्रसत्त्वंगच्छुपं अणुत्वस्कंधत्वादीन् अर्थव्यंजनभेदान्ध्यांश्च आत्मप्रत्यक्षं स्पष्टं परोक्षं च अस्पष्टं अनेन जानातीति ज्ञानमितीदं करणभूतं स्वायंभ्यवसायात्मकं जीवगुणं

धी नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती ज्ञानमार्गणाको प्रारम्भ करते हुए निरुक्तिपूर्वक ज्ञानसामान्यलक्षण कहेते हैं—

त्रिकाल अर्थात् अतीत, अनागत और वर्तमान कालवर्ती घटित भेदोंको अर्थात् जीव आदि स्थावर आदि नाना प्रकारोंको, जीव पुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल नामक द्रव्योंको, ज्ञान दर्शन सम्यक्त्व सुख धीर्य आदि और स्वर्ण रस गन्ध वर्ण आदि गुणोंको, तथा गतिहेतुत्व, स्थितिहेतुत्व, अथवागहनहेतुत्व, वर्तनाहेतुत्व आदि पर्यायोंको, स्थावर प्रस आदिको, परमाणु सूक्ष्म आदिको अर्थपर्याय और व्यंजनपर्यायोंको इसके द्वारा प्रत्यक्ष अर्थात् स्पष्ट और परोक्ष अर्थात् अस्पष्ट रूपसे जानता है इसलिए अर्हन्त आदि इसे ज्ञान कहते हैं यह जीवका व्यवसायात्मक गुण है । यह ज्ञान ही प्रत्यक्ष और परोक्षके भेदसे दो

१. म त्रिकालादिए । २. त्रिकालगहितान् ।

मात्रोद्धानोत्पत्तिप्रतिपातित्वाऽन्वयविदमविवशेषरिपल्पद्रुयु । केवलज्ञानं क्षायिकमेव कुमेके दोहे
केवलज्ञानावरणवीर्यांतराय निरवरोपशयप्रादुर्भूतत्वविदं, क्षये भवं क्षयः प्रयोजनमस्येति या
क्षायिकं । येसलानुमात्मगे केवलज्ञानं प्रतिबंधकावस्थेयोरुद् शक्तिरूपविदं मिषुबंधित्वां प्रतिबंधक-
क्षयविदमे तद्रूपक्षयकुमेदितु ध्यक्त्यपेक्षोविदं काष्प्यत्वसंभारिदं क्षायिकमेदितु वेदल्पद्रुयु ।
आवरणशयमुंटागुत्तिरलु प्रादुर्भवति ये दो निरक्षिते तद्रूपस्थपेक्षयुक्तुदरिवं ।

अनंतरं मिष्याज्ञानोत्पत्तिकारणत्वरूपस्वामिभेदगळं वेदरूपं :-

अण्णाणतियं होदि हु सण्णाणतियं खु मिच्छ अणउदप ।

णवरि-विमंगं णाणं पंचिदियसण्णिपुण्णेव ॥३०१॥

अज्ञानप्रयं भवति सलु सग्नानप्रयं रलु मिष्यात्वानंतानुबंध्युदये । विदोपो विभयं ज्ञानं
पंचेदियसंतिपुणं एव ॥

बायुबोडु मतिप्र-तायधिगळु सम्पदर्शनपरिणतजीवसंबंधिं सम्पज्ञानप्रयं संतिपंचेदिय-
पम्प्राज्ञीवनविशेषग्रहणरूपाकारसहितोपयोगलक्षणमप्य तत् सम्पज्ञानमे मिष्यादर्शानंतानुबंधि-
कपायान्यत्वमोदयमागुत्तिरलुत्तत्त्वार्थध्यानपरिणतजीवसंबंधिमिष्याज्ञानप्रयं सलु स्फुटमवकुं ।
णवरि विशेषमुंटागुत्तिरलु आधुबोडयधिज्ञानविपर्यायरूपमप्य विभंगमेव पेशरनुक्तु मिष्याज्ञानमु

ज्ञानोत्पत्तिप्रतिपातित्वाभावात् अविशया ज्ञातव्या । केवलज्ञानं पुनः क्षायिकमेव भवति केवलज्ञानावरणवीर्या-
न्वरायनिरवरोपशयेन प्रादुर्भूतत्वात् । क्षये भवं, क्षयः प्रयोजनमस्येति वा क्षायिकम् । यद्यप्यात्मनः केवलज्ञानं
प्रतिबन्धकावस्थायां शक्तिरूपेण विद्यमानं तथापि प्रतिबन्धकशेषमेव तद्रूपानिः- हत्वा इति व्यस्त्यपेक्षया
कार्यत्वमवशान् क्षायिकमित्युक्तं । आवरणत्वे सति 'प्रादुर्भवति इति निरुक्तेः तद्व्यस्त्यपेक्षत्वात् ॥३००॥

यद्यपि मिष्याज्ञानोत्पत्तिकारणत्वरूपस्वामिभेदानात्—

सम्पदर्शनपरिणतजीवसंबन्धिप्रतिपुत्रवधिभंगं सम्पज्ञानप्रयं संतिपंचेदियपम्प्राज्ञीवनविशेष-
ग्रहणरूपाकारसहितोपयोगलक्षणं तदेव मिष्यादर्शानंतानुबंधिपर्यायरूपमवशान् सति अतत्त्वार्थध्यानपरिणत-
जीवमन्वयिमिष्याज्ञानप्रयं सलु-स्फुटं भवति । नवरीति विशेषीरित 'सद्वधिज्ञानविपर्ययरूपं विमलज्ञानमं

हं । जो क्षयोपशमसे होते हैं अथवा क्षयोपशम जिनका प्रयोजन है वे क्षायोपशमिक हैं ।
क्षायोपशमिक ज्ञानोंमें यद्यपि वस-उत्त आवरण सम्बन्धी देशपाती स्पर्शकोंका उदय विद्यमान
रहता है तथापि वे ज्ञानकी उत्पत्तिके प्रतिपाती नहीं हैं इसलिये यहाँ उनकी विद्यता नहीं है ।
किन्तु केवलज्ञान क्षायिक ही होता है क्योंकि यह केवल ज्ञानावरण तथा धीर्यान्तरायके
सम्पूर्ण क्षयसे प्रकट होता है । जो क्षयसे होता है या क्षय जिसका प्रयोजन है यह क्षायिक
है । यद्यपि आत्मामें केवलज्ञान प्रतिबन्धक अवस्थामें शक्तिरूपसे विद्यमान है तथापि
प्रतिबन्धकके क्षयसे ही यह प्रकट होता है इसलिये व्यक्तिकी अपेक्षा कार्य होनेसे उसे क्षायिक
कहा है । आवरणका क्षय होनेपर प्रकट होता है, ऐसी निरुक्ति होनेसे उसकी व्यक्तिकी
अपेक्षा है ॥३००॥

अथ मिष्याज्ञानकी उत्पत्तिके कारण, स्वरूप और स्वामीभेदोंको कहते हैं—

जो सम्पद्गृष्टि-जीवके मति, श्रुत और अद्यधि नामक तीन सम्पद्गज्ञान हैं, संज्ञी
पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवके विशेष-ग्रहणरूप आकार सहित उपयोग जिनका लक्षण है, वे ही
तीनों मिष्यादर्शन और अनन्तानुबन्धी कपायमेंसे किसी एक-प्रायका उदय होनेपर
अतत्त्वार्थध्यानरूप-परिणत मिष्यादृष्टि जीवके मिष्याज्ञान, किन्तु इतना विशेष है

कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिका

अनन्तरं मिथ्याज्ञानविशेषलक्षणं गायत्रयदिवं पेञ्चपं ।

विसर्जंतकूटपंजरबंधादिसु विणुवएसकरणेण ।

जा खलु पवट्टइ मई मइअण्णाणेत्ति णं वेत्ति ॥३०३॥

विषयंत्रकूटपंजरबंधादियु विनोपदेशकरणेन । या खलु प्रवर्तते मतिर्मत्पज्ञानमिति परोपदेशकरणमिल्लदे प्रवर्तिसुमुमुदे मत्पज्ञानमे दु अहंदादिगळु पेञ्चरत्ति परस्परसं मारणशक्तिविशिष्टतैलकूर्पूरादिद्रव्यं विषयं बुद्धवुं । सिहव्याघ्रादि क्रूरमृगंगळु धरणात्यं कृतच्छागादिजीवमनुळ्ळ काष्ठादिरचितमप्पुदु तत्पावनिशेषमात्रकवाटसंघटीकरणव लितमप्पुदु यंत्रमे बुद्धवुं । मत्स्यकच्छमूपकादिप्रहणात्यंमवष्टब्धकाष्ठादिमयं कूटमे तित्तिरीलावकहरिणादिवारणात्यं विरचितप्रंयिविशेषकलितरज्जुमयमप्प जालं पंजरमे गजोष्टादिवारणात्यंमवष्टब्धमप्पगतंमुखक्रीलितप्रंयिविशेषारिरज्जु रचनाविशेषं बंधमे दु आदिशब्ददिवं पक्षिगळु पक्षमं पत्तिसि सिक्किरत्तळे दु वीषबंधाप्रबोळु तोडद पिप्पलनिच चिररुणबंधमुं । गृहहरिणादिभृंगलग्नसूत्रप्रंयिविशेषादिगळ्ये प्रहणमनसुमुपदेशपूठवंक संभवति नेतरदेशसंपतादियु गुणस्थानेषु तपाविषयतपोविशेषाभावात् ॥३०२॥ अथ मिथ्याज्ञानविशेष

गायत्रयेणाह—

विषयन्त्रकूटपंजरबन्धादियु जीवमारणबन्धनहेतुषु या मतिः परोपदेशकरणेन विना प्रवर्तते मत्पज्ञानमित्यहंदायो बुवन्ति । तत्र परस्परसंयोगजनितमारणशक्तिविशिष्टं तैलकूर्पूरादिद्रव्यं विषयं, व्याघ्रादिक्रूरमृगधारणार्थमभ्यन्तरीकृतच्छागादिजीवं काष्ठादिरचितं तत्पावनिशेषमात्रकवाटसंघटीकरण सूत्रक्रीलितं यन्त्रं, मत्स्यकच्छमूपकादिप्रहणार्थमवष्टब्धं काष्ठादिमयं कूटं, तित्तिरीलावकहरिणादिवारणा विरचितं प्रन्विशेषकलितरज्जुमयं जालं पञ्जरः, गजोष्टादिवारणार्थमवष्टब्धो गर्तंमुखक्रीलितप्रन्विनिच वारीरज्जु रचनाविशेषो बन्धः । आदिशब्देन पक्षिशालगनार्थं क्षीरंशुभ्राप्रशितनिप्पलनिर्वासादिचिर-

महामुनियोंके होता है, अन्य देशसंयत आदि गुणस्थानमें नहीं होता क्योंकि वहाँ उस प्रकार का तपविशेष नहीं है ॥३०२॥

अथ तीन गाथाओंसे मिथ्याज्ञानोंका विशेष लक्षण कहते हैं—

जीवोंको मारने और बन्धनमें हेतु विषय, यन्त्र, कूट, पंजर, बन्ध आदिमें विन परोपदेशके मति प्रवर्तित होती है वह मतिअज्ञान है ऐसा अहन्त भगवान् आदि कहते हैं परस्पर वस्तुके संयोगसे उत्पन्न हुई मारनेकी शक्तिसे युक्त तैल, रसकपूर आदि द्रव्य विषय हैं । सिंह, व्याघ्र आदि क्रूर जीवोंको पकड़नेके लिए, अन्दरमें बकरा आदि रखकर लकड़ी आदिसे बनाया गया, जिसमें पैर रखते ही द्वार बन्द हो जाता हो, ऐसा सूत्रसे क्रीलित यन्त्र होता है । मच्छ, कछुआ, चूहा आदि पकड़नेके लिए काष्ठ आदिसे रचे गयेको कूट कहते हैं । तीतर, लावक, हरिण आदि पकड़नेके लिये रस्सीमें अमुक प्रकारकी गाँठ देकर बनाये गये जालको पंजर कहते हैं । हाथी, ऊँट आदि पकड़नेके लिए गदा रोदकर और उसका मुख ढाँककर या रस्सी आदिका फन्दा लगाकर जो विशेष रचना की जाती है उसे बन्ध कहते हैं । आदि शब्दसे पक्षियोंके पंख चिपकाने के लिए लम्बे बाँस आदिके अग्रभागमें पिपल आदिका चिकना रस गोंद वगैरह लगाना और हरिण आदिके सींगके अग्रभागमें फन्दा आदि डालना आदि लिया जाता है । इस प्रकारके कार्योंमें जो बिना परोपदेशके स्वयं

इदं नटापारणारितपरमं मुं चोदनापदात्तं पदपदार्थभावनानिधिनिधोग भूतचतुष्टय तत्वमूलात्तच्चतुरार्यं तदव्यभिक्तानां तत्सर्वं नून्यतादिप्रतिपादकांगमाभारतनितमप्य भासमदेत्तं च सागानमे बुद्धिनु निरचैतत्त्वदुबुद्धेर्बोहे बुद्धेष्टविरुद्धार्थविपयत्वविवं ।

गंचविंशति-
मू. तज्ञाना-

विवरीयमोहिणाणं ररओयसमियं च फेम्मयीजं च ।
वेमंगोचि पउच्छइ समत्तणाणीण समयम्मि ॥३०६॥

विपरीतायपितानं क्षयोपनामिकं च कर्मवोजं च । विभंग इति प्रोच्यते समाप्तज्ञानिनो समये ॥

मिथ्यादर्शनकरुणकृतमप्य जीवमे अवपितानापरणीयसोप्यंतरायशयोपनामजनितमप्युक्तं इत्य-
शेदकालभावमाधितमप्युक्तं हविद्रव्यविपयमप्युक्तं आभासमपदात्तार्थगच्छोक्तं विपरीतप्राहकमप्युक्तं इत्य-
तिव्यंमनुष्यगतितगच्छोक्तं तीव्रकायलेन इत्यसंयमरूपगुरुप्रत्ययमप्युक्तं च शब्दविभं देवनारकगति-
गच्छोक्तं भवप्रत्ययमप्युक्तं मिथ्यात्वाविकर्मपंचयोजमप्युक्तं चणाच्छविं देवतानुं नारकादियोजु
पूर्वंभवदुराधारमंचितदु. कर्मकल्पतोमनु. तवेदनाभिभजनितसाभ्यदर्शनतानरूपपरमं योजमप्युक्तं ।
एवंविपयमप्यपितानं विभंगमे विनु समाप्तज्ञानिगच्छ केवलज्ञानिगच्छ समये स्यादाज्ञानाहप्रदीपु ।
प्रोच्यते वेदत्वदुत्तु । एते बोधे नारकविभंगज्ञानदिवं वेदनाभिभवतरकारणदर्शनसमत्तानुसंधान-

१०

हर्षवंचान्तरादिस्वैच्छादित्तद्वयपात्ररूपमनुभवागोहिगयायागदिगृहृत्पात्रमंचितद्वयद्वयत्वात्पारणादिगच्छ. कर्मवोहेत्त
पदात्तपदात्तार्थभावनानिधिनिधोगमूत्रचतुष्टयमप्युक्तं तदव्यभिक्तानां तत्सर्वं नून्यतादिप्रतिपादकांगमाभारतनितमप्य भासमदेत्तं च सागानमे बुद्धिनु निरचैतत्त्वदुबुद्धेर्बोहे बुद्धेष्टविरुद्धार्थविपयत्वविवं ॥३०४॥

१५

मिथ्यादर्शनकरुणकृतमप्य जीवमे अवपितानापरणीयसोप्यंतरायशयोपनामजनितमप्युक्तं इत्य-
शेदकालभावमाधितमप्युक्तं हविद्रव्यविपयमप्युक्तं आभासमपदात्तार्थगच्छोक्तं विपरीतप्राहकमप्युक्तं इत्य-
तिव्यंमनुष्यगतितगच्छोक्तं तीव्रकायलेन इत्यसंयमरूपगुरुप्रत्ययमप्युक्तं च शब्दविभं देवनारकगति-
गच्छोक्तं भवप्रत्ययमप्युक्तं मिथ्यात्वाविकर्मपंचयोजमप्युक्तं चणाच्छविं देवतानुं नारकादियोजु
पूर्वंभवदुराधारमंचितदु. कर्मकल्पतोमनु. तवेदनाभिभजनितसाभ्यदर्शनतानरूपपरमं योजमप्युक्तं ।
एवंविपयमप्यपितानं विभंगमे विनु समाप्तज्ञानिगच्छ केवलज्ञानिगच्छ समये स्यादाज्ञानाहप्रदीपु ।
प्रोच्यते वेदत्वदुत्तु । एते बोधे नारकविभंगज्ञानदिवं वेदनाभिभवतरकारणदर्शनसमत्तानुसंधान-

२०

गृह्यकर्म, त्रिदण्ड तथा जटा धारण आदि तपस्विक्रियांका कर्म, नैयायिकोंका पोटश पदार्थ
वाद, वैशेषिकोंका पदपदार्थवाद, मीमांसकोंका भावनानिधिनिधियोग, चार्वाकोंका भूत-
चतुष्टयवाद, मांकीकें पचोस तद्व, बौद्धोंका चार आर्यसत्य, विशानाद्वैत, सर्वानून्यवाद २५
आदिके प्रतिपादक आगमाभासोंसे होनेवाला जितना धुंमंज्ञानाभास है वह सब भूतअज्ञान
जानता । क्योंकि प्रत्यक्ष और अनुमानसे विरुद्ध अर्थको विषय करता है ॥३०४॥

मिथ्यादृष्टि जीवके अवपितानापरण और धीर्यान्तरायके क्षयोपनामसे उत्पन्न हुआ,
द्रव्य-शेदकाल-भावकी मर्यादाको लिये हुए रूपी द्रव्यको विषय करनेवाला, किन्तु देव
'वास' और पदार्थोंको विपरीत रूपसे ग्रहण करनेवाला अवपितान केवलज्ञानियोंके द्वारा १०
प्रतिपादित आगममें विभंग कहा जाता है । यह विभंग ज्ञान तिर्यंगगति और मनुष्यगतिमें
तीव्र कायलेन रूप द्रव्य संयमसे उत्पन्न होता है इसलिए, गुणप्रत्यय है । 'च' शब्दसे
देवगति और नरकगतिमें भवप्रत्यय है तथा मिथ्यात्व आदि कर्मोंके वन्धका बीज है । 'च'
शब्दसे कृदाचित् नरकगति आदिमें पृथंजन्ममें किये गये दुराचारमेंसे संबंधित छोटे कर्मोंके
फल तीव्र दुःख वेदनाके भोगनेसे होनेवाले सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान रूप धर्मका भी बीज है । ३५

स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुश्रोत्रगन्धभेदविचारं जातं पुष्टिदुदककुम्भिर्दारुमिन्द्रियमनस्सुगच्छो मतिज्ञानोत्पत्ति-
कारणत्वं पेक्षल्पदुदितु कारणभेदात् काव्यभेदः एदितु मतिज्ञानं पदप्रकारमेतु पेक्षल्पदुदुत् ।

मते प्रत्येकभौदोदु मतिज्ञानवर्क अवग्रहमुमीहपवापमुं धारणे एदितु नाल्कु नाल्कु भेदगळ-
पुवु-1 मदेते बोडे :- मानसोऽवग्रहः मानसीहा मानसोऽवायः मानसी धारणा एदितु नाल्कपुवु ४ ।
स्पर्शनजोऽवग्रहः स्पर्शनजेहे स्पर्शनजोऽवायः स्पर्शनजा धारणा एदितु नाल्कपुवु ४ । रसनजोऽवग्रहः
रसनजेहा रसनजोऽवायः रसनजा धारणा एदितु नाल्कपुवु ४ । घ्राणजोऽवग्रहः घ्राणजेहा
घ्राणजोऽवायः घ्राणजा धारणा एदितु नाल्कपुवु ४ । चाक्षुषोऽवग्रहः चाक्षुषीहा चाक्षुषोऽवायः
चाक्षुषी धारणा एदितु नाल्कपुवु ४ । श्रोत्रजोऽवग्रहः श्रोत्रजेहा श्रोत्रजोऽवायः श्रोत्रजा धारणा
एदितु नाल्कपुवु ४ । इतु मतिज्ञानं चतुर्विधप्रकारमक्कु २४ । मवग्रहादिगळो लक्षणमं मुदे
शास्त्रकारं ताने पेळ्दपं ।

वैजणअत्थअवग्रह भेदा हु इवंति पत्तपत्तथे ।

कमसो ते वावरिदा पढमं णहि चक्खुमणसाणं ॥३०७॥

व्यंजनार्थावग्रहभेदो खलु भवतः प्राप्ताप्राप्तात्थयोः । क्रमशस्तौ व्यापृतौ प्रथमो न हि
चक्षुर्मनसोः ॥

इन्द्रियाणि स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि । तेषु जातमुत्पन्नं अनिन्द्रियैन्द्रियजं, अनेन इन्द्रियमनसोर्मति-
ज्ञानोत्पत्तिकारणत्वं दर्शितम् । एवं च कारणभेदात्कार्यभेद इति मतिज्ञानं पदप्रकारमुक्तम् । पुनः प्रत्येकभेदेकस्य
मतिज्ञानस्य अवग्रहः ईहा अवायः धारणा चेति चत्वारो भेदा भवन्ति । यथा—मानसोऽवग्रहः मानसीहा
मानसोऽवायः मानसी धारणा इति चत्वारः । स्पर्शनजोऽवग्रहः, स्पर्शनजा ईहा स्पर्शनजोऽवायः स्पर्शनजा धारणा
इति चत्वारः । रसनजोऽवग्रहः रसनजा ईहा रसनजोऽवायः रसनजा धारणा इति चत्वारः । घ्राणजोऽवग्रहः
घ्राणजा ईहा घ्राणजोऽवायः घ्राणजा धारणा इति चत्वारः । चाक्षुषोऽवग्रहः चाक्षुषीहा चाक्षुषोऽवायः चाक्षुषी
धारणा ४ । श्रोत्रजोऽवग्रहः श्रोत्रजा ईहा श्रोत्रजोऽवायः श्रोत्रजा धारणा इति चत्वारः । एवं मतिज्ञानं
चतुर्विधविकल्पं भवति अवग्रहादीनां लक्षणं उत्तरत्र ग्रन्थकारः स्वयमेव वदयति ॥३०६॥

होती है । अर्थात् सूक्ष्म परमाणु आदि, अन्तरित शंख चक्रवर्ती आदि तथा दूरार्थं मेरु आदि-
को ज्ञाननेकी शक्ति उनमें नहीं है । इससे मतिज्ञानका स्वरूप कहा । वह मतिज्ञान अनिन्द्रिय
मन और इन्द्रियाँ स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्रसे उत्पन्न होता है । इससे इन्द्रिय और
मनको मतिज्ञानकी उत्पत्तिका कारण दिखलाया है । इस प्रकार कारणके भेदसे कार्यमें भेद
होनेसे मतिज्ञान छह प्रकारका कहा । पुनः प्रत्येक मतिज्ञानके अवग्रह, ईहा, अवाय और
धारणा ये चार भेद होते हैं । यथा—मानस अवग्रह, मानस ईहा, मानस अवाय और
मानसी धारणा । स्पर्शनजन्य अवग्रह, स्पर्शनजन्य ईहा, स्पर्शनजन्य अवाय और स्पर्शनजन्य
धारणा । रसनाजन्य अवग्रह, रसनाजन्य ईहा, रसनाजन्य अवाय और रसनाजन्य
धारणा । घ्राणज अवग्रह, घ्राणज ईहा, घ्राणज अवाय और घ्राणज धारणा । चाक्षुष अवग्रह,
चाक्षुषी ईहा, चाक्षुष अवाय और चाक्षुषी धारणा । श्रोत्रजन्य अवग्रह, श्रोत्रजन्य ईहा,
श्रोत्रजन्य अवाय और श्रोत्रजन्य धारणा । इस प्रकार मतिज्ञानके चौबीस भेद होते हैं ।
अवग्रह आदिका लक्षण आगे ग्रन्थकार स्वयं ही कहेंगे ॥३०६॥

१. च कारत्वमुक्तं । २. य योऽहा कथितं । ३. य विभेदं । ४. य गमने शास्त्रकारः ।

कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिका

ईहणकरणेण जदा गुणिण्णओ होदि सो अवाओ दु ।

कालंतरेवि णिण्णदवत्थुसुमरणस्स कारणं तुरियं ॥३०९॥

ईहनकरणेण यदा गुणिण्यो भवति तोऽयामस्तु । कालांतरेवि निर्णीतवस्तुस्मरणस्य कारणं

तुष्यं ॥

ईहनकरणेन विशेषाकांशकरणदिवं यज्जिह्वं यदा आगोन्मे ईहितविशेषार्थं गुणिण्यः उत्पन्ननिपतनपदाविशेषाविबिह्वर्गाऽइदमित्तु यलाकमे ये दित्तु यलाकाल्यकमे आणुदो दु गुनिदचय- मरुमागळु ताः अतु अवाय इति अवायमे दित्तु अवयवोत्पत्तिरवायः एव व्यपदेशमरुं । तु दावं वेत्ताकांशितविशेषकमे गुणिण्यमवायमे दित्तवधारणात्थमिदं दिव्यप्यासदिवं निर्णयं मिप्या- ज्ञानतेविदमवायमेतं दित्तु प्राह्यमरुमल्लि यज्जिह्वं स एवावायः आ अवायमे पुनः पुनः प्रवृत्ति- र्वाभ्यासजनितसंस्काररत्नरुमाणि कालांतरदोळं निर्णीतवस्तुस्मरणकारणत्वदिवं तुरियं चतुर्थं १०

बहुवहुविह्वं च सिप्पाणिस्सिदणुत्तं धुवं च इदरं च ।
तत्थेक्केक्के जादे छसीसं विसयभेदं तु ॥३१०॥

बहुवहुविधिनिर्णयानिःसृतानुक्तप्रुवं चेतारं च । तत्रैकस्मिन् जाते यदनिर्णयविशेषात्प्रवृत्तिभेदं तु ॥
अत्यंमुं ध्वंजनमुमेव मतिज्ञानविषयं द्वादशप्रकारमरुमेते दोषे बहुवहुविधयः सिप्रोऽनि-
सृतोऽनुक्तो प्रु वरचेति । यंतु यदप्रकारं । एक एकविशेषोऽनिर्णयः सृत् उक्तोऽप्रु वरचेति । यंतु
यदप्रकारमितरभेदं कूटि द्वादशविषयमरुमल्लि यद्विद्विद्वदविषयभेदंगळोळु एकैकस्मिन् १५

ईहनकरणेन विशेषाकांशप्रियायाः पदवान् यदा ईहितविशेषार्थं गुणिण्यः उत्पन्ननिपतनपदाविशेष-
पादिमिस्त्रिह्वं इयं यलाकैवेति यलाकाल्यस्य यः सुनिदचयो भवेत् तदा स अवाय इति व्यपदिश्यते । तुष्यः
प्रागावाऽऽशितविशेषकं गुणिण्योऽप्य इत्यवधारणार्थः । अनेन विषयविन निर्णयो मिप्याज्ञानतया अवायो २०
न भवतीति प्राह्यम् । ततः स एवावायः पुनः पुनः प्रवृत्तिरुभ्यासजनितसंस्काररत्नरु मूला कालान्तरेऽपि
निर्णीतवस्तुस्मरणकारणत्वेन तुष्यं चतुर्थं धारणात्थं ज्ञानं भवति ॥३०९॥
अर्थो व्यञ्जनं वा मतिज्ञानविषयः बहुः बहुविधः शिरः अनिमृत्तः अनुक्तो प्रु वरचेति पोडा । तथा
इतरोऽपि एकः एकविधः अनिमृत्तः वनः अप्रु वरचेति पोडा एवं द्वादशा भवति । तत्र द्वादशस्वपि

विशेषकी आकांशरूप ईहा ज्ञानके पश्चात् जय ईहित विशेष अर्थका सुनिर्णय हो
जाता है । जैसे ऊपर-नीचे होने तथा पंखोंके हिलाने आदि चिह्नोंसे यह यलाका ही है इस
प्रकार निदचयके होनेको अवाय कहते हैं । 'तु' शब्द पहले आकांशा क्रिये गये विशेष वस्तुके
निर्णयको ही अवाय कहते हैं यह अवधारणके लिए है । इससे यह ग्रहण करना चाहिए कि
वस्तु तो कुछ और है और निर्णय अन्य वस्तुका किया तो वह अवाय नहीं है । वही अवाय
धार-धार प्रवृत्तिरूप अभ्याससे उत्पन्न संस्काररूप होकर कालान्तरमें भी निर्णीत वस्तुके
स्मरणमें कारण होता है तो धारण नामक चतुर्थं ज्ञान होता है ॥३०९॥
अर्थ या ध्वंजनरूप मतिज्ञानका विषय धारण प्रकारका होता है—यह, बहुविध,
शिर, अनिमृत्त, अनुक्त, ध्रुय ये छह तथा इनके प्रतिपक्षी एक, एकविध, अक्षिप्र, निमृत्त, उक्त

१. य ए अवयवोत्पादः अवाय । २. य काऽऽशित विं । ३. 'सं पश्चात् च' ।

अल्लि श्रुतज्ञानवक्रानक्षरात्म अक्षरात्मकभेदद्वंद्वं द्विभेदमवक्रु मल्लि अनक्षरात्मकमप्य श्रुत-
भेददोऽप्यर्थावप्यर्थाविसमासलक्षणसर्वजघन्यज्ञानं मोदल्लोऽडु स्वोत्कृष्टपर्यन्तं असंख्येयलोकमात्राऽ
ज्ञानविकल्पंगळपुववुमसंख्येयलोकमात्रवारपदस्थानवृद्धिचिदं संवृङ्गंगळपुपु । अक्षरात्मकं श्रुतज्ञानं
द्विरूपवर्गंधारोत्पन्नपट्टवर्गमप्ये कट्टुमंत्रं पेशरनुळळोडिडनोऽंनितोऽळु रूपुगळनितुमेकहपोनंगळ-
पुवुमनितुमक्षरंगळमपुनरुक्षताक्षरंगळनाक्षयिसि संख्यातविकल्पमवक्रुं । विवक्षितार्थहिभिष्यवित-
निमित्तपुनरुक्षताक्षरग्रहणदोऽळं नोडलधिकप्रमाणमुमवक्रुमं बुवत्यं ।

अनंतरं श्रुतज्ञानवक्रं प्रकारान्तरदिवं भेदप्ररूपणात्यंमागि गायाद्वयमं पेळदपं :-

पञ्जापक्खरपदसंघादं पडिवत्तियाणि जोगं च ।

दुगवारपाहुडं च य पाहुडयं वत्थु पुळ्वं च ॥३१७॥

पथ्याणक्षरपदसंघातं प्रतिपत्तिकानुयोगं च । द्विकवारप्राभूतं च च प्राभूतकं वस्तुपूर्वं च ॥ १०

तेसिं च समासेहि य वीसविधं वा हु द्दोदि सुदणाणं ।

आवरणस्स वि भेदा तत्तियमेत्ता हवतित्ति ॥३१८॥

तेषां च समासेश्च विज्ञातिविधं वा हि भवति श्रुतज्ञानं । आवरणस्यापि भेदास्तायन्मात्रा
भवन्तीति ॥

श्रुतज्ञानस्य अनक्षरात्मकाक्षरात्मको द्वौ भेदौ, तत्र अनक्षरात्मके श्रुतज्ञाने पर्यायपर्यायिसमासलक्षणे १५
सर्वजघन्यज्ञानमादि कृत्वा स्वोत्कृष्टपर्यन्तं असंख्येयलोकमात्रा ज्ञानविकल्पा भवन्ति । ते च असंख्येयलोकमात्र-
वारपदस्थानवृद्ध्या संविधा भवन्ति । अक्षरात्मकं श्रुतज्ञानं द्विरूपवर्गंधारोत्पन्नपट्टवर्गस्य एकद्वन्मात्रो भवन्ति
रूपाणि एकरूपोनानि सन्ति तावन्ति अक्षराणि अपुनरुक्षताक्षराण्याश्रित्य संख्यातविकल्पं भवति । विवक्षितार्था-
भिष्यन्तिनिमित्तं पुनरुक्षाक्षरग्रहणं ततोऽधिकप्रमाणं भवतीत्यर्थः ॥३१६॥ अथ श्रुतज्ञानस्य प्रकारान्तरेण भेदान्
गायाद्वयेनाह— २०

श्रुतज्ञानके अक्षरात्मक और अनक्षरात्मक ये दो भेद हैं । अनक्षरात्मक श्रुतज्ञानके पर्याय
और पर्यायसमास दो भेद हैं । इसमें सर्वजघन्य ज्ञानसे लेकर अपने उत्कृष्ट पर्यन्त असंख्यात
लोक प्रमाण ज्ञानके भेद होते हैं । वे भेद असंख्यात लोकमात्र वार पदस्थानपतित वृद्धिको
लिये हुए हैं । अक्षरात्मक श्रुतज्ञानके संख्यात भेद हैं । सो द्विरूप वर्गंधारामें उत्पन्न छठे
वर्गका, जिसका प्रमाण एकट्टी है उसके प्रमाणमें-से एक कम करनेपर जितने अपुनरुक्ष अक्षर २५
होते हैं उतने हैं । इसका आशय यह है कि विवक्षित अर्थको प्रकट करनेके लिए पुनरुक्ष
अक्षरोंके ग्रहण करनेपर उससे अधिक प्रमाण हो जाता है ॥३१६॥

विशेषार्थ—दोसे लेकर वर्ग करते जानेको द्विरूपवर्गंधारा कहते हैं । जैसे दोका प्रथम
वर्ग चार होता है । चारका वर्ग सोलह होता है । सोलहका वर्ग दो सौ छप्पन होता है ।
दो सौ छप्पनका वर्ग पैंसठ हजार पाँच सौ छचीस होता है जिसको पण्णट्टी कहते हैं । ३०
पण्णट्टीका वर्ग यादाल और यादालका वर्ग एकट्टी प्रमाण होता है यही छठा वर्गस्थान है ।
इसमें एक कम करनेसे श्रुतज्ञानके समस्त अपुनरुक्ष अक्षर होते हैं । उतने ही अक्षरात्मक
श्रुतज्ञानके भेद हैं ।

अथ अन्य प्रकारसे श्रुतज्ञानके भेद दो गायाओसे कहते हैं—

पोसतप्य विशेषमरियल्पद्रुमदाबुद्धेर्दोडे पर्यायमेव प्रथमश्रुतज्ञानं तु मत्ते सूक्ष्मनिगोद-
लक्ष्यपर्यायप्रकन सर्वधि सर्वजघन्यश्रुतज्ञानमवकुं । पुनः मत्ते पर्यायज्ञानदावरणमुं तदनन्तरज्ञान
भेददोळनंतभागवृद्धियुक्तेपर्यायसमासज्ञानप्रथमभेददोळवकुमर्दतेर्दोडे उदयागतपर्यायज्ञानावरण-
समयप्रवद्धदुदयनियेकदनुभागोल सर्वघातिस्पर्द्धकंगळदयाभावलक्षणक्षयमुमवदकेये सदवस्या-
लक्षणोपशममुं देशघातिस्पर्द्धकंगळदयपुमुंदागुत्तिरलुमंतपावरणपोदर्यादिवं पर्यायसमासप्रथमज्ञानमे-
पावरणिसल्पद्रुमुं । तुमत्ते पर्यायज्ञानमावरणिसल्पडदेकेर्दोडे तदावरणदोळ जीवगुणसप्य ज्ञानकरु-
भावमागुत्तिरलु गुणियप्यजीवकेयुमभावप्रसंगमवकुमप्युदरिवं ।

अनुभागरचनेमं स्यापिसल्पट्टल्लि सिद्धान्तैकभागमाप्रद्रव्यानुभागक्रमहानिवृद्धियुक्तनाना-
गुणहानिस्पर्द्धकवर्गणात्मकमप्य श्रुतज्ञानावरणद्रवदल्लि सर्वतःस्तोकमप्य सर्ववपश्चिमप्रशीणोदया-
नुभागसर्वघातिस्पर्द्धकद्रव्यत्रकेयो पर्यायज्ञानावरणत्वदिवं तावन्मात्रावरणद्रव्यत्रके सर्वकालदोळ-
मुदयाभावमप्युदरिवं ।

नवीनं विशेषं जानीहि, सः कः ? पर्यायज्ञानं-पर्यायाख्यं प्रथमं श्रुतज्ञानं, तु-पूनः, सूक्ष्मनिगोदलक्ष्य-
पर्यायिकस्य संबन्धि सर्वजघन्यं श्रुतज्ञानं भवति । पुनः-वदत्तात् पर्यायज्ञानस्य आवरणं तदनन्तरज्ञानभेदे
अनन्तभागवृद्धियुक्ते पर्यायसमासज्ञानप्रथमभेदे भवति, तद्यथा-उदयागतपर्यायज्ञानावरणसमयप्रवद्धोदयनियेक-
स्यानुभागानां सर्वघातिस्पर्द्धकानामुदयाभावलक्षणः क्षयः, तेषामेव सदवस्यालक्षण उपशमः, देशघातिस्पर्द्ध-
कानामुदये सति तदावरणोदयेन पर्यायसमासप्रथमज्ञानमेव आव्रियते न तु पर्यायज्ञानम् । तदावरणं जीवगुणस्य
ज्ञानस्वाभावे गुणिनो जीवस्याप्यभावप्रसंगम् । अनुभागरचनायां विन्यस्ते सिद्धान्तैकभागमात्रे द्रव्यानुभाग-
क्रमहानिवृद्धियुक्ते नानागुणहानिस्पर्द्धकवर्गणात्मके श्रुतज्ञानावरणद्रव्ये सर्वतः स्तोकरूप सर्वपश्चिमप्रशीणोदयानु-
भागसर्वघातिस्पर्द्धकद्रव्यस्यैव पर्यायज्ञानावरणत्वात् । तावतः आवरणद्रव्यस्य सर्वकालेऽनुदयाभावात् ॥३११॥

यह विशेष जानना कि पर्याय नामक प्रथम श्रुतज्ञान सूक्ष्म निगोदिया लक्ष्यपर्यायिकका २०
सयसे जघन्य श्रुतज्ञान होता है । किन्तु पर्यायज्ञानका आवरण उसके अनन्तर जो ज्ञानका
भेद है, जो उससे अनन्तभागवृद्धिको लिये हुए है उस पर्याय समास ज्ञानके प्रथम भेदपर
होता है । जो इस प्रकार है—उदयप्राप्त पर्याय ज्ञानावरणके समयप्रवद्धका जो निपेक उदयमें
आया है उसके अनुभागके सर्वघाती स्पर्द्धकोंके उदयका अभाव ही क्षय है तथा जो अगले
निपेक सम्बन्धी सर्वघाती स्पर्द्धक सत्तामें वर्तमान है उनका उपशम है और देशघाती २५
स्पर्द्धकोंका उदय है । ऐसा दायोपशम पर्याय ज्ञानावरणका सदा रहता है । अतः पर्याय
ज्ञानावरणके उदयसे पर्याय समास ज्ञानका प्रथम भेद ही आश्रित होता है, पर्यायज्ञान नहीं ।
यदि उसका भी आवरण हो जाये तो जीवके गुण ज्ञानका अभाव होनेपर गुणी जीवके भी
अभावका प्रसंग आता है । तथा अनुभाग रचनामें स्थापित किया सिद्ध राशिका अनन्तवाँ
भागमात्र जो श्रुतज्ञानावरणका द्रव्य अर्थात् परमाणुसमूह है वह क्रम हानि और वृद्धिसे ३०
संयुक्त है, नाना गुणहानि स्पर्द्धक वर्गणात्मक है, उस श्रुतज्ञानावरणके द्रव्यमें जिसका उदयरूप
अनुभाग क्षीण हो गया है और जो सबसे थोड़ा तथा सबसे अन्तिम सर्वघाति स्पर्द्धक है
उसीका नाम पर्यायज्ञानावरण है । इतने आवरणका कभी भी उदय नहीं होता । इसलिये
भी पर्यायज्ञान निरावरण है ॥३११॥

यद्द्वयपर्याप्तमभ्रमणसंभूतबहुतमसंज्ञेशुद्धिपिदमावरणके तोब्रानुभागोदयसंभवमप्युदात्तं ।
द्वितीयोदितमयंयत्त्रोक्तं ज्ञानदर्शनवृद्धि संभवमेदितु त्रिवज्रप्रथमधरासामयवोले पर्याप्तज्ञानसंभव-
मरियत्पद्गुं ।

सुदुर्मणिगोद अपञ्जत्तपस्य आदस्त पढमसमयमि ।

सासिदियमदिपुव्वं सुदणाणं लद्धिअकररयं ॥३२२॥

सुदुर्मणिगोदलक्ष्यपर्याप्तकस्य जातस्य प्रथमतममे । स्वर्णनेत्रियमतिपूर्वकं श्रुतज्ञानं लक्ष्यक्षरकं ॥

सुदुर्मणिगोदलक्ष्यपर्याप्तरुन अननप्रथमतमयोक्तु सार्धजघन्यस्पर्शनेत्रियमतिज्ञानपूर्वकं कल्प-
लक्ष्यक्षरापरनामधेयमप्य पूर्वोक्तधरमभ्रमणप्रथमसमयादिविशेषणविशिष्टमप्य सार्धजघन्य-
पर्याप्तं तजानमवकुमेदितु ज्ञातव्यमक्कु । लब्धि एवंतु श्रुतज्ञानावरणक्षयोपशममवकुमस्यं प्रहृण-
शक्तिमेतु लज्या अक्षरमभ्रतद्वरं लक्ष्यसत्तं साधनमात्रज्ञयोपशमके सत्वंदा विद्यमानत्वदिदं ।

अनंतरं दशागाथासुत्रंगिद्धिदं पर्याप्तमासाप्रकरणं वेन्द्र्यं :-

अवरुवरिम्मि अणंतमसंखं संखुं च भागवद्धीओ ।

संखुमसंखुमणंतं गुणवद्धी होति हु कमेण ॥३२३॥

ध्वरोपप्यंनंतमसंखं संखं च भागवद्धयः । संखमसंखमनंतं गुणवद्धयो भवति हि क्रमेण ॥

सार्धजघन्यपर्याप्तज्ञानवमेले क्रमेण षडपमाणपरिपाटिपिदमनंतभागवृद्धियुमसंख्यातभाग-
वृद्धियं संख्यातभागवृद्धियं संख्यातगुणवृद्धियुमसंख्यातगुणवृद्धियुमनंतगुणवृद्धियुमेदितु यद्वस्थान-

भवति । बद्धरपर्याप्तमभ्रमणसंभूतबहुतमसंज्ञेशुद्धिपिदमावरणस्य तीव्रतमानुभागोदयसंभवान्, द्वितीयोदि-
तमयेषु ज्ञानदर्शनवृद्धिसंभवान् 'त्रिवज्रप्रथमधरासामये एव पर्याप्तज्ञानसंभवो ज्ञानव्यः ॥३२१॥

सुदुर्मणिगोदलक्ष्यपर्याप्तकस्य अननप्रथमतमये सार्धजघन्यस्पर्शनेत्रियमतिज्ञानपूर्वकं लक्ष्यक्षरापरनामधेयं
'पूर्वोक्तधरमभ्रमणप्रथमधरासामयादिविशेषणविशिष्टं' सार्धजघन्यं पर्याप्तज्ञानं भवतीति ज्ञातव्यम् । लब्धिर्नाम-
श्रुतज्ञानावरणक्षयोपशमः अप्रहृणशक्तिर्ना, लज्या अक्षरं अविनश्रंतं लक्ष्यक्षरं तावतः क्षयोपशमस्य सर्वदा
विद्यमानत्वान् ॥३२२॥ अथ दशमिगाथाभिः पर्याप्तमासाप्रकरणं प्रथमपति:-

सार्धजघन्यपर्याप्तज्ञानस्य ऊपर क्रमेण षडपमाणपरिपाटया अनन्तभागवृद्धिः असंख्यातभागवृद्धिः

संबलेदके यद्दनेसे आवरणके तीव्रतम अनुभागका नश्य होता है, तथा दूसरे मोड़े आदिके
समयोंमें ज्ञान और दर्शनमें वृद्धि सम्भव है । इसलिये तीन मोड़ोंमें-से प्रथम मोड़ेके समयमें
ही पर्याप्त ज्ञान जानना ॥३२१॥

सुदुर्मणिगोद लक्ष्यपर्याप्तक जीवके जन्म लेनेके प्रथम समयमें सबसे जवन्य स्पर्शन
इन्द्रियजन्य भविज्ञानपूर्वक तथा पूर्वोक्त विशेषणोंसे विशिष्ट सधसे जघन्य पर्याप्त श्रुतज्ञान
होता है । उसका दूसरा नाम लक्ष्यक्षर है । श्रुतज्ञानावरणके क्षयोपशमको अथवा अर्थको
प्रहृण करनेकी शक्तिको लब्धि कहते हैं । लब्धिसे जो अक्षर अर्थात् अविनाशी होता है वह
लक्ष्यक्षर है ; क्योंकि इतना क्षयोपशम सदा विद्यमान रहता है ॥३२२॥

अथ दस गाथाओंसे पर्याप्तमासका कथन करते हैं:-

सधसे जघन्य पर्याप्तज्ञानके ऊपर आगे कहीं गयी परिपाटीके अनुसार अनन्तभागवृद्धि,

द्विवारलिखितोद्यंकादिकमंगुलासंख्यातैकवारसंद्ष्टिः ।

मत्तमिल्लि सव्वजघन्यमप्य थुत्तजानं पर्यायमंथ लक्ष्यसंरापरनामधेयस्यानद मुंदण पर्यायसमासज्ञानविकल्पंगळंतैकभागवृद्धिपुक्तस्यानंगळ सुख्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रविकल्प- गळपुववर वृद्धिप्रमाण क्रमविधानप्ररूपणं माडल्पडुमुगदे तें दोडंततगुणजीवरादिप्रमितस्वात्व- प्रकाशनशक्त्यविभागप्रतिच्छेदात्मकसव्वजघन्यथुत्तजानं । ज । एंवितु संस्थापिति मत्तमा राशियं ५ सव्वजीवराशियप्यनंतदिदं भागिसि तदेकभागमं तजघन्यज्ञानदोळे समच्छेदमं माडि कुडुत्तिरलडु

अथानन्तभागवृद्धेरङ्गुलासंख्यातभागमात्रवारान् वृत्तिक्रमो दर्शयते तद्यथा—अनन्तगुणजीवराशिमात्र- स्यायंप्रकाशनशक्त्यविभागप्रतिच्छेदात्मकं सर्वजघन्यथुत्तजानं ज इति संदृष्ट्या संस्थाप्य तं राशिं सर्वजीवराशि- स्थानन्तेन भक्त्वा तदेकभागे ज तजघन्यस्थोपरि समच्छेदेन युवे सति यो राशिर्जायते स पर्यायसमासश्रुत- १६

होती है । उसकी पहचानके लिए यन्त्रमें जैसे प्रथम पंक्ति थी उसी प्रकार उसके नीचे दूसरी १० पंक्ति लिखी । यहाँसे आगे—तीसरी पंक्ति प्रथम पंक्तिके समान लिखी । इतना विशेष कि नीचे कोठेमें जहाँ दो उकार एक छहका अंक लिखा था वहाँ तीसरी पंक्तिमें नीचे कोठेमें दो उकार और सातका अंक लिखा । यहाँसे आगे जैसे तीनों पंक्तियोंमें आदिसे लेकर अनु- क्रमसे वृद्धि हुई उसी अनुक्रमसे सूख्यंगुलके असंख्यातयें भाग प्रमाण होनेपर जब असंख्यात गुण वृद्धि भी सूख्यंगुलके असंख्यातयें भाग प्रमाण हो तब पूर्ति हो । इसीसे यन्त्रमें जैसे प्रथम १५ तीन पंक्तियाँ थीं वैसे ही दूसरी तीन पंक्तियाँ लिखी । इस तरह छह पंक्तियाँ हुईं । यहाँसे आगे—जैसे आदिसे लेकर तीन पंक्तियोंमें क्रमसे वृद्धियाँ कही थी वैसे ही क्रमसे पुनः सब वृद्धियाँ हुईं । विशेष इतना कि तीसरी पंक्तिके अन्तमें जहाँ असंख्यात गुण वृद्धि कही थी, उसके स्थानमें यहाँ तीसरी पंक्तिके अन्तमें एक बार अनन्त गुणवृद्धि होती है । इसीसे यन्त्रमें पहली, दूसरी, तीसरीके समान तीन पंक्तियाँ और लिखीं । किन्तु तीसरी पंक्तिके नीचे २० कोठेमें जहाँ दो उकार और सातका अंक लिखा है उसके स्थानमें यहाँ तीसरी पंक्तिके नीचे कोठेमें दो उकार और आठका अंक लिखा । जो अनन्त गुणवृद्धिका सूचक है । इसके आगे किसी वृद्धिके न होनेसे अनन्त गुणवृद्धि एक ही बार होती है । उसके होनेपर जो प्रमाण हुआ वह पदस्थान पतित वृद्धिका प्रथम स्थान जानना । इस प्रकार पर्याय समास श्रुतज्ञानमें असंख्यात लोक चार मात्र पदस्थान पतित वृद्धि होती है । २५

आगे उक्त कथनको स्पष्ट करते हैं—

सबसे जघन्य पर्याय श्रुतज्ञानके अपने विषयके प्रकाशनरूप शक्तिके अविभाग प्रतिच्छेद जीवराशिसे अनन्तगुणे होते हैं । उस राशिको सब जीवराशिरूप अनन्तसे भाजित करनेपर जो एक भाग आवे उसे उस जघन्य ज्ञानमें मिलानेपर पर्याय समास श्रुतज्ञानके विकल्पोंमें—से सबसे जघन्य प्रथम भेद आता है । यह एक बार अनन्त भाग वृद्धि हुई । फिर ३० उस पर्याय समास ज्ञानके प्रथम विकल्पको जीवराशि प्रमाण अनन्तका भाग देनेपर जो एक भाग आवे उसे पर्याय समास ज्ञानके प्रथम भेदमें मिलानेपर उसका दूसरा भेद होता है । यह दूसरी अनन्त भाग वृद्धि हुई । उस दूसरे भेदको अनन्तका भाग देनेसे जो एक भाग आवे उसे उस दूसरे विकल्पमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका तीसरा विकल्प होता है । यह तीसरी अनन्तभाग वृद्धि हुई । फिर हम तीसरे भेदमें अनन्तसे भाग देनेपर जो एक भाग ३५

तिरलु पर्यायमासासपठ धृ तजानविकल्पमत्रकु ज १६ १६ १६ १६ १६ १६ मितु सूच्यंगुला-
१६ १६ १६ १६ १६ १६

संख्यातेरुभागमाशानतेरुभागवृद्धिपुस्तस्यानेंगञ्ज सधर्मु नटसल्पइवुवत्ति तद्वृद्धिगज्जो तज्जधर्मं

दुो र्धर्मात्तभागात्तपुत्रजानविकल्पः क १६ १६ १६ १६ १६ १६ एवं सूच्यंगुलासंख्यातेरु-
१६ १६ १६ १६ १६ १६

भागमाशानि अनन्तंरुभागवृद्धिपुस्तस्यानि सर्वास्थानेतभ्यानि ।

उसीमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है । यहाँसे अनन्त भाग वृद्धिका प्रारम्भ हुआ । इसी प्रकार सूच्यंगुलके असंख्यातयें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ उसमें पुनः असंख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आया उसको उसी भेदमें मिलानेपर दूसरी असंख्यात भाग वृद्धिको लिये पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है ।

इसी क्रमसे सूच्यंगुलके असंख्यातयें भाग प्रमाण असंख्यात भाग वृद्धिके पूर्ण होनेपर जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ उसमें अनन्तका भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसको उसीमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है । यहाँ पुनः अनन्त भाग वृद्धिका प्रारम्भ हुआ सो सूच्यंगुलके असंख्यातयें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धिके पूर्ण होनेपर जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ उसको च्छृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आया उसको उसीमें मिलानेपर प्रथम संख्यात भाग वृद्धिको लिये पर्याय समासका भेद होता है । इससे आगे पुनः अनन्त भाग वृद्धि प्रारम्भ होती है । सो जैसे पूर्वमें कहा है उसीके अनुसार वृद्धि जानना । इतना विज्ञेय है कि जिस भेदसे आगे अनन्त भाग वृद्धि होती है उसी भेदमें जीवराशि प्रमाण अनन्तका भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसे उसी भेदमें मिलानेपर अनन्तरवर्ती भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे असंख्यात भाग वृद्धि होती है वहाँ उसी भेदको असंख्यात लोक प्रमाण असंख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसको उसी भेदमें मिलानेपर उससे अनन्तरवर्ती भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे संख्यात भाग वृद्धि हो वहाँ उसी भेदको च्छृष्ट संख्यात प्रमाण संख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसे उसी भेदमें मिलानेपर उससे आगेका भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे संख्यात गुण वृद्धि होती है वहाँ उस भेदको च्छृष्ट संख्यातसे गुणा करनेपर उस भेदसे अनन्तरवर्ती भेद होता है । जिस भेदसे आगे असंख्यात गुण वृद्धि होती है वहाँ उसी भेदको असंख्यात लोकसे गुणा करनेपर उससे आगेका भेद होता है । जिस भेदसे आगे अनन्त गुण वृद्धि होती है वहाँ उसी भेदको जीवराशि प्रमाण अनन्तसे गुणा करनेपर उससे आगेका भेद होता है इस प्रकार पट्ट्यान् पवित वृद्धिका क्रम जानना ।

यहाँ जो संख्या कही है सो सब संख्या ज्ञानके अविभागी प्रतिच्छेदोंकी जानना । तथा जो यहाँ भेद कहे हैं उनका भावार्थ यह है कि जीवके पर्याय ज्ञानसे यदि बढ़ता हुआ ज्ञान होता है तो पर्याय समासका प्रथम भेद ही होता है । ऐसा नहीं है कि किसी जीवके पर्यायज्ञानसे एक-दो अविभाग प्रतिच्छेद बढ़ता हुआ भी ज्ञान हो ।

तिरल्लु पर्यायसमासपठ ध्रुतज्ञानविकल्पमत्रकु ज १६ १६ १६ १६ १६ १६ मितु सूच्यगुला-
१६ १६ १६ १६ १६ १६

संख्यातैकभागमात्रान्तैकभागवृद्धिपुस्तस्यानंगळ् सव्यंमु नटसल्पडुवुवलि तद्वृद्धिगळ्ये तज्जप्रयं

युने पर्यायसमासपठध्रुतज्ञानविकल्पः ज १६ १६ १६ १६ १६ १६ एवं सूच्यगुलासंख्यातैक-
१६ १६ १६ १६ १६ १६

भागमात्राणि अनन्तरभागवृद्धिपुस्तस्यानानि सर्वाभ्यानेतयानि ।

उसीमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है । यहाँसे अनन्त भाग वृद्धिका प्रारम्भ हुआ । इसी प्रकार सूच्यगुलके असंख्यातवै भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ उसमें पुनः असंख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आया उसको उसी भेदमें मिलानेपर दूसरी असंख्यात भाग वृद्धिको लिये पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है ।

इसी क्रमसे सूच्यगुलके असंख्यातवै भाग प्रमाण असंख्यात भाग वृद्धिके पूर्ण होनेपर जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ उसमें अनन्तका भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसको उसीमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है । यहाँ पुनः अनन्त भाग वृद्धिका प्रारम्भ हुआ सो सूच्यगुलके असंख्यातवै भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धिके पूर्ण होनेपर जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ उसको उत्कृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आया उसको उसीमें मिलानेपर प्रथम संख्यात भाग वृद्धिको लिये पर्याय समासका भेद होता है । इससे आगे पुनः अनन्त भाग वृद्धि प्रारम्भ होती है । सो जैसे पूर्वमें कहा है वहाँके अनुमार वृद्धि जानना । इतना विशेष है कि जिस भेदसे आगे अनन्त भाग वृद्धि होती है उसी भेदमें जीवराशि प्रमाण अनन्तका भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसे उसी भेदमें मिलानेपर अनन्तरवर्ती भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे असंख्यात भाग वृद्धि होती है वहाँ उसी भेदको असंख्यात लोक प्रमाण असंख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसको उसी भेदमें मिलानेपर उससे अनन्तरवर्ती भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे संख्यात भाग वृद्धि हो वहाँ उसी भेदको उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण संख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसे उसी भेदमें मिलानेपर उससे आगेका भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे संख्यात गुण वृद्धि होती है वहाँ उस भेदको उत्कृष्ट संख्यातसे गुणा करनेपर उस भेदसे अनन्तरवर्ती भेद होता है । जिस भेदसे आगे असंख्यात गुण वृद्धि होती है वहाँ उसी भेदको असंख्यात लोकसे गुणा करनेपर उससे आगेका भेद होता है । जिस भेदसे आगे अनन्त गुण वृद्धि होती है वहाँ उसी भेदको जीवराशि प्रमाण अनन्तसे गुणा करनेपर उससे आगेका भेद होता है इस प्रकार पदस्थान पठित वृद्धिका क्रम जानना ।

यहाँ जो संख्या कही है सो सब संख्या ज्ञानके अविभागो प्रतिच्छेदोंकी जानना । तथा जो वहाँ भेद कहे हैं उनका भावार्थ यह है कि जीवके पर्याय ज्ञानसे यदि बढ़ता हुआ ज्ञान होता है तो पर्याय समासका प्रथम भेद ही होता है । ऐसा नहीं है कि किसी जीवके पर्यायज्ञानसे एक-दो अविभाग प्रतिच्छेद बढ़ता हुआ भी ज्ञान हो ।

परलु पर्यायसमासपद्युत्तजानविकल्पमवकु ज १६ १६ १६ १६ १६ १६ मितु सूच्यंगुला-
 १६ १६ १६ १६ १६ १६
 ह्यातैकभागमात्रान्तैकभागवृद्धियुक्तस्यानंगळु सर्व्वमु नडसल्पडुवुवल्लि तद्वृद्धिगळुपे तज्जघन्यं

ने पर्यायसमासपद्युत्तजानविकल्पः ज १६ १६ १६ १६ १६ १६ एवं सूच्यङ्गुलासंख्यातैरु-
 १६ १६ १६ १६ १६ १६

गमात्राणि अनन्तैकभागवृद्धियुक्तस्थानानि सर्वाभ्यानेतभ्यानि ।

सीमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है । यहाँसे अनन्त भाग वृद्धिका प्रारम्भ ५
 आ । इसी प्रकार सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर जो पर्याय
 समास ज्ञानका भेद हुआ उसमें पुनः असंख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आया उसको
 उसी भेदमें मिलानेपर दूसरी असंख्यात भाग वृद्धिको लिये पर्याय समास ज्ञानका भेद
 होता है ।

इसी क्रमसे सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यात भाग वृद्धिके पूर्ण होनेपर १०
 जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ उसमें अनन्तका भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसको
 उसीमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है । यहाँ पुनः अनन्त भाग वृद्धिका
 प्रारम्भ हुआ सो सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धिके पूर्ण होनेपर जो
 पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ उसको उत्कृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आया
 उसको उसीमें मिलानेपर प्रथम संख्यात भाग वृद्धिको लिये पर्याय समासका भेद होता है । १५
 उससे आगे पुनः अनन्त भाग वृद्धि प्रारम्भ होती है । सो जैसे पूर्वमें कहा है उसीके अनुसार
 वृद्धि जानना । इतना विशेष है कि जिस भेदसे आगे अनन्त भाग वृद्धि होती है उसी भेदमें
 जीवराशि प्रमाण अनन्तका भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसे उसी भेदमें मिलानेपर
 अनन्तरवर्ती भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे असंख्यात भाग वृद्धि होती है वहाँ उसी
 भेदको असंख्यात लोक प्रमाण असंख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसको उसी २०
 भेदमें मिलानेपर उससे अनन्तरवर्ती भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे संख्यात भाग
 वृद्धि हो वहाँ उसी भेदको उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण संख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे
 उसे उसी भेदमें मिलानेपर उससे आगेका भेद होता है । तथा जिस भेदसे आगे संख्यात गुण
 वृद्धि होती है वहाँ उस भेदको उत्कृष्ट संख्यातसे गुणा करनेपर उस भेदसे अनन्तरवर्ती भेद
 होता है । जिस भेदसे आगे असंख्यात गुण वृद्धि होती है वहाँ उसी भेदको असंख्यात लोकसे २५
 गुणा करनेपर उससे आगेका भेद होता है । जिस भेदसे आगे अनन्त गुण वृद्धि होती है वहाँ
 उसी भेदको जीवराशि प्रमाण अनन्तसे गुणा करनेपर उससे आगेका भेद होता है इस प्रकार
 पदस्थान पतित वृद्धिका क्रम जानना ।

यहाँ जो संख्या कही है सो सब संख्या ज्ञानके अविभागी प्रतिच्छेदोंकी जानना ।
 तथा जो यहाँ भेद कहे हैं उनका भावार्थ यह है कि जीवके पर्याय ज्ञानसे यदि बढ़ता हुआ ३०
 ज्ञान होता है तो पर्याय समासका प्रथम भेद ही होता है । ऐसा नहीं है कि किसी जीवके
 पर्यायज्ञानसे एक-दो अविभाग प्रतिच्छेद बढ़ता हुआ भी ज्ञान हो ।

तद्वृद्धिगण्य प्रक्षेपकंगळारमं प्रक्षेपकप्रक्षेपकंगळं पदिनेदुमं विगुलिगट्टिप्पत्तुमं विगुलिपिगुलिगळ् पदिनेदुमं चूर्णिगळारमनो बु चूर्णिचूर्णिगुमं यथाक्रमदिवं केळगे केळगे स्थापिगुमुदितनंतभागवृद्धि- युक्तस्यानंगळ् सूच्यंगुलासंस्थातभागमात्रंगळेहळपरोळं वैक्केन्दु तंतम्म जघन्यंगळ केळगे केळगे तंतम्म प्रक्षेपकंगळ् गळटमात्रंगळप्युववं स्थापिसि यवर केळगे प्रक्षेपकप्रक्षेपकंगळ् हपोनगळट्टेप एकवारसंकलनधनमात्रंगळप्युववं स्थापिगुमुदुदवर केळगे विगुलिगळ् द्विरूपोनगळट्टेप द्विकवार- संकलनधनमात्रंगळप्युववं स्थापिसि यवर केळगे विगुलिपिगुलिगळ् द्विरूपोनगळट्टेप द्विकवार- संकलनधनमात्रंगळप्युववं स्थापिसि यवर केळगे चूर्णिगळ् चतुरूपोनगळट्टेप चतुर्वारसंकलनधन- मात्रंगळप्युववं स्थापिसि यवर केळगे चूर्णिचूर्णिगळ् पंचहपोनगळट्टेप पंचवारसंकलनधनमात्रं- गळप्युववं स्थापिगुमुदिनु स्थापिमुत्तं पौगुतिरलु चरमाननंतभागवृद्धियुक्तस्यानविरुत्पदीनु

हृत्प्रपन्थमुपरि न्यस्य हृदयस्तनमागे तद्वृद्धेः पञ्च प्रक्षेपकान् दस प्रक्षेपकप्रक्षेपकान् दस विगुलीन् पय १०
विगुलिपिगुलीन् एकं चूर्णि च अथोथो न्यस्येत् । पछविकल्पे हृत्प्रपन्थमुपरि न्यस्य हृदयस्तनमागे तद्वृद्धेः
पद् प्रक्षेपकान् पञ्चदस प्रक्षेपकप्रक्षेपकान् विनति विगुलीन् पञ्चदस विगुलिपिगुलीन् पद् चूर्णीन् एकं चूर्णिचूर्णि
च अथोथो न्यस्येत्, एकमनन्तभागवृद्धियुक्तस्यानेयु सूच्यंगुलासंस्थेयमागमात्रेयु सर्वेष्वपरि स्वस्वत्रपन्थानामथोपः
स्वस्वप्रक्षेपकान् गळटमात्रान् न्यस्येत्, तेषामथः प्रक्षेपकप्रक्षेपकान् रूपातगळट्टस्य एकवारसं- प्रपन्थमात्रान्
न्यस्येत् । तेषामथः विगुलीन् द्विरूपोनगळट्टस्य द्विकवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् । तेषामथः विगुलिपिगुलीन् १५
त्रिरूपोनगळट्टस्य त्रिकवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत्, तेषामथः चूर्णीन् चतुरूपोनगळट्टस्य चतुर्वारसंकलनधन-
मात्रान् न्यस्येत् । तेषामथः पुंनिचूर्णीन् पञ्चरूपोनगळट्टस्य पञ्चवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् । एवं गरा

एह प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, चार विगुलि और एक विगुलि-पिगुली स्थापित करें । पाँचवें विकल्पमें जघन्यको ऊपर स्थापित करके उसके नीचे-नीचे उसको वृद्धिके पाँच प्रक्षेपक, दस प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, दस पिगुली, पाँच विगुली-पिगुली और एक चूर्णि स्थापित करे । छठे विकल्पमें जघन्यको ऊपर स्थापित करके उसके नीचे-नीचे उसकी वृद्धिके एह प्रक्षेपक, पन्द्रह प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, बीस पिगुली, पन्द्रह विगुली-पिगुली, एह चूर्णि और एक चूर्णि-चूर्णि स्थापित करे । इस प्रकार सूच्यंगुलके असंस्थातवं भाग मात्र अनन्त भाग वृद्धि युक्त सप्त पदांय समाग गानके स्थानोंमें अपने-अपने जघन्यके नीचे-नीचे अपने-अपने प्रक्षेपकोंको गळट प्रमाण स्थापित करना । उनके नीचे प्रक्षेपक-प्रक्षेपक एक कम गळटके एक वार संकलन धन मात्र स्थापित करना । उनके नीचे विगुली दो हीन गळटके दो वार संकलन धन मात्र स्थापित करना । उनके नीचे विगुली-पिगुली तीन हीन गळटके तीन वार संकलन धन मात्र स्थापित करना । उनके नीचे चूर्णि चार हीन गळटके चार वार संकलन धनमात्र स्थापित करना । उनके नीचे चूर्णि-चूर्णि पाँच हीन गळटके पाँच वार संकलन धन मात्र स्थापित करना । इसी प्रकार क्रमसे एक हीन गळटका एक-एक अधिक वार संकलन चूर्णि-चूर्णि ही अन्त पर्यन्त जानना । अनन्त भाग वृद्धि युक्त स्थानोंमें अनन्तका जो स्थान है वनमेंसे जघन्यको ऊपर स्थापित करना । उसके नीचे क्रमानुसार प्रक्षेपकोंको सूच्यंगुलके असंस्थातवं भाग मात्र

संकलनधनमात्रगणं स्यापिसुबुदवर केळणे चूर्णिगळुं चतुरूपोनगच्छेय चतुर्वारसंकलनधनप्रमितंग-
 ष्टपुबंदुं चतुरूपोनसूच्यंगुलासंख्यातभागगच्छेय चतुर्वारसंकलनधनमात्रगणं स्यापिसुबुदवर
 केळणे चूर्णि चूर्णिगळुं पंचरूपोनगच्छेय पंचवारसंकलनधनप्रमितंगळपुबंदुं पंचरूपोनसूच्यंगुला-
 संख्यातभागगच्छेय पंचवारसंकलनधनमात्रगणं स्यापिसुबुदितु तदधस्तनाघस्तनचूर्णिचूर्णिगळुं

तदधः पिसुलिपिसुलयः त्रिरूपोनगच्छस्य त्रिवारसंकलनधनमात्राः सन्तीति त्रिरूपोनसूच्यङ्गुलासंख्येयभाग- ५
 गच्छस्य त्रिचवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् । तदधः चूर्णयः चतुरूपोनगच्छस्य चतुर्वारसंकलनधनमात्राः
 सन्तीति चतुरूपोनसूच्यङ्गुलासंख्येयभागगच्छस्य चतुर्वारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् । तदधः चूर्णिचूर्णयः पञ्च-
 रूपोनगच्छस्य पञ्चवारसंकलनधनप्रमिताः सन्तीति पञ्चरूपोनसूच्यङ्गुलासंख्यातभागगच्छस्य पञ्चवारसंकलन-

तरह चारका भाग देते रहनेसे द्वितीयादि चूर्णि-चूर्णिका प्रमाण चार, एक आदि जानना ।
 ऊपर जघन्य ६५५३६ को स्थापित करके नीचे एक वार प्रक्षेपक १६३८४ स्थापित करके १०
 जोड़नेपर पर्याय समासके प्रथम भेदका प्रमाण ८१९२० होता है । फिर ऊपर जघन्य
 ६५५३६ स्थापित करके उसके नीचे दो प्रक्षेपक १६३८४।१६३८४ तथा एक प्रक्षेपक-प्रक्षेपक
 ४०९६ स्थापित करके जोड़नेपर पर्याय समासके दूसरे भेदका प्रमाण १०२४०० प्रमाण होता
 है । फिर ऊपर जघन्य ६५५३६ स्थापित करके उसके नीचे तीन प्रक्षेपक १६३८४ । १६३८४ ।
 १६३८४ । तीन प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, एक पिसुली स्थापित करके जोड़नेपर तीसरे भेदका प्रमाण १५
 १२८००० होता है । फिर ऊपर जघन्यको स्थापित करके नीचे-नीचे चार प्रक्षेपक, छह प्रक्षेपक-
 प्रक्षेपक, चार पिसुली एक पिसुली-पिसुली स्थापित करके जोड़नेपर चौथे भेदका प्रमाण
 १६०००० होता है । फिर ऊपर जघन्य स्थापित करके नीचे-नीचे पाँच प्रक्षेपक, दश प्रक्षेपक-
 प्रक्षेपक, दस पिसुली, पाँच पिसुली-पिसुली, एक चूर्णि स्थापित करके जोड़नेपर पाँचवें भेदका
 प्रमाण दो लाख होता है । फिर ऊपर जघन्य स्थापित करके उसके नीचे-नीचे छह प्रक्षेपक,
 पन्द्रह प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, बीस पिसुलि, पन्द्रह पिसुली-पिसुली, छह चूर्णि, एक चूर्णि-चूर्णि २०
 स्थापित करके जोड़नेपर छठे स्थानका प्रमाण दो लाख पचास हजार होता है । इसी तरह
 सब स्थानोंमें ऊपर जघन्य स्थापित करके उसके नीचे-नीचे जितना गच्छका प्रमाण है उतने
 प्रक्षेपक स्थापित करना । जहाँ जिस नम्बरका स्थान हो वहाँ उतना ही गच्छ जानना । जैसे
 छठे स्थानमें गच्छका प्रमाण छह होता है । उसके नीचे एक हीन गच्छका एक वार संकलन २५
 धनका जितना प्रमाण हो उतने प्रक्षेपक-प्रक्षेपक स्थापित करना उनके नीचे दो हीन गच्छका
 दो वार संकलन धनका जितना प्रमाण हो उतने पिसुली स्थापित करने । उनके नीचे तीन
 हीन गच्छका तीन वार संकलन धनका जितना प्रमाण हो उतने पिसुली-पिसुली स्थापित
 करने । उनके नीचे चार हीन गच्छका चार वार संकलन धनका जितना प्रमाण हो उतने चूर्णि
 स्थापित करने । उनके नीचे पाँच हीन गच्छका पाँच वार संकलन धनका जितना प्रमाण हो ३०
 हो उतने चूर्णि-चूर्णि स्थापित करना । इसी तरह नीचे-नीचे छह आदि हीन गच्छका छह
 आदि वार संकलन धनका जितना-जितना प्रमाण हो उतने द्वितीयादि चूर्णि-चूर्णि स्थापित
 करना । इस तरह स्थापित करके जोड़नेपर पर्याय समास ज्ञानके भेदोंका प्रमाण आता है ।
 यहाँ जो एक वार-दो वार आदि संकलन धन कहे हैं उनका विधान कहते हैं ।

ध्येरुपदोत्तरपातः सारूपवारोद्भूतो भुजेन युतः ।

रूपाधिकवारांतात्प्रदाद्यैर्हंतोवितं ॥

एदितु षष्प्यायसमाप्तं ज्ञानविकल्पंगळोऽऽ विवक्षितपट्टविकल्पदोऽऽ षतुर्व्यार संकलन-
पनानपनदोऽऽ ध्येरुपद विगतमेकेन ध्येकं । तच्च तत्पदं च ध्येरुपदं । अत्र षतुर्व्यारोत्तरपात एव
६ । ४ पदं २ । तत्र एकस्मिन्नपनोते २-१ एव । तेनोत्तरपातः । एकवारादिसंकलनमाधिरप्येयो-
त्पत्तिसंभवाद्ये जायेकोत्तरव्यानुत्तरपातः कर्तव्यः । १ । १ । उत्तरवारोद्भूतः रूपेण सहितः सारूपः ।

स चासौ वारश्च सारूपवार ४ स्तेनोद्भूतो मत्तः । १ ० १ । भुजेन युतः मुखमादित्तेन युतः

समच्छेदो हृत्य युते एवं ६ पुनः रूपाधिकवारांतात्प्रदाद्यैर्हंतः । रूपाधिकवारात्प्रदाद्य १ । हार

विकल्पे ४ । ३ । २ । १ । रातमत्तपरार्थके । पदं गच्छ आविष्येयांते पदावपस्ते च ते अंकाश्च
सैहंतः ६ । २ । ३ । ४ । ५ अपर्यतितं वितं धनं मयति एदितो सूत्रविषं तत्पट्ट विवक्षितपट्ट-
५ । ४ । ३ । २ । १

विकल्पोऽऽ षतुर्व्यारिसंकलनपनमारवकु । ६ । इते सार्वत्र समस्तवारसंकलनपनंगळं विवक्षितगळं
संदुको बुद्धु ।

प्रयोगप्रयोगसारीनां प्रमाणानपने करणयूक्तनिर्णय—

ध्येरुपदोत्तरपातः सारूपवारोद्भूतो भुजेन युतः ।

रूपाधिकवारांतात्प्रदाद्यैर्हंतो वितम् ॥

एत पट्टे विकल्पं विवक्षितं हृत्य पूर्णोत्तं षतुर्व्यारिसंकलनपनमानोपये । तत्र पदं षतुर्व्यारोत्तरपात ६-४
मात्रं २ । ध्येकं एकरहितं २-१ अत्र उत्तराण पातः एकवारादिसंकलनरचनामाधिरप्येव द्विकवारादिसंकलन-
रचनोत्पत्तेः सर्वेवादिः उत्तरसर्वेकैः हृत्येकेन पातः कर्तव्यः १ । १ । गुणिते एवं १, सारूपवारोद्भूतः

रूपाधिकवार ४ । मत्तः ४ । भुजमादिः १ तेन समच्छेदेन ५ सहितः ५ रूपाधिकवारांतात्प्रदाद्य-
२ ३ ४ ५ ६ २ ३ ४ ५
हंतः एकरूपप्रमृतिवारव्यानहारमनवदावच्छेदः ४ ३ २ १ हतः गुणितः ५ ४ ३ २ १
आवदितः ६ वितं पट्टविकल्पगुणियनं मवदि, एवमेव सर्वत्र समस्तवारसंकलनपनानि विवक्षिताग्न्यानि

प्रकार है—उसे उदाहरण द्वारा स्पष्ट करनेके लिए छोटे विकल्पको विवक्षित करके धूर्णियोंका
चार बार संकलित धन लाते हैं—यहाँ पद चार हीन गच्छ ६-४=मात्र २ है । उसमें एक
घटानेपर २-१=एक शेष रहता है । इसको उत्तरसे गुणा करना चाहिए । सो एक बार
आदि संकलन धन रचनाकी अपेक्षा ही दो बार आदि संकलनकी रचना उत्पन्न होती है ।
सर्वप्र आदि और उत्तर एक-एक है अतः उसे एकसे गुणा करने पर १×१=एक ही रहा ।
इसका यहाँ चार बार संकलन कहा है सो चारमें एक मिलानेपर पाँच हुआ । उसका भाग
देनेपर एकका पाँचवाँ भाग हुआ । इसमें मुख जो आदि, उसका प्रमाण एक, सो समच्छेद
करके मिलानेपर छहका पाँचवाँ भाग हुआ । यहाँ चार बार कहा है सो एकसे लेकर एक-एक

१. म षतुर्व्यार ।

५

१०

१५

२०

२५

३०

मतं केशणंगञ्जु तम्मभिप्रायदिं तरल्पडुव विशेषकरणायासूत्रद्वयं :-

तिरियपदे रऊणे तदिद्वहेद्विल्ल संकलनवारा ।

कोट्टघणस्ताणयणे पभवं इट्टूणिदुइडपदसंखा ॥

तिरियंपदे रूपोने तदिष्टाघनस्तनसंकलनवारा । भवति कोट्टघनस्यानयने प्रभवः इष्टोनितो-
ध्वंपदसंख्या ॥

ततो ह्वहियकमे गुणगारा होंति उइडगच्छोत्ति ।

इगिह्वमादिरूउत्तरहारा होंति पभवोत्ति ॥

ततो रूपाधिकक्रमेण गुणकारा भवंत्यूध्वंगच्छपय्यंतं । एकरूपादिरूपोत्तरहारा भवति
प्रभवपय्यंतं ।

इल्लिष्टमपुदापुदानुमोडु तिर्यंगपददोः ६ रूपोनमागुत्तिरल्लु ६ तत्तत्पदप्रमाणं इष्टाघ- १०
स्तनसंकलनवारा भवति । आ तिर्यंगच्छेदद कोऽगो प्रक्षेपकोनैकवारसंकलनादिसर्वसंभवद्वार-

आनयेत् । पुनरेतदेव कैशववणिभिः स्वामिप्रायेण आनेतुं गायत्रियमुच्यते—

तिरियपदे रऊणे तदिद्वहेद्विल्लसंकलनवारा ।

कोट्टघणस्ताणयणे पभवं इट्टूण उइडपदसंखा ॥१॥

तिरियपदे अनन्तभागवृद्धियुतस्यानेषु यद्विवक्षितं स्थानं तत् तिर्यंगपदं ६, तस्मिन् रऊणे रूपोने १५

इवे ६ तदिद्वहेद्विल्लसंकलनवारा तदिष्टपदे प्रक्षेपकादवस्वनतोष्ठेषु प्रतिकोष्ठमैकैकं संकलनमिति संभवतां
क्रमैकवारद्विवारादिसंकलनानां संख्या भवति ५ ॥ तत्र इष्टस्य 'कोट्टघणस्त' चतुर्वारसंकलनघनगतकोट्टघनस्य
आणयणे आनयने 'इट्टूणउइडपदसंखा' तदिष्टसंकलनवारस्य प्रमाणेन ४ न्यूनोध्वंपदं-६-४ पभवो आदि-
भवति ॥२॥

ततोह्वहियकमे गुणगारा होति उइडगच्छोत्ति ।

इगिह्वमादिरूउत्तरहारा होंति पभवोत्ति ॥२॥

ततो तमादि २ मादि कृत्वा ह्वहियकमे रूपाधिकक्रमेण गुणगारा गुणकारा अनुलोमगत्या होंति-

षड्दते हुए चार पर्यन्त अंक रखकर $१ \times २ \times ३ \times ४$ परस्परमें गुणा करनेपर २४ हुए । यह
भागहार हुआ । और गच्छ दो के प्रमाणसे लेकर एक-एक बढ़ता अंक रखकर $२ \times ३ \times ४ \times ५$
परस्पर गुणा करनेपर १२० भाज्य हुआ । सो भाज्य १२० में भागहार २४ से भाग देनेपर २५
लब्ध पाँच आया । इस पाँचसे पूर्वोक्त छहके पाँचवें भागको गुणा करनेपर पाँच रहे । यही
दो का चार बार संकलन घन होता है । इसी तरह तीनका तीन बार संकलन घन लाना हो
तो गच्छ तीनमें एक कम करके दो शेष रहे । उसे उत्तर एकसे गुणा करनेपर भी दो ही हुए ।
यहाँ तीन बार संकलन है । अतः उसमें एक अधिक बार चारका भाग देनेपर आधा रहा ।
उसमें मुख एक जोड़नेपर डेढ़ हुआ । यहाँ तीन बार कहा है अतः एकसे लेकर एक-एक बढ़ते ३०
तीन पर्यन्त अंक रखकर $१ \times २ \times ३ =$ परस्परमें गुणा करनेपर भागहार छह हुआ । और
गच्छको आदि लेकर एक-एक अधिक अंक रख $३ \times ४ \times ५$ परस्परमें गुणा करनेपर भाज्य
साठ हुआ । भाज्य साठमें भागहार छहसे भाग देनेपर दस पाये । इस दससे पूर्वोक्त डेढ़को
गुणा करनेपर छठे भेदमें तीन कम गच्छका तीन बार संकलन घनमात्र पन्द्रह पिशुली-पिशुली
होती हैं । इसी तरह सर्वत्र विवक्षित संकलित घन लाना चाहिये । ३५

छद्वाणाणं आदी अट्ठकं होदि चरिममुच्चकं ।

जम्हा जहण्णणाणं अट्ठकं होदि जिणदिट्ठं ॥३२८॥

पट्स्थानानामादिरष्टांको भवति चरममुच्चकः । यस्माज्जघन्यज्ञानमष्टांको भवति जिनदृष्टः ॥

पट्स्थानवारंगळेनितोळवनितवकमादिस्थानमष्टांकमेयकुं चरममुच्चकमेयकुमंतागुत्तिरल्लु

प्रथमपट्स्थानदोळष्टांकमे तक्कुमे दोडे यस्माज्जघन्यज्ञानमष्टांको भवति जिनदृष्टत्वात् । तस्मात् ५
आगुदोदु जिनदृष्टत्वकारणदिदं जघन्यज्ञानमष्टांकमक्कुमदु कारणदिदं प्रथमपट्स्थानदोळष्टांकादि-
कत्वं युक्तमक्कुं । इल्लि पट्स्थानांगळादियष्टांकमवसानमुच्चकमेव नियमं पेळपट्टुदुर्वरदं चरम-

पट्स्थानांगेळमादियष्टांकमवसानमुच्चकमुमागुत्तिरल्लि मुदणष्टांकमदेनक्कुमे दोडट्यांशर-
ज्ञानमे दु मुदे पेळपनदु कारणदिदं जघन्यपर्यायज्ञानमादियेदु पेळ्वागमं निवोधवोधविषयमक्कु ।

ई पट्स्थानांगळ्ये स्थानसंख्ये समानमे बुदं तोरिदपं :—

एक्कं खलु अट्ठकं सत्तकं कंडयं तदो हेट्ठा ।

रूवहियकंडहण य गुणिदकमा जाव मुच्चकं ॥३२९॥

एकः एत्वष्टांकः सप्तांकः कांडकं ततोऽधो रूपाधिककांडकेन गुणितक्रमा यावदूर्ध्वकः ॥

पट्स्थानवाराणां सर्वेषामादिः प्रथमस्थानमष्टाङ्कमेव अनन्तगुणवृद्धिस्थानमेव भवति तेषां चरमस्थान-
मुर्वङ्कुमेव अनन्तभागवृद्धिस्थानमेव भवति । तर्हि प्रथमस्थानस्य अष्टाङ्कत्वं कथं ? इति तन्न, यस्मात् कारणात् १५
तज्जघन्यं ज्ञानं पर्यायाख्यं पूर्वस्मादेकत्रोत्रागुरुलपुगुणाविभापप्रतिच्छेदानां वर्गस्थानादनन्तगुणत्वेन अष्टाङ्कं
भवतीति जिनैः अर्हदादिभिः दिष्टं कथितं दृष्टं वा, तस्मात् कारणात् प्रथमपट्स्थानेऽपि अष्टाङ्कादित्वं
युक्तम् । अत्र पट्स्थानानामादिः अष्टाङ्कः, अवसानं उर्वङ्कुः इति नियम उक्तोऽस्तीति । चरमपट्स्थानेऽपि

आदौ अष्टाङ्के अवसाने उर्वङ्के च सति तदप्रतनोऽष्टाङ्कः कौदृगस्ति ? इति चेत् अर्थाशर-ज्ञानरूपो भवति
तथैव अग्रं वक्ष्यमाणत्वात् । तदेवं जघन्यपर्यायज्ञानमादिः इत्युक्तागमो निवोधवोधविषयः ॥३२८॥ एषां २०
पट्स्थानानां संख्या समानेति दर्शयति—

पट्स्थान पतित वृद्धिरूप सब स्थानोमें प्रथम स्थान अष्टांक अर्यात् अनन्तगुण वृद्धि
रूप स्थान ही होता है । वही आदि स्थान है । तथा अनन्त स्थान उर्वक अर्यात्
अनन्तभागवृद्धि युक्त स्थान ही होता है । तब प्रथम स्थानमें अष्टांक कैसे रहा, इसका समा-
धान यह है वह जो पर्याय नामक जघन्य ज्ञान है इस जघन्य ज्ञानसे पहला ज्ञान स्थान एक २५
जीवके अगुरु लपु गुणके अविभाग प्रतिच्छेद प्रमाण है उससे अनन्त गुणा जघन्य ज्ञान है
इसलिए जिनदेवने अष्टांक रूप देखा है । इस कारणसे प्रथम स्थानके भी आदिमें अष्टांक
और अन्तिम उर्वक है । यह नियम कहा है ।

शंका—अन्तिम पट्स्थानमें भी आदिमें अष्टांक और अन्तमें उर्वक होनेपर उससे
आगेका अष्टांक किस रूपमें है ? ३०

समाधान—वह अर्थाशर ज्ञान रूप है । ऐसा ही आगे कहेंगे ।
इस प्रकार जघन्य पर्याय ज्ञान आदि है यह कथन निवोध है ॥३२८॥
आगे इन पट्स्थानोंकी संख्या समान है यह दर्शाते हैं—

१. म नदोलारि ।

इंतु द्वितीयोऽपि पदस्थानदोषादिभूताऽष्टांकादिवं मुंबे उर्व्वकमक्कुमादोडमेक्कांखलु अट्टंकर्मे'वी नियमवचनद्विदष्टांकर्कमंगुलासंख्यात भागमात्रवारऽभावमेयक्कुमेक'दोडे खलुनाब्दवर्क नियमार्थ-वाचकत्वदिदं ।

सर्वसमासो णियमा रूवाहियकंडयस्य वर्गसस ।

विंदसस य संवग्गो होदिचि जिणेहि णिदिट्ठं ॥३३०॥

सर्वसमासो नियमाद्रूपाधिककांडकस्य वर्गस्य । वृंदस्य च संवर्गो भवतीति जिनैर्निदिष्टं ॥

यत्ना अष्टांकादियद्बृद्धिगळ संयोगं रूपाधिककांडकस्य रूपाधिककांडकद, वर्गस्य वर्गद, वृंदस्य च घनद, संवर्गः संवर्गमात्रं भवति अक्कुमे'वितु जिनैर्निदिष्टं अहंदादिगळिदं पेटल्पदट्टु-दिल्लि तद्युतियं मात्त्र क्रममे'दोडे अष्टांकदात्मप्रमाणमनो'डु रूपं तंडु सप्तमंकाद सूच्यंगुला-संख्यातभागदोळू कूडुत्तिरलु रूपाधिककांडकमक्कुमदं तोरि तदात्मप्रमाणमनो'डु रूपं पडंक-संख्येयोळूकूडुत्तिरलु रूपाधिककांडकद्वयमक्कुमा वर्गरूपाधिककांडकात्मप्रमाणं पंचांकसंख्ये-

एवं द्वितीयवारपदस्थाने आदिभूताऽष्टाङ्गतोऽत्र उर्व्वद्वोऽस्ति तथापि 'एकं खलु अट्टंकर्' इति नियम-वचनान्न तस्याद्गुलासंख्यातभागमात्रवारः, खलुनाब्दस्य नियमार्थवाचकत्वात् ॥३२९॥

सर्वासां अष्टाङ्गादिपद्बुद्धीनां संयोगः रूपाधिककाण्डस्य वर्गस्य वृन्दस्य च संवर्गमात्रो भवति इति जिनैर्हंदादिभिर्निदिष्टं कथितम् । अत्र तद्युतिः क्रियते तद्यथा—

अष्टाङ्कस्य आत्मप्रमाणरूपे सप्ताङ्कस्य सूच्यङ्गुलासंख्यातभागे गुते सति रूपाधिककाण्डकं भवति तस्मिन् पुनः आत्मप्रमाणरूपे पडङ्कसंख्यायां काण्डकगुणितरूपाधिककाण्डकमाध्यां गुते रति रूपाधिक-

गुण वृद्धि युक्त स्थान काण्डक अर्थात् सूच्यंगुलके असंख्यात भाग मात्र ही होते हैं । उससे नीचेके पडंक, पंचांक, चतुरंक और उर्वक क्रमसे रूपाधिक सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गुणित उत्तरोत्तर उर्वक पर्यन्त होते हैं अर्थात् असंख्यात गुण वृद्धिका प्रमाण सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग कहा है उसको एक अधिक सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतनी चार संख्यात गुण वृद्धि होती है । इसको भी एक अधिक सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतनी चार संख्यात भाग वृद्धि होती है । इसको भी एक अधिक सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतनी चार संख्यात भाग वृद्धि होती है । इस प्रकार एक पद-स्थान पतित वृद्धिमें पूर्वोक्त प्रमाण एक-एक वृद्धि होती है । दूसरे पदस्थानमें आदिमें अष्टांक उससे आगे उर्वक है अतः एक ही अष्टांकका नियम जानना । वह अंगुलके असंख्यात भाग मात्र चार नहीं होता ॥३२९॥

अष्टांक आदि छह वृद्धियोंका जोड़ एक अधिक काण्डकके वर्गका तथा घनका परस्पर-में गुणा करनेसे जो प्रमाण हो उतना है ऐसा जिन भगवान्ने कहा है । यहाँ उनका जोड़ दिखाते हैं—

अष्टांकके अपने प्रमाण एक रूपमें सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागको मिलानेपर सप्त-का प्रमाण एक अधिक काण्डक होता है । उसमें पडंककी संख्या, जो काण्डकसे गुणित एक अधिक काण्डक प्रमाण है, मिलानेपर रूपाधिक काण्डकका वर्ग होता है । उसमें पंचांककी संख्याको, जो काण्डकसे गुणित रूपाधिक काण्डकके वर्ग प्रमाण है, मिलानेपर रूपाधिक

उक्कस्ससंखमेत्तं तत्तिचउत्थेक्कदालत्तप्पण्णं ।

सुत्तदसम्मं व भागं गंतूण य लद्धियकरं दुगुणं ॥३३१॥

उत्कृष्टसंख्यातमात्रं तत्रिचतुरथैकत्वार्त्तिग्नं पद्व्यंघ्रात् सप्तदशमं वा भागं गत्या च लक्ष्यक्षरं द्विगुणं ॥

हृत्पापिरत्तांङ्कगुणितान्गुलासंख्यातभागमात्रवारंगञ्जन्तंभागवृद्धिस्थानंगञ्ज २ २ मवर ५

मप्यदोञ्ज सुख्यंगुलासंख्यातभागमात्रवारंगञ्जन्तंभागवृद्धिस्थानंगञ्ज सत्तुत्तिरलु २ तदुभय-

वृद्धियुक्तजघन्यद एख्यारं संख्यातभागवृद्धिस्थानमुत्पन्नमञ्जु ज १५ मुवे मत्तं मुं पेञ्च द्रम-

वृद्धिद्वयाहवर्तिगञ्जोञ्ज संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानंगञ्जोत्कृष्टसंख्यातभागंगञ्ज सत्तुत्तिरलु अल्लि प्रशेषवृद्धियं कूटुत्तिरलु लक्ष्यक्षरं सख्यंजघन्यमप्य पर्यायमेव धृ तज्ञानं साधिकमागि द्विगुण- मञ्जुमेके दोडे प्रशेषकवृद्धिपदसंख्यातभाग्यभागहारंगञ्जन्तंयत्तिसि कूटिदोडे अवरके द्विगुणत्वसंभव- १०

स्वाधिककाङ्कगुणितान्गुलासंख्यातभागमात्रवारान् अनन्तभागवृद्धिस्थानेषु अङ्गुलासंख्यातभाग- मात्रवारान् असंख्येयभागवृद्धिस्थानेषु च गतेषु तदुभयवृद्धियुक्तजघन्यस्य एख्यारं संख्यातभागवृद्धिस्थानमुत्पद्यते ।

ज १५ यथे पुनः प्रागुक्तमञ्जुद्विभयहवर्तिरितेषु संख्यातभागवृद्धियुक्तस्थानेषु उत्कृष्टसंख्यातमात्रेषु गतेषु १५

एत प्रशेषवृद्धियु युक्तासु लक्ष्यक्षरं सर्वजघन्यपर्यायार्यं वृत्तज्ञानं साधिकद्विगुणं भवति । कुतः ? प्रशेषकस्य उत्कृष्टसंख्यातमात्र्यभागहारानावर्त्यं मुने तस्य द्विगुणत्वसंभवात् तत्रिचतुर्थे पूर्वोक्तसंख्यातभागवृद्धिमूलोत्कृष्ट- १५

एक अधिक सुख्यंगुलके असंख्यातवर्षे भागसे गुणित अंगुलके असंख्यात भाग दार अनन्त भाग वृद्धियेके होनेपर तथा अंगुलके असंख्यात भाग दार असंख्यात भाग वृद्धिके होनेपर एत दोनों वृद्धियोंसे युक्त जघन्य पर्याय ज्ञानका एक दार संख्यात भाग वृद्धि युक्त स्थान उत्पन्न होता है । आगे पुनः पूर्वोक्त अनन्त भाग वृद्धि और असंख्यात भाग वृद्धिके साथ संख्यात भाग वृद्धिसे युक्त स्थानोंके उत्कृष्ट संख्यात मात्र होनेपर इनमें प्रशेषक वृद्धियोंको जो होनेपर लक्ष्यक्षर नामक सर्व जघन्य पर्याय श्रुतज्ञान साधिक दुगुणा होता है । कैसे होवा है यह बतलाते हैं—पूर्ववृद्धिके होनेपर जो साधिक जघन्य ज्ञान हुआ उसे अलग रखकर उस साधिक जघन्य ज्ञानमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर प्रशेषक होता है । तथा उत्कृष्ट संख्यात मात्र प्रशेषक है क्योंकि गच्छमात्र प्रशेषक वृद्धि होती है सो यहाँ उत्कृष्ट संख्यात मात्र संख्यात वृद्धिके स्थान हुए इसलिये उत्कृष्ट संख्यात मात्र प्रशेषक बदाने है । सो यहाँ २५ उत्कृष्ट संख्यात मात्र प्रशेषक होनेसे उत्कृष्ट संख्यात ही गुणकार हुआ । इस तरह गुणकार भी उत्कृष्ट संख्यात और भागहार भी उत्कृष्ट संख्यात; क्योंकि साधिक जघन्य ज्ञानमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेसे प्रशेषक होवा है । सो गुणकार और भागहारका अपवर्तन करने पर साधिक जघन्य ज्ञान रहा । उसे अलग रखे साधिक जघन्य ज्ञानमें मिलाने पर जघन्य ज्ञान साधिक दूना होता है । तथा 'तत्तिषदस्य' अर्थात् पूर्वोक्त संख्यात भाग वृद्धि युक्त उत्कृष्ट ३०

कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिका

साधिकजघन्यमरुहु ज मिदं भेल्लु साधिकजघन्यदोळरुडित्तरलु लक्ष्यक्षरं द्विगुणं
(+ओ अथवा ज २) प्रक्षेपकप्रक्षेपकदोळगण श्रृणपनमं ज १- नोडलु मसंख्यातगुणह
३२

किंचिन्मूनं माडि क्षेपमं ज १- द्विगुणजघन्यदोळरुडिसाधिकं माडुयुदु ।
३२

एकदाळछप्पणं मुं पेळ्व संख्यात भागवृद्धिस्थानं गळं रुष्ट संख्यात प्रमितं गळो ज एक
दात् पटपंचानाद्भागमात्रं स्थानं गळु सलुत्तं विरलु प्रक्षेपक प्रक्षेपकप्रक्षेपकवृद्धिद्वययोगदोळु स
जघन्यं द्विगुणमरुमुल्लि प्रक्षेपरुमिदु ज १५।४१ प्रक्षेपकप्रक्षेपकमिदु रूपोतगच्छद ए
१५।५६

संकलित घनमात्रं ज १५।४१।१५।४१ इल्लिय श्रृणहपं तेषु वेति
१५।१५।५६।२।१।५६

युते सति साधिकजघन्यं भवति ज । अस्मिन् पुनः उपरित्तसाधिकजघन्ये युते सति लक्ष्यक्षरं द्विगुणं
ज २ । प्रक्षेपकप्रक्षेपरागतकृणं घनतः संख्यातगुणहीनमिति किंचिदूनं कृत्वा शेषं ज १-द्विगुणजघन्ये
३२

साधिकं मुनीन् । एकदाळछप्पणं प्रायुक्तसंख्यातभागवृद्धियुतस्थानानां उरुष्टसंख्यातमितेयु एकवत्त्वा
पटपंचानाद्भागमात्रस्थानानि नीत्वा प्रक्षेपकप्रक्षेपराद्ययोगे साधिकजघन्यं द्विगुणं भवति तत्र प्रक्षेपकोः
ज १५।४१ । प्रक्षेपकप्रक्षेपकस्तु रूपोतगच्छस्य एकवारसंकलितघनमात्रः । ज १५।४१।१५
१५।५६ १५।१५।५६

संख्यातके तीन चौथे भागसे गुणा करना । सो उल्लुष्ट संख्यात गुणकार भी और भागहा
वनका अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्यका तीन चौथाई भाग मात्र प्रमाण रहा ।
पूर्वोक्त एक चौथा भाग जोड़नेपर साधिक जघन्य मात्र वृद्धिका प्रमाण होता है ।
मूल साधिक जघन्य ज्ञानको जोड़नेपर लक्ष्यक्षर दूना होता है । यहाँ प्रक्षेपक-
सम्बन्धी श्रृण राशि घन राशिसे संख्यात गुणी कम है इसलिए साधिक जघन्यका यत्

य भागं वा अथवा संख्यातभागवृद्धिस्थानंगच्छुष्टसंख्यातमात्रंगच्छु सप्तदशमभागमात्रंगच्छु सलुत्तिरलु प्रक्षेपक प्रक्षेपकप्रक्षेपक विगुलिगच्छं व मूर्हं वृद्धिगच्छं कूडुत्तिरलु साधिकजघन्यं द्विगुण-
मन्कुमदे ते दोडे प्रक्षेपकं ज १५।७ प्रक्षेपकप्रक्षेपकं रूपोनगच्छइ एकवारसंकलितधनमात्रं १५।१०

ज १५।७।१५।७
१५।१५।१०।२।१०।१
विगुलिद्विरूपोनगच्छद्विकवारसंकलितधनमात्रं

ज १५।७।१५।७।१५।७ ई मूर्हं वृद्धिगच्छुष्ट विगुलिय प्रथम ऋणमं वेरिरिति ५
१५।१५।१५।१०।३।१०।२।१०।१

ज २।१५।७।७ शेषधनमपवात्तमितु ज १५।७।४९ इवरोडु हनितु ऋणमं
१५।१५।१६।१०।१०
१५।१०।६००

'सत्तदसमं च भागं' वा अथवा संख्यातभागवृद्धिस्थानानां उत्कृष्टसंख्यातमात्रेषु मध्ये सप्तदशमभागमात्रेषु गतेषु प्रक्षेपक-प्रक्षेपकप्रक्षेपक-विगुलिघंशवृद्धिनये प्रक्षिप्ते साधिकजघन्यं द्विगुणं भवति। तद्यथा प्रक्षेपकः

ज १५।७। प्रक्षेपकप्रक्षेपको रूपोनगच्छस्य एकवारसंकलितधनमात्रः ज १५।७।१५।७।
१५।१०। १५।१५।१०।२।१०।१

विगुलिः द्विरूपोनगच्छस्य द्विकवारसंकलितधनमात्रः ज १५।७।१५।७।१५।७
१५।१५।१५।१०।३।१०।२।१०।१

तद्वृद्धिप्रथममध्ये विगुलेः प्रथमऋणं पुषक् संस्पायं ज २।१५।७।७।
१५।१५।६।१०।१०।१०।

इरुतालीसका गुणकार और छप्पनका भागहार मिलानेपर अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्य मात्रवृद्धिका प्रमाण रहा। इसमें मूल साधिक जघन्य जोड़नेपर लब्धक्षर ज्ञान दूना होता है। यहाँ प्रक्षेपक-प्रक्षेपक सम्बन्धी धनसे ऋण संख्यात गुणा कम है। अतः किंचित् धन धनराशिको अधिक करनेपर साधिक दूना होता है।

'सत्तदसमं च भागं वा' अथवा संख्यात भाग वृद्धि युक्त उत्कृष्ट संख्यात मात्र स्थानोंमेंसे सात बटे दस भाग मात्र स्थानोंके होनेपर उसमें प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, और विगुलि नामक तीन वृद्धियोंके जोड़नेपर साधिक जघन्य ज्ञान दूना होता है। वही आगे कहते हैं—साधिक जघन्यको एक बार उत्कृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर प्रक्षेपक होता है वह गच्छ मात्र है अतः इसको उत्कृष्ट संख्यातके सात बटे दसवें भागसे गुणा और उत्कृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर साधिक जघन्यको सातका गुणकार और दसका भागहार होता है। प्रक्षेपक-प्रक्षेपक

१. संदृष्टेयमप्याकारः—ज २।१५।१५।७।७
१५।१५।६००।१०।१

ज ३ इदं प्रक्षेपकबोद्धुं कूडिदोडे ज १० अपर्याप्ततमिदु ज इवरोद्धुं संख्यातगुणहीनमप्य
१० १०

प्रक्षेपकप्रक्षेपकश्रृणमं किंचिदूनं माडि धनमं ज १३ = साधिकं माडि मेलण जघन्यबोद्धुं
६०००

कूडिदोडे लघ्व्यक्षरं द्विगुणमक्कुं ज २ मुन्नं प्रक्षेपकप्रक्षेपकधनबोद्धुं येरिरिसिद ज १३ त्रयोदश-
६००

रूपनदोद्धुतन्न संख्यातभागमात्र श्रृण रहितधनमं साधिकं म्गडुपुदु । अंतु माडुतिरलु साधिक-
द्विगुणलघ्व्यक्षरमक्कुं ज २ । मोदलोद्धुत्कृष्टसंख्यातगुणितसंख्यातभागद सप्तदशमभागमात्रंगुं १

ज १५ । ७ संख्यातभागवृद्धिपुस्तस्थानंगुं पिपुलिपर्यंतमागि नडु लघ्व्यक्षरं द्विगुणमक्कुं ।
१५ । १०

अपवर्त्यं ज ४१ । प्राक्तनपिपुलिपनंकादद्यक्ष्याणि मेलयित्वा ज ६० । अपवर्त्यं इदं ज ३ । प्रक्षेपके
२०० २०० १०

ज ७ । संयोग्य ज १० । अपवर्त्येदं ज प्राक्पुष्यभूतकिंचिदूनवयोदयरूपः संख्यातगुणहीनप्रक्षेपकप्रक्षेपक-
१० १०

श्रृणनेन पुनः किंचिदूनितेः ज १३ = । साधिकं कृत्वा उररितनत्रयन्ये युते सति लघ्व्यक्षरं द्विगुणं भवति ।
६०००

ज २ । प्रथमतः उत्कृष्टसंख्यातगुणितसंख्यातभागस्य सप्तदशमभागमात्रंगुं ज १५ । ७ संख्यातभागवृद्धिपुस्त-
१५ । १० १०

उस सम्बन्धी द्वितीय श्रृणका प्रमाण साधिक जघन्यको धनचासका गुणकार तथा उत्कृष्ट संख्यात और छह हजारका भागहार करनेपर होता है । उसको अलग रखकर शेषका अपवर्त्यन करनेपर साधिक जघन्यको तीन सौ तीसलीसका गुणकार और छह हजारका भागहार होता है । यहाँ गुणकारमें तेरह कम करके अलग रखना । उसमें साधिक जघन्यको तेरहका गुणकार और छह हजारका भागहार जानना । शेष साधिक जघन्यको तीन सौ तीसका गुणकार और छह हजारका भागहार रहा । तीससे अपवर्त्यन करनेपर साधिक जघन्यको ग्यारहका गुणकार और दस गुणित तीसका भागहार हुआ । उसे एक जगह स्थापित करना । यहाँ गुणकारमें-से तेरह कम करके जो अलग स्थापित किये थे उस सम्बन्धी प्रमाणसे प्रथम द्वितीय श्रृण सम्बन्धी प्रमाण संख्यात गुणा कम है इसलिए कुछ कम करके साधिक जघन्य किंचिन् कम तेरह गुणाको छह हजारसे भाग देनेपर इतना शेष रहा सो अलग रहे । तथा प्रक्षेपक-प्रक्षेपक सम्बन्धी गुणकारमें एक घटाया था उस सम्बन्धी श्रृणका प्रमाण साधिक जघन्यको सातका गुणकार और उत्कृष्ट संख्यात तथा दो सौका भागहार किये होगा है । उसको अलग रखकर शेष पूर्वोक्त प्रमाण साधिक जघन्यको उत्कृष्ट संख्यातका गुणकार और

रूपतया विगिहकमंथवान् एवापनाभारं । एवंविधमप्य एकाक्षरध्वनमर्थाज्ञानात्प्राप्तानमेकाक्षरधृतज्ञान-
मेवित्तु जिनदर्शादर्थं वेदत्परदुर्बेन्मिदं किञ्चित्प्रतिपादितमाप्नुु ।

अनन्तरं धृतनिबद्धमं धृतविषयमं वेद्वयं—

पणपत्रनिष्ठा भावा अणंतभागो दु अणमिलप्याणं ।

पणपत्रनिष्ठाणं पुण अणंतभागो दु मुदणिवटो ॥३३४॥

प्रज्ञापनीया भावा अनंतभागस्तु अर्थाभिज्ञाप्याना । प्रज्ञापनीयानां पुनरनंतभागः धृत-
निबद्धः ॥

अनभिज्ञाप्यंरूप्य वाग्विषयंरूप्यरूपं केवलं केवलज्ञानगोचरमप्य भावानां जीवाद्यर्थ-
पक्ष अनंतैरुभयभार्यगन्तु । भावाः जीवाद्यर्थगन्तु प्रज्ञापनीयाः तीर्थैरुत्तरसात्विद्यादिव्यप्यनि
प्रतिपाद्यंरूप्यस्तु । पुनः मते प्रज्ञापनीयानां सात्वितादिव्यत्वरनिप्रतिपाद्यंरूप्य भावानां जीवाद्य-
रूपंरूप्य अनंतैरुभयः अनंतैरुभयं धृतनिबद्धंरूपंरूप्यप्रकारंरूप्यरूप्येः विषयतेषां निवर्तित-
मस्तु । धृतकेवलज्ञानगोचरमर्थप्रतिपादनकारित्वं विषयविनिर्मुद्रामदिव्यप्यनिगमगोचर-
जीवाद्यर्थंरूप्यरूपंरूप्य केवलज्ञानगोचरेषु रूपायं ।

अवाप्यानामनन्तांगो भावाः प्रज्ञाप्यमानवाः ।

प्रज्ञाप्यमानवावतानामनन्तांगः श्रुतोचितः ॥

विगिहकमंथवान् एवापनाभारम् । एवंविधैकाक्षरध्वनमर्थाज्ञानमेकाक्षरधृतज्ञानमिति जिनैः कवितरमा-
दिवित्तु प्रतिपादितम् ॥३३३॥ अथ श्रुतनिबद्धं धृतविषयं च प्रस्थापयति—

अनभिज्ञाप्यानां अवापिप्यानां केवलं केवलज्ञानगोचरानां भावानां जीवाद्यर्थानां अनंतैरुभयभार्या-
भावाः—जीवाद्यर्थाः, प्रज्ञापनीयाः तीर्थैरुत्तरसात्विद्यादिव्यत्वरनिप्रतिपाद्याः चरन्ति । पुनः प्रज्ञापनीयानां भावानां
जीवाद्यर्थानां अनंतैरुभयः धृतनिबद्धः इत्याद्याद्युभयभार्यय निबद्धः विषयतया निवर्तित' धृतकेवलज्ञानमिति
अगोचरार्थप्रतिपादनकारित्वदिव्यप्यनेरतिवर्ति विषयविनेरति अगोचरजीवाद्यर्थंरूप्यरूप्यः केवलज्ञानेत्तौत्तर्यः ।
अवाप्यानामनन्तांगो भावाः प्रज्ञाप्यमानवाः । प्रज्ञाप्यमानवावानां अनन्तांगः श्रुतोचितः ॥३३४॥

रूप भावेऽभिप्रेत्य है । उस रूप अक्षर रूप्यरूप है । क्योंकि वह अक्षर ज्ञानकी वस्तुतिमें कारण
है । कण्ठ, ओष्ठ, गाल आदि स्थानोंकी हलन्-बन्धन आदि रूप क्रिया तथा प्रयत्नसे जिनके
स्वरूपकी रचना होगी है वे अकारादि स्वर, ककारादि व्यंजनरूप मूल वर्ण और उनके
संयोगसे बने अक्षर निरूप्यरूप हैं । पुनःकर्ममें उम-उम देशके अनुरूप लिखित अकारादिका
आकार रथापनाप्रर है । इस प्रकारके एक अक्षरके सुननेसे अत्यन्त हुआ अर्थज्ञान एकाक्षर
श्रुतज्ञान है ऐसा जिनकेबने कहा है । वसीके आधारमें मैंने किंचित् कदा है ॥३३३॥

अथ श्रुतके विषयको तथा श्रुतमें कियना निबद्ध है इमको कहते हैं—

जो भाव अनभिज्ञाप्य अर्थात् ध्वनिके द्वारा कहनेमें नहीं आ सकते, केवल केवल-
ज्ञानके ही विषय हैं ऐसे पदार्थ जीवादिके अनन्तरमें भाग मात्र प्रज्ञापनीय हैं अर्थात् तीर्थंकरकी
मानिश्य दिव्यध्वनिके द्वारा कहे जाते हैं । पुनः प्रज्ञापनीय जीवादि पदार्थोंका अनन्तरवा
भाग इत्याद्याद्युभयभार्यमें विषय रूपसे निबद्ध होता है । धृतकेवलज्ञानमें भी अगोचर अर्थ-
को कहनेकी शक्ति दिव्यध्वनिके ही होती है । और दिव्यध्वनिके भी अगोचर अर्थको प्रहण
करनेकी शक्ति केवलज्ञानमें है ॥३३४॥

१

१०

१९

२०

२५

३०

३५

हीनाधिकमानंगळप्य प्रमाणपेदात्थंपदद्वयमध्यदोळे पेळ्लपट्ट संख्याक्षरपरिमितसमूहदोळु वर्तमानत्व-
दिदं मध्यमपदमे दितन्वत्वंतीयिदं परमाणमशोळा मध्यमपदमे गृहीतमाप्लेके दोळे प्रमाणात्थंपदंगळु
लोकव्यवहारदोळु गृहीतंगळागुत्तिरली मध्यमपदमे लोकोत्तरमप्य परमाणमदोळु पदमेदितु
व्यवहारिसल्पट्टुदु ।

अन्तरं सघातश्रुतज्ञानमं पेळ्ळवं :-

एयपदादो उवरिं एगोणैकखरेण वड्ढंतो ।

संखेज्जसहस्रपदे उड्ढे संघादणाम सुदं ॥३३७॥

एकपदादुपध्मेकाक्षरेण वड्ढमाने । संख्येयसहस्रपदे वड्ढे संघातनामश्रुतं ॥

एकपदवके पेळ्ळ प्रमाणाक्षरसमूहद मेले एकैकवर्णवृद्धिक्रमदिदमेकपदाक्षरमात्रपदसमास-
ज्ञानविकल्पंगळु सलुत्तं विरलु द्विगुणपदज्ञानमश्रु-1 भवर मेले मतमेकैकवर्णवृद्धिक्रमदिदमेकपदा- 10
क्षरमात्रपदसमासज्ञानविकल्पंगळु सलुत्तं विरलु त्रिगुणपदश्रुतज्ञानमश्रुमितु प्रत्येकमेकपदाक्षरमात्र-
विकल्पसहस्रचरितंगळप्य चतुर्गुणपदादिसंख्यातसहस्रगुणितपदमात्रंगळु रूपोनपदसमासज्ञानविकल्प-

गळु सलुत्तं विरलु $\overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{०००}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{२}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{२००००}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{३००००}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{४००००}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{१०००}} \text{१-१}$ ई चरमपद-

अष्टाशीतिश्च पदवर्णाः इत्येतद्गापोत्तप्रमार्थकपदाशुनक्षदाक्षरसमूहो मध्यमपदं १६३४८३०७८८८ ।

हीनाधिकमानयोः प्रमाणपदार्थपदयोर्मध्ये एतदुक्तसंख्यापरिमिताक्षरसमूहे वर्तमानत्वात् मध्यमपदं इत्यन्वर्थतया १५
परमाणमे लदेव परिगृहीतं, प्रमाणपदार्थं पदे तु लोकव्यवहारे परिगृहीते । अत एव लोकोत्तरे परमाणमे
मध्यमपदमेव पदमिति व्यवहियते ॥३३६॥ अथ सघातश्रुतज्ञान प्ररूपयति—

एकपदस्य उक्तप्रमाणाक्षरसमूहस्योपरि एकैकाक्षरवृद्ध्या एकपदाक्षरमात्रेषु पदसमासज्ञानविकल्पेषु
गतेषु द्विगुणपदज्ञानं भवति । तस्योपरि पुनरपि एकपदाक्षरमात्रेषु पदसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु त्रिगुणपदज्ञानं
भवति । एवं प्रत्येकमेकपदाक्षरमात्रविकल्पसहस्रचरितेषु चतुर्गुणपदादिषु संख्यातसहस्रगुणितपदमात्रेषु रूपोनेषु २०
पदसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु—

$\overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{१}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{१००}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{२}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{२१}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{२१००}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{३}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{३१}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{३१०००}} \overset{0}{\text{प}} \overset{0}{\text{१}} \overset{0}{\text{उ}}$

१६ = १६ = १६ = १००० १

का समूह १६३४८३०७८८८ मध्यम पद है । प्रमाण पद और अर्थ पदमें हीन अधिक अक्षर
होते हैं । उन दोनोंके मध्यमें कही गयी संख्या परिमाणवाले अक्षर समूहमें वर्तमान होनेसे
इसका मध्यम पद नाम सार्थक होनेसे परमाणममें चही लिया गया है । प्रमाणपद और २५
अर्थपद तो लोकव्यवहारमें चलते हैं इसीसे लोकोत्तर परमाणममें मध्यमपदको ही पद
कहा है ॥३३६॥

अथ सघात श्रुतज्ञानको कहते हैं—

एक पदके उक्त प्रमाण अक्षर समूहके ऊपर एक-एक अक्षरकी वृद्धि होते-होते एक
अक्षर प्रमाण पद समास ज्ञानके विकल्पोंके होनेपर पद श्रुत ज्ञान दूना होता है । उसके ३०
ऊपर एक पदके अक्षर प्रमाण पदसमास ज्ञानके विकल्प वीतनेपर पदज्ञान तिगुना होता

१. म संखेज्जपदे उड्ढे सघादं णाम होदि सुदं ।

चउगइसरूपरूपपडिवचीदो दु उवरि पुव्वं वा ।

वण्णे संसेज्जे पडिवची उइडम्मि अणियोगं ॥३३९॥

चतुर्गतिस्वरूपरूपप्रतिपत्तितस्तुपरि पूर्यंभवत् । षण्ं संत्येये प्रतिपत्तिके वृद्धे अनुयोगं ॥

चतुर्गतिस्वरूपरूपप्रतिपत्तिकेवदं मुद्देयुमदर मेले प्रत्येकमेकैकवर्णवृद्धिक्रमवदं संख्यात-
सहस्रपदसंघातप्रतिपत्तिकेगळु संवृद्धिगळुगुत्तिरलु रूपोनतावन्माप्रतिपत्तिकसमासज्ञानविकल्पंगळु
सलुत्तंमिरलु तच्चरमप्रतिपत्तिकसमासोत्कृष्टविकल्पद मेले एकाक्षरवृद्धियागुत्तं विरलु अनुयोगाद्य-
श्रुतज्ञानमवयं । अदुत्तुं चतुर्दशमार्गणास्वरूपप्रतिपादकानुयोगमं व श-दसंदर्भमध्यजगतात्पर्य-
ज्ञानमे बुदत्तं ।

अनंतरं प्राभूतप्राभूतकर्म गायाद्वपदिदं पेञ्चपर :-

चोदसमग्गणसंजुद अणियोगादुवरि वडिद्वदे वण्णे ।

चउरादी अणियोगे दुगावारं पाहुडं होदि ॥३४०॥

चतुर्दशमार्गणासंयुतानुयोगादुपरि वदिते षण्ं । चतुराद्यनुयोगे द्विकवारं प्राभूतं भवति ॥

चतुर्दशमार्गणासंयुतानुयोगप्रतद मेले मुद्दे पूर्योक्तक्रमवदं प्रत्येकमेकैकवर्णवृद्धिसहचरित-
पदादिवृद्धिपाठदं चतुराद्यनुयोगंगळु संवृद्धिगळुगुत्तिरलु रूपोनतावन्माप्रगलनुयोगसमासज्ञान-
विकल्पंगळु सलुत्तं विरलु तच्चरमानुयोगसमासोत्कृष्टविकल्पद मेले एकाक्षरवृद्धियागुत्तिरलु
द्विकवारप्राभूतकर्म व श्रुतज्ञानमवयं ।

चतुर्गतिस्वरूपनिष्पन्नप्रतिपत्तिकान् परं तस्योपरि प्रत्येकमेकैकवर्णवृद्धिक्रमेण संख्यातसहस्रेषु पदसंघात-
प्रतिपत्तिकेषु वृद्धेषु रूपोनतावन्मात्रेषु प्रतिपत्तिकसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु तच्चरमप्रतिपत्तिकसमासोत्कृष्ट-
विकल्पस्योपरि एकस्मिन्मदरे वृद्धे सति अनुयोगावयं श्रुतज्ञानं भवति । तच्चतुर्दशमार्गणास्वरूपप्रतिपादकानु-
योगसंज्ञानमदरेमध्यवर्णनितार्थज्ञानमित्ययं ॥३३९॥ अथ प्राभूतक-प्राभूतकस्य स्वरूपं गायाद्वयेन प्रहृषयति-

चतुर्दशमार्गणासंयुतानुयोगादरं तस्योपरि पूर्वोक्तक्रमेण प्रत्येकमेकैकवर्णवृद्धिसहचरितपदादिवृद्धिभिरव-
चतुराद्यनुयोगेषु संवृद्धेषु सलुत्तु रूपोनतावन्मात्रानुयोगसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु तच्चरमानुयोगसमासोत्कृष्टविकल्प-
स्योपरि एकाक्षरवृद्धौ सत्यां द्विकवारप्राभूतकं नाम श्रुतज्ञानं भवति ॥३४०॥

चार गतियोंके स्वरूपको कहनेवाले प्रतिपत्तिकसे आगे उसके ऊपर एक-एक अक्षरकी
वृद्धिके क्रमसे संख्यात हजार पदोंके समुदायरूप संख्यात हजार संघात और संख्यात
हजार संघातोंके समूहरूप प्रतिपत्तिककी संख्यात हजार प्रमाण वृद्धि होनेपर उसमें-से एक
अक्षर कम करनेपर प्रतिपत्तिक समास ज्ञानके विकल्प होते हैं । उसके अन्तिम प्रतिपत्तिक
समासके उत्कृष्ट विकल्पके ऊपर एक अक्षर बढ़ानेपर अनुयोग नामक श्रुतज्ञान होता है ।
चौदह मार्गणाओंके स्वरूपके प्रतिपादक अनुयोग नामक श्रुतग्रन्थके सुननेसे हुआ अर्थज्ञान
अनुयोग श्रुतज्ञान है ॥३३९॥

अथ दो गायाओंसे प्राभूतक-प्राभूतकका स्वरूप कहते हैं—

चौदह मार्गणाओंसे सम्बद्ध अनुयोगसे आगे उसके ऊपर पूर्वोक्त क्रमसे प्रत्येक एक-
एक अक्षरकी वृद्धिसे युक्त पद आदिकी वृद्धिके द्वारा चार आदि अनुयोगोंकी वृद्धि होनेपर
प्राभूतक-प्राभूतक श्रुतज्ञान होता है । उसमें एक अक्षर कम करनेपर उतने मात्र अनुयोग

स्वरूपमभ्य भावभूतम् च शब्दविनंगवाह्यमप्य सामायिकादिचतुर्दशप्रकीर्णकभेदद्रव्यभावात्मक-
श्रुतं समुच्चयं माडल्पट्टुहु । पुद्गलद्रव्यरूपं वर्णपदवाक्यात्मकं द्रव्यश्रुतमवकुं । तच्छ्रवण-
समुत्पन्न श्रुतज्ञानपर्यायरूपं भावश्रुतमवकुं इतिदाचाट्याभिप्रायं ।

पर्यायादिशब्दगन्धो निरुक्ति तोरल्पडुगुमदेते दोडे परीयंते व्याप्यंते सर्वे जीवा अनेनेति
पर्यायः । सर्वजघन्यज्ञानमितल्प ज्ञानरहितजीवकभावमेयश्रुतमुत्पारदं । केवलज्ञानवतरल्प
जीवंगळोळमा ज्ञानमुमकुमदेते दोडे महासंख्येयप्य कोट्यादियोळु एकाद्यल्पसंख्येयुमल्लियंतंते
ज्ञातव्यमवकुं ।

अक्षमिद्वयं तस्मै अक्षाय श्रोत्रेन्द्रियाय राति ददाति स्वमर्पयतीत्यक्षरम् । पचते गच्छति
जानात्यर्थमात्माऽनेनेति पदम् । सम् संक्षेपेणैकदेशेन ह्ययते गम्यते ज्ञायते एका गतिरनेनेति
संघातः । प्रतिपद्यंते सामस्येन ज्ञायंते चतस्रो गतयोऽनेनेति प्रतिपत्तिः । संज्ञायां कप्रत्ययविधाना-
त्प्रतिपत्तिकः । अनु गुणस्थानानुसारेण गत्यादिषु मार्गणामु युज्यंते संबध्यंते जीवा अस्मिन्ननेनेति
वा अनुयोगः ।

प्रकर्षेण नामस्थापनाद्रव्यभावनिर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणस्थितिविधानसत्संख्याक्षेत्र-
स्पर्शनकालांतरभावाल्यपद्रव्यत्वादिविशेषेण वस्त्वधिकारात्पर्यैराभूतं परिपूर्णं प्राभूतं वस्तुनोधिकारः
प्राभूतमिति संज्ञाऽस्यास्तीति प्राभूतकं प्राभूतकस्याधिकारः प्राभूतकप्राभूतकं । वसंति पूर्ववंगहार्ण-
स्वरूपं भावभूतम् । चराचरं अज्ञवाह्यसामायिकादिचतुर्दशप्रकीर्णकभेदद्रव्यभावात्मकश्रुतं पुद्गलद्रव्यरूपं
वर्णपदवाक्यात्मकं द्रव्यभूतं, तच्छ्रवणसमुत्पन्नश्रुतज्ञानपर्यायरूपं भावभूतं च समुच्चयते इति आचार्यस्य
अभिप्रायः । पर्यायादिशब्दानां निरुक्तिः प्रदर्शयते । तयया-परीयन्ते व्याप्यन्ते सर्वे जीवा अनेनेति पर्यायः-
सर्वजघन्यज्ञानं, ईदृशज्ञानरहितस्य जीवस्याभावात् । केवलज्ञानवतरत्वात् तत्समवात् महासंख्यायां कोट्यादौ
एकाद्यल्पसंख्यावत् । अक्षाय-श्रोत्रेन्द्रियाय राति ददाति स्वमर्पयतीत्यक्षरम् । पचते गच्छति जानात्यर्थमात्मा
अनेनेति पदम् । सं-संक्षेपेण एकदेशेन ह्ययते गम्यते ज्ञायते एका गतिः अनेनेति संघातः । प्रतिपद्यंते सामस्येन
ज्ञायन्ते चतस्रो गतयः अनेनेति प्रतिपत्तिः, संज्ञायां कप्रत्ययविधानात् प्रतिपत्तिकः । अनु गुणस्थानानुसारेण
गत्यादिषु मार्गणामु युज्यन्ते संबध्यन्ते जीवा अस्मिन्ननेनेति चानुयोगः । प्रकर्षेण-नामस्थापनाद्रव्यभावनिर्देश-
स्वामित्वसाधनाधिकरणस्थितिविधान-सत्संख्यादोस्तर्चनकालान्तरभावाल्यपद्रव्यत्वादिविशेषेण वस्त्वधिकारात्पर्यैरा-

रूप वर्णपद वाक्यात्मक द्रव्यश्रुत होवा है और इसके सुननेसे उत्पन्न हुए ज्ञानरूप भावश्रुत
है यह आचार्यका अभिप्राय है । अब पर्याय आदि शब्दोंकी निरुक्ति कहते हैं—इसके द्वारा
सब जीव 'परीयन्ते' व्याप्य किये जाते हैं वह पर्याय अर्थात् सर्वजघन्य ज्ञान है । इस प्रकारके
ज्ञानसे रहित कोई जीव नहीं है, केवलज्ञानियोंमें भी वह रहता है । जैसे कोटि आदि महा-
संख्यामें एक आदि अल्प संख्या गमित रहती है । 'अक्षाय' अर्थात् श्रोत्रेन्द्रियके लिए 'राति'
अपनेको देता है वह अक्षर है । जिसके द्वारा आत्मा अर्थको 'पचते' जानता है वह पद है ।
जिसके द्वारा एक गति 'सं' संक्षेप रूपसे एकदेशसे 'हन्यते' जानी जाती है वह संघात है ।
जिसके द्वारा चारों गतियाँ 'प्रतिपद्यन्ते' पूर्ण रूपसे जानी जाती हैं वह प्रतिपत्ति है । संज्ञामें
'क' प्रत्यय करनेसे प्रतिपत्तिक होता है । जिसमें या जिसके द्वारा जीव 'अनु' गुणस्थानके
अनुसार गति आदि मार्गणार्थमें 'युज्यन्ते' युक्त किये जाते हैं वह अनुयोग है । 'प्रकर्षेण'
नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव, निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति, विधान, सत्,
संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव, अल्पवहुत्व आदि विशेषोंसे वस्तु अधिकार

रूप वर्णपद वाक्यात्मक द्रव्यश्रुत होवा है और इसके सुननेसे उत्पन्न हुए ज्ञानरूप भावश्रुत
है यह आचार्यका अभिप्राय है । अब पर्याय आदि शब्दोंकी निरुक्ति कहते हैं—इसके द्वारा
सब जीव 'परीयन्ते' व्याप्य किये जाते हैं वह पर्याय अर्थात् सर्वजघन्य ज्ञान है । इस प्रकारके
ज्ञानसे रहित कोई जीव नहीं है, केवलज्ञानियोंमें भी वह रहता है । जैसे कोटि आदि महा-
संख्यामें एक आदि अल्प संख्या गमित रहती है । 'अक्षाय' अर्थात् श्रोत्रेन्द्रियके लिए 'राति'
अपनेको देता है वह अक्षर है । जिसके द्वारा आत्मा अर्थको 'पचते' जानता है वह पद है ।
जिसके द्वारा एक गति 'सं' संक्षेप रूपसे एकदेशसे 'हन्यते' जानी जाती है वह संघात है ।
जिसके द्वारा चारों गतियाँ 'प्रतिपद्यन्ते' पूर्ण रूपसे जानी जाती हैं वह प्रतिपत्ति है । संज्ञामें
'क' प्रत्यय करनेसे प्रतिपत्तिक होता है । जिसमें या जिसके द्वारा जीव 'अनु' गुणस्थानके
अनुसार गति आदि मार्गणार्थमें 'युज्यन्ते' युक्त किये जाते हैं वह अनुयोग है । 'प्रकर्षेण'
नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव, निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति, विधान, सत्,
संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव, अल्पवहुत्व आदि विशेषोंसे वस्तु अधिकार

द्वादशोत्तरशतप्रमितकोटिगञ्जु त्रैशोतिलक्षंगञ्जु मन्वत्तैन्दु सात्तिरद्वन्द्वु द्वादशांगमध्यमसार्ध-
पदप्रमाणमवकुं ११२८३५८००५ ।

अनंतरमंगवाह्याक्षरसंख्येयं पेञ्चदपननु मेरुपदाक्षरंगञ्जि देक्कट्टनं भागिमुत्तिरलु शेषाक्षरं-
गञ्जवर प्रमाणमं पेञ्चद्वयं :—

अडकोटिप्यलक्खा अट्टमहस्सा य एयसदिमं च ।

पण्णत्तरिवण्णाओ पइण्णयाणं पमाणं तु ॥३५१॥

अष्टकोटयेकलक्षमष्टसहस्रं चैकशतिकं च । पंचोत्तरसप्ततिवर्णाः प्रकीर्णकानां प्रमाणं तु ॥

एतु कोटिगञ्जुमेकलक्षमुमं दुसहस्रगञ्जु नूरेपत्तैनु ८०१०८१७५ मंगवाह्यांगञ्जुप सामायि-
कादिचतुर्दशभेदंगञ्जोञ्जु संभविमुव प्रकीर्णकाक्षरंगञ्जु प्रमाणमकुं । तु शब्दविदं पूर्वगुणदोञ्जु
द्वादशांगपदसंख्ये पेञ्चत्पट्टदुदी सुप्रदोञ्जंगवाह्याक्षरसंख्ये पेञ्चत्पट्टदुवेयो विरोपमरियत्पट्टुगु ।

अनंतरमो पर्यनिर्णयात्यं गायाद्वयमं पेञ्चद्वयं :—

तेचीसयेंजणाई सत्तायीसा सरा तथा भणिपा ।

चत्तारिय जोगवहा चउसट्ठी मूलवण्णाओ ॥३५२॥

प्रयत्तिरगद्वयंजनानि सप्तविंशति स्वराः तथा भणिताः । चत्वारदच योगवाहाः चतुःपट्टि-
मूलवर्णाः ॥

द्वादशोत्तरशतकोट्यः त्रैशोतिलक्षानि अष्टशतसहस्रानि पञ्च च द्वादशाङ्गानां मन्वपयंउत्तरमाणां
भवति ११२, ८३, ५८, ००५ । [अन्वये मन्वपयंदेवदपने इत्यङ्गम् । अथवा आषाढदिशास्यमासपदगङ्गु-
धुउसङ्गपरा अङ्गं अत्रयः एकदेशः आषाढाद्येकेत्याहभिरत्ययः] ॥३५०॥ अथाङ्गवाहाङ्गवर्णा
कथयति—

अष्टकोटयेकलक्षसहस्रंकाशत्रयमसतिरमाणाः प्रकीर्णकानां अङ्गवाह्यानां सामायादीनां च
चतुर्दशानां वर्णा भवन्ति ८०१०८१७५ गुणसः पूर्वगुणे द्वादशाङ्गवर्णेष्वोक्त, अस्मिन् गुणे च अङ्गवाहा-
क्षरसंख्येर्नोति विरोपं जायति ॥३५१॥ अथासुमेवार्थं गायाद्वेवाह—

द्वादशांगके सय मध्यम पदोका प्रमाण एक सौ चारह कोटि, तेरासी लाख, अठावन
हजार पाँच है । अङ्गवते अर्थात् मध्यम पदोके द्वारा जो लपित होता है वह अंग है ।
अथवा आचार आदि चारद शास्त्रमगूरूप धृतस्वरूपका जो अंग अर्थात् अथयय या एक-
देश है । अर्थात् आचार आदि एक-एक शास्त्र अंग है ॥३५०॥

अय अंगवाहाकी अक्षर संख्या कहते हैं—
प्रकीर्णक अर्थात् सामायिक आदि चौदह अंगवाहोके अक्षर आठ कोटि, एक लाख
आठ हजार एक सौ पचहत्तर प्रमाण होते हैं । तु शब्द विरोपार्थक है वह लपित करता है
कि पूर्व गायासुयमं द्वादशांगके पदोकी संख्या कही है । इस गाया सुयमं अंगवाहोके अक्षरोंकी
संख्या कही है ॥३५१॥

इसी अर्थको दो गायाओसे कहते हैं—

१. [] एतकोट्यन्वयंउत्तमो भाति च प्रथो ।

मूलवर्णप्रमाणमप्य चतुःषष्ट्यंकरस्यानरूपंगळं विरलिसि तिष्यंवरञ्जितरूपारिदं स्थापिसि रूपं प्रति द्विकंगञ्जित्तु संगुणं कृत्वा परस्पर गुणनगं माडि तल्लब्धदोळू रूपीनं माडुतिरलु श्रुत-
ज्ञानस्य द्वादशांगप्रकीर्णकं श्रुतस्कर्यद्वयभ्रूतद अयुनरुताक्षरंगळू तल्लब्धप्रमितंगळपुवैते दोडे
वाक्यार्थप्रतीतिनिमित्तंगळपुनरुताक्षरंगळो संख्यानियमाभावमपुवैरिदं । एकद्विष्यादि चतुः-
षष्टिसंयोगपर्यंतमप्य संयोगाक्षरंगळू संकलितमागुतिरलु श्रुतस्कर्यवाक्षरप्रमाणोत्पत्तियक्कुमा ५
संकलितधनमेनिते दोडे वेळ्यपरु :-

एककट्टं च च य छस्सत्तयं च न य सुण्णसत्ततियसत्ता ।

सुण्णं णव पण पंच य एककं छक्केकगो य पणगं च ॥३५४॥

एकाष्टचतुःचतुःषष्टसप्तकं च चतुःचतुःशून्यसप्तत्रिकसप्त । शून्यं नव पंच पंच च एकं षट्कैक-
कदच पंचकं च ॥

एंदितेनांरुमादियागि पंचांकावसानमादविशतिस्थानातरमकट्टिरूपवर्गंधाराहूपोनयष्टवर्ग-
प्रमाणाक्षरंगळपुवु—१८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ ।

| क | ख | ग | घ | ङ | च | छ | ज | झ | ञ | ००००६४ |
|---|---|---|---|----|----|----|-----|-----|-----|-----------|
| १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | प्रत्येक |
| १ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | द्विसंयोग |
| | २ | १ | ३ | ६ | १० | १५ | २१ | २८ | ३६ | त्रिसंयोग |
| | | ४ | १ | ४ | १० | २० | ३५ | ५६ | ८४ | चतुःसंयोग |
| | | | ८ | १ | ५ | १५ | ३५ | ७० | १२६ | पंचसंयोग |
| | | | | १६ | १ | ६ | २१ | ५६ | १२६ | षट्संयोग |
| | | | | | ३२ | १ | ७ | २८ | ८४ | सप्तसंयोग |
| | | | | | | ६४ | १ | ८ | ३६ | षष्टसंयोग |
| | | | | | | | १२८ | १ | ९ | नवसंयोग |
| | | | | | | | | २५६ | १ | दशसंयोग |
| | | | | | | | | | ५१२ | |

मूलवर्णप्रमाणं चतुःषष्टिपरं एवैकरूपेण विरलयित्वा रूपं रूपं प्रति द्विकं रत्वा परस्परं सङ्गुण्य तल्लब्धे

मूल अक्षर प्रमाण चौसठ पदोंको एक-एक रूपसे विरलन करके एक-एक रूपपर दो- २५

४।५।६।७।८।९ अपवर्तितमिदु ८४। अष्टसंयोगंगञ्जु । सप्तरूपोनपदपङ्क्तवारसंकलितमवकु
६।५।४।३।२।१

३।४।५।६।७।८।९ अपवर्तितमिदु ३६। नवसंयोगंगञ्जु अष्टरूपोनपदसप्तवारसंकलितमवकु
७।६।५।४।३।२।१

२।३।४।५।६।७।८।९ अपवर्तितमिदु ९। दशसंयोगंगञ्जु नवरूपोनपदाष्टवारसंकलित-
८।७।६।५।४।३।२।१

मवकुमादोडमल्लि परमार्थविद्वं संकलितमिल्लिल्लियो दे रूपमवकु-। मिबेळं कूडि ५१२। इतो
प्रकारदिवेलेडेयोञ्जु तंजु को बुदु ।

चरमस्थानदोञ्जु तोप्ये वं दते दोडे चरमदोञ्जु प्रत्येकभंग एकः प्रत्येकभंगमो बु । द्विसंयोगी ५
द्विरूपपदमात्रः । द्विसंयोगंगञ्जुवसंरूप्य विरूपपदमात्रमवकु । ६३ । त्रिसंयोगादिक्रमाः त्रिसंयोगचतु-
संयोगचतुसंयोगादि स्वसं भवचतुःषष्टिसंयोगावसानमाद संयोगंगञ्जु प्रमाणं यथाक्रमं क्रममनति-
क्रमिसदे रूपाधिकवारहोनपदसंकलितं रूपाधिकैकद्वित्रिवारादि-स्वसंभवद्व्युत्तरयष्टिपदमवसाने-

१२६। सप्तसंयोगाः पञ्चरूपोनपदस्य पञ्चवारसंकलनमात्राः ४।५।६।७।८।९ अपवर्तिता ८४।
६।५।४।३।२।१

अष्टसंयोगाः सप्तरूपोनपदस्य पङ्क्तवारसंकलनमात्राः ३।४।५।६।७।८।९ अपवर्तिताः ३६। १०
७।६।५।४।३।२।१

नवसंयोगाः अष्टरूपोनपदस्य सप्तवारसंकलनमात्राः २।३।४।५।६।७।८।९ अपवर्तिताः ९।
८।७।६।५।४।३।२।१।

दशसंयोगाः नवरूपोनपदस्य अष्टवारसंकलनमात्राः । अत्र परमार्थतः संकलनमेव नास्ति इत्येकः । एते सर्वे
एकप्रत्येकमङ्गनवद्विसंयोगैः द्वादशोत्तरपञ्चशतभङ्गा भवन्ति ५१२ । एवं सर्वपदेव्यानयेत् । चरमस्थाने
प्रत्येकभंगः एकः १ । द्विसंयोगो विरूपपदमात्राः । दश त्रिसंयोगाः द्विरूपोनपदस्यैकवारसंकलनमात्राः

पाँच हीन गच्छका चार बार संकलन धन मात्र हैं । सो पाँच, छह, सात, आठ, नौको पाँच, १५
चार, तीन, दो, एकसे भाग देकर ५।६।७।८।९। अपवर्तन करनेपर एक सौ छब्बीस
५।४।३।२।१।

होते हैं । सात संयोगी भंग छह हीन गच्छका पाँच बार संकलन धन मात्र हैं । सो चार,
पाँच, छह, सात, आठ, नौ में छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग देकर ४।५।६।७।८।९
६।५।४।३।२।१

अपवर्तन करनेपर चौरासी होते हैं । आठ संयोगी भंग सात हीन गच्छका छह बार संकलन
धन मात्र हैं । सो तीन, चार, पाँच, छह, सात, आठ, नौ को सात, छह, पाँच, चार, तीन, २०
दो, एकका भाग देकर ३।४।५।६।७।८।९ अपवर्तन करनेपर छत्तीस होते हैं ।
७।६।५।४।३।२।१।

नौ संयोगी भंग आठ हीन गच्छका सात बार संकलन धन मात्र हैं । सो दो, तीन, चार,
पाँच, छह, सात, आठ, नौको आठ, सात, छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग देनेपर
नौ होते हैं । दस संयोगी भंग नौ हीन गच्छका आठ बार संकलन धन मात्र हैं । सो यहाँ २५
वास्तवमें संकलन नहीं है क्योंकि एकका संकलन एक ही होता है अतः एक ही भंग है ।
इस प्रकार सबको जोड़नेपर दसवें स्थानमें पाँच सौ चारह भंग होते हैं इसी प्रकार सब

कर्णाटपुति जीवतत्त्वप्रदीपिका

मागतसामि ७।५७।२९।५९। ०।६१।३१। ० अपवर्तितगुणितमिदु ३८।७२८९४६९७
५६।५७।५८।५९।६०।६१।६२।६३
८।७।६।५।४।३।२।१

दशसंयोगदोष्ट नवहोतपद अष्टवारमंकलितमयम् अप ५५। ७।१९।२९।५९। ०।६१।३१। ०
५५।५६।५७।५८।५९।६०।६१।६२।६३
९ ८ ७ ६ ५ ४ ३ २ १
हृत्नीप्रकारदिदमशंसंचारसंज्ञनितैकादशसंयोगादिभंगगज् यथासंभवंगज् नञ्जु द्विचरमप्रियष्टि-

संयोगगज् रूपाधिरैयष्टिवारसंकलनसंख्यात्रिहीनपद ६४-६१ एक्यष्टिवारसंकलितमयम्
२३।४।००००।६०।६१।६२।६३ अपवर्तितमिदु ६३। घतुःपष्टिसंयोगमो देयम् १।१।
६२ ६२।६०।५५४। ३। २। १
मप्य
००००

ई चरमघतुःपष्टघसरस्यानदोष्ट प्रत्येकभंगमादियागि घतुःपष्टघसर संयोगभंगार्थतानमादसमस्त
दारविरुद्धगज् पुति एकरुद्र अष्टमवकु-१८= मितैकाद्यैकोत्तरवर्णवृद्धिःमदिवं घतुःपष्टिवर्णा

नवसंयोगाः अष्टरूपोत्पदस्य सप्तवारसंकलनमात्राः ५६।५७।५८।५९।६०।६१।६२।६३
८।७।६।५।४।३।२।१

अपवर्तितः ३८३२८९४६९७। दशसंयोगाः नवहोतपदस्य अष्टवारसंकलनमात्राः
५५।५६।५७।५८।५९।६०।६१।६२।६३। अनेन इत्य.....दशसंचारसंज्ञनितैकादश

यादिमन्त्रा यथासंभवं नीत्वा द्विचरमप्रियष्टिसंयोगाः द्वापष्टिकोत्पदस्यैक्यष्टिवारसंकलन
२।३।४।०००।६०।६१।६२।६३। अत्रनिता ६३। घतुःपष्टिसंयोगः एक एव
६२।६१।६०। मप्य ४।३।२।१।

अथ घतुःपष्टिमैत्राररपाने प्रदेवादीनां घतुःपष्टिसंयोगाख्याना सर्वेणामपराणा मुतिरेरदुष्टार्थं

भंग सात हीन गच्छका छद् वार संकलन मात्र होते हैं सो सत्तावन, अट्ठावन,
साठ, इकमठ, वासठ, तिरमठको मान, छद्, पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग
पचपन करोड़ बत्तीस लाख मत्तर हजार छद् सो इकदत्तर होते हैं। नौ संयोगी
हीन गच्छका मान वार संकलन मात्र। सो छपन, सत्तावन, अठावन, उनमठ, स
मठ, वामठ, तिरमठको आठ, सात, छद्, पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग के
अथ सत्तामी करोड़ अट्ठाईस लाख चौरानवे हजार छद् सो सत्तानवे होते हैं। स
भंग नौ हीन गच्छका आठ वार संकलन मात्र। सो पचपन, छपन, सत्तावन
उनमठ, साठ, इकमठ वासठ, तिरमठको नौ, आठ, सात, छद्, पाँच, चार, तीन
भाग देनेपर होते हैं। इमी प्रकार ग्यारह संयोगी आदि भंग जानना।
तिरमठ संयोगी भंग वामठ हीन गच्छ दोका इकसठ वार संकलन
दो, तीन आदि एक-एक बढ़ते तिरसठ पर्यन्तको वासठ इकसठ आदि एक-ए
पर्यन्तका भाग देनेपर तिरमठ भंग होते हैं। पाँसठ संयोगी भंग एक ही

वाङ्मयानि प्रज्ञाप्यन्ते कम्पन्ते यस्यां सा व्याख्याप्रज्ञानाम् पंचममंगं । नायस्त्रिलोकेऽवराणां स्वामी तीर्थंकरपरमभट्टारकस्तस्य धर्मंकथा जीवादिबस्तुस्वभावकथनं । घातिकर्मक्षयानन्तर-केवलज्ञानसहोत्पन्नतीर्थंकरत्वपुण्यातिशयविजृम्भितमहिम्नस्तोत्यंकरस्य पूर्वार्द्धमध्याह्नापरारह्णा-द्वंरात्रिषु षट् षट् घटिकाकालपर्यन्तं द्वादशगणसभामध्ये स्वभावतो दिव्यध्वनिद्वग्च्छत्यन्यकालेपि गणधरशक्रचक्रधरप्रश्नानन्तरं घोदभवति । एवं समुद्भूतो दिव्यध्वनिः समस्तासन्नध्रोतुगणानु-दृश्य उत्तमशमादिलक्षणं वा धर्मं कथयति । अथवा ज्ञातुर्गणधरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रश्नानु-सारेण तदुत्तरवार्यरूपा धर्मंकथातत्पुष्टास्तित्वनास्तित्वादित्यरूपकथनं । अथवा ज्ञातुर्णां तीर्थंकर-गणधरशक्रचक्रधरादीनां धर्मानुबंधिकपोपकथाकथनं ज्ञातुधर्मंकथानाम् षट्मंगं ।

तो वासयज्ज्वायणे अंतपठेणुत्तरोववाददसे ।

पणहाणं वापरणे विवायसुत्ते य पदसंखा ॥३५७॥

१०

तत उपासकाभ्यपने अंतहृद्देशे अनुत्तरोपवाददसे । प्रश्नानां व्याकरणे विपाकमूत्रे च पद-संख्या ॥

गणधरदेवप्रश्नवाक्यानि प्रज्ञाप्यन्ते कम्पन्ते यस्यां सा व्याख्याप्रज्ञानाम् पञ्चममङ्गं । नायः—त्रिलोकेऽवराणां स्वामी तीर्थंकरपरमभट्टारकः तस्य धर्मंकथा जीवादिबस्तुस्वभावकथनं, घातिकर्मक्षयानन्तरकेवलज्ञानसहो-त्पन्नतीर्थंकरत्वपुण्यातिशयविजृम्भितमहिम्नः तीर्थंकरस्य पूर्वार्द्धमध्याह्नापरारह्णाधरात्रेषु षट्पट्टिकाकाल-पर्यन्तं द्वादशगणसभामध्ये स्वभावतो दिव्यध्वनिद्वग्च्छति । अन्यकालेऽपि गणधरशक्रचक्रधरप्रश्नानन्तरं घोद्वति । एवं समुद्भूतो दिव्यध्वनिः समस्तासन्नध्रोतुगणानुदृश्य उत्तमशमादिलक्षणं रत्नत्रयात्मकं वा धर्मं कथयति । अथवा ज्ञातुर्गणधरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रश्नानुसारेण तदुत्तरवार्यरूपा धर्मंकथा तत्पुष्टा-स्तित्वनास्तित्वादित्यरूपकथनं, अथवा ज्ञातुर्णां तीर्थंकरगणधरशक्रचक्रधरादीनां धर्मानुबंधिकपोपकथाकथनं नाथधर्मंकथा ज्ञातुधर्मंकथानाम् वा षट्मङ्गम् ॥३५६॥

१५

२०

अंगमें होता है । क्या जीव है या नहीं है ? क्या जीव एक है या अनेक है ? क्या जीव नित्य है या अनित्य है ? क्या जीव वृक्षय है या अक्षय है इत्यादि गणधरदेवके साठ हजार प्रश्न भगवान् अर्हन्त तीर्थंकरके पासमें पूछे गये जिसमें विशेष अर्थात् बहुत प्रकारसे प्रज्ञाप्यन्ते कहे जाते हैं वह व्याख्याप्रज्ञानि नामक पाँचवाँ अंग है । नाथ अर्थात् तीनों लोकोंके ईश्वरोंका स्वामी तीर्थंकर परम भट्टारककी धर्मंकथा—जीवादि वस्तुओंके स्वभावका कथन, कि घातिकर्मके क्षयके अनन्तर केवलज्ञानके साथ उत्पन्न तीर्थंकर नामक पुण्याति-शयसे जिनकी महिमा बढ़ गयी है उन तीर्थंकरकी पूर्वाह्न, मध्याह्न, अपराह्न और अर्धरात्रिमें छह-छह घड़ी काल पर्यन्त बारह गणोंकी सभाके मध्य स्वभावसे दिव्यध्वनि-खिरती है, अन्य समयमें भी गणधर, इन्द्र और चक्रवर्तीके प्रश्न करनेपर खिरती है । इस प्रकार उत्पन्न हुई दिव्यध्वनि समस्त निकटवर्ती श्रोतागणोंके उद्देशसे उत्तमशमादि लक्षणरूप रत्नत्रयात्मक धर्म-का कथन करती है । अथवा ज्ञाता जिज्ञासु गणधर देवके प्रश्नके अनुसार उत्तर वाक्यरूप धर्मंकथा, पूछे गये अस्तित्व-नास्तित्व आदिके स्वरूपका कथन अथवा ज्ञाता तीर्थंकर गण-धर इन्द्र चक्रवर्ती आदिके धर्मानुबन्धी कथोपकथन जिसमें हो वह ज्ञातुधर्मंकथा नामक छठा अंग है ॥३५६॥

२५

३०

वाक्यानि प्रज्ञाप्यन्ते कथ्यन्ते यस्यां सा व्याख्याप्रज्ञप्तिनाम पञ्चममंगं । नायस्त्रिलोकेश्वराणां स्वामी तीर्थंकरपरमभट्टारकस्तस्य धर्मकथा जीवादिबस्तुस्वभावकथनं, धातिकर्मशयानन्तर-केवलज्ञानसहोत्पन्नतीर्थंकरत्वपुण्यातिशयविजृम्भितमहिम्नस्तीर्थंकरस्य पूर्वार्द्धमध्याह्नापरार्द्धा-द्वारात्रिपु पद् पद् घटिकाकालपर्यन्तं द्वादशगणसभामध्ये स्वभावतो दिव्यध्वनिदग्दृग्छट्यन्यकालेपि गणधरशक्रचक्रधरप्रश्नानन्तरं घोडभवति । एवं समुद्भूतो दिव्यध्वनिः समस्तासन्नधोतुगणानु-द्दिश्य उत्तमक्षमादिलक्षणं वा धर्मं कथयति । अथवा ज्ञातुर्गणधरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रश्नानु-सारेण तदुत्तरयाव्यरूपा धर्मकथातत्पुट्यास्तित्यनास्तित्वाविस्वरूपकथनं । अथवा ज्ञातृणां तीर्थंकर-गणधरशक्रचक्रधरादीनां धर्मानुबन्धिकथोपकथाकथनं ज्ञातृधर्मकथानाम षष्ठमंगं ।

तो वासयअज्जयणे अंतयडेणुत्तरोववाददसे ।

पणहाणं वायरणे विवायसुत्ते य पदसंखा ॥३५७॥

तत उपासकाध्ययने अंतकृद्देशे अनुत्तरोपपाददशे । प्रश्नानां व्याकरणे विपाकमूत्रे च पद-संख्या ॥

गणधरदेवप्रश्नवाक्यानि प्रज्ञाप्यन्ते कथ्यन्ते यस्यां सा व्याख्याप्रज्ञप्तिनाम पञ्चममङ्गं । नायः—त्रिलोकेश्वराणां स्वामी तीर्थंकरपरमभट्टारकः तस्य धर्मकथा जीवादिबस्तुस्वभावकथनं, धातिकर्मशयानन्तरकेवलज्ञानसहो-त्पन्नतीर्थंकरत्वपुण्यातिशयविजृम्भितमहिम्नः तीर्थंकरस्य पूर्वार्द्धमध्याह्नापरार्द्धापरार्द्धेषु पद्पद्घटिकाकाल-पर्यन्तं द्वादशगणसभामध्ये स्वभावतो दिव्यध्वनिदग्दृग्छटि । अन्यकालेऽपि गणधरशक्रचक्रधरप्रश्नानन्तरं घोडभवति । एवं समुद्भूतो दिव्यध्वनिः समस्तासन्नधोतुगणानुद्दिश्य उत्तमक्षमादिलक्षणं रत्नत्रयात्मकं वा धर्मं कथयति । अथवा ज्ञातुर्गणधरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रश्नानुसारेण तदुत्तरयाव्यरूपा धर्मकथा तत्पुट्या-स्तित्वनास्तित्वाविस्वरूपकथनं, अथवा ज्ञातृणां तीर्थंकरगणधरशक्रचक्रधरादीनां धर्मानुबन्धिकथोपकथाकथनं नायधर्मकथा ज्ञातृधर्मकथानाम वा षष्ठमङ्गम् ॥३५६॥

अंगमें होता है । क्या जीव है या नहीं है ? क्या जीव एक है या अनेक है ? क्या जीव नित्य है या अनित्य है ? क्या जीव षट्कन्य है या अवक्तन्य है इत्यादि गणधरदेवके साठ हजार प्रश्न भगवान् अर्हन्त तीर्थंकरके पासमें पूछे गये जिसमें विशेष अर्थात् बहुत प्रकारसे प्रज्ञाप्यन्ते कहे जाते हैं वह व्याख्याप्रज्ञप्ति नामक पाँचवाँ अंग है । नाय अर्थात् तीनों लोकोंके ईश्वरोंका स्वामी तीर्थंकर परम भट्टारककी धर्मकथा—जीवादि बस्तुओंके स्वभावका कथन, कि धातिकर्मके शयके अनन्तर केवलज्ञानके साथ उत्पन्न तीर्थंकर नामक पुण्याति-शयसे जिनकी महिमा बढ़ गयी है उन तीर्थंकरकी पूर्वाह्न, मध्याह्न, अपराह्न और अर्धरात्रिमें छह-छह घड़ी काल पर्यन्त बारह गणोंकी सभाके मध्य स्वभावसे दिव्यध्वनि खिरती है, अन्य समयमें भी गणधर, इन्द्र और चक्रवर्तीके प्रश्न करनेपर खिरती है । इस प्रकार उत्पन्न हुई दिव्यध्वनि समस्त निकटवर्ती श्रोतागणोंके बड़ेसे उत्तमक्षमादि लक्षणरूप रत्नत्रयात्मक धर्म-का कथन करती है । अथवा ज्ञाता जिज्ञानु गणधर देवके प्रश्नके अनुसार उत्तर वाक्यरूप धर्मकथा, पूछे गये अस्तित्व-नास्तित्व आदिके स्वरूपका कथन अथवा ज्ञाता तीर्थंकर गण-धर इन्द्र चक्रवर्ती आदिके धर्मानुबन्धी कथोपकथन जिसमें हो वह ज्ञातृधर्मकथा नामक छठा अंग है ॥३५६॥

धामनानि प्रमात्येने कल्पन्ते यस्यां सा व्याख्याप्रतिनाम पंचममंगं । नायतिप्रतीकेऽवसानो
 स्यामी तीर्थंरपरममट्टारकस्तस्य धर्मरूपा जीवादिबस्तुस्वभावकरुणं । धातिकर्मधामानतर-
 केवलज्ञानरहितोन्नतीर्थंरपरयुन्वातिगययिन्मिन्नमहिम्नगीत्यंकरस्य पूर्वाह्लमभ्याह्लापरह्ला-
 ङ्गंरानिनु यद् यद् पट्टिवासापयंरं ह्यारगन्तसामान्ये स्वभायतो दिव्यप्यनिदृश्यकल्पव्यरगतंरपि
 यनपरगणकपच्यप्रदानंरंरं चोरभवति । एवं समुद्रभूतो दिव्यप्यनिः समातागन्धोनुगनानु-
 दित्य उत्तमसामादित्यशनं वा धर्मं कथयति । अथवा शाशुर्गन्धपरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रदानानु-
 सारेण तदुत्तरदायकरुपा धर्मंरपागतदृष्टास्तित्वनास्तित्वादिस्वरूपकरुणं । अथवा शाशुर्वा तीर्थंकर-
 गन्धपराःकल्पयसारीनां धर्मानुबन्धिकयोपरुपाकरुणं शाशुर्धर्मरूपानाम यच्छर्मं ।

ते धामपप्रज्ञायणे अंतपठेनुत्तरीववाददते ।
 पग्दानं धापरणे विवायमुचे य पदमंरा ॥३५७॥

तत उपासकाप्यने अंतपठेने अनुत्तरीवपाददते । प्रदानां व्याकरणे विवाहमुत्रे च पर-
 मंरान्ना ॥

गणधरदेवगन्धरानि प्रमात्येने कल्पन्ते यस्यां सा व्याख्याप्रतिनाम पञ्चममङ्गं । नाय-विप्रतीकेऽवसानो
 स्यामी तीर्थंरपरममट्टारकः तस्य धर्मरूपा जीवादिबस्तुस्वभावकरुणं, धातिकर्मधामानतर-
 केवलज्ञानरहितोन्नतीर्थंरपरयुन्वातिगययिन्मिन्नमहिम्नः तीर्थंरस्य पूर्वाह्लमभ्याह्लापरह्ला-
 ङ्गंरानिनु यद् यद् पट्टिवासापयंरं ह्यारगन्तसामान्ये स्वभायतो दिव्यप्यनिदृश्यकल्पव्यरगतंरपि
 यनपरगणकपच्यप्रदानंरंरं चोद्भवति । एवं समुद्रभूतो दिव्यप्यनिः समातागन्धोनुगनानुदित्य उत्तमसामादित्यशनं
 रानयनामर्षं वा धर्मं कथयति । अथवा शाशुर्गन्धपरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रदानानुसारेण तदुत्तरदायकरुपा धर्मंरपा
 तदुत्तरदायकरुपा धर्मंरपागतदृष्टास्तित्वनास्तित्वादिस्वरूपकरुणं, अथवा शाशुर्वा तीर्थंरगन्धपरदेवस्य कल्पयसारीनां
 धर्मानुबन्धिकयोपरुपाकरुणं धामपयंरुपा शाशुर्धर्मरूपानाम वा पञ्चममङ्गं ॥३५९॥

अंगमं होना है । क्या जीव है या नहीं है ? क्या जीव एक है या अनेक है ? क्या जीव नित्य है या अनित्य है ? क्या जीव कष्टप्र दे या अकष्टप्र दे इत्यादि गणधरदेवके साठ हजार प्रश्न मगधान् अह्न्त तीर्थंकरके पागमं पृष्ठे गये जिममें विशेष अर्थान् बहुत प्रकारसे प्रमात्यन्ते करे जाते हैं वह व्याख्याप्रतिनामक पौषर्षी अंग है । नाथ अर्थान् कौनों कौनोंके ईश्वरीका स्यामी तीर्थंकर परम मट्टारकको धर्मरूपा—जीवादि बस्तुओंके स्वभावका कथन, कि धातिकर्मके हाथके अनन्तर केवलज्ञानके माथ कल्पन्त तीर्थंकर नामक पुण्याति-
 शयसे जिनकी महिमा बढ़ गयी है उन तीर्थंकरकी पूर्वाह्ल, मध्याह्ल, अपराह्ल और अर्धरात्रिमें छट्-छट् पढ़ी काल पर्यन्त पारह गणोंकी सभाके गण्य स्वभावसे दिव्यप्यनि शिरती है, अन्य समयमें भी गणधर, इन्द्र और ब्रह्मवर्षके प्रश्न करनेपर खिरती है । इस प्रकार परगन्त हुई दिव्यप्यनि मगम निवृत्तवर्षी भोतागमंकि चरेत्तसे उत्तमसामादि लक्षणरूप रत्नप्रयासक धर्म-
 का कथन करती है । अथवा साता जिज्ञासु गणधर देवके प्रश्नके अनुसार उत्तर धाम्यरूप धर्मकथा, पृष्ठे गये अतिशय-नातिशय आदिके स्वरूपका कथन अथवा साता तीर्थंकर गण-
 धर इन्द्र ब्रह्मवर्षी आदिके धर्मानुबन्धी कथोपकथन जिसमें हो वह शाशुर्धर्मरूपा नामक हटा अंग है ॥३५६॥

वाक्यानि प्रज्ञाप्यन्ते कथ्यन्ते यस्यां सा व्याख्याप्रज्ञानाम पंचममंगं । नायस्त्रिलोकेश्वराणां स्वामी तीर्थंकरपरमभट्टारकस्तस्य धर्मकथा जीवादिबस्तुस्वभावकथनं, घातिकर्मक्षयानंतर-केवलज्ञानसहोत्पन्नतीर्थंकरत्वपुण्यातिशयविजृम्भितमहिम्नस्तीर्थंकरस्य पूर्वार्हमध्याह्नपरार्हार्धरात्रेषु पदपट्टिकाकालपर्यन्तं द्वादशगणसभामध्ये स्वभावतो दिव्यध्वनिरुद्गच्छत्यन्यकालेषु गणधरऋचक्रधरप्रश्नानंतरं घोड्भवति । एवं समुद्भूतो दिव्यध्वनिः समस्तासन्नथोत्तुगणानुद्दिश्य उत्तमशमादिलक्षणं वा धर्मं कथयति । अथवा ज्ञातुर्गणधरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रश्नानुसारेण तदुत्तरवाक्यरूपा धर्मकथातत्पुष्टास्तित्वनास्तित्वादिवस्वरूपकथनं । अथवा ज्ञातृणां तीर्थंकरगणधरऋचक्रधरदीनां धर्मानुबंधिकथोपकथाकथनं ज्ञातृधर्मकथानाम पष्ठमंगं ।

तो वासयअज्ज्ञापणे अंतयडेणुत्तरोववाददसे ।

पण्हाणं वायरणे विवायसुत्ते य पदसंखा ॥३५७॥

५

१०

तत उपासकाध्ययने अंतकृद्देशे अनुत्तरोपपाददशे । प्रश्नानां व्याकरणे विपाकसूत्रे च पदसंख्या ॥

गणधरदेवप्रश्नवाक्यानि प्रज्ञाप्यन्ते कथ्यन्ते यस्यां सा व्याख्याप्रज्ञानाम पञ्चममङ्गं । नायः—त्रिलोकेश्वराणां स्वामी तीर्थंकरपरमभट्टारकः तस्य धर्मकथा जीवादिबस्तुस्वभावकथनं, घातिकर्मक्षयानन्तरकेवलज्ञानसहोत्पन्नतीर्थंकरत्वपुण्यातिशयविजृम्भितमहिम्नः तीर्थंकरस्य पूर्वार्हमध्याह्नपरार्हार्धरात्रेषु पदपट्टिकाकालपर्यन्तं द्वादशगणसभामध्ये स्वभावतो दिव्यध्वनिरुद्गच्छति । अन्यकालेषु गणधरऋचक्रधरप्रश्नानन्तरं घोड्भवति । एवं समुद्भूतो दिव्यध्वनिः समस्तासन्नथोत्तुगणानुद्दिश्य उत्तमशमादिलक्षणं रत्नत्रयात्मकं वा धर्मं कथयति । अथवा ज्ञातुर्गणधरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रश्नानुसारेण तदुत्तरवाक्यरूपा धर्मकथा तत्पुष्टास्तित्वनास्तित्वादिवस्वरूपकथनं, अथवा ज्ञातृणां तीर्थंकरगणधरऋचक्रधरदीनां धर्मानुबन्धिकथोपकथाकथनं नायधर्मकथा ज्ञातृधर्मकथानाम वा षष्ठमङ्गम् ॥३५९॥

१५

२०

अंगमें होता है । क्या जीव है या नहीं है ? क्या जीव एक है या अनेक है ? क्या जीव नित्य है या अनित्य है ? क्या जीव वक्तव्य है या अवक्तव्य है इत्यादि गणधरदेवके साठ हजार प्रश्न भगवान् अर्हन्त तीर्थंकरके पासमें पूछे गये जिसमें विज्ञेय अर्थात् बहुत प्रकारसे प्रज्ञाप्यन्ते कहे जाते हैं वह व्याख्याप्रज्ञप्ति नामक पाँचवाँ अंग है । नाय अर्थात् तीनों लोकोंके ईश्वरोंका स्वामी तीर्थंकर परम भट्टारककी धर्मकथा—जीवादि वस्तुओंके स्वभावका कथन, कि घातिकर्मके क्षयके अनन्तर केवलज्ञानके साथ उत्पन्न तीर्थंकर नामक पुण्यातिशयसे जिनकी महिमा बढ़ गयी है उन तीर्थंकरकी पूर्वाह्न, मध्याह्न, अपराह्न और अर्धरात्रिमें छह-छह घड़ी काल पर्यन्त बारह गणोंकी सभाके मध्य स्वभावसे दिव्यध्वनि खिरती है, अन्य समयमें भी गणधर, इन्द्र और चक्रवर्तिके प्रश्न करनेपर खिरती है । इस प्रकार उत्पन्न हुई दिव्यध्वनि समस्त निकटवर्ती श्रोतागणोंके उद्देशसे उत्तमशमादि लक्षणरूप रत्नत्रयात्मक धर्मका कथन करती है । अथवा ज्ञाता जिज्ञासु गणधर देवके प्रश्नके अनुसार उत्तर वाक्यरूप धर्मकथा, पूछे गये अस्तित्व-नास्तित्व आदिके स्वरूपका कथन अथवा ज्ञाता तीर्थंकर गणधर इन्द्र चक्रवर्ती आदिके धर्मानुबन्धी कथोपकथन जिसमें हो वह ज्ञातृधर्मकथा नामक छठा अंग है ॥३५९॥

२५

३०

प्राप्तानि प्रज्ञाप्यन्ते कल्पन्ते मय्यां हा ध्यात्वाप्राप्तप्रितानाम् पंचममंगं । नायस्त्रिलोकेश्वरानां स्वामी तीर्थंकरपरमभट्टारकस्तस्य धर्मरूपा जीवादिबस्तुस्वभावरूपनं । पातिकर्मसंप्रदानंतर-
केवलज्ञानगहोत्पन्नतीर्थंकरस्तपुष्यातिशयविजृंभितमहिम्नस्तोर्षंकरस्य पूर्व्याह्ममप्याह्मपराह्म-
अंशान्निपु पद् घट्ट पट्टिकाकालपर्यंतं द्वादशगणसमाभय्ये स्वभावतो दिव्यध्वनिदृग्गच्छत्यन्यत्रालेषि
गणधरराजचक्रपरप्रदानानंतरं धोद्वभवति । एवं समुद्रभूतो दिव्यध्वनिः समस्तातन्गभोतुगणानु-
द्विष्य उतमत्तमादिदशां वा धर्मं कथयति । अथवा ज्ञातुगणधरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रदानानु-
सारेण तदुत्तरधाररूपा धर्मरूपातत्पुष्टास्तित्यनास्तिरादिस्यरूपरूपनं । अथवा ज्ञातुणां तीर्थंकर-
गणधरराजधर्यराज्ञोनां धर्मानुबंधिधरूपोपकरूपनं ज्ञातुधर्मरूपानाम् पष्टमंगं ।

तो वासपञ्चममंगणे अंतपट्टेणुचरोववादसे ।

पण्हाणं वापरणे विवायमुत्ते य पदसंखा ॥३५७॥

तत उवाताताप्यपने अंतदृष्टो अनुत्तरोपपाददो । प्रदानां ध्याकरणे विपाकगुह्ये च पद-
संख्या ॥

गणधरदेवतनवाज्ञानि प्रज्ञाप्यन्ते कल्पन्ते मय्यां हा ध्यात्वाप्राप्तप्रितानाम् पञ्चममङ्गं । नायः-त्रिलोकेश्वरानां स्वामी तीर्थंकरपरमभट्टारकः तस्य धर्मरूपा जीवादिबस्तुस्वभावरूपनं, पातिकर्मसंप्रदानन्तरकेवलज्ञानगहो-
त्पन्नतीर्थंकरस्तपुष्यातिशयविजृंभितमहिम्नः तीर्थंकरस्य पूर्व्याह्ममप्याह्मपराह्मअंशान्नेषु पदपट्टिकाकाल-
पर्यंतं द्वादशगणसमाभय्ये स्वभावतो दिव्यध्वनिदृग्गच्छति । अन्यत्रालेषि गणधरराजचक्रपरप्रदानानंतरं
धोद्वभवति । एवं समुद्रभूतो दिव्यध्वनिः समस्तातन्गभोतुगणानुद्विष्य उतमत्तमादिदशां रत्नत्रयात्मकं वा
धर्मं कथयति । अथवा ज्ञातुगणधरदेवस्य जिज्ञासमानस्य प्रदानानुसारेण तदुत्तरधाररूपा धर्मरूपा तत्पुष्टा-
स्तित्यनास्तिरादिस्यरूपरूपनं, अथवा ज्ञातुणां तीर्थंकरगणधरराजधर्यराज्ञोनां धर्मानुबंधिधरूपोपकरूपनं
नायधर्मवया ज्ञातुधर्मरूपानाम् वा पष्टमङ्गम् ॥३५६॥

अंगमें होता है । क्या जीव है या नहीं है ? क्या जीव एक है या अनेक है ? क्या जीव नित्य है या अनित्य है ? क्या जीव ब्रह्म है या अब्रह्म है इत्यादि गणधरदेवके साठ हजार प्रश्न भगवान् अर्हन्त तीर्थंकरके पासमें पूछे गये जिसमें विशेष अर्थात् बहुत प्रकारसे प्रज्ञाप्यन्ते कहे जाते हैं वह ध्यात्वाप्राप्तप्रितानामक पौचर्षी अंग है । नाथ अर्थात् तीनों लोकोंके ईश्वरोंका स्वामी तीर्थंकर परम भट्टारककी धर्मकथा—जीवादि वस्तुओंके स्वभावका फयन, कि पातिकर्मके शयके अनन्तर केवलज्ञानके साथ उत्पन्न तीर्थंकर नामक पुण्याति-
शयसे जिनकी महिमा बढ़ गयी है उन तीर्थंकरकी पूजाके, मध्याह्न, अपराह्न और अंधरात्रिमें छह-छह घड़ी काल पर्यन्त बारह गणोंकी सभाके मध्य स्वभाषसे दिव्यध्वनि शिरसी है, अन्य समयमें भी गणधर, इन्द्र और चक्रवर्तिके प्रश्न करनेपर शिरसी है । इस प्रकार उत्पन्न हुई दिव्यध्वनि समस्त निकटवर्ती श्रोतागणोंके वदनासे उत्तमदामादि लक्षणरूप रत्नत्रयात्मक धर्म-
का फयन करती है । अथवा ज्ञाता जिज्ञासु गणधर देवके प्रश्नके अनुसार उत्तर धाम्यरूप धर्मकथा, पूछे गये अस्तिव-नास्तिव आदिके स्वरूपका फयन अथवा ज्ञाता तीर्थंकर गण-
धर इन्द्र चक्रवर्ती आदिके धर्मानुबन्धी कथोपकथन जिसमें हो वह ज्ञातुधर्मकथा नामक छठा अंग है ॥३५६॥

अभय वारिपेण चिलातपुत्रा इत्येते दाक्ष्य महोपसर्गांन्विजित्येन्द्रादिकृतां पूजां लब्ध्वाऽनुत्तरविमाने-
 पूषपन्ताः । एवं द्रुपभादितीर्थेष्वपि परमागमानुसारेण ज्ञातव्याः । प्रश्नस्य दूतवाक्यनष्टमुष्टिचिन्तादि-
 रूपस्यार्थः त्रिकालगोचरो घनघान्यादि लाभालाभसुखदुःखजीवितमरणजयपराजयादिरूपो व्याक्रियते
 व्याख्यायते यस्मिन् तत्प्रश्नव्याकरणं । अथवा शिष्यप्रश्नानुरूपतया आक्षेपणी विक्षेपणी संवेजनी
 निर्व्वेजनी चेति कथा चतुर्विधा । तत्र प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोगद्रव्यानुयोगरूपपरमागम-
 पदार्थानां तीर्थंकरादिवृत्तान्तलोकसंस्थानदेशसकलयतिधर्मपञ्चास्तिकायादीनां परमतासंकारहितं
 कथनमाक्षेपणीकथा । प्रमाणनयात्मकमुक्तिमुक्तहेतुवादबलेन सर्व्वथैकान्तादिपरसमयात्परिनिराकरणरूपा
 विक्षेपणीकथा । रत्नत्रयात्मकधर्मनिष्ठानुष्ठानफलभूततीर्थंकराद्यैश्चर्य्यंभावते नोद्योर्ष्यज्ञानमुखादि-
 वर्णनारूपा संवेदनीकथा । संसारशरीरभोगजनितदुःकर्मफलनारकादिदुःखदुःकुलविरूपांग-
 दारिद्र्यपापमानदुःखादिवर्णनाद्वारेण वैराग्यकथनरूपा निर्व्वेजनीकथा । एवंविधाः कथाः ध्याक्रियते १०

घन्य-मुनक्षत्र-कार्तिकेय-नन्द-नन्दन-शालिभद्र-अभय-वारिपेण-चिलातपुत्रा इत्येते दाक्ष्यमहोपसर्गांन् विजित्य
 इन्द्रादिकृतां पूजां लब्ध्वाऽनुत्तरविमानेपूषपन्ताः । एवं द्रुपभादितीर्थेष्वपि परमागमानुसारेण ज्ञातव्याः ।
 प्रश्नस्य-दूतवाक्यनष्टमुष्टिचिन्तादिरूपस्य अर्थः त्रिकालगोचरो घनघान्यादि लाभालाभसुखदुःखजीवितमरणजय-
 पराजयादिरूपो व्याक्रियते व्याख्यायते यस्मिन् तत्प्रश्नव्याकरणम् । अथवा शिष्यप्रश्नानुरूपतया आक्षेपणी विक्षे-
 पणी संवेजनी निर्व्वेजनी चेति कथा चतुर्विधा । तत्र प्रथमानुयोगकरणानुयोगचरणानुयोगद्रव्यानुयोगरूपपरमागम-
 पदार्थानां तीर्थंकरादिवृत्तान्तलोकसंस्थानदेशसकलयतिधर्मपञ्चास्तिकायादीनां परमतासंकारहितं कथनमाक्षेपणी
 कथा । प्रमाणनयात्मकमुक्तिमुक्तहेतुवादबलेन सर्व्वथैकान्तादि परसमयाद्यनिराकरणरूपा विक्षेपणी कथा ।
 रत्नत्रयात्मकधर्मनिष्ठानुष्ठानफलभूततीर्थंकराद्यैश्चर्य्यंभावते नोद्योर्ष्यज्ञानमुखादिवर्णनारूपा संवेदनी कथा । संसार-
 शरीरभोगरागजनितदुःकर्मफलनारकादिदुःखदुःकुलविरूपाङ्गदारिद्र्यपापमानदुःखादिवर्णनाद्वारेण वैराग्यकथनरूपा

स्वामीके तीर्थमें श्रुजुदास, घन्य, मुनक्षत्र, कार्तिकेय, नन्द, नन्दन, शालिभद्र, अभय, वारिपेण, २०
 चिलातपुत्र ये दाक्ष्य महा उपसर्गोंको जीतकर इन्द्रादिके द्वारा फी गयी पूजाको प्राप्त करके
 अनुत्तर विमानमें चढ़ग्न हुए । इसी प्रकार द्रुपभ आदि तीर्थंकरोंके तीर्थमें भी परमागमके
 अनुसार जानना । प्रश्न अर्थात् दूतवाक्य, नष्ट, मुष्टि चिन्तादि विषयक प्रश्नका त्रिकाल
 गोचर अर्थ जो घनघान्य आदिकी लाभ-हानि, सुख-दुःख, जीवन-मरण, जय-पराजय आदि-
 से सम्बद्ध है वह जिसमें व्याक्रियते अर्थात् उत्तरित किया गया हो, वह प्रश्नव्याकरण है । २५
 अथवा शिष्योंके प्रश्नके अनुसार अवक्षेपणी विक्षेपणी, संवेजनी और निर्व्वेजनी ये चार
 कथाएँ जिसमें वर्णित हों वह प्रश्नव्याकरण है । तीर्थंकर आदिके इतिवृत्तको कहनेवाले
 प्रथमानुयोग, लोकके आकार आदिका कथन करनेवाले करणानुयोग, देशचारित्र और
 सकलचारित्रको कहनेवाले चरणानुयोग तथा पंचास्तिकाय आदिका कथन करनेवाले
 द्रव्यानुयोग रूप परमागमके पदार्थोंका परमतकी आशंकाको दूर करते हुए कथनको आक्षे-
 पणी कथा कहते हैं । प्रमाणनयात्मक मुक्ति तथा हेतु आदिके बलसे सर्व्वथा एकान्त आदि ३०
 अन्य भवोंका निराकरण करानेवाली कथाको विक्षेपणी कथा कहते हैं । रत्नत्रयात्मक धर्मका
 अनुष्ठान करनेके फलस्वरूप तीर्थंकर आदिके ऐश्वर्य, प्रभाव, तेज, ज्ञान, सुख, धीर्य आदिका
 कथन करनेवाली संवेजनी कथा है । संसार शरीर और भोगोंसे राग करनेसे दुष्कर्मका बन्ध
 होता है और उसके फलस्वरूप नारक आदिका दुःख, दुष्कुलकी प्राप्ति, शरीरोंके अंगोंका ३५
 चिरूपपना, दारिद्र्य, अपमान आदिके वर्णनके द्वारा वैराग्यका कथन करनेवाली निर्व्वेजनी

कर्ममेंदु प्रकोरकवकुमर्देते' दोडे चंद्रप्रज्ञमित्यं । सूर्यप्रज्ञमित्यं । जंयुद्वीपप्रज्ञमित्यं । द्वीपसागरप्रज्ञमित्यं
 व्याख्याप्रज्ञमित्यंमे' वित्तु चंद्रप्रज्ञमित्ये' बुदु चंद्रविमानायुःपरिवारश्चद्विगमनहानिवृद्धिसकलाङ्क-
 चतुर्थांशग्रहादिगळं वर्णिसुगुं । सूर्यप्रज्ञमित्ये' बुदु सूर्यनायुग्मंडलपरिवारश्चद्विगमनप्रमाणग्रहणा-
 दिगळं वर्णिसुगुं । जंयुद्वीपप्रज्ञमित्ये' बुदु जंयुद्वीपगतमेरुकुलशैलहृददवर्षकुंडवेदिकावतनपंडव्यंतरावास
 महानदिग्रामोदलादुर्धं वर्णिसुगुं । द्वीपसागरप्रज्ञमित्ये' बुदु असंख्यातद्वीपसागरगळ स्वरूपमें तत्र
 स्थितज्योतिर्वर्षानभावनवावासंगळोळ विद्यमानंपरुष्पकृत्रिमजिनभवनादिगळ वर्णनमें माळ्कुं ।
 व्याख्याप्रज्ञमित्ये' बुदु रूपरूपिजीवाजीवद्रव्यंगळ भव्याभव्यभेदप्रमाणलक्षणंगळ, अनंतरसिद्ध परंपरा-
 सिद्धरूपळ परेयुं वस्तुगळ वर्णनमें माळ्कुं । सूत्रयति सूत्रयति कुदृष्टिदर्शनानिति सूत्रं । जीवोऽर्थ-
 कोऽकर्ता निर्गुणोऽभोक्ताऽस्यप्रकाशकः परप्रकाशकोऽस्येव जीवो नास्त्येव जीव इत्यादिक्रियाक्रिया-
 ज्ञानवितपकुदृष्टिनां त्रियष्ट्युत्तरत्रिज्ञतमिध्यादर्शनंगळं पूर्वपक्षतेयिदं पेळ्जुं । प्रयमानुयोगमें बुदु
 प्रयमं मिध्यादृष्टिमयतिकमन्वुत्पन्नं वा प्रतिपाद्यमाश्रित्य प्रवृत्तोऽनुयोगोऽधिकारः प्रयमानुयोगः ।

परितः सर्वतः कर्माणि गणितकरणसूत्राणि यस्मिन् तत्परिकर्म, तच्च पञ्चविधं चन्द्रप्रज्ञतिः सूर्यप्रज्ञतिः
 जंयुद्वीपप्रज्ञतिः द्वीपसागरप्रज्ञतिः व्याख्याप्रज्ञतिश्चेति । तत्र चन्द्रप्रज्ञतिः चन्द्रस्य विमानायुःपरिवारश्चद्वि-
 गमनहानिवृद्धिसकलांशचतुर्थांशग्रहाणादीन् वर्णयति । सूर्यप्रज्ञतिः सूर्यस्यायुग्मंडलपरिवारश्चद्विगमनप्रमाणग्रह-
 णादीन् वर्णयति । जंयुद्वीपप्रज्ञतिः जंयुद्वीपगतमेरुकुलशैलहृददवर्षकुंडवेदिकावतनपंडव्यन्तरावासमहानद्यादीन्
 वर्णयति । द्वीपसागरप्रज्ञतिः असंख्यातद्वीपसागराणां स्वरूपं तत्रस्थितज्योतिर्वर्षानभावनवासाषु विद्यमानाकृत्रिम-
 जिनभवनादीन् वर्णयति । व्याख्याप्रज्ञतिः रूपरूपिजीवाजीवद्रव्याणां भव्याभव्यभेदप्रमाणलक्षणाना अनंतर-
 सिद्धपरम्परासिद्धानां अव्यवस्तुनां च वर्णनं करोति । सूत्रयति—सूत्रयति कुदृष्टिदर्शनानिति सूत्रम् । जीवः
 अवन्थकः अकर्ता निर्गुणः अभोक्ता स्वप्रकाशकः परप्रकाशकः अस्त्येव जीवः नास्त्येव जीवः इत्यादि क्रिया-
 क्रियाज्ञानविषयकुदृष्टीनां त्रियष्ट्युत्तरत्रिज्ञतमिध्यादर्शनानि पूर्वपक्षतया कथयति । प्रयमानुयोगः प्रयमं मिध्या-
 दृष्टिमयतिकमन्वुत्पन्नं वा प्रतिपाद्यमाश्रित्य प्रवृत्तोऽनुयोगोऽधिकारः प्रयमानुयोगः । चतुर्विंशतितोषकपञ्चादश-

'परितः' अर्थात् पूरी तरहसे 'कर्माणि' अर्थात् गणितके करणसूत्र जिसमें हैं वह परिकर्म है ।
 उसके भी पाँच भेद हैं—चन्द्रप्रज्ञति, सूर्यप्रज्ञति, जंयुद्वीपप्रज्ञति, द्वीपसागरप्रज्ञति, व्याख्या-
 प्रज्ञति । उनमें-से चन्द्रप्रज्ञति चन्द्रभाके विमान, आयु, परिवार, ऋद्धि, गमन, हानि, वृद्धि,
 पूर्णग्रहण, अर्धग्रहण, चतुर्थांशग्रहण आदिका वर्णन करती है । सूर्यप्रज्ञति सूर्यकी आयु,
 मण्डल, परिवार, ऋद्धि, गमनका प्रमाण तथा ग्रहण आदिका वर्णन करती है । जंयुद्वीप-
 प्रज्ञति जंयुद्वीपगत मेरु, कुलाचल, तालाब, क्षेत्र, कुण्ड, वेदिका, वनखण्ड, व्यन्तरोके
 आवास, महानदी आदिका वर्णन करती है । द्वीपसागरप्रज्ञति असंख्यात द्वीप-समुद्रोंके
 स्वरूप, उनमें स्थित ज्योतिषीदेवों, व्यन्तरों और भवनवासी देवोंके आवासोंमें वर्तमान
 अकृत्रिम जिनालयोंका वर्णन करती है । व्याख्याप्रज्ञति रूपी-अरूपी, जीव-अजीव द्रव्योंका,
 भव्य और अभव्य भेदोंका, इनके प्रमाण और लक्षणोंका, अनन्तर सिद्ध और परम्परा सिद्धों-
 का तथा अन्य वस्तुओंका वर्णन करती है । 'सूत्रयति' अर्थात् जो मिध्यादृष्टि दर्शनोंको
 सूचित करता है वह सूत्र है । जीव अवन्थक है, अकर्ता है, निर्गुण है, अभोक्ता है, स्वप्रकाशक
 नहीं है, परप्रकाशक है, जीव अस्तित्व ही है या नास्तित्व ही है इत्यादि क्रियावादी, अक्रियावादी,
 अज्ञानी और वैज्ञानिक मिध्यादृष्टियोंके तीन सौ तिरसठ मतोंको पूर्वपक्षके रूपमें कहता है ।

१. म प्रकारमर्तेने । २. कं तु मल्लि चं ।

गतनम मनगं गोरम मरगत जवगातनोननं जजलक्खा ।
 मननन धममननोनननामं रनधजधरानन जलादी ॥३६३॥
 याजकनामेनाननमेदाणि पदाणि ह्येति परियम्भे ।
 कानवधिदाचनाननमेसो पुण चूलियाजोगो ॥३६४॥

ग। त्रि। त। षट्। न। शून्य। म। पंच। म। पंच। न। शून्य। षं। त्रि। गो। त्रि। ५
 र। द्वि। म। पंच। म। पंच। र। द्वि। ग। त्रि। त। षट्। ज। अष्ट। घ। चतुः। गा। त्रि।
 त। षट्। नोननं। शून्य। शून्य। शून्य। ज। अष्ट। ज। अष्ट। लक्षणि। म। पंच। न। नन।
 शून्य। शून्य। शून्य। घ। नव। म। पंच। म। पंच। न। शून्य। नो। शून्य। न। शून्य। ना।
 शून्य। म। पंच। रा। द्वि। न। शून्य। घ। नव। ज। अष्ट। घ। नव। रा। द्वि। न। शून्य।
 न। शून्य। जलादयः ॥ १०

या। एक। ज। अष्ट। क एक। ना शून्य। मे। पंच। ना शून्य। न शून्य। न शून्य।
 मेतानि पदानि भवन्ति। परिकर्मणि। का। एक। न शून्य। घ। चतुः। धि। नव। वा चतुः।
 च षट्। ना शून्य। न शून्य। न शून्य। मेयः पुनश्चूलिकायोगः। अक्षरसंज्ञादिभ्यं गतनमनोननं
 षट्त्रिंशत्सहस्रपदं गच्छ चंद्रप्रज्ञामियोऽप्यु ३६०५०००। मनगं गोननं पंचलक्षत्रिसहस्रपदं गच्छ
 सूर्यप्रज्ञामियोऽप्यु ५०३०००। गोरमनोननं त्रिलक्षपंचविंशतिसहस्रपदं गच्छ जम्बूद्वीपप्रज्ञामियोऽप्यु
 ३२५०००। मरगतनोननं द्विपञ्चाशत्सहस्रपदं गच्छ द्वीपसागरप्रज्ञामियोऽप्यु
 ५२३६०००। जवगातनोननं चतुरश्रोतिलक्षपदं गच्छ व्याख्याप्रज्ञामियोऽप्यु।
 ८४३६०००। जजलक्खा अष्टाशीतिलक्षपदं गच्छ सूत्रदोऽप्यु ८८०००००। मननन पंचसहस्रपदं गच्छ
 प्रयमानुयोगदोऽप्यु ५०००। धममननोनननामं पंचनवति कोटियं पंचाशत्सहस्रमम्यु पदं गच्छ
 चतुर्दशपूर्वसंमुख्यमयोऽप्यु ९५५०००००५। रनधजधराननजलादि द्विकोटिनवलक्षनवाशीति-
 सहस्रद्विंशतोत्तरपदं गच्छ प्रत्येकं जलगतादि पंचचूलिकास्थानं गच्छ समानं गच्छेत्प्यु। जलगतं-
 गच्छ २०९८९२०० स्थलगतं गच्छ २०९८९२०० मायागतं गच्छ २०९८९२०० आकाशगतं गच्छ २०

अक्षरसंज्ञया चन्द्रप्रज्ञासौ गतनमनोननं-षट्त्रिंशत्सहस्रपदं गच्छाणि पदानि ३६०५०००। सूर्यप्रज्ञासौ
 मनगंनोननं-पञ्चलक्षत्रिसहस्राणि पदानि ५०३०००। जम्बूद्वीपप्रज्ञासौ गोरमनोननं त्रिलक्षत्रिसहस्राणि
 पदानि ३२५०००। द्वीपसागरप्रज्ञासौ मरगतनोननं द्विपञ्चाशत्सहस्राणि पदानि ५२३६०००।
 व्याख्याप्रज्ञासौ जवगातनोननं-चतुरश्रोतिलक्षपदं गच्छाणि पदानि ८४३६०००। सूत्रे जजलक्खा-
 अष्टाशीतिलक्षणि पदानि ८८०००००। प्रयमानुयोगे मननन-पञ्चसहस्राणि पदानि ५०००। चतुर्दशपूर्व-
 संमुख्ये धमननोनननामं-पञ्चनवति कोटिपञ्चाशत्सहस्रपदानि ९५५०००००५। जलादी जलगतादिपञ्च-
 चूलिकास्थानेषु प्रत्येके रनधजधराननं-द्विकोटिनवलक्षनवाशीति सहस्रद्विंशतानि पदानि। २०९८९२००।

अक्षरोंकी संज्ञासे चन्द्रप्रज्ञासिमें 'गतनमनोननं' अर्थात् छत्तीस लाख पाँच हजार
 ३६०५००० पद हैं। सूर्यप्रज्ञासिमें 'मनगंनोननं' पाँच लाख तीन हजार ५०३००० पद हैं।
 जम्बूद्वीपप्रज्ञासिमें 'गोरमनोननं' तीन लाख पच्चीस हजार ३२५००० पद हैं। द्वीपसागर
 प्रज्ञासिमें 'मरगतनोननं' बावन लाख छत्तीस हजार ५२३६००० पद हैं। व्याख्याप्रज्ञासिमें
 'जवगातनोनं' चौरासी लाख छत्तीस हजार ८४३६००० पद हैं। सूत्रमें 'जजलक्खा' अठासी
 लाख ८८००००० पद हैं। प्रयमानुयोगमें 'मननन' पाँच हजार ५००० पद हैं। चौदह पूर्वमें
 'धममननोनननामं' पंचानवे कोटि पचास लाख पाँच ९५५०००००५ पद हैं। जलगता आदि १५

परिणतद्रव्यवर्णनं मान्नु-। अस्ति द्विलक्षणार्थं गुणितरंघानासुगच्छेरुकोटिपदगच्छपुत्रु
 १०००००००। अथस्य द्वायगांगेयु प्रधानभूतस्य वस्तुनः अयं ज्ञानमप्रापणं तत्प्रयोजनमप्रापणोयं
 द्वितीयं पूर्वमोपप्रापणो पूर्व्यं सातसात सुनय दुर्णय पंचास्तिकाय पद्द्रव्य साततत्य न्यपदातयंगञ्ज
 मोरलादयनु वनिमुमुमल्लि द्विलक्षणगुणितारुचत्वारिणतपदगञ्ज पणायतिलक्षणगच्छपुत्रे मुदतयं।—
 १६००००००। वीर्यस्य जीवादिबस्तुसामर्थ्यस्य अनुप्रवादेनुवर्णनमस्मिन्निति वीर्यानुप्रवादादमंगं
 तृतीयमनुवर्णनं आत्मवीर्यं परवीर्यं उभयवीर्यं क्षेत्रवीर्यं फालवीर्यं भाववीर्यं तपोवीर्यं
 मैदित्यादिमस्तद्रव्यगुणपर्यायवीर्यमंगं वणिमुमुमल्लि द्विलक्षणगुणितरंघानासुगच्छेरुकोटिपदगच्छपुत्रु
 गच्छपुत्रे मुदतयं—३०००००००। अस्तिनास्तीत्यादि धर्मानां प्रवायः प्ररूपणमस्मिन्निति अस्ति-
 नास्तिप्रवादां पञ्चमं पूर्वमिदु।

जीवादिबस्तु स्यादस्ति स्वद्रव्यशेप्रकालभावानाधिरस्य। स्यात्प्रस्ति परद्रव्यशेप्रकालभावा-
 नाधिरस्य। स्यादस्ति च नास्ति च क्रमेण स्वपरद्रव्यशेप्रकालभावद्वयं संयुक्तमाधिरस्य। स्यादवक्तव्यं
 युगपत्स्वपरद्रव्यशेप्रकालभावद्वयमाधिरस्य तथा वस्तुमत्तयत्वात्। स्यादस्ति चावक्तव्यं च
 स्वद्रव्यशेप्रकालभावान् युगपत्स्वपरद्रव्यशेप्रकालभावद्वयं च संयुक्तमाधिरस्य। स्यात्प्रस्ति
 चावक्तव्यं च परद्रव्यशेप्रकालभावान् युगपत्स्वपरद्रव्यशेप्रकालभावद्वयं च संयुक्तमाधिरस्य।
 स्यादस्ति च नास्ति चावक्तव्यं च क्रमेण स्वपरद्रव्यशेप्रकालभावद्वयं युगपत्स्वपरद्रव्यशेप्रकालभाव-
 द्वयं च संयुक्तमाधिरस्य एवितेकानेकनित्यापिनात्प्राप्ततयमंगं विधिनिषेधावक्तव्यमंगं प्रत्येक-

पदद्रव्यवर्णनं करोति। तत्र द्विलक्षणगुणितरंघानासुगच्छेरुकोटिपदगच्छपुत्रु
 प्रधानभूतस्य वस्तुनः अयं ज्ञानं अप्रापणं। तत्प्रयोजनम् अप्रापणोयं, द्वितीयं पूर्वं। तच्च गतसातसुनयदुर्णय-
 पञ्चास्तिकायपद्द्रव्यसाततत्यनयदुर्णयवीर्यं वर्णनं। तत्र द्विलक्षणगुणितारुचत्वारिणतपदानि पणायतिलक्षण
 इत्यर्थः। १६००००००। वीर्यस्य—जीवादिबस्तुसामर्थ्यस्य अनुप्रवादः—अनुवर्णनं अस्मिन्निति वीर्यानुप्रवादां नाम
 तृतीयं पूर्वं। तच्च आत्मवीर्यं परवीर्यं उभयवीर्यं क्षेत्रवीर्यं फालवीर्यं भाववीर्यं तपोवीर्यादिमस्तद्रव्यगुणपर्यायवीर्याणि
 वर्णयति। तत्र द्विलक्षणगुणितरंघानासुगच्छेरुकोटिपदगच्छपुत्रु सातिलक्षणार्थित्यर्थः ३०००००००। अस्तिनास्तीत्यादिधर्माणां
 प्रवायः प्ररूपणमस्मिन्निति अस्तिनास्तिप्रवादां पञ्चमं पूर्वं। तच्च जीवादिबस्तु स्यादस्ति स्वद्रव्यशेप्रकालभावा-
 नाधिरस्य, स्यात्प्रस्ति परद्रव्यशेप्रकालभावानाधिरस्य। स्यादस्ति चावक्तव्यं स्वपरद्रव्यशेप्रकालभावद्वयं
 संयुक्तमाधिरस्य। स्यादवक्तव्यं युगपत्स्वपरद्रव्यशेप्रकालभावद्वयमाधिरस्य तथा वस्तुमत्तयत्वात्। स्यादस्ति

प्रकार दो एकते हैं अतः इक्यासी धर्म परिणत द्रव्यका वर्णन करता है। उसमें दो
 लापसे गुणित पचास अर्थात् एक फोटि पद होते हैं। अथ अर्थात् द्वादशांगमं प्रधान
 भूत वस्तुका 'अयन' अर्थात् ज्ञान अप्रापण है। यह जिसका प्रयोजन है यह दूसरा पूर्व
 अप्रापण है। यह मात्र सो सुनयों, दुर्णयों, पाँच अस्तिकाय, छह द्रव्य, सात तत्व, नौ
 पदार्थ आदिका वर्णन करता है। उसमें दो लापसे गुणित अड़तालीस अर्थात् छानवे लाप
 पद हैं। वीर्य अर्थात् जीवादि वस्तुकी सामर्थ्यका 'अनुप्रवाद' अर्थात् वर्णन जिसमें होता है
 यह वीर्यानुप्रवाद नामक तीसरा पूर्व है। यह अपने वीर्य, पराये वीर्य, उभयवीर्य, क्षेत्रवीर्य,
 फालवीर्य, भाववीर्य, तपोवीर्य आदि समस्त द्रव्य गुण पर्यायोंके वीर्य वर्णन करता है।
 उसमें दो लापसे गुणित पैंतीस अर्थात् सत्तर लाप पद हैं। अस्ति
 'प्रवाद' अर्थात् प्ररूपण जिसमें है यह अस्ति-नास्ति नामक धर्माका
 वस्तु स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल और स्वभावकी प्ररूपण, परकाल
 और परभावकी अपेक्षा स्यान्नास्ति नामक प्ररूपण है।

मदेतं बोधे असत्यनिवृत्तिं मेनु मौनम् यागुमियुमे बुदवकुं । उरःकंठ शिरोजिह्वामूलदंत-
नासिकातात्व्योदाहंगंरुष्टस्यानंगंरुं स्पृष्टतेयस्पृष्टता विवृततेयद्विवृतता संवृतता रपंगंरुप्य पंच-
प्रयत्नंगंरुं यावत्संस्कार कारणंगंरुं बुदवकुं । शिष्टदुष्टरूपमप्य वाक्प्रयोगुं तल्लक्षणगात्रं संस्ृतादि
ध्याहरणंगंरुं वाक्प्रयोगे बुदवकुं । इद्विनिदं माहत्पट्टदुदे वनिष्टकथनरूपमभ्याख्यानमुं ।
परस्परविरोधकारणकलहवचनमुं परंगे दोषमूचनपैगुन्यवचनमुं । धर्मार्थकाममोदाहंगंधयधचन-
रूपनयद्वप्रलापमुं इन्द्रियविषयंगंरुं रत्युत्पादिकेयप्य वाप्यपरीतिवचनमुं । अयरोज्जरत्युत्पादिक
वाप्यपरतिवचनमुं परिग्रहार्जनसंरक्षणगात्रासवितहेतु यावत्पुविषयचनमे बुदवकुं । ध्यवहारदोः
बंधनारहेतुवाक् निवृत्तिवाक्मे बुदवकुं । तपोज्ञानाधिकरोज्जमविनयहेतुवाक्प्रणतिवागे बुदु अवकुं ।
स्तेयहेतुवचनं मोपवागे बुदवकुं । सन्मार्गापदेशवाक् सम्पददर्शनवागे बुदवकुं । मिथ्यामार्गापदेशवाक्
मिथ्यादर्शनवागे बुदवकुमितु द्वादशभाषेगे बुदवकुं ।

द्वौन्द्रियादिष्वेन्द्रियपर्यन्तमाद जीवंगंरुं व्यक्तवक्तृत्वपर्यायमनुज्ज वस्तुगंरुप्यु । द्रव्य-
क्षेत्रकालभावाश्रितमप्य बहुविधमसत्यवचनं मृषाभिधानमवकुं । जनपदसत्याविद्वानप्रकारमप्य सत्यं
मुपेक्षत्यष्ट अक्षयमनुज्जवकुमी सत्यप्रवादवोः द्विलक्षणुगितपंचात्रत्यदंगंरुं वदुत्तरकोटियकु-

वक्तृमेतान् बहुविधं मृषाभिधानं द्वादविधं सत्यं च प्रकथयति । तद्यथा-असत्यनिवृत्तिर्मात्रं वा वाग्युक्तिः ।
उरःकंठशिरोजिह्वामूलदन्तनासिकातात्व्योदाहंगंरुं अष्टौ स्थानानि । स्पृष्टतेयस्पृष्टताविवृततेयद्विवृततासंवृतता-
रूपाः पञ्च प्रयत्नाश्च वाक्संस्कारकारणानि । शिष्टदुष्टरूपाः प्रयोगः वाक्प्रयोगः तल्लक्षणगात्रं संस्ृतादि-
भ्याहरणं वा । इदमनेन इतिमित्यनिष्टवचनरूपमभ्याख्यानं । परस्परविरोधकारणं कलहवचनं । परतोपमूचन
पैगुन्यवचनं । धर्मार्थकाममोदाहंगंधयवचनरूपाः अव्यञ्जप्रलापः । इन्द्रियविषयेषु रत्युत्पादिका वाक् रतिवाक् ।
उपेय अरतुनादिका वाक् अरतिवाक् । परिग्रहार्जनसंरक्षणगात्रासवितहेतुर्वाक् उाधिकाक् । ध्यवहारदोषनारहेतुर्वाक्
निवृत्तिवाक् । तपोज्ञानादिषु अविनयहेतुर्वाक् अप्रणतिवाक् । स्तेयहेतुर्वाक् मोपवाक् । सन्मार्गापदेशवाक्
सम्पददर्शनवाक् । मिथ्यामार्गापदेशवाक् मिथ्यादर्शनवाक् । एवं द्वादशभाषाः । द्वौन्द्रियादिष्वेन्द्रियपर्यन्ता जीवा
व्यक्ताव्यक्तवक्तृत्वपर्यायाः वनत्रः । इद्व्यक्षेत्रकालभावाश्रितं बहुविधमसत्यवचनं मृषावाक् । जनपदसत्यादि-

दस प्रकारके सत्यका कथन करता है । इन सयका स्वरूप इस प्रकार है—असत्यसे निवृत्ति या
मौनको वचन गुमि कहते हैं । उर, कण्ठ, शिर, जिह्वा मूल, दाँत, नाक, तालु, ओठ ये आठ
स्थान हैं । स्पृष्टता, किंचित् स्पृष्टता, विवृतता, किंचित् विवृतता, संवृतता ये पाँच प्रयत्न हैं ।
ये सय स्थान और प्रयत्न वचन संस्कारके कारण हैं । शिष्टरूप और दुष्टरूप वचनप्रयोग होता
है । 'यह इसने किया है' ऐसा अनिष्ट वचन अभ्याख्यान है । परस्परमें विरोधका कारण वचन
कलह वचन है । दूसरेके दोषको सूचन करना पैगुन्य वचन है । धर्म, अर्थ, काम और मोदा-
से असम्यद्ध वचन असम्यद्ध प्रलाप है । जो वचन इन्द्रियोंके विषयोंमें रति उत्पन्न करे वह
रतिवाक् है । जो उनमें अरति उत्पन्न करे वह अरतिवाक् है । परिग्रहके अर्जन और संरक्षण-
में आसक्ति उत्पन्न करनेवाले वचन उपधिवाक् है । व्यवहारमें छल-कपट करनेमें हेतु वचन
निवृत्तिवाक् है । तपस्यो और ज्ञानी जनोके प्रति अधिनयमें हेतु वचन अप्रणतिवाक् है ।
चोरी करनेमें हेतु वचन मोपवाक् है । सन्मार्गका उपदेश करनेवाले वचन सम्पददर्शनवाक्
है । मिथ्या मार्गका उपदेश करनेवाले वचन मिथ्यादर्शनवाक् है । इस प्रकार बारह प्रकार-
की भाषा है । दोइन्द्रियसे लेकर पंचेन्द्रिय पर्यन्त जीव, जिनमें वक्तृत्व पर्याय व्यक्त और
अव्यक्त हैं वे वक्ता हैं । द्रव्य-क्षेत्र-काल और भाषकी अपेक्षा अनेक प्रकारका असत्य वचन

कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिका

अथवा रामु समे रागदेवाम्यामनुग्रहे मध्यस्थे आत्मनि आय उपयोगस्य प्रवृत्तिः समायः स प्रयोजनमस्येति सामायिकं नित्यनैमित्तिकानुष्ठानं तत्प्रतिपादकं शास्त्रं सामायिकमेव युद्धम् । नामस्थापनाद्रव्यक्षेत्रकालभावभेदादिं सामायिकं परिहृत्यमत्रकुमलिल इष्टानिष्टानमंगळोत्तरागद्वेष- निवृत्तियं सामायिकभिधानं मेणु नामसामायिकमत्रं । मनोज्ञानमनोज्ञानुपुष्यादाकार- काष्ठलेप्यचित्रादिप्रतिमंगळोत्तरागद्वेषनिवृत्तियं यिदु सामायिकमेवितु स्याप्यमानासत्त्वावस्थापने- युमप्यभताविषुं मेणु स्यापनासामायिकमत्रं । इष्टानिष्टमंगळोत्तरागद्वेष- निवृत्तियं सामायिकशास्त्रानुपयुक्तज्ञापकतच्छरीरादि मेणु इव्यसामायिकमत्रं । ग्रामनगरवनादि- क्षेत्रगलिष्टानिष्टमंगळोत्तरागद्वेषनिवृत्तिक्षेत्रसामायिकमत्रं । वसंतादि श्चतुगळोत्तरागद्वेष- कृष्णपशंगळोत्तरागद्वेषनिवृत्तियं दिवसचारनक्षत्रादिगळोत्तरागद्वेषनिवृत्तियं सामायिकमत्रं । जीवादि तत्त्वविषयोपयोगरूपपर्यायकं मिव्यादर्शनरूपायादिसंक्लेशनिवृत्तियं साम- यिकशास्त्रोपयोगयुक्तज्ञापकं तत्पर्यायपरिणतमप्य सामायिकं मेणु भावसामायिकमत्रं । तत्कालसंबंधिगळोत्तरागद्वेष चतुर्विधप्रतितीत्यंकरगळ नामस्थापनाद्रव्यभावंगळनाशयिषि पंचमहाकल्पान-

अथमहं शाठा द्रष्टा चेति आत्मविषययोग इत्यर्थः, आत्मनः एकस्यैव ज्ञेयज्ञापकत्वसंग्रहान् । अथवा सं ग्रहे रागदेवाम्यामनुग्रहे मध्यस्थे आत्मनि आयः उपयोगस्य प्रवृत्तिः समायः स प्रयोजनमस्येति सामायिकं नित्यनैमित्तिकानुष्ठानं तत्प्रतिपादकं शास्त्रं वा सामायिकमित्यर्थः । तत्रच नामस्थापनाद्रव्यक्षेत्रकालभावभेदा- त्परिहृत्य । तत्र इष्टानिष्टानुष्ठानं रागद्वेषनिवृत्तिः सामायिकमित्यभिधानं वा नाम सामायिकम् । मनोज्ञानमनोज्ञानु- प्युष्यादाकाराणु काष्ठलेप्यचित्रादिप्रतिमाणु रागद्वेषनिवृत्तिः । इदं सामायिकमिति स्याप्यमानं यन् किञ्चि- दस्तु वा स्थापनासामायिकम् । इष्टानिष्टेषु चेतनाचेतनद्रव्येषु रागद्वेषनिवृत्तिः सामायिकशास्त्रानुपयुक्तज्ञापकः तच्छरीरादिर्वा द्रव्यसामायिकम् । ग्रामनगरवनादिभेदेषु इष्टानिष्टेषु रागद्वेषनिवृत्तिः क्षेत्रसामायिकम् । श्चतुषु मुक्लकृष्णपशोर्दिनवारनक्षत्रादिषु च इष्टानिष्टेषु कालविशेषेषु रागद्वेषनिवृत्तिः कालसामायिकम् । भावस्य जीवादि तत्त्वविषयोपयोगरूपस्य पर्यायस्य मिव्यादर्शनरूपायादिसंक्लेशनिवृत्तिः सामायिकशास्त्रोपयोगं- युक्तज्ञापकः तत्पर्यायपरिणतसामायिकं वा भावसामायिकम् । तत्तत्कालसम्बन्धिनो वृत्तिविशेषोपयोगाणां

‘आय’ अर्थात् आगमनको समाय कहते हैं । अर्थात् परद्रव्योसे निवृत्त होकर आत्मानमें प्रवृत्तिका नाम समाय है, यह मैं ज्ञाता-दृष्टा हूँ इस प्रकारका आत्मविषयमें उपयोग समाय है, क्योंकि आत्मा ही ज्ञेय और चर्ही जायक होता है । अथवा ‘सं’ यानी सम—राग-द्वेषसे अवापित मध्यस्थ आत्मानमें ‘आय’ अर्थात् उपयोगकी प्रवृत्ति समाय है । वह प्रयोजन जिसका है वह सामायिक है । नित्य-नैमित्तिक अनुष्ठान और वनका प्रतिपादक शास्त्र सामायिक है यह इसका अर्थ है । यह सामायिक नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव- के भेदसे छह प्रकारकी है । इष्ट-अनिष्ट नामोंमें राग-द्वेषकी निवृत्ति अथवा सामायिक नाम आदिमें अधिक प्रतिमाओंमें राग-द्वेष न करना, अथवा जिस-किसी वस्तुमें ‘यह सामायिक है’ इस प्रकार स्थापना करना स्थापनासामायिक है । इष्ट-अनिष्ट, चेतन-अचेतन द्रव्यों में राग-द्वेषकी निवृत्ति अथवा सामायिक शास्त्रका ज्ञाता जो उसमें उपयोगवान् नहीं है, अथवा उसका शरीर आदि द्रव्यसामायिक है । इष्ट-अनिष्ट, ग्राम-नगर आदि क्षेत्रोंमें राग-द्वेष करना शरीर आदि द्रव्यसामायिक है । वसन्त आदि श्चतु, मुक्ल-कृष्ण पशु, दिन, वार, नक्षत्रादि इ अनिष्ट काल विशेषोंमें राग-द्वेष न करना कालसामायिक है । भाव अर्थात् जीवादि तत्त्वविषयक उपयोगरूप पर्यायकी मिव्यादर्शन रूपाया आदि संक्लेशोंसे निवृत्ति, अथवा सा

शास्त्रं मुनिजनंगलाचरण गोचारविधिं विदग्धुद्विलज्जगं वर्णिसुगु । उत्तराण्यधीयते पठ्यन्तेऽ-
स्मिन्निवृत्तराध्ययनं । ई उत्तराध्ययनशास्त्रं चतुर्विधोपसर्गागळ् द्वाविंशतिपरीपहंगळ सहनविधा-
नमं तत्फलमुमं वितु प्रश्नमादोडितुत्तरमं वितुत्तरविधानमं वर्णिसुगुं । कल्प्यं योग्यं व्यवहियते
अनुष्ठेयतेऽस्मिन्निति अनेनेति वा कल्प्यव्यवहारः । ई कल्प्यव्यवहारशास्त्रं साधुगळ् योग्यानुष्ठान-
विधानमं अयोग्यसेवेधोऽत्र प्रायश्चित्तमुमं वर्णिसुगुं । कल्प्यं चाकल्प्यं च कल्प्याकल्प्यं तद्व्यपेतेऽस्मि-
न्निति कल्प्याकल्प्यं । ई कल्प्याकल्प्यशास्त्रं द्रव्यक्षेत्रकाल भावंगळनाश्रयिसि मुनिगणिसु कल्प्य-
मिदकल्प्यमं दु योग्यायोग्यविभागमं वर्णिसुगुं ।

५

१०

२०

२५

३०

३५

महतां कल्प्यमस्मिन्निति महाकल्प्यं । ई महाकल्प्यशास्त्रं जिनकल्पसाधुगळो उल्लुष्टसंहन-
नादिविशिष्टद्रव्यक्षेत्रकालभाववर्तितगळो योग्यमप्य त्रिकालयोगाद्यनुष्ठानमं स्थविरकल्पगळ् दीक्षा-
शिक्षागणपोषणात्मसंस्कार सल्लेखनोत्तमात्यस्थानगतोत्कृष्टाराधनाविशेषमुमं वर्णिसुगुं । पुण्डरीक-
मं च शास्त्रं भावनव्यन्तरज्योतिष्ककल्पवासि विमानंगळोत्पत्तिकारणदानपूजातपश्चरणानामनिर्ज-
रं

दश वैकालिकानि वर्णन्तेऽस्मिन्निति दशवैकालिकं तच्च मुनिजनानां आचरणगोचरविधि विदग्धुद्विलक्षणं च
वर्णयति । उत्तराणि अधीयन्ते पठ्यन्ते अस्मिन्निति उत्तराध्ययनं तच्च चतुर्विधोपसर्गागा द्वाविंशतिपरीपहाणां
च सहनविधानं तत्फलं एवं प्रश्ने एवमुत्तरमित्युत्तरविधानं च वर्णयति । कल्प्यं योग्यं व्यवहियते अनुष्ठेयतेऽ-
स्मिन्ननेनेति वा कल्प्यव्यवहारः, स च साधुनां योग्यानुष्ठानविधानं अयोग्यसेवायां प्रायश्चित्तं च वर्णयति ।
कल्प्यं चाकल्प्यं च कल्प्याकल्प्यं, तद्व्यपेते अस्मिन्निति कल्प्याकल्प्यम् । तच्च द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य मुनी-
नामिदं कल्प्यं योग्यं हृदयकल्प्यं अयोग्यमिति विभागं वर्णयति । महतां कल्प्यमस्मिन्निति महाकल्प्यं शास्त्रं
तच्च जिनकल्पसाधुनां उल्लुष्टसंहननादिविशिष्टद्रव्यक्षेत्रकालभाववर्तितानां योग्यं त्रिकालयोगाद्यनुष्ठानं स्थविर-
कल्पानां दीक्षाशिक्षागणपोषणात्मसंस्कारसल्लेखनोत्तमात्यस्थानगतोत्कृष्टाराधनाविधेयं च वर्णयति । पुण्डरीकं
नाम शास्त्रं भावनव्यन्तरज्योतिष्ककल्पवासि विमानेषु उत्पत्तिकारणदानपूजातपश्चरणानामनिर्जरासंय-
स्यममादिविधानं तत्तदुपपादस्थानवैभवविधेयं च वर्णयति । महत्त्वं तत्पुण्डरीकं तत्पुण्डरीकं शास्त्रं

चार सिर नमाना, चारह आवर्त आदि रूप नित्य नैमित्तिक क्रिया विधानका वर्णन होता
है। विशिष्ट कालोंको विकाल कहते हैं, उनमें होनेको वैकालिक कहते हैं। जिसमें दस
वैकालिकोंका वर्णन हो वह दशवैकालिक है। उसमें मुनियोंका आचार, गोचरीकी विधि
और भोजन शुद्धिका लक्षण कहा गया है। जिसमें उत्तरीका अध्ययन हो वह उत्तराध्ययन
है। उसमें चार प्रकारके उपसर्गों और चाईस परीपदोंके सहनेका विधान, उनका फल तथा
इस प्रकारके प्रश्नका उत्तर इस प्रकार होता है इसका फयन होता है। जो कल्प्य अर्थात्
योग्यके व्यवहारका फयन करता है वह कल्प्यव्यवहार है। उसमें साधुओंके योग्य अनुष्ठानके
विधानका और अयोग्यका सेवन होनेके प्रायश्चित्तका फयन होता है। जिसमें कल्प्य और
अकल्प्यका फयन हो वह कल्प्याकल्प्य है। वह द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके आश्रयने यह
मुनियोंके योग्य और यह अयोग्य है ऐसा फयन करता है। महान् पुरुषोंका कल्प्य जिसमें
हो वह महाकल्प्य शास्त्र है। उसमें जिनकल्पी साधुओंके उल्लुष्ट, संइनन आदि विशिष्ट द्रव्य,
क्षेत्र, काल, भावको लेकर त्रिकाल योग आदि अनुष्ठानका तथा स्थविर कल्पी साधुओंकी
दीक्षा, शिक्षा, गणका पोषण, आत्मसंस्कार, सल्लेखना, उत्तम स्थानगत उल्लुष्ट आराधना
विशेषका फयन होता है। पुण्डरीक नामक शास्त्र भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्प-
वासी देवोंके विमानोंमें उत्पत्तिके कारण दान, पूजा, तपश्चरण, अकामनिर्जरा, सम्यक्त्व,
संयम आदिका विधान तथा उस-उस उपपाद स्थानके वैभव विशेषको कहता है। महान्

स्वप्नं केवलज्ञानं प्रत्यक्षं । सामस्तत्त्वविदं विनावं स्पष्टमश्नुते । मूर्त्तामूर्त्तार्यव्यञ्जनपर्यायस्वूलमूदमांसा-
गल्प सत्यपरोक्ष प्रवृत्ति संभविमुगुमप्युदरिदं । साक्षात्करणविदमुं अशमात्मानमेव प्रतिनियतं
परानपेक्षं प्रत्यक्षं । उपात्तानुपात्तपरप्रत्ययापेक्षं परोक्षमिति । एदित्तु प्रत्यक्षपरोक्षद्वन्द्विनिरुक्ति-
सिद्धलक्षणभेदविदमा श्रुतज्ञानकेवलज्ञानगन्धो सादृश्याभावमश्नुते समन्तभद्रस्यामिर्गाह्यदमुं
पेक्षत्पट्टदु । “स्याद्वाद् केवलज्ञाने सर्वतत्त्वप्रकाशने । भेदः साक्षादसाक्षाच्च ह्यवस्त्यन्यतमं भवे”
वेदित्तु । [आप्तमी०]

अनन्तरं शास्त्रकारं पञ्चपट्टिगाथासूत्रगर्गिह्यदमयपिज्ञानप्ररूपणेयं पेक्षल्लुपक्रमितदपं ।

अवहोपदिचि जोही सीमाणाणेचि वण्णियं समये ।

भवगुणपञ्चयविहियं जमोहिणाणेचि णं वेत्ति ॥३७०॥

अवधोयत इत्ययधिः सीमाज्ञानमिति वणितं समये । भवगुणप्रत्ययविहितं यदवधिज्ञान-
मितोदं वृत्ति ।

अवधोयते इत्यसौत्रकालभावांगिह्यदं परिमोयते एयनिसत्पद्गु मेदितवधि ये बुददेके दोडे
मतिश्रुतकेवलगच्छते इत्यादिगच्छिदमपरिमितविषयत्वाद्भावमप्युदरिदं सीमाविषयज्ञानमेदु समये
परमागमदोक्ष भणितं पेक्षत्पट्टदु । यत् आशुदोदु श्रुतोयज्ञानं भवगुणप्रत्ययविहितं भवो नरकादि-
पर्यायः गुणः साम्यदर्शनविशुद्धपादिः । भवदश्च गुणश्च भवगुणो तावेय प्रत्ययो साम्यां कारणाभ्यां

स्वधियेनु अविज्ञानादिब साक्षात्करणाभावाच्च । सकलावरणवीर्यान्तरामनिरवरोपशयोत्पन्नं केवलज्ञानं
प्रत्यक्षं समस्तत्वेन विनां स्पष्टं भवति । मूर्त्तामूर्त्तार्यव्यञ्जनपर्यायस्वूलमूदमांसेषु सर्वेष्वपि प्रवृत्तिसंभवात्
साक्षात्कारणाच्च । अशं आत्मानमेव प्रतिनियतं परानपेक्षं प्रत्यक्षं, उपात्तानुपात्तपरप्रत्ययापेक्षं परोक्षमिति
निरुक्तिसिद्धलक्षणभेदाद्योः श्रुतज्ञानकेवलज्ञानयोः सादृश्याभावात् । तथा धोततं समन्तभद्रस्यामिः—

स्याद्वादेनज्ञाने सर्वतत्त्वप्रकाशने । भेदः साक्षादसाक्षाच्च ह्यवस्त्यन्यतमं भवेत् ॥— [आप्तमी०] २०

॥३६९॥ अथ शास्त्रकारं पञ्चपट्टिगाथासूत्रं अविज्ञानप्ररूपणापुत्रकमे—

अवधीयते—अश्वेतकालभावं परिमोयते इत्ययधिर्मानिधुतकेवलद्वय्यादिभिरपरिमितविषयत्वा-
भावात् । यन्त्रोयं गोमानियं ज्ञान समये परमागमे वणितं तदिदमयपिज्ञानमिदयहंशयो वृत्ति । तत्कति-

स्थूल अंशको अविज्ञानकी तरह साक्षात्कार करनेमें असमर्थ है । किन्तु समस्त ज्ञानावरण
और धीर्यान्तरायके शयसे उत्पन्न केवलज्ञान पूर्ण रूपसे स्पष्ट होता है । मूर्त्त अमूर्त्त, अर्थ-
पर्याय, व्यंजनपर्याय, स्थूल अंश, सूक्ष्म अंश सभीमें उसकी प्रवृत्ति है और सभीको साक्षात्
जानता है । अथा अर्थान् आत्मासे ही जो ज्ञान होता है, परकी अपेक्षा नहीं करता वसे
प्रत्यक्ष कहते हैं । उपात्त इन्द्रियादि और अनुपात्त प्रकाशादि परकारणोंकी अपेक्षासे होनेवाला
ज्ञान परोक्ष है । इस प्रकार निरुक्तिसे सिद्ध लक्षणोंके भेदसे श्रुतज्ञान और केवलज्ञानमें समा-
नता नहीं है । स्वामी समन्तभद्रने भी अपने आप्तमीमांसामें कहा है—

स्याद्वाद् अर्थान् श्रुतज्ञान और केवलज्ञान दोनों ही सर्व तत्त्वोंके प्रकाशक हैं किन्तु
भेद यही है कि केवलज्ञान साक्षात् प्रत्यक्ष जानता है और श्रुतज्ञान परोक्ष जानता है । जो
इन दोनों ज्ञानोंमेंसे एकका भी विषय नहीं है वह अवशु है ॥३६९॥

अथ शास्त्रकार पँसठ गाथाओंसे अविज्ञानका कथन करते हैं—

‘अवधीयते’ अर्थान् द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावके द्वारा जिसका परिमाण किया जाता है
वह अवधि है । अर्थान् जैसे मति, श्रुत और केवलज्ञानका विषय द्रव्यादिकी अपेक्षा

गुणपञ्चङ्गो छद्वा अणुगावट्ठदपवद्धमाणिदरा ।

देसोही परमोही सञ्चोहिति य तिधा ओही ॥३७२॥

गुणप्रत्ययकः षोढा अनुगावस्थितप्रवर्द्धमानेतरे । देशावधिः परमावधिः सञ्चोवधिरिति च त्रिधावधिः ॥

आयुदोडु गुणप्रत्ययावधितानमडु अनुगमनुगामिये दुमवस्थितमे दु प्रवर्द्धमानमे दु मूह- ५
तेरनप्युतु । इतरंगळ अननुगमननुगामिये दुमनवस्थितमे दु हीयमानमुमे दितिवु मूहतेरनप्युवतु
कंडि अनुगामि अननुगामि अवस्थितमनवस्थित वद्धमानहोयमानमेदितु पड्विधमवकुमल्लि आयु-
दोदवधितानं तन्न स्वामियप्य जीवनं बळिसल्लुमवनुगामिये बुदक्कुमडुदुं क्षेत्रानुगामिये दुं भवानु-
गामिये दुं उभयानुगामिये दितु त्रिविधमवकुमल्लि आयुदोडु तां पुट्टिद क्षेत्रादिदमन्यक्षेत्रदोडु १०
बिहारिसुव जीवनं बळिसल्लुं । भवांतरदोडु बळिसल्लददु क्षेत्रानुगामिये बुदक्कुमायुदोडु तां पुट्टिद १०
भवादिदमन्यभवदोळं स्वस्वामियं बळिसल्लुमडु भवानुगामिये बुदक्कुमायुदोडु तां पुट्टिद क्षेत्र-
भवंगळेरडरत्ताणदमन्य भरतेरावतविदेहादिकेक्षेत्रदोळं देवमनुष्यादिभवंगळोळं पत्तमानजीयमुं बळि-
सल्लुमडुभयानुगामिये बुदक्कुमायुदोडु तन्न स्वामियप्य जीवनं बळिसल्लुदुल्लददननुगामिये बुदक्कु-
मडुदुं क्षेत्रानुगामिये दुं भवानुगामिये दुमुभयानुगामिये दुं त्रिविधमवकुं । मल्लि आयुदोडु
क्षेत्रांतरमे बळिसल्लुदल्लतदु तां पुट्टिद क्षेत्रदोळे किडुगुं । भवांतरं बळिसल्ले मेण्माण्णे अनु क्षेत्रा- १५

यद्गुणप्रत्ययावधितानं तदनुगाम्यननुगाम्यवस्थितमनवस्थितं प्रवर्द्धमानं हीयमानं वेति पड्विधम् ।
तत्र यदवधितानं स्वस्वामिनं जीवमनुगच्छति तदनुगामि । तच्च क्षेत्रानुगामि भवानुगामि उभयानुगामीति
त्रिविधम् । यत् स्वोत्पत्तिक्षेत्रात् अन्यक्षेत्रे विहरन्तं जीवमनुगच्छति भवान्तरं नानुगच्छति तत्क्षेत्रानुगामि
भवति । यत् उत्पत्तिभवादन्यभवे स्वस्वामिनं अनुगच्छति तद्व्यवानुगामि भवति । यत्स्वोत्पत्तिक्षेत्रमवाप्त्या
अन्यत्र भरतेरावतविदेहादिकेक्षेत्रे देवमनुष्यादिभवे च वर्तमानं जीवमनुगच्छति तदुभयानुगामि भवति । २०
यदवधितानं स्वस्वामिनं जीवं नानुगच्छति तदननुगामि । तदपि क्षेत्रानुगामि भवानुगामि उभयानुगामीति
त्रिविधम् । तत्र यत्क्षेत्रान्तरं न गच्छति स्वोत्पत्तिक्षेत्रे एव विनश्यति भवान्तरं गच्छतु वा मा गच्छतु तत्
क्षेत्राननुगामि । यद्भवान्तरं नानुगच्छति स्वोत्पत्तिभवे एव विनश्यति, क्षेत्रान्तरं गच्छतु वा मा वा गच्छतु

नही होती, केवल सन्धदर्शनादि गुणोंके कारण ही अवधिज्ञान प्रकट होता है इसलिए यह
गुणप्रत्यय कहा जाता है ॥३७१॥ २५

गुणप्रत्यय अवधिज्ञान, अनुगामी, अननुगामी, अवस्थित, अनवस्थित, वर्द्धमान, हीय-
मानके भेदसे छह प्रकारका है । उनमें-से जो अवधिज्ञान अपने स्वामी जीवका अनुगमन
करता है वह अनुगामी है । वह तीन प्रकारका है—क्षेत्रानुगामी, भवानुगामी और उभयानु-
गामी । जो अवधिज्ञान अपने उत्पत्तिक्षेत्रसे अन्य क्षेत्रमें जानेवाले जीवके साथ जाता है, किन्तु
भवान्तरमें साथ नहीं जाता वह क्षेत्रानुगामी है । जो उत्पत्तिक्षेत्रसे स्वामीका भरण होनेपर ३०
दूसरे भवमें भी साथ जाता है वह भवानुगामी है । जो अपने उत्पत्तिक्षेत्र और भवसे अन्यत्र
भरत, ऐरावत, विदेह आदि क्षेत्रमें और देव, मनुष्य आदिके भवमें जीवका अनुगमन
करता है वह उभयानुगामी है । जो अवधिज्ञान अपने स्वामी जीवका अनुगमन नहीं करता
वह अननुगामी है । वह भी क्षेत्रानुगामी, भवानुगामी, उभयानुगामीके भेदसे तीन
प्रकारका है । जो अवधि अन्य क्षेत्रमें नहीं जाता अपने उत्पत्तिक्षेत्रमें ही नष्ट हो जाता है, ३५

गुणे दर्शनविशुद्ध्यादिलक्षणगुणमुंडागुणितरलेयक्त्वं । मितु गुणप्रत्यंगळमूरुमवधिगळ्त्वं संभविसुवधुं ।
भ्रमप्रत्ययं देशावधिमे यं दितु निश्चितमाप्नु ।

देसोद्दिस्स य अवरं पारतिरिये होदि संजदम्मि वरं ।

परमोही सव्वोही चरमसरीरस्स विरदस्स ॥३७४॥

देशावधिरवरं नरतिर्प्यंशु भवति संयते वरं । परमावधिः सर्वावधिश्चरमशरीरस्य विर- ५
दस्य ॥

देशावधिज्ञानद जघन्यं नररोळं तिव्यंचरोळं संयतरोळमसंयतरोळमवकुं । देवनारकरोळं पुदु
एकंदोडे देशावधिय सव्वोत्कृष्टं नियमदिदं मनुष्यगतिय सकलसंयतरोळेयक्त्वं- । मितरगतित्रययो-
द्विल्लेके दोडे महाव्रताभावमपुदरिदं । परमावधिसर्वावधिगळेरडुं जघन्यदिदमुमुत्कृष्टदिदमु मनुष्य- १०
गतियोळे चरमांगरण महाव्रतिगळ्ये संभविसुवधु । चरमं संसारान्तर्वसितदुभवमोक्षकारणरत्नत्र-
पाराधकजीवसंबन्धिशरीरं वज्ररूपभनाराचसंहननयुक्तं यस्यासौ चरमशरीरः ।

पडिवादी देसोही अप्पडिवादी हवंति सेसा ओ ।

मिच्छत्तं अविरमणं ण य पडिवज्जति चरिमदुगे ॥३७५॥

प्रतिपाती देशावधिप्रतिपातिनो भवतः शेषो अहो । मिथ्यात्वमविरमणं न च प्रतिपद्यन्ते
चरमद्विके ॥ १५

सम्यक्त्वमुं चारित्रमुमें बी येरडरिदं बळिचे मिथ्यात्वाऽसंयमंगळप्रति प्रतिपातमभकुमद-
मुच्छुदं प्रतिपातियक्कुमितप प्रतिपाति देशावधिमेयक्त्वं । शेष परमावधि सर्वावधिगळेरडुम-
संयमलक्षणगुणामावे तयोरभावात् । देशावधिरपि गुणे दर्शनविशुद्ध्यादिलक्षणे सति भवति । एवं गुणप्रत्ययास्त्व-
योऽयवधयः संभवन्ति । भवप्रत्ययस्तु देशावधिरेवेति निश्चितं आत्म ॥३७३॥

देशावधिज्ञानस्य जघन्यं नरतिरसचोरेव संयतासंयतयोः भवति, न देवनारकयोः । देशावधेः सर्वोत्कृष्टं २०
तु नियमेन मनुष्यगतिः सकलसंयते एव भवति नेतरगतिये तत्र महाव्रताभावात् । परमावधिसर्वावधि द्वावपि
जघन्येनेत्कृष्टेन च मनुष्यगतावेव चरमाङ्गस्य महाव्रतिन एव संभवतः । चरमं संसारान्तर्वसितदुभवमोक्ष-
कारणरत्नत्रपाराधकजीवसंबन्धि शरीरं वज्ररूपभनाराचसंहननयुतं यस्यासौ चरमशरीरः ॥३७४॥

सम्यक्त्वचारित्रान्यां प्रच्युत्य मिथ्यात्वासंयमयोः प्रातिः प्रतिपातः, तद्युतः प्रतिपाती स तु देशावधिरेव

नियमसे गुणप्रत्यय ही होते हैं । क्योंकि संयमगुणके अभावमें वे दोनों नहीं होते । २५
देशावधि भी दर्शनविशुद्धि आदि गुणोंके होनेपर होता है । इस प्रकार गुणप्रत्यय तो तीनों
भी अवधि होते हैं । किन्तु भवप्रत्यय देशावधि ही है यह निश्चित हुआ ॥३७३॥

देशावधिज्ञानका जघन्य भेद संयमी या असंयमी मनुष्यों और तिर्यचोंके ही होता है,
देवों और नारकियोंके नहीं होता । किन्तु देशावधिका सर्वोत्कृष्ट भेद नियमसे सकलसंयमी
मनुष्यके ही होता है, शेष तीन गतियोंमें नहीं होता, क्योंकि वहाँ महाव्रत नहीं होते । ३०
परमावधि सर्वावधि जघन्य भी और उत्कृष्ट भी मनुष्यगतिये ही चरमशरीरी महाव्रतीके
ही होते हैं । चरम अर्थात् संसारके अन्तमें होनेवाले उसी भवसे मोक्षके कारण रत्नत्रयकी
आराधना करनेवाले जीवके होनेवाला वज्ररूपभनाराच संहननसे युक्त शरीर जिसका है
उसीके होते हैं । वही चरमशरीरी है ॥३७४॥

सम्यक्त्व और चारित्रसे च्युत होकर मिथ्यात्व और असंयममें आनेको प्रतिपात
कहते हैं । और जिसका प्रतिपात होता है वह प्रतिपाती है । देशावधि ही प्रतिपाती है । ३५

हेकभागमात्रमुजकोटिवेदिगुळ अन्वोन्मगुणकारोत्पन्नपनभेत्तं घनांगुलासंख्यातभागमात्रं एतु परमाणवदोक्तं स्फुटं प्रतिज्ञमप्युक्तं भवति । तस्मान्न जघन्यदेशावधितानभेत्तमश्नुकेदितु तात्पर्यं । तन्मात्रमिदं २ २ — गुणितदोहे घनांगुलासंख्यातभागमात्रमश्नुके ६ अ दशद्विध ०

२
० जघन्यावगाहनमुं जघन्यदेशावधितानभेत्तमभेत्तमप्युकेदितु सामुच्च-

तात्पर्यदुः ।

अथं तु ओहितोत्तं उस्तेहं अंगुलं हवे जग्हा ।
मुहुमोगाहणमाणं उवरि पमाणं तु अंगुलपं ॥३८१॥

जघन्यं स्वप्रधिभेत्तं उस्तेषांगुलं भवेत्तस्मात् । सूत्रमावगाहनमानमुपरि प्रमाणं ह्यंगुलं ।

तु मत्ते जघन्यदेशावधितानविषयभेत्तमप्युकेदुं जघन्यावगाहनमानं घनांगुलासंख्यात-
भागमात्रं पेक्षत्पट्टुवदुतोभांगुलमश्नुके । व्ययहारांगुलमनाधिति ये पेक्षत्पट्टुदु । प्रमाणात्मांगुल-
मनाधितिं पेक्षत्पट्टुदिल्लदेके दोहे आपुवोदु कारणदिदं सूत्रमनिगोदलक्ष्यपय्यात्रिजघन्यावगाह-

मूच्यन्तं अस्मत्सत्तेन भवत्य तदेतन्नागमात्रमुजकोटिवेधानां अन्वोन्मगुणकारोत्पन्नतां ह्युक्तसंख्यातभागमात्रं
एतु परमाणवे स्फुटं प्रतिज्ञमप्युक्ति । तस्मान्न जघन्यदेशावधितानभेत्तमप्युकेदितु तात्पर्यं २ । २ । गुणिते घनांगुला-
० । ० ।
२
०

नरसाहमानं भवति ६ ॥३८०॥

तु—पुनः, जघन्यदेशावधितानविषयभेत्तं यत्रजघन्यावगाहनमानं घनांगुलासंख्यातभागमात्रमुक्तं
एतुमेकांगुलं व्ययहारांगुलमनाधितोक्तं भवति न प्रमाणांगुलं नाचारमांगुलमाधितय । घनात्तारणात् १५

गगहन विधानके द्वारा मुज, कोटि और वेधका समीकरण करनेपर, उत्सेधांगुलको असंख्यातसे भाजित करके एक भाग प्रमाण मुज कोटि और वेधको परस्परमें गुणा करनेपर घनांगुलके असंख्यातवर्ग भाग प्रमाण क्षेत्रफल होता है । समीके समान जघन्य देशावधितानका क्षेत्र है ।

विशेषार्थ—आमने-सामने दो दिशाओंमें-से किसी एक दिशा सम्बन्धी प्रमाणको मुज २०
कहते हैं । शेष दो दिशाओंमें-से किसी एक दिशा सम्बन्धी प्रमाणको कोटि कहते हैं । ऊँचाई-
के प्रमाणको वेध कहते हैं । व्यवहारमें इन्हें ऊँचाई, चौड़ाई, लम्बाई कहते हैं । यहाँ जघन्य
क्षेत्रको लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई एक सी नहीं है कमती-बहुती है । किन्तु क्षेत्रखण्डन विधानके
द्वारा समीकरण करनेपर ऊँचाई, चौड़ाई, लम्बाईका प्रमाण उत्सेधांगुलके असंख्यातवर्ग भाग
मात्र होता है । उनको परस्परमें गुणा करनेपर घनांगुलके असंख्यातवर्ग भाग प्रमाण घनक्षेत्र-
फल होता है । इतना ही प्रमाण जघन्य अवगाहनाका है और इतना ही जघन्य देशावधिके २५
क्षेत्रका है ॥३८०॥

जघन्य देशावधितानका विषय क्षेत्र जो जघन्य अवगाहनाके समान घनांगुलके
असंख्यातवर्ग भागमात्र कहा है वह उत्सेधांगुल व्यवहार अंगुलकी अपेक्षा कहा है, प्रमाणांगुल
७९

भुजकोटिवेदिगच्छु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळरिपल्पडुबु २ २ ।
 ०० ००
 २
 ००

आवलि असंख्यभागं तीद भविस्सं च कालदो अवरं ।

ओही जाणदि भावे काल असंखेज्जभागं तु ॥३८३॥

आवल्पसंख्यभागं अतीतं भविष्यं तं च कालतोवरावधिज्जांताति भावे कालासंख्येय भागं तु ।

कालादिदं जघन्यावधिज्ञानं अतीत भविष्यत्कालमनावल्पसंख्यातभागमात्रमनरिगुं ८

स्वविषयैकद्रव्यगतव्यंजनपर्यायंगळनावल्पसंख्यातैकभागमात्रपूर्वोत्तरंगळ नरिगुमे बुदर्थं । एक-
 दोडे व्यवहारकालक द्रव्यद पर्यायस्वरूपमल्लदन्यत् स्वरूपांतराभावमप्युर्वारिदं । भावे भावदोडु
 तु मते कालासंख्येयभागं तज्जघन्यावधिविषयकालावल्पसंख्यातैकभागद असंख्येयभागमात्रमन-
 रिगुं । इनु जघन्यदेशावधिज्ञानविषयद्रव्यक्षेत्रकालभावं गच्छे सीमाविभागमं पेच्छु तद्देशावधिज्ञान- १०
 विकल्पंगळं चतुर्विधविषयभेदादिदं पेच्छपं ।

भागमात्रमेव भवति । तद्भुजकोटिवेदाः सूच्यङ्गुलासंख्यातैकभागमात्रा ज्ञातव्याः २ २ ॥३८२॥

०० ००
 २
 ००

कालेन जघन्यावधिज्ञानं अतीतभविष्यत्कालमावल्पसंख्यातभागमात्रं जानाति ८ । स्वविषयैकद्रव्यगत-

व्यञ्जनपर्यायान् पूर्वोत्तरान् तावतो जानातीत्यर्थः । व्यवहारकालस्य द्रव्यस्य पर्यायस्वरूपं विनाश्रयस्वरूपान्त-
 राभावात् । भावे तज्जघन्यद्रव्यगतवर्तमानपर्याये तु पुनः कालासंख्येयभागं तज्जघन्यावधिविषयकालस्यावल्प-
 संख्यातैकभागस्य असंख्यातैकभागमात्रं जानाति ८ । एवं जघन्यदेशावधिज्ञानविषयद्रव्यक्षेत्रकालभावानां सी- १५
 ००

माविभागं प्ररूप्येशानीं द्वितीयादीन् देशावधिज्ञानविकल्पान् चतुर्विधविषयभेदानाह—

होता है । तथापि घनांगुलके असंख्यातवें भाग मात्र ही होता है । उसके मुजा, कोटि और
 वेध सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागमात्र हैं ॥३८२॥

कालकी अपेक्षा जघन्य अवधिज्ञान आवलीके असंख्यातवें भागमात्र अतीत और
 अनागतकालको जानता है । अर्थात् अपने विषयभूत एक द्रव्यकी अतीत और अनागत २०
 व्यंजनपर्यायोंको आवलीके असंख्यातवें भागमात्र जानता है क्योंकि व्यवहारकालके और
 द्रव्यके पर्याय स्वरूपके विना अन्य स्वरूप सम्भव नहीं है । भावकी अपेक्षा उस जघन्य
 द्रव्यगत वर्तमान पर्यायोंको कालके असंख्यातवें भाग जानता है अर्थात् जघन्य अवधिका
 विषय जो आवलीके असंख्यातवें भागमात्र काल है उसके असंख्यातवें भागमात्र अर्थपर्यायों-
 को जानता है ॥३८३॥ २५

इस प्रकार जघन्य देशावधिज्ञानके विषय द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी सीमाका
 विभाग कर्कर अव देशावधिज्ञानके द्वितीय आदि विकल्पोंके विषयभूय द्रव्यादिको
 कहते हैं—

कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिका

भुजकोटिवेदिगच्छु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळरिप्यल्पद्रुवु २ २ ।
 ०० ००
 २
 ००

आवलि असंख्यमागं तीद भविस्सं च कालदो अवरं ।
 ओही जाणदि भावे काल असंखेज्जमागं तु ॥३८३॥

भावत्यसंख्यभागं अतीतं भविष्यं तं च कालतोवरावधिज्जांनति भावे कालासंख्येय भागं तु ।
 कालदिदं जघन्यावधिज्ञानं अतीत भविष्यत्कालमनावल्यसंख्यातभागमात्रमनरिणं ८

स्वविषयैकद्रव्यगतद्रव्यजनपर्यायंगळनावल्यसंख्यातैकभागमात्रप्रपूर्वोत्तरंगळ नरिगुमं बुदर्थं । एकै-
 दोडे व्यवहारकालक द्रव्यद पर्यायस्वरूपमल्लदन्यत् स्वरूपांतराभावमप्युवर्तिवं । भावे भावदोऽ-
 तु मत्ते कालासंख्येयभागं तज्जघन्यावधिषिययकालावल्यसंख्यातैकभागव असंख्येयभागमात्रमन-
 रिणं । इदं जघन्यदेशावधिज्ञानविषयद्रव्यक्षेत्रकालभावं गळगे सीमाविभागमं पेळ्ळु तद्देशावधिज्ञान- १०
 विकल्पंगळं चतुर्विधविषयभेदादिदं पेळ्ळवपं ।

भागमात्रमेव भवति । तद्भुजकोटिवेधाः सूच्यङ्गुलासंख्यातैकभागमात्रा ज्ञातव्याः २ २ ॥३८२॥
 ०० ००
 २
 ००

कालेन जघन्यावधिज्ञानं अतीतमविव्यक्तकालमावल्यसंख्यातभागमात्रं जानाति ८ । स्वविषयैकद्रव्यगत-

व्यञ्जनपर्यायान् पूर्वोत्तरान् तावतो जानातीत्यर्थः । व्यवहारकालस्य द्रव्यस्य पर्यायस्वरूपं विनाश्रयस्वरूपान्त-
 राभावान् । भावे तज्जघन्यद्रव्यगतवर्तमानपर्याये तु पुनः कालासंख्येयभागं तज्जघन्यावधिषिययकालस्यावल्य-
 संख्यातैकभागस्य असंख्यातैकभागमात्रं जानाति ८ । एवं जघन्यदेशावधिज्ञानविषयद्रव्यक्षेत्रकालभावानां सो- १५

मात्रिभागं प्रख्येदानां द्वितीयादीन् देशावधिज्ञानविकल्पान् चतुर्विधविषयभेदानाह—

होता है । तथापि घनांगुलके असंख्यातवें भाग मात्र ही होता है । उसके मुजा, कोटि और
 वेध सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागमात्र हैं ॥३८२॥

कालकी अपेक्षा जघन्य अवधिज्ञान आवलीके असंख्यातवें भागमात्र अतीत और
 अनागतकालकी जानता है । अर्थात् अपने विषयमूत एक द्रव्यकी अतीत और अनागत
 व्यञ्जनपर्यायोंको आवलीके असंख्यातवें भागमात्र जानता है क्योंकि व्यवहारकालके और
 द्रव्यके पर्याय स्वरूपके विना अन्य स्वरूप सम्भव नहीं है । भावकी अपेक्षा उस जघन्य
 द्रव्यगत वर्तमान पर्यायोंको कालके असंख्यातवें भाग जानता है अर्थात् जघन्य अवधिका
 विषय जो आवलीके असंख्यातवें भागमात्र काल है उसके असंख्यातवें भागमात्र अर्थपर्यायों-
 को जानता है ॥३८३॥

इस प्रकार जघन्य देशावधिज्ञानके विषय द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी सीमाका
 विभाग कहकर अथ देशावधिज्ञानके द्वितीय आदि विकल्पोंके विषयभूय द्रव्यादिका
 कहते हैं—

मुञ्जतोद्विरेदिगञ्जु सूच्यंगुलासंख्यातैरुभागमात्रं गजत्रियत्पट्टपुत्रु २ २ ।
 ०० ००
 २
 ००

आवृत्ति असंख्यमात्रं तीद भविस्सं च कालदो अवरं ।

ओही जाणदि मावे काल असंख्येज्जमात्रं तु ॥३८३॥

आवृत्त्यसंख्यभागं अतीतं भविष्यं तं च कालतोयरावधिर्जाति भावे कालासंख्येय भागं तु ।

कालादिदं जघन्यावधिज्ञानं अतीतं भविष्यत्कालमावृत्त्यसंख्यातभागमात्रमनरिपुं ८

स्वविषयैरुद्रव्यगतद्रव्यजननवर्ष्यावंगजनावन्यसंख्यातैरुभागमात्रद्रव्योत्तरंगज नरिपुमे बुद्धयर्थं । एकै-
 शोऽप्येवकारकात्क इत्येव पर्यायस्वल्पमल्लव्यन्तु स्वल्पांतराभावमप्युपरिदं । भावे भावदोञ्जु
 तु मते कालासंख्येयभागं तज्जघन्यावधिषियमकालावृत्त्यसंख्यातैरुभागं असंख्येयभागमात्रमन-
 रिपुं । इतु जघन्यवैशावधिज्ञानविषयद्रव्यभेदकालमात्रं गज्जे सीमाविभागमं पेञ्जु तद्देशावधिज्ञान-
 विरूपंगजं चतुर्विपरियमभेदविदं पेञ्जयं । १०

भागमात्रमेव भवति । तन्मुञ्जतोद्विरेकाः सूच्यंगुलासंख्यातैरुभागमात्रं सातस्याः २ २ ॥३८२॥

०० ००

२

००

कालेन जघन्यावधिज्ञानं अतीतमविव्यक्तकालमावृत्त्यसंख्यातभागमात्रं जानाति ८ । स्वविषयैरुद्रव्यगत-

द्रव्यजननवर्ष्यावंगुलावन्तो जाणतोत्पत्तयः । स्वल्पांतरावृत्त्यस्य पर्यायस्वरूपं विनाश्रव्यस्वरूपान्त-
 रानामां । भावे तज्जघन्यद्रव्यगतवर्तमानपरि तु पुनः कालासंख्येयभागं तज्जघन्यावधिषियमकालमावृत्त्यसं-
 ख्येयभागमात्रं जानाति ८ । एवं जघन्यवैशावधिज्ञानविषयद्रव्यभेदकालमात्रां सी- १५

००

मात्रमात्रं प्रत्येदानीं द्वितीयादीन् देशावधिज्ञानविकल्पान् चतुर्विपरियमभेदानाद्—

होवा है । तथापि घनांगुलके असंख्यातवै भाग मात्र ही होवा है । उसके मुजा, कोटि और
 वैष गूच्यंगुलके असंख्यातवै भागमात्र है ॥३८२॥

कालकी अपेक्षा जघन्य अवधिज्ञान आवृत्तीके असंख्यातवै भागमात्र अतीत और
 अनागतकालकी जानवा है । अर्थात् अपने विषयभूत एक द्रव्यकी अतीत और अनागत
 वर्तमानपर्यायोको आवृत्तीके असंख्यातवै भागमात्र जानवा है क्योंकि व्यपहारकालके और
 द्रव्यके पर्याय स्वरूपके विना अन्य स्वरूप सम्भव नहीं है । भावकी अपेक्षा उस जघन्य
 द्रव्यगत वर्तमान पर्यायोको कालके असंख्यातवै भाग जानवा है अर्थात् जघन्य अवधिका
 विषय जो आवृत्तीके असंख्यातवै भागमात्र काल है उसके असंख्यातवै भागमात्र अर्थपर्यायो-
 को जानवा है ॥३८३॥ २०

इस प्रकार जघन्य देशावधिज्ञानके विषय द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी सीमाका
 विभाग कइकर अब देशावधिज्ञानके द्वितीय आदि विकल्पोंके विषयभूय द्रव्यादिको
 कहते हैं— २५

विशेषदिवं ध्रुवहारप्रमाणं पेञ्चपं :-

मणदब्बवर्गगाण वियप्पाणंतिमसमं नु धुवहारो ।

अवरुक्कस्सविसेसा रुवहिया तव्वियप्पा हु ॥३८६॥

मनोद्रव्यवर्गणानां विकल्पानामनंतैकभागसमः स्फुटं ध्रुवहारः । अवरोत्कृष्टविशेषाः
रूपाधिकास्तद्विकल्पाः खलु ॥

ध्रुवहारप्रमाणभरियत्पडुगुमदंते'दोडे मनोद्रव्यवर्गणैगळ विकल्पंगळिनितोळधनि ज १
ख

तदनंतैकभागदोडे ज १ समानमक्कुं । खलु स्फुटमागि । अंतादोडा मनोद्रव्यवर्गणाविकल्पं-
ख ख

गळतानेनितप्पुवं'दोडे पेञ्चल्पडुगुं । अवरोत्कृष्टविशेषाः रूपाधिकास्तद्विकल्पाः खलु जघन्यमनो-
द्रव्यवर्गणेषुनुत्कृष्टमनोद्रव्यवर्गणैगळोळकळुळिद शेषदोळेकरुपं कूडुत्तिरला मनोद्रव्यवर्गणा-

विकल्पंगळप्पुवु । आदो । ज । अन्ते ज ख सुद्धे ज १ वडिडहिदे ज १ रुवसंजुदे ठाणा १०
ख ख ख ख ख ख

ज ई स्थानविकल्पंगळनंतैकभागदोडे ज समानं ध्रुवहारप्रमाणमक्कुमं बुदत्त्यंमंतादोडा
ख ख ख ख

जघन्योत्कृष्टमनोद्रव्यवर्गणैगळ प्रमाणेनिते'दोडे पेञ्चपं :-

अवरं होदि अणंतं अणंतभागेण अहियगुक्कस्सं ।

इदि मणमेदाणंतिमभागो दब्बम्मि धुवहारो ॥३८७॥

अवरो भवत्यनंतोऽनंतभागेनाधिक उरकृष्ट, इति मनोमेदानामनंतैकभागो द्रव्ये ध्रुवहारः ॥ १५

शातव्यम् ॥३८५॥ विशेषेण ध्रुवहारप्रमाणमाह—

मनोद्रव्यवर्गणाया यावन्तो विकल्पास्तेषामनंतैकभागेण समं संख्यया समानं खलु ध्रुवहारप्रमाणं

स्यात् । ते च विकल्पाः कति ? मनोवर्गणाजघन्यं ज तदुत्कृष्टे ज ख विशेष्य शेषे ज रूपाधिचोदृते एतावन्तः
ख ख ख ख

ज खलु स्युः ॥३८६॥ ते जघन्योत्कृष्टे प्रमाणयति—
ख

भूत द्रव्य कहा था उसे ही यहाँ समयप्रबद्धके रूपमें स्थापित किया है । इसमें ही ध्रुवहारका २०
भाग दे-देकर आगेके विकल्पोंके विषयभूत द्रव्य लायेंगे ॥३८५॥

सामान्य रूपसे ध्रुवहारका प्रमाण सिद्धराशिके अनन्तवें भाग कहा । अब विशेष
रूपसे ध्रुवहारका प्रमाण कहते हैं—

मनोद्रव्यवर्गणाके जितने भेद हैं उनके अनन्तवें भागकी संख्याके बराबर ध्रुवहारका
प्रमाण है । मनोवर्गणाके जघन्यको मनोवर्गणाके उत्कृष्टमें-से घटाकर जो प्रमाण शेष रहे २५
उसमें एक जोड़नेपर मनोवर्गणाके भेदोंका प्रमाण होता है ॥३८६॥

आगे मनोवर्गणाके जघन्य और उत्कृष्ट भेदका प्रमाण कहते हैं—

कैरुभागमात्रद्रव्यत्रिकल्पंगळ सूच्यंगुलासंख्यातैरुभागमात्रंगळ नडेनडवेकैरुप्रदेशोत्रमुद्विपागुत्तं योगिबुल्लुट्टेनात्रपिय सव्योत्तुट्टद्रव्यत्रैप्रविकल्पं मुट्टिदागळ तदुत्तुट्टोत्रं संपूर्णलीकमातुबु कारण- विदं । आदिशेप्रमनंत्यशेप्रदीच्छकतेषु सूच्यंगुलासंख्यातदिदं गणिति लब्धशेच्छोदु रूपं कूडिदोडे देगावधितानविकल्पंगळं द्रव्यत्रिकल्पंगळमप्युधिवककंसंतुट्टिदेतावधियुत्तुट्टद्रव्यशेप्रंगळं इत्तिल जघन्यशेप्रमनुत्तुट्टोत्रशेप्रदीच्छकतेषु शेषम ४ तंगुलासंख्यातकौडकमैर-

| ४ | ८ |
|----------|---------|
| २ | ७ |
| ४ | |
| ४२ | ७ |
| ४२२ | ६ |
| ४२२२ | ६ |
| ४२२२२ | ५ |
| ४२२२२२ | ५ |
| ४२२२२२२ | ४ |
| ४२२२२२२२ | ४ |
| द्रव्य | क्षेत्र |

डारिदं गणिति एकरूपं कूडिदोडे— ४ । २ देगावधितर्षद्रव्यविकल्पंगळप्यु १९ । 'आदि अंते गुडे वद्विट्टहिदे रूपसंगुदे टागा' । दिदी स्थानविकल्पमं साधियुय करणमूत्रवके स्यात्यानं विरोध- भागि यत्रुंमं देनत्येवेकं दोडिदिलि पद्यादमनतरं कयचनमप्युवरिनलिल किचिद्विट्टतापनमवकुमव- त्तोदोडे प्रंपहारं 'चेतवियप्या अयदरुत्साधितेसां हवे एत्य' एदु जघन्योत्तुट्टंगळं शेषेगुत्तिरकलिल क्षेत्रविकल्पंगळं दु पेच्छोडिलि कूडवेकरूपं धेरिरिति सूच्यंगुलासंख्यातदिदं गणिति लब्धशेच्छोकरूपं कूडिदोडे द्रव्यविकल्पंगळ प्रमाणमप्युदे धी विप्रोयसूच्यरुमवकुं ।

रूपयुनशेप्रविकल्पंगळं सूच्यंगुलासंख्यातदिदं गणितिशेच्छोदु द्वेष्टविरोधमवकुमवत्ते दोडे

अंकसंदृष्टियोज्ञ रूपयुतशेप्रविकल्पंगळप्यु ४ इयं कांडकमप्येडारिदं गणितिशेच्छोदु पत्तु १० । ह्यु

एते एव गूचरद्गुलासंख्यातेन गुणवित्ता एकरूपयुताः देगावधितर्षद्रव्यविकल्पाः स्युः ३-६ । २ कुनः ?

जघन्यद्रव्यं भ्रुवहारेण मक्त्वा भक्त्या गूचरद्गुलासंख्येवभागमात्रद्रव्यविकल्पेण गतेषु जघन्यशेप्रत्योपयैकप्रदेशो

और वे क्षेत्र ही अपेक्षा विकल्प इस प्रकार है—देशावधिके उत्कृष्ट क्षेत्रमें जघन्य क्षेत्रको घटानेपर जो प्रदेशका प्रमाण शेष रहता है उसने क्षेत्रकी अपेक्षा विकल्प है । उनको ही सूच्यंगुलके असंख्यातवै भागसे गुणा करके एक जोड़नेपर देशावधिके द्रव्यकी अपेक्षा विकल्प होते हैं । यह कैसे यह कहते हैं—जघन्य द्रव्यको भ्रुवहारेसे भाग देते-देते सूच्यंगुलके असंख्यातवै भाग मात्र द्रव्यके भेद धीतनेपर जघन्य क्षेत्रके ऊपर एक प्रदेश बहता है । इसी प्रकार लोकप्रमाण उत्कृष्ट देशावधिके पर्यन्त जानना । इसका आशय यह है कि सूच्यंगुलके असंख्यातवै भागपर्यन्त द्रव्यके विकल्प होने तक क्षेत्र यही रहता है जो जघन्य भेदका विषय था । इतने विकल्प धीतनेपर क्षेत्रमें एक प्रदेशकी वृद्धि होती है । पुनः सूच्यंगुलके असंख्यातवै

क्रमविदमसंख्यातवारंगळरित्यल्पद्रुवु । इतसंख्यातवारं ध्रुवहारभत्रतैकैकभायंगळागुप्तं पोपुंभु -
पोगल्क :-

देशोहिमज्झभेदे सविस्ससोपचयतेजकम्मंगं ।

तेजोभासमणाणं वर्गणयं केवलं जत्य ॥३९५॥

देशावधिमध्यभेदे सविस्ससोपचयतेजः काम्मंगाणं । तेजोभापामनसां वर्गणां केवलां यत्र ॥ ५

पस्सदि ओही तत्य असंखेज्जाओ हवंति दीउवही ।

वासाणि असंखेज्जा ह्येति असंखेज्जगुणिक्रमा ॥३९६॥

पश्यत्यवधिस्तत्रासंख्येया भवंति द्वीपोदधयः । वर्धाण्यसंख्येयानि भवंत्यसंख्येयगुणित-
क्रमाणि ॥

देशावधिमध्यभेदे देशावधिज्ञानमध्यमविकल्पदोळु यत्र आयुदानुमो देडेयोळु विस्ससोपचय- १०
सहितमप्य तैजसशरीरस्कन्धमुमं काम्मंगणशरीरस्कन्धमुमं विस्ससोपचयरहित केवलं तैजसवर्गणेषुमं
भापावर्गणेषुमं मनोवर्गणेषुमं पश्यत्यवधिः अवधिज्ञानं प्रत्यक्षमागरिदुमा येडेगळोळु क्षेत्रगळ-
संख्यातद्वीपोदधिगळुपुवु । कालंगळुमा येडेगळोळु असंख्यातवर्गणेषुमा द्वीपोदधिगळुं वर्धणंगळुम-
संख्यातंगळुगुप्तमुं तैजसशरीरस्कन्धस्थानं मोदल्लो डुत्तरोत्तरंगळसंख्यातगुणितक्रमंगळुमपुवु ।

तत्तो कम्मइयस्सिगिसमयपवद्धं विविस्ससोपचयं । १५

धुवहारस्स विमज्जं सध्वोही जाव ताव हवे ॥३९७॥

ततः काम्मंगणस्यैकसमप्रवद्धं विविस्ससोपचयं । ध्रुवहारस्य विभाज्यं सर्वत्रावधिर्ध्यावत्ता-
वद्भवेत् ॥

विषयद्रव्यं भवति—त ० १२-१६ ख । एवं तृतीयादिकल्पेध्वपि असंख्यातवारपर्यन्तमेव एव क्रमः

≡ ९

कतव्यः ॥३९४॥ तथा सति किं स्यादिति चेदाह—

देशावधिज्ञानमध्यमविकल्पेषु यत्र सविस्ससोपचयं तैजसशरीरस्कन्धं तदप्ये यत्र तादृशं कार्माणशरीर- २०
स्कन्धं तदप्ये यत्र केवलां विविस्सोपचयं तैजसवर्गणां तदप्ये यत्र केवलां भापावर्गणां तदप्ये केवलां मनोवर्गणां
ष अवधिज्ञानं जानाति । तत्र पञ्चसु स्थानेषु क्षेत्राणि असंख्यातद्वीपोदधयः काला असंख्यातवर्षाणि च भवन्ति
तथापि उत्तरोत्तरासंख्यातगुणितक्रमाणि ॥३९५-३९६॥

भाग दूसरे भेदके विषयभूत द्रव्यमें देनेपर तीसरे भेदके विषयभूत द्रव्यका प्रमाण आता है । २५
पैसा ही क्रम असंख्यात वार पर्यन्त करना चाहिए ॥३९४॥

पैसा करनेसे क्या होता है यह कहते हैं—

देशावधिज्ञानके मध्यम भेदोंमेंसे जहाँ देशावधिज्ञान विस्ससोपचय सहित तैजस-
शरीररूप स्कन्धको जानता है, उससे आगे जहाँ विस्ससोपचय सहित काम्मणस्कन्धको जानता
है, उससे आगे जहाँ विस्ससोपचय रहित तैजस वर्गणाको जानता है, उससे आगे जहाँ १०
विस्ससोपचय रहित भापावर्गणाको जानता है, उससे आगे जहाँ विस्ससोपचयरहित
मनोवर्गणाको जानता है वहाँ इन पाँचों स्थानोंमें क्षेत्र असंख्यात द्वीप समुद्र और काल
असंख्यात वर्ष होता है । तथापि उत्तरोत्तर असंख्यात गुणितक्रम होता है । अर्थात् पहलेसे

कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिका

भरहम्मि अद्धमासं साह्यिमासं च जंबुदीवम्भि ।
 वासं च मणुवलोए वासपुधत्तं च रुजगम्भि ॥४०६॥

भरतेदंमासः साधिकमासश्च जंबूद्वीपे । वर्षं च मनुजलोके वर्षंपृथक्त्वं च रुचके ॥
 अष्टमकाण्डकदोः भरतक्षेत्रमुमर्द्धमासमर्कं । भर । अर्द्धं मा । नवमकाण्डकदोः जंबूद्वीपमं

साधिकमासमुमर्कं । जं मा. १ । दशमकाण्डकदोः मनुष्यलोकमुमेकवर्षमुमर्कं । म ४५ ल ।
 वर्षं १ । एकादशकाण्डकदोः रुचकद्वीपमं च वर्षंपृथक्त्वमुमर्कं । ह । व प ।

संखेज्जपमे वासे दीवसमुद्दा ह्वंति संखेज्जा ।
 वासम्भि असंखेज्जे दीवसमुद्दा असंखेज्जा ॥४०७॥

संखेपत्रमे वर्षे द्वीपसमुद्रा भवन्ति संखेयाः । वर्षे अतंगपेये द्वीपसमुद्रा असंखेयाः ॥
 द्वादशकाण्डकदोः संखेयमात्र द्वीपसमुद्रंगं संख्यातवर्षंगं मणुपु । द्वी = स = १ ॥ वर्षे

१ । मेः प्रयोदशादि काण्डकंगोः तैजसशरीरादि द्रव्यविकल्पंगं ड्योः मुं पेः संख्यातद्वीप
 समुद्रंगं तत्कालंगं संख्यातवर्षंगं संख्यातगुणितक्रमंगं मणुपु । इतु देशावधिज्ञानविषयंगं
 द्रव्यक्षेत्रकालं भावंगं एकान्तविशतिकाण्डकंगोः चरमकाण्डक चरमद्रव्यक्षेत्रकालभावंगं
 पेः ध्रुवहारैकधारभक्तकार्मणवर्गण्यं व संपूर्णकमुं = समयोनैकपत्यमुं ॥ प १ ॥ यथा

दिदमणुपुमाद्यदेशावधिज्ञानविषय द्रव्यक्षेत्रकालभावंगं संदृष्टि—

अष्टमकाण्डके क्षेत्रं—भरतक्षेत्र, काल अर्षमासः, भर अर्षमा = नवमकाण्डके क्षेत्रं जंबूद्वीपः,
 साधिकमासः, जं = १ मा १ । दशमकाण्डके क्षेत्रं मनुष्यलोकः कालः एकवर्षः, ४५ ल वर्षं १ ।
 काण्डके क्षेत्रं रुचकद्वीपः, कालः वर्षंपृथक्त्वं ह । व प ॥४०६॥
 द्वादशे काण्डके क्षेत्रं संखेयद्वीपसमुद्राः । कालः संख्यातवर्षाणि द्वी = स = १ वर्षं १ । उपरि
 दिपु काण्डके तु तैजसशरीरादिद्रव्यविकल्पस्थानेषु क्षेत्राणि असंख्यातद्वीपसमुद्राः कालः असंख्या
 तवर्षाणि असंख्यातगुणितक्रमेण भवन्ति । चरमकाण्डकचरमे द्रव्यं ध्रुवहारभक्तकार्मणवर्गणा व क्षेत्रं

लोकः = कालः समयोनपत्यं प—१ ॥४०७॥

अष्टमकाण्डकमें क्षेत्र भरतक्षेत्र और काल आधामास है । नीचे काण्डकमें क्षेत्र
 द्वीप काल कुछ अधिक एक मास है । दसवें काण्डकमें क्षेत्र मनुष्य लोक, काल
 है । ग्यारहवें काण्डकमें क्षेत्र रुचकद्वीप काल वर्षंपृथक्त्व है ॥४०६॥

चारहवें काण्डकमें क्षेत्र संख्यात द्वीप-समुद्र और काल संख्यात वर्ष है ।
 आदि काण्डकमें जो तैजस शरीर आदि द्रव्यकी अपेक्षा स्थान कहे हैं, उनमें क्षेत्र
 द्वीप समुद्र है और काल असंख्यात वर्ष है । दोनों ही आगे-आगे क्रमसे
 असंख्यातगुने होते हैं । अन्तके उन्नीसवें काण्डकमें द्रव्य तो कार्मणवर्गणमें
 माग देनेसे जो प्रमाण आवे उतना है । क्षेत्र सम्पूर्ण लोक है और काल एक स

काल विसेषेणवह्निदरोत्तविसेसो पुत्रा हवे बद्धो ।

अद्भुतवद्वीवि पुणो अविरुद्धं इदृठकंडम्मि ॥४०८॥

कालविसेषेणावहृतशोप्रविशोयो भवेत् प्रया वृद्धिः । अद्भुतवृद्धिरपि पुनरविद्वमिष्टकांडके ।
कालविसेषेणावहृतः क्षोत्रविशेषो प्रया वृद्धिर्भवेत् । प्रथमकांडकदोळ जघन्यकालम् ०

तन्नुत्पृष्टकालदोळ ८ विसेषिसि ८०-१ अदरितं भागिसत्पट्ट क्षोत्रविशेषं जघन्यशोत्रम् ६
१ १० ०

तन्नुत्पृष्टशोत्रदोळ ६ शोत्रिसिदुदरिद ६०-१ भागिसिद लक्ष्य ६०-१ मयपरितितमिदु ६
१ १० १०८०१ ८
१०

प्रया भवेत् वृद्धिः । प्रथमकांडकदोळ प्रथमशोत्रवृद्धिप्रमाणमरहुं । सूर्यगुलामंश्यातभागमाप्र-
द्वम्परितितं गजवत्पितरपरिदं नददोळु प्रदेशं क्षोत्रदोळु वेच्चुगुमो क्षमदिदमोयावलि भक्तपनांगुल-
प्रमितप्रदेशंगळु जघन्यशोत्रदोळु वेच्चि कालदोळोडु समयं जघन्यकालद मेले वेच्चुगुमितु तत्कांडक
परमपर्यंतं प्रथमशोत्रदोळु जघन्यकालद मेले वेच्चिद समयंगजिनितपुपु ८०१ इयं जघन्य- १०
१०

कालदोळु ८ समयंगजिनितपुपु ८०१ इयं जघन्य- १०
कालदोळु ८ समयंगजिनितपुपु ८०१ इयं जघन्य- १०
जघन्य शोत्रद मेले ६ वेच्चिद प्रदेशंगळु गिनितपुपु ६०१ विषं जघन्यशोत्रदोळु कूडिदोळु
० १ ६
प्रथमकांडकचरमदोळु पनांगुलसंश्लेषभागमाप्रमरहुं ६ इतिस्ला कांडकगळोळं प्रयवृद्धियं
१

विशेषितान्तरं जघन्यशोत्रं क्षोत्रदोळु मे जघन्यकालं च स्तोत्रदोळुके विगोप्य वेपराशी क्षोत्र-
कालविशेषो स्यादात् । तत्र प्रथमकांडके कालविशेषो ८ ०-१ शोत्रविशेषः ६ ०-१ भक्त्या ६ ०-१
११० ११० १०८०-१ १०

अवशिष्टः ६ प्रयावृद्धिर्भवेत् । सूर्यगुलामंश्यातभागमाप्रद्वम्परितितं गजवत्पितरपरिदं नददोळु
८
वर्धते । अनेत्रक्रमेण आवशिष्टमनाशुगुलप्रमितप्रदेशाः जघन्यशोत्रदोषपरि वर्धन्ते । तदा जघन्यकालस्थोपरि
एकः समयो वर्धते । एवं तत्कांडकचरमदोळु प्रथमशोत्रदोळु जघन्यकालस्थोपरि विशेषितमयप्रमाणमिदम् । ८ ०-१
१०

विशेषित काण्डकके अपने उक्तपट्ट क्षोत्रमें जघन्य क्षोत्रको और अपने उक्तपट्ट कालमें ।
जघन्य कालको घटानेपर जो क्षोत्र राशि रह्यी है उसको क्षोत्र विशेष और काल विशेष कहते
हैं । प्रथम काण्डकके कालविशेषसे क्षोत्रविशेषमें भाग देनेपर ध्रुववृद्धिका प्रमाण होता है ।
सूर्यगुलके असंख्यातवर्षे भागमान इसके विकल्पोंके घोरनेपर क्षोत्रमें एक प्रदेश बढ़ता है ।
इस क्रमसे जघन्य क्षोत्रके ऊपर आबलीसे भाजित घनांगुल प्रमाणप्रदेश जघन्य क्षोत्रके ऊपर
बढ़ते हैं । इतने प्रदेश जघन्य क्षोत्रके ऊपर बढ़नेपर जघन्यकालके ऊपर एक समय बढ़ता है ।
इस प्रकार प्रथम काण्डकके अन्त पर्यन्त ध्रुववृद्धिसे जितने समय बढ़ें उन्हें जघन्यकालमें
मिलानेपर आबलीका संख्यातवर्षों भाग प्रथम काण्डकका उक्तपट्ट काल होता है । इसी तरह
जितने जघन्य क्षोत्रके ऊपर प्रदेश बढ़ें उन्हें जघन्य क्षोत्रमें मिलानेपर घनांगुलका संख्यातवर्षों

बार्णाटवृत्तौ भवेत्तन्मोक्षं प्रवृत्तारिणं भागिनिर्गते देहावधिमानुष्युष्टइत्यमरं य

तदुक्तं शेषं मने लोचरोत्तं होतोत्तरे तंभूतोत्तमात्रमरं ।

एतत् समउपकाले भावेन प्रमंगलोगमेवा ह ।

इत्यम य पञ्जापा वृद्धेर्गोद्विम विमया ह ॥४११॥

एतत् समयोनं बाले भावेन अमंगलं लोचमात्राः तनु । इत्यम य पर्व्यानाः वरदेनापे- ५
मिदमाः तनु ॥

बार्णाटोत्तं देहावधिमानुष्युष्टं समयोनपन्वमात्रमरं । य १ । भावद्विमात्तयात्तोलमात्रंगत्तु
तुदमनि बालं भाव इत्यमवाक्यंगत्तु इत्येवम्यांगत्तु वरदेनावधिमानरके विरयगतपुतु ।
तुदमनि । = ० ॥

काले पञ्च उद्दी कालो भविद्वय गेगउद्दी य ।

उद्दीए द्यपञ्चप भविद्वया गेगकाला ह ॥४१२॥

काले चतुर्णा वृद्धिः कालो भक्तयोः शेषवृद्धिश्च । इत्यपम्यावयोर्द्वौ भक्तयो शेषकालो ॥

आयागत्रोम् कालवृद्धिपरतुमागतु इत्योत्तरकालभावेगज्जात्कर वृद्धिगज्जकः शेषवृद्धिया-
नुत्तं विरनु बार्णाटो भक्तयोपमरं । इत्यभावेगत्तु वृद्धिपोत्तु शेषकालइत्यवृद्धिगत्तु विरनुपनीयं-
पञ्चपुत्रं वृत्तु वृद्धिपुत्रमेवमरं । १५

बार्णाटवृत्तौ प्रवृत्तारिणं भवत्तं देहावधिमानुष्युष्टं भवति य तदुद्दमनि पुनं तंभूतोत्तं
मरिडि ॥४१०॥

काले देहावधिमानुष्युष्टं समयोनपन्वमात्रमरं य—१ । भावेन पुनः भवत्तमात्रोत्तमात्र मरिडि ०
बार्णाटवृत्तौ भवत्तं इत्यम यर्णाटो वरदेनावधिमानरके तदुद्दमनि भवति ॥४११॥

एतत् कालवृद्धिगत्तु इत्यपनीना चतुर्णा वृद्धौ भवति । एतत् शेषवृद्धिगत्तु कालवृद्धि एवमत्त
रैति भक्तयोः । एतत् इत्यभावेगत्तु एतत् शेषवृद्धिगत्तु इति भक्तयोः इत्येवमरं वृद्धिपुत्रमेव ॥४१२॥ अय
पञ्चपुत्रमेवमरं— २०

बार्णाटवृत्तौ एक वार इ प्रवृत्तारिणं भाजित करनेपर देहावधिका कष्ट इत्य होता
है और कष्ट शेष मन्मूने लोक है ॥४१०॥

देहावधिका कष्ट काल एक समयहीन पञ्च है और भाव अमंगलता लोकप्रमाण है ।
काल और भावप्रमदमे इत्यर्थ । पर्याय कष्टदेहावधिमानके विषय होती है । ऐसा जानना । २५

विद्योपार्थ—एक समयहीन एक पक्ष प्रमाण अतीतकालमें हुई और करने ही प्रमाण
आगामी कालमें होनेवाली इत्यर्थ । पर्यायोंकी कष्ट देहावधि जानता है । भावसे
अमंगलता लोकप्रमाण पर्यायोंकी जानना है ॥४११॥

अवधिमानके विषयमें तब कालकी वृद्धि होती है तब इत्य, शेष, काल, भाव चारोंकी
वृद्धि होती है । तब शं तकी वृद्धि होती है तब कालकी वृद्धि भक्तनीय है, हो या न हो । जय ३०

इत्य और भावकी वृद्धि होती है तब शेष और कालकी वृद्धि भक्तनीय है । यह सब युक्ति
युक्त ही है ॥४१२॥

१. वरदिवपन्वमात्रमरंभर्णाटोत्तं भाव इति वरदिवानिके उपपत्त्या इत्यय पर्व्याना एव बार्णाटव-
रदेनापेना भूदमनि पर्व्यानानां वर्णाटवर्णाटानां च कालमात्रपन्वमात्रानां इति टिप्पण ।

मत्तमा परमावधिसर्वोत्कृष्टद्रव्यमं ध्रुवहारप्रमितमं । ९ । तु मत्ते ध्रुवहारदिदं भागिसि-
दोदो वे परमाणुवरकुमा द्रव्यं सर्ववधियज्ञानविषयद्रव्यमवरकुमा सर्ववधियज्ञानमु निर्विकल्पमेयध्रु-
मितु देसावधियज्ञानविषयमप्य जघन्यद्रव्यराशिषोऽ मध्यमयोगाज्जितनोकम्मौदारिकशरीरसंचय-
सविससोपचयलोकरुविभूतप्रमितद्रव्यस्कंधदोऽ देसावधियज्ञानद्वितीयविकल्पं मोदल्लोऽु परमा-
वधियज्ञानसर्वोत्कृष्टद्रव्यपर्यंतमदमोऽ पौण्डु गंगानदीमहाप्रवाहमे तु हिमाचलदोऽुद्वि पूर्ववधिवि- ५
पर्यंतमविकिञ्चनरूपदिदं परिदु पोगि तदुदधिप्रविष्टमादुदते ध्रुवहारमुमविकिञ्चनरूपदिदं प्रवेतिस्ति
प्रवेतिस्ति परमाणुद्रव्यपर्यंतमसातनागि निदुदेकेदोडे विषयभूतपरमाणुषु विषयिण्यसर्ववधियज्ञानमु
निर्विकल्पसंगळपुदरिद ।

परमोहिदन्वभेदा जेत्तियमेचा हु तेत्तिया होंति ।

तस्सेव खेचकालवियप्पा विसया असंखुगुणिक्रमा ॥४१६॥

१०

परमावधिद्रव्यभेदाः यावन्मात्राः एतल तावन्मात्रा भवन्ति । तस्यैव क्षेत्रकालविकल्पाः विषया
असंख्यगुणितक्रमाः ॥

परमावधियज्ञानविषयद्रव्यविकल्पंगळु यावन्मात्रंगळु तावन्मात्रंगळोपपुवु । परमावधियज्ञान-
विषयंगळुप्य क्षेत्रविकल्पंगळु कालविकल्पंगळु तावन्मात्रविकल्पंगळुगळुतलु तंतम्म जघन्यविकल्पं
मोदल्लोऽु तंतम्मुरकृष्टपर्यंतमसंख्यातगुणितक्रमंगळुपुधतप्यःसंख्यातगुणितक्रमंगळुपुवे दोडे १५
वेऽदं ।

पुनस्त्वत्परमावधिपरिवर्तकं द्रव्यं ९ ध्रुवहारैर्गैकवारं भवतं एकपरमाणुमात्रं सर्ववधियज्ञानविषयं द्रव्यं
भवति । तज्ज्ञानं निर्विकल्पकमेव स्यात् । स च ध्रुवहारः गङ्गामहानद्याः प्रवाहश्चरति—यथा गङ्गामहानदी-
प्रवाहः हिमाचलादविकिञ्चनं प्रवह्य पूर्वोदधौ गत्वा स्थितस्तवापहा रोषिण देसावधिविषयजघन्यद्रव्यात्परमावधि-
सर्वोत्कृष्टद्रव्यपर्यन्तं प्रवह्य परमाणुपर्यंतानि स्थितः विषयस्य परमाणोः, विषयिणः परमावधेः निर्विकल्पक- २०
स्यात् ॥४१५॥

परमावधियज्ञानविषयद्रव्यविकल्पाः यावन्मात्राः तावन्मात्रा एव भवन्ति तस्य विषयभूतक्षेत्रकाल-
विकल्पाः । तावन्मात्रा अपि स्वस्वरूपस्यान् स्वस्वोत्कृष्टपर्यन्तं असंख्यातगुणितक्रमा भवन्ति ॥४१६॥ कौदुग-
संख्यातगुणितक्रमाः ? इत्युक्ते प्राह—

उस परमावधिके सर्वोत्कृष्ट द्रव्यको एक वार ध्रुवहारसे भाग देनेपर एक परमाणु मात्र २५
सर्वावधियज्ञानका विषयभूत द्रव्य होता है । यह ज्ञान निर्विकल्प ही होता है इसमें जघन्य-
वत्कृष्ट भेद नहीं है । वह ध्रुवहार गंगा महानदीके प्रवाहकी तरह है । जैसे गंगा महानदीका
प्रवाह हिमाचलसे अविकिञ्चन निरन्तर बहता हुआ पूर्व समुद्रमें जाकर ठहरता है वैसे ही
यह ध्रुवहार भी देसावधिके विषयभूत जघन्य द्रव्यसे सर्वावधिके वत्कृष्ट द्रव्य पर्यन्त बहता
हूआ परमाणुपर आकर ठहरता है । सर्वावधिका विषय परमाणु और सर्वावधि ये दोनों ही ३०
निर्विकल्प हैं ॥४१५॥

परमावधियज्ञानके विषयभूत द्रव्यकी अपेक्षा जितने भेद कहे हैं उतने ही भेद उसके
विषयभूत क्षेत्र और कालकी अपेक्षा होते हैं । फिर भी अपने-अपने जघन्यसे अपने-अपने
वत्कृष्ट पर्यन्त क्रमसे असंख्यात गुणित क्षेत्र व काल होते हैं ॥४१६॥

किस प्रकार असंख्यात गुणित होते हैं यह कहते हैं—

३५

कर्णाटवृत्ति जीवतत्वप्रदीपिका

देशावधिज्ञानविषयजघन्यकालमं नोडलु \angle मतंख्यातगुणहीनमात्रंगळप्पुवु \angle स

सच्चोहित्तिय कमसो आवलियसंख भागगुणितकमा ।
द्व्याणं भावाणं पदसंखा सरिसगा हौति ॥४२३॥

सर्वाविज्ञानपर्यन्तं क्रमसः आवल्यसंख्यभागगुणितकमाः । द्व्याणां भावा
सद्गशाः भवन्ति ॥

देशावधिज्ञानविषयजघन्यद्रव्यदपर्यायंगळप्पु भावंगळु जघन्यदेशावधिज्ञान
सर्वाविज्ञानपर्यन्तं क्रमदिवं आवल्यसंख्यातगुणितक्रमंगळप्पुवु कारणमामि द्वयंग
स्थानसंख्येगळु समानंगळेयप्पुवु ।

अनंतरं नरकगतियेगळु नारकगांविधिषयक्षत्रमं वेळदपरु—
सत्तमखिदिम्मि कोसं कोसस्सद्धं पवड्ढदे ताव ।

जाव य पडमे गिरये जोयणमेक्कं हवे पुण्णं ॥४२४॥

सत्तमक्षितो क्रोशः क्रोशस्याद्धं प्रवद्धति तावत् । यावत्प्रथमे नरके योजनमेकं भवेत्स
सत्तमक्षितिमाधविपोळु नारकगांविधिषयमप्पु क्षेत्रमेकक्रोशमात्रमक्कं । पट्टि
क्रोशाद्धं पंच्चंगं । पंचमक्षितियेगळु मत्तमवं नोडे क्रोशाद्धं वेच्चंगं । चतुत्पक्षितियेगळु
क्रोशाद्धं वेच्चंगं । तृतीयक्षेत्रवेळदर मेले क्रोशाद्धं वेच्चंगं । द्वितीयपुत्त्वियेगळुमंते
वेच्चंगं । प्रथमक्षितियेगळु क्रोशाद्धं वेच्च संपूर्णं योजनप्रमाणमक्कुं । सा क्रोश १ ।
म ३ । अ । क्रोश २ । अं क्रोश ५ । मे क्रोश ३ । वं क्रो ७ । घ क्रो ४ ।
२

असंख्यातगुणहीनभावाः स्फुटं भवन्ति \angle ॥४२२॥

देशावधिजघन्यद्रव्यस्य पर्यायत्नभावाः जघन्यदेशावधितः सर्वाविज्ञानपर्यन्तं क्रमेण आवल्यसंख्य
गुणितक्रमाः स्युः । तेन द्रव्याणां भावानां च स्थानसंख्या समाना एव ॥४२३॥ अथ नरकगतावधिविषय
क्षेत्रमाह—

सत्तमक्षितौ अवधिविषयसोत्रं एकक्रोशः । तत्र उपरि प्रतिपुच्छि तावत् क्रोशस्यापार्थं प्रवर्धते यावत्प्रथम
है । तथापि उसके विषयभूत जघन्य कालसे असंख्यातगुणा हीन है ॥४२२॥

देशावधिके विषयभूत द्रव्यके पर्यायरूप भाव जघन्य देशावधिसे सर्वाविज्ञान पर्यन्त
क्रमसे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाणसे गुणित है । अर्थात् देशावधिके विषयभूत द्रव्य-
की अपेक्षा जहाँ जघन्य भेद है वहाँ ही द्रव्यके पर्यायरूप भावकी अपेक्षा आवलीके
असंख्यातवें भाग प्रमाण भावकी जाननेरूप जघन्य भेद है । जहाँ द्रव्यकी अपेक्षा दूसरा
भेद है वही भावकी अपेक्षा उस प्रथम भेदकी आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर
जो प्रमाण आवे उस प्रमाण भावकी जानने रूप दूसरा भेद है । इसी प्रकार सर्वाविषयपर्यन्त
ज्ञानना । इस तरह अवधिज्ञानके जितने भेद द्रव्यकी अपेक्षा है उतने ही भावकी अपेक्षा है ।
अथ नरकगतिमें अवधिज्ञानका विषयसोत्र कहते हैं—
सातवीं पृष्ठीमें अवधिज्ञानका विषयभूत क्षेत्र एक कोस है । उससे ऊपर

असुराणामसंखेज्जा कोडीओ सेसजोइसंताणं ।

संखातीदसहस्सा उक्कस्सोहीण विसओ दु ॥४२७॥

असुराणामसंखेया कोटघः शेषज्योतिष्कांतानां । संख्यातीतसहस्रमुत्कृष्टावधीनां विषयस्तु ॥

असुररुद्राग्निमुत्कृष्टक्षेत्रमसंख्यातकोटिगच्छकुं । शेषनवविषभावनदेवकर्कळं ध्वंतरज्योतिष्क- ५
देवकर्कळं असंख्यातसहस्रमुत्कृष्टावधिमानविषयमवकुं ।

असुराणामसंखेज्जा धरिसा पुण सेसजोइसंताणं ।

तस्संखेज्जदिभागं कालेण य होदि णियमेण ॥४२८॥

असुराणामसंखेयानि धर्वाणि पुनः शेषज्योतिष्कांतानां । तत्संखेयभागः कालेन च भवति नियमेन ॥

असुरकुलद भवनामररिगुत्कृष्टकालमसंखेयवर्षगच्छप्यु । तु मत्ते शेषनवविषभावनदेवकर्कळं १०
ध्वंतरज्योतिष्कदेवकर्कळं असुरकुलसंभूतगं पेब्बकालमं नोडलु संख्यातैकभागमशुमुत्कृष्टकालं ।
व ० ।

१

भवणतियाणमधोधो थोवं तिरिएण होदि बहुगं तु ।

उड्ढेण भवणवासी सुरगिरिसिहरोत्ति पस्संति ॥४२९॥

भवनत्रयाणामधोवः स्तोत्रं तिर्यग्बहुकं भवति तु ऊर्ध्वतो भवनवासिनः सुरगिरिशिखर- १५
पर्य्यंतं पश्यति ॥

भवनत्रयामरगोल्लं कोळ्णे कोळ्णे अवधि विषयक्षेत्रं स्तोत्रस्तोत्रकमवकुं । तिर्यग्वागि १०
यहुक्षेत्रं विषयमवकुं । तु मत्ते भवनवासिदेवकर्कळु तम्मिहूँडेपिंदंदि मेगे सुरगिरिशिखरपर्य्यंतम-

असुराणां उत्कृष्टविषयक्षेत्रं असंख्यातकोटियोनमानम् । शेषनवविषभावनव्यन्तरज्योतिष्काणां च २०
असंख्यातसहस्रयोवनानि ॥४२७॥

असुरकुलस्योत्कृष्टकालः असंखेयवर्षाणि पुनः शेषनवविषभावनव्यन्तरज्योतिष्काणां तस्य २०
भागः व ० ॥४२८॥

१'

भवनत्रयामसुराणामधोधोऽवधि विषयक्षेत्रं स्तोत्रं भवति । तिर्यग्पेण बहुकं भवति । तु-पुनः, भवनवासिनः

असुरकुमार जातिके भवनवासी देवोंके अवधिज्ञानका उत्कृष्ट विषयक्षेत्र असंख्यात २५
कोटि योजन प्रमाण है । शेष नौ प्रकारके भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषीदेवोंके असंख्यात
हजार योजन है ॥४२७॥

असुरकुमारोंका उत्कृष्ट काल असंख्यात वर्ष है । शेष नौ प्रकारके भवनवासी व्यन्तर २०
और ज्योतिषी देवोंके उत्कृष्ट अवधिज्ञानका काल उक्त कालके संख्यातवें भाग है ॥४२८॥

भवनवासी, व्यन्तरों और ज्योतिषी देवोंके नीचेकी ओर अवधिज्ञानका विषयक्षेत्र ३०
थोड़ा है किन्तु तिर्यक् रूपसे बहुत है । भवनवासी अपने निवासस्थानसे ऊपर मेरुपर्वतके

अधिदर्शनदिदं काण्डं ।

| | | | |
|-----------|----------|------|------------|
| जघन्य | जघन्य | उ | उ |
| भवनव्यंतर | जोयिसि | असुर | भ ९।३०। जो |
| यो २५ | २५३ | को ० | १०००। ० |
| दि १ | यद्गुफाल | य ० | य ० १ |

सक्रीसाणा पठमं विदियं तु सणककुमारमाहिंदा ।

तदियं तु बम्ह लांतव सुककसहस्सारया तुरियं ॥४३०॥

शकेशानो प्रथमां द्वितीयां तु सनत्कुमारमाहेन्द्रो । तृतीयां तु ब्रह्मलांतवो गुरुसहस्रारजा
तुम्यं ॥

सौधर्मज्ञानकल्पजराञ्च प्रथमपुण्योपपन्नं काण्डम् । सनत्कुमारमाहेन्द्रकल्पसंभूतम् तु मते
द्वितीयपुण्योपपन्नं काण्डम् । ब्रह्मलांतवकल्पजम् तृतीयपुण्योपपन्नं काण्डम् । गुरुसहस्रारकल्पजम्
चतुर्थपुण्योपपन्नं काण्डम् ।

आणदपाणदवासी आरण तद् अच्युदा य पसंति ।

पंचमखिदिपेरंतं छट्ठिं मेवेज्जगा देवा ॥४३१॥

आनतप्राणतवासिनः आरणास्तथाऽच्युताश्च पश्यन्ति पंचमश्रितिपपन्नं वाँष्ठिं श्रेयेयका देवः ।

आनतप्राणतवासिगञ्च आरणाच्युतकल्पजमते पंचमश्रितिपपन्नं काण्डम् । नवग्रंथियन्तः
मिन्द्रश्च यष्टपुण्योपपन्नं काण्डम् ।

सव्यं च लोयनालिं पसंति अणुत्तरेसु जे देवा ।

सकखेत्ते य सकम्मे रूवगदमणंतभार्गं च ॥४३२॥

सर्वा च लोकनादो पश्यन्त्यनुत्तरेषु ये देवाः । स्वक्षेत्रे स्वकर्मणि रूपगतमनंतभावं ।

स्वकीयावस्थितस्थानादुपरि सुरगिरिगिरिखरपर्वन्तं अधिदर्शनेन पश्यन्ति ॥४२९॥

सौधर्मज्ञानदाः प्रथमपुण्योपपन्नं पश्यन्ति । सनत्कुमारमाहेन्द्रजाः पुनर्द्वितीयपुण्योपपन्नं ।

ब्रह्मलान्तव आस्तृतीयपुण्योपपन्नं पश्यन्ति । गुरुसहस्रारजाः चतुर्थपुण्योपपन्नं पश्यन्ति ॥४३०॥

आनतप्राणतवासिनः तथा आरणाच्युतवासिनश्च पञ्चमपुण्योपपन्नं पश्यन्ति, नवग्रंथि-
पुण्योपपन्नं पश्यन्ति ॥४३१॥

गिरिखरपर्वन्तं अधिदर्शनेन के द्वारा देखते हैं ॥४२९॥

सौधर्म और ऐशान ग्योन्कि नेत्र अधिदर्शनेन

कम्पसुराणं सगसग ओहीखेचं विविस्ससोवचयं ।
ओहीद्व्यपमाणं संठाविय धुवहारेण हरे ॥४३३॥
सगसगखेत्तपदेससलायपमाणं समप्पदे जाव ।

तत्थतणचरिमखंडं तत्थतणोहिस्स दव्वं तु ॥४३४॥

कल्पसुराणां स्वरुस्वकावधिशेत्रं विविन्नतोपचय—मवधिव्यप्रमाणं संस्थाप्य ध्रुवहारेण हरेत् ॥

स्वस्वक्षेत्रप्रदेशप्रणालाकाप्रमाणं समाप्यते यावत् । तत्रतनचरमखंडं तत्रतनावधेद्रव्यं तु ।

कल्पतरुषु देवस्कंडं स्वस्वावधिशेत्रमुभं विगतविल्लतोपचयावधिज्ञानावरणद्रव्यमुभं स्थापिति—

| | | | | | | | | | | |
|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|
| ३३ | ३४ | ३५ | ३६ | ३७ | ३८ | ३९ | ४० | ४१ | ४२ | ४३ |
| ३४३१ | ३४३२ | ३४३३ | ३४३४ | ३४३५ | ३४३६ | ३४३७ | ३४३८ | ३४३९ | ३४४० | ३४४१ |
| स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ |
| द्रव्य | द्रव्य | | | | | | | | | |

१० मन्त्रेशव्यं विवदयति—

कल्पसुराणां स्वस्वावधिशेत्रं विगतविल्लतोपचयावधिज्ञानावरणद्रव्यं च संस्थाप्य—

| | | | | | | | | | | |
|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|
| ३३ | ३४ | ३५ | ३६ | ३७ | ३८ | ३९ | ४० | ४१ | ४२ | ४३ |
| ३४३१ | ३४३२ | ३४३३ | ३४३४ | ३४३५ | ३४३६ | ३४३७ | ३४३८ | ३४३९ | ३४४० | ३४४१ |
| स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ | स०१२-०१४ |
| द्रव्य | द्रव्य | | | | | | | | | |

इमो बानको आगे स्पष्ट करते हैं—

कल्पसुराणां देवीके अपने-अपने अवधितानके क्षेत्रको और अपने-अपने विससोपचय-रहित अवधितानावरण द्रव्यको स्थापित करके क्षेत्रमें से एक प्रदेश कम करना और द्रव्यमें एक बार ध्रुवहारका भाग देना । ऐसा करनेके करना चाहिये जबतक अपने-अपने अवधितानके क्षेत्रके क्षेत्र-सम्बन्धी प्रदत्तों का परिमाण समाप्त हो । ऐसा करनेसे जो अवधितानावरण क्षेत्रके क्षेत्रके अन्तर्गत रहना है उतना ही उस अवधितानके विषयभूत द्रव्यका परिमाण होता है ।

विशेषार्थ—जैसे मीचमें पैमाने स्वर्गवायुओं का क्षेत्र प्रथम नरक पृथ्वीपर्यन्त कहा है ।

१० सो पेटे बरछे पेटा दुमरा स्वगे डेदू रानू जेवा है । अतः अवधितानका क्षेत्र उनका एक बार ध्रुवहारका भाग देना । ऐसा करनेके करना चाहिये जबतक अपने-अपने अवधितानके क्षेत्रके क्षेत्र-सम्बन्धी प्रदत्तों का परिमाण समाप्त हो । ऐसा करनेसे जो अवधितानावरण क्षेत्रके क्षेत्रके अन्तर्गत रहना है उतना ही उस अवधितानके विषयभूत द्रव्यका परिमाण होता है ।

जोइसियंताणोही खेत्ता उत्ता ण हांति घणपदरा ।

कप्पसुराणं च पुणो विमरित्तं आयदं होदि ॥४३७॥

ज्योतिष्कांतानामवधिभेदाभ्युक्तानि न भवन्ति घनप्रतराणि । कल्पसुराणां च पुनर्विषद्वृत्त-
मायातं भवति ॥

- १ ज्योतिष्कांतानामुक्तान्यवधिभेदाणि भावनव्यंतरज्योतिष्कारिगोल्लगं परेणे पेळल्पद्वृत्ति-
विषयभेदंगळु समचतुरस्र घनक्षेत्रंगळुत्तु एकदोडे अवगमंळवधिविषयभेदंगळुगे सूत्रबोळु विसद्वृ-
सत्वकथनमुंत्पुदरि । इदरि पारिशेष्यवि तद्योग्यस्थानबोळु नारकतिर्ग्यचरुगळुवधिविषयभेदने
समघनक्षेत्रमं बुदत्तं । कल्पामरगेल्लं पुनः मत्ते तंतम्मवधिज्ञानविषयभेदं विसद्वृत्तमायातमभुं ।
आयतचतुरस्रक्षेत्रमे बुदत्तंमवधिज्ञानं समाप्तमाप्नु ।

१० चित्तियमचित्तियं वा अद्धं चित्तियमणेयभेयगयं ।

मणपज्जयं ति उच्चइ जं जाणइ तं खु णरलोए ॥४३८॥

चित्तितमचित्तितं वा अद्धं चित्तितमनेकभेदगतं । मनःपर्यय इत्युच्यते यत् जानाति तत्सत्त्वं
नरलोके ।

चित्तितं परेदिदं चित्तिसत्त्वदुदं । अचित्तितं वा मुंदे चित्तिसत्त्वदुदुदं । मेणु अद्धं चित्तितं

- ११ चिताविषयमं संपूर्णमाणि चित्तिसदे अद्धं चित्तिसत्त्व दुदुदुदं । अनेकभेदगतं इतनेरुप्रकारदिदं परे
मनबोळुदुदुदुं यत् आपुबोळु ज्ञानं जानाति अरिगुमा ज्ञानं एल्लु स्फुटमाणि मनःपर्ययज्ञानमे विनु

जानां यथायोग्यं पल्यासंख्यातभागः प तत उपरि लान्तरादिसर्वार्थसिद्धिपर्यन्तानां यथायोग्यं किंचिद्व्यक्तं
३
५-॥४३५-४३६॥

- ज्योतिष्कान्त्रिविधदेवानां उक्तावधिविषयभेदाणि समचतुरस्रघनरूपाणि न भवन्ति, पूने तेषां
२० विषद्वृत्तकथनान् । अनेन पारिशेष्यान् तद्योग्यस्थाने नरनारकतिर्गवधिविषयभेदमेव समघनमित्यर्थः ।
कल्पामराणां पुनर्विषद्वृत्तमायातं आयतचतुरस्रमित्यर्थः ॥४३७॥

चिन्तितं—चिन्ताविषयोक्तं, अचिन्तितं—चिन्तविषयमाणं, अर्धचिन्तितं—असंपूर्णचिन्तितं वा इत्यनेक-
भेदगतं अर्थ परमनस्यवस्थितं यज्ज्ञानं जानाति तन् सत्त्वं मनःपर्यय इत्युच्यते । तस्योत्पत्तिप्रवृत्ती नरलोके

- २५ देवोंके अवधिज्ञानका विषयभूत काल यथायोग्य पल्यके असंख्यातवर्गे भाग हैं । उनसे
ऊपर लान्तव स्वर्गसे लेकर सर्वार्थसिद्धिपर्यन्त देवोंके यथायोग्य कुछ कम पल्य प्रमाण
हैं ॥४३५-४३६॥

ज्योतिषी देव पर्यन्त तीन प्रकारके देवोंके अर्थात् भवनवासी व्यन्तर और ज्योतिष्क
देवोंके जो अवधिज्ञानका विषयभूत क्षेत्र कहा है वह समचतुरस्र अर्थात् बराबर चौकोर
घनरूप नहीं है क्योंकि आगममें उसकी लम्बाई चौड़ाई ऊँचाई बराबर एक समान नहीं कही
३० है । इससे शेष रहे जो मनुष्य नारक, नियं च उनके अवधिज्ञानका विषयभूत क्षेत्र समान
चौकोर घनरूप है यह अर्थ निकलता है । कल्पवासी देवोंके अवधिज्ञानका विषयभूत
विषद्वृत्त आयत है अर्थात् लम्बा बहुत और चौड़ा कम है ॥४३७॥

॥ अवधिज्ञान प्ररूपणा ममात्त ॥

चिन्तित—जिसका पूर्वमें चिन्तन किया था । अचिन्तित—जिसका आगामी कालमें

- ११ चिन्तन करेगा, अर्धचिन्तित—जिसका पूर्णरूपसे चिन्तन नहीं किया, इत्यादि अनेक प्रकार

विदं त्रिविधमवकुं ।

विउलमदीवि य छद्वा उजुगाणुजुवयणकायचित्तगयं ।

अत्थं जाणदि जम्हा सहत्थगया हु ताणत्था ॥४४०॥

विपुलमतिरपि च पइथा ऋज्वनजुवचनकायचित्तगतमत्थं जानाति यस्मात् शब्दार्यंगताः

१ सलु तपोरत्थ्याः ।

विपुलमतिमनःपर्ययमुं पट्प्रकारमप्युदवेते बोडे ऋजुमनोगतार्थविषयमनःपर्ययमेतुं ऋजुवचनगतात्थविषयमनपर्ययमेतुं ऋजुकायगतात्थविषयमनःपर्ययमेतुं दितु । अनुजुमनोगतार्थविषयमनःपर्ययमेतुं अनुजुवचनगतात्थविषयमनःपर्ययमेतुं अनुजुकायगतात्थविषयमनःपर्ययमेतुं दितिल्लि । यस्मात् ऋज्वनजुमनोवचनकायगतात्थविषयत्वात्कारणात् । तपोरत्थ्याः आधुवीतु

- १० ऋज्वनजुमनोवचनकायगतात्थविषयत्वकारणवत्तणिवमा ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययंगळ अर्थाः विषयंगळ शब्दगतात्थंगळे बुं सलु स्फुटमागि द्विप्रकारंगळप्युतु । अवेते बोडे ऋजुमतिमनःपर्ययंगळानं पोथ्यं ऋजुमतीदिवं निर्व्व्यंत्तितमागि निष्पन्नमागि त्रिकालविषयंगळप्य पदात्थंगळं चित्तिदं । ऋजुवचनीदिवं निष्पन्नमागि त्रिकालविषयंगळप्यत्थंगळं नुडिदं । ऋजुभूतकार्यदिवं निष्पन्नमागि त्रिकालविषयात्थंगळं कायव्यापारदिवं माडिवनवंमरेदु । कालांतरदिवं नेनेयलारवे बुं वेसगो-डोडं थेतगोडोडिविदोडमरिणुं णंविदु शब्दगतात्थंगळमत्थंगतात्थंगळं मेतुं द्विप्रकारंगळप्युतु ।
- ११ विपुलमतिमनःपर्ययपक्कमिते ऋज्वनजुमनोवचनकायगतात्थं निर्व्व्यंत्तितमागि निष्पन्नमागि त्रिकालविषयपदार्थंगळं चित्तिसित्तुं नुडिदुवं माडिदुवं मरेदु कालांतरदिवं नेनेयलारवे बुं वेसगो-

त्रिविधः ॥४३९॥

विपुलमतिमनःपर्ययोऽपि यस्मान् ऋज्वनजुमनोवचनकायगतात्थं जानाति तस्मात्कारणात् ऋजुमनो-

- २० सत्त्वविषय ऋजुवचनगतात्थविषयः ऋजुकायगतात्थविषयः अनुजुमनोगतात्थविषयः अनुजुवचनगतात्थविषयः अनुजुकायगतात्थविषयः अतः ऋजुविपुलमतिमनःपर्यययोः अर्थाः—विषयाः शब्दगता अर्थगताश्च स्फुटं भवन्ति । तदथा—कस्मिन्नोवः ऋजुमनसा निर्व्व्यंत्तितः—निष्पन्नः त्रिकालविषयपदार्थान् चिन्तितवान् ऋजुवचनेन निर्व्व्यंत्तितवान्कान् ऋजुकायेन निष्पन्नान् कृतवान्, विस्मृत्य कालान्तरेण स्मर्तुंमत्तः, आत्म-पुच्छति वा नूनो विच्छति तथा ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानं जानाति । तथा ऋज्वनजुमनोवचनकायैर्विर्व्व्यंत्तितः

११ अर्थको जाननेवाळा, सरळ वचनके द्वारा कहे गये मनोगत अर्थको जाननेवाळा और सत्त्वकायसे हिये गये मनोगत अर्थको जाननेवाळा ॥४३९॥

विपुलमति मनःपर्यय छद् प्रकारका हे—क्योंकि वह सरळ और कुटिल मन-वचन-कायसे हिये गये मनोगत अर्थको जानता है । अतः ऋजु मनोगत अर्थको विषय करनेवाळा ऋजु वचनगत अर्थको विषय करनेवाळा, कुटिल मनोगत अर्थको विषय करनेवाळा, कुटिल कायगत अर्थको विषय करनेवाळा, कुटिल वचनगत अर्थको विषय करनेवाळा, कुटिल कायगत अर्थको विषय करनेवाळा इस तरह छद् प्रकारका है । उन ऋजुमति और विपुलमति मनःपर्ययके विषय सम्भ्रमण और अर्थगत होते हैं । यथा—किसी सरळमनसे निष्पन्न भ्रष्टिसे विद्या-दत्तार्थ पदार्थोंके विषयमें चिन्तन किया, सरळ वचनसे निष्पन्न होने पर वह दत्तार्थोंका वचन किया और सरळकायसे निष्पन्न होकर उनको किया । फिर नूतन मनः, काठका अन्तरात् पड़नेपर स्मरण नही कर सका । आ करके पूछता है अथवा पुनः वेदता है । वह ऋजुमति मनःपर्ययज्ञान जान लेता है । तथा सरळ या कुटिल मन-वचन-

- १० कुटिल मनोगत अर्थको विषय करनेवाळा, कुटिल वचनगत अर्थको विषय करनेवाळा, कुटिल कायगत अर्थको विषय करनेवाळा इस तरह छद् प्रकारका है । उन ऋजुमति और विपुलमति मनःपर्ययके विषय सम्भ्रमण और अर्थगत होते हैं । यथा—किसी सरळमनसे निष्पन्न भ्रष्टिसे विद्या-दत्तार्थ पदार्थोंके विषयमें चिन्तन किया, सरळ वचनसे निष्पन्न होने पर वह दत्तार्थोंका वचन किया और सरळकायसे निष्पन्न होकर उनको किया । फिर नूतन मनः, काठका अन्तरात् पड़नेपर स्मरण नही कर सका । आ करके पूछता है अथवा पुनः वेदता है । वह ऋजुमति मनःपर्ययज्ञान जान लेता है । तथा सरळ या कुटिल मन-वचन-

अंगोपांगोदयात्कारणात् अंगोपांगनामरुम्भोदियकारणविवर्तं मनोवर्गणास्कन्धैर्गच्छितं विक्र-
सिताष्टच्छदारावियदवन्ते द्रव्यमनं हृदयशोऽनुत्तु तलु स्फुटमागि ।

गोइंदियत्ति सण्णा तस्स इवे सेसइंदियाणं वा ।

वचचाभायादो मण मणपज्जं च तत्थ इवे ॥४४४॥

नो इंदियमिति संज्ञा तस्य भवेत् शेषेन्द्रियाणामिव व्यक्तत्वाभावात् मनो मनःपर्ययश्च तत्र
भवेत् ॥

मनः वा द्रव्यमनं शेषेन्द्रियाणामिव स्पर्शनादांन्द्रियं गच्छते तु संस्थाननिर्देशंगच्छते व्यक्तत्वं
मुदंते । तस्य वा द्रव्यमनस्य व्यक्तत्वाभावात् कर्णनासिकानयनादिवत् व्यक्तत्वाभावात् नो इंदिय-
मिति संज्ञा भवेत् । ईयांदिद्वयं नो इंदियमेति तन्पर्ययं ज्ञेयमस्ति । तत्र आ द्रव्यमनशोऽनु मनः भावननो-

१० ज्ञानमुं मनःपर्ययश्च भवेत् मनःपर्ययज्ञानं पुट्टुगुं ।

मणपज्जवं च णाणं सत्तसु विरदेसु सत्तइड्डीणं ।

एगादिजुदेसु इवे यड्ढंतविसिद्धचरणेषु ॥४४५॥

मनःपर्ययज्ञानं सप्तसु विरतेषु सप्तद्वीनामेकाविपुतेषु भवेत् यद्वं मानविशिष्टाचरणेषु ॥

सप्तसु विरतेषु प्रमत्तसंयताद्विशीणकयायत्तमाद सप्तगुणस्थानयत्तिगच्छत्प विरतराऽनु

१५ सप्तद्वीनामेकाविपुतेषु बुद्धितपोवैकुण्ठोपधरसबलाशोणमेव सप्तद्विगच्छोच्छेक द्विभ्याविपुतराऽनु
यद्वं मानविशिष्टाचरणेषु पेन्त्तित्पिं विशिष्टाचारमनुच्छेक महामुनिगच्छोच्छेक मनःपर्ययश्च ज्ञानं
भवेत् मनःपर्ययज्ञानं पुट्टुवे बुद्धु तात्पर्यं ।

इंदियणोइंदियजोगादि पेक्खित्तु उज्जुमदी होदि ।

णिरपेक्खिय विउलमदी ओहिं वा होदि णियमेण ॥४४६॥

२० इंदियनोइंदिययोगादीनपेक्ष्य तु ऋजुमतिर्भवति । निरपेक्ष्य च विपुलमतिरवधिवद्भवति
नियमेन ॥

बज्जोपाङ्गनामरुम्भोदियकारणात् मनोवर्गणास्कन्धैर्विक्रसिताष्टच्छदाराविन्दतदुचं द्रव्यमनो हृदये उत्पद्यते
स्फुटम् ॥४४३॥

२५ तस्य द्रव्यमनसः शेषस्पर्शनादीन्द्रियाणामिव स्थाननिर्देशाभ्यां व्यक्तत्वाभावात् ईयांदिन्द्रियत्वं
नो इन्द्रियमित्यन्यथा भवेत् । तत्र द्रव्यमनसि भावननो मनःपर्ययश्चोत्पद्यते ॥४४४॥

प्रमत्तादिसप्तगुणस्थानेषु बुद्धितपोवैकुण्ठोपधरसबलाशोणनामसप्तधिमध्ये एकद्विभ्याविपुतेष्वेव
वर्धमानविशिष्टाचरणेषु मनःपर्ययज्ञानं भवति, नान्यत्र ॥४४५॥

अंगोपांग नामकर्मके उद्यसे मनोवर्गणारूप स्कन्धोके द्वारा हृदयस्थानमे मनको
उत्पत्ति होती है । यह खिळे हुए आठ वाँखुडोके कमलके समान होता है ॥४४३॥

३० उस द्रव्यमनका नो इन्द्रिय नाम सार्थक है क्योंकि जैसे स्पर्श आदि इन्द्रियोंका स्थान
और विषय प्रकट है वैसे मनका नहीं है । इसलिये ईपत् अर्थात् किंचित् इन्द्रिय होनेसे उसका
नाम नो इन्द्रिय है । उस द्रव्यमनमे भावनन और मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न होते हैं ॥४४४॥

प्रमत्तसंयतसे शोणकयाय पर्यन्त सात गुणस्थानोंमें, बुद्धि-तप-विक्रिया-ओपध-र-स-
१५ षड और अशोण नामक सात ऋद्धियोंमेंसे एक-दो-तीन आदि ऋद्धियोंके धारी तथा जिनका
नहीं ॥४४५॥

पेरर मनबोद्धिर्हृत्थं ऋजुस्थितं ऋजु यथा भवति तथा स्थितं इहामदिना इहामतिज्ञान-
दिवं मुन्नं लब्ध्वा पश्येत् पश्चात् वज्रिकं ऋजुमतिना ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानदिवं प्रत्यक्षेण च
प्रत्यक्षमागि मनःपर्ययज्ञानो जानीते अरिगुं नियमात् नियमदिवं ।

चिंतियमर्चितियं वा अद्वं चिंतियमणेयमेयगयं ।

ओर्हि वा विउलमदी लहिरुण विजाणए पच्छा ॥४४९॥

चिंतितमर्चितितं वा अद्वं चिंतितमनेकभेदगतं । अवधिवद्विपुलमतिर्लब्ध्वा विजानाति
पश्चात् ॥

चिंतितमुमर्चितितमुमं मेगद्वं चिंतितमुमनितनेकभेदबोद्धिर्हृत्थं परकीयमनोगतात्यं मुन्नं
पश्येत् वज्रिकं विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानमवधिज्ञानमंतं प्रत्यक्षमागरिगुं ।

१० द्रव्यं खेत्तं कालं भावं पडि जीवलक्षियं रूविं ।

उजुविउलमदी जाणदि अवरवरं मज्झिमं च तथा ॥४५०॥

द्रव्यं क्षेत्रं कालं भावं प्रति जीवलक्षितं रूपिणं । ऋजु-विपुलमती जानीतः अवरवरं
मध्यमं च तथा ॥

११ द्रव्यं प्रति क्षेत्रं प्रति कालं प्रति भावं प्रति प्रत्येकं जीवलक्षितं जीवचिंतितं चितिसत्पदुदुं
रूपिणं पुद्गलं पुद्गलद्रव्यमं तत्संबंधिजीवद्रव्यमं । अवरवरं जघन्यमुमनूत्कृष्टममं । तथा अति
मध्यमं च मध्यमममं ऋजुविपुलमती ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययं गच्छेत् जानीतः अरिवबु ।

परस्य मनसि ऋजुतया स्थितमर्थं इहामतिज्ञानेन पूर्वं लब्ध्वा पश्चात् ऋजुमतिज्ञानेन प्रत्यक्षतया
मनःपर्ययज्ञानी जानीते नियमात् ॥४४८॥

चिन्तितं अचिन्तितं अपवा अर्धचिन्तितं इत्यनेकभेदगतं परमनोगतायं पूर्वं लब्ध्वा पश्चाद्विपुलमतिमनः-
२० पर्ययः अवधिरिव प्रत्यक्षं जानाति ॥४४९॥

द्रव्यं प्रति क्षेत्रं प्रति कालं प्रति भावं प्रति प्रत्येकं जीवलक्षितं-जीवचिन्तितं, रूपि-पुद्गलद्रव्यं
तत्संबन्धिजीवद्रव्यं च जघन्यं उत्कृष्टं तथा मध्यमं च ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययो जानीतः ॥४५०॥

आत्माको निर्मलता रूप विमुद्विसे उत्पन्न होता है । किन्तु विपुलमतिमनःपर्यय अविदाय
विमुद्व होता है ॥४४७॥

२१ दूसरेके मनमें सरलता रूपसे विचार किया गया जो अर्थ स्थित है उसे पहले
ईहानविज्ञानके द्वारा प्राप्त करके पीछे ऋजुमतिज्ञानसे मनःपर्ययज्ञानी नियमसे प्रत्यक्ष
जानता है ॥४४८॥

चिन्तित, अचिन्तित, अपवा अर्धचिन्तित इत्यादि अनेक भेद रूप दूसरेके मनोगत
अर्थको पहले प्राप्त करके पीछे विपुल मति मनःपर्यय अवधिज्ञानकी तरह प्रत्यक्ष जानता
१० है ॥४४९॥

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावको लेकर जीवके द्वारा चिन्तित पुद्गल द्रव्य और उससे
उत्कृष्ट जीवद्रव्यको जघन्य मध्यम उत्कृष्ट भेदको लिए हुए ऋजुमति और विपुलमति मनः-
पर्यय जानते हैं ॥४५०॥

परर मनबोद्धिर्द्वैतं ऋजुस्थितं ऋजु यथा भवति तथा स्थितं इहामविद्या इहामतिज्ञान-
दिवं मुन्नं लब्ध्वा पश्येत् पश्चात् वक्तिकं ऋजुमतिना ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानदिवं प्रत्यक्षेण च
प्रत्यक्षमागि मनःपर्ययज्ञानी जानीते अरिगुं नियमात् नियमदिवं ।

चितियमचितियं वा अद्वं चितियमणेयमेयगयं ।

५ ओर्हि वा विउलमदी लहिरुण विजाणए पच्छा ॥४४९॥

चितितमचितितं वा अर्द्धचितितमनेकभेदगतं । अवधिवद्विपुलमतिर्लब्ध्वा विजाणाति
पश्चात् ॥

चितितममचितितममं मेणर्द्धचितितममनितनेकभेदबोद्धिर्द्वं परकीयमनोगतार्थं मुन्नं
पश्येत् वक्तिकं विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानमवधिज्ञानमेतंत प्रत्यक्षमागरिगुं ।

१० दव्वं खेत्तं कालं भावं पडि जीवलक्षियं रूविं ।

उजुविउलमदी जाणदि अवरवरं मज्झिमं च तथा ॥४५०॥

द्रव्यं क्षेत्रं कालं भावं प्रति जीवलक्षितं रूपिणं । ऋजु-विपुलमती जानीतः अवरवरं
मध्यमं च तथा ॥

द्रव्यं प्रति क्षेत्रं प्रति कालं प्रति भावं प्रति प्रत्येकं जीवलक्षितं जीवर्धनं चितिसत्पदुर्द्वं
१५ रूपिणं पुद्गलं पुद्गलद्रव्यं तत्संबंधिजीवद्रव्यं । अवरवरं जघन्यमुमनूत्कृष्टममं । तथा अति
मध्यमं च मध्यमममं ऋजुविपुलमती ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययगच्छेरेद्धं जानीतः अरिवयु ।

परस्य मनसि ऋजुतया स्थितमर्थं इहामतिज्ञानेन पूर्वं लब्ध्वा पश्चात् ऋजुमतिज्ञानेन प्रत्यक्षतया
मनःपर्ययज्ञानी जानीते नियमात् ॥४४८॥

चिन्तितं अचिन्तितं अथवा अर्धचिन्तितं इत्यनेकभेदगतं परमनोगतार्थं पूर्वं लब्ध्वा पश्चाद्विपुलमतिमनः-
२० पर्ययः अवधिरिय प्रत्यक्षं जानाति ॥४४९॥

द्रव्यं प्रति क्षेत्रं प्रति कालं प्रति भावं प्रति प्रत्येकं जीवलक्षितं-जीवचिन्तितं, रूपि-पुद्गलद्रव्यं
तत्संबंधिजीवद्रव्यं च जघन्यं उत्कृष्टं तथा मध्यमं च ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययो जानीतः ॥४५०॥

आत्माकी निर्मलता रूप चिमुद्धिसे उत्पन्न होता है । किन्तु विपुलमतिमनःपर्यय अविदाय
चिमुद्ध होता है ॥४४७॥

२५ दूसरेके मनमें सरलता रूपसे विचार किया गया जो अर्थ स्थित है उसे पहले
इहामतिज्ञानके द्वारा प्राप्त करके पीछे ऋजुमतिज्ञानसे मनःपर्ययज्ञानी नियमसे प्रत्यक्ष
जानता है ॥४४८॥

चिन्तित, अचिन्तित, अथवा अर्धचिन्तित इत्यादि अनेक भेद रूप दूसरेके मनोगत
३० अर्थको पहले प्राप्त करके पीछे विपुल मति मनःपर्यय अवधिज्ञानकी तरह प्रत्यक्ष जानता
है ॥४४९॥

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावको लेकर जीवके द्वारा चिन्तित पुद्गल द्रव्य और उससे
सम्बद्ध जीवद्रव्यको जघन्य मध्यम उत्कृष्ट भेदको लिए हुए ऋजुमति और विपुलमति मनः-
पर्यय जानते हैं ॥४५०॥

परर मनबोद्धित्थंमं ऋजुस्थितं ऋजु यथा भवति तथा स्थितं इहामविद्या ईहामतिज्ञान-
दिवं मुन्नं लब्ध्वा पश्येत् पश्चात् बहिरुक्तं ऋजुमतिना ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानदिवं प्रत्यक्षेण च
प्रत्यक्षमागि मनःपर्ययज्ञानी जानीते अरिगुं नियमात् नियमदिवं ।

चितियमचितियं वा अद्धं चितियमणेयमेयगयं ।

ओहिं वा विउलमदी लहिरुण विजाणए पच्छा ॥४४९॥

चितितमचितितं वा अद्धंचितितमनेकभेदगतं । अवधिवद्विपुलमतिर्लब्ध्वा विजानाति
पश्चात् ॥

चितितममचितितममं मेगद्धंचितितममनितनेकभेदबोद्धिदं परकीयमनोगतार्थंमं मुन्नं
पश्येत् बहिरुक्तं विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानमवधिज्ञानमंतं प्रत्यक्षमागरिगुं ।

१० द्यं रोचं कालं भावं पडि जीवलक्षियं रूविं ।

उज्जुविउलमदी जाणदि अवरवरं मज्झिमं च तथा ॥४५०॥

इधं रोचं कालं भावं प्रति जीवलक्षितं रूपिणं । ऋजु-विपुलमती जानीतः अवरवरं
मध्यमं च तथा ॥

११ इधं प्रति रोचं प्रति कालं प्रति भावं प्रति प्रत्येकं जीवलक्षितं जीवनिबं चितिसत्पदुर्दं
परिणं पुरगलं पुरगलद्रव्यमं तत्संबंधिजीवद्रव्यमं । अवरवरं जघन्यममनलुकुट्टममं । तथा अंते
मध्यमं च मध्यमममं ऋजुविपुलमती ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययं गच्छेत् जानीतः अरिगुं ।

परर मनवि ऋजुता स्थितमयं ईहामविज्ञानेन पूर्वं लब्ध्वा पश्चात् ऋजुमतिज्ञानेन प्रत्यक्षमागि
मनःपर्ययज्ञानी जानीते नियमात् ॥४४८॥

१० चितियं अचितियं अथवा अर्थाचितियं इत्यादि कभेदगतं परमनोगतार्थं पूर्वं लब्ध्वा पश्चाद्विपुलमतिमनः-
परिणं बहिरुक्तं अथवा आनाति ॥४४९॥

इधं प्रति रोचं प्रति कालं प्रति भावं प्रति प्रत्येकं जीवलक्षितं-जीवचितितं, रूपि-पुरगलद्रव्यं
तत्संबंधिजीवद्रव्यं च अलं उ-कृष्टं तथा मध्यमं च ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययं जानीतः ॥४५०॥

पश्चात्तदो निबं तथा रूप विगुद्धिमे इत्यन्न होता हे । किन्तु विपुलमतिमनःपर्ययं अविद्य
विगुद्ध होता हे ॥४४८॥

११ दूमरेके मनने सरलता रूपमे विचार क्रिया गया जो अर्थ स्थित हे उसे पड़े
ईहामविज्ञानके द्वारा प्राप्त करके पीछे ऋजुमतिज्ञानसे मनःपर्ययज्ञानी नियमसे प्रत्यक्ष
अथवा हे ॥४४८॥

चितियं, अचितियं, अथवा अर्थाचितियं इत्यादि अनेक भेद रूप दूमरेके मनोगत
पूर्वको पड़े अथवा अर्थको पीछे विपुलमति मनःपर्यय अवधिज्ञानको तरह प्रत्यक्ष जानना
हे ॥४५०॥

इधं, द्यं, रोचं, कालं, भावं ओं केहर जीवके द्वारा चितियं पुरगल द्रव्य और रूपके
तत्संबंधिजीवद्रव्यके अलं उ-कृष्ट भेदको लिए हुए ऋजुमति और विपुलमति मनः-
पर्ययके अर्थ हे ॥४५०॥

पर मनबोद्धिहृत्थंमं ऋजुस्थितं ऋजु यया भवति तथा स्थितं इहामदिना इहामतिज्ञान-
विदं मुन्नं लब्ध्वा पश्चु पश्चात् बळिकं ऋजुमतिना ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानविदं प्रत्यक्षेण च
प्रत्यक्षमागि मनःपर्ययज्ञानी जानीते अरिगुं नियमात् नियमविदं ।

चितियमचितियं वा अद्वं चितियमणेयमेयगयं ।

ओहिं वा विउलमदी लहिरुण विजाणए पच्छ ॥४४९॥

चितितमचितितं वा अद्वंचितितमनेरुभेवगतं । अवधिवद्विपुलमतिल्लब्ध्वा विज्ञानाति
पश्चात् ॥

चितितममचितितममं मेगद्वंचितितममनितनेरुभेवबोद्धिं परकीयमनोगतार्थं मुन्नं
पश्चु बळिकं विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानमवधिज्ञानमेतंतं प्रत्यक्षमागरिगुं ।

१० द्यं र्थं कालं भावं पडि जीवलक्षियं रूविं ।

उजुविउलमदी जाणदि अवरवरं मज्झिमं च तथा ॥४५०॥

इदं धेवं कालं भावं प्रति जीवलक्षितं रूपिणं । ऋजु-विपुलमती जानीतः अवरवरं
मध्यमं च तथा ॥

इदं प्रति धेवं प्रति कालं प्रति भावं प्रति प्रत्येकं जीवलक्षितं जीवनिदं चितिसल्पदुदुं
११ अरिषं पुद्गलं पुद्गलप्रप्यमं तत्संबंधिजीवद्रव्यमं । अवरवरं जघन्यमुमनुत्कृष्टममं । तथा अती
मध्यमं च मध्यमममं ऋजुविपुलमती ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययं गच्छेरं जानीतः अरिबु ।

११ परममव ऋजुगता स्थितमर्थं इहामतिज्ञानेन पूर्वं लब्ध्वा पश्चात् ऋजुमतिज्ञानेन प्रत्यक्षमा
कल्पतरंगानो वातोऽति नियमात् ॥४४८॥

१० चिन्ति अचिन्ति अथवा अचंचिन्ति इत्यनेरुभेवगतं परमनोगतार्थं पूर्वं लब्ध्वा पश्चाद्विपुलमतिमनः-
परं अचिन्ति अथवा अचंचिन्ति ॥४४९॥

इदं प्रति धेवं प्रति कालं प्रति भावं प्रति प्रत्येकं जीवलक्षितं-जीवनिदं, रूवि-पुद्गलद्रव्यं
११ अरिषं पुद्गलं पुद्गलप्रप्यमं च अरिषं उ-कृष्टं तथा मध्यमं च ऋजुविपुलमतिमनःपर्ययो जानीतः ॥४५०॥

अथवा जो निर्वचनो रूप विमुद्धिसे उत्पन्न होता है । किन्तु विपुलमतिमनःपर्यय अविश्व
विमुद्ध होता है ॥४४९॥

११ दूमरेके मनने सरठवा रूपमे विचार क्रिया गया जो अर्थ स्थित है उसे पदके
इहामतिज्ञानके द्वारा प्राप्त करके सोते ऋजुमतिज्ञानसे मनःपर्ययज्ञानी नियमसे प्रत्यक्ष
जानता है ॥४४९॥

१० चिन्ति अचिन्ति अथवा अचंचिन्ति इत्यादि अनेक भेद रूप दूमरेके मनोगत
अर्थको पदके द्वारा करके सोते विमुद्ध मति मननार्थय अवधिज्ञानकी तरह प्रत्यक्ष जानता
है ॥४४९॥

११ इत्यं अर्थ, कालं, भावं अथवा अर्थचिन्ति इत्यादि अनेक भेद रूप दूमरेके मनोगत
अर्थको पदके द्वारा करके सोते विमुद्ध मति मननार्थय अवधिज्ञानकी तरह प्रत्यक्ष जानता
है ॥४५०॥

मणद्वयवर्गणाणमणंतिमभागेण उजुगउक्कस्सं ।

खंडिदमेत्तं होदि हु विउलमदिस्सावरं दब्बं ॥४५२॥

मनोद्वयवर्गणाणामनंतैरुभागेण ऋजुमतेरुत्तं । खंडितमात्रं भवति तलु विजुक्क
मतेरवरं द्रव्यं ॥

- ५ मनोद्वयवर्गणैर्गणतंतैरुभागां ध्रुवहारप्रमाणमरकु ज १ मो ध्रुवहार भागविंशं ऋजुमति-
ख ल
पर्ययज्ञानविषयोरुत्तद्रव्यमं खंडियुत्तिरलायुवोदेकलंठं तावन्मात्रं खलु स्फुटमागि विपुलमतिमन-
पर्ययज्ञानविषयजघन्यद्रव्यमवकुं स ० १६ ख ६ प

६११५११५०९
० ०

अट्टण्हं कम्मणां समयपवद्धं विविस्ससोपचयं ।

ध्रुवहारेणिगिवारं भजिदे विदियं हवे दब्बं ॥४५३॥

- १० अष्टानां कर्मणां समयप्रवद्धो विविस्सोपचयो । ध्रुवहारेणैकवारं भाजिदे द्वितीयं भवेद्द्रव्यं ।
ज्ञानावरणाद्यष्टविधकर्मसामान्यसमयप्रवद्धं विगतविलसोपचयमदेकवारं ध्रुवहारविंशं
भागिसत्त्वपुत्तिरलेकखंडमात्रं विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानविषयद्वितीयद्रव्यविकल्पमन्कुं स ०-ख ल
९ ० ०

मनोद्वयवर्गणाधिकल्पानामनंतैरुभागेण ध्रुवहारेण ज १ ऋजुमतिविषयोरुत्तद्रव्ये खण्डिते पाकन्नात्तं
तरत्पुटं विपुलमतिविषयत्रपण्यद्रव्यं भवति स ० १६ ख १ ६ प ॥४५२॥

६१५११५१९
० ०

- १५ अष्टमं सामान्यसमयप्रवद्धं विविस्सोपचये ध्रुवहारेण एकवारं भक्ते पदेकखण्डं तद्विपुलमतिविषय-
दिशंपदमं भवति— स ० ० ० ख ल ॥४५३॥

मनोद्वयवर्गणाके विकल्पोंके अनन्तवै भागरूप ध्रुवहारसे ऋजुमतिके विषय इत्तद्रव्यमें भाग देनेपर जो प्रमाण आता है उतना विपुलमतिके विषयभूत जघन्यद्रव्यका परिमाण होता है ॥४५२॥

- २० आठों कर्मोंके विस्सोपचय रहित सामान्य समय प्रवद्धमें ध्रुवहारसे एक बार भाग देनेपर जो एक खण्ड आता है यह विपुलमतिका विषय द्वितीयद्रव्य होता है ॥४५३॥

मणद्वयवर्गणाणमणंतिमभागेण उजुगउक्कस्सं ।

खंडिमेत्तं होदि हु विउलमदिस्सावरं दव्वं ॥४५२॥

मनोद्वयवर्गणाणामनन्तैरुभागेण ऋजुमतेषुकृष्टं । संश्रितमात्रं भवति सलु विजु
मतेरवरं द्रव्यं ॥

५ मनोद्वयवर्गणाणमणंतिरुभागे ध्रुवहारप्रमाणमरकु $\overline{\text{ज १}}$ मो ध्रुवहार भागदिवं ऋजुमति-
स ल

पथ्यंयज्ञानविषयोत्कृष्टद्रव्यं खंडिसुत्तिरलावुवोदेकखंडं तावन्मात्रं सलु स्फुटमाणि विपुलमतिमन-

पथ्यंयज्ञानविषयजघन्यद्रव्यमरकुं स $\overline{\text{० १६ ल ६ प}}$

६ १ १ १ १ १ १ ० ९
० ०

अट्टण्हं कम्मणां समयपवद्धं विविस्ससोयचयं ।

ध्रुवहारेणिवारं भजिदे विदियं ह्ये दव्वं ॥४५३॥

१० अष्टानां कम्मणां समयप्रबद्धो विविस्ससोपचयो । ध्रुवहारेणैकवारं भाजिदे द्वितीयं भवेद्द्रव्यं ।

ज्ञानावरणाद्यष्टविधकर्मसामान्यसमयप्रबद्धं विगतविस्ससोपचयमदेकवारं ध्रुवहारदिवं
भागिसल्पडुत्तिरलेकखंडमात्रं विपुलमतिमनःपथ्यंयज्ञानविषयद्वितीयद्रव्यविकल्पमरकुं स $\overline{\text{०-स ल ९ ० ०}}$

मनोद्वयवर्गणाविकल्पानामनन्तैरुभागेण ध्रुवहारेण $\overline{\text{ज १}}$ ऋजुमतिविषयोत्कृष्टद्रव्ये संश्रिते मात्रमात्रं
तत्स्फुटं विपुलमतिविषयजघन्यद्रव्यं भवति स $\overline{\text{० १६ ल १ ६ प ॥४५२॥}}$
० ०

६ १ १ १ १ १ १
० ०

१५ अष्टकर्मसामान्यमयप्रबद्धे विविस्ससोपचये ध्रुवहारेण एकवारं भक्ते मदेकखंडं तद्विपुलमतिविषय-
द्वितीयद्रव्यं भवति— स $\overline{\text{० ० ० ल ल ॥४५३॥}}$
१

मनोद्वय वर्गणाके विकल्पोंके अनन्तवें भागरूप ध्रुवहारसे ऋजुमतिके विषय स्फुट
द्रव्यमें भाग देनेपर जो प्रमाण आता है उतना विपुलमतिके विषयभूत जघन्यद्रव्यका परि-
माण होता है ॥४५२॥

२० आठों कर्मोंके विस्ससोपचय रहित सामान्य समय प्रबद्धमें ध्रुवहारसे एक बार भाग
द देनेपर जो एक खण्ड आता है वह विपुलमतिका विषय द्वितीयद्रव्य होता है ॥४५३॥

मणद्वयवर्गणाणमणंतिमभागेण उजुगउत्कस्सं ।
खंडिदमेत्तं होदि हु विउलमदिस्सावरं दब्बं ॥४५२॥

मनोद्वयवर्गणानामनंतैरुभागेन ऋजुमतेरुत्कृष्टं । तंडितमानं भवति एलु विजुक्
मतेरवरं द्रव्यं ॥

मनोद्वयवर्गणैर्गळनंतैरुभागं ध्रुवहारप्रमाणमरुक् ^{ज १} मो ध्रुवहार भागदिवं ऋजुमति-
ए ल

पट्यंयज्ञानविषयोत्कृष्टद्रव्यमं खंडिमुत्तिरलावुवोदेरुत्तंडं तावग्नात्रं एलु स्फुटमागि विपुलमतिमन-
पट्यंयज्ञानविषयज्ञपन्यद्रव्यमवहुं स ० १६ ए ६ प

६ १ १ ५ १ १ ५ ० ९
० ०

अट्टण्हं कम्मणां समयपवद्धं विविस्ससोचचयं ।
ध्रुवहारेणिगिवारं भजिदे विदियं हवे दब्बं ॥४५३॥

१० अष्टानां कम्मणां समयप्रबद्धो विविस्ससोपचयो । ध्रुवहारेणैकवारं भाजिदे द्वितीयं भवेद्द्रव्यं ।
ज्ञानावरणात्तद्विधकर्मसामान्यसमयप्रबद्धं विगतविस्ससोपचयमदेकवारं ध्रुवहारेणं
भागिसत्पडुत्तिरलेकखंडमात्रं विपुलमतिमनःपट्यंयज्ञानविषयद्वितीयद्रव्यविकल्पमरुक् स ०-ए ४
९ ० ०

मनोद्वयवर्गणाविकल्पानामनन्तैरुभागेन ध्रुवहारेण ज १ ऋजुमतिविषयोत्कृष्टद्रव्ये ररिहते वाग्नात्रं
सत्स्फुटं विपुलमतिविषयज्ञपन्यद्रव्यं भवति स ० १६ ए १ ६ प ॥४५२॥
ए ल

६ १ ५ १ १ ५ १ ९
० ०

१५ अष्टकर्मसामान्यसमयप्रबद्धे विविस्ससोपचये ध्रुवहारेण एकवारं भक्ते यदेरुत्तंडं तद्विपुलमतिविस्स-
द्वितीयद्रव्यं भवति— स ० ० ० ए ए ॥४५३॥
९

मनोद्वय वर्गणाके विकल्पोंके अनन्तवें भागरूप ध्रुवहारसे ऋजुमतिके विषय रूक्क
द्रव्यमें भाग देनेपर जो प्रमाण आता है उतना विपुलमतिके विषयभूत जघन्यद्रव्यका परि-
माण होता है ॥४५२॥

२० आठों कर्मोंके विस्ससोपचय रहित सामान्य समय प्रबद्धमें ध्रुवहारसे एक बार भाग
देनेपर जो एक रण्ड आता है वह विपुलमतिका विषय द्वितीयद्रव्य होता है ॥४५३॥

मणद्वयवर्गणाणमणतिप्रभागेण उजुगउरुत्तसं ।

खंडिदमेत्तं होदि दृ विउलमदिस्तारं दव्वं ॥४५२॥

मनोद्वयवर्गणानामनन्तैरुभागेण ध्रुवमोत्तकृष्टं । तद्विउलमां भवति तत्तु गिउरु
मतेरवरं द्रव्यं ॥

मनोद्वयवर्गणैर्गज्जनन्तैरुभागेण ध्रुवहारप्रमाणमाहु ज १ मो ध्रुवहार भागिंरं ध्रुवमति
त त

पथ्यंयज्ञानविषयोत्कृष्टद्रव्यमं संडिमुत्तिरलाजुवोदेरुत्तं तावन्मात्रं तलु स्फुटमाणि विपुलमतिमक-
पथ्यंयज्ञानविषयजपन्यद्रव्यमवहुं स ० १६ त ६ प

६ १ १ ५ १ १ ५ ० ९
० ०

अट्टण्हं कम्मणां समयपप्रदं विविस्ससोपचयं ।
ध्रुवहारेणिगिवारं भजिदे विदियं ह्वे दव्वं ॥४५३॥

अष्टानां कम्मणां समयप्रवद्धो विविस्ससोपचयो । ध्रुवहारेणैरुवारं भाजिदे द्वितीयं भवेद्द्रव्यं
ज्ञानावरणात्प्रविधकम्मसामान्यसमयप्रवद्धं विगतविस्ससोपचयमवेरुवारं ध्रुवहारिंरं
भागिसत्पडुत्तिरलेकखंडमात्रं विपुलमतिमनःपथ्यंयज्ञानविषयद्वितीयद्रव्यविकल्पमस्तुं स ०-त ४
९ ३ ४

मनोद्वयवर्गणाविकल्पानामनन्तैरुभागेण ध्रुवहारेण ज १ ध्रुवमतिविषयोत्कृष्टद्रव्ये सगिउते यासुत्तं

तत्स्फुटं विपुलमतिविषयजपन्यद्रव्यं भवति स ० १६ स १ ६ प ॥४५२॥

६ १ १ ५ १ १ ५ १ ९
० ०

अष्टकर्मसामान्यमयप्रवद्धे विविस्ससोपचये ध्रुवहारेणैरुवारं भवते यदेरुत्तं तद्विपुलमतिविस्स-
द्वितीयद्रव्यं भवति— स ० ० ० स ४ ॥४५३॥

मनोद्वय वर्गणाके विकल्पोंके अनन्तवें भागरूप ध्रुवहारसे ध्रुवमतिके विषय उत्कृष्ट
द्रव्यमें भाग देनेपर जो प्रमाण आता है उतना विपुलमतिके विषयभूत जघन्यद्रव्यका परि-
माण होता है ॥४५२॥

२० आठों कर्मोंके विस्ससोपचय रहित सामान्य समय प्रवद्धमें ध्रुवहारसे एक बार भाग
देनेपर जो एक सण्ड आता है वह विपुलमतिका विषय द्वितीयद्रव्य होता है ॥४५३॥

मनुष्यक्षेत्रद समचतुरस्रघनप्रतरप्रमितं विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानविषयसर्वोत्कृष्टधेनप्रमाणमेतु
 समुद्दिष्टं अनादिनिधनायंबोद्ध पेठल्पदुदुवपुवे कारणमागि मानुषोत्तरपर्ययज्ञानंतरदिक्कं
 नाल्वत्तद्भुलक्षयोजनप्रमाणमवर समचतुरस्रधेनप्रतरप्रमाणं कैकोळल्पदुदुदेकेयोडे वा मानुषो-
 त्तरपर्ययतदिवं पोरगण नाल्कु कोणंगळीळिहै तिर्य्यंचदममररं चित्तिसिनुवं विपुलमतिमनःपर्यय-
 ज्ञानमरिगुमप्युदे कारणमागि ।



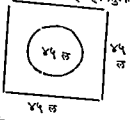
दुगतिगभवा हु अवरं सचद्वभवा हवंति उक्कस्तं ।

अडणवभवा हु अवरमसंखेज्जं विउलउक्कस्तं ॥४५७॥

द्वित्रिभवाः खलु जघन्यं समाष्ट भवा भवंति उत्कृष्टं । अष्टनवभवाः खलु जघन्यमसंख्यातं
 विपुलोत्कृष्टं ॥

कारं प्रति ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानविषयजघन्यं द्वित्रिभवंगळु खलु स्फुटमागि अप्पु
 उत्कृष्टदिवं समाष्टभवंगळुप्पु । विपुलमतिमनःपर्ययधरके जघन्यमष्टनवभवंगळुविषयनपुव
 उत्कृष्टमसंख्यातसमयमप्पुदुमावोडं पत्यासंख्यातेकभागमात्रमक्कु प

भवति न तु वृत्तस्य । कुतः ? यतस्तस्यत्रत्वारिखल्लक्षयोजनप्रमाणं समचतुरस्रघनप्रतरं मनःपर्ययविषयोत्कृष्ट-
 धेनं समुद्दिष्टं ततः कारणात् तदपि कुतः ? मानुषोत्तराद्वद्वित्रिचतुःकोणस्थिततिर्य्यगमराणां परचिन्तितानां
 उत्कृष्टविपुलमतेः परिज्ञानात् ॥४५६॥



कारं प्रति ऋजुमतेविषयजघन्यं द्वित्रिभवाः स्युः । उत्कृष्टं समाष्टभवाः स्युः । विपुलमतेविषयजघन्यं
 अष्टनवभवाः स्युः । उत्कृष्टं पत्यासंख्यातेकभागः स्यात् प ॥४५७॥

मनुष्यलोकके विष्टम्भका निश्चायक हे गोलाईका नही । अर्थात् मनुष्यलोक तो गोलाकार
 हे । यह नही लेना चाहिए । क्योंकि पैतालीस लाख योजन प्रमाण समचतुरस्र घनप्रतर
 अर्थात् समान चौकोर घनप्रतर रूप मनःपर्ययका उत्कृष्ट विषयक्षेत्र कहा है । अर्थात् पैतालीस
 लाख योजन लम्बा उतना ही चौड़ा लेना । क्योंकि मानुषोत्तर पर्ययके बाहर चारों कोनोंमें
 स्थित देवों और तिर्य्योके द्वारा चिन्तित अर्थको भी उत्कृष्ट विपुलमति जानता है ॥४५६॥
 कालको अपेक्षा ऋजुमतिका जघन्य विषय दो तीन भव होते हैं । और उत्कृष्ट साठ-
 आठ भव होते हैं । विपुलमतिका जघन्य विषय आठ-नौ भव होते हैं और उत्कृष्ट पत्यका
 असंख्यातया भाग है ॥४५७॥

पल्लासंखघणंगुलद्दसेडितिरिक्खगदिविभंगजुहा ।

णरसहिदा किंचूणाचदुगदीवेभंगपरिमाणं ॥४६३॥

पल्यासंख्यातघनांगुलहतथ्रेणितिर्यंगति विभंगयुताः । नरसहिदा, किंचिदूना चतुगतिविभंग-
ज्ञानिपरिमाणं ॥

१ पल्यासंख्यातघनांगुलगुणित १ जगच्छ्रेणिमात्रं तिर्यंचविभंगज्ञानिगळप्पद -६ प नर-

सहिता ई तिर्यंचविभंगज्ञानिगळोळु मनुष्यविभंगज्ञानिगळु संख्यातप्रमितरप्प १ रवागंळ संख्येयं
साधिकं माडि - १ प दो राशिपमं सम्पग्दृष्टिगळिदं किंचिदूनघनांगुलद्वितीयमूलगुणितजग-

च्छ्रेणिप्रमितसामान्यनारकर संख्येयमं १-२-१ सम्पग्दृष्टिगळिदं किंचिदून ज्योतिष्कर संख्येयं
नोडि साधिकगुप्प देवगतजर संख्येयुमनितुं नालकुं गतिगळ विभंगज्ञानिगळ संख्येयं कूडिदोडे

१० चतुगतिसमस्तविभंगज्ञानिगळ संख्येयवकुं = १

४१ ६५-१

सण्णाणारासिपंचयपरिहीणो सब्बजीवरासी हु ।

मदिसुद अप्पणाणीणं पत्तेयं होदि परिमाणं ॥४६४॥

सदज्ञानराशिपंचकपरिहीनः सर्व्वजीवराशिः खलु । मतिश्रुताज्ञानिनां प्रत्येकं भवति
परिमाणं ॥

११ पल्यासंख्यातघनांगुलहतजगच्छ्रेणिमात्रतिर्यंचः-६ प संख्यातमनुष्याः १ सम्पग्दृष्टपूनघनांगुलद्वितीय-

मूलगुणितजगच्छ्रेणिमात्रनारकाः-२-साम्यग्दृष्टपूनेज्योतिष्करसंख्यासाधिकदेवाः १-मिलित्ता चतु-

= १-
४१ ६५ = १

मंडिबिभन्नज्ञानिपंख्या भवति १-
१ ॥

= १- ॥४६३॥

४१ ६५ = १

पल्यके असंख्यातवें भागसे गुणित घनांगुलसे जगतथ्रेणिको गुणा करनेपर जितना
प्रमाण हो उतने तिर्यंच, संख्यात मनुष्य तथा घनांगुलके द्वितीय मूलसे जगतथ्रेणिको गुणा
२० करनेपर जितना प्रमाण हो उतने नारकियोंके प्रमाणमेंसे सम्पग्दृष्टी नारकियोंका प्रमाण
घटानेसे जो शेष रहे उतने नारकी तथा ज्योतिषी देवोंके परिमाणमें भवनवासी, व्यन्तर और
पैमानिष्ठ देवोंका प्रमाण मिलानेपर जो सामान्यदेव राशिका प्रमाण होता है उसमें सम्पग्-
दृष्टि देवोंका परिमाण घटानेपर जो शेष रहे उतने देव । इन सब तिर्यंच, मनुष्य, नारकी
और देवोंके प्रमाणको जोड़नेपर चारों गतिके विभंगज्ञानियोंकी संख्या होती है ॥४६३॥

११ १. च न साधिकर्य्याडिक्कपुंसुदेवाः ।

गंभीररचनेगळ परिरंभजेयं विडिसि निरिसिदुवनेयुव प्रा-१ रंभिसि गोम्मटवृत्ति सुपांभो
ळियिनोडिगे मोहवञ्जाचलमं ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्ररचिताया गोम्मटसारापरनामत्रसंप्रहृतौ जीवतत्प्रदीपिकाध्यायां जीवकाण्डे
विंशतिप्ररूपणामु ज्ञानमार्गणाप्ररूपणानाम द्वावन्शोऽधिकारः ॥१२॥

- ५ इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंप्रहृती भगवान् बहन्त देव
परमेस्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य
महावादी श्री भमयनन्दी सिद्धान्त चक्रवर्तीके चरणकमलोंकी पूजिसे शोभित छलाटराळे
श्री केशववर्णीके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी
अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसको अनुसारिणी पं. टोडरमल्लरचित
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक मापाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा
टीकामें जीवकाण्डकी बीस प्ररूपणाओंमेंसे ज्ञानमार्गणा प्ररूपणा
नामक चारहवाँ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥१२॥
- १०

प्रमत्ताप्रमत्तरोऽ संज्वलनकषायंगच्छो सर्वपातिस्पृहकंगच्छदयाभावलक्षणशयमुं उर
निर्देह उररितननिरेकंगच्छदयाभावलक्षणमुपशममुं चारित्रमोहनीयशयोपशममुं वावरसं
ननेदेजगतिस्पृहकरके संयमाविरोपविबुधयवोळं सामायिकछेदोपस्थापनसंयमंगच्छपुत्रुमा ग
स्पृहलुचरोळे परिहारगुदिसंयमममरकुं । सूक्ष्महृष्टिकरणानिवृत्तिपर्यंतं वावरसंज्वलनोदयदि
५ प्रमत्तनिवृत्तिकरनरोळं सामायिकछेदोपस्थापनसंयमंगच्छपुत्रु । सूक्ष्महृष्टिरूपविनिर्दं संज्वल
सोनेरेयदि सूक्ष्मसांपरायसंयममरकुं । चारित्रमोहनीयसर्वोपशमविबुधं यथास्थातसंयममरकुं
चारित्रमोहनीयनिरवयोधायविबं यथास्थातसंयमं क्षीणकषायविगुणस्थानत्रयवोळं नियमविरमर
मंरुं प्रमत्तनिवृत्तिरु निवृत्तिसत्त्वदुबे बुद्धत्यंमोपत्यंमने मंडवगायामुत्रद्वयविबं विगवं मादिरप
१० वादरमंज्वलगुदए वादरसंज्वमतिर्यं सु परिहारो ।

पमदिदरे मुहुमुदए मुहुमो संज्वमगुणो होदि ॥४६७॥

१० वादरमंज्वलनोदये वादरमममत्रयं रालु परिहारः । प्रमत्तेतरयोः सूक्ष्मोदये सूक्ष्मः तयम
दुया भवति ॥

वावरसंज्वलनमममरारिरोपिरेजापातिस्पृहकरोयवोळं वावरमच्छप सामायिकछेदोप
१५ रालु परिहारः इत्युंमंममरके व संयमप्रयमरकुमल्लि परिहारविगुदिसंयमं प्रमत्ताप्रमत्तरोऽयवक
रिदिररुधुमंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुं । सूक्ष्महृष्टिरूपसंज्वलनलोभोरपमागुत्तिरलु सूक्ष्मसांपरायसंयम-

१५ प्रमत्ताप्रमत्तरोऽ संज्वलनकषायंगच्छो सर्वपातिस्पृहकंगच्छदयाभावलक्षणशयमुं उर
निर्देह उररितननिरेकंगच्छदयाभावलक्षणमुपशममुं चारित्रमोहनीयशयोपशममुं वावरसं
ननेदेजगतिस्पृहकरके संयमाविरोपविबुधयवोळं सामायिकछेदोपस्थापनसंयमंगच्छपुत्रुमा ग
स्पृहलुचरोळे परिहारगुदिसंयमममरकुं । सूक्ष्महृष्टिकरणानिवृत्तिपर्यंतं वावरसंज्वलनोदयदि
५ प्रमत्तनिवृत्तिकरनरोळं सामायिकछेदोपस्थापनसंयमंगच्छपुत्रु । सूक्ष्महृष्टिरूपविनिर्दं संज्वल
सोनेरेयदि सूक्ष्मसांपरायसंयममरकुं । चारित्रमोहनीयसर्वोपशमविबुधं यथास्थातसंयममरकुं
चारित्रमोहनीयनिरवयोधायविबं यथास्थातसंयमं क्षीणकषायविगुणस्थानत्रयवोळं नियमविरमर
मंरुं प्रमत्तनिवृत्तिरु निवृत्तिसत्त्वदुबे बुद्धत्यंमोपत्यंमने मंडवगायामुत्रद्वयविबं विगवं मादिरप
१० वादरमंज्वलगुदए वादरसंज्वमतिर्यं सु परिहारो ।

१० वादरमंज्वलनोदये वादरमममत्रयं रालु परिहारः । प्रमत्तेतरयोः सूक्ष्मोदये सूक्ष्मः तयम
दुया भवति ॥

१० वादरमंज्वलनोदये वादरमममत्रयं रालु परिहारः । प्रमत्तेतरयोः सूक्ष्मोदये सूक्ष्मः तयम
दुया भवति ॥

१० वादरमंज्वलनोदये वादरमममत्रयं रालु परिहारः । प्रमत्तेतरयोः सूक्ष्मोदये सूक्ष्मः तयम
दुया भवति ॥

मिगिनिन्निल्लदुर्वं द्रुगम्यं द्रुयेन महता कष्टेन गम्यं प्राप्यं एरंविषमप्य सामायिकमं तनुद्दुहं
शोकः केहंहुं नदनुवंतप्यासन्नभयजोर्वं सामायिकसंयमो भवति । सामायिकः संयमोऽप्यास्मिन्ना
गामानिकसंयमः सामायिकसंयममनुज्जठ सामायिकसंयमनेवनरुक् ।

छेन्नू य परियायं पोरानं जो ठवेद् अप्याणं ।
पंचत्रमे धम्मे सो छेदोवद्वावगो जीवो ॥४७१॥

छिन्ना च पन्मोर्वं पुरानं यः स्थापयति आत्मानं । पंचयमे धम्मे स छेदोपस्थापको जोगः ॥
छिन्ना पुरानं पन्मोर्वं सामायिकसंयतनानिर्दुर्वं भठिचि सायध्याप्यारंगज्जमे संविदंतप्यजोर्वं

प्रायश्चित्तप्रवृत्त्यात्तपन्मोर्वं प्रायश्चित्तं गच्छेत् छिन्ना छेदिविति यः आयतोऽर्थ आत्मानं तन्नं पंचयमे
पन्मोर्वं छेदोर्वं पन्मोर्वं पुरानं यः स्थापयति नैलेगोलिमुपुं सः जीवः आ जीवं छेदोप-

स्थापकः छेदोर्वं पन्मोर्वं पुरानं यः स्थापयति नैलेगोलिमुपुं सः जीवः आ जीवं छेदोप-
स्थापकः छेदोर्वं पन्मोर्वं पुरानं यः स्थापयति नैलेगोलिमुपुं सः जीवः आ जीवं छेदोप-

स्थापकः छेदोर्वं पन्मोर्वं पुरानं यः स्थापयति नैलेगोलिमुपुं सः जीवः आ जीवं छेदोप-
स्थापकः छेदोर्वं पन्मोर्वं पुरानं यः स्थापयति नैलेगोलिमुपुं सः जीवः आ जीवं छेदोप-

स्थापकः छेदोर्वं पन्मोर्वं पुरानं यः स्थापयति नैलेगोलिमुपुं सः जीवः आ जीवं छेदोप-
स्थापकः छेदोर्वं पन्मोर्वं पुरानं यः स्थापयति नैलेगोलिमुपुं सः जीवः आ जीवं छेदोप-

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं ।
पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं । पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं । पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं । पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं । पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं । पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं । पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं । पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं । पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं । पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं । पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

पचममिदो निगुणो परिहरद् मदा वि जो हु सायज्जं । पंचेहज्जमो पुरिमो परिहारपमंजदो सो हु ॥४७२॥

मनोभक्तनेय पूर्व्यं पठियसि मत्ते परिहारविमुद्धिसंयममं पौद्दिवंगे तदुत्कृष्टकालं संभविमु-
मप्युर्वरिवं । 'परिहारविमुद्धिसंयमः पद्मजीवनिकायसंकुले विहरन् । पयसेव पद्मपत्रं न लिप्यते पाप-
निवहेन' ।

अणुलोहं वेदंती जीवो उवसामगो व खवगो वा ।

सो सुहृमसंपराथो जहखाएणूणवो किंचि ॥४७४॥

अणुलोभं वेदयमानो जीवः उपग्रामको वा क्षपको वा । स मूहमसांपरायो यथाख्यातेनो-
किंचित् ॥

सूक्ष्मलोभकृष्टिगतानुभागमनावनोर्व्वनन् भविमुत्तं जीवन् उपग्रामकनागलि मेणु क्षप-
नागलि मेणु सः आ जीवं सूक्ष्मसांपरायने वनयकुं । सूक्ष्मः सांपरायः कपायो यस्य स मूहमसांपरायः
१० एवो यन्वत्यनामविशिष्टमहामुनि यथाख्यातसंयमिगलोडेने किंचिदूननकुं ।

उवसंते खीणे वा असुहे कम्मम्मि मोहणीयम्मि ।

छदुमट्टो व जिणो वा जहखादो संजदो सो तु ॥४७५॥

उपज्ञाते क्षीणे वा अनुभे कम्मणि मोहनीये छप्स्यो वा जिने वा यथाख्यातसंयतः स तु ॥

अनुभमप्य मोहनीयकम्मंमुपज्ञातमागुत्तिरलु मेणु धीणमागुत्तं विरलावनोद्यं छप्स्यं
१५ उपज्ञातकपायनागलि मेणु क्षीणकपायछप्स्यनागलि मेणु जिने वा सयोगेवलिपुमयोगेवलिपुं
मेनागलि सः आ जीवं तु मत्ते यथाख्यातसंयतने वनयकुं । मोहस्य निरवरोपस्योपग्रामात्क्षयाच्चा-

दिवसादारम्य विउट्टपाणि सर्वदा मुत्तेन मोत्सा संयमं प्राप्य वरपुयक्त्वं तीर्यकरपादमूले प्रत्यास्थानं पठित्त
वदन्तीकरणान् ॥

उक्तं च-

परिहारविमुद्धिसंयमः पद्मजीवनिकायसंकुले विहरन् ।

२० पयसेव पद्मपत्रं न लिप्यते पापनिवहेन ॥४७६॥

सूक्ष्मलोभकृष्टिगतानुभागमनुभवन् यः उपग्रामकः क्षपको वा स जीवः मूहमसांपरायः स्यात् । मूह-
सांपरायः कपायो यस्येत्यन्वयनामा महामुनिः यथाख्यातसंयमिन्मः विविन्मूनो भवति ॥४७४॥

अनुभमोहनीयकम्मणि उपज्ञाते क्षीणे वा यः उपज्ञातः तीणकपायछप्स्यः सयोगेवलिपुमयोगेवलिपुं वा, व,
तु-पुनः, यथाश्नाउसयती भवति । मोहस्य निरवरोपस्य उपग्रामात् धयाज्ञा आत्मस्वभावावस्थापेनालक्षणं

२५ सदा सुप्तसे विताकर संयम धारण करके वर्षपृथक्त्व तक तीर्यकरके पादमूलमें प्रत्यास्थान
पदनेके पश्चात् परिहारविमुद्धि संयम स्वीकार करना होता है । कहा है—'परिहारविमुद्धि
श्रद्धिसे संयुक्त जीव छह कायके जीवोंसे भरे स्थानमें विहार करते हुए भी पाप समूहसे बचे
ही छिन्न नहीं होता जैसे कमलका पत्ता पानोंमें रहते हुए भी पानीसे छिन्न नहीं होता' ॥४७३॥

मूहम कृष्टिको प्राप्त लोभ कपायके अनुभागको अनुभव करनेवाला उपग्रामक वा
३० क्षपक जीव मूहम साम्पराय होता है । मूहम साम्पराय अर्थात् कपाय जिसकी है वह सार्यक
नामवाला महामुनि यथाख्यात संयमियोंसे किंचित् ही हीन होता है ॥४७४॥

अनुभ मोहनीय कम्मके उपज्ञान्त या क्षय हो जानेपर उपज्ञान्त कपाय और क्षीण
कपाय गुणस्थानवर्ती छप्स्य अथवा सयोगी और अयोगी जिन यथाख्यात संयमी होते हैं ।

इत्यादिलक्षणंगत्वे देशविरतरुगच्छे प्रयांतरवोऽरियल्पद्रुतु ।

जीवा चोद्दसभेया इंदियविसया तद्द्वीसं तु ।

जे तेषु षेव विरया असंजदा ते मुणेयव्वा ॥४७८॥

जीवाश्चतुर्दशभेवाः इंदियविषयास्तपाष्टाविंशतिः तु । ये तेषु नैव विरताः असंयतास्ते
५ संतव्याः ॥

पदिनात्कं जीवभेदंगच्छेत् तु मत्ते इंदियविषयंगच्छिपते दुभेवं गच्छेत्तममकैलंबव विरतरल-
दवर्गं अत्यंतरे दरियन्पद्रुवह ।

पंचरस पंचवण्णा दो गंधा अट्टाससत्तसरा ।

मणसहिदट्टावीसा इंदियविसया मुणेदव्वा ॥४७९॥

१० पंचरसाः पंचवर्णाः द्वौ गंधो अष्टस्पर्शाः सप्तस्वराः । मनः सहिताष्टाविंशतिरिंदियविषया
संतव्याः ॥

तिवत्तकटुकपायाम्लमपुरमेव पंचरसंगच्छे श्वेतपीतहरिताम्यकृष्णमेव पंचवर्णंगच्छे सुगंध-
दुर्गंधमेव द्रुतु गंधमु मृदुककंदगुण्डलपुत्रीतोष्णस्निग्धरूक्षमेव अष्टस्पर्शंगच्छे पद्भ्रुजऋषभगंधाधार
मध्यम-पंचमधैवतनिपादमेव सरिगमपद निगच्छन्पसप्तस्वरंगच्छे कूडिवित्तिरिंदियविषयंगच्छिपते
१५ मनोविषयमो विदु इंदियोके इंदियविषयंगच्छेष्टाविंशतिप्रमितं कु संतव्यंगच्छेत् ।

अनंतरं संयममार्गणेषु जीवसंख्येयं पेश्यं —

पमदादिचउण्डजुदी सामाज्यदुगं कमेण सेसवियं ।

सत्तसद्वसा णवलक्खा तीहि परिहीणा ॥४८०॥

२० प्रमत्तादिचतुर्णां युतिः सामायिकद्विकं क्रमेण शेषत्रयं । सप्तसहस्रं नवशतं नवलक्षं त्रिभिः
परिहोनानि ॥

चतुर्दशजीवभेदाः, तु-पुनः इन्द्रियविषयाः अष्टाविंशतिः तेषु ये नैव विरतास्ते असंयता इति
मन्तव्याः ॥४७८॥

२५ रसाः—तिक्तकटुकपायाम्लमधुराः पञ्च । वर्णाः—श्वेतपीतहरिताम्यकृष्णाः पञ्च । गन्धो सुगन्धदुर्गन्धो
द्वौ । स्वराः मृदुककंदगुण्डलपुत्रीतोष्णस्निग्धरूक्षाः अष्टौ । स्वराः—पद्भ्रुजऋषभ-गान्धार-मध्यम-पंचम-धैवत-
निपादा सरिगमपदनिरूपाः सप्त एते इन्द्रियविषयाः सप्तविंशतिः । मनोविषय एकः, एवमष्टाविंशतिभि-
न्तव्यः ॥४७९॥ अथ संयममार्गणाया जीवसंख्यामाह—

चोद्द प्रकारके जीव और अठाईस इन्द्रियोके विषय, इनमें जो विरत नही हैं वे
असंयमो जानना ॥४७८॥

१० तीवा, फटुक, कसेळा, रट्टा, मोठा ये पाँच रस हैं । श्वेत, पीला, हरा, लाल, काला ये
पाँच वर्ण हैं । सुगन्ध, दुर्गन्ध ये दो गन्ध हैं । कोमल, कठोर, भारी, हल्का, शीत, उष्ण,
चिक्ना, रूपा ये आठ स्पर्श हैं । पद्भ्रुज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत, निपाद ये
सा रे ग म प ध नि रूप सात स्वर हैं । ये सत्ताईस इन्द्रियविषय हैं और एक मनका विषय
है । इन प्रकार अठाईस विषय जानना ॥४७९॥

अथ संयम मार्गणमें जीवोंकी संख्या कइते हैं—

संसारिराशिजविरतप्रमाणमथकु :-

| | | | | | | |
|---------------------|-------------------------|----------------|----------------|--------------------|---------------------------|---------------|
| सौमायिक ८९०९९१०३ | छेदोपस्थापन ८२०९९१०३ | परिहार ६९९७ | सूक्ष्म ८१७ | ययाख्यात ८९०९९७ | वेदासंय = ५ ० ० ४ ० | संय = १३ - |
|---------------------|-------------------------|----------------|----------------|--------------------|---------------------------|---------------|

इत्तु भगवदहंत्परमेश्वरचारचरणारविवद्वं बंधनानंबित पुण्यपुंजायमानश्रीमद्राजराजगुह
मंडलाचार्यमहावाकवादीश्वररायवाविपितामह सकलविद्वज्जनघक्रयति श्रीमदभयसूरिसिद्धांत-
चक्रवर्तिश्रीपावपंकजराजोरंजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवणविरचितमप्य गोम्मतसारकर्णाटवृत्तिजोव-
५ तत्वप्रदीपिकेयोल्लु जीवकाण्डविशतिप्ररूपणंगळोल्लु त्रयोदश संयममार्गणाधिकारं निगदितमाप्नु ॥

वविरत्तानां प्रमाणं भवति । १३-॥४८१॥

इत्याचार्यधर्मेनिमिचन्द्रविरचितायां गोम्मतसारापरनामपञ्चसंग्रहनुत्ती तत्त्वप्रदीपिकाख्यायां
जीवकाण्डे विशतिप्ररूपणानु संयममार्गणाप्ररूपणा नाम त्रयोदशोर्गधिकारः ॥१३॥

संसारी जीवोंकी राशिमें भाग देनेपर जो शेष रहे उतना ही असंयमियोंका प्रमाण
१० होता है ॥४८१॥

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मतसार अथ नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अहंन्व देव
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी धन्वनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुह मण्डलाचार्य
महावादी श्री अभयानन्दी सिद्धान्त चक्रवर्तीके चरणकमलोंकी धूकिते शोभित ललाटवाले
श्री केशववर्णीके द्वारा रचित गोम्मतसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी
अनुसारीणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारीणी पं. टोडरमल रचित
सम्पग्यानचन्द्रिका नामक मापाटीकाकी अनुसारीणी हिन्दी भाषा
टीकामें जीवकाण्डकी बीस प्ररूपणाओंमेंसे संयममार्गणा प्ररूपणा
नामक तेरहवाँ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥१३॥

भावसाधनं दर्शनमरिपत्पुत्रुवु ।

अनंतरं चक्षुर्वर्शनं अचक्षुर्वर्शनं गळ स्वरूपमं पेञ्चपं :—

चक्षुषूण जं पयासइ दिस्सइ तं चक्षुदंसणं वेति ।

सेसिदियप्पयासो णायव्वो सो अचक्खु चि ॥४८४॥

- ५ चक्षुषा यत्प्रकाशते दृश्यते तच्चक्षुर्वर्शनं ब्रुवन्ति । यः शेषेन्द्रियप्रकाशो ज्ञातव्यः सोऽचक्षु-
दर्शनमिति ॥

नयनं गळायुवो'बु प्रतिभासितुमिदं'पुत्रु काणत्पइत्तिहपुत्रु तद्विपयप्रकाशनमे चक्षुर्वर्शन-
मे'दित्तु गणधरदेवाविदिव्यज्ञानिगळ पेञ्चव्वह । शेषेन्द्रियं गळायुवो'बु तोरत्तिहं'पुत्रु अचक्षुर्वर्शनमे वित्तु
ज्ञातव्यमवकुं ।

- १० परमाणु आदियाइं अंतिमखंधंति मुत्तिदव्याइं ।

तं ओहिदंसणं पुण जं पस्सइ ताइ पच्चक्खं ॥४८५॥

परमाण्वादिकान्यन्तिमस्कांधपर्यंतानि मूर्तद्रव्याणि । तदवधिदर्शनं पुनर्यत्पश्यति तानि
प्रत्यक्षं ॥

- परमाण्वादिप्राणि महास्कांधपर्यंतमप्य मूर्तद्रव्यं गळयेनितनितुमनायुवो'बु दर्शनं मत्ते
१५ प्रत्यक्षमाणि काणुमदवधिदर्शनमे'बुदवकुं ।

बहुविहं'वहु'पयारा उज्जीवा परिमियम्मि खेत्तम्मि ।

लोगालोगवित्तिमिरो जो केवलदंसणुज्जोओ ॥४८६॥

बहुविधयहप्रकारा उद्योताः परिमिते क्षेत्रे । लोकालोकवित्तिमिरो यः केवलदर्शनोद्योतः ॥

- सत्तावभासनं तद्दर्शनं भवति । पश्यति दृश्यते अनेन दर्शनमात्रं वा दर्शनम् ॥४८३॥ अथ चक्षुरचक्षुर्वर्शनं
२० लक्षणमिति—

चक्षुषोः—नयनयोः संबन्धि यत्सामान्यग्रहणं प्रकाशते पश्यति तद्वा दृश्यते जीवनेनेन कृत्वा तद्वा
तद्विपयप्रकाशनमेव तद्वा चक्षुर्वर्शनमिति गणधरदेवाद्यो ब्रुवन्ति । यद्य क्षेत्रेन्द्रियप्रकाशः स अचक्षुर्वर्शन-
मिति ॥४८४॥

परमाणोरारभ्य महास्करूपपर्यन्तं मूर्तद्रव्याणि पुनः पद्वर्शनं प्रत्यक्षं पश्यति तदवधिदर्शनं भवति ॥४८५॥

- २५ मात्र दर्शनं हे ॥४८३॥

अथ चक्षुर्वर्शनं और अचक्षुर्वर्शनके लक्षण कहते हैं—

दोनों नेत्र सम्यन्धी सामान्य ग्रहणको जो देखता है अथवा इस जीवके द्वारा देखा
जाता है अथवा सामान्य मायका प्रकाशन दर्शन है, यह गणधरदेव आदि कहते हैं । शेष
इन्द्रियोंका जो प्रकाश है वह अचक्षु दर्शन है ॥४८४॥

- ३० परमाणुसे लेकर महास्करूप पर्यन्त सब मूर्तिक द्रव्योंको जो प्रत्यक्ष देखता है वह
अवधिदर्शन है ॥४८५॥

त्रैराशिकं माडि प्र ४।५ = इ।२ वंदलब्धबोळु पर्याप्तकरं किंचिदूनं माडिबोडु शक्तिगतचभु-

$$\begin{array}{c} ४ \\ २ \\ ० \\ ० \end{array}$$

द्वंद्वनिगळ संख्येयवकु = १२— मिते व्यक्तिगतचधुद्वंद्वनिगळं त्रैराशिकं माड्यागळोडु

$$\begin{array}{c} ४। \\ २ \\ ४ \\ ० \end{array}$$

विशेषमुंडदाबुबोडे फलराशिप्रसपर्याप्तराशिपयकु प्र = ४५ = इ।२। सो वंद लब्धं व्यक्ति-

$$\begin{array}{c} ४ \\ ४ \\ ५ \end{array}$$

गतचधुद्वंद्वनिगळ संख्येयवकु = १२ अवधिदर्शनिगळ संख्येयवधितानिगळ प्रमाणमेनितनिते-

$$\begin{array}{c} ४।४ \\ ५ \end{array}$$

५ यस्तु प० केवलदर्शनिगळसंख्ये केवलज्ञानिगळसंख्येमेनितनितेयवकुं १।

$$\begin{array}{c} ० \\ ० \end{array}$$

किम्? इति त्रैराशिके कृते प्र ४।५ = इ।२ लब्धं पर्याप्तकसंख्यया किंचिदूनं शक्तिगतचधुद्वंद्वनिगळा

$$\begin{array}{c} ४ \\ २ \\ ० \end{array}$$

भस्ति = १२ = द्वितीयत्रैराशिके फलराशिः तसपर्याप्तकराशिः प्र ४।५ = इ।२ लब्धं व्यक्तिगतचधुद्वंद्वनिगळा

$$\begin{array}{c} ४।४ \\ २ \\ ० \end{array}$$

भस्ति = २-४ अधिदर्शनराशिरेवधितानराशिबु प०—१ केवलदर्शनिगळा केवलज्ञानिसंख्याम् १ ॥४८॥

$$\begin{array}{c} ४।४ \\ ० \\ ५ \end{array}$$

- पंचेन्द्रियका कृत्वा परिमाण हे ऐसा त्रैराशिक करनेपर प्रमाण राशि चार, फडराशि
 १० प्रसजीबोका प्रमाण, इच्छाराशि दो। सो इच्छाराशिको फडराशिसे गुणा करके प्रमाणराशि-
 से भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उतने पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय जीवराशि है। उसमेंसे पर्याप्त
 जीबोंके प्रमाणको घटानेपर जो प्रमाण आवे उसमेंसे कुछ घटानेपर, क्योंकि दोइन्द्रिय
 आदि क्रमसे घटते हुए शक्तिगत चधुद्वंद्वनिगळा प्रमाण जानना। इसी तरह तसपर्याप्त
 जीबोंके प्रमाणको चारसे भाग देकर दोसे गुणा करनेपर जो प्रमाण आवे उसमेंसे कुछ
 ११ कम करनेपर व्यष्टिकर चधुद्वंद्वनिगळा प्रमाण होता है। अवधिदर्शनी जीबोंका प्रमाण
 अधिपदानियोंके प्रमाणके समान जानना। और केवल दर्शनी जीबोंका प्रमाण केवलज्ञान
 जीबोंके परिमाणके समान जानना ॥४८॥

लेश्या-मार्गणा ॥१५॥

दर्शनमाग्यंणानंतरं लेश्यामार्गणेयं पेठलुपऋमिति निरस्तितपूर्वकं लेश्येये लक्षणमं
वेद्वधं—

लिपिइ अप्पीकीरई एदीए गियअप्पुणपुणं च ।

जीवोत्ति होदि लेस्सा लेस्सागुणजाणयक्खादा ॥४८९॥

१ लिपित्यात्मीकरोत्येतया निजाऽगुण्यं पुण्यं च जीव इति भवति लेश्या लेश्यागुणजायका-
ख्याता ।

द्रव्यलेश्येयं च भावलेश्येयं च लेश्ये द्विप्रकारमप्युवल्लि । भावलेश्यापेक्षेयिदं लिपित्यात्मीकरोति
निजागुण्यं पुण्यं च जीव एतयेति लेश्या । लेश्यागुणजायकाऽख्याता भवति । जीवं निजपापमुनं
पुण्यमुनं लिपति तन्नं पोरेगुं आत्मीकरोति तन्नवागि माळ्वनिदरिदमोदितु लेश्या लेश्ये तु लेश्या-
१० गुणमनरिव धृतज्ञानिगळ्वय गणधरदेवादिर्गाळ्वं पेळ्वत्पट्टुवक्कुं । अनया कम्मभिरात्मानं लिपतीति
लेश्या । कपायोदयानुरंजिता योगप्रवृत्तिर्वा लेश्या । कपायाणाणामुवयेनानुरंजिता कमप्यतिशयांतरमु-
पनीता भवतीत्यर्थः । ई यत्तंमने विशदमागि माडिवपद ।

यः सद्धमंमुपावर्षं भव्यसस्सयानि प्रीणयन् ।

नीतवान् स्वेष्टिदिदं तं धमंतायपनं भजे ॥१९॥

११ अय लेश्यामार्गणां वक्नुमना निदक्खिपूर्वकं लेश्यालक्षणमाहु—

लेश्या द्रव्यभावभेदाद् द्वेषा । तत्र भावलेश्यां लथायितु इदं सूत्रम् । लिप्यति-आत्मीकरोति निजमुण्यं
पुण्यं च जीव एतयेति लेश्या लेश्यागुणजायकैर्गणधरदेवादिभिराख्याता । अनया कम्मभिरात्मानं लिपतीति
लेश्या । कपायोदयानुरंजिता योगप्रवृत्तिर्वा लेश्या कपायाणामुदयानुरंजिता कमप्यतिशयांतरमुपनीता
योगप्रवृत्तिर्वा लेश्या ॥४८९॥ अमुनेवार्यं स्पष्टयति—

२० लेश्या मार्गणाको कइनेकी भावनासे निदक्खिपूर्वकं लेश्याका लक्षण कहते हैं—

लेश्या द्रव्य और भावके भेदसे दो प्रकारकी है । उनमें-से भावलेश्याका लक्षण कहनेके
लिए यह सूत्र है । 'लिप्यति' अर्थात् इसके द्वारा जीव अपने पुण्य-पापको अपनाता है, लेश्या-
का यह लक्षण लेश्याके गुणोंके ज्ञाता गणधर देव आदिने कहा है । जिसके द्वारा जीव

२५ कायको फर्मासे लिपि करता है वह लेश्या है । कपायके उदयसे अनुरंजित मन वचन
न्तरको प्राप्त योग प्रवृत्ति लेश्या है । अथवा कपायोंके उदयसे अनुरंजित अर्थात् किसी भी अविश्या-
इसीको स्पष्ट करते हैं—

नारप्युके बोडे लेश्यानां साधनात्वं लेश्येगळ भेवप्रभेवंगळं साधितसत्त्वेच्चि अबुकारणमागि तैरि-
कारेः आपविनाहमधिकारंगळिं वयाक्रमं क्रममनतिक्रमिसेवे लेश्ययं यद्यपामि पेरुवं ॥

किण्हा णीला काऊ तेऊ पम्मा य सुक्कलेस्सा य ।

लेस्साणं णिव्देसा छन्नेव हवंति णियमेण ॥४९३॥

१ कृष्णा नीला कापोती तेजः पद्मा च शुक्ललेश्या च । लेश्यानां निर्देशाः पदं चैव भवति
नियमेन ॥

कृष्णलेश्ययं बुं नीललेश्ययं बुं कपोतलेश्ययं बुं तेजोलेश्ययं बुं पद्मलेश्ययं बुं शुक्ललेश्य-
यं बुंमितु लेश्येगळ निर्देशंगळारेयप्युतु । नियमदिवं । इल्लि पट्चैव एंवितु नैगमनयाभिप्रायदिवं
पेरुत्पट्टुतु । पर्यायवृत्तियिवं मत्तमसंख्येयलोकमात्रंगळु लेश्येगळप्युवेवितु नियमगळ्वदिवं सूचि-
१० सत्पट्टुतु । निर्देशं निगवितमायु ॥

वर्णोदयेण जणिदो सरीरवर्णो दु दब्बदो लेस्सा ।

सा सोढा किण्हादी अणेयमेया समेयेण ॥४९४॥

वर्णोदयेन जनितः शरीरवर्णस्तु द्रव्यतो लेश्या । सा षोडा कृष्णावयोऽनेकभेदाः स्वभेदेन ॥

१५ वर्णनामकर्मोदयविदं जनितः पुट्टल्पट्टु शरीरवर्णस्तु शरीरवर्णं द्रव्यतो लेश्या द्रव्यविदं
लेश्येयवकुमा द्रव्यलेश्येयं षोडा पट्टप्रकारमकुमा पट्टप्रकारंगळं कृष्णावयः कृष्णाविगळकुं ।
अनेकभेदाः स्वभेदेन स्वस्वभेदाः स्वभेदाः तैः स्वभेदेरनेकभेदाः स्युः तंतम्म भेदाविदमनेकभेवंगळपु-
पवेते बोडे ॥

अन्तरं भावः अल्पवहुरं वेति षोडशाधिकाराः लेश्याभेदप्रभेदशाधनार्थं भवन्तीति तैर्यथाक्रमं वेत्त-
वदामि ॥४९१-४९२॥

२० कृष्णलेश्या नीललेश्या कपोतलेश्या तेजोलेश्या पद्मलेश्या शुक्ललेश्या वेति लेश्यानिर्देशाः—लेश्यानामागि
पदेव भवन्ति नियमेन । अत्र एवकारेणैव नियमस्य अवगमान् पुनरनर्थकं नियमवाच्योपादानं नैगमनयेन लेश्या
षोडा पर्वासाधिकावनेन बर्धस्यातलोकेपेत्त्याचार्यस्य अभिप्रायं ज्ञापयति ॥४९३॥ इति निर्देशाधिकारः ।
वर्णनामकर्मोदयवितशरीरवर्णस्तु द्रव्यलेश्या भवति । सा च षोडा-पट्टप्रकाराः । ते च प्रकाराः
दृग्मादयः स्वस्वभेदेरनेकभेदाः स्युः ॥४९४॥ तथाहि—

२५ काल, अन्तर, भाव, अल्पवहुरं ये सोलह अधिकार लेश्याके भेद-प्रभेदोंके साधनके छि-
दें । उनके द्वारा क्रमानुसार लेश्याको कहेगा ॥४९१-९२॥

कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कपोतलेश्या, तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या ये छह ही
लेश्याओंके नाम नियमित हैं । यहाँ एवकार (हो) से ही नियमका ज्ञान हो जानेसे पुनः
नियम शब्दका महान् निरर्थक हो दे । अतः यह नैगम नयसे लेश्या छह हैं और पर्यायाधिक-
नयसे अस्तस्यातलोकके हैं, इस आधारके अभिप्रायको सूचित करता है ॥४९३॥ निर्देशाधिकार
१० समाप्त हुआ ।

वर्णनाम कर्मके उदयेमे उत्पन्न शरीरका वर्ण तो द्रव्य लेश्या है । उसके भी छह भेद
हैं । वे कृष्ण आदि भेद अपने-अपने अयान्तर भेदोंसे अनेक भेद वाले हैं ॥४९४॥

वाद्रआऊतेऊ सुक्कातेऊ य वाउकायाणं ।

गोमुत्तमुग्गवण्णा कमसो अच्चवण्णा य ॥४९७॥

वादराष्कायिकतेजस्कायिकाः शुक्लास्तेजसश्च वातकायानां । गोमूत्रमुद्गवर्णां क्रमशोऽप्य-
क्तवर्णाश्च ॥

- ५ वादराष्कायिकतेजस्कायिकगण्डं ययाऋर्माविवं शुक्लाः शुक्लवर्णगण्डु तेजसश्च पीतवर्णगण्ड-
मप्युतु । वातकायंगण्ड शरीरवर्णगण्डु घनोदधिघनानिलंगण्ड्णे गोमूत्रमुद्गवर्णगण्डु ययाऋर्माविद-
मप्युतु । तनुवातकायिकगण्ड शरीरवर्णमध्यस्तवर्णमक्कं ॥

सव्वेसिं सुहुमाणं कावोदा सव्वविग्गहे सुक्का ।

सच्चो मिरसो देहो क्वोदवण्णो ह्वे णियमा ॥४९८॥

- १० सव्वेषां सुक्ष्माणां कापोताः सव्वविग्रहे शुक्लाः । सव्व्यां मिथो वेहः कपोतवर्णा भवे-
प्रियमात् ॥

सर्वसूक्ष्मजीवंगण्ड देहंगण्डु कपोतवर्णदेहंगण्डेयप्युतु सर्वजीवंगण्डु विग्रहगतिमोडु शुक्ल-
वर्णगण्डेयप्युतु । सर्वजीवंगण्डु शरीरपर्ष्माग्निनेरिवन्नेयरं कपोतवर्णरेयप्यह नियमविदं ॥ वर्णाधिकारं
द्वितीयं ॥ अनंतरं लक्ष्यापरिणामाधिकारमं गाथापंचकाविदं पेञ्चपं—

- १५ लोमाणमसंखेज्जा उदयट्ठाणा कसायगा हांति ।

तत्थ किलिट्ठा असुहा सुहा विसुद्धा तदालावा ॥४९९॥

लोकानामसंख्येयान्युदयस्थानानि कषायगणि भवंति । तत्र बिलष्टान्यशुभानि शुभानि
विशुद्धानि तवालापानि ।

- २० वादराप्तेजस्कायिको क्रमेण शुक्लपीतवर्णाविव, वातकायिकेषु घनोदधिघातघनवातशरीरानि क्रमेण
गोमूत्रमुद्गवर्णानि तनुवातशरीरानि अव्यक्तवर्णानि ॥४९७॥

सर्वसूक्ष्मजीवदेहाः कपोतवर्णा एव । सर्वे जीवा विग्रहगती शुक्लवर्णा एव । सर्वे जीवाः स्वस्वपर्णाति-
प्रारम्भप्रथमसमयाच्छरीरपर्णातिनिष्कृतिपर्यन्तं कपोतवर्णा एव नियमेन ॥४९८॥ इति वर्णाधिकारः ।
अथ परिणामाधिकारं गाथापञ्चकेनाह—

- २५ भोगभूमिके मनुष्ये और तिर्यच क्रमसे सूर्यके समान, चन्द्रमाके समान तथा हरित वर्णवाले
होते हैं ॥४९६॥

वाद्र तेजस्कायिक और वाद्र जलकायिक क्रमसे पीतवर्ण और शुक्लवर्ण ही होते हैं ।
वाद्रवायुकायिकोंमें घनोदधि वातका शरीर गोमूत्रके समान वर्णवाला है । घनवातका शरीर
मूत्र के समान वर्णवाला है और तनुवातके शरीरका वर्ण अव्यक्त है ॥४९७॥

- १० सय सूक्ष्मजीवोंका शरीर कपोतके समान वर्णवाला ही होता है । सय जीवोंका
विग्रहगतिमें शुक्लवर्ण ही होता है । सय जीव अपनी-अपनी पार्थक्यिके प्रारम्भ होनेके प्रथम
समयसे लेकर शरीरपर्णातिके पूर्णता पर्यन्त कपोतवर्ण ही नियमसे होते हैं ॥४९८॥
वर्णाधिकार समाप्त हुआ । आगे पाँच गाथाओंसे परिणामाधिकार कहते हैं—

मंदसंक्लेशस्थानंगळ तवसंख्यातलोकभक्तबहुभागमात्रंगळपुत्रु $\equiv a \text{ } \underset{९९}{c}$ पक्षलेश्याविगुद्विस्थानंगळ

मंदतरसंक्लेशस्थानंगळ तदेकभागबहुभागमात्रंगळपुत्रु $\equiv a \text{ } \underset{९९९}{c}$ शुक्ललेश्याविगुद्विस्थानंगळ

मंदतमसंक्लेशस्थानंगळ शैवेकभागमात्रंगळपुत्रु $\equiv a \text{ } \underset{९९९}{१}$ ई कृष्णलेश्याविमावावं स्थानंगळोळ

प्रत्येकमशुभंगळोळकृष्टदिवं जघन्यपर्यंतं शुभंगळोळं जघन्यदिवमुत्कृष्टपर्यंतमसंख्यातलोकमात्र-
५ पदस्थानपतितहानिवृद्धिपुक्तस्थानंगळपुत्रु खलु नियमदिवं ।

असुहाणं वरमज्झिमअवरंसे किण्हणोलकाउतिण ।

परिणमदि क्रमेणप्पा परिहाणीदो किलेसस्स ॥५०१॥

अशुभानां वरमध्यमावरांशे कृष्णनीलकपोतत्रये परिणमति क्रमेणात्मा परिहानितः
संक्लेशस्य ।

१० कृष्णनीलकपोतत्रिस्थानंगळ अशुभंगळपुत्कृष्टमध्यमजघन्यांशंगळोळ जीवं संक्लेशहानि-
यिदं क्रमदिवं परिणमिसुगुं ।

लोकभक्तकभागमात्रेषु $\equiv a \text{ } \underset{९}{१}$ तेजोलेश्यामन्दसंक्लेशस्थानानि तदसंख्यातलोकभक्तबहुभागमात्राणि $\equiv a \text{ } \underset{९१९}{c}$

पक्षलेश्याविगुद्विस्थानानि मन्दतरसंक्लेशस्थानानि तदेकभागबहुभागमात्राणि $\equiv a \text{ } \underset{९१९९}{c}$ शुक्ललेश्याविगुद्वि-

स्थानानि मन्दतमसंक्लेशस्थानानि शैवेकभागमात्राणि $\equiv a \text{ } \underset{९१९९}{१}$ एतेषु कृष्णलेश्यादिपदस्थानेषु प्रत्येकमशुभेऽंशे

१५ उत्कृष्टजघन्यपर्यन्तं शुभेषु च जघन्यादुत्कृष्टपर्यन्तं असंख्यातलोकमात्रपदस्थानपतितहानिवृद्धिस्थानानि भवन्ति
खलु-नियमेन ॥५००॥

कृष्णनीलकपोतत्रिस्थानेषु अशुभशोत्कृष्टमध्यमजघन्यांशेषु जीवः संक्लेशहानितः क्रमेण परिण-
मति ॥५०१॥

२० नीललेश्या सम्बन्धी तीघ्रतर संक्लेश स्थान हैं । शेष रहे एक भाग प्रमाण कपोतलेश्या
सम्बन्धी तीघ्र संक्लेश स्थान हैं । पहले कपायोंके उदय स्थानोंमें असंख्यात लोकसे भाग देकर
जो एक भाग प्रमाण शुभ लेश्या सम्बन्धी स्थान कहे थे वे तेज, पद्म और शुक्लके भेदसे
तीन प्रकारके हैं । उनमें असंख्यात लोकसे भाग देकर बहुभाग प्रमाण तेजोलेश्या सम्बन्धी
मन्द संक्लेश स्थान हैं । शेष बचे एक भागमें पुनः असंख्यात लोकसे भाग देकर बहुभाग
प्रमाण पक्षलेश्या सम्बन्धी मन्दतर संक्लेशस्थान है । शेष रहे एक भाग प्रमाण शुक्ल लेश्या
२५ सम्बन्धी मन्दतम संक्लेश स्थान हैं । इन कृष्णलेश्या आदि सम्बन्धी छह स्थानोंमेंसे
प्रत्येकमें अशुभमें वो उत्कृष्टसे जघन्य पर्यन्त और शुभ लेश्याओंमें जघन्यसे उत्कृष्ट पर्यन्त
असंख्यात लोकमात्र पदस्थान पतित हानि-वृद्धि स्थान नियमसे होते हैं ॥५००॥

यदि जीवके संक्लेश परिणामोंमें हानि होती है तो वह अशुभ कृष्ण नील और कपोत
लेश्याओंके उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य अंशोंमें क्रमसे परिणमन करता है अर्थात् उस लेश्याके

१० उत्कृष्ट अंशसे मध्यममें और मध्यमसे जघन्यरूप परिणमन करता है ॥५०१॥

भागमसंख्यातभागं संख्यातभागं संख्यातगुणमसंख्यातगुणमनंतगुणमसंख्यं हानिवृद्धिगुणं नामगच्छ-
मुत्कृष्टसंख्यातमुमसंख्यातलोकं सख्यंजीवरात्रिपुमसंख्यं प्रमाणगच्छ भागक्रमवोच्छं गुणितक्रमवोच्छं-
मिवेषणुबंधु श्रुतज्ञानमार्गणेषोऽत्र पेच्छ क्रममिल्लिपुमरिपल्पडुगुमंयुतु तात्पर्यं ॥ नाल्कनेप
संक्रमगाधिकारंतिदुतु ॥ अनंतरं कर्माधिकारं गायाद्वयदिवं पेच्छवर्षः :-

१. श्रुतज्ञानमार्गनायां उक्तक्रमेणैव भवन्ति । तत्र अनन्तभागः असंख्यातभागः संख्यातभागः संख्यातगुणः अत्यन्त-
गुणः अत्यन्तगुणश्चेति नामानि । उत्कृष्टसंख्यातमसंख्यातलोकः सर्वजीवरात्रिश्चेति भागक्रमे गुणितक्रमे च
प्रमाणानि भवन्ति ॥१०६॥ इति संक्रमगाधिकारवचनपूर्वः ॥ अथ कर्माधिकारं गायाद्वयेनाह—

नाम और उनका प्रमाण पहले श्रुतज्ञानमार्गणामें जैसा कहा है वैसा ही जानना । इनके
नाम अनन्तभाग, असंख्यात भाग, संख्यात भाग, संख्यात गुण, असंख्यात गुण और अनन्त
गुण हैं । उनका प्रमाण जीवरात्रि, असंख्यात लोक और उत्कृष्ट संख्यात क्रमसे हैं । यह भाग
और गुनेका प्रमाण है ॥१०६॥

विशेषार्थ—अनन्त भाग, असंख्यात भाग, संख्यात भाग, संख्यात गुण, असंख्यात
गुण, अनन्त गुण ये छह स्थानोंके नाम हैं । इनका प्रमाण गुणकार और भागहारमें पूर्ववत्
जानना । पूर्वमें वृद्धि का अनुक्रम कहा है हानिमें उससे उल्टा अनुक्रम है । वही कहते हैं ।
१. कपोतलेइयाके जपन्यसे लगाकर कृष्णलेइयाके उत्कृष्ट पर्यन्त विवक्षा हो तो क्रमसे संख्येका
वृद्धि होती है । यदि कृष्णलेइयाके उत्कृष्टसे लगाकर कपोतलेइयाके जपन्य पर्यन्त विवक्षा हो
तो संख्येका हानि होती है । तथा पीतके जपन्यसे लगाकर गुणलके उत्कृष्ट पर्यन्त विवक्षा
हो तो क्रमसे विगुद्धि की वृद्धि होती है । यदि गुणलके उत्कृष्टसे लगाकर पीतके जपन्य पर्यन्त
विवक्षा हो तो क्रमसे विगुद्धि की हानि होती है । सो वृद्धिमें पदस्थानपतित वृद्धि और
२. हानिमें पदस्थानपतित हानि जानना ।

पूर्वमें कहा था कि सूर्यगुणके असंख्यातवें भाग मात्र बार अनन्त भागवृद्धि होने
पर एक बार अनन्त गुणवृद्धि होती है । उसमें अनन्त गुणवृद्धिरूप स्थान नवीन पदस्थान
पतित वृद्धि का प्रागल्भ्य प्रथम स्थान है । उसके पहले जो अनन्त भाग वृद्धिरूप स्थान है
वह विवक्षित पदस्थानपतित वृद्धि का अन्तस्थान है । नवीन पदस्थानपतित वृद्धिके अनन्त
१. गुणवृद्धिरूप प्रथम स्थानके आगे सूर्यगुणके असंख्यातवें भाग मात्र अनन्त भागवृद्धिरूप
स्थान होते हैं उनके आगे पूर्वोक्त अनुक्रम जानना ।

यहाँपर कृष्णलेइयाका उत्कृष्ट स्थान पदस्थानपतित का अन्त स्थानरूप होनेसे पूर्व-
स्थानमें अन्तभागी वृद्धिरूप है । और कृष्णलेइयाका जपन्य स्थान पदस्थान पतित का
प्रागल्भ्य प्रथम स्थान है । उसके पूर्व नीलेइयाका उत्कृष्ट स्थान उससे अनन्त गुण वृद्धि
१. का है । तथा कृष्णलेइयाके जपन्य का समीपवर्ती स्थान उस जपन्य स्थानसे अनन्त भाग
वृद्धिरूप है । हानिके अर्थका कृष्णलेइयाके उत्कृष्ट स्थानमें उसके समीपवर्ती स्थान अनन्त
भाग हानिके तिरहे है । कृष्णलेइयाके जपन्य स्थानमें नीलेइयाका उत्कृष्ट स्थान अनन्त
गुण हानिके तिरहे है । इसी प्रकार अन्य स्थानोंमें भी जानना ॥१०६॥

यदुत्तरं न कश्चन अधिकार समग्रं दृष्ट्वा । अथ कर्माधिकारं शो गाथाओंमें कहते हैं—

मत्ते कृष्णलेश्येयनुळ जीवनवक्त्रं ॥

मंदो बुद्धिविहीणो गिन्विष्णणाणी य विसयलोलो य ।

माणो माई य तद्वा आलस्सो चेव भेज्जो य ॥५१०॥

मंदो बुद्धिविहीनो निर्विज्ञानो च विषयलोलश्च । मानी मायो च तथा आलस्यश्चैव

५ भेद्यश्च ॥

मंदः स्वच्छन्दसंज्ञिकं क्रियेगच्छोऽमंदं मेणु बुद्धिविहीनः यत्तमानकाप्यानिभिन्नं । निर्विज्ञानो च विज्ञानविहीनः । विषयलोलश्च विषयगच्छोऽस्पर्शादिवाह्येन्द्रियात्थंगच्छोऽलपटनं । मानी अहंकारिणं । मायो च कुटिलवृत्तियं तथा आलस्यश्चैव क्रियेगच्छोऽकत्तव्यंगच्छोऽकच्छं । भेद्यश्च परैरिदमोक्षगरित्यल्पद्वयनुभेदिनितं कृष्णलेश्येय जीवलक्षणमवक्त्रं ॥

१०

णिद्वावंचणवहुलो धणधणणे होदि तिन्वसणा य ।

लक्खणमेयं भणियं समासदो णीललेस्सस्स ॥५११॥

निद्रावंचनाबहुलः धनधान्ये भवति तोषसंज्ञश्च । लक्षणमेतद् भणितं समासतो नीललेश्यस्य ॥

निद्रावहुलं वंचनाबहुलं धनधान्यंगच्छोऽतोषसंज्ञेयनुळं धनधान्यंगच्छोऽतोषसंज्ञेयनुळं एवितो लक्षणं संक्षेपदिवं नीललेश्येयनुळ जीवंगे पेळत्पट्टुट्टु ॥

१५

रूसइ णिदइ अपणे दूसइ बहुसो य सोयभयवहुलो ।

असुयइ परिभवइ परं पसंसये अप्पयं बहुसो ॥५१२॥

रोपति निदत्यन्यान् दुष्यति बहुशश्च शोकभयबहुलः । असुयति परिभवति परं प्रशंसये दातमानं बहुशः ।

एतल्लक्षणं तु—मूनः कृष्णलेश्यस्य भवति ॥५०९॥

२०

मन्दः स्वच्छन्दक्रियामु मन्दो वा, बुद्धिविहीनः यत्तमानकाप्यानिभिन्नः, निर्विज्ञानी च—विज्ञानरहितश्च विषयलोलश्च-स्पर्शादिवाह्येन्द्रियात्थंगच्छोऽलपटन, मानी-अभिमानी, मायो च-कुटिलवृत्तियं तथा आलस्यश्चैव क्रियामु कर्तव्येषु कुच्छश्चैव भेद्यश्च परेणानवबोध्याभिप्रायश्च एतदपि कृष्णलेश्यस्य लक्षणं भवति ॥५१०॥

निद्रावहुलः वञ्चनबहुलः धनधान्येषु तोषसंज्ञश्च इत्येतल्लक्षणं संक्षेपेण नीललेश्यस्य भणितम् ॥५११॥

हो, हुट और निर्दय हो, किसीके वशमें न आता हो, ये कृष्णलेश्यावालेके लक्षण हैं ॥५०९॥

स्वच्छन्द अथवा कार्य करनेमें मन्द हो, बुद्धिहीन हो—यत्तमान कार्यको न जानता हो, अज्ञानी हो, स्पर्शन आदि इन्द्रियोंके विषयमें लम्पट हो, अभिमानी हो, कुटिल वृत्तियाला मायापारी हो, कर्तव्य कर्ममें आलसी हो, दूसरोंके द्वारा जिसका अभिप्राय न जाना जा सके ये सब भी कृष्ण लेश्याके लक्षण हैं ॥५१०॥

१०

बहुव सोता हो, दूसरोंको खूब ठगता हो, धन्य-धान्यकी तोष लाटसा हो ये संक्षेपे नीललेश्यावालेके लक्षण हैं ॥५११॥

किण्वरसेण मुदा अवधिदृष्टाणम्मि अवरअंसमुदा ।

पंचमचरिमतिमिस्से मज्झे मज्झेण जायंते ॥५२४॥

कृष्णवराशेन मृताः अयधिस्थाने अचरांगमृताः । पंचमचरमतिमिधे मध्ये मध्ये जायंते ॥५२४॥

- ५ कृष्णलेश्योत्कृष्टांशदिव मृतराव जीवंगत्तु सप्तमपुण्ययोक्तो दे पटलमसकुमवरवधिस्यांशे च विलबोत्तु जायंते पुट्टुवर । कृष्णलेश्याजघन्यांशदिवं मृतराव जीवंगत्तु पंचमपुण्य चरमपटल तिमिधेद्रकविलबोत्तु जायंते पुट्टुवर । कृष्णलेश्यामध्यमांशदिवं मृतराव जीवंगत्तु सप्तमपुण्य अवधिस्यानेद्रकदे चतुःश्रेणिवदंगकोत्तं आ विलदिवं मेलण पत्रपुण्यमपधिये बुबवर पटलश्रं गलोत्तु तत्तद्योग्यमागि जायंते पुट्टुवर ।

- १० नीलुककसंसमुदा पंचमअधिदयम्मि अवरमुदा ।

वालुकसंपज्जलिदे मज्झे मज्झेण जायंते ॥५२५॥

नीलोत्कृष्टांशमृताः पंचम अंध्रेद्रके अवरमृताः । बालुकासंप्रज्जलिदे मध्ये मध्ये जायंते ॥

- नीललेश्योत्कृष्टांशदिवं मृतराव जीवंगत्तु पंचमपुण्यपटलपंचकबोत्तु द्विचरमपटल अंध्रेद्रकविलबोत्तु जायंते पुट्टुवर । पंचमपटलबोत्तं केलंबर पुट्टुवरतु कारणमागि पंचमारिष्येत्तु चरमपटलबोत्तु कृष्णलेश्याजघन्यांशदिवं नीललेश्योत्कृष्टांशदिवं, मृतराव केलु जीवंगत्तु पुट्टुवरबो विशेषमरियत्पडुगुं । नीललेश्याजघन्यांशदिवं मृतराव जीवंगत्तु बालुकाप्रभेयनवपदं

- कृष्णलेश्योत्कृष्टाशेन मृता जीवाः सप्तमपुण्यमेकमेव पटलं तस्यावधिस्यानेन्द्रके जायन्ते । कृष्णलेश्य जघन्याशेन मृता जीवाः पञ्चमपुण्योचरमपटलस्य तिमिधेन्द्रके जायन्ते । कृष्णलेश्यामध्यमाशेन मृता जीवाः तदवधिस्यानेन्द्रकस्य चतुःश्रेणिवदेपु पष्टपुण्योपटलश्रये पञ्चमपुण्योचरमपटले च तत्तद्योग्यता जायन्ते ॥५२५॥
- २० नीललेश्योत्कृष्टाशेन मृता जीवाः पञ्चमपुण्योद्विचरमपटलस्याग्रेन्द्रके जायन्ते । केचित् पञ्चमपटलसेन जायन्ते । ततोऽरिषाचरमपटले कृष्णलेश्याजघन्याशेन नीललेश्योत्कृष्टांशोनापि मृताः केचिज्जीवाः उत्पन्ने ।

- कृष्णलेश्याके उत्कृष्ट अंशसे मरे जीव सातवीं पृथिवीमें एक ही पटल है उसके अवधिसंस्थान नामक इन्द्रक विलमें उत्पन्न होते हैं । कृष्णलेश्याके जघन्य अंशसे मरे जीव पाँचवीं पृथ्वीके अन्तिम पटल सम्बन्धी तिमिध नामक इन्द्रक विलमें उत्पन्न होते हैं ।
- २५ कृष्णलेश्याके मध्यम अंशसे मरे जीव अवधिसंस्थान नामक इन्द्रकके चारों दिशा सम्बन्धी श्रेणीयद्द विलोंमें, छठी पृथ्वीके तीनों पटलोंमें और पाँचवीं पृथ्वीके अन्तिम पटलमें अपनी अपनी योग्यतानुसार उत्पन्न होते हैं ॥५२४॥

- नीललेश्याके उत्कृष्ट अंशसे मरे जीव पाँचवीं पृथ्वीके द्विचरम पटलके आग्नेन्द्रकमें उत्पन्न होते हैं । कोई-कोई पाँचवें पटलमें भी उत्पन्न होते हैं । अरिष्ट पृथ्वीके अन्तिम पटलमें कृष्णलेश्याके जघन्य अंशसे और नीललेश्याके उत्कृष्ट अंशसे भी मरे कोई-कोई जीव उत्पन्न होते हैं इतना विशेष जानना । नीललेश्याके जघन्य अंशसे मरे जीव बालुकाप्रभा नामक तीसरी पृथ्वीके नौ पटलोंमें-से अन्तिम पटल सम्बन्धी संप्रज्जलित इन्द्रकमें उत्पन्न

१. म० क० विरदिदं मेने पष्टपुण्य मपधियोत्तु पंचमपुण्य, अरिष्टेयंबुदवर पटल पंचकबोत्तु चरमपटलदिदं केत्तेपु पष्ट ।

किण्वचउत्फलाणं पुण मउत्तंगमुदा हु भाणगाशिनिये ।
पुदवी-आउउणफ्फद्वीयेमु हानि रत्तु जीवा ॥५२७॥

कृष्णचतुष्काणां पुनः मध्यमांशमृताः एतु भवनगाशिनये । पृथिव्यपत्तनीये
खलु जीवाः ॥

- १ कृष्णनीलकापोततेजो देश्याचतुष्टय इ मध्यमांशगार्हवे मृतराव कर्मभूमिः ।
भोगभूमितिर्यग्मनुष्यदं भवनत्रययोः भवति परिणमति पुष्टुयत् । एतु
भोगभूमिजतिर्यग्मनुष्यमिष्यादृष्टिगत्ते तेजोलेस्यामध्यमांशविं मृतरावगन्तुं
पुष्टुय कारणविं तेजोलेस्यासंभ्रमुरियल्पगुणु । तु मत्ते कृष्णादिचतुर्लक्षणम्
मृतराव तिर्यग्मनुष्यदं भवनत्रययोतिविरुधं सोधर्मज्ञानरूपमज्ञानमप्य मिष्यादृष्टिः
- १० यादरपण्यामिपृथ्वीकायिकजोवंगळोळं वादरपण्यामाकायिकजोवंगळोळं
कायिकजोवंगळोळं भवति—परिणमति पुष्टुयत् । भवनत्रयादिं जोवंगळोळं

किण्वतियाणं मज्झिमअसंमुदा तेउवाउवियलेमु ।
सुराणिरया सगलेस्सहि णरतिरियं जाति समजोगं ॥५२८॥

- १५ कृष्णप्रयाणां मध्यमांशमृताः तेजोवायुविकलेषु । मुरतारकाः स्वलेस्यान्निन्दं
याति स्वयोरयं ॥

कृष्णाद्यनुभलेश्याययंगळ मध्यमांशविं मृतराव तिर्यग्मनुष्यदगळ तेबत्तानि
कायिकविकलत्रय असंज्ञिचंद्रियसाधारणवनस्पतिगळे भी जोवंगळोळु जाति जायते

- अत्र पुनः शब्दो विशेषरूपसोऽस्ति । तेन कृष्णादित्रिलेश्यामध्यमांशमृताः कर्मभूमितिर्यग्मनुष्यत्वेन
२० तेजोलेस्यामध्यमांशमृताः भोगभूमितिर्यग्मनुष्यमिष्यादृष्टयश्च भवनत्रये खलु उत्पद्यन्ते इति ज्ञायम् । इतः
कृष्णादिचतुर्लक्षणामध्यमांशमृतामृततिर्यग्मनुष्यभवनत्रयसौधर्मज्ञानमिष्यादृष्टयः वादरपयातिपृथ्वीकायिकेषु न
वनस्पतिकायिकेषु बोधयन्ते । भवनत्रयाद्यनेश्या अत्रापि तेजोलेस्यासंभ्रयो बोधयः ॥५२९॥
कृष्णाद्यनुभलेश्याययंस्य मध्यमांशमृततिर्यग्मनुष्याः तेजोवायुविकलत्रयासंज्ञितामारणवनस्पतीनि

इस गाथामें 'पुनः' शब्द विशेष कथनका सूचक है । अतः कृष्ण आदि तीन लेस्याके

- २५ के मध्यम अंशसे मरे कर्मभूमिके मिष्यादृष्टि तिर्यंच और मनुष्य तथा तेजोलेस्याके मध्यम
अंशसे मरे भोगभूमि या मिष्यादृष्टि तिर्यंच और मनुष्य भवनवासी व्यन्तर और उद्योतिके
देशोंमें वत्तन होते हैं यह जानना । तथा कृष्ण आदि चार लेस्याके मध्यम अंशसे मरे दिव्य
मनुष्य, भवनवासी, व्यन्तर, उद्योतिपी और सौधर्म ऐशान स्वर्गके देव ये सब मिष्यादृष्टि
यादर पर्याप्त कृष्णीकायिक, जलकायिक और वनस्पतिकायिकोंमें उत्पन्न होते हैं । अत्र
१० त्रिको अंशेया यहाँ भी तेजोलेस्या सम्भव है यह जानना ॥५२९॥

कृष्ण आदि तीन धनुष लेस्याओंके मध्यम अंशसे मरे तिर्यंच और मनुष्य तेज
१. क पयांशमृतत्वयैव । २. म त्रंगळो । ३. व. अत्रापि तेजोलेस्या भवनत्रयाद्यनेश्या
५ वं वन ।

चतस्रोऽसंज्ञिनः असंज्ञित्वेन्द्रियपर्यायत्रयीमे कृष्णाद्यनुभ्लेःसात्रयम् तेजोलेदयेगुमात्रकुमेके वाद्य
 असंज्ञित्वेन्द्रिये कपोतलेदयेष्विदं मृतनागि धमे योऽनुद्गुम् । तेजोलेदयेष्विदं मृतनागि भवनभंतरदेवगति-
 द्वयबोऽनुद्गुमनुभ्लेःसात्रयविक्रं मृतनागि नरनिष्ठागतिस्योऽनुद्गुमनुभ्लेः । संवयुर्न-
 मिव्यादृष्टौ संज्ञित्वेन्द्रियलक्ष्यपर्यायिनूक्तोऽं मनुद्गुमनुभ्लेःसात्रयविक्रं अपि शब्दविरमसात्रित्वेन्द्रिय-
 लक्ष्यपर्यायिनूक्तोऽं सासादनसम्प्रदुष्टौ निरुत्पपर्यायिनूक्तसासादननोऽंसासासादननु ।

- ५ ['निरयं सासनतम्भो न गच्छति स न तस्म निरयाणु । एतु,
 "नहि सासावनो अपुञ्जे साहारगमुद्रमगे य तेउगुमे ॥" एरिगु]
 लक्ष्यपर्यायिनूक्तोऽं साधारणत्रयीगठोऽं नारकरोऽं मूत्रमजोऽं गठोऽं तेरत्काविक्र-
 लोऽं यातकाविक्रगठोऽं संभविस्तनुवद्विरं भवनत्रयापर्यायिनूक्तोऽं दोषतिथ्यंमनुष्योऽं
 संभविमुगुमा निर्वृत्यपर्यायिनूक्तसासादननोऽं अनुभ्रयो कृष्णाद्यनुभ्लेःसात्रयमेयाकुं । तिव्यं
 १० मनुष्योपशमसम्यग्दृष्टिगत् तत्कालाभंतरवोऽं गुपुत् संविलध्तरावोऽं मयान्गोऽं देवसंयतरोऽं तं
 कृष्णनोऽं कपोतलेदयात्रयंगठगणे वितु तद्विराधकसासावननोऽं पर्यायिनूक्तपर्यायिनूक्तानुभ्लेःसात्रय-
 नेयवकुमे वरितुदु ।

भोगापुण्णमसम्भे काउत्स जहण्णयं हवे णियमा ।
 सम्भे वा मिच्छे वा पज्जत्ते तिण्णि सुहलेस्सा ॥५३१॥

- १५ भोगापुण्णसम्यग्दृष्टौ कापोतस्य जघन्यं भवेन्नियमान् । सम्यग्दृष्टौ वा निम्यादृष्टौ वा
 पर्यायि तिस्रः शुभलेदयाः ॥

चगुभलेदया एव । असंज्ञित्वेन्द्रियस्य तद्वयं तेजोलेदया च, कुतः ? तस्य कपोतमृदस्य पमांशो तेजोनुत्स
 भवनव्यन्तरपोरनुभ्रयमनुत्स संज्ञित्वेन्द्रियंगत्वोश्च उदादान् । संज्ञित्वेन्द्रियायां तद्वियंमनुष्यामिभ्यादृष्टौ
 अनियन्त्रादप्रतिलक्ष्यपर्यायिनूक्तं त्रियंमनुष्यभवनत्रयनिर्वृत्यपर्यायिनूक्तसासादनं च कृष्णाद्यनुभ्रयमेव । त्रियंमनुष्यो-
 २० पशमसम्यग्दृष्टोना सम्यक्त्वकालाम्यन्तरे गुपुत् संविलध्तरावोऽं मयान्गोऽं देवसंयतरोऽं तं
 दनापर्यायानामस्तीति ज्ञातव्यम् ॥५३१॥

उनमेंसे पंचेन्द्रिय और विकलत्रय जीवितं कृष्णादि तीन अनुभ्र लेदया ही होती हैं । असंज्ञी
 पंचेन्द्रिय पर्यायिनूक्त कृष्णादि तीन और तेजोलेदया होती है । क्योंकि यदि वह कपोतलेदयासे
 मरता है तो धर्मा नरकमें शरन्न होता है । तेजोलेदयासे मरता है तो भवनयाली और
 २५ ज्यन्तरीमें उत्पन्न होता है । और यदि तीन अनुभ्र लेदयाओंसे मरता है तो मनुष्यगति, त्रियं
 गतिमें शरन्न होता है । संज्ञी लक्ष्यपर्यायिनूक्त त्रियं और मनुष्य मिथ्यादृष्टिमें 'अपि' शब्दसे
 असंज्ञी लक्ष्यपर्यायिनूक्त त्रियं च तथा सासादन गुणस्थानवर्ती निवृत्यपर्यायिनूक्त त्रियं, मनुष्य
 और भवनत्रिक्रमें कृष्णादि तीन अनुभ्रलेदया ही होती हैं । उपशम सम्यग्दृष्टि त्रियं और
 मनुष्योंके सम्यक्त्वकालके भीतर अतिसंकलेशमें भी देवसंयतकी तरह तीन अनुभ्र लेदया नहीं
 ३० होती हैं । तथापि उपशम सम्यक्त्वके विराधक सासादन सम्यग्दृष्टिके अपर्याय अवस्थान

उपज्ञांतरुपायादिगुणस्थानत्रयरोजु कृपायोऽपरहितामागुतिरनुभवरोजु पेक्षस्तु शानुं।
 लेश्येयमु। तु मत्तं भूतपूर्वगतिन्यायान् उपज्ञांतरुपाययोःतरागतघन्ययोः शीघ्रकृपायरोतरागच्छ-
 घन्योऽं संधांगिकेवलितिनोऽं भूतपूर्वगतिःपार्श्वरभेवःकुमः॥ योगप्रवृत्तिमुंजे
 योगप्रवृत्तिलेश्या यैःस्तु योगप्रवृत्तिरगतःवैरं तस्मिन्ने लेश्यांतरुपायरोजुं

५ लेश्यासंभवमरुं।

तिणहं दोणहं दोणहं छणहं दोणहं च तंरसणहं च।

एतो य चोद्दसणहं लेस्मा भागादिदेवानं ॥५३५॥

प्रयाणां द्वयोदंयोः, पवणां द्वयोश्च त्रयोरज्ञानां च इतराद्यपुंज्ञानां लेश्या भवनादिदेवानां।

तेऊ तेऊ तह तेऊरम्मा पम्मा य पम्मगुक्का य।

१० सुक्का य परमसुक्का भवणतिया पुणणे अगुहा ॥५३६॥

तेजस्तेजस्तया तेजःपघे पघा च पघगुक्के च। गुक्का च परमगुक्का भवनत्रया पुंके
 अज्ञानाः।

भवनत्रयद भवनादित्रिधामरणी पर्याप्तपेशीयि तेजोऽश्याजघन्यमरुं। सौधर्मज्ञानद्वय
 वैमानिकगणे तेजोऽश्याजघन्यमांशमरुं। सानत्कुमारमाहेन्द्रमोः कल्पजगणे तेजोऽश्याःकृप्यागु

१५ पयलेश्याजघन्यमुमरुं। ब्रह्मप्रहोत्तरलातवकापिठगु-दमहागुंरुं गळं बादकल्पंगळ कल्पजगणे पय-
 लेश्यामध्यमांशमरुं। शतारसहस्रारकल्पद्वयद वैमानिकगणे पयलेश्योत्कृष्टं गुक्कलेश्याजघन्य-
 मुमरुं। आनतप्राणत आरणाच्युतंगळं नवपेशीयकंगळं चितु पविमूरर मुरगणे गुक्कलेश्यामध्य-
 मांशमरुंमिल्लिदं मेले अनुदिशानुत्तरविमानंगण्यविनालकर कल्पातीतजगणे गुक्कलेश्योत्कृष्टं

उपज्ञानरुपायादिनष्टरुपायगुणस्थानत्रये कृपायांशभावेऽपि या लेश्या उच्यते वा भूतपूर्वगतिः

२० यादेव। अथवा योगप्रवृत्तिलेश्येति योगप्रवृत्तिप्राधान्येन तत्र लेश्या भवति ॥५३३॥
 भवनत्रयादिदेवानां लेश्योच्यते। तत्र पर्याप्तपेशीया भवनत्रयस्य तेजोऽश्याःवांशः। सौधर्मज्ञानने

तेजोमध्यमाशः। सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः तेजोऽश्याःपचजघन्यायो। ब्रह्मप्रहोत्तरादिपदकस्य पचमध्यमाशः।
 शतारसहस्रारयोः पयोत्कृष्टागुक्कलजघन्यायो। आनतचित्तुणी नवपेशीयकाणां च गुक्कलमध्यमाशः। अत उच्यते

उपज्ञानं कपाय आदि तीन गुणस्थानांनिं यद्यपि कपायका उद्वय नहीं है और वारहवें-
 २५ तेरहवेंमें तो कपाय नष्ट ही हो गयी है। फिर भी वहाँ जो लेश्या कही जाती है वह भूतपूर्व
 गतिन्यायसे ही कही जाती है। अथवा योगकी प्रवृत्तिको लेश्या कहते हैं और योगकी
 प्रवृत्तिको प्रधानता है इसलिए वहाँ लेश्या है ॥५३३॥

भवनत्रय आदि देवोंके लेश्या कहते हैं। पर्याप्तकी अपेक्षा भवनवासी, व्यन्तर और
 १० ज्योतिषी देवोंके तेजोऽश्याका जघन्य अंश है। सौधर्म पेशानमें तेजोऽश्याका मध्यम अंश
 है। सानत्कुमार माहेन्द्रमें तेजोऽश्याका उत्कृष्ट अंश और पयलेश्याका जघन्य अंश है।
 ब्रह्म-प्रहोत्तर आदि छह स्वर्गोंमें पयलेश्याका मध्यम अंश है। शतार-सहस्रारमें पयल
 उत्कृष्ट अंश और गुक्कलका जघन्य अंश है। आनत आदि चार स्वर्गोंमें और नौ पेशीयकोंमें
 गुक्कलका मध्यम अंश है। उससे ऊपर अनुदिश और अनुत्तर सभ्यन्धी चौदह विमानोंमें

संचयमनाश्रयित्ति द्रव्यतः प्रमाणं वेद्यत्पददु ।

खेत्तादो असुहृत्तिया अणंतलोका क्रमेण परिहीणा ।

कालादोवीदादो अणंतगुणिदा कमा द्वीणा ॥५३८॥

क्षेत्रतोऽनुभ्रयाः अनंतलोकाः क्रमेण परिहीनाः । कालावतीतान्तगुणाः क्रमाद्वीनाः ॥

क्षेत्रप्रमाणविवं अनुभ्रया जीवाः अनुभलेदयात्रय जीवंगत्तु अणंतलोका अनंतलोका

प्रमितंगत्तागुत्तं क्रमाविवं परिहीनंगत्तु किंचिदूनक्रमंगत्तु क्षेत्र कृ = ल नो ए - क ए = इल्लियुं त्रैराशिकं माडल्पदुगुं प्र = फ ग १ । इ १३ लघ्य शला । ए । प्रमा ग १ । फ = इ ए ।

लघ्य = ३ । कालावतीतात् कालप्रमाणविवं अनुभलेदयात्रय जीवंगत्तु अतीतकालमं नोडुलु अनंत-
गुणिताः अनंतगुणितंगत्तागुत्तलं क्रमाद्वीनाः क्रमहीनंगत्तु । का । कु । अ ए । नो ए ए - का
१० अ ए = इल्लियुं त्रैराशिकं माडल्पदुगुं । प्र अ । फ अ १ । इ १३ - लघ्य शलाका । ए । मतं

प्र ग १ । फ अ । इ । ग ए । लघ्य अ ए ।

कपोतयोरपि ज्ञातव्यम् । कृ १३- । नो १३- । क १३- । इति कालसंचयमाश्रित्य द्रव्यतः प्रमाणमुक्तम् ॥५३९॥

३- ३- ३-

क्षेत्रप्रमाणेन अनुभविलेश्याजीवाः अनंतलोका अपि क्रमेण परिहीनाः किंचिदूनक्रमा भवन्ति ।
कृ = ल । नो = ए । क = ए । अत्र त्रैराशिकं प्र = फ ग १ । इ १३- लघ्यशलाकाः ए । पुनः प्र । ग १ ।

१५ कृ = ए । इ ए । लघ्य = ३ । कालप्रमाणेनानुभविलेश्या जीवा अतीतकालान्तगुणिता अपि क्रमहीना
भवन्ति । का कृ अ ए । नो अ ए - । क अ ए = । अत्रापि त्रैराशिकं-प्र अ फ ग १ । इ १३- लघ्यशलाकाः

ए । पुनः प्र ग १ । फ अ । इ ए । लघ्य अ ए ॥५३८॥

जीवोंके प्रमाणमें देनेपर जो लघ्य आये उतना है । इसी तरह नील और कापोतलेश्यावालोंका
प्रमाण जाना चाहिये । इस तरह कालकी अपेक्षा अनुभलेदयावाले जीवोंका प्रमाण

२० कहा ॥५३९॥

क्षेत्रप्रमाणकी अपेक्षा तीन अनुभलेदयावाले जीव अनन्तलोक प्रमाण हैं किन्तु कमसे
कुछ-कुछ हीन हैं । यहाँ प्रमाणराशि लोक, फट्टराशि एक शलाका, इच्छा राशि अपने-अपने

जीवोंका प्रमाण । ऐसा करनेपर लघ्यराशि मात्र अनन्त शलाका हुई । तथा प्रमाण एक
शलाका, फट्ट एक लोक, इच्छा अनन्त शलाका । ऐसा करनेपर लघ्यराशि अनन्त लोकमात्र
२५ इच्छादि लेश्यावाले जीवोंका प्रमाण होता है । तथा काल प्रमाणसे तीन अनुभ लेदयावाले
जीव अतीतकालके समयसे अनन्तगुने हैं । किन्तु कमसे हीन हैं । यहाँ भी त्रैराशिक करना ।
प्रमाणराशि अतीतकाल, फट्टराशि एक शलाका, इच्छराशि अपने-अपने जीवोंका प्रमाण ।
ऐसा करनेपर लघ्यराशिमात्र अनन्त शलाका हुई । फिर प्रमाण एक शलाका, फट्ट एक अतीत
काल, इच्छा अनन्त शलाका । ऐसा करनेपर लघ्यराशि अनन्त अतीतकाल प्रमाण इच्छादि
३० लेश्यावाले जीव होते हैं ॥५३८॥

तेजोनेश्याजोवंगळ् ज्योतिषिकजीवराशियं नोडलु साधिकमप्परवेतं बोडे ज्योतिष्कं भवनवासिगळ् व्यंतररुवं सौधम्मद्रपकल्पजरुं संजिपंचेंद्रियजोवंगळोळ् केलुजु जीवंगळ् मनुष्यरोळ्-केलुजु जीवंगळ् एंदिताहरप्रकारद जीवराशियळं कूडिबोडे तेजोलेश्या जीवंगळ्पुवल्लि ज्योतिष्कव पण्णट्टिप्रमितप्रतरांगुलभक्तजगत्प्रतरप्रमितरप्पव ४। ६५= भवनवासिगळ् घनांगुलप्रयममूल-गुणितजगत्पुनोमाप्ररप्पव १-१। व्यंतररु दिशतयोजनभक्तजगत्प्रतरप्रमितरप्पव १। ४६५=८१=१० सोयमनंद्रपद कल्पजरुं घनांगुलतुतोयमूलगुणितजगत्पुनोमाप्रमितरप्पव १-१॥ संजिपंचेंद्रियतेजो-लेश्याजोवंगळ् :-

“जोइतिप्रयागजोगिगितिरेवळुगुरिसा य सगिगगो जाया । तत्तेउपमलेस्ता संखगुणुगा कमेणेदे ॥”

१०. एंरुजु पंचेंद्रियसंजिजोव (राशियं नोडलु) संख्यातगुणहोनरप्पव ४। ६५=३ १ १ १३ मनुष्यं संख्यात्परितोषारं राशियं कूडिबोडे ज्योतिषिकरं नोडलु साधिकमवळु $\frac{111}{3}$ वि-
 $४। ६५=३$
 लेखनानदिशंतेजोनेश्याजोवंगळोडेपट्टुदु । पद्यलेखयेव जीवंगळुमा तेजोलेश्याजोवंगळं नोडलु संख्यातगुणहोनमागितुं संजितेजोलेश्याजोवंगळं नोडलु संख्यातगुणहोनरप्पवमा राशियोळु पप-
 येदय रुपरजदमं मनुष्यदमं साधिकं माडिबोडे प्रतरासंखयेवभागयेवकु । संसृष्टि—

१५. तेजोनेश्याजोवः ज्योतिष्कजीवराशियः साधिका भवन्ति । = = = १। कयं ? पण्णट्टिप्रतरांगुल-
 $४। ६५=३$
 मूलकल्पजराशियं कल्पजराशियं = घनांगुलप्रयममूलगुणितजगत्पुनोमाप्रमितरप्पवः-१ विगतयोवन-
 $४। ६५=$
 इंदियमूलकल्पजराशियं कल्पजराशियं = घनांगुलतुतोयमूलगुणितजगत्पुनोमाप्रमितरप्पवः-
 $४। ६५=८१। १०$
 ३ पद्यलेखयोरुपपट्टुदुमूलकल्पजराशियं कल्पजराशियं = ताडुसंख्यातगुण-
 $४। ६५=३१३३३$
 एतान् विदितव्यम् । पद्यलेखयोरुः तेजोनेश्याजोवः संख्यातगुणहोनरप्पवः सजिपंचेंद्रियतेजोनेश्याजोवः

१०. तेजोनेश्याजोवः जीवराशियो देवोऽङ्को राशिये कुड अधिक होते हैं । इसका हेतु यह है कि पंचेंद्रियकार पंचि मी उनीम प्रतरांगुलका भाग जगत्प्रतरमें देनेमें जो लख आये सो सो राशियो देव है । घनांगुलके प्रथम वर्गमूठसे गुणित जगत्प्रेणि प्रमाय भवनमान देव है । अत्र सो यो वर्गके वर्गका भाग जगत्प्रतरमें देनेसे जो लख आये वने व्यन्तर देव है । राशियुके द्वादश वर्गमूठसे गुणित जगत्प्रेणिमात्र सौधमं प्रेमान राशियुके देव है । अत्र बार संख्यासंखे गुणित पण्णट्टि (६५५३६) प्रयाव प्रतरांगुलसे भाजित जगत्प्रतर प्रमाय देवः प्रयावः क मयः क विरंज है । कथा मंख्याः तेजोलेश्या राते मनुष्य । इन सबको जोइयेमें जो लख रहे वने तेजोनेश्याजोवः जीव है । पद्यलेख्याजोवः जीव तेजोलेश्याजोवः जीवो

इंनु विरोधादिवं वनापवंगळपुत्रलि स्वस्थानस्वस्थानमे बुदेने बोडे उत्पन्नपुरामावि क्षेत्रं
 स्वस्थानस्वस्थानमे युतु विप्रशितवर्ष्यापपरिणतानिवं परिभ्रमितस्कुचितोत्रं विहारवत्स्वस्थानमे-
 युतु। वेदनाविषयान्दं मित्रप्ररीरवत्तणिवं जीवप्रवेशगळ्मे बहिःप्रवेशवोळु तत्रापयोष्विसत्पणं
 तामुद्रपातमे युतु। परित्यक्तपूर्व्यंभदंये उत्तरभवप्रयमसमयवोळु प्रयत्तनमनुपपावमे युतु। इतो
 स्वस्थानस्वस्थानादिद्विजनवंगळोळु स्वस्थानस्वस्थानरोळं वेदनातमुद्रपातवोळं कषायसमुद्रपातवोळं
 मारनातिरुतसमुद्रपातवोळममुपाववोळमिती पंचपवंगळोळं कृष्णलेद्याजीवंगळ्मे क्षेत्रं सव्यंजोळ-
 मेवसहुत्रमोष्यु पवंगळोळं मुन्नं सख्याधिकारवोळ्येव्व कृष्णलेद्याजीवंगळु सव्यंस्तारिजीव-
 राणिव किंचिदुन्नप्रभागंगळपुत्रवं संख्यातदिवं भागिति बहुभागंगळु स्वस्थानस्वस्थानवोळपुत्रे बु
 कोट्टु रोपेरुभागमं मत्तं संख्यातदिवं भागिति बहुभागमं वेदनासमुद्रपातवोळपुत्रे बु कोट्टु
 १० रोपेरुभागमं मत्तं संख्यातदिवं भागिति बहुभागमं कषायसमुद्रपातवोळित्तु रोपेरुभागमं
 पत्तराणियं माडि एकनिगोदजोयन एकभयापुःस्थितिप्रमाणमुच्छ्रयात्ताष्टावरीकभागमवुमुमुनुत-
 र्मंमुत्तमेवसहु २१ ॥ सा कालमं प्रमाणराणियं माडिपोबु समयमनिच्छाराणियं माडि प्र २१।
 प १३-१। इ स १ बंध सख्यभारं कृष्णलेद्याजीवंगळु उपपावववोळपुत्रे बु २२
 ३-५। ५। ५

३-५। ५। २१

गव इत्यपदेशाद्विगतानि १३- संख्यातेन भारया बहुभागः १३-४ स्वस्थानस्वस्थाने देवः। रोपेरुभागस्य
 ३- १५।

१५ कषायसमुद्रपातवोळः १३- ४ वेदनासमुद्रपाते देवः। रोपेरुभागस्य संख्यातवत्तदुभागः - १३- ४ कषा-
 ३- ५। ५।

समुद्रपाते देवः। रोपेरुभाग कषराणि इत्या, एकनिगोदभवानुच्छ्रयागशाष्टावरीकभागमवुत्तं २१
 स-राणियं माडि एक निगोदजोयन एकभयापुःस्थितिप्रमाणमुच्छ्रयात्ताष्टावरीकभागमवुमुमुनुत-
 र्मंमुत्तमेवसहु २१ ॥ सा कालमं प्रमाणराणियं माडिपोबु समयमनिच्छाराणियं माडि प्र २१।
 प १३-१। इ स १ बंध सख्यभारं कृष्णलेद्याजीवंगळु उपपावववोळपुत्रे बु २२
 ३-५। ५। ५

२५ मारनातिरुतसमुद्रपातवोळममुपाववोळमिती पंचपवंगळोळं कृष्णलेद्याजीवंगळु सव्यंस्तारिजीव-
 राणिव किंचिदुन्नप्रभागंगळपुत्रवं संख्यातदिवं भागिति बहुभागंगळु स्वस्थानस्वस्थानवोळपुत्रे बु
 कोट्टु रोपेरुभागमं मत्तं संख्यातदिवं भागिति बहुभागमं वेदनासमुद्रपातवोळपुत्रे बु कोट्टु
 ३-५। ५। ५

कषायसमुद्रपातवोळः १३- ४ वेदनासमुद्रपाते देवः। रोपेरुभागस्य संख्यातवत्तदुभागः - १३- ४ कषा-
 ३- ५। ५।

२० इव जं शीका प्रमाणं कर्तुं है—कृष्णलेद्यावाले जीवोको पूर्वांश संख्यामे संख्यातसे भाग
 देकर बहुभाग प्रमाण स्वस्थानस्वस्थानवाले है। रोप एक भागमे संख्यातसे भाग देनेपर
 जं बहुभाग जीवो उतने वेदना समुद्रपातवाते है। रोप एक भागमे पुनः संख्यातसे भाग
 देकर जो बहुभाग आये उतने कषाय समुद्रपातवाले जोर है। रोप एक भागको कषराणि
 देकर जोर उतने रोपे दियाको जानु उच्छ्रयामेके अठारहवें भाग प्रमाण अन्वमुत्तं, वनके
 २५ मारनातिरुतसमुद्रपातवोळममुपाववोळमिती पंचपवंगळोळं कृष्णलेद्याजीवंगळु सव्यंस्तारिजीव-
 राणिव किंचिदुन्नप्रभागंगळपुत्रवं संख्यातदिवं भागिति बहुभागंगळु स्वस्थानस्वस्थानवोळपुत्रे बु
 कोट्टु रोपेरुभागमं मत्तं संख्यातदिवं भागिति बहुभागमं वेदनासमुद्रपातवोळपुत्रे बु कोट्टु
 ३-५। ५। ५

मात्रघनांगुलगुणितजगच्छ्रेणीमात्रकृष्णलेःयावैक्रियिकराशिषं — ६ प संख्यातविदं भागिसि
३-०

बहुभागमं — ६ प ४ स्वस्थानस्वस्थानदोळित्तु मत्तमिते शेषव शेषव संख्यातव बहुभाग-
३-० ५

बहुभागमं गळं विहारयत्स्वस्थानदोळं — ६ प ४ वेवनासमुद्घातदोळं — ६ प ४
३-१ ५ ३-५ १ ५ १

कपायसमुद्घातदोळं — ६ प ४ दातद्वयंगळपुतु शेषैकभागं वैक्रियिकसमुद्घातदोळं दातव्य-
३-१ ५ ५ ५ ५

५ मवकु - ६ प १ मिवं यथायोग्यवैकुण्ठंणावगाहनोत्पन्न संख्यातघनांगुलगुणितं गुणिमुत्तं
३-१ ५ ५ ५ ५

विरलु घनांगुलवर्गंगुणितासंख्यातश्रेणीमात्रं वैक्रियिकसमुद्घातपददोळु क्षेत्रमन्कुं । = ० ६ । ६ ।
इंती दशपदंगळ रचनासंदृष्टिषं स्थापिसि रचनेयिदु :

भवति = मू २ १ । पुनः पत्यासंख्यातमात्रघनाङ्गुलगुणितजगच्छ्रेणि कृष्णलेःयावैक्रियिकराशिषं - ६ प अंशविते
३-०

भवत्वा बहुभागं - ६ प ४ स्वस्थानस्वस्थाने^२ दत्त्वा शेषशेषस्य संख्यातबहुभागसंख्यातबहुभागो विहा-
३-० ५

१० यत्स्वस्थाने - ६ प ४ वेदनासमुद्घाते - ६ प ४ कपायसमुद्घाते च ६ । ५ ४ पतितोऽर्थाभि-
३-० ५ ५ ३-० ५ ५ ३-० ५ ५ ५

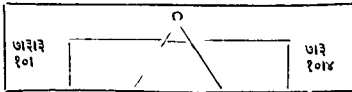
जात्वा शेषैकभागो वैक्रियिकसमुद्घाते देयः - ६ प १ अयमेव यथायोग्यवैगुणावगाहनोत्पन्नसंख्या-
३-० ५ ५ ५ ५

घनाङ्गुलगुणितः - घनाङ्गुलवर्गंगुणितासंख्यातश्रेणिमात्रं वैक्रियिकसमुद्घाते क्षेत्रं भवति - ० ६ । ६ । पुनः
सामान्याय उच्चवैतिर्यमनुष्यलोकानु पञ्च संस्थाप्यालापः क्रियते -

- वैक्रियिक समुद्घातमें क्षेत्र घनांगुलके वर्गसे गुणित असंख्यात जगतश्रेणि प्रमानं^१ ।
१५ वइ इस प्रकार है - कृष्णलेःयावत्वाले वैक्रियिक शक्तिसे युक्त जीवोंके प्रमाणको संख्यात
भाग दो । बहुभाग प्रमाण जीव स्वस्थानस्वस्थानमें हैं । शेष एक भागमें पुनः संख्यात
भाग दो । बहुभाग प्रमाण जीव विहारयत्स्वस्थानमें हैं । शेष एक भागमें पुनः संख्यात
भाग दो । बहुभाग प्रमाण जीव वेदना समुद्घातमें हैं । शेष एक भागमें संख्यातले मत
दो । बहुभाग प्रमाण जीव कपाय समुद्घातमें हैं । शेष एक भागमें संख्यातले मत
२० समुद्घातमें हैं । इस प्रकार जो वैक्रियिक समुद्घातवाले जीवोंका प्रमाण है उसको ही
यथायोग्य एक जीव सम्बन्धी वैक्रियिक समुद्घातवाले जीवोंका प्रमाण है उसको ही
घनांगुलके वर्गसे गुणित असंख्यात श्रेणिमात्र वैक्रियिक समुद्घातका क्षेत्र होता है ।

१. व. ° भागः । २. व. ° नेऽन्तीविहात्वाये ।

प्रदेश विसर्पणक्रमदिवं वृद्धियुक्तदिवं त्रिगुणितविस्तारदिवं पुष्टिव राशि मूलराशिं नोद्गु नवगुन-
 ११२
 मवकु ६।६।६।००।६।९ मां नवगुणमूलराशिं मुत्तभूमि समासात् मध्यफलमे-
 ७ ७७ ७



दु मुखं शून्यमश्रुमेके बोधे द्वितीयविकल्पं मोदलोद् प्रदेशवृद्धिरुममप्युर्वरंमा शून्यमं कृश-
 लिपिसिबोधे समीकरणवि पुष्टिव मध्यमावगाहनं नयादधनांगुलसंख्यातेरुभागमश्रुमवदिवं वेदना-

५ समुद्रपातराशियमं कपायसमुद्रपातराशियुमं गुणिसुपुदु वेद = $\frac{111 \cdot 1}{98619}$ कपाय
 ४।६५ = ५५५२

$\frac{111 \cdot 1}{98619}$ मत्तं संख्यातयोजनायाममुं सूच्यंगुलसंख्यातभागविष्कंभोत्सेधमुमागि मूल-
 ४।६५।५५५।२

संख्येयभागेन ६ हतस्तक्षेत्रं स्यात् । वेदनाकपायराशी द्वौ तत्समुद्रपातयोर्मूलराशीरात्रदेशोत्तरवृद्धपा उक्तं

विकल्पस्य त्रिगुणितव्यासस्य वातो त्रिगुणो परिहीत्याधानीत्-७।३।३।७।३।७ घनफलस्य नव-
 १०।१०।४

१० वेदना । ऐसा करनेसे प्रमाणरूप घनांगुलके संख्यातवें भाग एक देवके शरीरकी अवगाहन
 हुई । इस अवगाहनासे पहले जो स्वस्थानस्वस्थानमें जीवोंका प्रमाण कहा था उसे गुणा
 करनेपर जो प्रमाण हो उतना स्वस्थानस्वस्थानका क्षेत्र जानना ।

१५ वेदना समुद्रपात और कपाय समुद्रपातमें आत्माके प्रदेश मूल शरीरसे बाहर निकल
 कर एक प्रदेश क्षेत्रको रोकें या एक-एक प्रदेश बढ़ते-बढ़ते उत्कृष्ट क्षेत्रको रोकें तो बौद्धाईमें
 मूल शरीरसे तिगुने क्षेत्रको रोकते हैं और ऊँचाई मूल शरीर प्रमाण ही है । इसका घनत्व
 और उत्कृष्ट मूल शरीरसे नौगुणा क्षेत्रफल होता है । सो जघन्य एक प्रदेश
 शरीरसे साढ़े चार गुणा क्षेत्र हुआ । शरीरका प्रमाण पहले घनांगुलके संख्यातवें भाग कहा
 था । सो उसे साढ़े चार गुणा करनेपर एक जीव सम्बन्धी क्षेत्र होता है । उससे वेदना
 समुद्रपातवाले जीवोंके प्रमाणको गुणा करनेपर वेदना समुद्रपात सम्बन्धी क्षेत्र आता है ।
 २० तथा कपाय समुद्रपातवाले जीवोंके प्रमाणसे गुणा करनेपर कपाय समुद्रपात सम्बन्धी क्षेत्र
 आता है । विहार करते हुए देवोंके मूलशरीरसे बाहर आत्माके प्रदेश फैलें तो वे प्रदेश एक
 जीवकी अपेक्षा संख्यात योजन तो लम्बे और सूच्यंगुलके संख्यातवें भाग प्रमाण चौड़े व
 ऊँचे क्षेत्रको रोकते हैं । इसका क्षेत्रफल संख्यात घनांगुल प्रमाण होता है । इससे पूर्वमें कई
 विहारवत्स्वस्थानवाले जीवोंके प्रमाणको गुणा करनेपर सब जीवोंके विहारवत्स्वस्थान

२५ १. म राशि ७।३।३।७।३।७ मूल । २. म मा मूल ।
 १०।१०।४

मुत्तिल्लु तेजःसमुद्घातक्षेत्रमक्कुं ६२। ७। मतं सूच्यंगुलसंख्यातेकभागविक्रमभोत्सेधुं संख्या-
योजनायामक्षेत्रघनफलं २ २ लब्धसंख्यातयनांगुलप्रमितं संख्यातजीवंगुलिं गुणिसुतं विल्लु

१ १
यो १

आहारसमुद्घातक्षेत्रमक्कुं ६। १। १।

मरदि असंखेज्जदिमं तस्सासंखाय विग्गहे होति ।

तस्सासंखं दूरे उववादे तस्स खु असंखं ॥६४४॥

५

ई मूनाभिप्रायमेते दोडे उपपादक्षेत्रं तरल्येडि सोधमंज्ञानरूपद्वयद जीवराशिघनांगु-
लुतोपमूलगुणितजगच्छ्रेणिप्रमितमक्कुं ३ ॥

ई राशियं पत्यासंख्यातदिदं खंडित्तदेकभागं प्रतिसमयं त्रियमाणराशिघनकुं -३ मतमं
५
३

- $\frac{५१}{३} \frac{५१}{३} १।१०१। - ४$ पुनर्दादयोजनायामनवयोजनविक्रमभूत्रभूत्र
३।११

१० ५।५५ = ८१। १०। १०१। ५५५
३३३

संख्यातभागोत्सेध २। ९ यो क्षेत्रघनकं संख्यातयनांगुलप्रमितं ६ १ संख्यातजीवंगुणितं तत्रसमुद्घातधे-
१।
यो १२

परं १। ९। १। १। पुनः सूच्यंगुलसंख्यातेकभागविक्रमभोत्सेधसंख्यातयोजनायामक्षेत्रस्य २। २ पतनं
१। १
यो १

संख्यातयनांगुलप्रमितं ६ १ संख्यातजीवंगुणितं आहारकसमुद्घातधेनं भवति ६ १। १। ५५५॥

अत्रार्योः उपादक्षेत्रघनानुं सोधमंज्ञानरूपो यनांगुलुतोपमूलगुणितजगच्छ्रेणिप्रमिते - ३ पण-

१५ हरवेदांशके प्रमाण संख्यातको गुणा करनेपर तेजस समुद्घात सम्बन्धी क्षेत्र आता है।
आहारक समुद्घातमें एक जोरके प्रदेश सरोरसे याहर निकलनेपर संख्यात योजन प्रमात्र
उधे और सूच्यंगुलके संख्यातके भाग पीडे उंचे क्षेत्रको रोक्ते हैं। इसका घनक्षेत्र
संख्यात घनमूल होता है। इसमें आहारक समुद्घातवाले जीवांशके प्रमाण संख्यातको गुणा
करनेपर आहारक समुद्घातका क्षेत्र होता है ॥५४३॥

२० इस माथाका अभिप्राय उपादक्षेत्र माना है। पीतलेदयावाले सोधमं ईमानवर्ता जंइ
संख्यातको दूर क्षेत्रवर्ता है। अतः घनके घनमें क्षेत्रका परिमाण पट्टत आता है। अतः

संख्यातसूत्र्यंगुलविष्कम्भोत्सेधद्वचर्द्धरज्वायतक्षेत्र २१ २१ घनफलदिवं संख्यातप्रतरांगुलगुणित-
 $\frac{3}{2}$

द्वचर्द्धरज्जुगण्डिवं - ३।४१ गुणितुलं विरलु उपपादक्षेत्रमरुं - ३ प - ३।४१ प-
 $\frac{3}{2}$ $\frac{3}{2}$
 प प प प प।७२
 ० ० ० ० ०

लेदयेषोळु पद्मलेश्याजीवराशिय संख्यातदिवं भागिसि बहुभागं स्वस्थानस्वस्थानपदबोद्धितु
 = ४ शेषैकभागं मत्त संख्यातदिवं भागिसि बहुभागं विहारवत्स्वस्थानबोद्धितु

४।६५ = १।६।५

= ४।

शेषैकभागं मत्तं संख्यातदिवं भागिसि बहुभागं वेदनासमुद्घातपद-

४।६५ = १।६।५।५

बोद्धितु = ४

४।६।५ = १६।५।५।५

बद्धिकमल्लि प्रथमराशियं द्वितीयं द्वितीयराशियुं क्रोशायाम तन्नयमभागमुखविष्कम्भितियंजोवा-

राशियंभवति— ३। प प १ १ अस्मिन् समीकरणकृततियंजोवमुखप्रमाणसंख्यातसूत्र्यंगुलविष्कम्भोत्से-
 $\frac{3}{2}$ $\frac{3}{2}$
 प प प प प
 ० ० ० ० ०

धद्वचर्द्धरज्ज्वायतक्षेत्रघनफलेन २ १।२ १ संख्यातप्रतराङ्गुलगुणितद्वचर्द्धरज्जुप्रमितेन — ३।४।१ गुणितं
 $\frac{3}{2}$ ७।२

१० उपपादक्षेत्रं भवति— ३ प प - ३।४।१। पद्मलेश्यायां तज्जीवराशो संख्यातमत्तबहुभागः स्वस्थान-
 $\frac{3}{2}$ $\frac{3}{2}$ ७।२
 प प प प प
 ० ० ० ० ०

स्वस्थाने देयः— ४ शेषैकभागस्य संख्यातमत्तबहुभागो विहारवत्स्वस्थाने देयः—
 ४।६५ = १६।५

॥ ॥
 ४।६५ = १६।५।५ शेषैकभागस्य संख्यातमत्तबहुभागो वेदनासमुद्घाते देयः— ४
 ४।६५ = १६।५।५।५

१५ फी मुख्यतासे एक जीव सम्यन्धी प्रदेश फेलेनेकी अपेक्षा देद राज् लम्बा संख्यात सूत्र्यंगुल प्रमाण धौडा ऊँचा क्षेत्र हे। इमका घनक्षेत्रफत्र संख्यात प्रतरांगुलसे देद राज्को गुणा करने पर जो प्रमाण हे वतना हे। इससे उपपाद जीवैक प्रमाणको गुणा करनेपर उपपाद सम्बन्धी क्षेत्र आता हे। यह पीतलेदयामे क्षेत्रका कथन किया। अथ पद्मलेश्यायामे करते हैं—
 पद्मलेश्यावाले जीवोको संख्यामे संख्यातका भाग देकर बहुभाग स्वस्थानस्वस्थानमें जानना। एक भागमे पुनः संख्यातमे भाग देकर बहुभाग विहारवत्स्वस्थानमे जानना। शेष एक भागमे संख्यातसे भाग देकर बहुभाग वेदना समुद्घातमे जानना। शेष रहा एक

वेदनासमुद्घातपदबोद्धं वरियुतु -४ शेषैकभाग संख्यातबहुभागं कषायसमुद्घातपदबोद्धं
११५।५।५।५।

वरियुतु -४ शेषैकभागं वैक्रियिकसमुद्घातपदबोद्धं - १ मा राशि-
११५।५।५।५।५

घना जीवंगत्तु विगुब्धिसिद्धं गजादिनरीररावगाहनसंख्यातघनांगुलंगत्तु गुणिसुत्तं विरलु वैक्रियिक-
समुद्घातपदबोद्धं क्षेत्रमवकु - ६३ मो राशिघने "मरदि असवेष्ट्रदिमं तस्सासंख्यं
११।५।५।५।५

विगहे होति तस्सासंखं दूरे उववादे तस्स सु असंखं ॥" एवितु पत्त्यासंख्यातभागादिदं भागिसुत्तं
निरलेरुभागं प्रतिसमयं प्रियमाणजीवप्रमाणमवकु = १ मत्तं पत्त्यासंख्यातविदं भागिसिद्धं बहु-
११।५
०

भागं विप्रहगतिय जीवप्रमाणमवकुं - प मत्तमिदं पत्त्यासंख्यातविदं भागिसिद्धं बहुभागं मारणां-
०
११ प प
० ०

वेदनासमुद्घाते ११।५।५।५।५ कषायसमुद्घाते च पतितोऽस्तीति ज्ञात्वा ११।५।५।५।५ शेषैकभागे
वैक्रियिकसमुद्घाते देय ११।५।५।५।५ अस्मिन् तत्रोवविकुचितगजादिनरीरावगाहनसंख्यातपदबोद्धं
- ६३

१० उत्समुद्घातधेवं भवति ११।५।५।५।५ पुनस्तस्मिन्नेव सनरकुमारमादेष्टदेवराशौ—
मरदि असवेष्ट्रदिमं तस्सासंख्यं य विगहे होति । तस्सासंखं दूरे उववादे तस्स सु असंखं ॥

एतं पत्त्यासंख्यातपदबोद्धं भागः प्रतिसमयं प्रियमाणजीवप्रमाणं भवति ११।५।५।५ पुनः पत्त्यासंख्यातपद-
बहुभागे विरलुवित्तिय जीवप्रमाणं भवति - ५ पुनः पत्त्यासंख्यातपदबहुभागो मारणान्ति हसमुद्घातपदबहुभागं
११ ०।
५ ५
० ०

मारद्वयं वर्गमूलमे जगत्येति को भागं देनेपर जो प्रमाण आये उतनी है । इस राशिमें
१५ संख्यातमे भागं देकर बहुभाग प्रमाण स्वस्थानस्वस्थानमें जीव जानना । शेष रहे एक भागमें
पुनः संख्यातमे भागं देकर बहुभाग विहारवत्स्वस्थानमें जीव जानने । शेष रहे एक भागमें
पुनः संख्यातमे भागं देकर बहुभाग वेदना समुद्घातमें जानना । शेष रहे एक भागमें पुनः
वैक्रियिक समुद्घातमें जीव जानना । इतने-इतने जीव इनमें होते हैं । इन वैक्रियिक समुद्-
१० घातपदबोद्धं भागं प्रतिसमयं प्रियमाणजीवप्रमाणं भवति ११।५।५।५ पुनः पत्त्यासंख्यातपद-
बहुभागे विरलुवित्तिय जीवप्रमाणं भवति - ५ पुनः पत्त्यासंख्यातपदबहुभागो मारणान्ति हसमुद्घातपदबहुभागं
११ ०।
५ ५
० ०

बोर्डे द्वितीयपवबोळु क्षेत्रमवकुं ५४।६।१ वैक्रियिकसमुद्घातपंचमजीवरागियं स्वस्वयोम
 ०५५
 मागिविगुंधिसिव शरीरावगाहनंगळिबंधं लघ्यसंख्यातघनांगुलंगळिबंधं गुणिसिबोडे वैक्रियिकसमुद्घ
 पवबोळु क्षेत्रमवकुं ५ ६१ मत्तं मारणातिकसमुद्घातपवबोळु रज्जुपट्कायामसंख्यां
 ०५५५५
 संख्यातभागविष्कंभोत्सेध २ २ क्षेत्रघनफलमिदे — ६।४ कजीवप्रतिघट्टमस्कुनी क्षेत्रं
 $\frac{११}{७६}$ ७।१

५ मानतादिदेवचरण्यो मनुष्यरोळेंपुत्पत्तिनियममपुदरिबंधं च्युतकल्पबोळु संख्यातजीवंगळे मर
 मनेष्टुबुवडु कारणमागि संख्यातजीवंगळिबंधं गुणिसिबोडे मारणातिकसमुद्घातक्षेत्रघनम
 १७।६।४ तैजससमुद्घातपवबोळं आहारकसमुद्घातपवबोळं पचलेश्रयेमोळ्येढदंते क्षेत्रंगळु
 ११
 ते १।६।१।आ १।६।१। केवलिसमुद्घातपवबोळु क्षेत्रं पेळ्लपडुगु मवेवंतोडेल्लि दंडत्तु

क्षेत्रघनफलसंख्यातघनाङ्गुलैः ६१ गुणिते विहारवत्स्वस्थाने क्षेत्रं भवति ५।४।६१। पुनः पत्रघन
 ०५५।

१० स्वस्वयोग्यतया विकुवितशरीरावगाहलघ्यसंख्यातघनाङ्गुलैः ६१ गुणिते वैक्रियिकसमुद्घातपदे क्षे
 भवति ५।६१
 ०५।५।५५

पुनः रज्जुपट्कायामसूच्यङ्गुलसंख्यातभागविष्कंभोत्सेध २।२ क्षेत्रघनफलमेकजीवप्रतिबंधं भवति
 $\frac{११}{७६}$

— ६।४ अस्मिन्मानतादिदेवानी मनुष्येभ्योत्वत्तेस्तत्र संख्यातरेव त्रियमाणैर्गुणिते मारणान्त्रिकसमुद्घातक्षे
 ७।१

भवति १।७६।४ तैजसाहारकसमुद्घातक्षेत्रं पचलेश्रयावत् ।—तं १।६१।आ १।६१ केवलि

१५ विहारवत्स्वस्थान सम्बन्धी क्षेत्र होता है। तथा अपने-अपने योग्य विक्रियारूप बनाये गये
 हाथी आदिके शरीरकी अवगाहना संख्यात घनांगुल है। उससे वैक्रियिक समुद्घातवाले
 जीयोंके प्रमाणको गुणा करनेपर वैक्रियिक समुद्घातमें क्षेत्रका प्रमाण आता है। शुक्ललेना
 धानवादि स्वर्गोंमें होती है। सो आरण अच्युतकी मुख्यतासे वहाँसे मध्यलोक छह राजू
 है। अतः वहाँसे मारणान्त्रिक समुद्घात करनेपर एक जीवके प्रदेश छह राजू लघ्वे और
 २० सूच्यंगुलके संख्यातबंधं भाग चौड़े-ऊँचे होते हैं। उसका जो क्षेत्रफल एक जीवको अपेक्षा हुआ
 उसको संख्यातसे गुणा करना, क्योंकि आनवादिकसे मरकर देव मनुष्य ही होता है। इत्
 मारणान्त्रिक समुद्घात सम्बन्धी क्षेत्र आता है। तैजस और आहारक समुद्घात सम्बन्धी
 क्षेत्र पचलेश्रयामें जैसा कहा है वैसा ही ज्ञानना। अब केवलिसमुद्घातमें क्षेत्र कहते हैं—
 २५ १. म. ग. ग. ग. ग.

| केवलि स वं | उपपाद | | | |
|------------|---|------------|------------------------------|------------|
| | $\begin{array}{c} \overline{प} \quad \overline{प} \\ a \quad a \\ प \quad प \quad प \quad प \\ a \quad a \quad a \quad a \end{array}$ | ७२ | ३१४७ | |
| | $\begin{array}{c} \overline{प} \quad \overline{प} \quad \overline{उ} \\ a \quad a \\ ११ प \quad प \quad प \quad प \\ a \quad a \quad a \quad a \end{array}$ | ३१४७ | | ७-६१७ ७ |
| स्थित बंध | पू स्थि = क = | उत्थित क = | प्रतर | |
| - ४१८६४० | = सू २१२६० | = २१४८० | $\equiv \frac{०}{a \quad a}$ | |
| आसीन बंध | पू आसीन क | आसीन क | लोकपूर | |
| ५-४१७७६० | = सू २१२८८० | = २११४४० | \equiv | |

स्पर्शाधिकारं सार्द्धगायावत्कविं पेद्बधं:—

क्तासं सच्चं लोयं तिद्वाणे असुहलेस्साणं ॥५४६॥

स्पर्शः सध्वलोकप्रित्याने अनुभलेस्यानां ॥

अनुभलेस्यात्रमर्के स्वस्थानमेवं समुद्रपातमेवं उपपादमेवितु सामान्यविदं प्रित्यानामु

१० मल्लिया प्रित्यानादोळं स्पर्शः स्पर्शं सध्वंलोकः सध्वंलोकमक्कुं ॥ विदोषवि स्वस्थानस्वस्थानादि-
दगपवंगळोळं स्पर्शं पेट्स्वुगुं ।

स्पर्शं बुदेनें बोद्धे स्वस्थानस्वस्थानादिवदगपवंगळोळं विवक्षितपदपरिणतंगळप्य जीवंपांशं
वर्तमानभेदप्रहितमागियतीतकालदोळं स्पृष्टक्षेत्रं स्पर्शंमिबुदक्कुमल्लि अन्नेवरं कृष्णलेस्यात्रोयंल्ले
स्वस्थानस्वस्थानवेदना कृपाय मारणान्तिरु उपपादमेवं पंचपवंगळोळं स्पर्शं सध्वंलोकमक्कुं विहा-

१५ अनुभलेस्यात्रस्य स्वस्थानममुद्रपातोपादनामाभ्यस्थानचने स्पर्शः विवक्षितपदपरिणतं वर्तमानभे-
दप्रित्यानादोळं स्पर्शः सध्वंलोकः ॥ विदोषेण तु दगपदेण उच्यते । तत्र कृष्णलेस्यात्रोयंल्ले
स्वस्थानस्वस्थानवेदना कृपाय मारणान्तिरु उपपादमेवं पंचपवंगळोळं स्पर्शं सध्वंलोकमक्कुं विहा-

आगे माङ्गे उह गाथाओंसे स्पर्शाधिकार कहते हैं—

२० धेप्रमे गो केवठ वर्तमान काळमें रोके गये दोत्रका ही महण होता है किन्तु सज्जे
वर्तमान धेव महिन अतीत काळमें स्पृष्ट धोत्रका महण होता है । अतः तीन अनुभ लेस्याओंके
स्पर्श स्वस्थान, समुद्रात् और उपपाद् इन तीन सामान्य स्थानोंमें सर्वलोक होता है । किन्तु
कृष्णलेस्यात्रोयंल्ले कहते हैं—उनमेंसे स्वस्थान स्वस्थान, वेदना-समुद्रात्, कृपाय-समुद्रात्,
मारणान्तिरु और उपपाद् इन पाँच स्थानोंमें कृष्णलेस्यात्रोयंल्ले जीवोंका स्पर्श सर्वलोक है ।
विहारकाभ्यन्तरेमें एक रात्रु उग्या य शौका और मंस्यात् सूच्यंगुत् उंपा विपंत्तं जे

नोडलुमसंख्यातगुणं क्षेत्रं स्पृष्टं वैक्रियिकपदबोद्धुं कृष्णलेश्याजीवर्गच्छिदं कियत् क्षेत्रं स्पृष्टं पूर्वं लोकंगळ संख्यातैकभागं । त्रिप्यंग्लोकमुमं मनुष्यलोकमुमं नोडलुमसंख्यातगुणं क्षेत्रं स्पृष्टं । इते नीललेश्ययोळं कपोतलेश्ययोळं वक्तव्यमत्रकुं ।

तेजोलेश्याप्रस्थानबोद्धुं सामान्यदिवं स्पर्शं पेञ्चदशं गाथाद्वयदिवं :—

५ तेउत्स य सट्टाणे लोगस्स असंख भागमेत्तं तु ।

अड चोद्दस भागा वा देखणा हौंति गियमेण ॥५४६॥

तेजोलेश्यायाः स्वस्थाने लोकस्यासंख्यभागमात्रं तु । अष्ट चतुर्वदशभागा वा देशाना भवन्ति नियमेन ॥

तेजोलेश्येय स्वस्थानबोद्धुं स्पर्शं स्वस्थानस्वस्थानापेक्षेयि लोकद असंख्यातभागमात्रमत्रकुं ।

१० तु मत्ते अष्टचतुर्वदशभागंगळं मेणुं किंचिद्वनंगळपुणु नियमदिवं विहारयत्स्वस्थानादिवत्तुःपदंगळं विवक्षित्ति :—

एवं तु समुद्घादे नवचोद्दसभागयं च किंचूणं ।

उववाद्दे पठमपदं दिवड्ढचोद्दस य किंचूणं ॥५४७॥

एवं तु समुद्घाते नव चतुर्वदशभागकं च किंचिद्वनं । उपपादे प्रथमपदं द्वपदं चतुर्वदश-

१५ भागः किंचिद्वनः ॥

समुद्घातबोळं स्वस्थानबोळपेञ्चदशं किंचिद्वनं अष्टचतुर्वदशभागं किंचिद्वननवचतुर्वदश-
भागमु स्पर्शमत्रकुं । मारणांतिकसमुद्घातापेक्षेयिदं उपपादबोद्धुं प्रथमपदं द्वपदं चतुर्वदशभागं
किंचिद्वनं स्पर्शमत्रकुं इंतु सामान्यदिवं तेजोलेश्येणे त्रिस्थानबोद्धुं स्पर्शं पेञ्चत्पट्टु ।

भवति ५ अत्र तैजसाहारकेवलिसमुद्घाताः पुनः न संभवन्ति । अत्रापि पञ्च लोकान् संस्थाप्य आत्म-
३४३

२० कर्तव्यः । एवं नीलकपोतरपि वक्तव्यम् ॥५४५॥ अथ तेजोलेश्यायां गाथाद्वयेनाह—

तेजोलेश्यायः स्वस्थाने स्पर्शः स्वस्थानात् स्वस्थानापेक्षया लोकस्यासंख्येयभागः । तु-पुनः, अष्टचतु-
दशभागाः अथवा किंचिद्वना भवन्ति नियमेन विहारस्वस्थानापेक्षया ॥५४६॥

समुद्घाते स्वस्थानवत् किंचिद्वनाष्टचतुर्वदशभागः किंचिद्वननवचतुर्वदशभागश्च स्पर्शं भवति मारणात्कि-
समुद्घातापेक्षया । उपपादपदे द्वपदं चतुर्वदशभागः किंचिद्वनः इति सामान्येन तेजोलेश्यायास्त्रिस्थाने स्पर्शं

२५ लम्ब्या-चौड़ा तथा पाँच राजू ऊँचा क्षेत्र हुआ । उसका क्षेत्रफल लोकके संख्यातवें भाग हुआ । यही वैक्रियिक समुद्रातमें स्पर्श जानना । इस कृष्णलेश्यामें आहारक, तैजस और केवलि समुद्राव नहीं होते । यहाँ भी पाँच लोकोंकी स्थापना करके यथासम्भव गुणकार भागहार जानना । कृष्णलेश्याकी ही तरह नीललेश्या और कपोतलेश्यामें भी कथन करना ॥५४५॥
तेजोलेश्यामें दो गाथाओंसे कहते हैं—

३० तेजोलेश्याका स्वस्थानमें स्पर्श स्वस्थानस्वस्थान अपेक्षा लोकका असंख्यातवर्वा भाग है । और विहारस्वस्थानकी अपेक्षा नियमसे प्रसनालीके चौदह भागोंमें-से कुछ कम आठ भाग स्पर्श होता है ॥५४६॥

समुद्रातमें स्वस्थानकी तरह प्रसनालीके चौदह भागोंमें-से कुछ कम आठ भाग स्पर्श है । मारणात्कि समुद्रातकी अपेक्षा प्रसनालीके चौदह भागोंमें-से कुछ कम नौ भाग प्रमाण

१९०४। वाराणसी चतुरश्रीतिथिप्रतिमांगण्डपुपु ४८३८८।
 बोड्डासमपुत्र पंचनवतिसहस्रकलशप्रमितंगण्डपुपु १९५०७२। शीखरद्वीपको
 प्रथीतिसहस्रप्रतिमांगण्डपुपु ७८३३६०। तरुणवोड्ड ५।
 पंचशतचतुरश्रीतिप्रमितंगण्डपुपु ३१३९५८४। एवं स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यन्तं नेतव्यंगण्डपु।

- ५ ३१३९५८४। स
- ७८३३६०। क्षे
- १९५०७२। स
- ४८३८४। वा
- ११९०४। स
- १० २८८०। घ
- ६७२। स
- १४४। वा
- २४ लं ल
- १। ज

ई खंडगण्ड साधियुक्करण सूत्रप्रथमः—

- १५ बाहिरसूईवर्गं अन्तरसूईवर्गपरिहोणं ।
 जंबूवासविभक्ते तत्तियमेत्ताणि खंडाणि ॥ —त्रि. सा. ३१६ गा. ।
 बाहिरसूई ५ ल। वर्गं ५ ल। ५ ल। गुणिते । २५ ल ल। अन्तरसूई १ ल। वा।
 ल। १ ल। परिहोणं । २४। ल ल। जंबूवास १ ल ल। विभक्ते २४ ल ल तत्तियमेत्ता
 खंडाणि २४ । १ ल ल
- २० रुक्म्य सला वारस सलागुणिते वु वळखळंडाणि ।
 बाहिर सूई सलागा कदी तदंता खिला खंडा ॥

तत्समुद्रे एकादशहस्रनवशतवत्वारि ११९०४। वाराणसीको अष्टवत्वारिदासहस्रप्रतिमाचतुरश्रीतिः ४८३८८
 तत्समुद्रे एकलशपञ्चनवतिसहस्रप्रतिमासतिः १९५०७२। शीखरद्वीपे सलधाम्यश्रीतिसहस्रप्रतिमासतिः ७८३३६
 तदर्थे एकत्रिलक्षशंकोनवत्वारिदासहस्रपञ्चशतचतुरश्रीतिः । ३१३९५८४ एवं स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यन्तं
 २५ स्थानि । वदानपनपुत्रयं बाहिरसूई ५ ल, वर्गं ५ ल ५ ल, गुणिते पञ्चीस ल ल, अन्तरसूई १ ल,
 १ ल १ ल, गुणिते ल ल परिहोणं २४ ल ल, जंबूवास १ ल ल, विभक्ते २४। ल ल अपवतिवे तत्तियमेत्ता
 १। ल ल

प्रमाण बाड चीनीस खण्ड होते हैं। धातकी खण्डमें एक सौ चवाळीस खण्ड होते हैं। का
 समुद्रमें एड सी बहत्तर खण्ड होते हैं। पुष्कर द्वीपमें दो हजार आठ सौ अस्सी खण्ड
 हैं। पुष्कर समुद्रमें ग्यारह हजार नौ सौ चार खण्ड होते हैं। वाराणसी द्वीपमें अड़वा
 १० हजार तीन सौ चौरासी खण्ड होते हैं। वाराणसी समुद्रमें एक लाख पनचानवे हजार वा
 खण्ड होते हैं। शीखर द्वीपमें सात लाख विरामी हजार तीन सौ साठ खण्ड होते हैं।
 वर समुद्रमें इकतीस लाख उनवाळीस हजार पाँच सौ चौरासी खण्ड होते हैं। इस प्र
 स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त लाना चाहिये। इसके लानेके लिए तीन सूत्र हैं। वदन
 खण्डसमूहकी बाद्य सूची पाँच लाख योजना, उसका वर्ग पचास लाख लाख योजना।
 १५ समुद्रकी अन्तर सूची एक लाख योजना। उसका वर्ग एक लाख लाख योजना। घटा

प्रतरांगुलदिवं गुणिति वल्लिक्कं :—

विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि हीणरूधाणि ।

तेसि अण्णोण्हवे हारो उप्पण्णरासिस्स ॥

एतु लक्षयोजनच्छेदमात्रद्विकद्वयंगल संवर्गजनितलक्षयोजनवर्गदिवं धेरुयोजनगुलच्छेद-

- ५ मात्रद्विकद्वयसंवर्गजनितएकयोजनागुलंगल वर्गदिवं मेरुमध्यच्छेदमोवर द्विकवर्गदिवं जल-
चरसहितसमुद्रप्रयशलाकाप्रयद गुणोत्तरगुणितघनप्रमितदिवं १६। १६। १६ गुणित्त्वं
प्रतरांगुलदिवं भागिति भाज्यभागहारंगळं निरोक्षिति :—

जम्बूद्वीपक्षेत्रफलयोजनाङ्गुलवर्गप्रतराङ्गुलैः संगुण्य पश्चात्—

विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि हीणरूधाणि ।

१०

तेसि अण्णोण्हवे हारो उप्पण्णरासिस्स ।

इति लक्षयोजनच्छेदमात्रद्विकद्वयैर्जातलक्षयोजनवर्गेण एकयोजनाङ्गुलच्छेदमात्रद्विकद्वयैर्जनितैर्योजनान्तर-
वर्गेण मेरुमध्यच्छेदस्य द्विकवर्गेण जलचरसमुद्रशलाकाप्रयस्य गुणोत्तरपनेन च १६। १६। १६ इत्यन्तपद्युक्ते

- गुणकार वर्गरूप होता है अतः सात लाख अड़सठ हजारका दो बार गुणा करना होता है।
सूर्यगुलके वर्गको प्रतरांगुल कहते हैं अतः इतने प्रतरांगुलोंसे उक्त राशिको गुणा करना।
१५ पश्चात् 'विरलिदरासीदो' इत्यादि करणसूत्रके अनुसार द्वीप समुद्रोंके प्रमाणमेंसे राशुके
अर्धच्छेदोंमेंसे जितने अर्धच्छेद पढाये हैं उनके आधे प्रमाणमात्र गुणकार सोलहके
परस्परमें गुणा करनेसे जो प्रमाण हो चसे उक्त राशिका भागहार जानना। सो यहाँ जिसका
आधा ग्रहण किया उस सम्पूर्ण राशि प्रमाण सोलहके वर्गमूल चारको परस्परमें गुणा करनेसे
भी वही राशि आती है। सो अपने अर्धच्छेद प्रमाण दो-दोके अंकोंको परस्परमें गुणा करनेसे
२० विषयवित्त राशि होती है। यहाँ चार कहे हैं अतः इतने ही मात्र दो बार दो-दोके अंकोंके
परस्परमें गुणा करनेसे विषयवित्त राशिका वर्ग आता है। तदनुसार यहाँ लाख योजने
अर्धच्छेद प्रमाण दो बार दो-दोके अंकोंको रखकर परस्परमें गुणा करनेसे एक लाखका
वर्ग आता है। एक योजनके अंगुलके अर्धच्छेद मात्र दो बार दो-दोको रखकर परस्परमें
गुणा करनेसे एक योजनके अंगुल सात लाख अड़सठ हजारका वर्ग आता है। नेहके उत्तर
२५ आनेवाले एक अर्धच्छेद मात्र दो दुओंको परस्परमें गुणा करनेसे चार हुआ। सूर्यगुलके
अर्धच्छेदमात्र दो-दोको रखकर परस्परमें गुणा करनेसे प्रतरांगुल हुआ। ये सब भागहार होते
हैं। तथा जलचरवाले तीन समुद्र गच्छमेंसे कम किये हैं अतः गुणोत्तर सोलहका तीन बार
भाग होता है। इस प्रकार जगत्पतरमें प्रतरांगुल, दो, सोलह, चौबीस और सात सो नने
३० करोड़ छठन लाख, पौरानये हजार, एक सौ पचास तथा सात लाख अड़सठ हजार,
सात लाख अड़सठ हजार तो गुणकार हुआ। तथा प्रतरांगुल, सात, सात, पन्द्रह, एक लाख,
एक लाख, तथा सात लाख अड़सठ हजार, सात लाख अड़सठ हजार और चार और
सोलह-सोलह-सोलह भागहार हुआ। इनमेंसे प्रतरांगुल, दो बार सोलह, दो बार सात
लाख अड़सठ हजार ये गुणकार और भागहारमें समान हैं अतः इनका अपवर्तन हो जाता
है। गुणकारमें दो और चौबीसको परस्परमें गुणा करनेसे अड़तालीस होते हैं, तथा अन्य

११

१. अ छेःपन ।

वर्गोद्विदं प्रतरांगुलद्विदं गुणिसि वञ्चिकं "विरञ्जिवरासीवो पुण जेतियमेत्ताणि होणस्सणि।
 तेसि अण्णोण्हवे हारो उप्पणरासिस्स" एवु ओट्टु लक्षयोजनंगञ्जिदं एरुयोजनंगुलंदिदं
 मेरुमध्यच्छेदद्विकद्विदं जलचरसहितसमुद्रशालाकात्रयजनितगुणोत्तरघनद्विदं । ४।४। १
 सल्पट्ट सूच्यंगुलं भागहारमत्रकु १६।४। २४। ७९०५६९४१५०। ७६८०००। ७६८००० नित्त
 ७३।२।१ ल। ७६८०००। २।४।४।४।

१ पर्वत्तिसिदोडे संख्यातसूच्यंगुलप्रमितजगच्छ्रेणिगच्छपुववं २१ किच्चिद्वनं माडिदोडिनु = १

गुणेन द्विने - ३ मुद्देण १६। गुणवम्मि गुणगणियं - ३। १६। इदं चतुविंशतिसण्डजन्मूदीपेत्तं
 नारगुत्तमंजतसद्गुलैः संगुण्य पश्चात्—

विरञ्जिवरासीवो पुण जेतियमेत्ताणि होणरूपाणि ।
 तेषि अण्णोण्हवो हारो उप्पणरासिस्स ॥

१. इति लक्षयोजनंरक्षयोरनाद्गुलैर्मैच्छेदस्य द्विकेन समुद्रशालाकात्रयजगुणोत्तरघनेन च । ४।४।४।
 दसगुण्यद्विनेन भरत्या— १६।४। २४। ७९०५६९४१५०। ७६८०००। ७६८००० अन्तर्गते क्कम्
 ७३।२।१ ल। ७६८०००। २।४।४।४।
 गुण्यद्विकमितजगच्छ्रेणिमात्रं भवति - २१। अनेन किच्चिद्वनितं = १ पूर्वोक्तं साधिकथनरूपनकवपयत्तं
 १२३९

इमसे गुणा करे । ऐसा करनेसे एक कम जगतश्रेणिको सोलहका गुणकार व सात को
 वीनका भागहार हुआ । इमको पूर्वोक्त प्रकारसे चौबीस सण्ड, जम्बूद्वीपके शेषद्वय का
 योजनोके प्रमाण और एक योजनके अंगुलीके वर्ग तथा प्रतरांगुलीसे गुणा करो । परत
 'विरञ्जिवरासीवो' इत्यादि सूत्रके अनुसार गच्छमेसे जितने राजूके अर्धच्छेद पटने
 इमका आधा प्रमाण चारके अंकोको परस्परमें गुणा करनेसे जो प्रमाण हो उतना भाग
 जानना । जिस राशिका आधा प्रमाण किया उस राशिमात्र चारके वर्गमूल दोको परतसे
 गुणा करनेपर एक लाख योजनके अर्धच्छेद प्रमाण दुओंको परस्परमें गुणा करनेसे एक अ
 १२ । एक योजनके अंगुलीके अर्धच्छेद प्रमाण दुओंको परस्परमें गुणा करनेसे का
 लाख अड़सठ हजार अंगुल हुए । मेरुके मध्यमें एक अर्धच्छेदके दूने दो हुए । मूरुके
 अर्धच्छेद प्रमाण दुनीको परस्परमें गुणा करनेसे मूरुचंगुल हुआ । ये सब भाग
 १२ । तीन समुद्र चतुरोरे से सो वीन चार गुणोत्तर चारका भी भागहार जानना ।
 २० दस अड़सठ जगतश्रेणिको सोलह, चार, चौबीस, और सात से नब्बे करोड़ अ
 लाख चौरसठ हजार एक सौ पचास तथा सात लाख अड़सठ हजार और न
 २१ दस अड़सठ हजारका तो गुणकार हुआ । तथा सात, वीन, और मूरुचंगुल और
 दस, और सात लाख अड़सठ हजार तथा दो, चार, चार, चारका भागहार हुए
 १ हजार ७६८००० ७६८००० ७६८००० ७६८००० । अथवर्तन करनेपर सप्त
 ७३।२।१ ल। ७६८०००। २।४।४।४।

तत्सम्पत्त्वं सरागवोतरागात्मविषयत्वविभं द्विप्रकारवर्तमे' यत्पदुगुं । पूर्व्वं मोदल सराग-
त्मविषयसम्पत्त्वं प्रशमादिविगुणं प्रशमसंवेगानुर्कपास्तिरयाभिव्यक्तियोज्ज्वलितुवु । परं द्विती-
योतरागात्मविषयसम्पत्त्वं आत्मविमुद्धितः प्रतिपक्षप्रधायननितजीयविमुद्धितविषयमावु । आस्तिस्त्वं
युवेने बोधे :-

५ आग्ने ऋते श्रुते तत्त्वे चित्तमस्तित्वसंयुतं ।
आस्तिप्रयमास्तिकेयत्वं सम्पत्त्वेन युते नरे ॥ —[गो. उ. २३१ श्लो.]

अथवा तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्पत्दर्शनं अथवा तत्त्ववचिः सम्पत्त्वम् ॥

“प्रदेशप्रचयात्कायाः द्रवणात् द्रव्यनामकाः ।

परिच्छेद्यत्वतस्तेऽर्थास्तत्त्वं वस्तुस्वरूपतः ॥” —[]

१० एतदित्तु सामान्यवि पंचास्तिकायपद्द्रव्य नवपदात्तयंगळो लक्षणमरकं ।

अनंतरं पद्द्रव्यंगळगधिकारनिर्देशं माद्विदपं :-

छद्द्रव्येषु य णामं उवलक्षुणुवाय अत्यणे कालो ।

अत्यणखेत्तं संखा ठाणसरूवं फलं च हवे ॥५६२॥

१५ पद्द्रव्येषु च नामानि उपलक्षणानुवादः आसने कालः । आसनेभ्यं संख्यास्थानस्वरूपं कं
च भवेत् ॥

पद्द्रव्यंगळो नामंगळमुपलक्षणानुवादमुं स्थितियं क्षेत्रमुं संख्येयं स्थानस्वरूपमुं कन-
मेदितु सामाधिकारंगळपुवु ।

‘ययोद्देशस्तया निर्देशः’ एवो न्यायविदं प्रयमोद्विदष्ट नामाधिकारमं पद्वपं :-

२० आग्ने ऋते श्रुते तत्त्वे चित्तमस्तित्वसंयुतम् । आस्तिप्रयमास्तिकेयत्वं सम्पत्त्वेन युते नरे ॥२॥
अथवा तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्पत्दर्शनम् । अथवा तत्त्ववचिः सम्पत्त्वम् ।

प्रदेशप्रचयात्कायाः द्रवणात् द्रव्यनामकाः । परिच्छेद्यत्वतस्तेऽर्थाः तत्त्वं वस्तुस्वरूपतः ॥१॥

इति सामान्येन पञ्चास्तिकायपद्द्रव्यनवपदार्यानां लक्षणम् ॥५६१॥ अथ पद्द्रव्याणामधिकारवि-
दित्ति—

२५ पद्द्रव्येषु नामानि उपलक्षणानुवादः स्थितिः क्षेत्रं संख्या स्थानस्वरूपं फलं चेति सामाधिकार-
भवन्ति ॥५६२॥ अथ प्रयमोद्विदष्टनामाधिकारमाह—

३० युक्त्तु मनुष्यका आस्तिक्त्तय गुण क्हा है । अथवा तत्त्वार्थके श्रद्धानको सम्पत्दर्शन क्हाते है ।
अथवा तत्त्वार्थके रुचिको सम्पत्त्व क्हाते है । प्रदेशोंके समूह रूप होनेसे काय क्हालाते है ।
गुण और पर्यायोंको प्राप्त करनेसे द्रव्य नामसे क्हाे जाते है । जीवके द्वारा जाननेमें आनेसे
अर्थ क्हालाते है और वस्तुस्वरूपके कारण वच क्हालाते है । यह सामान्यसे पाँच
अस्तिकाय, छद्द्रव्य और नौ पदार्थोंका लक्षण है ॥ ५६१ ॥

छद्द्रव्योंके अधिकारोंको क्हाते है—

छद्द्रव्योंके सम्पत्त्वमें नाम, उपलक्षणानुवाद, स्थिति, क्षेत्र, संख्या, स्थान, स्वरूप
और फल ये सात अधिकार होते है ॥ ५६२ ॥

प्रथम वद्विष्ट नाम अधिकार को क्हाते है—

पदंशता । पण्णां समानदेशित्वे पिण्डं स्यादणुमात्रकम् ॥" [] एदितु पूर्वपशमं माइत्तिल
द्रव्यात्पिकनयैर्विषं निरंशत्वमुं पर्यायात्पिकनयैर्विषं पदंशतेषमकुमं वितु परिहारं पेञ्जल्पद्वन्दु ।

“आद्यन्तरहितं द्रव्यं विश्लेषरहितांशकं ।

स्कंधोपादानमत्यक्षं परमाणुं प्रचक्षते ॥" []

- ५ आद्यन्तरहितं आद्यियुमवसानमुमिल्लुदुं द्रव्यं गुणपर्यायिगळमुञ्जुदुं विश्लेषरहितांशकं
वेवकं व्यलिल्लद अंशमनुञ्जुदुं स्कंधोपादानं स्कंधस्के कारणमप्युदुं अत्यक्षं इंद्रियविषयमल्लुदुं
परमाणुं प्रचक्षते परमाणुवैदुयत्त्वव्यमागि परमाणुमज्ञच पेञ्जव । नामाधिकारं तिवदुदु ।

उपजीगो वण्णचऊ लखणमिह जीवपोग्गलाणं तु ।

गदिठ्ठाणोग्गहवदुणकिरियुवयारो दु धम्मचऊ ॥५६५॥

- १० उपयोगो वर्णचतुष्कं लक्षणमिह जीवपुद्गलयोस्तु । गतिस्थानावगाहवत्तन्क्रियोपकारस्तु
धम्मंचतुष्णां ॥

उपयोगमुं वर्णचतुष्कमुं ययासंख्यमागिह परमाणुमदोऊ जीवंगळं पुद्गलंगळं लख-
नक्कुं । तु मत्ते गतिस्थानावगाहवत्तन्क्रियेगळे पुपकारंगळ तु मत्ते ययासंख्यमागि धम्मधिर्मा-
काशकालंगळे व नात्कं द्रव्यंगळ लक्षणमक्कुं ।

१५

पदकेन युगपद्योगात् परमाणोः पदंशता ।

पण्णां समानदेशित्वे पिण्डं स्यादणुमात्रकम् ॥

सैत्वं, द्रव्याविकनयेन निरंशत्वेऽपि परमाणोः पर्यायाविकनयेन पदंशत्वे दोषाभावात् ।

आद्यन्तरहितं द्रव्यं विश्लेषरहितांशकम् ।

स्कंधोपादानमत्यक्षं परमाणुं प्रचक्षते ॥

२०

॥५६४॥ इति नामाधिकारः ।

उपयोगः जीवतां, तु-युनः वर्णचतुष्कं पुद्गलानां, इह परमाणुमे लक्षणं भवति । गतिस्थानावगाह-
वत्तन्क्रियाभ्याः उपकाराः । तु-युनः ययासंख्यं धर्मावर्माकाशकालाना लक्षणं भवति ॥५६५॥

करते हैं, प्राप्त करंगे और पहले प्राप्त कर चुके हैं इस व्युत्पत्तिके अनुसार द्रवणुद्दिग्दिग् भी
पुद्गलपना पटित होता है ।

२५

शंका—यदि परमाणु एक साथ उह दिशामें उह परमाणुओंसे सम्बन्ध करता है तो
परमाणु उह अंशवाला सिद्ध होता है । यदि उहाँ समान देश वाले माने जाते हैं तो उह
परमाणुओंका पिण्ड परमाणु मात्र सिद्ध होता है ?

समाधान—आपका कथन यथार्थ है, द्रव्यार्थिकनयसे यद्यपि परमाणु निरंश है किन्तु
पर्यायार्थिकनयसे उसके उह अंशवाला होनेमें कोई दोष नहीं है । जो द्रव्य आदि और अन्वये
१० रदिव है, जिसके अंश कभी भी अलग नहीं होते, जो स्कन्धका उपादान कारण तथा
अवीन्द्रिय है उसे परमाणु कहते हैं ॥ ५६४ ॥

इस प्रकार नामाधिकार समाप्त हुआ ।

परमाणुमें जीवका लक्षण उपयोग और पुद्गलोंका लक्षण वर्ण, गन्ध, रस स्पर्श इत्यादि
है । तथा यथाक्रमसे गतिरूप उपकार, स्थानरूप उपकार, अवगाहनरूप उपकार और
१५ वर्तमानाकार उपकार धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और कालद्रव्यका लक्षण है ॥५६५॥

१. म परमाणुमें पेण्डु । २. व सत्वं ५२० ।

तस्मिन्नेव यत्तिमुत्पत्त्यंवरके बाह्योपग्रहमिल्लदे तदप्युत्पत्तंभवमप्युद्दिश्यमा द्रव्यंगळ प्रवर्तनोपलक्षितं
 कालमेदितु माद्विवर्तने कालपुष्कारमवकुमे वरियल्पदुपुदु । इल्लि णिच्चिगत्यंमायुवेदोडे वस्ते
 द्रव्यपप्य्यायस्तस्य वर्तयिता कालः एंवितु कालवकृत्यंमादोडे कालवके क्रियावत्वमागि वक्कुमे तोगळ
 अपोते गिप्यः उपाध्यायोध्यापयति एंवते कर्तृत्वमवकुमेदोडिल्लि दोपमिल्लेकेदोडे निमित्तमात्र-
 ५ मादोडे हेतुर्कुत्प्यपदेशं काणल्पट्टुदुं । येतोगळ कारिपोग्निरध्यापयति एंवितु कालके हेतुर्कुत्-
 तेयस्कुमंतादोडा कालमेतु निरचयितल्पदुगुमेदोडे समयाधिकक्रियाविशेषंगळमं समयादिनिब्वल्यं-
 गळप्य पाकादिगळमं समयेमं हुं पाकमेदितित्येवमादि स्वसंज्ञाहृदितवभावोडे समयः कालः
 अंदनपाककालः एंवित्तध्यारोपितल्पदुत्तिदंदायुदोडु कालव्यपदेशनिमित्तमप्य मुख्यकालदत्तित्वं
 पेत्तुमेकेदोडे गीगवके मुख्यापेक्षत्त्वमुत्पुद्दिश्ये । पद्द्रव्यंगळवर्तनाकारणं मुखकालमवकुमा वर्तन-
 १० गुणमुं द्रव्यनिचयंगळोडे अरकुमंतादोडमा कालाधारदिदमे सध्वंद्रव्यंगळं वर्तते । परिणमंति
 स्वप्य्यांगंश्रिडे परिणमिमुत्पत्त्यं एतु नियमनिब्वं इल्लि एतुशब्दमवधारणात्वंमवकुं । इवतिं
 कालवके परिणामक्रियापरत्वापरत्वोपकारंगळं पेत्तल्पदुपु ।

द्रव्यानां स्वर्थावगतिर्नृति प्रति स्वयमेव वर्तमानाना बाह्योपग्रहाभावे तद्वृत्त्यसंभवात् तेषां प्रवर्तनोपलक्षितः
 काल इति वृत्ता वर्तना काळस्य उपकारो ज्ञातव्यः । अत्र निचोऽयं कः ? वर्तते द्रव्यस्यापि तस्य वर्तना
 १५ निमित्तमात्रेति हेतुगुणवर्तनान् कारिपोग्निरध्यापयतीत्यादिवत् । तद्वि स कथं निचोपेते ? समयादिभेद-
 विधेयाना मनस इत्यादेः समयादिनिब्वल्यंमादोडीनां पाक इत्यादेव स्वसंज्ञायाः हृदिगुणवर्तनेषु तत्र काळ इति
 यदध्यापयते तन्मुक्ताकारणत्वात् इत्येव गीगस्य मुख्यापेक्षत्वात् इति पद् द्रव्याणा वर्तनाकारणं मुख्यकालः ।
 वर्तनानुचो द्रव्यनिचये एव, तथा यदि कालाधारेणैव सर्वद्रव्याणि वर्तन्ते इत्यस्वर्थापि परिणमन्ति सन्तु नियते ।
 २० अत्र वाऽऽनुरोधेनधारणात्, अनेन कालस्त्वेव परिणामक्रियापरत्वापरत्वोपकारो उक्तो । तो तु जीवदुपुत्त-
 योऽंश्रिडे पयोदि-अनुदंभेनुत्पत्त्यं इति चेदाह—

वर्तनं करोते हेतुं क्रितुं वास उपकारके विना यद् सम्भव नही हे अतः उनको वर्तनामे जो
 निमित्त मात्र होता हे वह काळ है । ऐसा करके वर्तना कालका उपकार जानना । यही
 निच प्रशयहा अर्थ है—द्रव्य को पयांय वर्तन करती है उसका वर्तन करानेवाला काळ है ।
 २५ संज्ञा—तब तो काळको क्रियावान् होनेका प्रसंग आता है । जैसे शिष्य पढ़ता है और
 व्याख्यान पढ़ाता है ?
 सनाशन—नदी, क्यांकि निमित्त मात्रमे भी हेतुकोपना देला जाता है, जैसे
 (सांकेिक समयमे) कडेको आग पढ़ाती है ।

संज्ञा—उन काळके अस्तित्वका निरचय कैसे होता है ?
 ३० समाशन—मनस, पद्मी, मुदुं आदि जो क्रिया विशेष है उनमे जो समय आदि
 वरद्वार क्रिया जाता है, मनस आदिमे होनेवाडे पक्षमे आदिको जो समयशाह इत्यादि
 कला भाग है इन रूढ संज्ञाओंमे जो काळका आरोप है वह मुख्य काळके अस्तित्वको कह
 दे वरद्वि उपस्थित करने मुखर हयनको अपेक्षा रखता है । इन प्रकार छह द्रव्योंको वर्तन
 का कारण मुख्यकाळ है । यद्यपि वर्तना गुण द्रव्यममूर्तमे ही वर्तमान है उक्तोमे ।
 ३५ अतः हे वर्तन करके अस्मात्मे ही मय द्रव्य वर्तन करते हैं अर्थात् अपनी-अपनी वर
 कृत्ये अस्तित्व करते हैं । यही यदुपु अस्मात्मात्क है । इसमे परिणाम क्रिया और पर

कालमानाश्रयिणो जीवाविसर्गद्रव्यं स्वत्यपवर्ष्यापपरिणतमर्कं । आ पवर्ष्यावत्स्थानं
श्रुजुसूत्रनयवोऽनु येकसमयमेवश्रुमत्त्वंपवर्ष्यापपेक्षेपवं ।

व्यवहारो य विपयो भेदो तद् पञ्जओत्ति एयद्वो ।

व्यवहार अवहृणद्विदी तु व्यवहारकालो दु ॥५७२॥

५ व्यवहारद्वय विकल्पो भेदद्वय तथा पवर्ष्याव इत्येकार्थः । व्यवहारावस्थानस्थितिः श्रु
व्यवहारकालस्तु ॥

व्यवहारमं दोडं विकल्पमं दोडं भेदमं वडमंते पवर्ष्यापमं दोडमेकार्थमंश्रुमत्तिल व्यंजन-
पवर्ष्यापपेक्षेयिदं व्यवहारावस्थानस्थितिः व्यवहारमं दोडं पवर्ष्यापमं तु वेऽनुद्विरवमा पवर्ष्याप
अवस्थानदिवं वर्तमानतेपिदमावुवोऽनु स्थितिपु तु मत्ते व्यवहारकालः व्यवहारकालमं दुदगं ।

अवरा पञ्जायठिदी खणमेचं होदि तं च समओत्ति ।

दोणमणुणामदिक्रमकालपमार्ण ह्ये सो दु ॥५७३॥

१० अवरा पवर्ष्यापस्थितिः क्षणमात्रा भवति सेव समय इति । द्वयोरप्योरतिक्रमकालप्रमाणो
भवेत्स तु ॥

द्रव्यगणं पवर्ष्यापगणं जपन्यस्थिति क्षणमात्रमंश्रुमा स्थितिये समयमेव संज्ञेयुःश्रुदगं ।
सः आ समयपुं तु मत्ते गमनपरिणतंश्रुप्येरदं परमाणुगणं परस्पररातिक्रमकालप्रमाणमंश्रुमत्तिल

१५ गुणयोगियण्य मायासूत्रमिदु :-

गभएयपएस्तव्यो परमाणू मंदगइपवदृती ।

वीममणंतरखेतं जावदियं जादि तं समयकालो ॥

कालमाश्रित्य जीवादि सर्वद्रव्यं स्वस्व-वर्ष्यापपरिणतं भवति । तत्पवर्ष्यावत्स्थानं श्रुजुसूत्रनयेन एकस्यो
भवति अर्थवर्ष्यावदेवा ॥५७१॥

२० व्यवहारः विकल्पः भेदः तथा पवर्ष्याः इत्येकार्थः तु पुनः तत्र श्रुजुसूत्रनयवत्स्य व्यवस्थानतया स्थितिः
सैव व्यवहारकालो भवति ॥५७२॥

द्रव्याणां जपन्या पवर्ष्यापस्थितिः क्षणमात्रं भवति । सा च समय इत्युच्यते । स च समयः द्वयोरप-
परिणतपरमाण्वोः परस्पररातिक्रमकालप्रमाणं स्यात् ॥५७३॥ अत्रोपयोगिवावाइय—

गभएयपएस्तव्यो परमाणू मन्दगइपवदृती ।

२५

वीममणंतरखेतं जावदियं जादि तं समयकालो ॥१॥

फालका आश्रय पाकर जीव आदि सद्य द्रव्य अपनो-अपनी पर्याय रूपसे परिणम
करते हैं । उस पर्यायक ठहरनेका काल श्रुजु सूत्रनयसे अर्थपर्यायकी अपेक्षा एक समय
होता है ॥ ५७१ ॥

३० व्यवहार, विकल्प, भेद तथा पवर्ष्या ये सद्य एक अर्थवाले हैं । अर्थात् इन सबकी
अर्थ एक है । उनमेंसे व्यंजन पर्यायकी वर्तमान रूपसे स्थिति व्यवहार काल है ॥५७२॥

द्रव्योंकी पर्यायकी जपन्य स्थिति क्षण मात्र होती है उसको समय कहते हैं । गमन
परते हुए दो परमाणुओंके परस्परमें अतिक्रमण करनेमें जितना काल लगता है उतना ही
समयका प्रमाण है ॥ ५७३ ॥

आद्यधनप्य मुखितनप्य अनालस्यनप्य निरुपहतनप्य जीवंगक्कुमावुदो बुच्छ्वासनिश्वासन-
बो बु प्राणमेवितु पेक्षल्पदुदु । सप्तोच्छ्वाससप्तो बु स्तोक्रमक्कुं । सप्तस्तोक्रंगळो बु लयमेववक्कुं ।

अद्भुत्तीसद्भुत्तलवा नाली वे नालिया मुहुत्तं तु ।

एगसमयेण हीणं मिण्णमुहुत्तं तदो सेसं ॥५७५॥

- ५ अष्टात्रिंशद्वलवाः नाडी द्वे नाडिके मुहुत्तंस्तु । एकसमयेन हीनो भिन्नमुहुत्तंस्ततः शेषः ॥
सूक्तं दुवरे लवेगळ धट्टिगे येंवुवक्कुं । द्विपळिगेगळो बु मुहुत्तंमक्कुं । तु मत्ते एकसमयविव
हीनमाव मुहुत्तं भिन्नमुहुत्तंमत्तंमुहुत्तंमुक्कुष्टमक्कुं । ततः मुवे द्विसमयोनाडद्यावत्यसंख्यातेरुभा-
पर्यन्तमाव शेषंगळनितुमंतंमुहुत्तंगळंयप्पुषु ।

इल्लिगुपयोगियप्य मायासूत्रमिदु :—

- १० ससमयमावलि अवरं समऊण मुहुत्तयं तु उक्कस्सं ।

मज्झासंखविपप्यं वियाण अंतोमुहुत्तमिणं ॥ []

समयाधिकारवलि जघन्यांतंमुहुत्तंमक्कुं । समयोनमुहुत्तंमुक्कुष्टांतंमुहुत्तंमक्कुं । मध्य-
असंख्यातविरुत्पमं मध्यमांतंमुहुत्तंगळं विदन्ति ।

दिवसी पक्खो मासो उडु अयणं वस्समेवमादी हु ।

- १५ संखेज्जासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥

दिवसः पक्षो मास ऋतुरयनं वर्षमेवमादिः खलु । संख्यातासंख्यातानंततो भवति
व्यवहारः ॥

मुखिनः अनलसस्य निरुपहतस्य यो जीवस्य उच्छ्वासनिश्वासः स एव एकः प्राण उक्तो भवति ।
सप्तोच्छ्वासाः स्तोक्रः । सप्तस्तोक्रा लवः ॥५७४॥

- २० साध्याष्टा त्रिंशद्वलवा नाडी षट्ठिका । द्वे नाड्यो मुहुत्तः । स चैकसमयेन हीनो भिन्नमुहुत्तः, उरुच्छ्वा-
संमुहुत्तं इत्यर्थः । ततोद्वे द्विसमयोनाद्या आवत्यसंख्यातेरुभागान्ताः सर्वेऽन्तंमुहुत्तः ॥५७५॥ असंख्यो-
गायामुहम्—

ससमयमावलि अवरं समऊणमुहुत्तयं तु उक्कस्सं ।

मज्झासंखविपप्यं वियाण अंतोमुहुत्तमिणं ॥१॥

- २५ समयाधिकारवलिः जघन्यान्तंमुहुत्तः समयोनमुहुत्तः उरुच्छ्वासंमुहुत्तः । मध्यमा असंख्यातविरुत्प
मध्यमांतंमुहुत्तंगळं, इति ज्ञानोद्दि ॥१॥

निश्वास होता है । उसको प्राण कहते हैं । मान उच्छ्वास का एक स्तोक्र और सात स्तोक्रा
एक लव होता है ॥ ५७४ ॥

- १० साध्याष्टासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥
साध्याष्टासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥
साध्याष्टासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥
साध्याष्टासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥
साध्याष्टासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥
साध्याष्टासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥
साध्याष्टासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥
साध्याष्टासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥
साध्याष्टासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥
साध्याष्टासंखेज्जाणंततवो होदि ववहारो ॥५७६॥

वही अन्तर्गतो गायामुहम् अर्थ इस प्रकार है—



बोवु ब्रह्मबोळावु केलमुवत्यंपर्मायंगळुं व्यंजनपर्मायंगळुं मतीतानागतकालंगळोव्यवर्ति-
सुपुवु वर्तिसत्पडुवपुमपि शब्दादिवं वर्तमानपर्मायववेत्तलमुं कूडि तत् अबु ब्रह्मं भवति ब्रह्ममार्त-
स्थित्यधिकारंतिदुंतुं ।

आगासं वज्जित्ता सव्वे लोमम्मि चैव णत्थि वहिं ।

५ वावी धम्माधम्मा अवट्ठिदा अचलिदा णिच्चा ॥५८३॥

आकाशं विवज्जयं सर्व्वे लोके चैव न संति वहिः । व्यापिनो धर्माधर्मा अवस्थितौ अव-
लितौ नित्यौ ॥

आकाशद्रव्यं पोरगागि शेषद्रव्यंगळनितुं लोकबोळ्यप्यवु । लोकविं पोरगित्ता । आ ब्रह्म-
गळोळु धर्माधर्मद्रव्यंगळेरतुं व्यापिगळेके बोडे लोकप्रदेशंगळेनितोळ्वनितं व्यापिसिदुवु तिलबोळु
१० तैलमेतंते । अवस्थितो स्थानचलनरहितंगळप्युवरिवमवस्थितंगळु, अचलितो प्रदेशचलनरहितंगळ-
प्युवरिवमचलितंगळु, त्रिकालबोळं नाशरहितंगळप्युवरिवं नित्यो नित्यंगळप्युवु । इत्थिगुपयोगिण्य-
द्लोकमिदुः—

“ओपश्लेषिकवेपयिकावभिग्यापक इत्यपि ।

आधारः त्रिविधः प्रोक्तः कटाकाशतिलेषु च ॥ []

१५ एकस्मिन् द्रव्ये ये अर्धपर्याया व्यञ्जनपर्यायाश्च अतीतानागताः अपिसाद्भाद्रतमानाश्च सन्ति तां
तद् द्रव्यं भवति ॥५८२॥ इति स्थित्यधिकारः ॥

आकाशं विवज्जयं शेषसर्वद्रव्याणि लोके एव सन्ति न तद्बहिः । तेषु पर्यायैर्न व्यापिनो सर्वलोक-
व्याप्तत्वात् तिले तिलवत्, अवस्थितो स्थानचलनाभावात्, अचलितो प्रदेशचलनाभावात्, नित्यो नैकत्वान्न-
विनाशभावात् । अव्यपयोगो द्लोकः—

२० ओपश्लेषिकवेपयिकावभिग्यापक इत्यपि ।

आधारस्त्रिविधः प्रोक्तः कटाकाशतिलेषु च ॥५८३॥

एक द्रव्यमें जितनी अतीत, अनागत और वर्तमान अर्धपर्याय तथा व्यञ्जनपर्याय होती
२५ है उतना ही यह द्रव्य होता है ॥५८२॥ स्थिति अधिकार पूर्ण हुआ ।

आकाशको छोड़कर शेष सब द्रव्य लोकमें ही हैं, बाहर नहीं हैं । उनमें धर्म और
अधर्म तिलोंमें तेलकी तरह सब लोकमें व्याप्त होनेसे व्यापी हैं । तथा अवस्थित हैं क्योंकि
अपने स्थानसे विचलित नहीं होते । प्रदेशों में हलन-चलन न होने से अचलित हैं और तनों
काठोंमें भी विनाश न होनेसे नित्य हैं । इस विषयमें उपयोगी श्लोक—आधार तीन प्रकार
का कहा है—ओपश्लेषिक, वेपयिक और अभिग्यापक । इसके तीन उदाहरण हैं—चटाई,
आकाश और तेल । अर्थात् चटाईपर यात्रक सोता है, यहाँ चटाई ओपश्लेषिक आधार है ।
१० आकाश में पराश स्थित है, यहाँ आकाश वेपयिक आधार है । तिलोंमें तेल यहाँ अभिग्याप
आधार है । इसी तरह लोकाकाशमें धर्म-अधर्म व्यापी हैं यहाँ अभिग्यापक आधार
है ॥५८३॥

ववहारो पुण कालो पोग्गलद्ववादनंतगुणमेत्तो ।
तत्तो अणंतगुणिदा आगासपदेसपरिसंखा ॥५९०॥

व्यवहारः पुनः कालः पुद्गलद्रव्यावनंतगुणमात्रः । ततोऽनंतगुणिताः आकाशप्रदेशपरि-
संख्याः ॥

५ व्यवहारकालमें बुद्धु मत्ते पुद्गलद्रव्यमं नोडलुमनंतगुणमात्रमत्रकुमवं नोडलुमनंतगुणंगत्र-
काशद्रव्यव प्रदेशपरिसंख्यगळु ।

लोकागासपदेसा धम्माधम्मगेजीवगपदेसा ।

सरिसा हु पदेसो पुण परमाणु अवट्ठिदं खेत्तं ॥५९१॥

लोकाकाशप्रदेशाः धर्माधर्मकजीवप्रदेशाः सदृशाः खलु प्रदेशः पुनः परमाश्ववत्पित्तं

१० क्षेत्रं ॥

लोकाकाशप्रदेशंगळुं धर्मद्रव्यप्रदेशंगळुमधर्मद्रव्यप्रदेशंगळुमेकजीवप्रदेशंगळुं सदृशांगळुपुं
खलु स्फुटमागि । ई नाल्कुं द्रव्यांगळु प्रदेशंगळु प्रत्येकं जगच्छ्रेणीघनप्रमितंगळुपुं । प्रदेशमं बुदंति
प्रमाणमं दोडे पुनः मत्ते पुद्गलपरमाश्ववट्टव्य क्षेत्रमिनिते प्रमाणमत्रकुमदुकारणविवं जघन्यक्षेत्रं
जघन्यद्रव्यमुमविभागौळुपुं । संवट्टि :-

| | जीव | पुद्गल | घ. | अ. | लो = | मु का | व्य-का | अलोकाकाश |
|------|---------|--------|-----|-----|------|-------|---------|-----------|
| द्र | १६ | १६ ख | १ | १ | १ | ≡ | १६ ख ख | १६ ख ख ख |
| क्षे | ≡ ख | ≡ ख ख | ≡ | ≡ | ≡ | ≡ | ≡ ख ख ख | ≡ ख ख ख ख |
| का | अ = ख | अ ख ख | क a | फ a | क a | क a | अ ख ख ख | अ ख ख ख ख |
| भा | के ४ | के ३ | ओ. | ओ. | ओ | ओ | के | के १ |
| | ख ख ख ख | ख ख ख | a | a | a | a | ख ख | ख |

१५

व्यवहारकालः पुनः पुद्गलद्रव्यादनन्तगुणः । ततोऽनन्तगुणिता आकाशप्रदेशपरिसंख्या ॥५९०॥

लोकाकाशप्रदेशा धर्मद्रव्यप्रदेशा अधर्मद्रव्यप्रदेशा एकैकजीवद्रव्यप्रदेशाश्च सदृशाः खलु संख्या कृता
एष प्रत्येकं जगच्छ्रेणियघनमात्रत्वान् । प्रदेशप्रमाणं पुनः पुद्गलपरमाश्ववट्टव्यक्षेत्रमात्रं भवति । तेन बन्धनेन

व्यवहारकाल पुद्गल द्रव्यसे अनन्तगुणा हे । और उससे अनन्तगुणी आकाशके
प्रदेशोंकी संख्या हे ॥५९०॥

२० लोकाकाशके प्रदेश, धर्मद्रव्यके प्रदेश, अधर्मद्रव्यके प्रदेश और एक-एक जीवद्रव्यके
प्रदेश संख्याको दृष्टिसे समान ही हैं क्योंकि प्रत्येकके प्रदेश जगत्क्षेत्रणिके घन प्रमाण हैं ।
पुद्गलका परमाणु जितने क्षेत्रको रोकता है उतना ही प्रदेशका प्रमाण है । अतः उपपन्न
अर्थात् प्रदेश और उपपन्नद्रव्य परमाणु अविभागी हैं उनका विभाग नहीं हो सकता । अतः

१. मं बंधनेनित्तिते । २. मं विपण्णुं ।

पोगलद्वन्द्वि अणु संखेजजादी हवति चलिदा हु ।

चरिममहस्कंधमि य चलाचला हति हु पदेसा ॥५९३॥

पुद्गलद्रव्ये अणवः संख्यातादयो भवति चलिताः खलु । चरममहास्कंधे च चलाचला भवति

प्रदेशाः ॥

पुद्गलद्रव्यबोद्धुं अणुगणं द्वयणुकादि संख्यातासंख्यातानंतपरमाणुस्कंधगणं चलिताणु खलु स्फुटमाणि, चरममहास्कंधबोद्धुं प्रदेशाः परमाणुगणं चलाचला भवति चलाचलागण्युतु ।

अणुसंख्यासंखेजजाणता य अगेज्जगेहि अंतरिया ।

आहारतेजभासात्मणकम्मइया धुवकखंधा ॥५९४॥

अणुसंख्यातासंख्यातानंतादचाप्राह्येतरिरताः आहारतेजोभावात्मनःकाम्भण ध्रुवकंधाः ॥

१०

सांतरणिंरंतरेण य सुण्णा पत्तेयदेह ध्रुवसुण्णा ।

वादरणिगोदसुण्णा सुहुमणिगोदा णमा महकखंधा ॥५९५॥

सांतरणिंरंतरेण च शून्य प्रत्येकदेहध्रुवशून्यानि । वादरनिगोदशून्यानि सूक्ष्मनिगोदाः नमति

महास्कंधाः ॥

अणुवर्गगणं बुं संख्याताणुसमूहवर्गगणं बुं संख्याताणुसमूहवर्गगणं बुं अं मन्त्रं
१५ परमाणुसमूहवर्गगणं बुं आहारवर्गगणं बुं मो याहारवर्गगणं मोदलाबुमेल्लमुमनंतपरमाणुस्कंधं
गळं यण्युतु-१ मप्राह्यवर्गगणं बुं तेजसशरीरवर्गगणं बुं मप्राह्यवर्गगणं बुं भावावर्गगणं
गळं बुं मप्राह्यवर्गगणं बुं मनोवर्गगणं बुं मप्राह्यवर्गगणं बुं काम्भणवर्गगणं बुं
ध्रुववर्गगणं बुं सांतरणिंरंतरवर्गगणं बुं शून्यवर्गगणं बुं प्रत्येकशरीरवर्गगणं
गळं बुं ध्रुवशून्यवर्गगणं बुं वादरनिगोदवर्गगणं बुं शून्यवर्गगणं बुं सूक्ष्म
२० निगोदवर्गगणं बुं नभोवर्गगणं बुं महास्कंधवर्गगणं बुं पुद्गलवर्गगणं बुं चरममहास्कंधं

पुद्गलद्रव्ये अणवः द्वयणुकादिसंख्यातासंख्यातानन्ताणुस्कंधाश्चलिताः खलु स्फुटम् । चरममहास्कंधे

च प्रदेशाः परमाणवः चलाचला भवन्ति ॥५९३॥

अणुवर्गगणा संख्याताणुवर्गणा असंख्याताणुवर्गणा अनन्ताणुवर्गणा आहारवर्गणा अप्राह्यवर्गणा शरीरवर्गणा अप्राह्यवर्गणा भावावर्गणा अप्राह्यवर्गणा मनोवर्गणा अप्राह्यवर्गणा काम्भणवर्गणा ध्रुववर्गणा
२५ सांतरनिंरंतरवर्गणा ध्रुववर्गणा प्रत्येकशरीरवर्गणा ध्रुवशून्यवर्गणा वादरनिगोदवर्गणा शून्यवर्गणा सूक्ष्मनिगोदवर्गणा नभोवर्गणा महास्कंधवर्गणा चेति पुद्गलवर्गणाः प्रयोक्तवित्तेशा भवन्ति । अत्रोपयोगी श्लोः—

पुद्गल द्रव्यं परमाणु और द्वयणुक आदि संख्यात, असंख्यात और अनन्त परमाणुओंके स्कन्ध चलिता होते हैं । अन्तिम महास्कन्धमें प्रदेश चलाचला हैं ॥५९३॥

अणुवर्गणा, संख्याताणुवर्गणा, असंख्याताणुवर्गणा, अनन्ताणुवर्गणा, आहारवर्गणा, अप्राह्यवर्गणा, तेजसशरीरवर्गणा, अप्राह्यवर्गणा, भावावर्गणा, अप्राह्यवर्गणा, काम्भणवर्गणा, ध्रुववर्गणा, सांतरनिंरंतरवर्गणा, शून्यवर्गणा, मनोवर्गणा, ध्रुवशून्यवर्गणा, वादरनिगोदवर्गणा, शून्यवर्गणा, सूक्ष्मनिगोदवर्गणा, नभोवर्गणा, महास्कंधवर्गणा ये तेईस प्रकारकी पुद्गलवर्गणाएँ होती हैं । इस विषयमें उपयोगी श्लो

उ २५५ । २५५ । ० । २५५ ई संख्यातासंख्यातवर्गगण्योऽतन्तम्भस्तनराशिपिदमन्तते-

म १६ १६ ०० १६
 ज १६ । १६ । ०० । १६

परितनराशिगळं भागिसिदोडावुबो वु लन्यमवु विवक्षितवर्गगण्यो गुणकारमवकुमवेंत बोडे संख्यात-
 वर्गगण्योऽत जघन्यवर्गगण्यो २ मुपरितनराशियं ३ भागिसि ३ वं लब्धं द्वितीयवर्गगण्योऽत

गुणकारमवकुं गुण्यं जघन्यवर्गगण्योयक्कु २३ मिदनपवत्तिसिदोडे त्र्यणुकमवकु-३ । मन्ते द्विचरम-

५ वर्गगण्योयिदं चरमवर्गगण्यो भागिसिदोडिदु १५ चरमवर्गगण्योऽत गुणकारमवकुं । गुण्यं द्विचरम-

वर्गगण्योयक्कु १४ १५ मिदनपवत्तिसिदोडे चरमवर्गगण्योयक्कु-१५ । मिते असंख्यातवर्गगण्योऽत

द्विचरमवर्गगण्योयिदमुपरितनचरमवर्गगण्यो भागिसिदोडे चरमवोऽत गुणकारमवकुं गुण्यं द्विचरम-
 वर्गगण्योयक्कु २५४ । २५५ मिदनपवत्तिसिदोडे चरमवर्गगण्योयक्कु । २५५ । इत्तिलयो वु परमाणुवं

१० कूडिदोडे अनंतवर्गगण्योऽत जघन्यवर्गगण्यो परिमितानंतजघन्यराशिप्रमाणमवकुमेक बोडे द्विकवारा-
 मस्यपातोक्तदोडोऽत रूपं कूडिदोडे या स्कंधमन्तवर्गगण्योऽत जघन्यवर्गगण्योयपुदरिदं । आ
 जघन्यान्तवर्गगण्यो मेलैकेक परमाणुविदमधिकंगळायुत्तं पोशि तदुकुष्टवर्गगण्यो तत्रजघन्यमं नोड-
 नंतगुणितमवकुं उ २५६ ख मेलैयाहारजघन्यसदृशवर्गवर्गगण्योऽत एकपरमाणुविदमधिकंगळ-

ज २५६

उ २५५ । २५५ ०० २५५

० ० ०
 ० ० ०

म १६ । १६ । ०० १६
 ज १६ । १६ । ०० १६

यत्र संख्यातावर्गगण्यो अर्थवरातावर्गगण्यो च विवक्षितवर्गगण्योऽत गुणकारः तदवहनवर्गगण्यो अपस्तन-
 वर्गगण्योपरिशिशिवर्गगण्योऽत यथा त्र्यणुकमन्तेत् द्वयणुकस्य द्वयणुकमन्तत्र्यणुकमात्रः २ । ३ तदन्तरोति-

- १५ वर्गगण्यो भाग देनेसे जो प्रमाण आवे उतना है । जैसे त्र्यणुक लानेके लिए द्वयणुकका गुणकार
 द्वयणुकसे त्र्यणुकमें भाग देनेपर जितना प्रमाण आवे उतना है । उसके अनन्तर तद्वृ-
 थसंख्यातावर्गगण्यो एक परमाणु अधिक होनेपर अनन्तावर्गगण्योका जघन्य होता है । उसे
 निदराशिके अनन्तवर्ग भाग प्रमाण अनन्तसे गुणा करनेपर अनन्तावर्गगण्योका दत्तक होता
 है । उसमें एक परमाणु अधिक होनेपर उससे ऊपरकी आहारवर्गगण्योका जघन्य होता है । उसमें
 २० निदराशिके अनन्तवर्ग भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे जघन्यमें मिलातेपर आहारवर्गगण्यो

तदनन्तरोपरितनकामर्गवर्गणाजघन्यमेकपरमाणुविदधिकमवकं । अदरुकृष्टं तदनन्तैकभागविं

विशेषाधिकमवकं
 उ २५६ ख १ ख ख ख १ ख १ ख ख १ ख ख ख
 कामर्ग ० ख ख ख ख ख

ज २५६ ख १ ख ख ख ख १ ख ख १ ख १ ख
 ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख

तदनन्तरोपरितनध्रुववर्गणैगळोळ जघन्यमेकपरमाणुविदधिकमवकं तदुकृष्टमन्तजोवरागिगुणित-

मवकं :- उ २५६ ख १ ख ख ख १ ख १ ख १ ख ख १ ख ख १६ ख
 ध्रुव ० ख ख ख ख ख

ज २५६ ख १ ख ख १ ख ख १ ख ख १ ख ख १ ख
 ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
 ० ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख
 अगेज ०

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
 ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख

५ तदनन्तरोपरितनकामर्गवर्गणाजघन्यमेकाणुनाधिकं तदुकृष्टं तदनन्तैकभागोनाधिकं-

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
 ० ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख
 कमव ०

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
 ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख

तदनन्तरोपरितनध्रुववर्गणाजघन्यमेकाणुनाधिकं तदुकृष्टं ततोऽनन्तजोवरागिगुणं-

उ २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १६ ख
 ० ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख
 ध्रुव ०

ज २५६ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख १ ख
 ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख ख

अनन्तवै भागसे भाग देनेपर जो लब्ध आवे वसे उसीमें मिला देनेपर उसका वृद्ध है।
 है। उससे एक परमाणु अधिक होनेपर वससे ऊपरकी अप्राप्तवर्गणाका जघन्य है। इनके
 अनन्तगुना उसका वृद्ध है। उससे एक परमाणु अधिक होनेपर वससे ऊपरकी कामर्गवर्गणा
 का जघन्य है। उसमें सिद्धराशिके अनन्तवै भागसे भाग देनेपर जो लब्ध आवे वसे उसमें
 मितानेपर उसका वृद्ध होता है। वससे एक परमाणु अधिक उससे ऊपरकी ध्रुववर्गणा-

प्यसंख्येयभागमात्र पुलविगच्छोच्छ्रितिर्द् गुणितकर्माशानंतानंतजोचंगळ सविससोपचय त्रिपरोर-
संचयमं कोळ्त्तिरलक्कुं :-

उ स ३२ ० ० ख ख १२-१६ ख १३ ≡ ० ८ ०
वावरनिगोद ९ ≡ ० १५
ज स ० ० ख ख १२-१६ ख १३ ≡ ० ८ ५
९ ≡ ० १५

ई वादरनिगोदोत्कृष्टवर्गणोदोळेकरूपमनधिकं माडुत्तिरलु तृतीयशून्यवर्गणोदोळ् जघन्यवर्गणोदोळ्
तृतीय शून्यः ०

ज स ३२ ० ० ख ख १२-१६ ख १३ ≡ ० ८ ०
९ ≡ ० १५

५ सूक्ष्मनिगोदजघन्यवर्गणोदोवेडेयोळ् संभविसुगुमेदोडे जलदोळ् स्थलदोळ्माकाशोदोमेदो

कर्माशानन्तानन्तवादरनिगोदजीवानां सविससोपचयत्रिपरोरसंचयः उत्कृष्टवादरनिगोदवर्गणा भवति-

उ ० स ३२ ० ० ख ख १२-१६ ख १३ ≡ ० ८ ०
वावरनिगोदसरोर ० ९ ≡ ० १५
ज ० स ० ० ख ख १२-१६ ख १३ ≡ ० ८ ५
९ ≡ ० १५

इयमेकरूपाधिका तृतीयशून्यवर्गणाजघन्यं भवति-

तियगुणवर्गणा ज स ३२ ० ० ख ख १२-१६ ख १३ ≡ ० ८ ०
९ ≡ ० १५

एक परमाणु हीन करनेपर उत्कृष्ट ध्रुव शून्यवर्गणा होती है। तथा इस जघन्यको जग
धेगिके असंख्यावर्षे भागसे गुणा करनेपर उत्कृष्ट वादरनिगोदवर्गणा होती है। स्वयम्भू
रमणद्वीपमें जो मूलक आदि सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतियोंके शरीर हैं उनमें एक बन्धनवर्
१० जगधेगिके असंख्यावर्षे भागप्रमाण पुलवियोंमें रहनेवाले गुणितकर्मांश अनन्तानन्त वाद
निगोद जोषोद्गा जो विषसोपचय सहित औदारिक तैजस कार्मणशरीरका उत्कृष्ट संचय है

गो० जीवकाण्डे

दुःकृष्टवर्गणो संभवमायेड्योऽवकुमो बोडे महामत्स्यशरीरोऽयं एकव्यनवद्वावत्यसंख्यातकनाम
मात्रपुत्रविगळोऽक्रितिवं गुणितकर्मान्तानंतजोयंगठसविलसोपचयत्रिशरीरसंभवमं प्रकृ

सुत्तिरलवकुं :- उ स ३२ ० ० स स १२- १६ स १३-८ ३ ० ८ सु २ ०
१ ३ ० ५

सूक्ष्मनिगोव सुगमंगळवेते बोडे सूक्ष्मनिगोवदुःकृष्टवर्गणोऽवकुं कडिबोडे नभोवर्गणे
मेलणेरडुंवरंगणगळ गळोळु जघन्यवर्गणोऽवकुं :-

ज स ३२ ० ० स स १२- १६ स १३-८ ३ ० ८ सु २ ०
नभोवर्गणा १ ३ ० ५
५ ई जघन्यवर्गणोयं प्रतरासंख्येयभागदिवं गुणिसुत्तिरलु नभोवर्गणगळोऽदुःकृष्टवर्गणोऽवकुं :-
उ स ३२ ० ० स स १२- १६ स १३-८ ३ ० ८ सु २ ० ०
नभोवर्गणा १ ३ ० ५

निगोदवर्गणोऽकृष्टं महामत्स्यशरीरे एकव्यनवद्वावत्यसंख्यातकभागमात्रपुलविशिवगुणितकर्मान्तानंत
जोवानां सविलसोपचयत्रिशरीरसंभवो भवति-
गुहमणि उ ० स ३२ ० ० स स १२- १६ स १३-८ ३ ० ८ सु २ ०
१ ३ ० ५
इदं एकरूपयुतं नभोवर्गणाजघन्यं भवति-

पभवग ज स ३२ ० ० स स १२- १६ स १३-८ ३ ० ८ सु २ ०
१ ३ ० ५
इदं प्रतरासंख्येयभागगुणितं नभोवर्गणोऽकृष्टं भवति-

पभवग उ स ३२ ० ० स स १२- १६ स १३-८ ३ ० ८ सु २ ० ०
१ ३ ० ५

समाधान-नेही, क्योंकि वादरनिगोदवर्गणाके शरीरोंसे सूक्ष्मनिगोदवर्गणाके शरीरों
का प्रमाण मूर्यंगुलके असंख्यातके भाग गुणित है। इससे वहाँ जीव भी बहुत हैं। अरु
१० वन जीवोंके तीन शरीर सम्बन्धी परमाणु भी बहुत हैं। जघन्य सूक्ष्मनिगोदवर्गणाको पत्तके

उक्तार्थोपसंहारं माहुतं त्रयोविंशतिवर्गंगेगळो जघन्योत्कृष्टानुत्कृष्टाजघन्य भेदमुं
तदल्पबहुत्वमुं गाथापदकविदं पेश्वपः—

परमाणुवर्गणांमि ण अवरुक्कसत्तं च सेसगे अत्थि ।
गेज्झमहापखंधाणं वरमहियं सेसगं गुणियं ॥५९६॥

५

परमाणुवर्गणायां नावरोत्कृष्टं च शेषकेज्जति । प्राह्यमहास्कंधाणां वरमधिकं शेषकं गुणितं ॥
शेषसंख्यातवर्गणावि महास्कंधावसानमाद द्वाविंशतिवर्गंगेगळो जघन्योत्कृष्टविशेषं बलि
उंडु । आ द्वाविंशतिवर्गंगेगळो प्राह्यमहास्कंधाणां आहारतेजोभाषामतः कामंशवर्गंगेगळु
प्राह्यमे बुवक्कुमवस्तुत्कृष्टवर्गंगेगळु महास्कंधोत्कृष्टवर्गंगेगळुमे बोधादवर्गंगेगळु तंतम्म जघन्यं
नोडलु विशेषाधिकंगळु, बुद्धि व पविताहं वर्गंगेगळुत्कृष्टवर्गंगेगळु तंतम्म जघन्यं नोडलु गुनि-
तंगळुप्पुवु ।

सिद्धान्तमिभागो पडिभागो गेज्झगाण जेट्टट्ठं ।
पल्लासंखेज्जदिमं अंतिमखंधस जेट्टट्ठं ॥५९७॥

सिद्धानामनेकभागः प्रतिभागो प्राह्याणां ज्येष्ठतयं । पत्यासंख्येयभागोतिमस्कंधं
१५ ज्येष्ठतयं ॥
ई प्राह्यवर्गणापंचकोत्कृष्टवर्गंगानिमित्तमागि प्रतिभागहारं सिद्धान्तैकभागमात्रनङ्कुन
भागहारविदं तंतम्म जघन्यं भागिसिदेकभागमना जघन्यद मेले कूडिबोडे तंतम्मोत्कृष्टवर्गंगे
गळुप्पुवे बुदत्थं । अंतिममहास्कंधोत्कृष्टवर्गंगानिमित्तमागि प्रतिभागहारं पत्यासंख्यातैकभागं
मायमवकुमावल्यासंख्यातैकभागविदं जघन्यवर्गंगेयं भागिसिदेकभागमना जघन्यबोडु कूडिगे

२०

उत्तर्यंभूपसंहारं तासांमेव जघन्योत्कृष्टानुत्कृष्टाजघन्यानि तदल्पबहुत्वं च गाथापदकेनाह—
परमाणुवर्गणायां जघन्योत्कृष्टेन स्तः, अगुनां निर्विकल्पकत्वात् शेषद्व्याविंशतिवर्गंगाना तु स्तः ।
तत्र प्राह्याणां आहारतेजोभाषामतः कामंशवर्गंगानां महास्कंधवर्गंगानाम् उत्कृष्टानि स्वस्वजघन्याद्विवेगादिभिः
द्वेषदोषवर्गंगाना गुणितानि भवन्ति ॥५९६॥

२५

तत्र पञ्चप्राह्यवर्गंगानामुत्कृष्टनिमित्तं प्रतिभागहारः सिद्धान्तैकभागः, तेन स्वस्व
भवत्वा उक्तं निमित्ते स्वकोत्कृष्टं भवतीत्यर्थः । अन्तिममहास्कंधोत्कृष्टनिमित्तं प्रतिभागहारः पत्यासं
वृक्ष कथनका उपसंहार करते हुए उन्ही वर्गंगाओंके जघन्य, उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और
अजघन्य भेदों तथा अल्पबहुत्वको छह गाथाओंसे कहते हैं—
परमाणुवर्गंगामें जघन्य-उत्कृष्ट भेद नहीं है क्योंकि परमाणु निर्विकल्पक-भेद रहते
होते हैं । शेष बाईस वर्गंगाओंमें तो जघन्य-उत्कृष्ट हैं । उनमें-से जो प्राह्यवर्गंगा, आहार-
वर्गंगा, त्रैजसत्परोवरगंगा, भाषावर्गंगा, मनोवर्गंगा, कामंशवर्गंगा तथा महास्कंधवर्गंगा
हैं इनके उत्कृष्ट अपने-अपने जघन्यसे विशेष अधिक हैं, जेव सोलह वर्गंगाओंके गुनि
हैं ॥५९६॥

उनमें-से पाँच प्राह्यवर्गंगाओंका उत्कृष्ट छानेके लिए प्रतिभागहार सिद्धान्तिक
अन्तर्गामी भाग है । उनमें अपने-अपने जघन्यमें भाग देकर जो लब्ध आने वसे हैं

स्वर्वाजीवराशियं नोडलनंतगुणितमप्य गुणकारं ध्रुवादि मूह वर्गगणेशुक्लृष्टवर्गानिमित्त
 गुणकारप्रमाणमवकुमा गुणकारदिवं तंतम्म जघन्यवर्गणेषु गुणिसुतं विरलु तंतमुक्लृष्टवर्गानिमित्तमि
 गळप्युवे बुदत्यं । तु मत्ते ततः अल्लिदं मेलण प्रत्येकशरीरवर्गणेशुक्लृष्टवर्गानिमित्तमि
 गुणकारं पल्यासंख्यातैकभागमवकुमा गुणकारगुणित तज्जघन्यवर्गणेषु प्रत्येकशरीरवर्गणेशुक्लृ
 ५ वर्गणेषुवकुमे बुदर्थमिल्लि पल्यासंख्यातैकभागगुणकारमेते बोदे :-प्रत्येकशरीरस्य जीवकामने
 शरीरसमयप्रबद्धं गुणितकमाशुभोवप्रतिबद्धमप्युवरिवमुक्लृष्टयोगाजितमप्युवरिवं । तज्जघन्य
 समयप्रबद्धमं नोडलु पलयच्छेदासंख्यातैकभागगुणितमवकुमवकके संवृष्टि द्वाप्रिसादं कनकुमपुशियं
 तज्जघन्यवर्गणेषु तद्गुणकारदिवं गुणिसुत्तिरलु तदुक्लृष्टवर्गणेषुवकुमे बुदत्यं । ततः इत्थं
 मेलण ध्रुवसून्यवर्गणेशुक्लृष्ट तदुक्लृष्टवर्गणानिमित्तगुणकारमसंख्यातलोकविभक्तसध्वंमिप्यादृष्टि-
 १० राशियवकु १ ३ ३ ३
 १ ३ ३ ३ ३
 १ ३ ३ ३ ३
 गो गुणकारदिवं गुणिसिद तज्जघन्यराशि ध्रुवसून्यवर्गणेशुक्लृष्ट-
 वर्गणाप्रमाणमे बुदत्यं ।

सेदीसईपन्लाजगपदरासंखभागगुणगारा ।
 अप्पप्यण अवरादो उक्कस्सा हौंति णियमेण ॥६००॥

श्रेणोसूचोपल्यजगत्प्रतरासंख्यभागगुणकाराः । स्वत्वावरायाः उक्लृष्टा भवन्ति नियमेन ॥
 श्रेण्यसंख्यातैकभागसुं सूच्यंगुलासंख्यातैकभागसुं पल्यासंख्यातैकभागसुं जगत्प्रतरासंख्यातैक
 भागसुं पयासंख्यमाणि वावरनिगोवसून्य—सूक्ष्मनिगोवनभोवर्गणेशुक्लृष्टवर्गणानिमित्तगुणकारं
 गळप्युतु ।

स्वर्वाजीवराशिवोन्नतगुणो ध्रुवादितिसुणां वर्गणानां उक्लृष्टनिमित्तं गुणकारो भवति । तु इण
 तदुपरितनप्रत्येकशरीरवर्गणेशुक्लृष्टनिमित्तं पल्यासंख्यातैकभागः । कुतः ? प्रत्येकशरीरस्य कामनेसमयप्रबद्धज
 २० गुणितकमाशुभोवप्रतिबद्धमप्युवरिवमुक्लृष्टयोगाजितमप्युवरिवं । ततः ध्रुवसून्यवर्गणेशुक्लृष्टवर्गणानिमित्तगुणकारः
 गुणिते तदुक्लृष्टं भवतीत्यर्थः । ततः ध्रुवसून्यवर्गणेशुक्लृष्टनिमित्तं गुणकारः असंख्यातलोकविभक्तसध्वंमिप्यादृष्टि-
 दृष्टिपयिः १३— ३ ३ ॥५९९॥
 १ ३ ३ ३ ३

धेणिसून्यवर्गणेषु तद्गुणकारदिवं गुणिसुत्तिरलु तदुक्लृष्टवर्गणेषुवकुमे बुदत्यं । ततः इत्थं
 निमित्तं गुणकार भवति । तत्र सून्यवर्गणेषु सूक्ष्मगुलासंख्यातगुणकारस्तु सूक्ष्मनिगोवसून्यवर्गणेशुक्लृष्ट-
 ध्रुव आदि तीन वर्गणांशिके उक्लृष्टके लिए गुणकार समय राशिसे अनन्तगुणा है ।
 २१ उससे ऊपरको प्रत्येक शरीरवर्गणाका उक्लृष्ट खानेके लिए पलयका असंख्यातवर्ग भागना है ।
 गुणकार है । क्योंकि प्रत्येक शरीरवर्गणामें जो कामेण शरीरके समयप्रबद्ध हैं वे गुणित
 कमांत जीवसम्बन्धी हैं अतः जघन्य समयप्रबद्धसे पलयके अर्थच्छेदोंके असंख्यातवर्ग भागने
 है । उनको संवृष्टि वनाम है । उससे जघन्यमें गुणा करनेपर उसका उक्लृष्ट होता है । ध्रुव
 १० सून्यवर्गणाके उक्लृष्टके लिए गुणकार सब मिप्यादृष्टियोंकी राशिमें असंख्यातवर्गके न
 देनेपर जो प्रमान आये उनका है ॥५९९॥
 वावरनिगोवसून्य, सून्यवर्गणा, सूक्ष्मनिगोवसून्य और नभोवर्गणाके उक्लृष्ट करनेके
 लिए गुणकार समयमें धेनिका असंख्यानवर्ग भाग, सूच्यंगुला असंख्यातवर्ग भाग, पलय

क्रमविदमनंतवर्गणेषु उत्कृष्टविदमावल्पसंख्यातैकभागानंगु सलुतं विरलु वञ्चिकुमायुवोर्दन्तपरगणेषुवरोत्तु वर्गणेषु क्वचिद्विदु
 क्वचिद्विल्ल एतलानुमुद्वकुमप्योडागु एकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं मेणुत्कृष्टविदमावल्पसंख्यातैक
 भागमांगु सवुशचनिकांगु घटियिगुमुंतु घटियुवोर्दं विशेषमुंदायुवोर्दोर्दो पूर्ववर्गणेषु
 ५ नोडलिकेकवर्गणेषु विदं विशेषाधिकंगुत्तुपुत्तु

मत्तमी विधानविदमेयनंतवर्गणेषु नडेवयु । मत्तायुवोर्दन्तरोपरितनयगणेषुत्तु
 स्तनापस्तनवर्गणेषु नोडलिकेकवर्गणेषु विदं विशेषाधिकंगुत्तुपुत्तु । ई विधानविदं नडल्ल
 डुवुदेनेबरं यवमध्यमन्नेचरं मत्ता यवमध्यवर्गणेषु क्वचिद्विदं क्वचिन्नास्ति यद्यस्ति तदा
 एकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं मेणु उत्कृष्टविदमावल्पसंख्यातैकभागानंगुत्तुपुत्तु मत्तमिगुमन्ने
 १० विदमनंतराधस्तन सहस्राधिकवर्गणेषु नोडलेकवर्गणेषु विशेषाधिकंगुत्तुपुत्तु अतगुत्तु पूर्वोत्तु
 वर्गणेषुत्तुयस्थितक्रमादिदं नडेवयु । वञ्चिकु अल्लिदं मेले यायुवोर्दन्तवर्गणेषु स्यादस्ति
 स्यान्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं मेणुत्कृष्टविदमावल्पसंख्यातैकभागानंगुत्तु
 क्रमेण अनन्तरवर्गणा अतीत्य अनन्तरवर्गणाद्वयं क्वचिद्विदं क्वचिन्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रं

उत्कृष्टेन आवल्पसंख्यातैकभागः । अयं पूर्वस्मादेकरूपाधिकः २ एवमन्तवर्गणा अतीत्य अनन्तरांगु
 १५ वर्गणागु अपस्तनापस्तनवर्गणाम्यः एकैकाधिका भवन्ति । एवं यावत् यवमध्यं तावन्तेत्यम् । यवमध्यवर्गणं
 सद्गुशानिकद्वयं क्वचिद्विदं क्वचिन्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन आवल्पसंख्यातैकभागः ।
 अयं ततोऽप्येकरूपाधिकः । एवमन्तवर्गणा अतीत्य अनन्तरवर्गणाद्वयं स्यादस्ति स्यान्नास्ति, यद्यस्ति तदा
 एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन आवल्पसंख्यातैकभागः । अयं पूर्वस्मादेकरूपहीनः । एवं यावदुत्तुत्तु
 वर्गणा तावन्नेत्यम् । तदुत्तुत्तु स्यादस्ति स्यान्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्तुत्तु

२० वर्गणासे एक परमाणु अधिक जो प्रत्येक वर्गणा है वह लोकमें होती भी है और नहीं भी
 होती । यदि है तब एक या दो या तीन या उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग होती है ।
 इसी क्रमसे एक-एक परमाणु बढ़ाते-बढ़ाते अनन्त वर्गणा यीतनेपर उससे एक परमाणु
 अधिक अनन्तरवर्गणा कथंचित् है, कथंचित् नहीं है । यदि है तब एक या दो या तीन
 उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग होती है । पहल्लेसे इसका प्रमाण एक अधिक है ।
 इस प्रकार अनन्त वर्गणा यीतनेपर अनन्तरकी उपरकी वर्गणाओंमें नौचे-नौचेकी वर्गणावें
 एक-एक अधिक परमाणु होता है । इस प्रकार जवतक यवमध्य आये तब तक ले जाना
 परमाणुओंके रहनरूप प्रत्येक वर्गणा लोकमें होती भी है या नहीं भी होती ? यदि है तो एक
 या दो या तीन उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण होती हैं । यह उससे भी
 एक अधिक है । ऐसे अनन्त वर्गणा यीतनेपर अनन्तर जो वर्गणा है वह कथंचित्
 कथंचित् नहीं है । यदि है तो एक दो या तीन या उत्कृष्टसे आवलीके असंख्यातवें भाग है ।

मदवके पीद्गलिकत्वमयुक्तमेदितु ये बोद्धाचार्यने बपं—आ इंद्रियबोद्धात्मगे संबन्धुमे मेमु संबन्धमिल्लमो ? येतलानु संबन्धमिल्लयेय्योडवत्तेके बोडे आत्मंगुपकारमागलत्वेऽकुमाउपकारं माड्डु इंद्रियवकं साच्चिद्यमं सच्चिदरयमुमं माड्डु अयया संबन्धुमे येय्योडे एरुप्रदेशसंबन्धनु वरिवमा अणुगुमितरप्रवेशंगळोऽरुपकारं माड्डु । अट्टवशाविना मनरकलातवऋते परिभ्रमन-
५ मुंटे येय्योडवुं संभयिसवेके बोडे अणुमात्रके तत्सामर्प्याभावमपुवरिवं ।

अमूर्तत्वात्तमेगे निष्क्रियगे अट्टमप्य गुणमन्यत्रक्रियारंभवोऽरु समर्थमस्तु अहंमे कान-
ल्पट्टुडु । वायुद्रव्यविशेषं क्रियायंतमुं स्पर्शनयंतमुं प्राप्तमावुडु यनस्पतियोऽरु परित्स्वहेतुवहुं
तद्विपरीतलक्षणमो यणुमेंदितु क्रियाहेतुत्वाभाजनकुं । वीर्यांतरायज्ञानावरणक्षयोपमोपांग-
नामोदयापेक्षादिदमात्मानंदुदस्यमानकण्यमप्य वायुउच्छ्रयासलक्षणमप्युडु प्राणमेंडु पेऽरुत्पट्टुडु । अ
१० वायुविदमेवात्तमेगे वोरगण वायुवनन्यंतरोक्रियमाणनिश्वासासलक्षणमपानमेंडु पेऽरुत्पट्टुडु । इता
पेरडुमात्तमेगे अनुप्राहिल्लिगप्युयेके बोडे जीवितहेतुत्वविदमा मनःप्राणापांनंगळो मूर्तिमत्वमपित्त-
शुबुदेके बोडे प्रतिघातादिदर्शनदिवं प्रतिभयहेतुगळप्यज्ञानिपातादिगळिदं मनरके प्रतिघातं कान-
ल्पट्टुडु । सुरादिगळि स्वादिगळिदमप्य पूतिगंघिप्रतिभयोंदिव हस्ततलपुटादिगळिदमास्पसवरणादिं

सम्बन्धः स्यात् न वा ? यदि न, तन्न आत्मनः उपकारेण भाव्यं तन्नोपकुर्वीत, इन्द्रियस्य साच्चिद्यं सच्चिदं
१५ न कुर्वात् । अय स्यात्, तदा एकदेशसम्बन्धेन सोऽणुः इतरप्रदेशेषु नोपकुर्वात् । अयादृष्टवनेन तस्मात्तद्व्य-
वत्परिभ्रमणं तदस्पसंभावं, अणुमात्रस्य तत्सामर्प्याभावात्, अमूर्तस्य आत्मनो निष्क्रियस्यादृष्टगुणः अन्य
क्रियारत्ने समर्थो न । वायुद्रव्यं हि क्रियावत् स्पर्शवत् प्राप्तवनस्पतो पत्तिसन्देहेऽः तद्विपरीतलक्षणमपान-
स्तादृक् क्रियाहेतुर्न स्यात् । वीर्यांतरायज्ञानावरणक्षयोपसमाङ्गोपांगनामोदयापेक्षोपांगमनोदस्मानवरणानु-
उच्छ्रयासलक्षणः स प्राणः । तेनैव वायुना आत्मनो बाह्यवायुरभ्यन्तरीक्रियमाणो निश्वासासलक्षणः अपानः ।
२० तो च आत्मनोऽनुप्राहिल्लो जीवितहेतुत्वात्, ते च मनःप्राणापाना मूर्तिमन्तः, मनसः प्रतिभयहेतुत्वमपित्तमि-

नही है तथा वह परमाणु घराघर है, पीद्गलिक नहीं है । आचार्य कहते हैं—उस अणु
मनका सम्बन्ध आत्माके साथ है या नहीं है । यदि नहीं है तो वह आत्माका उपकार नहीं
कर सकता और न इन्द्रियोंकी ही सहायता कर सकता है । यदि सम्बन्ध है तो उस अणु
रूप मनका सम्बन्ध आत्माके एक देशके साथ ही हो सकता है और ऐसी स्थितिमें वह
२५ अन्य प्रदेशोंमें उपकार नहीं कर सकता । यदि कहोगे कि अदृष्टवश वह अणुरूप मन सत्त
आत्मामें अलातचक्रकी तरह भ्रमण करता है इससे उसका सर्वत्र सम्बन्ध होता है । तो वह
भी सम्भव नहीं है क्योंकि अणुमात्र मनमें ऐसी सामर्थ्यका अभाव है । तथा अमूर्त और
क्रियारहित आत्माका गुण अदृष्ट अन्यमें क्रिया करानेमें समर्थ नहीं है । वायु क्रियावान् और
स्पर्शवान् होनेसे प्राप्त दृशादिमें हलनचलन करनेमें कारण होता है । किन्तु यह अणु
३० मन तो उससे विपरीत लक्षणवाला है इसलिए उस प्रकारकी क्रियामें हेतु नहीं हो सकता ।
वीर्यान्तराय और ज्ञानावरणके क्षयोपसम और अंगोपांग नामकर्मके उदयकी अपेक्षामें
आत्माके द्वारा जो अन्दरकी वायु बाहर निकाली जाती है उसे उच्छ्रयास रूप प्राप्त करते
हैं । और उसी आत्माके द्वारा जो बाहरकी वायु भीतरकी ओर ली जाती है उसे निश्वासा
रूप अपान करते हैं । ये प्राण अपान भी आत्माके उपकारी हैं क्योंकि उसके जीवनेमें
३५ होते हैं । ये मन, प्राण अपान भी आत्माके उपकारी हैं क्योंकि भयके हेतु वक्षपात आदिसे मनका, और

कर्मोदयविदं कामर्गवर्गणेषुविदं कामर्गशरीरमरुं । स्वरनामकर्मोदयविदं भाषावर्गणेषुविदं वचनमरुं । नोइन्द्रियावरणधोपशमोपेतमप्य संजिजोवरुंगोपांगनामोदयविदं मनोवर्गणेषुविदं द्रव्यमनमवकुमेंवुदत्थं । ई पत्थंमं मुदण मूत्रपयविदं पेद्वयं ।

आहारवर्गणादो तिष्ठिण शरीराणि ह्येति उरसासो ।

णिस्तासो वि य तेजोवर्गणसंधा दृ तेजं ॥६०७॥

आहारवर्गणापास्त्रोणि शरीराणि भवन्ति उच्छ्वासासो । निश्वासासोपि च तेजोवर्गणास्त्रंधा-
त्तैजसांगं ॥

औदारिकवैक्रियकाहारकर्मो बो मूत्र शरीरंगच्छ उच्छ्वासासनिश्वासांगं आहारवर्गणेषुवि-
मप्युतु । तेजोवर्गणास्त्रंधविदं तैजसाशरीरमरुं ।

भासमणवर्गणादो कमेण मासा मणं तु कम्मादो ।

अद्विविद्वकम्मद्वं होदित्ति जिणेहि णिद्विद्वं ॥६०८॥

भाषावर्गणात्तः क्रमेण भाषामनस्तु कामर्गणात् । अष्टविधकर्मद्रव्यं भजतीति जिने-
निद्विष्टं ॥

भाषावर्गणास्त्रंधास्त्रंधं चतुर्विधभाषेयमरुं । मनोवर्गणास्त्रंधास्त्रंधं द्रव्यमनमरुं ।
२५ कामर्गवर्गणास्त्रंधास्त्रंधं अष्टविधकर्मद्रव्यमनमवकुमेंवितु जिनेस्वामिर्गणस्त्रंधं पेद्वत्पट्टुदु ।

णिद्वत्तं लुक्खत्तं वंधस्य य कारणं तु एयादो ।

संखेज्जासंखेज्जाणंतविद्वा णिद्वलुक्खगुणा ॥६०९॥

स्तिग्धत्वं लुक्खत्वं वंधस्य कारणं त्वेकादयः । संखेयासंखेयानतविधाः स्तिग्धलुक्खगुणाः ॥

कामर्गनामकर्मोदयात् कामर्गवर्गणया कामर्गशरीरम् । स्वरनामकर्मोदयाद् भाषावर्गणया वचनं, नोइन्द्रिया-
२० वरणधोपशमोपेतसंज्ञिनोऽङ्गोपाङ्गनामकर्मोदयान् मनोवर्गणया द्रव्यमनमव भवतीत्यर्थः ॥६०६॥ अमुनेवार्थं
सूत्रद्वेनाह—

औदारिकवैक्रियकाहारकनामानि भीणि शरीराणि उच्छ्वासासनिश्वासासो च आहारवर्गणया भवन्ति ।
तेजोवर्गणास्त्रंधेः तेजःशरीरं भवति ॥६०७॥

भाषावर्गणास्त्रंधेः चतुर्विधभाषा भवन्ति । मनोवर्गणास्त्रंधेः द्रव्यमनः, कामर्गवर्गणास्त्रंधेः अष्टवि-
२५ कर्मेति जिनेतिद्विष्टम् ॥६०८॥

तेजस वर्गणासे तैजस शरीर, कामर्ग नामकर्मके उदयसे कामर्गवर्गणासे कामर्गशरीर, स्वरनामकर्मके उदयसे भाषावर्गणासे वचन और नोइन्द्रियावरणके क्षयोपशमसे युक्त संज्ञके अंगोपांगनामकर्मके उदयसे मनोवर्गणासे द्रव्यमन धनता है ॥६०६॥
इसी अर्थको दो माथाओंसे कहते हैं—

आहारवर्गणासे औदारिक, वैक्रियिक और आहारक ये तीन शरीर और उच्छ्वासास-
३० निश्वास होते हैं । तेजसवर्गणाके स्कन्धोंसे तैजसशरीर होता है ॥६०७॥

भाषावर्गणाके स्कन्धोंसे चार प्रकारकी भाषा होती है । मनोवर्गणाके स्कन्धोंसे द्रव्य-
मन होता है और कामर्गवर्गणाके स्कन्धोंसे आठ प्रकारके कर्म होते हैं ऐसा जिनद्वेने
कहा है ॥६०८॥

एयगुणं तु जहणं णिद्वचं विगुणतिगुणसंखेज्जाऽ ।
संखेज्जाणंतगुणं होदि तहा रुक्खुमावं च ॥६१०॥

एकगुणस्तु जघन्यं स्निग्धत्वं द्विगुणत्रिगुणसंखेयासंखेयानंतगुणो भवति तथा रुक्खुमावद्व ॥
आ स्निग्धत्वगुणवलिपोऽ तु मत्ते एकगुणमप्य स्निग्धत्वं जघन्यमङ्कुमवादिवाणि द्विगुण-

एवं गुणसंयुक्ता परमाणू आदिवर्गगणहिं ठिया ।
जोगदुगाणां वंधे दोण्हं वंधो हवे णियमा ॥६११॥

एवं गुणसंयुक्ताः परमाणवः आदिवर्गणायां स्थिताः । योग्यद्विकानां वंधे द्वयोर्वंधो
भवेन्नियमात् ॥

ई वेळल्पट्ट स्निग्धरुक्षगुणसंयुक्तंगळप्प परमाणुगळु मोदल अणुवर्गणोयोऽऽतिरत्तरत्पट्टु ।
योग्यद्विकंगळो वंधमप्वेड्योऽ एरद्वकं वंधं नियमदिवमरुं । स्निग्धरुक्षत्वगुणनिमित्तमव
बंधमविशेषादिव प्रसक्तमादोडे अनिष्टगुणनिवृत्तिपूर्वकं विविधित्तिवदध ।

णिद्वणिद्धा ण वज्झंति रुक्खुरुक्खा य पोगला ।
णिद्वल्लुक्खा य वज्झंति रुवारूवी य पोगला ॥६१२॥

स्निग्धस्निग्धा न वध्यंते रुक्षरुक्षारच पुद्गलाः । स्निग्धरुक्षारच वध्यंते रुक्खुणियारच
पुद्गलाः ॥

स्निग्धगुणपुद्गलंगळोडेने स्निग्धगुणपुद्गलंगळु वंधमागल्पडवु । रुक्षगुणपुद्गलंगळोडेने
रुक्षगुणपुद्गलंगळुमत्ते वंधमागल्पडवु । इदुत्सर्गविधियक्कुमेके बोडे विदोयविधियं मुंवे वेळल्पट्ट-
पुदप्पुदरिदं स्निग्धगुणपुद्गलंगळोडेने रुक्षगुणपुद्गलंगळु वंधमागल्पडवुवत्तप्य पुद्गलंगळु रुक्खि-

२० स्निग्धगुणावल्यां तु पुनः एकगुणं स्निग्धत्वं जघन्यं स्यात् । तदादि कृत्वा द्विगुणत्रिगुणसंखेयासंखेय-
नन्तगुणं भवति तथा रुक्षत्वमपि ॥६१०॥
एवं स्निग्धरुक्षगुणसंयुक्ताः परमाणवः अणुवर्गणायां तिष्ठति योग्यद्विकानां बन्धस्थाने तयोरेव द्वयोर्वंधो
नियमेन भवति ॥६११॥ स्निग्धरुक्षगुणनिमित्तं बन्धस्थाविशेषेण प्रसक्तावनिष्टगुणनिवृत्तिपूर्वकं विधि करोति-

स्निग्धगुणपुद्गलैः स्निग्धगुणपुद्गलाः न बध्यन्ते । तथा रुक्षगुणपुद्गलैः रुक्षगुणपुद्गला न बध्यन्ते
२५ अयमूलमविधिः । विदोयविधेर्वंध्यमाणात्वात् । स्निग्धगुणपुद्गलैः रुक्षगुणपुद्गलाः बध्यन्ते ते च पुद्ग-

स्निग्ध गुणकी वंक्तिमें एक गुण स्निग्धताकी जघन्य कहते हैं । उससे लेकर दो ।
वीन गुण, संख्यात गुण, असंख्यात गुण और अनन्त गुण रूप स्निग्ध गुण होता है ।
प्रकार रुक्षगुण भी जानना ॥६१०॥

३० इस प्रकारके स्निग्ध और रुक्षगुणोंसे संयुक्त परमाणु अणुवर्गणामें विद्यमान हैं ।
से योग्य दो परमाणुओंके बन्धस्थानको प्राप्त होनेपर उन्हीं दोका बन्ध होता है ॥६११॥
स्निग्ध और रुक्ष गुणके निमित्तसे सर्वत्र बन्धका प्रसंग प्राप्त होनेपर अनिष्ट गुण
बन्धका निषेध करते हुए बन्धका विधान करते हैं—स्निग्धगुण युक्त पुद्गलोंके साथ
गुण युक्त पुद्गलोंका बन्ध नहीं होता । तथा रुक्ष गुण युक्त पुद्गलोंके साथ रुक्ष

दोत्तिगपभवदुत्तरगदेसणंतरदुगाण वंधो दु ।

णिद्धे लुक्के वि तद्वा वि जहण्णुभये वि सच्चत्थ ॥६१७॥

द्वित्रिप्रभवद्वृषुत्तरगतेष्वनंतरद्विकानां बंधस्तु । स्निग्धे रूक्षेपि तथा वि जघन्योभयस्मि
सर्वत्र ॥

- ५ स्निग्धे स्निग्धबोळं रूक्षेपि रूक्षबोळं द्वित्रिप्रभवमु वृषुत्तरमाणि नडेयवरोळु उपरि
नंतरद्विकंगळगे स्निग्धव नात्कवकं रूक्षव नात्कवकं स्निग्धवेरडरोळं रूक्षवेरडरोळं बंधम
स्निग्धवेदवकं रूक्षवपिदवकं स्निग्धव मूररोळं रूक्षव मूररोळं बंधमवकु । मितानुत्तिरलु जघन्य
युतबोळं बंधप्रसंगमाबोडे जघन्यवज्जितमण्युभयबोळु स्निग्धरूक्षद्वयबोळु सर्वत्र बंधमरियत्
मे बंधत्थं ।

- १० णिद्धदरवरगुणाणु सपरद्व्याणे वि णेदि बंधट्ठं ।
वहिरंतरंगहेदुहि गुणंतरं संगदे एदि ॥६१८॥

स्निग्धेतरावरगुणाणुः स्वपरस्यानेपि नैति बंधात्थं । बाह्याभ्यंतरहेतुन्यां गुणांतरं
एति ॥

- १५ स्निग्धजघन्यगुणाणुषु रूक्षजघन्यगुणाणुषु स्वस्थानबोळं परस्थानबोळं बंधनिमित्त
सल्लडु । बाह्याभ्यंतरहेतुगळिदं गुणांतरमं पोहि बंधवके सत्त्वं । तत्त्वात्थंबोळं "न जघन्यगुणा
मे दिंतु पेळलपट्टुदु ।

स्निग्धे रूक्षेऽपि द्वित्रिप्रभवद्वृषुत्तरक्रमेण गच्छन्ति तेषु उपरितनानन्तरद्विकानां स्निग्धवत्
रूक्षवत्पक्षस्य च स्निग्धद्वये रूक्षद्वये च बन्धः स्यात् । स्निग्धपञ्चकस्य रूक्षपञ्चकस्य च स्निग्धद्वये स्
च बन्धः स्यात् । एवं जघन्यगुणयुतेऽपि बन्धप्रसक्तौ जघन्यवज्जिते उभयत्र स्निग्धरूक्षद्वये सर्वत्र बन्धो
इत्यर्थः ॥६१७॥

- २० स्निग्धजघन्यगुणाणुः रूक्षजघन्यगुणाणुश्च स्वस्थाने परस्थानेऽपि बन्धाय योग्यो न, बाह्याभ्यन्त
निर्गुणान्तरं प्राप्तस्तु योग्यः स्यात् । तत्त्वार्थेऽपि 'न जघन्यगुमानां' इत्युक्तत्वात् ॥६१८॥

इसीको अन्य प्रकारसे कहते हैं—

- २५ स्निग्ध और रूक्षमें भी दोको आदि लेकर तथा तीनको आदि लेकर दो-दो
जाते हैं । उनमें ऊपरके अनन्तरवर्ती दोका बन्ध होता है । जैसे चार गुण स्निग्धवाले
दो गुण स्निग्धवाले दो गुण रूक्षवालेके साथ तथा चार गुण रूक्षवालेका दो गुण रूक्षवा
दो गुण स्निग्धवालेके साथ बन्ध होता है । इसी तरह पाँच गुण स्निग्ध या पाँच गुण रूक्षवा
का तीन गुण स्निग्ध या तीन गुण रूक्षवालेके साथ बन्ध होता है । इस प्रकार एक अणु
जघन्य गुणवालोंका भी बन्ध प्राप्त होनेपर निषेध करते हैं कि जघन्यको छोड़कर स्नि
१० और रूक्ष दोनोंमें सर्वत्र बन्ध जानना ॥६१७॥

जघन्य स्निग्ध गुणवाला या जघन्य रूक्ष गुणवाला परमाणु स्वस्थान और परस्थान
भी बन्धके योग्य नहीं है ।

जीवाजीवाः जीवंगळमजीवंगळु तेषां अपर पुण्यपापद्वयं पुण्यमुं पापमुमेंवेरदुं आस्रवसंवर-
निज्जरावंपमोक्षाः आस्रवमुं संवरमुं निज्जरयं चंधमुं मोक्षमुमें वितु नयपवात्यंगळपुवुं । पवात्सं-
शब्दं सर्वत्र संबंधिसत्त्वपुवुं । जीवपदात्यंः अजीवपदात्यंः इत्यादि ।

५ जीवदुगं उत्तथं जीवा पुण्णा हु सम्मगुण सदि दा ।
वदसहिदा वि य पावा तच्चिवरीया इयंतित्ति ॥६२२॥
जीवद्वयमुक्तात्थं जीवाः पुण्याः तलु सम्यक्त्वगुणसहिताः । प्रतसहिताः अपि च पापात्त-

जीवपदात्यंमुमजीवपदात्यंमुं मुन्नं जीवसमासेधोळं पइद्व्याधिकारवोळं पेळ्ळुदेवकुं ।
सम्यक्त्वगुणयुक्तजीवंगळु व्रतयुक्तजीवंगळुं पुण्यजीवंगळुपुपु । तद्विपरीतंगळु तद्व्यरहितंगळुं पत्त-
१० जीवंगळेदेरित्यलपडुवु वलु नियमविदं । चतुदंशगुणस्थानंगळोळु जीवसंख्येयं पेळुत्तं मिथ्यादृष्टि-
गळुं सासादनरं पापजीवंगळे वु पेळ्ळपंः—

मिच्छादृष्टी पावाणंताणंता य सासणगुणा वि ।
पल्लासंखेज्जदिमा अणअण्णदरुदयमिच्छगुणा ॥६२३॥

मिथ्यादृष्टयः पापाः अनंतानंताश्च सासादनगुणा अपि । पल्यासंख्येयभागाः अनंतानुसं-
१५ अन्यतरोदयमिथ्यागुणाः ॥
पापरूपरुगळप्प मिथ्यादृष्टिजीवंगळु किचिद्वून संसारिराशिप्रमाणरप्परेके बोडे सासादनरुं

तरगुणस्थानजीवसंख्येयिद हीनरप्पुदरिवं । अबु कारणविदमनंतानंगळपुवु ॥ १३ ॥ सासादनगुं-
जीवा अजीवाः तेषां पुण्यपापद्वयं आस्रवः संवरो निर्जरा बन्धो मोक्षरचेति तत्रपदार्था भवन्ति ।
पदार्थशब्दः सर्वत्र सम्बन्धनीयः, -जीवपदार्थः अजीवपदार्थः इत्यादिः ॥६२१॥

२० जीवाजीवपदार्थौ द्वौ पूर्वं जीवसमासे पइद्व्याधिकारे चोक्तार्थौ । पुण्यजीवाः सम्यक्त्वगुणयु-
व्रतयुक्ताश्च स्युः । तद्विपरीतलक्षणाः पापजीवाः खलु-नियमेन ॥६२२॥ चतुदंशगुणस्थानेषु जीवसंख्या मिथ्या-
दृष्टिसासादनो च पापजीवाविति आह—
मिथ्यादृष्टयः पापाः—पापजीवाः । ते चानन्तानन्ता एव इतरगुणस्थानजीवसंख्येयसंसारिमारवन्ति

२५ जीव, अजीव, उनके पुण्य और पाप दो तथा आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा, बन्ध
और मोक्ष ये नौ पदार्थ होते हैं । पदार्थ शब्द प्रत्येकके साथ लगाना चाहिए । जैसे जीव-
पदार्थ, अजीवपदार्थ इत्यादि ॥६२१॥
पहले जीवसमासें तथा छह द्रव्योंके अधिकारमें जीवपदार्थ और अजीवपदार्थके
कथन कर दिया है । जो जीव सम्यक्त्वगुणसे युक्त हैं और प्रतीसे युक्त हैं वे जीव पुण्य
होते हैं । उनसे विपरीत लक्षणवाले अर्थात् जो न सम्यक्त्वयुक्त हैं और न प्रतीसे युक्त हैं
१० नियमसे पापरूप हैं ॥६२२॥
आगे चौदह गुणस्थानोंमें जीवोंकी संख्या और मिथ्यादृष्टि तथा सासादन गुणस्थान
वाले जीवोंको पापी कहते हैं—
मिथ्यादृष्टि जीव पापी हैं और वे अनन्तानन्त हैं; क्योंकि संसारी जीवोंकी राशिमेंवे
तेषां उतर गुणस्थानवर्ती जीवोंकी संख्या पदानेपर मिथ्यादृष्टि जीवोंकी संख्या होती है ।

तिरधियसयणवणवुदी छण्णवुदी अप्पमत्त वे कोडी ।
पंचेव य तेणवुदी णवट्टधिसयंच्छउत्तरं पमदे ॥६२५॥

त्रिभिरधिकगतं नवनवतिः पणवतिरप्रमत्त द्विकोटि पंचेव च त्रिनवतिर्नवाष्टिकम्
पडुत्तरं प्रमत्ते ॥

प्रमत्तरोळु संख्ये अय्यु कोटियं तो भत्तमूलक्षेयं तो भत्तेडु सातिख इन्नुयल्लुत्तं
॥ ५९३९८२०६ ॥ अप्रमत्तरोळु संख्ये येरडुकोटियं तो भत्ताव लक्षेयुं तो भत्तो भत्त सातिख
मूगळपुवु ॥ २९६९९१०३ ॥

निसयं भणंति केई चउरुत्तरमत्थपंचयं केई ।
उवसामगपरिमाणं खवगाणं जाण तद्दुगुणं ॥६२६॥
१० त्रिगतं भणंति केचित् चतुरत्तरमस्तपंचकं केचित् । उपशमकपरिमाणं क्षपकानां ग्रहं
तद्विगुणं ॥

केलंबराचाप्यंशगळु उपशमकरप्रमाणं त्रिगतमेडु पेळ्वर । मत्तं केलंबराचाप्यंशं
चतुरत्तरत्रिगतमेडु पेळ्वर । मत्तं केलंबराचाप्यंशगळु अय्यु गुंविच चतुरत्तरत्रिगतमेडु पेळ्वर
॥ २९९ ॥ य ओडु गुंवे मूनूरं युवत्थं । क्षपकर प्रमाणं तद्विगुणं नीनरियेडु शिप्यंशेत्त
१५ मरुडुमो संख्येगळोळु प्रवाहोपवेशमप्य संख्येयं निरंतराष्टसमयंगळोळु विभागिसि पेळ्वरः—
सोलसयं चउवीसं तीसं छचीस तह य वादालं ।
अडदालं चउवण्णं चउवण्णं होति उवसमगे ॥६२७॥
योडगळं चतुर्विधतिः त्रिधात् पट्त्रिगततया च द्विचत्वारिंशत्तत्वारिंशच्चतुःपंचकम्
पंचादाभयंत्युपशमके ॥

२० प्रमत्ते पयकोट्याः त्रिनवतिलघाप्यष्टानवतिषड्दशाणि द्विगतं पदं च भवन्ति । ५, ९३, ९८, १०१
भयमत्ते द्विकोटियण्यवतिंशतनवतिगृह्यैश्चतस्रयो भवन्ति । २, ९६, ९९, १०३ ॥६२५॥

केचिदुपशमप्रमाणं त्रिगतं भवन्ति । केचिच्च चतुरत्तरत्रिगतं भवन्ति । केचित् तुः पञ्चोत्तरगुणं
त्रिगतं भवन्ति । एतेनत्रिगतमित्यर्थः । क्षपप्रमाणं ततो विगुणं जानोहि ॥६२६॥ अत्र प्रवाहोपवेशम्
निरन्तराष्टसमयंगुणं विभजति—

२५ प्रमत्तगुणस्थानने पाँच कोटि निरानवे लाय, अट्टानवे हजार दो सौ छह ५९१९८०
जीव है । तथा अप्रमत्तगुणस्थानने दो कोटि त्रियानवे लाय, निन्यानवे हजार एक सौ छह
२९६९९९०३ जीव है ॥६२५॥
आठवे, नौवे, दसवे, प्यारहवे गुणस्थानवर्ता उपशमभेजियालींका प्रमाण कोई प्रारं
तोन सौ करते है, कोई आचार्य तोन सौ प्यार करते है और कोई आचार्य तोन सौ पते
१० पाँच हज्ज अथवा दो सौ निन्यानवे करते है । तथा आठवे, नौवे, दसवे और प्यारहवे गुण
सम्बन्धी क्षपप्रमाणे जीवोंका प्रमाण उपशमवालींमे दूना जानना ॥६२६॥
आचार्य परम्परामे आगत प्र साही उपदेश तोन सौ प्यारकी संख्याका निरन्तर
क्षपवोने विभज्य करते है—

सयोगिजिनरुग्णसंख्ये लक्षाष्टकमुमष्टानवतिसहस्रं गच्छं द्वयुत्तरपंचशतप्रमितमत्रु ।
 ८९८५०२ । मिनित्वरं सव्वंवा वंदिसुवे । इल्लि निरंतर अष्टसमयंगळोच्च संचित्तपट्ट सयोगिजिन-
 रुग्णाचाप्यंतरापेक्षेयिदं सिद्धांतवाच्यवोचु "छमु मुद्धसमयेसु तिण्णि तिण्णि जीवा केवलमुप्याप-
 यंति । दोसु समयेसु वोहो जीवा केवलमुप्यापयंति एवमदुसमयसंचिदजीवा वावोसा हयंति"
 ५ येदित्तु पेत्तपट्टवाच समयंगळोच्च भूच भूचमेरुडु समयंगळोच्चरडरडगलु जिनरुग्णं मोक्षणा-
 गळुमर्षविगळ मेळं डु समयंगळोच्चनित्वरप्परं दो विशेषकयनवोचु त्रैराशिकपट्टकमरकुमवेंते दो
 संदृष्टि :-

| | | | |
|---------------|-------------|---------------------|---------------------------------|
| प्र के २२ | फ का ८ ६ | इ के = ८९८५०२ | लघ्य मिथकाल ८ लघ्व का ४०८४१६ |
| प्र का ८ ६ | फ स ८ । | इ का ४०८४१।८ ६ | लघ्य समयाशुद्धा ३२६७२८ |
| प्र स ८ | फ के २२ | इ स ३२६७२८ ॥ | लघ्य केवलिन : लघ्व के ८९८५०२ |
| प्र स ८ | फ के ४४ | इ स ३२६७२८ । २ | लघ्व ८९८५०२ |
| प्र स ८ | फ के ८८ | इ स ३२६७२८ २।२ | लघ्व के ८९८५०२ |
| प्र स ८ | फ के १७६ | इ स ३२६७२८ २।२।२ | लघ्व के ८९८५०२ |

सयोगिजिनसंख्या अष्टलक्षाष्टनवतिसहस्रद्वयुत्तरपञ्चशतानि ८, ९८, ५०२ तान् सरा वन्दे । इ
 १५ निरन्तराष्टसमयेसु सचित्तमुपयोगिजिनाः आचार्यान्तरापेक्षया सिद्धान्तवाक्ये-वमुद्धसमयेसु तिण्णि तिण्णि जीवा
 केवलमुप्यापयन्ति, दोसु समयेसु दो दो जीवा केवलमुप्यापयन्ति एवमदुसमयसंचिदजीवा वावोसा हयंति
 विशेषरूपेने त्रैराशिकपट्टम् । तद्यथा-प्र के २२ । फ का ६ । इ के ८, ९८, ५०२ । ल का ४०८४१, ९।
 पुनः प्र का ६ । फ स ८ । इ का ४०८४१, ९ । ल स ३, २६, ७२८ । पुनः प्र स ८ । फ के २२ । इ २ ।

सयोगी जिनींही संख्या आठ लाख अठानवे हजार पाँच सौ दो हे उन्हे सदा नमस्कार
 २० करता हूँ । यहाँ निरन्तर आठ समयोंमें संचित सयोगि जिनींही संख्या अन्य आचार्यों
 अपेक्षा निदान्तेने इस प्रकार कही है—उह मुद्ध समयोंमें तीन-तीन जीव केवलज्ञानको
 उत्पन्न करते हैं और दो समयोंमें दो-दो जीव केवलज्ञानको उत्पन्न करते हैं । इस प्रकार आठ
 समयोंमें संचित जीव चाईस होते हैं । यहाँ विशेष कथन उह त्रैराशिकोंके द्वारा करते हैं—
 १. यदि चाईस केवळी उह मास आठ समयमें होते हैं तो आठ लाख अठानवे हजार
 २१ पाँच सौ दो केवळी दिनने काठमें होंगे ऐमा त्रैराशिक करनेपर प्रमातराशि २२ केवळी
 केवळी उह मास आठ समयकाठ, इच्छाराशि आठ लाख अठानवे हजार पाँच सौ दो
 केवळी । सो प्रमातराशि आठ इच्छाराशितमें देनेमें चाईस हजार आठ सौ इच्छाकाठ आठ।
 इस संख्याको उह मास आठ समयमें गुना करनेपर काठका प्रमाण आता है । २ उह नम

जेद्वावरवहुमज्झिम ओगाहणगा दु चारि अट्टेव ।

जुगवं हवंति खवगा उवसमगा अद्धमेदेसिं ॥६३२॥

ज्येष्ठावरवहुमध्यमावगाहनकाः द्विचतुरष्टैव । युगपद्भवति क्षपकाः उपशमकाः अद्धमेतेषां ।
बोधितबुद्धश्च क्षपकरेकसमयवोक्तु युगपन्नूरं दु उपशमकर तदद्धमप्पर १०८ पुंवेदिगत् ५४

५ क्षपकर नूरं दुपशमकर तदद्धमप्पर । १०८ स्वर्गविं वंश्च क्षपकर युगपन्नूरं दुपशमकर तदद्ध-
५४

इ ३, २६, ७२८ । ल के ८, ९८, ५०२ । तथा प्र स ८ । फ के १७६ । इ ३, २६, ७२८ । ल के ८, ९८,
२ २ २ । २ । २ । २ ।

५०२ । इदमेकपक्षान्तरम् ॥६२९॥ अयैकसमये युगपत्संभवती क्षपकोपशमकविशेषसंख्यां गायानयेगाइ—
युगपदुत्कण्ठेन एकसमये बोधितबुद्धाः पुंवेदिनः स्वर्गच्युताश्च प्रत्येकं क्षपकाः अष्टोत्तरशतम् जगन्म-

आठ लाख अठ्ठानवे हजार पाँच सौ दो आता है । नीचे इन छह त्रैराशियोंको अंकित किया जाता है—

| प्रमाणराशि | फलराशि | इच्छाराशि | लब्धराशि |
|---------------------|---------------------|--------------------------------|---------------------------------|
| केवली २२ | काल छह मास ८ समय | केवली ८९८५०२ | काल ४०८४१ X छह मास आठ समय |
| काल छह मास ८ समय | समय ८ | काल ४०८४१ X छहमास आठ समय | समय ३२६७२८ |
| समय ८ | केवली २२ | समय ३२६७२८ | केवली ८९८५०२ |
| समय ८ | केवली ४४ | समय ३२६७२८ का आधा | केवली ८९८५०२ |
| समय ८ | केवली ८८ | समय ३२६७२८ का चौथाई | केवली ८९८५०२ |
| समय ८ | केवली १७६ | समय ३२६७२८ का आठवाँ भाग | केवली ८९८५०२ |

आगे एक समयमें एक साथ होनेवाली क्षपकों और उपशमकोंकी विशेष संख्या तब गायानोंसे कहते हैं—

२० एक साथ द्रष्टसे एक समयमें बोधित बुद्ध क्षपक, पुरुषवेदी क्षपक, और स्वर्गसे
प्युत होकर मनुष्य जन्म लेकर क्षपकभेगो चढ़नेवाले प्रत्येक एक सौ आठ, एक सौ आठ

मवकु ० ० ० ० ४ । १३ ० ० ४ मवं नोडलु पच्छधराऽसंयतहारमसंख्यातगुणमरकुं।
 ०-१०-१

० ० ० ० ४ ० ० ४ । १४ ० मवं नोडलु तन्मिध्रहारमसंख्यातगुणमरकुं ० ० ० ४ ० ० ४ । १४ ० ०
 ०-१०-१ ०-१०-१

मवं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुणमरकुं ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १४ । ० ० ४ मवं नोडलु
 ०-१०-१ ०-१०-१

सप्तमधराऽसंयतहारमसंख्यातगुणमरकुं ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १५ ० मवं नोडलु तन्मिध्रहारम-
 ०-१०-१ ०-१०-१

संख्यातगुणमरकुं ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १५ । ० ० मवं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुण-
 ०-१०-१ ०-१०-१

मरकुं ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १५ । ० ० ४ मन्तरमानताविगळोळु हारमं पेळ्वयं :-
 ०-१०-१ ०-१०-१

चरमधरासाणहरा आणदसम्माण आरणप्यहुडिं ।

अंतिमगेवेज्जंतं सम्माणमसंखसंखगुणहारा ॥६३८॥

धरमधरासासादनहाराः आनतसम्यग्दृष्टिनामारणप्रभृत्यंतिमप्रैवेयकांतं सम्यग्दृष्टीनाप-

संख्यसंख्यगुणहाराः ॥

तत्तो ताणुत्ताणं वामाणमणुद्धिसाण विजयादी ।

सम्माणं संखगुणो आणदमिस्से असंखगुणो ॥६३९॥

ततस्तेषामुपगतानां धामानामनुदिशानां विजयाविसम्यग्दृष्टीनां संख्यगुणः आनतमिध्रे-

संख्यगुणः ॥

१ असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः पछधरासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिध्रहार
 असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः सप्तमधरासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिध्रहार
 असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः ॥६३७॥ अपानतावपि गायात्रवेणाह—
 तत्सप्तमपृथ्वीसासादनहारात् आनतद्रयासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः आरणद्रयाऽन्तिमप्रैवेयकात्
 दशपदासंयतानां दशहाराः संख्यातगुणक्रमाः स्युः । अत्र संख्यातस्य संदृष्टिः पञ्चाङ्कः ॥६३८॥

२ ततोऽन्तिमप्रैवेयकासंयतहारात् आनतद्रयादितरुक्तेः कादशपदमिध्यादृष्टीनां एकादशहाराः संख्यातगुणि
 क्रमाः । अत्र संख्यातस्य संदृष्टिः पञ्चाङ्कः । ततः तदन्तिमप्रैवेयकवामहारात् नवानुदिशविजयादिचतुर्विंश-

भागहार संख्यातगुणा हे । उससे छठी पृथ्वीमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा ।

उससे मिथका भागहार असंख्यातगुणा हे । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा

२५ असंख्यातगुणा हे । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा हे ॥६३७॥

आगे आनतादिमें तीन गाथाओंसे कहते हैं—

सप्तम पृथ्वीसम्बन्धी सासादनके भागहारसे आनत-प्राणत सम्बन्धी असंय
 भागहार असंख्यातगुणा हे । उससे आरण-अच्युतसे लेकर अन्तिम प्रैवेयक पर्यन्त
 स्थानोंमें असंयतोंका भागहार क्रमसे संख्यातगुणा संख्यातगुणा हे । यहाँ संख्यातकी ६

१० पाँचका अंक हे ॥६३८॥

उस अन्तिम प्रैवेयक सम्बन्धी असंयतोंके भागहारसे आनत-प्राणत युगलसे

मक्कु ० ० ० ० ४ । १३ ० ० ४ मवं नोडलुं पळधराऽसंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु।
० - १० - १

० ० ० ० ४ ० ० ४ । १४ ० मवं नोडलु तन्मिथ्रहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ४ ० ० ४ । १४ ० ०
० - १० - १

मवं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १४ । ० ० ४ मवं नोडलु
० - १० - १

सप्तमधराऽसंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १५ ० मवं नोडलु तन्मिथ्रहार-
० - १० - १

५ संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १५ । ० ० मवं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुण-
० - १० - १

मक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ । १५ । ० ० ४ मनंतरमानतादिगळ्ळोळु हारमं पेळ्ळपं :-
० - १० - १

चरमधरासाणहरा आणदसम्माण आरणप्पहुडि ।

अंतिमगेवेजंतं सम्माणमसंखसंखगुणहारा ॥६३८॥

चरमधरासासादनहाराः आनतसम्यग्दृष्टिनामारणप्रनृत्यंतिमप्रेषेयकांतं सम्यग्दृष्टीनां

१० संख्यसंख्यगुणहाराः ॥

तत्तो ताणुत्ताणं वामाणमणुदुदिसाण विजयादी ।

सम्माणं संखगुणो आणदमिस्से असंखगुणो ॥६३९॥

ततस्तेयामुक्तानां वामानामनुदिशानां विजयादिसम्यग्दृष्टीनां संख्यगुणः आनतमिभं
संख्यगुणः ॥

१५ असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः पष्ठधरासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिथ्र
असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः सप्तमधरासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिथ्र
असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः ॥६३७॥ अपानतादिपु गाथात्रयेणाहु—

तस्मिन्मनुष्योसासादनहारात् आनतद्वयासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः आरणद्वयाचन्तिमप्रेषेयकां
द्वयद्वयासंयतानां द्वयहाराः संख्यातगुणक्याः स्युः । अत्र संख्यातस्य संदृष्टिः पञ्चाङ्कः ॥६३८॥

२० ततोऽन्तिमप्रेषेयकासंयतहारात् आनतद्वयादितुक्तेः सासादनमिथ्यादुष्टीनां एकादशहाराः संख्यातगुण-
क्याः । अत्र संख्यातस्य संदृष्टिः पञ्चाङ्कः । ततः तदन्तिमप्रेषेयकवामहारात् नवानुदिशविजयादिषुः

भागहार संख्यातगुणा हे । उससे छठी दृष्टीमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा ।
उससे मिथ्रका भागहार असंख्यातगुणा हे । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा ।
उससे सातवें नरकमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा हे । उससे मिथ्रका भागहार

२५ असंख्यातगुणा हे । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा हे ॥६३७॥

आगे आनतादिमें तीन गाथाओंसे कहते हैं—

मत्रम दृष्टीमन्मन्यो सासादनके भागहारसे आनत-प्राणत सम्बन्धी असंयत
भागहार असंख्यातगुणा हे । उससे आरण-अच्युतसे छेहर अन्तिम प्रेषेयक पदमें
स्वान्तोंमें असंयतोंका भागहार कमसे संख्यातगुणा संख्यातगुणा हे । यहाँ संख्यातकी

१० पंचका अंक हे ॥६३८॥

इस अन्तिम प्रेषेयक सम्बन्धी असंयतोंके भागहारसे आनत-प्राणत

जीविदरे कम्मचये पुण्णं पावोचि होदि पुण्णं तु ।

सुहपयडीणं दब्बं पावं असुहाण दब्बं तु ॥६४३॥

जीवेतरस्मिन् कम्मचये पुण्यं पापमिति भवति पुण्यं तु । शुभप्रकृतौनां द्रव्यं पापमनुमानं द्रव्यं तु ॥

- ५ जीवपदात्थं पेळ्वल्लि सामान्यविदं गुणस्थानंगळोळ्ळु मिध्यादृष्टिगुणस्थानवर्तिगळं सासादनगुणस्थानवर्तिगळं पापजोयंगळु । मिश्रगुणस्थानवर्तिगळु पुण्यपापमिध्रजोयंगळेके दोरे सम्यक्त्वमिध्यात्वमिध्रपरिणामिगळ्ळु पुव्वरिदमसंयतगुणस्थानवर्तिगळु पुण्यजोयंगळेके दोरे सम्यक्त्वसंयुक्तजोयंगळ्ळु पुव्वरिदं देशसंयतगुणस्थानवर्तिगळु सम्यक्त्वमुमेकदेशप्रतंगळोळ्ळु कूडि-वपुव्वरिदं पुण्यजोयंगळ्ळु । प्रमत्ताद्ययोगिकेवल्लिगुणस्थानवर्तिगळ्ळनितुं पुण्यजोयंगळं विनु
- १० पेळ्वदन्तरमजीवपदात्थं पेळ्वल्लि कम्मंचयवोळु काम्मणस्सकंधवोळु पुण्यमेवं पुं पापमेवं पुं मजीवपदात्थं मेरडु भेदमक्कुमल्लि पुण्यमेवं बुदापुवेदोडे मत्ते शुभप्रकृतिगळ्ळ द्रव्यमक्कुमा शुभप्रकृतिगळ्ळु बुवेदोडे सद्देहमुं शुभापुव्व्यंगळं शुभनामकम्मंप्रकृतिगळ्ळु मुच्चेगोंप्रमेवं विनु शुभप्रकृतिगळ्ळे बुवक्कुं । पापमेवं बुदा-पुवेदोडे अनुभकम्मंप्रकृतिगळ्ळ द्रव्यमक्कुमा अनुभप्रकृतिगळ्ळे बुदापुवेदोडे अतोन्वत्पार्मणे बो सुत्राभिप्रायविदमसद्देहमुं नरकापुव्व्युं नीचेगोत्रमुमनुभनामकम्मंप्रकृतिगळ्ळमे विवनुभप्रकृति-गळ्ळे बुवक्कुं ।
- १५ गळ्ळे बुवक्कुं ।

आसवसंवरदब्बं समयपवद्धं तु णिज्जरादब्बं ।

तत्तो असंखगुणिदं उक्कस्सं होदि णियमेण ॥६४४॥

आसवसंवरद्रव्यं समयप्रवद्धस्तु निज्जराद्रव्यं । ततोऽसंख्यगुणितमुत्कृष्टं भवति नियमेन ॥

- २० जीवपदार्थप्रतिपादने सामान्येन गुणस्थानेषु मिध्यादृष्टयः सासादनाश्च पापजीवाः । मिधाः पुण्यगत-मिध्रजीवाः सम्यक्त्वमिध्यात्वमिध्रपरिणामपरिणतत्वात् । असंयताः सम्यक्त्वेन, देशसंयताः सम्यक्त्वेन देशप्रतेन च प्रमत्तादयः सम्यक्त्वेन प्रतेन च युतत्वात् पुण्यजीवा एव इत्युक्ताः । अनन्तरं अजीवपदात्थं प्रसूने कर्मवये—कर्मणस्सङ्घे पुण्यं पापमिति अजीवपदार्थो द्रेषा । तत्र शुभप्रकृतौनां सद्देहगुणानुमिगोत्राणां इयं पुण्यं भवति । अनुमानां असद्देहादिसर्वाप्रसूतप्रकृतौनां द्रव्यं तु पुनः पापं भवति ॥६४३॥

- २५ जीवपदार्थं सम्बन्धी सामान्य कथनके अनुसार गुणस्थानोंमें मिध्यादृष्टि और सासादन तो पापी जीव हैं । मिश्रगुणस्थानवाले पुण्यपापरूप मिश्र जीव हैं क्योंकि उनके सम्यक् मिध्यात्वरूप मिश्र परिणाम होते हैं । असंयत सम्यक्त्वसे युक्त हैं, देशसंयत सम्यक्त्व और देशप्रवसे युक्त हैं इसलिये ये तो पुण्यात्मा जीव ही हैं और प्रमत्तादि तो पुण्यात्मा ही । इसके अनन्तर अजीव पदार्थ का प्ररूपण करते हैं—कर्मण-स्सङ्घ पुण्यरूप भी होता है और पापरूप भी होता है इस प्रकार अजीव पदार्थके दो भेद हैं । उनमें सातावेदनीय, शुभ आयु, शुभनाम और उच्चगोत्र ये शुभ प्रकृतियाँ हैं इनका द्रव्य पुण्यरूप है । असातावेदनीय आदि सय अप्रसूत प्रकृतियोंका द्रव्य पाप है ॥६४३॥
- ३०

दर्शनमोहं क्षापिसल्पडुत्तरलु तद्भववोळे सिद्धिसुगुं मेणु तृतीयचतुर्थं भ्रंशंगळोळु कर्मक्षयं
माळकुं । नात्कनेय भवमनतिक्रमिसुबुदल्ल शेषसम्प्रवत्वगळंतं किडुयुदुमेल्लमकु कारणदिवं नित्यमेडु
पेळल्पट्टु साद्यक्षयानंतंमे बुदत्यंमनंतरमीपत्यंमने पेळ्वपं :—

ययणेहि वि हेदूहि वि इंदियमयआणएहि रूवेहिं ।

वीभच्छजुगुं छाहि य तेलोषकेण वि ण चालेज्जो ॥६४७॥

यचनेरपि हेतुभिरपींद्रियमयानकेः ह्येः । वीभत्स्यजुगुप्ताभिश्च त्रैलोक्येनापि न चालनीयं ॥
कुत्सितोक्तिर्गळ्वमुं कुहेतुवुष्टांतंगळ्वमुं इन्द्रियंगळ्वा भयंकरंगळ्वदमुं विकृतवेपंगळ्वमुं
वीभत्स्यंगळ्वत्ताणदप्प जुगप्सिगळ्वमुं कि वदुना त्रैलोक्येनापि भूयं लोकादिवमुं क्षायिकसम्प्रवत्वं
चलिसल्पडु । अंतप्य क्षायिकसम्प्रवत्स्यदर्शनमागंगकुमं बोडे पेळ्वपः :—

दंसणमोहक्खवणापट्टवगो कम्मभूमिजादो हु ।

मणुसो केवलिमूले णिट्टवगो होदि सच्चत्थ ॥६४८॥

दर्शनमोहक्षपणाप्रस्थापकः कर्मभूमिजातस्तु मनुष्यः केवलिमूले निष्ठापको भवति सर्वत्र ॥
दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभकं मत्तं कर्मभूमिजनककुमिल्लियं मनुष्यनेयवकुमावोडं केवलियोपाद-
मूलवोळु दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभं माळकुं । चतुर्गतिगळोळेल्लियावोडं निष्ठापिसुगु ।
अनंतरं वेदकसम्प्रवत्स्वरूपमं पेळ्वपं—

दर्शनमोहे क्षापिते सति तस्मिन्नेव भवे वा तृतीयभवे वा चतुर्थभवे कर्मदायं करोति चतुर्थं भवं नति-
प्रमति । शेषसम्प्रवत्त्वन्न विनश्यति । तेन नित्यमित्युक्तं । साद्यक्षयानन्तमित्यर्थः । अमुमेवायंमाह—

कुत्सितोक्तिभिः—कुहेतुदुष्टान्तैः इन्द्रियभयोत्पादकविकृतवेपैः वीभत्स्यवस्तूत्पन्नजुगुप्ताभिः कि वदुना
त्रैलोक्येनापि क्षायिकसम्प्रवत्त्वं न चालयितुं शक्यम् ॥६४७॥ तत्सम्प्रवत्संनं कस्य भवेत् ? इति चेदाह—

दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभकः कर्मभूमिज एव सोऽपि मनुष्य एव तथापि केवलियोपादमूले एव भवति ।
निष्ठापरस्तु सर्वत्र चतुर्गतिषु भवति ॥६४८॥ अथ वेदकसम्प्रवत्स्वरूपमाह—

निर्जराका कारण होता है । कहा है—दर्शन मोहका क्षय होनेपर उसी भवमें या तीसरे
अथवा चौथे भवमें कर्मोंका क्षय करके मुक्ति प्राप्त करता है । चतुर्थ भवका अतिक्रमण नहीं
करता । और न अन्य सम्यक्त्वोंकी तरह नष्ट ही होता है । इसीसे इसे नित्य कहा है । अर्थात्
यह सादि अक्षयानन्त होता है ॥६४६॥

इसी पावको कहते हैं—

कुत्सित वषणोसे, मिथ्याहेतु और दृष्टान्तोंसे, इन्द्रियोंको भय उत्पन्न करनेवाड़े
भयंकर रूपोंसे, पिनावनी वस्तुओंसे उत्पन्न हुई ग्लानिसे, बहुत कहनेसे क्या, तीनों लोकोंके
द्वारा भी क्षायिक सम्यक्त्वको विचलित नहीं किया जा सकता ॥६४७॥

यह क्षायिक सम्यग्दर्शन किसके होता है यह कहते हैं—

दर्शनमोहको क्षपणाका प्रारंभ कर्मभूमिमें उत्पन्न हुआ मनुष्य ही केवलिके पाद-
मूलमें ही करता है । किन्तु निष्ठापरक चारों गतियोंमें होता है ॥६४८॥
आगे वेदक सम्यक्त्वका स्वरूप कहते हैं—

साधारणगच्छेत्तु । करणलब्धि भवन्तो वेद्यगुणैरिति तस्य स्वरूपतुगोर्ध्वं चारित्र्यतुगोर्ध्वमाहुः ।

अन्तरमो गुणान्तस्यस्त्वमं केतोर्ध्वं जोरनं वेद्यरत्नः—

चतुर्गुणं भव्यो गण्णी पञ्चतो गुण्णगो य सागारो ।

जागारो मन्तेऽगो गलद्गो सम्ममुग्गमद् ॥६५२॥

५ चतुर्गुणभयः संज्ञितमितिः गुण्णद्वय साकारः । मन्तेऽगो जागरिता सलब्धिकः तस्यस्त्वमुपगच्छति ॥

चतुर्गुणित्यभयं संज्ञितं पर्वान्तरं विगुणं भेदप्रहणमाकारं पुररोच्छ्रितनुमपुर्वितं साकारं स्त्यानगुणैरिन्द्रात्रयरहितं भावगुणभेदस्यात्रयोऽन्यतमलेऽद्यागुणं करणलब्धिपरिणतनुमित्यत्र जोरं यथातन्त्रमप्यस्यस्त्वमं गोर्ध्वं ।

१० चत्वारि विरोधाद् आउगबंधेण होइ सम्भवं ।

अणुवदमहत्त्वदाइ ण लदइ देराउगं मोणुं ॥६५३॥

चतुर्णां दोषानामायुबंधेन भवति तस्य स्त्वमं । अणुवदमहाव्रतानि न लभते देवायुर्ध्वं मुक्त्वा ।

नारकायुष्यमुमं तिर्यगायुष्यमुमं मनुष्यायुष्यमुमं देवायुष्यमुमं परभवायुष्यगंडं कृत्वा यद्वायुष्यगण्डं जीवंगण्डं तस्यस्त्वमं स्वोकरिगुणरहितं दोषमित्यलमणुवदमहाव्रतगंडं पर्यन्ते नैरेयरत्तिलि, देवायुबंधमात्रं जीवंगण्डं अणुवदमहाव्रतगंडं स्वोकरिगुणवत् ।

१५ चतस्रोर्विद्यामान्याः भव्यामभयो संभवात् । करणलभिरस्तु भव्य एव इवात्तवापि तस्यस्त्वमं प्रहणे च ॥६५१॥ अयोपशमसम्भवरूपप्रहणयोग्यजीवमाहुः—

यः चतुर्गुणभयः संज्ञो पर्याप्तकः विगुणः आकारेण भेदप्रहणेन सहितः स्त्यानगुणैरिन्द्रात्रयरहितः भावगुणभेदस्यात्रयेऽन्यतमलेऽद्यः करणलब्धिपरिणतः स जोरं यथातन्त्रं तस्यस्त्वमं उपगच्छति ॥६५२॥

२० चतुर्णां परभवामुया एतमभयं जातरदायुष्यस्य तस्यस्त्वमं भवत्यत्र दोषो नास्ति । अणुवदमहाव्रतं तु एकं बद्धदेवायुष्यं मुक्त्वा नान्ये लभन्ते ॥६५३॥

है भव्य और अभव्य दोनोंके होती हैं । किन्तु अधाकरण, अपूर्वकरण, अनियुक्तिकरण परिणत रूप करणलब्धि भव्यके ही होती है । वह भी सम्यक्त्व और चारित्र्य प्रहणके समय होती है ॥६५१॥

२५ उपशमसम्यक्त्वको प्रहण करनेके योग्य जीवको कहते हैं—

जो चारों गतियोंमें-से किसी भी गतिमें वर्तमान है किन्तु भव्य, पर्याप्तक, विगुण साकार उपयोगवाला, स्त्यानगृद्धि आदि तीन निद्राओंसे रहित अर्थात्, तीन दुःख भेदोंसे किसी एक भेदयाका धारक और करणलब्धि रूप परिणत होता है वह जीव यथासम्भव सम्यक्त्वको प्राप्त करता है ॥६५२॥

३० परभव सम्वन्धी चारों आयुओंमें-से किसी भी एक आयुका बन्ध कर लेनेपर जो जीव बद्धायु हो गया है उसके सम्यक्त्व उत्पन्न होनेमें कोई दोष नहीं है । किन्तु अणुवद और महाव्रत एक बद्धदेवायु—जिसने परभव सम्वन्धी देवायुका बन्ध किया है—को छोड़कर अन्य आयुका बन्ध कर लेनेवाले बद्धायुष्यके नहीं होते ॥६५३॥

अनंतरं सम्यक्त्वमार्गणयोः जीवसंहयेयं गायात्रयविबं पेञ्चपं—

वासपुधने खयिया संखेज्जा जइ हवति सोहम्मे ।

तो संखपल्लठिदिए केवडिया एवमणुपादे ॥६५७॥

वर्षपृथक्त्वे क्षायिकाः संहयेया भवन्ति सौधम्मं । तर्हि संख्यपत्यस्थितिके कियन्त एव-
मणुपाते ॥

वर्षपृथक्त्वबोद्धुं क्षायिकसम्यग्दृष्टिगच्छ संख्यातप्रमितस्य सौधम्मंकल्पद्रव्यबोद्धुं पुट्टुवरंत-
बोद्धे संख्यातपत्यस्थितिकनोद्धुं एनियस्य क्षायिकसम्यग्दृष्टिगच्छप्यरंबितनुपातत्रैराशिकरुमं माडुत्तरनु
प्रवर्यं ७ फ। क्षा = ७ । इ। १७ । वंद लम्पमेनितरुमुं बोद्धे :—

८

संखावलिह्दिपल्ला खइया त्तो य वेदगुवसमया ।

आवलि असंखगुणिदा असंखगुणहीणया कमसो ॥६५८॥

संख्यातावलिहृतपत्याः क्षायिकाः ततश्च वेदकोपशमकाः । आवल्यसंख्यगुणिताः अस्तं-
गुणहीनकाः क्रमशः ॥

संख्यातावलिगच्छदं भागिसलपट्ट पत्यप्रमितस्य क्षायिकसम्यग्दृष्टिगच्छप्यस्य ५ मा क्षायिक-

२७

सम्यग्दृष्टिगच्छं नोडलु वेदकसम्यग्दृष्टिगच्छमुपशमसम्यग्दृष्टिगच्छं क्रमविबभावल्यसंख्यातगुणिक-

प्रमाणरुमसंख्यातगुणहीनरुमप्यस्य वे ५ अ उ = ५

२१० २१०

यदि वर्षपृथक्त्वे क्षायिकसम्यग्दृष्टयः संख्याताः सौधमद्रव्ये उत्पद्यन्ते तर्हि संख्यातपत्यस्थितिके क्विं
इत्यणुपाते त्रैराशिके कृते प्रवर्यं ७ फ। क्षा = १ । इ। १७ लम्बाः ॥६५७॥

८

संख्यातावलिभक्तपत्यमात्रकाः क्षायिकसम्यग्दृष्टयो भवन्ति ५ । तेषुः वेदकोपशमसम्यग्दृष्टयः क्रमेण

२१

आवल्यसंख्यातगुणितासंख्यातगुणहीना भवन्ति । वे = ५ अ उ = ५ ॥६५८॥

२१ २१०

२०. सम्यक्त्वमार्गणामे जीवोंकी संख्या तीन गाथाओंसे कहते हैं—

यदि वर्षपृथक्त्वे कालमें सौधर्मपुगलमें क्षायिक सम्यग्दृष्टि संख्यात उत्पन्न होते हैं तो संख्यात पत्यकी स्थितिमें क्विने उत्पन्न होते हैं ऐसा त्रैराशिक करनेपर प्रमाणराशि वर्षपृथक्त्वे, फलराशि संख्यात जीव और इच्छाराशि संख्यात पत्य । सो फलराशिसे इच्छाराशिको गुणा करके उसमें प्रमाणराशिसे भाग देनेपर जो लब्ध आया वह कहते हैं ॥६५अ॥

२५ संख्यातआवलीसे भाजित पत्यप्रमाण क्षायिकसम्यग्दृष्टि होते हैं । क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंकी संख्याको आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर वेदकसम्यग्दृष्टियोंकी संख्या होती है । तथा क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे असंख्यातगुणे हीन उपशमसम्यग्दृष्टि होते हैं ॥६५८॥

भागमात्रमर्कः स ११ ^० अत्रवपवात्थं समयप्रवद्धप्रमाणमर्कः स ० संवरद्रव्यमुं समयप्रवद्ध-

प्रमितमर्कः। स ०। निज्जंराद्रव्यमित्तु स ० यंधद्रव्यं समयप्रवद्धमर्कः। स ० मोक्षप्रथं

१२। ६४

५। ८५

० ०

द्वयद्वंद्वगुणहानिप्रमितमर्कः स ० १२-। संवृष्टिः—

सामान्यजीव १६

अजी=सा

यंय स ०

३

=

१६ स

पु स ० १२। १

मोक्ष सं ० १२

०

५ पुण्यजीव ० ५ ० ० ४
१ १ १ ४

पापजीव १३ =

पाप ० ^० १२-१

आस्र स ०

संव स ०

निज्जं स ० १२=६४

५। ८५।

०

अजीवपापं द्वयद्वंद्वगुणहानिसंख्यातबहुभागः स ० १२-१ ^० आस्रवपरायः समयप्रवद्धः स ०। संवरद्रव्यं

समयप्रवद्धः स ०। निज्जंराद्रव्यमेतावत्- स ० १२-। ६४ वन्धद्रव्यं समयप्रवद्धः स ०। मोक्षप्रथं

५ ८५

०

किंचिद्रूनद्रव्यगुणहानिः स ० १२-॥६५९॥

- १० समय प्रवद्धोंमें-से संख्यातवें भाग अजीवपुण्यका परिमाण है। संसारी राशियों-से मिथको अपेक्षा कुछ अधिक पुण्यजीवोंके प्रमाणको घटानेसे पापजीवोंका प्रमाण होता है। देह गुणहानिप्रमाण समयप्रवद्धोंमेंसे संख्यात बहुभाग अजीवपापका परिमाण है। आस्रव पदाय समयप्रवद्ध प्रमाण है। संवर द्रव्य समयप्रवद्ध प्रमाण है। निज्जंराद्रव्य गुणधेनि निज्जंराके षट्कृष्ट द्रव्यप्रमाण है। वन्धद्रव्य समयप्रवद्धप्रमाण है। मोक्षद्रव्य कुछ कम देह गुणहानि-प्रमाण है ॥६५९॥

विग्रहगदिमावण्णा केवलिनो समुग्घदो अजोगी य ।

सिद्धा य अणाहारा सेसा आहारया जीवा ॥६६६॥

विग्रहगतिमापन्नाः केवलिनः समुद्घातवंतोऽयोगी च सिद्धाश्चानाहाराः शेषा आहारका

जीवाः ॥

विग्रहगतियं पोद्दि वीवंगळु प्रतरलोकपूरणसमुद्घातसयोगकेवलिगळुमयोगकेवलिगळुं

सिद्धपरमेष्ठिगळुंमनाहारकमप्पर । शेषजीवंगळुंनितोऽनितुमाहारकरेयप्पर । समुद्घातमेनितं बों पेळ्दपव ।

वेयणकसायवेगुव्वियो य मरणंतियो समुग्घादो ।

तेजाहारो छट्ठो सत्तमओ केवलीणं तु ॥६६७॥

वेदनाकषायवेगुव्विकाश्च मारणांतिकः समुद्घातश्च । तेजः आहारः पप्रः सत्तमः

केवलिनं तु ॥

वेदनासमुद्घातमे बुं कषायसमुद्घातमे बुं वेगुव्विकसमुद्घातमे बुं मारणांतिकसमुद्घातमे बुं

तेजससमुद्घातमे बुंमाहारकसमुद्घातमे बुं केवलिसमुद्घातमे बुं वितु सत्तसमुद्घातंगळुप्पु ।

अनंतरं समुद्घातमे बुदेने बोडे पेळ्दपं :—

मूलशरीरमच्छेडिय उच्चरदेहस्स जीवपिंडस्स ।

णिग्गमणं देहादो होदि समुग्घादणामं तु ॥६६८॥

मूलशरीरमत्यक्त्वा उत्तरदेहस्य जीवपिंडस्य । निग्गमनं देहाद् भवति समुद्घातनाम तु ॥

मूलशरीरमं विडे कान्मणतेजसोत्तरदेहवजीवप्रवेशप्रचयक्के शरीरवि पोरणलो निपणंनं

समुद्घातमे बुदक्कं

२०

विग्रहगत्याश्रितचतुर्गतिजीवाः प्रतरलोकपूरणसमुद्घातपरिणतसयोगिजिनाः अयोगिजिनाः सिद्धाश्च
अनाहारा भवन्ति । शेषजीवाः सर्वेऽपि आहारका एव भवन्ति ॥६६९॥ समुद्घातः कतिथा ? इति चेदाह—
समुद्घातः वेदनाकषायवेगुव्विकमारणान्तिकतेजसाहारककेवलिसमुद्घातभेदात् सत्त्वथा भवति ॥६६७॥
स च किरूपः ? इति चेदाह—
मूलशरीरमत्यक्त्वा कान्मणतेजसरूपोत्तरदेहमुक्तस्य जीवप्रवेशप्रचयस्य शरीराद्बहिर्निग्गमनं एव

२१

समुद्घातो नाम भवति ॥६६८॥

विग्रहगतिमें आपे चारों गतियोंके जीव, प्रतर और लोकपूरण समुद्घात करतेवाजे
सयोगी जिन, और सिद्ध अनाहारक हैं । शेष सब जीव आहारक हैं ॥६६९॥

समुद्घातके भेद कहते हैं—
वेदना, कषाय, विक्रिया, मारणान्तिक, तेजस, आहार और केवली समुद्घातके भेद

२०

समुद्घात सात प्रकारका होता है ॥६६७॥

समुद्घातका स्वरूप कहते हैं—
मूल शरीरको छोड़कर कान्मण और तेजस रूप उत्तर शरीरसे युक्त जीवके प्रवेश

समुद्घात शरीरसे बाहर निकलना समुद्घात है ॥६६८॥

२१ १. व इति ५० ।

विग्गहगदिमावण्णा केवलिनो समुग्घदो अजोगी य ।

सिद्धा य अणाहारा सेसा आहारया जीवा ॥६६६॥

विग्रहगतिमापन्नाः केवलिनः समुद्घातयंतोऽप्योगी च सिद्धाश्चानाहाराः शेवा ब्राह्मण
जीवाः ॥

- ५ विग्रहगतियं पोद्दिव जीवंगळु प्रतरलोकपूरणसमुद्घातसयोगकेवलिगळुमयोगकेवलिगळुं
सिद्धपरमेष्ठिगळुंमनाहारकमप्यव । शेपजीवंगळुंनितोळुवनितुमाहारकरेयप्यव । समुद्घातमनितं दों
वेळुदप्यव ।

वेयणकसायवेगुच्चिवयो य मरणंतियो समुग्घादो ।

तेजाहारो छट्ठो सत्तमओ केवलीणं तु ॥६६७॥

- १० वेदनाकपायवेगुच्चिकाश्च मारणांतिकः समुद्घातश्च । तेजः आहारः षष्ठः सत्तम
केवलिनां तु ॥

वेदनासमुद्घातमे बुं कपायसमुद्घातमे बुं वैगुच्चिकसमुद्घातमे बुं मारणांतिकसमुद्घातमे बुं
तेजससमुद्घातमे बुंमाहारकसमुद्घातमे बुं केवलिसमुद्घातमे बुं वितु सप्तसमुद्घातंगळुप्युव ।

अनंतरं समुद्घातमे बुदेने बोडे पेळुवपं :—

- १५ मूलशरीरमछंडिय उचरदेहस्स जीवपिंडस्स ।

णिग्गमणं देहादो होदि समुग्घादणामं तु ॥६६८॥

मूलशरीरमत्यक्त्वा उत्तरदेहस्य जीवपिंडस्य । निर्गमनं देहाद् भवति समुद्घातनाम तु ॥

मूलशरीरमं बिडवे काम्मणतेजसोत्तरवेहदजीवप्रवेशप्रचयवके शरीरदि पोरगलो निर्गमनं
समुद्घातमे बुदक्कं

- २० विग्रहगत्याधितचतुर्गतिजीवाः प्रतरलोकपूरणसमुद्घातपरिणतसयोगिजिनाः अयोगिजिनाः सिद्धपर
अनाहारा भवन्ति । शेपजीवाः सर्वेऽपि आहारका एव भवन्ति ॥६६६॥ समुद्घातः कतिथा ? इति चेदाह—
समुद्घातः वेदनाकपायवेगुच्चिकमारणान्ति कर्तजसाहारककेवलिसमुद्घातमेवात् सप्तथा भवति ॥६६७॥
स च किंस्थः ? इति चेदाह—

- २५ मूलशरीरमत्यक्त्वा काम्मणतेजसोत्तरदेहयुक्तस्य जीवप्रवेशप्रचयस्य शरीराद्बहिर्निर्गमनं तु
समुद्घातो नाम भवति ॥६६८॥

विग्रहगतिमे आये चारो गतियोके जीय, प्रतर और लोकपूरण समुद्घात करनेवाते
सयोगी जिन, और सिद्ध अनाहारक हैं । शेप सब जीव आहारक हैं ॥६६६॥

समुद्घातके भेद कहते हैं—

- १० वेदना, कपाय, विक्रिया, मारणांतिक, तेजस, आहार और केवली समुद्घातके भेद
समुद्घात सात प्रकारका होता है ॥६६७॥

समुद्घातका स्वरूप कहते हैं—

मूल शरीरको छोड़कर काम्मण और तेजस रूप उत्तर शरीरसे मुक्त जीवके प्रो
समुद्घात शरीरसे बाहर निकलना समुद्घात है ॥६६८॥

विग्गहगदिमावण्णा केवलिणो समुग्घदो अजोगी य ।
सिद्धा य अणाहारा सेसा आहारया जीवा ॥६६६॥

विग्रहगतिमापन्ताः केवलिनः समुद्घातयंतोऽयोगी च सिद्धाश्चानाहाराः शेषा बाहारा
जीवाः ॥

विग्रहगतियं पोद्दिद जीवंगळु प्रतरलोकपूरणसमुद्घातसयोगकेवलिणञ्जुमयोगकेवलिणञ्जु
सिद्धपरमेष्ठिगळुमनाहारकमप्यव । शेषजीवंगळुनितोऽवनिनुमाहारकरेप्यव । समुद्घातमनिते दो
पेऽवपव ।

वेयणकसायवेगुव्वियो य मरणंतियो समुग्घादो ।
तेजाहारो छट्ठो सत्तमओ केवलीणं तु ॥६६७॥

वेदनाकपायवैगुव्विकाश्च मारणातिरुः समुद्घातदच । तेजः आहारः पठः सत्तम

केवलिनो तु ॥

वेदनासमुद्घातमे बुं कपायसमुद्घातमे बुं वैगुव्विकसमुद्घातमे बुं मारणातिकसमुद्घातमे बुं

तेजससमुद्घातमे बुमाहारकसमुद्घातमे बुं केवलिसमुद्घातमे बुं वितु सत्तसमुद्घातंगळुपुत्रु ।

अनंतरं समुद्घातमे वेदेने बोडे पेऽवयं :—

मूलसरीरमच्छंडिय उत्तरदेहस्स जीवपिंडस्स ।

णिग्गमणं देहादो होदि समुग्घादणामं तु ॥६६८॥

मूलशरीरमत्यक्त्वा उत्तरदेहस्य जीवपिंडस्य । निग्गमनं देहाद् भवति समुद्घातनाम तु ॥

मूलशरीरमं विद्धे काम्मणत्तैजसोत्तरवेहवजोवप्रदेशप्रचयक्के शरीरवि पोरणलो नित्तमं

समुद्घातमे बुदवकं

विग्रहगत्याश्रितचतुर्गतिजीवाः प्रतरलोकपूरणसमुद्घातपरिणतसयोगिजिनाः अयोगिजिनाः सिद्धाश्च
अनाहारा भवन्ति । शेषजीवाः सर्वेऽपि आहारका एव भवन्ति ॥६६६॥ समुद्घातः कतिथा ? इति वेदु—
समुद्घातः वेदनाकपायवैगुव्विकमारणान्ति कतं जसाहारककेवलिसमुद्घातमेदात् सत्तथा भवति ॥६६७॥

स च किरुपः ? इति वेदाह—

मूलशरीरमत्यक्त्वा काम्मणत्तैजसोत्तरदेहयुक्तस्य जीवप्रदेशप्रचयस्य शरीराद्बहिर्निगमनं च

समुद्घातो नाम भवति ॥६६८॥

विग्रहगतिमे आये चारो गतियोके जीय, प्रतर और लोकपूरण समुद्घात करनेवाते
सयोगी जिन, और सिद्ध अनाहारक हैं । शेष सय जीव आहारक हैं ॥६६६॥

समुद्घातके भेद कहते हैं—
वेदना, कपाय, विक्रिया, मारणान्तिक, तेजस, आहार और केवली समुद्घातके भेद

समुद्घात सात प्रकारका होता है ॥६६७॥

समुद्घातका स्वरूप कहते हैं—

मूल शरीरको छोड़कर काम्मण और तेजस रूप उत्तर शरीरसे युक्त जीवके प्रदे
समुद्घात शरीरसे बाहर निकलना समुद्घात है ॥६६८॥

विग्गहगदिमावपणा केवलिनो समुग्घदो अजोगी य ।

सिद्धा य अणाहारा सेसा आहारया जीवा ॥६६६॥

विग्रहगतिमापन्नाः केवलिनः समुद्घातयंतोऽयोगी च सिद्धाश्चानाहाराः शेषा आहारस्य जीवाः ॥

५ विग्रहगतियं पोद्दि व जीवंगळु प्रतरलोकपूरणसमुद्घातसयोगकेवलिगळुमयोगकेवलिगळु सिद्धपरमेष्ठिगळुमनाहारकमप्पय । शेषजीवंगळेनितीळुवनितुमाहारकरेयप्पय । समुद्घातमनिती रोणेच्छयय ।

वेयणकसायवेगुव्वियो य मरणंतियो समुग्घादो ।

तेजाहारो छट्ठो सत्तमओ केवलीणं तु ॥६६७॥

१० वेदनाकपायवेगुव्विकाश्च मारणांतिकः समुद्घातश्च । तेजः आहारः षष्ठः सत्तमकेवलिनं तु ॥

वेदनासमुद्घातमे बुं कपायसमुद्घातमे बुं वेगुव्विकसमुद्घातमे बुं मारणांतिकसमुद्घातमे बुं तेजससमुद्घातमे बुं माहारकसमुद्घातमे बुं केवलिसमुद्घातमे बुं धितु सत्तसमुद्घातंगळुप्पु ।

अनंतरं समुद्घातमे बुदेने बोडे पेच्छपं :—

१५ मूलशरीरमच्छंडिय उत्तरदेहस्स जीवपिंडस्स ।

णिग्गमणं देहादो होदि समुग्घादणामं तु ॥६६८॥

मूलशरीरमत्यक्त्वा उत्तरदेहस्य जीवपिंडस्य । निगमनं देहाद् भवति समुद्घातनाम तु ॥

मूलशरीरं विद्धे काम्मणतेजसोत्तरदेहवजोवप्रदेशप्रचयक्के शरीरवि पोरात्पो निगमनं समुद्घातमे बुदक्कं

२० विग्रहगत्याश्रितचतुर्गतिजीवाः प्रतरलोकपूरणसमुद्घातपरिणतसयोगिजिनाः अयोगिजिनाः सिद्धाश्चानाहारा भवन्ति । शेषजीवाः सर्वेऽपि आहारका एव भवन्ति ॥६६६॥ समुद्घातः कतिपा ? इति चेद्द्वयं— समुद्घातः वेदनाकपायवेगुव्विकमारणान्ति कर्तवसाहारककेवलिसमुद्घातभेदात् सत्तपा भवति ॥६६७॥ स च किरुपः ? इति चेदाह—

मूलशरीरमत्यक्त्वा काम्मणतेजसूपोत्तरदेहपुक्तस्य जीवप्रदेशप्रचयस्य शरीरद्वयनिगमनं वा

२५ समुद्घातो नाम भवति ॥६६८॥

विग्रहगतिमे आपे पारो गतियोकि जीव, प्रतर और लोकपूरण समुद्घात करनेवाते सयोगी जिन, और सिद्ध अनाहारक हैं । शेष सय जीव आहारक हैं ॥६६६॥

समुद्घातके भेद कहते हैं—

१० वेदना, कपाय, विक्रिया, मारणान्तिक, तेजस, आहार और केवली समुद्घातके भेदते समुद्घात सात प्रकारका होवा है ॥६६७॥

समुद्घातका स्वरूप कहते हैं—

मूल शरीरको छोड़कर काम्मण और तेजस रूप उत्तर शरीरसे मुक्त जीवके प्रवेश समुद्घात शरीरमे बाहर निकलना समुद्घात है ॥६६८॥

काम्मणकाययोगिगञ्जु अनाहारकरपरिमाणमवहुं । तत्राग्निविरहितमप्य संसारिराति
आहारकर परिमाणमवकुमवेत्ते दोडे काम्मणकाययोगकालं समयत्रयमवकुं । औदारिकनि-
कालमंतमुहूर्तमवकुं । तत्कायकालं संख्यातगुणमवकुं । कृडि त्रिसमयाधिकसंख्यातगु-
णितान्तमुहूर्तमवकुं ३ मिदु प्रक्षेपकयोगमत्रकुमंतगुतं विरलु 'प्रक्षेपकयोगोद्व्यूतमिधप्रिः

२१४

- ५ प्रक्षेपकाणां गुणको भवेत्सः । येनो सूत्रानिप्रायदिवं त्रेरागिकं माडल्पडुं । प्र १११।
फ १३-। इ स ३ । लब्धमनाहारकर प्रमाणमवकुं । १३-। ३ मत्तं प्र २१।५। फ १३-। ६
२१।५ । लब्धमाहारकर प्रमाणमवकुं १३-। २१।५ वैक्रियिकाहारकगळ्ळं यथायोग्यमनि-
यत्पडुं ।

१० काम्मणकाययोगिजीवरातिः अनाहारकपरिमाणं भवति । तद्विरहितसंसारिरातिः आहारकपरिमाणं
भवति । तद्यथा—योगकालः काम्मणस्य त्रिसमयाः । औदारिकमिधस्य अन्तमुहूर्तः । औदारिकस्य ततः संख्या-
गुणः । मिलित्वा त्रिसमयाधिकसंख्यातगुणितान्तमुहूर्तः । ३- १- "प्रक्षेपयोगोद्व्यूतमिधप्रिः प्रधोरकानो
२१४

- गुणको भवेदिति प्र २१।५। फ १३-। इ स ३ । लब्धमनाहारकजीवप्रमाणं १३- ३ पुनः २१।५।
फ १३-। इ २१।५ । लब्धमाहारकजीवप्रमाणं १३-। २१।५ वैक्रियिकाहारकपोर्वापोर्वा
जातव्यम् ॥६०१॥

- १५ योगमार्गणामे काम्मणकाय योगिवीका जितना प्रमाण कहा है वतना ही अनाहारकोंका
प्रमाण है । संसारोरातिमेंसे अनाहारकोंका प्रमाण घटानेपर आहारकोंका परिमाण होता
है । जो इस प्रकार है—काम्मणयोगका काल तीन समय है । औदारिक मिध काययोगका
काल अन्तमुहूर्त है । औदारिक काययोगका काल वससे संख्यातगुणा है । सब मिलानेपर
तीन समय अधिक संख्यात गुणित अन्तमुहूर्त काल होता है । करण सूत्रमें कहा है प्रक्षेपको
२० मिलाकर मिले हुए पिण्डसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उसे प्रक्षेपकसे गुणा करनेपर अपना-
अपना प्रमाण होता है । सो उक्त तीनों योगोंके कालोंको मिलानेपर तीन समय अधिक
संख्यात अन्तमुहूर्त काल हुआ । इसका भाग कुछ हीन संसारोरातिमें देनेपर जो प्रमाण
आवे वसे तीनसे गुना करनेपर अनाहारक जीवोंका प्रमाण होता है । शेष सब संसारो
२५ यहाँ उनकी मुख्यता नहीं है ॥६०१॥

उपयोगाधिकारः ॥२०॥

अनंतरंमुपयोगाधिकारमं पेञ्चपं :—

वस्थुणिमित्तं भावो जादो जीवस्स जो दु उवजोगो ।
सो दुविहो णायञ्चो सायारो चैव णायारो ॥६७२॥

५ वस्तुनिमित्तं भावो जातो जीवस्य यस्तूपयोगः । स द्विविधो ज्ञातव्यः साकारवचनानाकारः ॥
वस्तु गुणपर्यायावस्मिन्निति वस्तु—जेयपदार्थस्तदग्रहणाय प्रवृत्तं ज्ञानं वस्तुनिमित्तं
भावः अर्थग्रहणव्यापार इत्यर्थः । अर्थप्रकाशननिमित्तमाणि जातः प्रवृत्तमप्य जीवस्य जीव
यस्तु आवुदोडु भावः परिणामः । क्रियाविशेषमदुपयोगमंबुदु, अबु मत्ते साकारोपयोगमंबुदु
कारोपयोगमंबु द्विप्रकारमेवे ज्ञातव्यमवकु ।

अनंतर साकारोपयोगमंबु प्रकारमंबु पेञ्चपं :—

१० णापं पंचविहंपि य अण्णाणतियं च सागरुवजोगो ।
चदुदंसणमणगारो सञ्चे तल्लखुणा जीवा ॥६७३॥

ज्ञानं पंचविधमपि च अज्ञानत्रयं च साकारोपयोगः । चतुर्दशानमनाकारः सर्वे तल्लज्जा
जीवाः ॥

मतिभ्रूतावधिमनःपर्ययकेवलमंबु सम्यग्ज्ञानपंचकमुं कुमतिकुश्रुतविभंगमंबु मूह तैर-

१५ ज्ञानमुं साकारोपयोगमंबुदवकुं । चधुदंशनमचधुवशनमवधिदशनं केवलदशनमंबो नाल्कुं दशनमन-

सुवतः सुवतैः सेव्यः सुवतः सुवताय सः ।
प्राताहंन्यपदो दद्यात् स्वकीयां सुवतप्रियम् ॥२०॥

अधोपयोगाधिकारमाह—

२० वस्तुः गुणपर्यायो अस्मिन्निति वस्तु जेयपदार्थः— तदग्रहणाय जातः—प्रवृत्तः यो भावः—परिणाम
क्रियाविशेषः जीवस्य स उपयोगो नाम । स च साकारोऽनाकारवैति द्वेषा ज्ञातव्यः ॥६७२॥ अथ साकारो
पयोगोऽष्टधा इत्याह—

मतिभ्रूतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानानि कुमतिकुश्रुतविभङ्गाज्ञानानि च साकारोपयोगः । वधुदंसण-

२५ उपयोगाधिकार कहते हैं—

त्रिसमं गुण और पर्यायोका वास है वह वस्तु अर्थात् जेय पदार्थ है । उसको मर
करनेके लिए जीवका जो भाव अर्थात् परिणाम होता है वह उपयोग है । वह दो प्रकारका
है—साकार और अनाकार ॥६७२॥

आगे इनके भेद कहते हैं—

मति, सुव, अवधि, मनःपर्यय और केवल ये पाँच ज्ञान तथा कुमति, कुश्रुत, विभंग

ज्ञानोपयोगयुक्तवृत्त परिमाणं ज्ञानमार्गणेषोऽपि वेत्तव्यं यत्किञ्चिदपि । दर्शनोपयोगिवृत्त परिमाणं दर्शनमार्गणेषोऽपि वेत्तव्यं क्रममेव कुर्वन्ते तेषां बोद्धे कुमतिज्ञानिवृत्त किञ्चिद्वन संसारिराशिप्रमानमकम् ।

१३—कुश्रुतज्ञानिवृत्तमनिवरेयकम् । १३—॥ विभंगज्ञानिवृत्त = १ मतिज्ञानिवृत्त ५ यत्किञ्चिदपि

$$४।६५ = १$$

निवृत्त ५ अयधित्तानिवृत्त ५ अ मनःपर्ययज्ञानिवृत्त १ केवलज्ञानिवृत्त १ तियंभिनङ्गज्ञानिवृत्त १
 ५ ज्ञानिवृत्त—६ ५ मनुष्यविभंगज्ञानिवृत्त १ १ नारकविभंगज्ञानिवृत्त—२— देवविभंगज्ञानिवृत्त

$$= \frac{1}{४।६५-१}$$
 शक्ति चतुर्दशनिवृत्त । प्र । वि । ति । च । पा । ४ । फ । ४ । इ । च । पं । २ । लब्ध शक्त

॥ १३ ॥ दर्शनोपयोगयुक्तं ज्ञानमार्गणाय । दर्शनोपयोगिवृत्त परिमाणं दर्शनमार्गणायत् भवेत् । तद्यथा—कुमतिज्ञानिवृत्त

कुश्रुतज्ञानिवृत्तमनिवरेयकम् किञ्चिद्वन संसारिराशिः १३— विभङ्गज्ञानिवृत्त = १ । मतिज्ञानिवृत्त ५ यत्किञ्चिदपि

$$४।६५ = १$$

॥
 १०— १ नारकविभङ्गज्ञानिवृत्त— २— देवविभङ्गज्ञानिवृत्त = १ । शक्ति चतुर्दशनिवृत्तः प्र—वि । ति । च । पा । ४ ।

$$४।६५ = १$$

ओघादेशप्ररूपणाधिकारः ॥२१॥

अनंतरमुक्तविदातिप्ररूपणेगळं यथासंभवागि गुणस्थानंगळोळं मार्गंगास्थानंगळोळं
प्रत्येकं वेळदपं-

गुणजीवा पज्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गणुवजोगो ।
जोग्गा परूविदव्वा ओघादेशेसु पत्तेयं ॥६७७॥

गुणजीवाः पर्याप्तयः प्राणाः संज्ञादच मार्गंगा उपयोगे योग्याः प्ररूपयितव्याः ओघादेशे
५ प्रत्येकं ॥ गुणस्थानमार्गंगास्थानंगळोळं प्रत्येकं । गुणस्थानंगळं जीवसमासेगळं पर्याप्तियं गळं
गळं संज्ञेगळं मार्गंगेगळंमुपयोगंगळंमे वीविदातिप्रकारंगळं प्ररूपितत्पद्भवतु । यथायोग्यमगि ।

अदे ते बोडे—

चउ पण चोइस चउरो गिरयादिसु चोइदसं तु पंचक्खे ।
तसकाये सेदिदियकाये मिच्छं गुणट्ठाणं ॥६७८॥

चतुः पंच चतुर्दश चत्वारि नरकाविसु चतुर्दश तु पंचाशे । तसकाये शेपेन्द्रियकाये निम्न
वृष्टिगुणस्थानं ॥

नरकतिपर्याप्तमनुप्यवेवगतिगळोळं यथासंभवागि नालकुमय्यवुं पदिनालकुं नालकुं गुणस्थानं
१५ गळपुववे ते बोडे—नरकगतिपोळं मिथ्यावृष्टिसासावनमिथासंयतगुणस्थानचतुष्टयमसकं । तिप्यं
तिपोळं मिथ्यावृष्टिसासावनमिथासंयतवेदासंयतगुणस्थानपंचकमसकं । मनुप्यगतिपोळं सामन्

ननिर्नमत्तु राधीघोऽन्यत्तजानादिबैभवः ।
हृदधातित्रजो जीवाइयान्नः सादवतं पदम् ॥

अघोतरमनिपेयं ज्ञापयति—

उक्तविदातिप्ररूपणासु गुणस्थानमार्गंगास्थानयोः प्रत्येकं गुणस्थानानि जीवसमासाः पर्याप्तयः क्रमं
२० संज्ञाः, मार्गंगाः उपयोगादच यथायोग्यं प्ररूपयितव्याः ॥६७७॥ तद्यथा—
नारकादिगतिषु क्रमेण गुणस्थानानि मिथ्यावृष्टिपाशोनि चरकारि पञ्च चतुर्दश चत्वारि भवन्ति ।
इन्द्रियमार्गंगाया पंचेन्द्रियेषु तु पुनः कायमार्गंगायां तसकाये च, चतुर्दश, शेपेन्द्रियकायेषु एकं मिथ्यावृष्टिगुण
स्थानं । जीवसमासास्तु नरकगतौ संज्ञिपर्याप्तनिवृत्त्यपर्याप्तौ द्वौ । त्रियंगतो चतुर्दश । मनुप्यगतौ सतिपर्याप्तौ

२५ योस प्ररूपणाओंका कथन करनेके परचात् जो कुछ अभिधेय है उसे कहते हैं—
ऊपर कहा योस प्ररूपणाओंमें-से गुणस्थान और मार्गंगास्थानमें गुणस्थान, जं-
सनास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा और उपयोगोंका यथायोग्य प्ररूपणा करना चाहिये ॥६७७॥
वही कहते हैं—
गतिनागणामें क्रमसे गुणस्थान, मिथ्यावृष्टि आदि नरक गतिमें चार, त्रियंगगतिमें
पंच, मनुप्यगतिमें चौदह और देवगतिमें चार होते हैं । इन्द्रियमार्गंगामें, पंचेन्द्रियमें, और
कायमार्गंगामें तसकायमें चौदह गुणस्थान होते हैं । शेष एकेन्द्रियादिमें और स्थावरकायमें

मज्झिमचउमणवयणे सण्णिप्पहुडिं तु जाव खीणोत्ति ।
सेसाणं जोगिच्छि य अनुभयवयणं तु वियलादो ॥६७९॥

मध्यमचतुष्मर्नोवचनेषु संतिप्रभृतित्त्सु यावत् । शीणकवायस्तावत्प्यतं शेषाणां योगिपय्यंतं
च अनुभयवचनं तु विकलात् ॥

मनोवचनयोगाङ्कोऽत्र मध्यमंग्रहस्य असत्यमनोयोगमुभयमनोयोगमसत्यवचनयोगमुभयवचन-
योगमंत्रो नात्करोऽं मिथ्यादृष्टिसंतिपंचेंद्रियमादियाणि शीणकवायगुणस्थानपय्यंतमप्य पनरेत्
पनरेत्तु गुणस्थानंग्रहोर्भो देवे संतिपंचेंद्रियपय्यामिजीवसमासेगुण प्रत्येकमप्युत्तु । दोषसत्यमनोयोग-
दोऽत्रमुभयमनोयोगदोऽं सत्यवचनयोगदोऽं संतिपंचेंद्रियपय्यामिनिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियाणि
सयोगिकेवल्लिगुणस्थानपय्यंतं पदिमूर्धं गुणस्थानंग्रहं पंचेंद्रियसंतिपय्यामिजीवसमासेगुणो दोषु
१० प्रत्येकमप्युत्तु । अनुभयवचनयोगदोऽं विकलत्रयमिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियाणि सयोगिकेवल्लिगुण-
स्थानपय्यंतमाव पदिमूर्धं गुणस्थानंग्रहं द्वौद्रियश्रींद्रियचतुरिंद्रियसंतिपंचेंद्रियासंतिपंचेंद्रियपय्यामि-
जीवसमासेगुणमध्यप्युत्तु :— मनोयोग

| | | | | | | | |
|-----|----|---|----|---|----|---|----|
| स | । | अ | । | उ | । | अ | |
| गु | १३ | । | १२ | । | १२ | । | १३ |
| जी- | १ | । | १ | । | १ | । | १ |

वाग्योग

| | | | | | | |
|----|---|----|---|----|---|----|
| स | । | अ | । | उ | । | अ |
| १३ | । | १२ | । | १२ | । | १३ |
| १ | । | १ | । | १ | । | १ |

ओरालं पज्जत्ते थावरकायादि जाव जोगिच्छि ।
तम्मिस्समपज्जत्ते चदुगुणठाणेषु णियमेण ॥६८०॥

औदारिकः पय्याति स्वावरकायादि यावद्योगिपय्यंतं । तन्मिश्रः अपय्याति चतुर्गुणस्थानेषु
नियमेन ॥

औदारिककाययोगमैकेन्द्रियस्यावरकायपय्यामिमिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियाणि सयोगिकेवलि-
पय्यंतमाव पदिमूर्धं गुणस्थानंग्रहकुमल्लि एकेंद्रियवावरसूक्ष्मद्वौद्रियश्रींद्रियचतुरिंद्रियसंतिपंचेंद्रिय-
संतिपंचेंद्रियपय्यामिजीवसमासेगुणमेलेप्युत्तु । ७ । औदारिकमिथ्ययोगमपय्यामिचतुर्गुणस्थानंग्रहोऽत्र

२० मध्यमेषु असत्योभयमनोवचनयोगेषु चतुर्षु संतिमिथ्यादृष्ट्यादौनि शीणकवायान्तानि द्वादश । दु-द्व-
सत्यानुभयमनोयोगयोः सत्यवचनयोगे च संतिगर्वात्तु मिथ्यादृष्ट्यादौनि सयोगान्तानि त्रयोदश गुणस्थानानि
भरन्ति । जीवसमासः संतिगर्वात् एवैकः । अनुभयवचनयोगे तु गुणस्थानानि विकलत्रयमिथ्यादृष्ट्यादौनि
त्रयोदश । जीवगमासः द्वित्रिचतुरिंद्रियसंतिपय्यास्ताः पञ्च ॥६७९॥
औदारिककाययोगः एकेंद्रियस्यावरकायपय्यामिमिथ्यादृष्ट्यादिवयोगान्त्रयोदशगुणस्थानेषु भरति ।

२१ मध्यम अर्थां असत्य और उभय मनोयोग और वचन योग इन पारमें संज्ञो मिथ्या
दृष्टिसे लेकर शीणकवाय पर्यन्त पारह गुणस्थान होते हैं । तथा सत्य और अनुभय मनोयोग
और सत्यवचनयोगमें संक्षिपयांत मिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगकेवली पर्यन्त तेरह गुणस्थान
होते हैं । जीवसमास एक संक्षिपयांत ही होता है । अनुभयवचनयोगमें विकलत्रय
मिथ्यादृष्टिसे लेकर तेरह गुणस्थान होते हैं । जीवसमास दो-द्विन्द्रिय, त्रैन्द्रिय, चौरिंद्रिय
संज्ञि-अर्चको, पंचेंद्रिय पर्यांत रूप पाँच होते हैं ॥६७९॥
औदारिक काययोग एकेंद्रिय स्यावरकाय पर्यांत मिथ्यादृष्टीसे लेकर सयोगकेवली
पर्यन्त तेरह गुणस्थानोंमें होता है । औदारिक मिथ्यकाययोग नियमसे अपर्यांत अवस्थानें

काययोगदोषं पंचेंद्रियसंज्ञिपर्वामिजीवसमासतो वैषयकुं । तन्मिथदोषं संज्ञिपंचेंद्रियनिवृत्त्यप्यन्तं-
जीवसमासतो वैषयकुं वे नि
४ । ३ ।
१ । १ ।

आहारो पञ्जत्ते इदरे खलु होदि तस्स मिस्सो दु ।
अंतोमुहुत्तकाले छट्टगुणे होदि आहारो ॥६८३॥
आहारः पर्वामि इतरस्मिन् खलु भवति तस्य मिथस्तु । अंतमुहुत्तकाले पट्टगुणे अन्ति
आहारः ॥

आहारककाययोगसंज्ञिपंचेंद्रियपपमिपट्टगुणस्थानवर्त्तिप्रमतसंपतनोऽवकुमाहारककाययोग-
कालमुमुहृष्टदिवसं जघन्यविद्वंमंतमूर्तकालबोड्येयकुं । तन्मिथकाययोगं तद्गुणस्थान-
बोड्ये प्रमत्तगुणस्थानबोड्ये अंतमूर्तकालबोड्येयकुममु कारणमागियाहारककाययोगबोड्ये
१० गुणस्थानमनो वे जीवसमासतुनरकुं । तन्मिथदोषमंते वो वैगुणस्थानमनो वे जीवसमासमममकुं
आहारककाययोगदोषं गु १ । मि गु १
जी १ । जो १ ।

ओरालियमिस्सं वा चउगुणठाणेषु होदि कम्मइयं ।
चट्टगुणविगहकाले जोगिस्स य पदरलोगपूरणगे ॥६८४॥

ओरारिकमिथरञ्चतुगुणस्थानेषु भवति काम्मणं । चतुगतिविपट्टकाले योगिनः प्रउर-
सोरूपरणे ॥

ओरारिकमिथकाययोगबोड्येऽवर्त्ते घतुगुणस्थानंगडोऽ काम्मणकाययोगमरकुं मुउ
घतुगतिविपट्टकालबोड्ये सयोगकेवलिय प्रतरलोरूपरणसमुघातकालबोड्यमरकुममु कारणममि
काम्मणकाययोगबोड्ये मिथ्यादृष्टितासादानाऽसंपतसम्यग्दृष्टि समुघातसयोगिभट्टारकरं व मु-
१५ न्मिथयोगः निथ गुणस्थाने तु न होदि कारणान् देनारकमिथानुदृष्टितासादानासंपतकेवेव भवति । ओरप्रमक
उयोः क्रमेण कञ्चित्तरेऽः तन्निवृत्त्यर्वातः एकेहः ॥६८२॥
आहारककाययोगः संज्ञिपंचेंद्रियगुणस्थाने जघन्योदृष्टयेन अन्तमुहुत्तकाले एव भवति । तन्मिथरक
१० एरालियन् एतगुणस्थाने सतु जघन्योदृष्टयेन एव भवति । तेन एवोपनिर्वाणः
गुणस्थान बोधममः स एव एकेहः ॥६८३॥
ओरारिकमिथरञ्चतुगुणस्थानेषु काम्मणकाययोगः स्थान् न चतुगतिविपट्टकाले सयोगस्य प्रउरकेऽ

मिथरानुदृष्टि, मायादान और अर्थयनगुणस्थानोनि ही होता है । जीवसमास इनमें-से वैकिकिइने
१५ संज्ञिपंचां और वैकिकिइनिथमें संज्ञिअपचां होता है ॥६८२॥
अःहारक काय योग संज्ञिअपचां अवस्थामें जघन्य और उठटसे अन्तमुहुत्त काऽने
ही होता है । अःहारनिप्रकाययोग संज्ञिअपचां अवस्थामें उठे गुणस्थानमें जघन्य उदृष्टयें
अन्तमुहुत्त काऽने ही होता है । अतः उन दोनोंमें एक छटा ही गुणस्थान होता है । वहा
अःहारममः भी वहा संज्ञिपंचां और संज्ञिअपचां एक-एक ही होता है ॥६८३॥
ओरारिकमिथको तरह काम्मणकाययोग पार गुणस्थानोनि होगा है । सो वहा पार
ममिथरञ्चतुगुणस्थानोनि और मयोगकेरञ्चोके प्रवर और ओकपूरण अनुपपाऽने

कपायमार्गणयोः क्रोधमानमायाकपायत्रयंगुण स्यावरकायमिष्यादृष्टिगुणस्यानं
 मोदलो डनित्युत्तिकरणगुणस्थानद्वित्रिचतुस्रं भागपर्यन्तमाव गुणस्थाननचक्रबोद्धप्युतु । अतु कारक-
 माणि क्रोधाविकपायत्रययोः प्रत्येकमो भक्तमो भक्त गुणस्थानंगुणमेकैत्रियवावरसूक्ष्मद्वित्रिचतु-
 संज्ञिपंचंद्रिय संज्ञिपंचंद्रियपय्याप्तापय्याप्रजोवसमासंगुः पविनालकु पविनालकुमप्युतु । लोम-
 कपायबोळमंतं स्यावरकायमिष्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानपर्यन्तमाव गुण-
 स्थानदशकम् क्रोधाधिगुणो वेळरंत चतुर्दशजोवसमासंगुमप्युवेतु
 परमागमवोळेरियल्पडुतु ।

क्रो । मा । मा । लो
 ९ । ९ । ९ । ९
 १४ । १४ । १४ । १४

थावरकायपहुडो मदिसुदअण्णाणंयं विभंगो तु ।
 सण्णीपुणपहुडो सासणासम्मोत्ति णायव्यो ॥६८७॥

१० स्यावरकायप्रभृति मतिश्रुताज्ञानकं विभंगस्तु । संज्ञोपूर्णप्रभृति सासादनसम्यग्दृष्टिपर्यन्तं
 ज्ञानमार्गणयोः मतिश्रुताज्ञानद्वयं स्यावरकायमिष्यादृष्टिप्रभृतिसासादनसम्यग्दृष्टिगुण-
 स्थानपर्यन्तमेरडुगुणस्थानबोळप्युतु । एकैत्रियवावरसूक्ष्मद्वित्रिचतुः पंचंद्रियसंगवसंज्ञिपय्याप्ता-
 पय्याप्रजोवसमासंगुः प्रत्येकं पविनालकु पविनालकुमप्युतु । विभंगज्ञानसुं संज्ञिपूर्णमिष्यादृष्टियादि-
 १५ यागि सासादनसम्यग्दृष्टिपर्यन्तमेरडुगुणस्थानबोळप्युतु । संज्ञिपंचंद्रियपय्याप्रजोवसमासंगो देव-
 प्युतु । एदितु परमागमवोळेरियल्पडुतु ।

कपायमार्गणयां क्रोधमानमायाः स्यावरकायमिष्यादृष्ट्याद्यनित्युत्तिकरणद्वित्रिचतुर्भागान्तम् । लोमः पुः
 सूक्ष्मसांपरायान्तम् । तेन क्रोधत्रये गुणस्थानानि नव लोभे दश ज्ञेयानि । जीवसमासाः सचंच चतुर्दश ॥६८६॥

२० ज्ञानमार्गणयां मतिश्रुताज्ञानद्वयं स्यावरकायमिष्यादृष्ट्यादिसासादान्तं ज्ञातव्यं तेन तत्र गुणस्थाने
 १ जीवसमासादचतुर्दश । तु-पुनः विभङ्गज्ञानं संज्ञिपूर्णमिष्यादृष्ट्यादिसासादान्तं तत्र गुणस्थाने द्वे ।
 जीवसमासः संज्ञिपर्याप्त एवैकः ॥६८७॥

कपायमार्गणामं क्रोध, मान, माया, स्यावरकायमिष्यादृष्टिसे लेकर अनित्युत्तिकरणके
 क्रमसे दूसरे, तीसरे और चौथे भागपर्यन्त होते हैं । लोभ सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानपर्यन्त
 होता है । इससे क्रोध, मान, मायामें नौ और लोभमें दस गुणस्थान होते हैं । जीवसमास
 २५ सर्वत्र चौदह होते हैं ॥६८६॥

ज्ञानमार्गणामं कुमति, कुभ्रुतज्ञान स्यावरकायमिष्यादृष्टिसे लेकर सासादनपर्यन्त
 जानना । इससे इनमें दो गुणस्थान होते हैं । जीवसमास चौदह होते हैं । विभंगज्ञान संज्ञि-
 पर्याप्त मिष्यादृष्टिसे लेकर सासादन पर्यन्त जानना । इससे उसमें भी दो गुणस्थान होते
 हैं । जीवसमास एक संज्ञिपर्याप्त ही होता है ॥६८७॥

१. मं दोमेकल्पडुतु ।

- संयतमुमवकुमल्लि संज्ञिपंचेंद्रियपर्ष्यान्निजीवसमासमो देयककुं । सामायिकच्छेदोपस्थापनसंयमगच्छे-
रडुं प्रत्येकं प्रमत्त संयतगुणस्थानमावियागऽनिवृत्तिकरणगुणस्थानपर्ष्यंतं नालकुं नालकुं गुणस्थानग-
च्छेषुवल्लि संज्ञिपंचेंद्रियपर्ष्यान्निजीवसमासमुं आहारकापर्ष्यान्निजीवसमासममितरडेरडुं जीवसमासं-
गच्छेषुवु । परिहारविशुद्धिसंयमं प्रमत्तसंयतरोचमप्रमत्तसंयतरोचमपकुमल्लि संज्ञिपंचेंद्रियपर्ष्यान्नि-
जीवसमासमो दे यवकुमेकं बोडे परिहारविशुद्धिसंयमश्चद्विपुमाहारकश्चद्विपुमोऽव्नोऽं संभविस्-
यपुदरिदं । सूक्ष्मसांपरायसंयमं सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानबोऽं यस्कुमल्लि संज्ञिपंचेंद्रियपर्ष्यान्निजीव-
समासमो देयककुं । यथाख्यातचारित्रमुपशांतकपायगुणस्थानबोऽं क्षीणकपायगुणस्थानबोऽं
सयोगिकेवल्लिगुणस्थानबोऽंमयोगिकेवल्लिगुणस्थानबोऽंमिनु नालकुं गुणस्थानगच्छोचमवकुमल्लि
संज्ञिपंचेंद्रियपर्ष्यान्निजीवसमासमुं समुद्रपातकेवलिय अपर्ष्यान्निजीवसमासमुं कूडि जीवसमासद्व-
१० मवकुं । संयममार्गणाभेदंगच्छे सिद्धपरमेष्ठिगच्छे संभविसुववल्ते दु परमागमबोऽंश्चत्पुदु ।

अ । दे । सा । छे । प । सू । य ।

४ । १ । ४ । ४ । २ । १ । १ । ४ ।

१ । ४ । १ । २ । २ । १ । १ । २ ।

चउरकखथावरविरदसम्मादिट्ठी दु खीणमोहोत्ति ।

चकखु अचकख ओही जिणसिद्धे केवलं होदि ॥६९१॥

चतुरिन्द्रियस्यावराविरतसन्धवृष्टितः क्षीणमोहपर्ष्यंतं । चक्षुरचक्षुरवययो जिनसिं-
केवलं भवंति ॥

- १५ देशसंयतगुणस्थाने तत्र जीवसमासः संज्ञिपर्याप्त एव । सामायिकच्छेदोपस्थापनो प्रमत्तः।चनिवृत्तिकरण-
चतुर्गुणस्थानेषु । तत्र जीवसमासो संज्ञिपर्याप्ताहारकपर्याप्तो दो । परिहारविशुद्धिसंयमः प्रमत्ताप्रमत्तपौरं ।
तत्र जीवसमासः संज्ञिपर्याप्त एव तेन सह आहारकच्छेदोपस्थापनं भवति । सूक्ष्मसांपरायसंयमः सूक्ष्मसां-
रायगुणस्थाने तत्र जीवसमासः संज्ञिपर्याप्तः । यथाख्यातचारित्रं उपशांतकपायादिचतुर्गुणस्थानेषु
तत्र जीवसमासो संज्ञिपर्याप्तसमुद्रपातकेवल्यपर्याप्तो दो । संयममार्गणाभेदाः सिद्धे न संतोति परमागमे
२० निदिष्टम् ॥६८९-६९०॥

- १५ हे वसमें चौदह जीवसमास होते हैं । देशसंयम देशसंयत गुणस्थानमें होता है वसमें जीव-
समास एक संज्ञिपर्याप्त ही होता है । सामायिक और छेदोपस्थापना प्रमत्तसे लेकर अनि-
वृत्तिकरणपर्यन्त चार गुणस्थानोंमें होते हैं । उनमें जीवसमास संज्ञिपर्याप्त और आहारक
मिष्यही अपेक्षा संज्ञिअपर्याप्त होते हैं । परिहारविशुद्धिसंयम प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानोंमें
२५ ही होता है । वसमें जीवसमास संज्ञिपर्याप्त ही होता है क्योंकि परिहारविशुद्धि संयमके
साथ आहारकश्चद्वि नहीं होती । सूक्ष्मसांपरायसंयत सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानमें होता है ।
वसमें जीवसमास संज्ञिपर्याप्त ही होता है । यथाख्यातचारित्र उपशांतकपाय आदि चार
गुणस्थानोंमें होता है । वसमें जीवसमास संज्ञिपर्याप्त तथा समुद्रपात केवलीकी अपेक्षा
अपर्याप्त इस तरह दो होते हैं । संयममार्गणाके भेद सिद्धोंमें नहीं होते ऐसा परमागमनें
३० कहा है ॥६८९-६९०॥

णवरि य सुक्का लेस्सा सजोगिचरिमोत्ति होदि णियमेण ।

गयजोगिम्मि वि सिद्धे लेस्सा णत्थिचि णिद्धिं ॥६९३॥

विशेषोक्ति शुक्ललेश्या सयोगचरमप्यंतं भवति नियमेन । गतयोगेऽपि सिद्धे लेश्या न संतीति निर्दिष्टं ॥

५ शुक्ललेश्येयोऽङ्गु विशेषमुंटावुबेदोडे शुक्ललेश्यासंज्ञिपर्याप्तमिम्यादृष्टिगुणस्थानमादिपाणि सयोगिकेवल्लिगुणस्थानप्यंतं पविमूर्धं गुणस्थानं गळोऽङ्गुबुबेदुवल्लि संज्ञिपंचेद्रियपर्याप्तापर्याप्त-जीवसमासमुं समुच्चातकेवलिय औदारिकमिधकाम्भेणकाययोगकालकृतापर्याप्तजीवसमासमुं कृत्ति जीवसमासद्वयमचकुं नियमदिवं । कृ । नो । का । ते । पा । नु । गतयोगरूप अयोगिकेवलि-

४ । ४ । ४ । ७ । ७ । १३

१४ । १४ । १४ । २ । २ । २

गळोऽं सिद्धपरमेष्टिगळोऽं लेश्येगळिल्लमे वित्तु परमागमवोऽप्येऽल्पदुहु ।

१० थावरकायप्पहुडो अजोगिचरिमोत्ति होति भवसिद्धा ।

मिच्छाद्दुद्धिणाणे अभवसिद्धा हवंतिति ॥६९४॥

स्थावरकायप्रभृत्ययोगिचरमसमयपर्यंतं भवति भव्यसिद्धाः । मिथ्यादृष्टिस्थाने अभव्य-सिद्धा भवतीति ॥

१५ अभ्यमार्गणेयोऽङ्गु स्थावरकायमिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादिपाणि अयोगिकेवल्लिचरमगुणस्थान-पर्यंतं पदिनालकुं गुणस्थानं गळोऽङ्गु भव्यसिद्धरूपपरल्लि पदिनालकुं जीवसमासेगळप्यु । अभव्य-सिद्धरूपङ्गु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमोदरोऽप्येऽप्ये । अल्लि पदिनालकुं जीवसमासेगळप्यु । अ । व । १४ । १ । १४ । १४

मिच्छो सासणमिस्सो सगसगठाणम्मि होदि अयदादो ।

पढमुवसमवेदगसम्मत्तदुगं अप्पमत्तोत्ति ॥६९५॥

२० मिथ्यादृष्टिः सासादनो मिश्रः स्वस्वस्थाने भवति अतंपतात्प्रयमोपशमवेदकसम्यक्त्वद्विक्रम-प्रमत्तपर्यंतं ॥

शुक्ललेश्यायां विशेषः । स कः ? सा लेश्या संज्ञिपर्याप्तमिम्यादृष्ट्यादिगयोगान्तं भवति तत्र जीव-संमासो संज्ञिपर्याप्तापर्याप्तो द्वावेव नियमेन केवल्यपर्याप्तस्य अपर्याप्ति एवान्तर्भावात् । अयोगिजने सिद्धे च लेश्या न सन्तीति परमागमे प्रतिपादितम् ॥६९३॥

२५ अभ्यमार्गणायां भव्यसिद्धाः स्थावरकायमिथ्यादृष्ट्याद्ययोगान्तं भवन्ति । अभव्यसिद्धाः मिथ्यादृष्टिगुण-स्थाने एव भवन्ति इत्युभयत्र जीवसमासावचतुर्दश ॥६९४॥

शुक्ललेश्यायामे विशेष हे । यह संज्ञिमिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगीपर्यन्त होती हे । उसमें जीवसमास संज्ञिपर्याप्त और संज्ञिअपर्याप्त दो ही नियमसे होते हैं । केवलिसमुच्चातगत अपर्याप्तका अन्तर्भाव अपर्याप्तमें ही हो जाता है । अयोग केवली और सिद्धामें लेश्या नहीं होती ऐसा परमागममें कहा है ॥६९३॥

३० अभ्यमार्गणायामे भव्य स्थावरकाय मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगकेवली पर्यन्त होते हैं । अभव्य मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही होते हैं । दोनोंमें जीवसमास चौदह ही होते हैं ॥६९४॥

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमसंयताद्युपशांतकृपायगुणस्थानपर्यन्तमेतदु गुणस्थानंगच्छेत्कृत्तुमल्लि-
 युपशमश्रेण्यवरोहणबोद्धः प्रमत्तप्रमत्तवेगसंयतासंयतरोज् द्वितीयोपशमसम्यक्त्वसंभवमेवित्युक्ते-
 बोद्धे उपशमश्रेण्यारोहणावरोहणकालमं नोद्धत् तनुपशमसम्यक्त्वकालं संख्यातगुणमरजुमेतत्तनुं
 चारित्र्यापरणोवर्षांश्च देशसंयतासंयतरोज् पतनमुद्वृत्तिरिदं । अल्लि सन्निपंचेंद्रियपर्य्याप्तजीवसमा-
 सेयुं देशसंयतापर्य्याप्तजीवसमासेयुमितेरज् जीवसमासेगच्छप्यु । क्षायिकसम्यक्त्वमसंयताद्युप-
 योगिकेवल्लिगुणस्थानमवसानमागि पंतोऽं गुणस्थानंगच्छेत्कृत्तुमल्लि । सन्निपंचेंद्रियपर्य्याप्तभू-
 मानजीवसमासेयुं बद्धायुष्यापेयोऽं घम्मंय नारकापर्य्याप्तनु भोगभूमिजमनुष्यतिर्य्यंचासंयता-
 पर्य्याप्तसं देवासंयतापर्याप्तनु संभ्रिमुगुमप्युवरिनपर्याप्तजीवसमासेयुमितेरज् जीवसमासे-
 गच्छप्यु । संवृष्टिरचने :-

| | | | | | | | |
|----|----|----|------|----|-----|----|------|
| मि | सा | मि | द्वि | उ | प्र | वे | क्षा |
| १ | १ | १ | ८ | १४ | ४ | ११ | |
| १४ | ७ | १ | २ | १ | २ | २ | |

गुणस्थानातीतरप्य सिद्धपरनेच्छिगच्छेत्

१० क्षायिकसम्यक्त्वमरजुमं दितु जिनस्वामिर्गाच्छेदं पेच्छस्पट्टदु ॥

सण्णो सण्णिप्पहुड्डी खीणकसाओत्ति होदि णियमेण ।
 थावरकायप्पहुड्डी असण्णित्ति ह्वे असण्णो दु ॥६९७॥

संज्ञी संज्ञिप्रभृति क्षीणरूपायपर्यन्तं भवति नियमेन । स्थावरकायप्रभृति असंज्ञिप्र-
 भवेदसंज्ञी तु ॥

१५ संज्ञिमारगणयोऽ् संज्ञिजीवं संज्ञिमिध्यादृष्टिगुणस्थानमाविद्यागि क्षीणरूपायगुणस्था-
 पर्यन्तं पन्नेरज् गुणस्थानंगच्छेत्कृत्तुमल्लि संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तापर्य्याप्तजीवसमासेद्वयमरजुं ।
 मत्ते असंज्ञिजीवस्याऽरकायमिध्यादृष्टिगुणस्थानमाविद्यागि पंचेंद्रियासंज्ञिमिध्यादृष्टिपर्यन्तं मि-

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं असंयताद्युपशान्तकृपायान्तं भवति । अप्रमत्ते उत्साह उपरि उपशान्तकृपाय
 गत्वा अधोवतरणे असंयतान्तमपि तत्संभवात् । तत्र जीवसमासो संज्ञिपर्याप्तदेवासंयतापर्याप्तो द्वौ । क्षायि-
 २० सम्यक्त्वं असंयताद्युपशान्तम् । तत्र जीवसमासो संज्ञिपर्याप्तः बद्धायुष्यापेक्षया पर्याप्तनारकभोगभूमिनरति-
 मानिकापर्याप्तश्चेति द्वौ । सिद्धेऽपि क्षायिकसम्यक्त्वं स्यादिति जिनैवक्तम् ॥६९६॥
 संज्ञिमार्गणाय संज्ञिजीवः संज्ञिमिध्यादृष्टपादिक्षीणकृपायान्तं भवति तत्र जीवसमासो संज्ञिपर्याप्तः

द्वितीयोपशम सम्यक्त्व असंयतसे उपशान्तकृपाय गुणस्थानपर्यन्तं होता है ; क
 अप्रमत्त गुणस्थानमें इस द्वितीयोपशम सम्यक्त्वको उत्पन्न करके ऊपर उपशान्तकृपाय प
 २५ जाकर नीचे उतरनेपर असंयत पर्यन्त भी उसका अस्तित्व रहता है । उसमें जीवस
 संज्ञिपर्याप्त तथा देव असंयत अपर्याप्त दो होते हैं । क्षायिक सम्यक्त्व असंयतसे अ
 पर्यन्त होता है । उसमें जीवसमास संज्ञिपर्याप्त होता है । किन्तु परभवकी आयु बाँ
 अपेक्षा प्रथम नरक, भोगभूमिया मनुष्य तिर्यंच और वैमानिक सम्बन्धी अपर्याप्त होने
 होते हैं । सिद्धोंमें भी क्षायिक सम्यक्त्व जिनदेवने कहा है ॥६९६॥

३० संज्ञीमार्गणामे संज्ञीजीव संज्ञिमिध्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकृपाय गुणस्थानपर्यन्त
 है । उतमें जीवसमास संज्ञिपर्याप्त और अपर्याप्त दो होते हैं । असंज्ञीजीव स्थावर

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळ पविनात्कुं जीवसमासेगप्पुवु । सासादनसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळं
मविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळं प्रमत्तविरतनोळं च शब्दविबं सयोगकेवलिगुणस्थानदोळमितु नात्कुं
गुणस्थानंगळोळ संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासद्वयं प्रत्येकमवकुं । शेषमिथ्यवेदसंपत्ताप्रनता
पूर्व्यंकरणानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपरायोपशांतकपायक्षीणरूपायगुणस्थानाष्टकदोळमपि-शब्दविबमणे-
गिगुणस्थानदोळमितु नयगुणस्थानंगळोळ प्रत्येकं संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तजीवसमासेपो वेपरकुं :-

मि । सा । मि । अ । वे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ
१४ । २ । १ । २ । १ । २ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । २ । १

अनंतरं मार्गंगास्थानंगळोळ जीवसमासेवं सूचितदपं :-

तिरियगदीए चोद्दस हवंति सेसेसु जाण दोद्दो दु ।

मगणठाणस्सेवं पेयाणि समासठाणाणि ॥७००॥

तिर्यंगतो चतुद्दंश भवंति शेषेषु जानोहि द्वो द्वो तु । मार्गंगास्थानस्येवं ज्ञेयानि स

१० स्थानानि ॥

तिर्यंगगतिपोळ जीवसमासंगळ पविनात्कुमप्पुवु । शेषनारकदेवमनुष्यगतिगळोळः
संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासद्वयमवकुं । तु मत्ते एवतो प्रकारविबं मार्गंगास्थानं
तोळपनिवकुं । जीवसमासस्थानंगळ यथायोग्यनागि मुपेळ्वं क्रमदिनरियल्पडुवुवु ।

अनंतरं गुणस्थानंगळोळ पर्याप्तिप्राणंगळं निरूपिसिदपरः :-

१५

पज्जत्ती पाणावि य सुगमा भाविदिंयं ण जोगिग्मि ।

तहि वाचुस्तासाउगकायत्तिगदुगमजोगिणो आऊ ॥७०१॥

पर्याप्तयः प्राणाः अपि च सुगमाः भावेत्त्रियं न योगिनि । तस्मिन्वागुच्छ्यासासु-
त्त्रिकद्विकमयोगिनः आयुः ॥

२० मिथ्यादृष्टो जीवसमासावचतुर्दंश, सासादने अविरते प्रमत्ते चचन्नात् सयोगे च संज्ञिपर्याप्तापर्या-
पेवाष्टगुणस्थानेषु 'दु'संज्ञान् अवोगे च संज्ञिपर्याप्त एवैकः ॥६९९॥ अथ मार्गंगास्थानेषु तान् गूचवदि-
निर्यंगतो जीवसमासावचतुर्दंश भवंति शेषगतिषु संज्ञिपर्याप्तापर्याप्तो द्वौ । तु-मुनः सर्वमार्गंगत
यथायोग्यं प्राणु-रूपेण जीवसमासा शतभ्याः ॥७००॥ अथ गुणस्थानेषु पर्याप्तिप्राणानाह—

२५ मिथ्यादृष्टिमें शोदह जीवसमास होते हैं । सासादन, अविरत, प्रमत्त और च
सयोगीमें संज्ञिपर्याप्त और अपर्याप्त दो जीवसमास होते हैं । शेष आठ गुणस्थानों
अपि शब्दमें अयोग्यदृष्टीमें एक संज्ञिपर्याप्त ही होता है ॥६९९॥

अथ मार्गंगाश्रोंमें जीवसमास कहते हैं :-

निर्यंगगतिमें शोदह जीवसमास होते हैं । शेष गतियोंमें संज्ञिपर्याप्त, अपर-
जाद-ननाम होते हैं । इन प्रकार सय मार्गंगास्थानोंमें यथायोग्य पूर्वोक्त क्रमसे जीव
जानना ॥७००॥

१० गुणस्थानोंमें पर्याप्ति और प्राण कहते हैं—

१. य. १ अविचरन् ।

एकेन्द्रियादिजातिनामकर्मोद्ययजनितजीवपर्यायिः इन्द्रियं तन्मागंगाः एकेन्द्रियादयः पञ्च । ताः निम्नोऽप्यासापयतिः पञ्च । सासादने अपर्याप्ताः पञ्च पर्याप्तपञ्चेन्द्रियश्च । मिथे पर्याप्तोऽप्येन्द्रिय एव । अतस्ते उभयः । देशसंयते पर्याप्तः । प्रमत्ते पर्याप्तः । साहारकधित्भूयः । अप्रमत्तादिशीणकपायान्तेषु पर्याप्त एव ।

- सासादनसभयदृष्टिगुणस्थानरोऽप्येकेन्द्रियारिः पंचेन्द्रियपर्यंतमारः तुमपर्याप्ततजोऽंगं पर्वति पंचेन्द्रियत्रोऽंगं मध्युषु । मिथगुणस्थानरोऽप्यर्याप्तापंचेन्द्रियमोऽप्येवमुक्तं । असंयतसभयदृष्टिगुणस्थानरोऽप्यर्याप्ताऽपर्वति संज्ञिपंचेन्द्रियजोऽंगं मध्युषु । देशसंयतगुणस्थानरोऽप्यर्याप्तपंचेन्द्रियमोऽप्येवमुक्तं । प्रमत्तगुणस्थानरोऽप्यर्याप्तापंचेन्द्रियमोऽप्येवमुक्तं । आहारकदृष्टिगुणस्थानरोऽप्यर्याप्तापर्वति पंचेन्द्रियमोऽप्येवमुक्तं । अप्रमत्तगुणस्थानरोऽप्येवमुक्तं । मेले शीणकपायगुणस्थानपर्यंतं आहं गुणस्थानं गच्छेत् प्रयेतं पर्याप्तपंचेन्द्रियमेवमुक्तं । सयोगेऽप्येन्द्रियगुणस्थानरोऽप्यर्याप्तपंचेन्द्रियमेवमुक्तं । सगुणस्थानरोऽप्यर्याप्तपंचेन्द्रियमेवमुक्तं । सगुणस्थानरोऽप्यर्याप्तपंचेन्द्रियमेवमुक्तं ।

अयोगिकेयलिगुणस्थानरोऽप्यर्याप्तपंचेन्द्रियमेवमुक्तं—

| | | | | | | | | | | | | |
|------|------|------|-----|------|-------|-----|-----|------|-----|--------|-----|-----|
| मि । | सा । | मि । | अ । | दे । | प्र । | अ । | अ । | सू । | उ । | क्षी । | स । | व । |
| ५ । | ५ । | १ । | १ । | १ । | १ । | १ । | १ । | १ । | १ । | १ । | १ । | १ । |

पृथ्वीकायादिविशिष्टेकंद्रियजातिस्थावरनामकर्मोद्ययविवमु प्रसनामकर्मोद्ययविवमुमाद जीवपर्यायकं कायत्वव्यपदेशमश्नुमा कायत्वमुं पृथ्वीकायिकमुमत्कायिकमुं तेजस्कायिकमुं वातकायिकमुं वनस्पतिकायिकमुं प्रसकायिकं मे वितु पद्भेदमश्नु । मिथ्या दृष्टिगुणस्थानरोऽप्यर्याप्तापंचेन्द्रियजोऽप्येवमुक्तं । सासादनगुणस्थानरोऽप्यर्याप्तपृथ्वीकायिकमुं वातकायिकमुं वनस्पतिकायिकमुं प्रसकायिकं मे वितु पद्भेदमश्नु । मिथ्या दृष्टिगुणस्थानरोऽप्यर्याप्तापंचेन्द्रियासंज्ञि अपर्याप्तप्रसकायिकंगच्छेत् संज्ञिपंचेन्द्रियपर्याप्ताप्याप्तप्रसकायिकंगच्छेत् पद्वेत्

एकेन्द्रियादिजातिनामोद्ययजनितजीवपर्यायः इन्द्रियं, तन्मागंगाः एकेन्द्रियादयः पञ्च । ताः निम्नोऽप्यासापयतिः पञ्च । सासादने अपर्याप्ताः पञ्च पर्याप्तपञ्चेन्द्रियश्च । मिथे पर्याप्तोऽप्येन्द्रिय एव । अतस्ते उभयः । देशसंयते पर्याप्तः । प्रमत्ते पर्याप्तः । साहारकधित्भूयः । अप्रमत्तादिशीणकपायान्तेषु पर्याप्त एव ।

सयोगे पर्याप्तः । समुद्रपाते भूभयः । अयोगे पर्याप्त एव ।

पृथ्वीकायादिविशिष्टेकंद्रियजातिस्थावरनामोद्ययतनामोद्ययः पद्भेदमश्नुकायाः कायाः । ते निम्नोऽप्यासापयतिः पञ्च । सासादने अपर्याप्ताः पञ्च पर्याप्तपञ्चेन्द्रियश्च । मिथे पर्याप्तोऽप्येन्द्रिय एव । अतस्ते उभयः । देशसंयते पर्याप्तः । प्रमत्ते पर्याप्तः । साहारकधित्भूयः । अप्रमत्तादिशीणकपायान्तेषु पर्याप्त एव ।

एकेन्द्रिय आदि जातिनामकर्मके उद्यसे उत्पन्न हुई जीवकी पर्याय इन्द्रिय है । उसको मागंगा एकेन्द्रिय आदि पाँच हैं । वे पाँचों मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें पर्याप्त-अपर्याप्त होते हैं । सासादनमें अपर्याप्त तो पाँचों हैं पर्याप्त एक पंचेन्द्रिय ही है । मिथमें पर्याप्त पंचेन्द्रिय ही है । असंयतमें पंचेन्द्रिय पर्याप्त-अपर्याप्त दोनों है । देशसंयतमें पर्याप्त है । प्रमत्तमें पर्याप्त है । आहारक दृष्टिवाला दोनों है । अप्रमत्तसे लेकर शीणकपाय पर्यन्त पर्याप्त ही है । सयोगे केवलीमें पर्याप्त है किन्तु समुद्रपातमें दोनों है । अयोगीमें पर्याप्त ही है ।

पृथ्वीकाय आदि विशिष्ट एकेन्द्रियादि जाति और स्थावर नामकर्म तथा प्रसनामकर्मके उद्यसे उत्पन्न हुई छह जीवपर्यायोंको काय कहते हैं । वे मिथ्यादृष्टिमें पर्याप्त और अपर्याप्त होते हैं । सासादनमें वादर पृथिवी जल और वनस्पति स्थावरकाय तथा दो इन्द्रिय,

मिथ्यात्वमिच्छताम्पस्वस्वकृतिस्वाविरमंगनातगुणयो इत्येव कर्मविरमंतंशुं कालं विवृणुति तं
मात्रेण । मिथ्यात्वमं मिथ्यात्वमागिरेणु मा-इत्येव शोके पूर्वास्थितिरेव नोत्र अतिव्यापनातिव्याप-

स्वितित्वागमं मा-इत्येव कृत्ये अन्तरभाषा प्रथमोपशमसम्यक्त्वकाशयोः प्रथमतो प्रमत्तावन-
परावृत्तिसंख्यातमहत्वं अ-इत्युपरिरेव परतगुणस्थानयोः प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं भयमित्येवगुण ।
आ नात्कं गुणस्थानाविरममोपशमसम्यक्त्वगुणत्वं सम्यक्त्वकाशयंशुं शोके प्रथमविक्रान्त-
शेषमाशयन्-इत्युपरिरेवमंशुपरिरेवमाशयोरपरिरेव साधारणसम्यक्त्वगुणस्थानकाशयमाशयविरमन्-
महत्वं । अथन्यदिनेकसमयमहत्वं । मध्यमसंख्यातिरेकसमयमहत्वं । एतावानु भयतागुणविरमोरेव

सम्यक्त्वविराषणे इत्येवविरमं तद्गुणस्थानस्थानकाशयं संपूर्णमागुणितरेण सम्यक्त्वप्रकृतिगुणिते
वेदकसम्यक्त्वगुणितरेण नात्कं गुणस्थानाविरममहत्वं । अथवा मिथ्यप्रकृत्युपरिरेवमा नात्कं मिथ-

१० रूपक । मिथ्यात्वकर्मविरममाशयशोके नात्कं गुणस्थानाविरममहत्वं मिथ्यावृत्तिगुणितरेण । द्वितीयोपश-
सम्यक्त्वशोके विशेषमुंदागुणितरेण उपशमवेध्यारोहणत्वात् सातिशयमप्रमत्तागुणस्थानविरमोरे-

सम्यक्त्वद्विकरणप्रयपरिणामसामस्यविरममंशुं शोके कथांगम्ये प्रमत्तागुणमिच्छताम्युपरिरेव-
प्रमत्तागुणमिच्छताम्युपरिरेवमंशुं शोके अन्तरभाषा प्रथमोपशमसम्यक्त्वकाशयोः प्रथमतो प्रमत्तावन-

दिवमंतरमं माहि उपशमविरममंशुं शोके अन्तरभाषा प्रथमोपशमसम्यक्त्वकाशयोः प्रथमतो प्रमत्तावन-
स्वीकृतिसि उपशम श्रेयसं कर्मविरममंशुं शोके अन्तरभाषा प्रथमोपशमसम्यक्त्वकाशयोः प्रथमतो प्रमत्तावन-

१५ कर्मविरममिच्छताम्युपरिरेवमंशुं शोके अन्तरभाषा प्रथमोपशमसम्यक्त्वकाशयोः प्रथमतो प्रमत्तावन-

गुणप्रत्याय अप्रमत्तावयो भवति । ते तयोर्मा तस्यातिप्रययवममादि इत्या गुणसंक्रमणविराषणेन मिथ्या-
इत्यं गुणसंक्रमणभागहारेण अ-इत्यावृत्त्य मिथ्यात्वमिच्छताम्युपरिरेवमंशुं शोके अन्तरभाषा प्रथमोपशमसम्यक्त्वकाशयोः प्रथमतो प्रमत्तावन-

२० तदप्रमत्तस्य प्रमत्ताप्रमत्तावरावृत्तिसंख्यातमहत्वं अन्तरभाषा प्रथमोपशमसम्यक्त्वकाशयोः प्रथमतो प्रमत्तावन-
त्रय एव तत्सम्यक्त्वकाशान्तरमहत्वं अथन्येन एकसमये उत्कृष्टेन च परावृत्तिसंख्यातमहत्वं अन्तरभाषा प्रथमोपशमसम्यक्त्वकाशयोः प्रथमतो प्रमत्तावन-

मोदये सासादना भवन्ति । अथवा वे पत्वारोरेव यदि भयतागुणविराषणेन सम्यक्त्वविराषका न स्यात्त-
तत्काले संपूर्ण जाते सम्यक्त्वप्रकृत्युपरिरेव वेदकसम्यक्त्वगुणितरेण वा मिथ्यप्रकृत्युपरिरेव सम्यक्त्वमिच्छताम्युपरिरेव वा मिथ्यात्वोरे-

प्रथमोपशमसम्यक्त्व और महाप्रतीको एक साथ प्राप्त करके अप्रमत्तसंयत होता है । वे तीनों

२५ भी उसकी प्राप्तिके प्रथम समयसे लेकर गुणसंक्रमण विभागके द्वारा मिथ्यात्वके द्रव्यको गुणसंक्रमण भागहारके द्वारा घटा-घटाकर मिथ्यात्व मिथ और सम्यक्त्व प्रकृतिरूपसे अन्तर्मुहूर्तकाल तक तीन रूप करता है । इनका द्रव्य उत्तरोत्तर असंख्यातगुणा हीन होता है । जो मिथ्यात्वका मिथ्यात्वकरण वो पूर्वस्थितिमें अतिस्थापनावली मात्र कम करता है । जो अप्रमत्तमें जाता है वह अप्रमत्तसे प्रमत्तमें और प्रमत्तसे अप्रमत्तमें संख्यात हजार बार

३० आता-जाता है अतः प्रमत्तमें भी प्रथमोपशम सम्यक्त्व होता है । अप्रमत्तसंयतके बिना शेष तीनों ही प्रथमोपशम सम्यक्त्वके अन्तर्मुहूर्त कालमें जघन्यसे एक समय उत्कृष्टसे छद् आवली काल शेष रहनेपर अनन्तानुबन्धी क्रोध-मान-माया-लोभमें-से किसी भी एकका वृत्त होनेपर सासादन होते हैं । अथवा वे पारों भी यदि भयतागुणकी विशेषतासे सम्यक्त्वकी विराधना नहीं करते वो उस सम्यक्त्व काल पूर्ण होनेपर सम्यक्त्व प्रकृतिके उदयमें

३५ वेदक सम्यक्त्वद्वि हो जाते हैं या मिथ्य प्रकृतिके उदय होनेपर सम्यक्त्वमिच्छताम्युपरिरेव होते हैं अथवा

अपूर्व्यकरणगुणस्थानं मोदलागि सिद्धपरमेष्ठिगच्छपद्यंतं क्षायिकसम्यक्त्वमकं :—

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । ब्र । सि ।
१ । १ । १ । ३ । ३ । ३ । ३ । १ । १ । १ । २ । १ । १ । १ । १ ।

नो इंद्रियावरणक्षयोपशममुत्जनितचोषनमुं संज्ञेयं बुदक्कं अवनुच्छुदसंति एंबुदक्कुमितपेदि-
ज्ञानमनुच्छुदसंति यं बुदक्कुमितु संज्ञियुमसंज्ञियुमे वेरडु प्रकारद जीवंगळोळ संज्ञिजीवं मिष्यादृष्टि-

गुणस्थानं मोदलोडु क्षीणकपायगुणस्थानपद्यंतं पन्नेरडु गुणस्थानगळोळककं । असंज्ञिजीवं
५ मिष्यादृष्टिगुणस्थानवोळेयककं । सयोगिकेवलभट्टारकरमयोगिकेवलभट्टारकरं नोइन्द्रियेदि-
ज्ञानरहितरप्युर्वरिदं संज्ञिगळमसंज्ञिगळमल्लु :—

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । शरीरगोपांन-
२ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ ।

नामरुमोदयजनितशरीरयचनचित्तनोरुमंवरगंगाप्रहृणमाहारमं बुदक्कं । विप्रहृणतिपेडु सनुदुपान-
केवलिगुणस्थानवोळमयोगिकेवलिगुणस्थानवोळं सिद्धपरमेष्ठिगळोळं शरीरगोपांगनामरुमोद-
मिल्लपुवदिदं “कारणाभावे काम्यंस्थाप्यभावः एवो न्यायविदमनाहारमरुकुमिताहाराताहारापु-

१० मिष्यादृष्टिगुणस्थानवोळरडुमरुं । सासादनगुणस्थानवोळमसंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानवोळं सयोगि-
केवलिभट्टाररुगुणस्थानवोळमाहाराताहारेरडुमरु मुच्छिद मिधगुणस्थानं मोदलागि ओंभतुपु-

५ कंमूविदेदकगम्यदुष्टोनामेव केरलियुवकेवलिद्वयप्रोपादोपान्ते सप्तरुदितिनिरेवोपरावे भवति । तस्मिन्स-
गामान्तेन एकं, विशेषेण मिष्यात्वसासादनमिथोपचमवेदकक्षायिकभेदात् पोडा । तत्र मिष्यादृष्टी मिष्या-
सासादने सासादनत्वम् । मिथे मिथरवं । असंयतादि अग्रमत्तान्तेषु उपपन्नवेदकक्षायिकानि अपूर्वकरणानि

१५ धान्तकपायान्तेषु उपपन्नयोगी वा औपचमिकक्षायिके क्षयकश्रेणावपूर्वकरणानि सिद्धपर्यन्तमेकं क्षायिकमेव ।
नोइन्द्रियावरणक्षयोपशमः तन्नितचोषनं च संज्ञा सा अस्य अस्तीति संज्ञो । इतरेंद्रियज्ञानोच्छी ।
तत्र मिष्यादृष्ट्यादिधीनकपायान्तं संज्ञो । असंज्ञो मिष्यादृष्टावेष । सयोगायोगयोर्नोइन्द्रियेन्द्रियज्ञानाव-
धमसंज्ञिभरदेवो नास्ति ।

शरीरज्ञोपात्तनामोदयजनितं शरीरवचनचित्तनोरुमंवरगंगाप्रहृणमाहारः । विप्रहृणतो प्रतरकोभाप-

२० हो जाता है । क्षायिक सम्यक्त्व तो असंयत आदि चार गुणस्थानवर्ती मनुष्योंके असंय-
तसंयत या औपचारिक मद्दावती मानुषियोंके जो कर्मभूमिके जन्मा वेदक सम्यग्दृष्टि हो
है उनके ही केवली अथकेवलीके चरणोंके समीपमें सात प्रकृतियोंका पूर्ण क्षय होनेपर हो
है । वह सम्यक्त्व सामान्यसे एक है । विशेष मिष्यात्व, सासादन, मिथ, उपशम, वेदक और
२५ क्षायिकके भेदसे छह भेदरूप है । मिष्यादृष्टिमें मिष्यात्व होता है । सासादनमें सामान्य
और मिथमें मिथ होता है । असंयतसे अप्रमत्तपर्यन्त उपशम, वेदक और क्षायिक सम्यक्त्व
होते हैं । अपूर्वकरणसे उपशान्त कपाय पर्यन्त उपशमयोगीमें औपचमिक और क्षायिक होते
हैं । अरुभेगमें अपूर्वकरणसे छेहर तथा मिद पर्यन्त क्षायिक ही होता है ।

नोइन्द्रियावरणक्षयोपशम और उससे होनेवाले ज्ञानको संज्ञा कहते हैं । वह जिनके
हो रह संज्ञो है । जो मनके मिथय अन्य इन्द्रियोंसे ही जानता है वह असंज्ञो है । निर-
१० दृष्टिसे छेहर औपचम पर्यन्त संज्ञो होता है । असंज्ञो मिष्यादृष्टि गुणस्थानमें ही होता
है । सयोगी और सयोगी मनसे नहीं जानते इससे न यह संज्ञो कहे जाते हैं और न असंज्ञो ।

१. अ. इन्द्रियावर्तिः क्षयम् ।

ओघे चोद्दसठाणे सिद्धे वीसदिविहाणमालावा ।

वेदकसायविभिण्णे अणियद्वीपंचभागे य ॥७०७॥

ओघे चतुर्दशस्थाने सिद्धे विशतिविधानमालापाः । वेदकसायविभिन्नेऽनिवृत्तपंच भागेषु च ॥

- ५ गुणस्थानदोळं चतुर्दशमार्गणास्थानदोळं प्रसिद्धदोळं विशतिविधंगळप्प गुणजीवेत्यादि-
गळ्णे सामान्यं पर्याप्तमपर्याप्तमेव मूहतेरदाळापंगळप्पुवु । वेदकसायंगळिदं भेदमनुळ्ळं अनि-
वृत्तिकरणगुणस्थानपंचभागेगळोळं पयगाळापंगळप्पुवेकंदोडे अनिवृत्तिकरणपंचभागेगळोळं
सवेदावेदादि विशेषंगळंठप्पुवरिदं ।

अनंतरं गुणस्थानगळोळं आळापमं पेळ्ळपं :—

- १० ओघेमिच्छदुगेवि य अयदपमत्ते सजोगठाणम्मि ।

तिण्णेव य आलावा ससेसिक्को हवे णियमा ॥७०८॥

ओघे मिथ्यादृष्टिद्विकेपि च असंयते प्रमत्ते सयोगस्थाने । प्रय एवाळापाः शेषेष्वेको भे-
दियमात् ॥

- १५ गुणस्थानगळोळं मिथ्यादृष्टिसासादनसम्यग्दृष्टिगुणस्थानद्वयदोळं असंयतसम्यग्दृष्टि-
स्थानदोळं प्रमत्तसंयतगुणस्थानदोळं सयोगकेवलिभट्टारकगुणस्थानदोळं प्रत्येकं सामान्यं पर्याप्तं
पर्याप्तमेव मूह माळापंगळप्पुवु । शेषनवगुणस्थानगळोळं पर्याप्ताळापमो वेपक्कं :—

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । अ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ ।
३ । ३ । १ । ३ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । ३ । १ ।

अनंतरमोयत्थंमने विशदं माडिदपं :—

गुणस्थाने चतुर्दशमार्गणास्थाने च प्रसिद्धे विशतिविधानां गुणजीवेत्यादीनां सामान्यपर्याप्तापचितसप्त
आलापा भवन्ति । तथा वेदकसायविभिन्नेषु अनिवृत्तिकरणाऽप्यभागेषु अपि पुनरुपयुग्मभवन्ति ॥७०७॥ इति

- २० गुणस्थानेऽष्टाह—

गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टिसासादनयोः असंयते प्रमत्ते सयोगे च प्रत्येकं त्रयोऽपि आलापा भवन्ति ।
शेषनवगुणस्थानेषु एकः पर्याप्तलाप एव नियमेन ॥७०८॥ अमुमेवायं विशदयति—

- २५ प्रसिद्ध गुणस्थान और चोद्दह मार्गणास्थानमें 'गुणजीवा' इत्यादि वीस पुरुषजाओं
सामान्य, पर्याप्त, अपर्याप्त ये तीन आलाप होते हैं । तथा वेद और कसायसे भेदरूप
अनिवृत्तिकरणके पाँच भागोंमें भी आलाप पृथक्-पृथक् होते हैं ॥७०७॥

गुणस्थानोंमें आलाप कहते हैं—

गुणस्थानोंमेंसे मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत, प्रमत्त और सयोगीमेंसे प्रत्येक
तीनों ही आलाप होते हैं, शेष नौ गुणस्थानोंमें एक पर्याप्त आलाप ही नियमसे होगा
॥७०८॥

सत्तण्हं पुढवीणं ओधेमिच्छे य तिरिणि आलावा ।
पढमाविरदेवि तहा सेसाणं पुण्णमालावो ॥७१२॥

सप्तानां पृथ्वीनामोघे सामान्ये मिथ्यादृष्टौ च त्रय आलापाः । प्रथमाविरतेऽपि तथा शेषानां पूर्णालापः ॥

सामान्यविदं सप्तपृथ्विगणं साधारणमिथ्यादृष्टियोजं मूरुमाळापंगळपुवु । प्रथमपृथ्वि-
अविरतसम्यग्दृष्टियोजंमते मूराळापंगळपुवुवेके बोडे प्रथमनरकमं बढापुष्यनप्प वेदकसम्यग्दृष्टिं
क्षाधिकसम्यग्दृष्टियं पुगुगुमपुवोरिदं शेषगं प्रथमपृथ्वि सासादनमिथगं द्वितीयविदं पृथ्विगण
सासादनमिथासंयतगं थुं पय्यासाळापमो देयक्कुं । उळ्ळिदाव नरकंगळोळुं सम्यग्दृष्टि पुगने बुदाव ।

तिरियचउक्काणोघे मिच्छदुमे अविरदे य तिरिणेत्र ।

णवरि य जोणिणि अयदे पुण्णो सेसेवि पुण्णो दु ॥७१३॥

तिरिदचां चतुर्णामोघे मिथ्यादृष्टिद्विके अविरते च त्रय एव । विशेषोऽस्ति योनिमत्पसंदे पूर्णः शेषेपि पूर्णस्तु ॥

तिर्यंगतिपौं पंचगुणस्थानगळोळुं सामान्यतिर्यंचरुगळं पंचेद्रियतिर्यंचरुगळं पर्या-
तिर्यंचरुगळं योनिमतितिर्यंचरुगळं इंतु नाहं तेरव तिर्यंचरुगळं साधारणविदं मिथ्यादृष्टि-

गुणस्थानबोळं सासादनगुणस्थानबोळंमसंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानबोळं प्रत्येकं मूरुमाळापंगळपुवुवि-
विशेषमुंदावुदे बोडे योनिमतियसंयतगुणस्थानबोळं पय्यासाळापमेयक्कुमेके बोडे बढतिर्यंगपुवु-
रप्प सम्यग्दृष्टिगळुं योनिमतियं पंढरुमागि पुदटरपुवोरिदं शेषमिथवेशसंयतगुणस्थानद्वयो-
पय्यासाळापमेयक्कुं :—

नरकगतौ सामान्येन सप्तपृथ्वीमिथ्यादृष्टौ त्रयः आलापाः स्युः । तथा प्रथमपृथ्व्याविरतेऽपि सा-
२० आलापाः स्युः । बढनरकायुवेदक्षाधिकसम्यग्दृष्टपोस्त्वोरतिर्यंचमवात् शेषपृथ्व्याविरतानामेकः पर्याप्त
एव सम्यग्दृष्टेस्त्वानुत्तः ॥७१२॥

तिर्यंगतो पञ्चगुणस्थानेषु सामान्यपञ्चेन्द्रियपर्याप्तयोनिमतिर्यंचां चतुर्णां साधारणेन मिथ्यादृ-
ष्टासादनासंयतेषु प्रत्येकं त्रय आलापा भवन्ति । तत्रायं विशेषः—योनिमदसंयते पर्याप्तालाप एव । बढानु-
स्थानि सम्यग्दृष्टेः श्वीपण्डयोरनुत्तः । तु-युनः शेषमिथवेशसंयतयोरपि पर्याप्तालाप एव ॥७१३॥

नरकगतिमे सामान्यसे सातो पृथ्वीके मिथ्यादृष्टिमे तीनीं आलाप होते हैं । तथा
२५ प्रथम पृथ्वीमें अविरतमें भी तीनीं आलाप होते हैं क्योंकि जिन्होंने पहले नरकायुका बन्
क्रिया हे वे वेदक सम्यग्दृष्टि और क्षायिक सम्यग्दृष्टि प्रथम नरकमें ही उत्पन्न होते हैं । तत्र
पृथिवियोंमें अविरतोंके एक पर्याप्त आलाप ही होता है क्योंकि सम्यग्दृष्टि मरकर उनमें उन्न
नहीं छेवा ॥७१२॥

तिर्यंगगतिमे पांच गुणस्थानोंमें सामान्यतिर्यंच, पंचेन्द्रियतिर्यंच, पर्याप्ततिर्यंच और
१० योनिमतौतिर्यंच इन चारोंके सामान्यसे मिथ्यादृष्टि, सासादन और असंयत गुणस्थानोंमें
प्रत्येकमें तीन आलाप होते हैं । किन्तु इतना विशेष है कि असंयतमें योनिमतौतिर्यंचने
पर्याप्त आलाप ही होता है; क्योंकि जिसने परभवकी आयुका बन्ध किया है वह सम्यग्दृ-
ष्टि

सब्धेयसामान्यबोद्धुं नाल्कं गुणस्थानमक्कंमल्लि मिय्यादृष्टिगुणस्थानबोद्धं सासाइनुव -
 स्थानबोद्धं असंपतसम्पदृष्टिगुणस्थानबोद्धं सामान्यात्त्रापमुं पम्प्याप्तात्त्रापमपम्प्याप्तात्त्रापमुं
 मूरमात्त्रांगळपुवु । अल्लि विरोपमुंटावायुदे बोडे भवनत्रयवेवक्कळ कल्पवासित्तोयशुळ असंज
 गुणस्थानबोद्धुं पम्प्याप्तात्त्रापमो वेवक्कुमेके बोडे तिप्यंगमानुप्यासंपतसम्पदृष्टिगुळ भवनत्रयो
 कल्पामररजोयराणि पुट्टरररुवरिवं ॥

मिस्से पुण्णालावो अणुदिसाणुत्तरा हु ते सम्मा ।

अविरदतिण्णा लावा अणुदिसाणुत्तरे होंति ॥७१८॥

मिभे पूर्वात्त्रापः अनुद्दिगानुत्तराः खलु ते सम्पद्वृष्टयः । असंपतप्रितयालापाः अनुद्दिगानुत्तरे
 भरंति ॥

10 मुनेच्च नत्रयेयेकायसानमाव सामान्यवेवक्कळ मिथगुणस्थानबोद्धुं पम्प्याप्तात्त्रापमोदे
 यस्कुं । अनुद्दिगानुत्तरविमानंगळहमिबरल्लरं स्फुटमागयगंगळु सम्पद्वृष्टिगुळोपुवरिरमसंपत
 सम्पद्वृष्टिगुणस्थानबोद्धुं सामान्यात्त्रापमुं पम्प्याप्तात्त्रापमुं निवृत्त्यपम्प्याप्तात्त्रापमुं ब मूर मात्त्र
 पगळु अनुद्दिगानुत्तरविमानयासिगळोळपुवु ।

मनंतरमिथियमागंगेयोत्त्रापमं पेत्तवपं :-

11 चारमुद्दमेइंदिपपित्तिचतुरंदिप असण्णिजीवाणं ।

ओपे पुण्णे तिण्णि य अपुण्णमे पुण अपुण्णो दु ॥७१९॥

चारमुद्दमेइंदिपपित्तिचतुरिथियासत्तिजोयानामोपे पूर्णं प्रयश्चापूर्णे पुनरपूर्णास्तु ॥

चारइंदिप मूरमेइंदिपपित्तिचतुरिथियासत्तिजोवंगळ सामान्यबोद्धुं सामान्य

पम्प्याप्तात्त्रापमं ब मूरमात्त्रांगळपुवु । पम्प्याप्तात्त्रापमोवपविनिष्टजोवंगळोत्त्रा मूरमात्त्रा
 यत्तपुवु । अत्रयानिनामकम्मोवपविनिष्टजोवंगळोत्त्र लब्ध्याप्याप्तात्त्रापमो वेस्कुं ।

संहरनामान्ये षण्णुमस्थानेषु मिय्यादृष्टिमासादनयोः असंपते च त्रय आलापा भरन्ति । अत्र विवेक

अत्रयत्तपुवु कलासतोया च अत्रयते पर्याप्तात्त्राप एक नियमनुष्यागंयताना तपोत्तरयत्तमात्त ॥७१८॥

नरिंहरनामान्ये षण्णुमस्थानेषु मिय्यादृष्टिमासादनयोः असंपते च त्रय आलापा भरन्ति ॥७१९॥ अपेन्द्रियमागंगायामात्त-

पुण्णः चारमुद्दमेइंदिपपित्तिचतुरिथियासत्तिजोवंगळोत्त्रा मूरमात्त्रा

यत्तपुवु । अत्रयानिनामकम्मोवपविनिष्टजोवंगळोत्त्र लब्ध्याप्याप्तात्त्रापमो वेस्कुं ॥७१९॥

सब सामान्य देवीनि चार गुण स्थानोमिसे मिथ्यादृष्टि, सामादन और असंपत

इति आलाप होते है । इतना विवेक है कि भवनत्रिकं देवीक और कल्पवासी देवगनाको

असंपतने परांत आलाप ही होता है क्योंकि सम्पद्वृष्टि नियंत्र और मनुष्य इनमें कल्प

वही होते ॥७१८॥

ये चार देवदेव पर्यन्त सामान्य देवीक मिथ गुणस्थानमे एक परांत आलाप ही है ।

अनुत्तर और अनुत्तर विमानवासी अश्मिन्द सब सम्पद्वृष्टि ही होते है आः सब

परपतने इन आलाप होते है ॥७१९॥

ये चार देवदेव, मूरन पकेन्द्रिय, दोन्द्रिय, तेन्द्रिय, पौन्द्रिय और असंपत

असंपतने परांत आलाप ही होता है । इतने विवेक ही है । इतने विवेक ही है ।

असंपतने परांत आलाप ही होता है ॥७१९॥

पृथ्विकायिकबोळमष्कायिकबोळं तेजस्कायिकबोळं वायुकायिकबोळं नित्यनिगोवजोबंधबोळं चतुर्गतिनिगोवजोबंधबोळं इतर भावरसूक्ष्मभेदबोळं प्रत्येकचनस्पतियोळं तद्विभेदमप्य ।

प्रतिष्ठितप्रत्येकबोळं अप्रतिष्ठितप्रत्येकबोळं ओषधोऽऽ साधारणालापप्रयमस्कुरु । प्रत जोवंगळ सामान्यबोळ गुणस्थानंगळपविनात्कण्ठुवल्लि मिम्यादृष्टयाविगुणस्थानंगळोऽऽ गुणस्थान-
५ दोळपेळदंते आळाधंगळपुपु । विशेषित्तल । पृथ्विकायिकाविप्रसकायिकजोवपय्यंतमाव लभ्य-
पय्यामरोळ लब्धिअपय्याप्तालापमो देयपकु ।

अनंतरं योगमार्गणेपोऽऽ आलापमं पेळदपं :—

एककारसजोगाणं पुण्णगदाणं सपुण्ण आलाओ ।

मिस्सचउक्कस्स पुणो समएक्क अणुण्ण आलाओ ॥७२३॥

- १० एकादशयोगानां पूर्णगतानां स्वपूर्णांलापः । मिथश्चतुष्कस्य पुनः स्वकैःशोऽपूर्णः आलापः ॥
पर्याप्तिगो संद मनोवाग्योषंगं दुं औदारिकवैक्रियिकाहारकंगं ब मूर्धमित्तु पलोडु
योगंगळ स्वस्वपूर्णांलापमो दो देयस्कुमवे ते दोडे सत्यासत्योभयानुभयमनः पर्याप्ताञ्चापमुं
सत्यासत्योभयानुभयभाषापय्याप्ताञ्चापमुं औदारिकवैक्रियिकाहारकशरीरपर्याप्ताञ्चापमुं तंतम
वोदोदेपाणि पन्नोदुयोषंगळोऽऽ पन्नोदे पर्याप्ताञ्चापमप्युषं दुदत्थं । मिथश्चतुष्कयोगकं मते
१५ स्वस्वापर्याप्तालापमो दो देयस्कुमोदारिकापर्याप्तवैक्रियिकापर्याप्तआहारकापर्याप्त कामंकाय-
पर्याप्तमं आळापचतुष्टयं यथासंख्यमार्गोदोदे पेळन्पडुवेषुवत्थं ॥

अनंतरं वेद मार्गणादियाहारमार्गणापय्यंतमाव पत्तुं मार्गणेगळोळाञ्चापक्रमं तोरिदपं ॥

वेदादोहारोत्ति य सगुणद्वाणाणमोष आलाओ ।

णवरि य संहित्थीणं णत्थि हु आहारगाण दुगं ॥७२४॥

- २० वेदाहारपर्यंतं च स्वगुणस्थानानामोष आळापः । नवमस्ति च पंडह्योणां नास्त्याहारक-
योद्विकं ॥
वेदमार्गणेमोदल्लोडु आहारमार्गणेपय्यंतमाव पत्तुं मार्गणेगळोळु तंतम्ममार्गणेगळु
गुणस्थानंगळगे सामान्योददं गुणस्थानंगळोळु पेळशाञ्चापक्रमनेयस्कुमावोडमो दु नवीनमुंढबापुं दोडे
भावपंडहं द्रव्यपुरुषं भावस्त्रीपहं द्रव्यपुरुषरुगळप्प वेदमार्गणेय सवेदानिवृत्तिकरणपर्यंतमाव

- २५ पर्याप्तगताना चतुर्नवचतुर्वागौदारिकवैक्रियिकाहारकैकादशयोगानां स्वस्वपूर्णांलापो भवति यथा
सत्यमनोगोस्य सत्यमनःपर्याप्तालापः । मिथश्चतुष्कस्य पुनः स्वस्वैकापर्याप्तालापो भवति । यथा
औदारिकमिथश्च औदारिकापर्याप्तालापः ॥७२३॥ अथ शेषमार्गणां गु आह—

वेदाद्याहारान्तरदशमार्गणां स्वस्वगुणस्थानानामालापक्रमः सामान्यगुणस्थानवद्भवति किन्तु भावपंड-

- पर्याप्त अवस्थामे होनेवाले चार मनोयोग, चार वचनयोग, औदारिक, वैक्रियिक
३० आहारक काययोग इन ग्यारह योगोंमें अपना-अपना पर्याप्त आलाप होता है । जैसे सत्य-
मनोयोगके सत्यमन पर्याप्त आलाप होता है । चार मिथश्रयोगोंमें अपना-अपना एक अपर्याप्त
आलाप होता है । जैसे औदारिकमिश्रके औदारिक अपर्याप्त आलाप होता है ॥७२३॥

शेष मार्गणाओंमें कहते हैं—

वेदसे लेकर आहारमार्गणा पर्यन्त दस मार्गणाओंमें अपने-अपने गुणस्थानोंका आलाप-

- १५ क्रम सामान्य गुणस्थानको तरह होता है । किन्तु भावसे नपुंसक द्रव्यसे पुरुष और भावसे

उ ५ । पय्यातिरुसासावनगुणस्थानवर्तिगच्छे । गु १ । सा सा । जो १ । पा । प ६ । प्रा १० ।
ग ४ । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे का १ । वे १॥
सा ३ । कु । कु । मि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा सा । सं १ । आ १॥
भा ६

अपय्यातिरुसासावनगुणस्थानवर्तिगच्छे । गु १ । अ । पा । ६ । अ । प्रा ७ । अ सं ४ । व १ ।
५ । मा । वे । इ १ । पं । का १ । त्र । यो ३ । ओ मि । वे मि । का । वे ३ । क ४ । ना २ । कु ।
मं । अ । व २ । ले २ । क । शु । भ १ । सं १ । या सा । पं १ । आ २ । उ ४ ॥
भा ६

सम्पत्तिम्यावृष्टिगुणस्थानवर्तिगच्छे । गु १ । मिथ्र । जो १ । पा । प ६ । पा ३ ।
सं ४ । ग ४ । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे का १ ।
क ४ । ना ३ । मि म । मि ध्र । मि अ । सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ ।
२ ६

१० । मिथ्रवृ । सं १ । आ १ उ ६ ॥

असंपत्तगुणस्थानवर्तिगच्छे । गु १ । अ । सं । जो २ । पा । अ । प ६ । प्रा १० ।
सं ४ । ग ४ । इ १ । पं । का १ । त्र । यो ३ । म ४ । व ४ । ओ २ । वे २ । का १ ।
क ४ । ना ३ । म । ध्र । अ । सं १ । अ । व ३ । च । अ । अ ॥ ले ६ । भ १ । सं ३ । उ ।
भा ६

भा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

१५ । असंपत्तगुणस्थानवर्तिपय्यातिरुसासावनगुणस्थानवर्तिगच्छे । गु १ । अ सं । जो १ । पा ।
प । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १० । म ४ । व ४ । ओ १ ।
का १ । वे ३ । क ४ । ना ३ । म । ध्र । अ । सं १ । अ । व ३ । च । अ । अ । ले ६ ।
भा ६

सं ३ । उ । वे । शा । सं १ । आ १ उ ६ ॥

उ ५ । पय्यातिरुसासावनगुणस्थानवर्तिगच्छे । गु १ । सा सा । जो १ । पा । प ६ । प्रा १० ।
२० । ग ४ । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे का १ । वे १॥
सा ३ । कु । कु । मि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा सा । सं १ । आ १॥
भा ६

अपय्यातिरुसासावनगुणस्थानवर्तिगच्छे । गु १ । अ । पा । ६ । अ । प्रा ७ । अ सं ४ । व १ ।
५ । मा । वे । इ १ । पं । का १ । त्र । यो ३ । ओ मि । वे मि । का । वे ३ । क ४ । ना २ । कु ।
मं । अ । व २ । ले २ । क । शु । भ १ । सं १ । या सा । पं १ । आ २ । उ ४ ॥ सम्पत्तिम्यावृष्टीनां गु १ ।
भा ६

सम्पत्तिम्यावृष्टीनां गु १ । मिथ्र । जो १ । पा । प ६ । पा ३ । सं ४ । ग ४ । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १० ।
२५ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे का १ । वे १॥ सा ३ । कु । कु । मि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ ।
सा सा । सं १ । आ १॥ भा ६

असंपत्तगुणस्थानवर्तिगच्छे । गु १ । अ । सं । जो २ । पा । अ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इ १ । पं । का १ । त्र ।
३० । यो ३ । म ४ । व ४ । ओ २ । वे २ । का १ । क ४ । ना ३ । म । ध्र । अ । सं १ । अ । व ३ । च । अ । अ ॥
ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । भा ६

भा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥ पय्यातिरुसासावनगुणस्थानवर्तिगच्छे । गु १ । सा सा । जो १ । पा । प ६ । प्रा १० ।
३५ । ग ४ । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे का १ । वे १॥ सा ३ । कु । कु । मि । सं १ ।
अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा सा । सं १ । आ १॥ भा ६

म। इं१। पं। का१। प्र। यो९। वे३। क४। ज्ञा४। सं२। सा। छे। व३। वा।
 अ। ले६। भ१। सं२। उ। क्षा। सं१। आ१। उ७॥

भा१

अनियुत्तिकरणगुणस्थानवर्तिप्रथमभागानियुत्तिकरणगे। गु१। अनि। जो१। ११।
 प्रा१०। सं२। मं। ग१। म। इं१। का१। यो९। वे३। क४। ज्ञा४। सं२। सा। छे।
 ५ व३। ले६। भ१। सं२। उ। क्षा। सं१। आ१। उ७॥

भा१

अनियुत्तिकरणगुणस्थानवर्तिद्वितीयभागानियुत्तिकरणगे। गु१। अनि। जि१। ११।
 प्रा१०। सं२। पा। ग१। म। इं१। का१। यो९। वे०। क४। ज्ञा४। मा। धु। ज्ञा१।
 सं२। सा। छे। व३। ले६। भ१। सं२। उ। क्षा। सं१। आ१। उ७॥

भा१

तृतीयभागानियुत्तिकरणगे। गु१। जो१। प६। प्रा१०। सं२। पा। ग१। मां॥
 १० का१। यो९। वे०। क३। ज्ञा४। सं२। सा। छे। व३। ले६। भ१। सं२। उ।
 क्षा। सं१। आ१। उ७॥

भा१

चतुर्थभागानियुत्तिकरणगे। गु१। अनि। जो१। प६। प्रा१०। सं२। पा। प॥
 म। इं१। का१। यो९। वे०। क२। ज्ञान४। सं२। सा। छे। व३। ले६। भ१।
 सं२। उ। क्षा। सं१। आ१। उ७॥

भा१

१५ पंचमभागानियुत्तिकरणगे। गु१। अनि। जो१। प६। प्रा१०। सं२। पा। ग१। म।
 इं१। प०। का१। प्र। यो९। वे०। क१। लो। ज्ञा४। सं२। सा। छे। व३। ले६।
 भ१। सं२। उ। क्षा। सं१। आ१। उ७॥

सं२। ग१। म। इं१। पं। का१। प्र। यो९। वे३। क४। ज्ञा४। सं२। सा। छे। व३। व३।
 ले६। भ१। सं२। उ। क्षा। सं१। आ१। उ७। अनियुत्तिकरणप्रथमभागवर्तिना—गु१ अनियुति।
 भा१

२० जो१। प६। प्रा१०। सं२। मं। पा। ग१। म। इं१। का१। यो९। वे३। क४। ज्ञा४। सं२।
 सा। छे। व३। ले६। भ१। सं२। उ। क्षा। सं१। आ१। उ७। तद्वितीयभागवर्तिना—गु१ अनि।
 भा१

जो१। प६। प्रा१०। सं२। पा। ग१। इं१। का१। यो९। वे०। क४। ज्ञा४। मं। धु। व३।
 सं२। सा। छे। व३। ले६। भ१। सं२। उ। क्षा। सं१। आ१। उ७। तृतीयभागवर्तिना—गु१
 भा१

अनि। जो१। प६। प्रा१०। सं२। पा। ग१। म। इं१। का१। यो९। वे०। क३। ज्ञा४।
 २५ सं२। सा। छे। व३। ले६। भ१। सं२। उ। क्षा। सं१। आ१। उ७। चतुर्थभागवर्तिना—गु१ अनि।
 भा१

जो१। प६। प्रा१०। सं२। पा। ग१। म। इं१। का१। यो९। वे०। क२। ज्ञा४। सं२।
 सा। छे। व३। ले६। भ१। सं२। उ। क्षा। सं१। आ१। उ७। पंचमभागवर्तिना—गु१ अनि। जो१।
 भा१

प६। प्रा१०। सं२। पा। ग१। म। इं१। पं। का१। प्र। यो९। वे०। क१। लो। ज्ञा४। सं२।

इं०। का०। यो०। वे०। क०। जा०। फे। सं०। व०। के। ले०। भा०।
 क्षा। सं०। वा०। अनाहार। उ२॥

अवेगबोळु गत्यनुवावोळु नारकगळगे सामान्याळापं पेळल्पडुवलि। गु४।
 ५ पा०। प०। ६। ६। प्रा०। ७। सं०। ४। ग०। नरकगति। इं०। का०। यो०।
 वा०। वे०। का०। वे०। पं०। क०। जा०। ६। कु। कु। वि। म। थु। वा। सं०।
 व०। च। अ। अ। ले०। ३। भ०। सं०। ६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा।
 भा०।
 आ०। उ१॥

सामान्यपर्याप्तनारकगणे गु४। जी०। प०। प्रा०। सं०। ग०। न।
 १० का०। यो०। वे०। पं०। क०। जा०। ६। कु। कु। वि। म। थु। आ। सं०। वा।
 च। अ। अ। ले०। १। कु। भ०। सं०। ६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा। सं०। उ१॥
 भा०।

सामान्यनारकापर्याप्तिके गु२। मि। अ। जी०। प०। प्रा०। सं०। ग०।
 इं०। का०। यो०। वे०। मि। का०। वे०। पं०। क०। जा०। ५। कु। कु। म।
 सं०। अ। व०। ले०। २। का। थु। भ०। सं०। ३। मि। वे। क्षा। सं०। आ०। उ०।
 भा०।

सामान्यनारकमिथ्यावृष्टिगळगे गु१। मि। जी०। प। अ। प०। ६। ६। प्रा०।
 १५ सं०। ग०। न। इं०। का०। यो०। वे०। पं०। क०। जा०। ३। कु। कु। वि।
 अ। व०। ले०। ३। भ०। सं०। १। मि। सं०। आ०। उ१॥
 भा०।

पं०। प्रा०। सं०। ग०। इं०। का०। यो०। वे०। क०। जा०। १। के। सं०। द०। के।
 भं०। सं०। शा। सं०। वा०। अनाहार। उ२।

अदेगे गत्यनुवादे नारकाणां—गु४। जी०। प०। प०। ६। ६। प्रा०। ७। सं०। ग०।
 २० इं०। का०। यो०। म०। वा०। वे०। का०। वे०। पं०। क०। जा०। ६। कु। कु। वि। म। थु।
 अ। व०। ले०। ३। पर्याप्तेशरि कृष्णलेस्या एकेव अपर्याप्तिकाले कपोतलेस्या विप्रहृद्यौ गु
 भा०।

इति द्रव्यलेस्यापव। भ०। सं०। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा। सं०। आ०। उ१। तत्पर्याप्तानां
 जी०। प०। प्रा०। सं०। ग०। न। इं०। का०। यो०। वे०। पं०। क०। जा०। ६। कु।
 थु। अ। सं०। अ। व०। ले०। १। कु। भ०। सं०। ६। मि। सा। मि। उ। वे। क्षा। सं०। आ०।
 भा०।

तत्पर्याप्तानां—गु२। मि। अ। जी०। प०। प्रा०। सं०। ग०। न। इं०। का०।
 २५ वे। मि। का०। वे०। पं०। क०। जा०। ५। कु। म। थु। अ। सं०। अ। व०। ले०। २। कु। भ०। सं०। ३। मि।
 भा०।

सं०। आ०। उ०। तन्मिथ्यावृष्टीनां—गु१। मि। जी०। प०। प०। ६। ६। प्रा०। ७। सं०। ग०।
 इं०। का०। यो०। वे०। पं०। क०। जा०। ३। कु। कु। वि। सं०। अ। व०। ले०। ३। भं०।
 भा०।

सामान्यनारकपर्याप्तसंयतंगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । न । इ १ ।
का १ । यो ९ । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा ३ । म । धु । अ । सं १ । अ । व ३ । ले १ । भ १ । स ३ ।
भा ३

उ । वे । क्षा । स १ । आ १ । उ ५ ६ ॥

सामान्यनारकाऽपर्याप्तसंयतंगे । गुण १ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ ।
५ ग १ । न । इ १ । का १ । यो २ । वे मि । का । वे १ । पं ० । क ४ । ज्ञा ३ । म । धु । अ ।
सं १ । अ । व ३ । ले २ क गु । भ १ । सं २ । वे क्षा ॥ सं १ । आ २ । उ ६ ॥
भा १ कपो

धर्मेय सामान्यनारकगो । गु ४ । जी २ । प । अ । प । ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । प ।
न । इ १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । वे २ । का १ । ये १ । पं । क ४ । ज्ञा ६ । कु । कु ।
वि । म । श्रु । अ । सं १ । अ । व ३ । ले ३ कृ । का । गु । भ २ । सं ६ । सं १ । आ २ । उ ९ ॥
भा १

१० धर्मेय सामान्यनारकपर्याप्तिको । गु ४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । न । इ
१ । का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । ये का १ । ये १ । प ० । क ४ । ज्ञा ६ । सं १ । अ । व ३ ।
ले १ कृ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ ९ ॥
भा १ कृ

धर्मेय सामान्यनारकापर्याप्तिको । गु २ । मि । अ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
१५ सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ । यो २ । वे मि । का । वे १ । प ० । क ४ । ज्ञा ५ । कु । कु । म ।
श्रु । अ । सं १ । अ । व ३ । ले २ क गु । भ २ । स ३ । मि । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ ॥
भा १ क

आ २ । उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ । यो ९ ।
वे १ पं । क ४ । ज्ञा ३ म धु अ । सं १ अ । व ३ । ले १ कृ । भ १ । स ३ । उ वे धा । सं १ ।
भा ३ अ

आ १ । उ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ ।
२० यो २ । वे मि । का । वे १ पं । क ४ । ज्ञा ३ म, धु, अ । सं १ अ । व ३ । ले २ क गु । भ १ स २ वे ।
भा ३ अगुभ

धा । सं १ । आ २ । उ ६ । पर्याप्तानां—गु ४ । जी २ । प । अ । प । ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । न ।
इ १ । का १ । यो ११ । म ४ वा ४ वे २ का १ । वे १ पं । क ४ । ज्ञा ६ । कु कु वि म धु अ । सं १ ।
अ । व ३ । ले ३ क क गु । भ २ स ६ । सं १ आ २ । उ ९ । तत्पर्याप्तानां—गु ४ । जी १ । प । ६ ।
भा १ क

प्रा १० । सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ । यो ९ । म ४ वा ४ वे का १ । वे १ पं । क ४ । ज्ञा ६ ।
२५ सं १ अ । व ३ । ले १ कृ । भ २ । स ६ । सं १ । आ १ । उ ९ । तदपर्याप्तानां—गु २ । मि । अ । जी ।
भा १ क

अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ । यो २ वे मि । का । वे १ पं । क ४ । ज्ञा ५ ।
कु कु म धु अ । सं १ अ । व ३ । ले २ क गु । भ २ । स ३ मि वे धा । सं १ । आ २ । उ ८ ।
भा १ क

द्वितीयापृथ्वीनारकसम्यग्मिथ्यादृष्टिगन्धो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । गति १ ।
 इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । क ४ । ज्ञा ३ ॥ सं १ । व २ । ले १ । भ १ । सं १ । मिथ १ ।
 सं १ । आ १ । उ ९ ॥

द्वितीयापृथ्वीनारकाऽसंयतसम्यग्दृष्टिगन्धो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । क ४ । ज्ञा ३ । म । धु । अ । सं १ । अ । व ३ । चा । अ ।
 अ । १ । भ १ । सं २ । उ । वे । सं १ । आ । १ । उ ६ । म । धु । अ । चा । अ । अ ॥

तिथ्यंचरु पंचप्रकारमप्परवरोऽसामान्यतिथ्यंचरुगन्धो । गु ५ । जी १४ । प ६ । ६ । १ ।
 ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ६ । ५ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग १ ।
 ति १ । इं ५ । का ६ । यो ११ । म ४ । व ४ । ओ २ । का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । म । धु । अ ।
 १० कु । कु । वि । सं २ । अ । वे । व ३ । चा । अ । अ । ले ६ । द्रव्यवोऽऽ भाववोऽऽ भ २ । सं ६ ।
 भा ६ ।
 उ । वे । क्षा । मि । सा । मि । सं २ । आ २ । उ ९ । म । धु । अ । कु । कु । वि । चा । अ । अ ॥

तिथ्यंच सामान्यपर्याप्तकर्मो । गु ५ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ ।
 ६ । ५ । ४ । सं ४ । ग १ । ति । इं ५ । का ६ । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । सं २ । व ३ ।
 ले ६ । भ २ । स ६ । सं २ । आ १ । उ ९ ॥

तिथ्यंचसामान्यापर्याप्तकर्मो । गु ३ । मि । सा । अ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ ।
 ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग १ । ति । इं ५ । का ६ । यो २ । मिथका । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ ।
 म । धु । अ । कु । कु । सं १ । अ । व ३ । चा । अ । अ । ले ३ । क शु । भ २ । सं ४ । मि । सा ।
 भा ३ । अशु

तत्सम्यग्मिथ्यादृष्टां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे १, क ४, ज्ञा ३,
 सं १, व २, ले १, भ १, स १, मिथं, सं १, आ १, उ ९, तदसंयतानां गु १, जी १, प ६, प्रा १०,
 भा १

२० सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे १, क ४, ज्ञा ३ म धु अ, सं १, अ, व ३, च अ अ । ले १ । व ।
 सं २ उ वे, सं १ आ १ उ ६ म धु अ च अ अ ।

पञ्चविधतिथ्यंशु सामान्यानां—गु ५ । जी १४ । प ६ ६ ५ ५ ४ ४ । प्रा १० ७ ९ ७ ८ ६ ७ ५ ।
 ४ ४ ३ । सं ४ । ग १ । ति । इं ५ । का ६ । यो ११ म ४ व ४ ओ २ का १ । वे ३ । का ४ । ज्ञा ६ ।
 कु वि म धु अ । सं २ अ वे । व ३ च अ अ । ले ६ । भ २ । स ६ उ वे क्षा मि सा मि । सं २ ।
 भा ६

२५ आ २ । उ ९ म धु अ कु कु वि च अ अ । तत्पर्याप्तानां—गु ५ । जी ७ । प ६ ५ ४ । प्रा १० ९ ८ ७ ६ ।
 ४ । सं ४ । ग १ । ति । इं ५ । का ६ । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । सं २ । व ३ । ले ६ । व ३ ।
 भा ६ ।
 सं ६ । सं २ । आ १ । उ ९ । तदसंयतानां—गु ३ मि सा अ । जी ७ । प ६ ५ ४ । प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३ ।
 सं ४ । ग १ । ति । इं ५ । का ६ । यो २ मिथका । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ कु कु म धु अ । सं १ । अ ।

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA
MŪRTIDEVĪ JAIN GRANTHAMĀLĀ
FOUNDED BY

LATE SAHU SHANTI PRASAD JAIN
IN MEMORY OF HIS LATE MOTHER SHRIMATI MURTIDEVI
AND
PROMOTED BY HIS BENEVOLENT WIFE
LATE SHRIMATI RAMA JAIN

IN THIS GRANTHAMĀLĀ CRITICALLY EDITED JAINA ĀGAMIC, PHILOSOPHICAL,
PURĀNIC, LITERARY, HISTORICAL AND OTHER ORIGINAL TEXTS
AVAILABLE IN PRAKRIT, SANSKRIT, APABHRĪṢA, HINDI,
KANNADA, TAMIL, ETC., ARE BEING PUBLISHED
IN THEIR RESPECTIVE LANGUAGES WITH THEIR
TRANSLATIONS IN MODERN LANGUAGES.

ALSO
BEING PUBLISHED ARE
CATALOGUES OF JAINA-BHAṆḌĀRAS, INSCRIPTIONS, ART AND
ARCHITECTURE

| | | | |
|--|---------|--|---------|
| क्षेत्र और कालको लेकर उन्नीस काण्डक | ६४२ | यथान्त्रातता स्वरूप | १८६ |
| द्रव्य और अद्रव्य वृद्धिका प्रमाण | ६४५ | देशविरतता स्वरूप | १८७ |
| देशावधिका उत्कृष्ट द्रव्यादि | ६४६ | देशनिरतके ग्यारह भेद | १८७ |
| परमावधिका उत्कृष्ट द्रव्य | ६४८ | असंयतता स्वरूप | १८८ |
| सर्वावधिका विषय | ६४९ | इन्द्रियोंके विषय | १८८ |
| उत्कृष्ट अवधिज्ञानका क्षेत्र | ६५२ | संयममार्गणामें जीवसंख्या | १८८ |
| परमावधिका उत्कृष्ट क्षेत्र काल | ६५३ | | |
| नरकगतिके अवधिका विषयक्षेत्र | ६५७ | १४. दर्शनमार्गणा | ६९१-६९५ |
| अन्य गतियोंमें | ६५८ | दर्शनता स्वरूप | ६९१ |
| भवनत्रिकमें | ६५९ | चतुर्दर्शनका स्वरूप | ६९२ |
| स्वर्गवासी देवोंमें | ६६० | अचतुर्दर्शनका स्वरूप | ६९२ |
| कल्पवासी देवोंमें अवधिज्ञानका विषय द्रव्य | ६६२ | अवधिदर्शनका स्वरूप | ६९२ |
| लानेका क्रम | ६६३ | केवलदर्शनका स्वरूप | ६९२ |
| कल्पवासी देवोंके अवधिज्ञानके विषय-कालका प्रमाण | ६६४ | दर्शनमार्गणामें जीवसंख्या | ६९३ |
| मनःपर्यय ज्ञानका स्वरूप | ६६५ | १५. लेख्यमार्गणा | ६९६-७०५ |
| मनःपर्ययके भेद | ६६६ | लेख्यका स्वरूप | ६९६ |
| विपुलमतिके भेद | ६६७ | लेख्यमार्गणके अधिकार | ६९७ |
| मनःपर्ययकी उत्पत्ति द्रव्यमगले | ६६७ | लेख्यके छह भेद | ६९८ |
| द्रव्यमनता स्वरूप | ६६८ | द्रव्य लेख्यका स्वरूप | ६९८ |
| मनःपर्यय ज्ञानके स्वामी | ६६८ | नरकादि गतियोंमें द्रव्य लेख्य | ६९९ |
| ऋजुमति और विपुलमतिके अन्तर | ६६८ | परिणामाधिकार | ७०० |
| ऋजुमतिके जाननेका प्रकार | ६६९ | लेख्याञ्चके स्थान | ७०१ |
| विपुलमतिके जाननेका प्रकार | ६७० | उन स्थानोंमें परिणमन | ७०२ |
| ऋजुमतिके विषयभूत अघन्य और उत्कृष्ट द्रव्य | ६७१ | संक्रमणके दो भेद | ७०४ |
| विपुलमतिके विषयभूत अघन्य द्रव्य | ६७२ | संक्रमणमें छह हानि-वृद्धियाँ | ७०५ |
| विपुलमतिके उत्कृष्ट द्रव्य क्षेत्र | ६७३ | लेख्याञ्चका कार्य | ७०७ |
| ऋजुमति-विपुलमतिके काल | ६७४ | दृष्ट्यलेख्यका लक्षण | ७०७ |
| केवलज्ञानका स्वरूप | ६७५ | शीललेख्यके लक्षण | ७०८ |
| ज्ञानमार्गणामें क्षेत्र संख्या | ६७७ | कपोत लेख्यके लक्षण | ७०९ |
| | | तेजोलेख्यके लक्षण | ७०९ |
| १३. संयममार्गणा | ६८१-६९० | पद्मलेख्यके लक्षण | ७१० |
| संयमका स्वरूप | ६८१ | सुकुललेख्यके लक्षण | ७१० |
| संयमभावका कारण | ६८१ | लेख्याञ्चके छत्रोत्त अंश | ७११ |
| शास्त्रादिक संयमका स्वरूप | ६८३ | अपकर्ष कालमें आधुवन्ध | ७१२ |
| छेत्रोत्तरावगतताका स्वरूप | ६८४ | छेत्राञ्चके उत्कृष्ट आदि अंशोंमें मरनेवालोंका जन्म | ७१८ |
| परिहार शिष्टि द्वािके | ६८४ | नारकियों आदिमें लेख्य | ७१९ |
| सुयमशासनका स्वरूप | ६८६ | | |

| | | | |
|--|----------------|--------------------------------|----------------|
| सायक श्रेणिमें जीवसंख्या | ८६५ | २१. श्लोघादेन प्ररूपणपरधिकार | ९०४-९३४ |
| स्योगीजिनोकी संख्या | ८६९ | नरकादि गतियोंमें गुणस्थान | ९०४ |
| राव संयमियोंकी संख्या | ८६९ | मनोयोग-वचनयोगमें गुणस्थान | ९०६ |
| श्वरोगियोंकी संख्या | ८७० | शौदारिक-श्रीदारिक मिश्रमें | ९०६ |
| पारो गतिके निष्पादुष्टि, सासादन, मिश्र और | | वैक्रियिक-वैक्रियिक मिश्रमें | ९०७ |
| असंपन्न सम्पदुष्टियोंकी संख्याके सायक | | आहारक-आहारक मिश्रमें | ९०८ |
| पत्यके भागहारोका कथन | ८७० | कार्मणाकाय योगमें | ९०८ |
| मनुष्यगतिमें सासादन आदि पाँच गुणस्थानों- | | वेदमार्गणामे | ९०९ |
| में संख्या | ८८१ | कथामार्गणामे | ९१० |
| शासिक सम्पदसंनका स्वरूप | ८८३ | ज्ञानमार्गणामे | ९१० |
| शासिक सम्पदसंनकी विशेषताएँ | ८८४ | संयममार्गणामे | ९११ |
| वेदक सम्पदसंनका स्वरूप | ८८५ | दर्शनमार्गणामे | ९१३ |
| उत्तम सम्पदवक्ता स्वरूप | ८८५ | श्रेयसामार्गणामे | ९१३ |
| पाँच लक्ष्योका स्वरूप | ८८५ | सम्पत्त्वमार्गणामे | ९१४ |
| उत्तम सम्पदवक्ताको प्रहृण करनेके योग्य जीव | ८८६ | द्वितीयोपशम सम्पत्त्वमे | ९१५ |
| सासादन सम्पदुष्टिका स्वरूप | ८८७ | संज्ञीमार्गणामे | ९१६ |
| सम्पदिसन्नादुष्टिका स्वरूप | ८८७ | आहारमार्गणामे | ९१७ |
| मिथ्यादुष्टिका स्वरूप | ८८७ | गुणस्थानोंमें जीवसमाप्त | ९१८ |
| सम्पदव मार्गणामे जीवगंरया | ८८८ | गति मार्गणामे जीवसमाप्त | ९१८ |
| | | गुणस्थानोंमें पयति और प्राण | ९१९ |
| १८. संज्ञिमार्गणा | ८९२-८९४ | गुणस्थानोंमें संज्ञा | ९१९ |
| संज्ञी-असंज्ञीका अलग | ८९२ | गुणस्थानोंमें मार्गणा | ९२१ |
| संज्ञी-असंज्ञी जीवोकी संख्या | ८९३ | गुणस्थानोंमें योग | ९२५ |
| | | गुणस्थानोंमें उपयोग | ९३३ |
| १९. आहारमार्गणा | ८९५-८९९ | | |
| आहारका अलग | ८९५ | | |
| अनारक और आहारक | ८९६ | २२. आलापापितार | ९३५-९७२ |
| काय समुद्भव | ८९६ | गुणस्थानोंमें आलाप | ९३६ |
| समुद्भवका अलग | ८९६ | सामान्य-वर्षाण-वर्षाण चीन आलाप | ९३७ |
| आहार-अनारकाका अलग | ८९७ | अनारकेके दो भेद | ९३७ |
| आहारको-अनारकोकी संख्या | ८९७ | श्रीरह मार्गणाओंमें आलाप | ९३८ |
| | | गतिमार्गणामे आलाप | ९३८ |
| २०. उपयोगपरिहार | ९००-९०३ | इन्द्रिय मार्गणामे आलाप | ९४२ |
| उपयोगका अलग और भेद | ९०० | कार्यमार्गणामे आलाप | ९४३ |
| अनारक और अनारक उपयोग | ९०० | योगमार्गणामे आलाप | ९४४ |
| और उपयोग स्वरूप | ९०१ | दोष मार्गणाओंमें आलाप | ९४४ |
| उपयोगका अलग | ९०१ | संज्ञकणोंमें विशेष | ९४७ |

| तिस्रं सामान्य असंयत सम्पद्दृष्टिं | बीस प्ररूपणाओंका कथन | १६४ | सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टि पर्याप्त | बीस प्ररूपणा | १७१ |
|------------------------------------|------------------------|-----|--------------------------------------|--------------------|-------|
| " " | असंयत पर्याप्त | " " | " " | अपर्याप्त | " " |
| " " | असंयत अपर्याप्त | " " | " " | सासादन | " १७२ |
| सामान्य तिर्यञ्च देश संयत | " " | १६५ | " " | " पर्याप्त | " " |
| पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च | " " | " " | " " | " अपर्याप्त | " " |
| " " | पर्याप्तक | " " | " " | सम्पन्निभ्यादृष्टि | " " |
| " " | अपर्याप्तक | " " | " " | असंयत | " " |
| " " | मिथ्यादृष्टि | " " | " " | असंयत पर्याप्त | " " |
| " " | मिथ्यादृष्टि पर्याप्त | १६६ | " " | असंयत अपर्याप्त | " १७३ |
| " " | मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त | " " | " " | संयतासंयत | " " |
| " " | सासादन | " " | " " | प्रमत्त | " " |
| " " | सासादन पर्याप्त | " " | " " | प्रमत्त पर्याप्त | " " |
| " " | सासादन अपर्याप्त | " " | " " | प्रमत्त अपर्याप्त | " " |
| " " | मिथ्र | " " | " " | अप्रमत्त | " १७४ |
| " " | असंयत | १६७ | " " | अपूर्वकरण | " " |
| " " | असंयत पर्याप्त | " " | " " | अनिवृत्ति प्रथम० | " " |
| " " | असंयत अपर्याप्त | " " | " " | " द्वितीय० | " " |
| " " | देशसंयत | " " | " " | " तृतीय० | " " |
| " " | योनिमती | १६८ | " " | " चतुर्थ० | " १७५ |
| " " | योनिमती पर्याप्त | " " | " " | " पंचम | " " |
| " " | योनिमती अपर्याप्त | " " | " " | सूदमसाम्पराय | " " |
| " " | " मिथ्यादृष्टि | " " | " " | उपशान्त कृपाय | " " |
| " " | योनिमती मिथ्यादृष्टि | " " | " " | क्षीणकृपाय | " " |
| " " | पर्याप्त | १६९ | " " | सयोगकेवली | " १७६ |
| " " | योनिमती मिथ्यादृष्टि | " " | " " | अयोगकेवली | " " |
| " " | अपर्याप्त | " " | मानुषी | " " | " " |
| " " | योनिमती सासादन | " " | मानुषी पर्याप्त | " " | " " |
| " " | " " पर्याप्त | " " | मानुषी अपर्याप्त | " " | " " |
| " " | " " अपर्याप्त | " " | मानुषी मिथ्यादृष्टि | " १७७ | " " |
| " " | " मिथ्र | १७० | मानुषी पर्याप्त मिथ्यादृष्टि | " " | " " |
| " " | " असंयत | " " | मानुषी अपर्याप्त मिथ्यादृष्टि | " " | " १७७ |
| " " | " देशसंयत | " " | " सासादन | " " | " १७८ |
| " " | सम्पन्नपर्याप्तक | " " | " सासादन पर्याप्त | " " | " १७८ |
| " " | " " " " " " | " " | " सासादन अपर्याप्त | " " | " " |
| " " | " " " " " " | " " | " सम्पन्निभ्यादृष्टि | " " | " " |
| " " | " " " " " " | १७१ | " असंयत सम्पद्दृष्टि | " " | " " |
| " " | " " " " " " | " " | " देशसंयत | " " | " " |

| | | | | | |
|------------------------------------|---|------|-----------------------|----------------|------|
| पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि पर्याप्त | " | १९५ | मनोयोगी मिथ्यादृष्टि | बीज प्रख्यापना | १००४ |
| " " अपर्याप्त | " | " | मनोयोगी सासादन | " | " |
| असंज्ञि पंचेन्द्रिय | " | " | मनोयोगी मिश्र | " | १००५ |
| असंज्ञि पंचेन्द्रिय पर्याप्त | " | " | मनोयोगी अक्षयत | " | " |
| " " अपर्याप्त | " | " | मनोयोगी देवगंयत | " | " |
| सामान्य पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त | " | १९६ | मनोयोगी प्रमत्त | " | " |
| संज्ञि पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त | " | " | अक्षय मनोयोगी | " | १००६ |
| असंज्ञि पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त | " | " | वाग्योगी | " | " |
| कामानुवाद | " | " | वाग्योगी मिथ्यादृष्टि | " | " |
| पट्काय सामान्य पर्याप्त | " | १९७ | काययोगी | " | " |
| पट्काय सामान्य अपर्याप्त | " | " | " पर्याप्तक | " | १००७ |
| पुष्वीकाय | " | " | अपर्याप्तक | " | " |
| पुष्वीकाय पर्याप्तक | " | " | मिथ्यादृष्टि | " | " |
| पुष्वीकाय अपर्याप्तक | " | १९८ | " " पर्या० | " | " |
| बादर पुष्वीकायिक | " | " | " " अक्षय० | " | " |
| " " पर्याप्त | " | " | सासादन | " | १००८ |
| " " अपर्याप्त | " | " | " पर्याप्तक | " | " |
| वनस्पतिकायिक | " | १९९ | " अपर्याप्तक | " | " |
| " " पर्याप्त | " | " | सम्भगमिथ्यादृष्टि | " | " |
| " " अपर्याप्त | " | " | अक्षयत सम्भगदृष्टि | " | " |
| ऋषेक वनस्पति | " | " | पर्याप्त अक्षयत | " | १००९ |
| " " पर्याप्तक | " | १००० | अपर्याप्त अक्षयत | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | " | देशविरत | " | " |
| छापारण वनस्पति | " | " | प्रमत्तक्षयत | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | अप्रमत्तक्षयत | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | १००१ | सयोगकैवलि | " | १०१० |
| छापारण बादर वनस्पति | " | " | बौदारिक काययोगी | " | " |
| " " पर्याप्तक | " | " | " मिथ्यादृष्टि | " | " |
| " " अपर्याप्तक | " | " | सासादन | " | " |
| त्रसकाय | " | १००२ | सम्भगमिथ्यादृष्टि | " | " |
| त्रस पर्याप्तक | " | " | अक्षयत सम्भगदृष्टि | " | १०११ |
| त्रस अपर्याप्तक | " | " | देशत्रयी | " | " |
| त्रस मिथ्यादृष्टि | " | १००३ | बौदारिक मिश्रकाययोगी | " | " |
| " " पर्याप्त | " | " | " मिथ्यादृष्टि | " | " |
| " " अपर्याप्त | " | " | सासादन | " | " |
| अक्षय | " | " | अक्षयत | " | १०१२ |
| त्रग लब्ध्य पर्याप्तक | " | " | सयोगकैवलि | " | " |
| मनोयोगी | " | " | " | " | " |

| कृमयि कृम्युत्तमानि मिथ्यादुष्टि पर्याप्तक | बीस प्ररूपणा १०२९ | अवधिदर्शनी | बीस प्ररूपणा १०३९ |
|--|-------------------|---------------------|-------------------|
| | | पर्याप्तक | " " |
| " " " अपर्याप्तक | " १०३० | " अपर्याप्तक | " " |
| " " सागादन | " " | कृष्णलेख्या | " " |
| " " " पर्याप्तक | " " | " पर्याप्तक | " " |
| " " " अपर्याप्तक | " १०३१ | " अपर्याप्तक | " १०४० |
| विभंगमानि | " " | मिथ्यादुष्टि | " " |
| " मिथ्यादुष्टि | " " | " पर्याप्तक | " " |
| " सागादन | " " | " अपर्याप्तक | " " |
| मतिपुत्रमानि | " " | सागादन | " १०४१ |
| " पर्याप्तक | " १०३२ | " पर्याप्तक | " " |
| " अपर्याप्तक | " " | " अपर्याप्तक | " " |
| " असंयत | " " | मिश्र | " " |
| मतिपुत्रमानि असंयत अपर्याप्तक | " १०३२ | " असंयत सम्मगदुष्टि | " " |
| " " पर्याप्तक | " " | " पर्याप्तक | " १०४२ |
| मनःपर्वमानि | " १०३३ | " अपर्याप्तक | " " |
| वेदलमानि | " " | कपोतलेख्या | " " |
| संयमानुवाद | " " | " पर्याप्तक | " १०४३ |
| " असंयत संयत | " " | " अपर्याप्तक | " " |
| " असंयत सं. | " १०३४ | " मिथ्यादुष्टि | " " |
| सांसारिक संयत | " " | " पर्याप्तक | " " |
| परिहृयविदुष्टि | " " | " अपर्याप्तक | " १०४४ |
| सबाभ्याग संयत | " " | सागादन | " " |
| असंयत | " १०३५ | " पर्याप्तक | " " |
| " पर्याप्तक | " " | " अपर्याप्तक | " " |
| " अपर्याप्तक | " " | सम्मगिमिथ्यादुष्टि | " " |
| बहुदुर्लभे | " १०३६ | असंयत सम्मगदुष्टि | " १०४५ |
| " पर्याप्तक | " " | " पर्याप्तक | " " |
| " अपर्याप्तक | " " | " अपर्याप्तक | " " |
| " विदुष्टि | " " | तेजोऽरेखा | " " |
| " " पर्याप्तक | " १०३७ | " पर्याप्तक | " " |
| " " अपर्याप्तक | " " | " अपर्याप्तक | " १०४६ |
| असंयतदुष्टि | " " | मिथ्यादुष्टि | " " |
| " पर्याप्तक | " " | " पर्याप्तक | " " |
| " अपर्याप्तक | " १०३८ | " अपर्याप्तक | " " |
| " विदुष्टि | " " | सागादन | " " |
| " " पर्याप्तक | " " | " पर्याप्तक | " १०४७ |
| " " अपर्याप्तक | " " | सागादन अपर्याप्त | " " |

| संगी सासादन पर्याप्तक | बीस प्ररूपणा | १०६३ | आहारी | प्रमत्त | बीस प्ररूपणा | १०६८ |
|-----------------------|--------------|------|---------|-----------------------------|--------------|------|
| " " अपर्याप्तक | " " | " " | " " | अप्रमत्त | " " | " " |
| " मिथ | " " | " " | " " | अपूर्वकरण | " " | " " |
| " असंयत स० | " " | १०६४ | " " | अनिवृत्ति | " " | " " |
| " " पर्याप्तक | " " | " " | " " | सूदमसाम्पराय | " " | " " |
| " " अपर्याप्तक | " " | " " | " " | उपरागन्तकपाय | " " | १०६९ |
| असंशी | " " | १०६४ | " " | शीलकपाय | " " | " " |
| " पर्याप्तक | " " | " " | " " | सयोगनेवली | " " | " " |
| " अपर्याप्तक | " " | १०६५ | अनाहारी | " " | " " | " " |
| आहारी | " " | " " | " " | मिथ्यादृष्टि | " " | १०७० |
| " पर्याप्तक | " " | " " | " " | सासादन | " " | " " |
| " अपर्याप्तक | " " | " " | " " | असंयत | " " | " " |
| " मिथ्यादृष्टि | " " | १०६६ | " " | प्रमत्त | " " | " " |
| " " पर्याप्तक | " " | " " | " " | सयोगकेवली | " " | " " |
| " " अपर्याप्तक | " " | " " | " " | अयोगकेवली | " " | १०७१ |
| " सासादन | " " | " " | " " | शिद्धपरमेष्ठी | " " | " " |
| " " पर्याप्तक | " " | " " | " " | द्वितीयोपशम सम्भक्तत्व | " " | १०७३ |
| " " अपर्याप्तक | " " | १०६७ | " " | शिद्धपरमेष्ठीके प्ररूपणार्थ | " " | " " |
| " मिथ | " " | " " | " " | ग्रन्थसमाप्ति | " " | १०७५ |
| " असंयत | " " | " " | " " | गायानुक्रमणी | " " | १०७७ |
| " " पर्याप्तक | " " | " " | " " | टोकागतपद्यानुक्रमणी | " " | १०८८ |
| " " अपर्याप्तक | " " | " " | " " | विशिष्ट शब्द सूची | " " | १०९२ |
| " देनासंयत | " " | १०६८ | " " | " " | " " | " " |

प्रत्यक्षं परोक्षमुभेदितु द्विप्रकारमप्य प्रमाणानां । तन्मात्राणां प्राप्तिरप्यत्र तद्विषयि-
 पत्तिनिराकरणमिदं स्याद्वादमनप्रमाणस्याप्यत्र नुमं तद्विस्तारमपि मातृं सति तद्विस्तारं तद्विस्तारं नो-
 नोदिकोऽल्पद्रव्ये के बोधे हेतुवाच्यत्वमप्यत्रागमोर्त्त हेतुवाच्यत्वमिति तद्विस्तारं ।
 अनन्तरं ज्ञानभेदमं वेदयं ।

पंचैव हीति पाणा मदिमुद्रभोदोगमं च केवलयं ।

स्यउवगमिया चउगे केवलज्ञानं द्वे तद्वं ॥२००॥

पंचैव भवति ज्ञानानि मतिः श्रुतारथिमनःपर्ययान केवलयं । अयोपनामिकाति तन्माति
 केवलज्ञानं भवेत्सायिकं ॥

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययवेवलनामिति सम्पत्तानां पञ्चमे हेतु सम्पत्तानां पञ्चमे प्रमाण मातिहेतुः । वेगपञ्च
 सामान्यापेक्षेयिदं संग्रहद्रव्याधिक्यनयमाश्रित्य ज्ञानमोदे वेतु वेत्तुपदुत्तं ततोदे विरोधा-
 १० पेक्षेयिदं पर्यायातिरकनयनमाश्रित्य ज्ञानमोदे हेतु वेत्तुपदुत्तं ततोदे विरोधा-
 वधिमनःपर्ययमेव नात्तुं ज्ञानमोदे दायोपनामिकं गतपु । मतिज्ञानाद्यावरणवीर्यान्तराद्यकर्म-
 द्रव्यगळनुभागस्ये शब्दांघातिस्पर्द्धकं गळुगुणमाभावरूपमं क्षयमे बुतुगुणमाभावरूपमे श्रवणमाभावरूपमनु-
 धाममे बुतु । क्षयदचासायुपनामदच क्षयोपनामः । क्षयोपनामे भवानि क्षायोपनामिकानि । प्रवया
 क्षयोपनामः प्रयोजनमेवां क्षायोपनामिकानि । तत्तदावरणवेगपानिगळुत्तं गळुत्तद्वयके विद्यमानत्प-

१५ कुवन्ति-कल्पयन्ति अहेतुवादः । एतज्ज्ञान प्रत्यक्षं परोक्षं चेति द्विविधं प्रमाणं भवति । तद्विस्तारमप्यत्रागमो-
 फललक्षणानि तद्विप्रतिपत्तिनिराकरणं स्याद्वादमनप्रमाणस्याप्यत्र च तद्विस्तारं मातृं सति तद्विस्तारं तद्विस्तारं नो-
 अवाहेतुवादरूपे आगमे हेतुवादस्यानधिकारान् ॥२११॥ अथ ज्ञानभेदानात्-

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययवेवलनामिति सम्पत्तानां पञ्चमे भोधाधिक्येन । यद्यपि सागत्यगोदाया
 संग्रहद्रव्याधिक्यनयमाश्रित्य ज्ञानमेवैव कथितं, तथापि विरोधोपनाम पर्यायातिरकनयमाश्रित्य ज्ञानमिति
 २० पञ्चैवेत्युक्तानि इत्यर्थः । तेषु मतिश्रुतावधिमनःपर्ययत्वादि चत्वारि ज्ञानानि दायोपनामिकाति भवन्ति
 मतिज्ञानाद्यावरणवीर्यान्तराद्यकर्मद्रव्याणां अनुभागस्य सर्वपानिगळुत्तं ज्ञानामुद्रमाभावरुपं क्षय, वेगमेव अनुदय-
 प्राप्तानां सदवस्थात्प उपनामः । क्षयदचासायुपनामदच क्षयोपनाम क्षयोपनामे भवानि क्षायोपनामिकानि ।
 अथवा क्षयोपनामः प्रयोजनमेवाविति क्षायोपनामिकानि । तत्तदावरणवेगपानिगळुत्तं ज्ञानामुद्रमप्य विद्यमानत्वेति

प्रकारका प्रमाण होता है । प्रमाणका स्वरूप, संख्या, विषय, फल तथा तद्विस्तारधी विस्तारधी-
 २५ का निराकरण करके स्याद्वादसम्मत प्रमाणका स्थापन विस्तारपूर्वक प्रमेयकमलमात्रं पठ आदि
 तर्कशास्त्रके ग्रन्थोंमें देवना चादिप । इस अहेतुवाद रूप आगम ग्रन्थमें हेतुवादका अधिकार
 नहीं है ॥२११॥

आगे ज्ञानके भेद कहते हैं—

मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय और केवल नामक सम्यग्ज्ञान पाँच ही हैं, न कम हैं,
 १० न अधिक हैं । यद्यपि सामान्यको अपेक्षा संग्रह रूप द्रव्याधिक नयके आश्रयसे ज्ञान एक ही
 कहा है, तथापि विरोधको अपेक्षा पर्यायाधिक नयके आश्रयसे ज्ञान पाँच ही कहे हैं यह
 उक्त कथनका अभिप्राय है । उनमें-से मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय नामक चार ज्ञान क्षायो-
 पनामिक होते हैं । मतिज्ञान आदि आवरण और वीर्यान्तराय कर्म द्रव्यके अनुभागके
 २५ सर्वघाती स्पर्द्धाके उदयका अभाव रूप क्षय और जो उदय अवस्थाको प्राप्त न होकर सत्ता-
 में स्थित हैं उनका वही हुआ सदवस्थारूप उपनाम । क्षय और उपनामको क्षायोपनाम कहते

तत्संनिर्घेन्द्रियपर्याप्तनोलेयकमुमन्यतोऽज्ञातवदुदरिदं इतरमत्यजानमुं श्रुताज्ञानमुमे'वीयज्ञानद्वयमे-
केन्द्रियादिगच्छेत् पय्याप्रापय्यात्तकरोच्छेत्तरोऽ मिय्यादृष्टितासादनरोऽ संभविमुगुमे'डु पेच्छल्पदु-
दायु । सल्लु स्फुटमाणि ।

अनंतरं सम्यग्मिथ्यादृष्टिगुणस्यानवोऽ ज्ञानस्वरूपमं पेच्छदं ।

मिस्तुदृष्ट संभिस्सं अण्णाणातिएण णाणतियमेव ।

संजमविसेससहिए मणपज्जवणाणमुद्धिटं ॥३०२॥

मिथोदये संभिध्रमज्ञानप्रयेण ज्ञानत्रयमेव । संयमविशेषसहिते मनःपर्ययज्ञानमुद्धितं ॥

मिथोदये सम्यग्मिथ्यात्वकर्मोदयमागुतिरल्लु अज्ञानत्रयदोहने सम्यग्ज्ञानत्रयमे संभिध्रं

- संभिध्रमत्रुमगत्रयविवेचनत्वदिदं । सम्यग्मिथ्यामतिज्ञानमुं सम्यग्मिथ्याश्रुतज्ञानमुं सम्यग्मिथ्या-
वधितानमुमे'व व्यपदेशमत्रुं । सम्यग्मिथ्यादृष्टियोऽ वत्तमानज्ञानत्रयं केवलं सम्यग्ज्ञानमुमल्लु ।
केवलं मिथ्याज्ञानमुमल्लु । मत्ते तत्पुद्वेवो'इमयात्मकथद्वानमात्मनोऽ तंते पुभयात्मकत्वादिदं ज्ञानमुं
संभिध्रमं तित्तु मुत्तमप्युदाचार्यादृष्टिदं पेच्छल्पदुदु । मनःपर्ययज्ञानं मत्ते संयमविशेषसहितनोऽ
प्रमत्तसंघर्षादिशीनरुपायपर्यंतमप्य गुणस्यानसत्तकरोऽ तपोविशेषोपवृंहितविशुद्धिपरिणाम-
मुच्छेत्तरोऽ संभविमुगुमितरदेगासंघर्षादियोऽ संभविसवेकं बोडे देगासंघर्षादियोऽ तद्विधतपो-
विशेषानभायमगुतरिदं ।

मिथ्याज्ञानं सत् संभिध्रं शिष्टपर्याप्त एव भवति, नाप्यस्मिन् जीवे इति अनेन इतरत् मत्यज्ञानं श्रुताज्ञानमिति
इय एवेन्द्रियादिषु पर्याप्ततासिन्धु गंधेषु मिथ्यादृष्टिगामादनेषु संभवति इति कथितं भवति । द्वितीयः शल्लुशब्दः
अतिशयेन इतरत्वायं स्फुटं ॥३०१॥ अथ सम्यग्मिथ्यादृष्टिगुणस्याने ज्ञानस्वरूपं निरूपयति—

मिथोदये-सम्यग्मिथ्यात्वकर्मोदये इति अज्ञानत्रयेण सल्लु सम्यग्ज्ञानत्रयमेव संभिध्रं भवति अज्ञान-
त्रयमेव सम्यग्मिथ्यादृष्टिगुणस्याने ज्ञानस्वरूपं निरूपयति—

- २० विवेकबन्धेन सम्यग्मिथ्यादृष्टिज्ञानं सम्यग्मिथ्यादृष्टिज्ञानं सम्यग्मिथ्यावधितानमिति व्यपदेशमागभवति ।
सम्यग्मिथ्यादृष्टी बंधवत्तं ज्ञानत्रयं न केवलं सम्यग्ज्ञानं, न केवलं मिथ्याज्ञानं किन्तु उभयात्मकथद्वानवत्
उभयात्मकथद्वेन मिथ्याज्ञानसंभिध्रं सम्यग्ज्ञानं भवति इत्याचार्यैः कथितं ज्ञातव्यम् । मनःपर्ययज्ञानं तु संयम-
विशेषसहितेन प्रमत्तसंघर्षादिशीनरुपायपर्यंतेषु सातगुणस्यानेषु तपोविशेषोपवृंहितविशुद्धिपरिणामविधिषु

द्वि जीवविज्ञानका विपरीत रूप विभंग नामक मिथ्याज्ञान है वह संक्षी पंचेन्द्रिय पर्याप्तके
ही होता है, अन्य जीवके नहीं होता । इनसे यह व्यक्त होता है कि अन्य मतिअज्ञान और
सुखअज्ञान ये दोनों पंचेन्द्रिय आदि पर्याप्त और अपर्याप्त सब मिथ्यादृष्टि और सासादन
सुखस्थानवर्ती जीवोंके होते हैं ॥३०१॥

अथ सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमे ज्ञानका स्वरूप कहते हैं—
मिथ्र अर्थात् सम्यग्मिथ्यात्व कर्मका उदय होनेपर तीन अज्ञानोंके साथ तीनों

- १० सम्यग्ज्ञान निष्ठे हुए होते हैं । अलग-अलग कतना शक्य न होनेसे उन्हें सम्यग्मिथ्या मति-
ज्ञान, सम्यग्मिथ्या सुखज्ञान और सम्यग्मिथ्या अवधिज्ञान नामसे कहते हैं । सम्यग्मिथ्या-
दृष्टिमे कर्मकार मत्ते ज्ञान न केवल सम्यग्ज्ञान होते हैं और न केवल मिथ्याज्ञान होते हैं
किन्तु जैसे कर्मके सम्यक्त्व और मिथ्यात्व मिथ्या हुआ अज्ञान होता है वैसे ही मिथ्याज्ञान
और सम्यग्ज्ञान मिथ्या हुआ होता है यह आचार्यका कथन जानना । किन्तु मनःपर्ययज्ञान
विशेष संयममे सहित प्रमत्तसंघर्ष नामक छटे गुणस्थानसे लेकर क्षीणरुपाय नामक बारहवें
गुणस्थानपर्यंत मनः सुखस्थानोंमें तपोविशेषमे वृद्धिको प्राप्त विशुद्धिरूप परिणामोंसे विशिष्ट

श्रुताज्ञानत्व प्रसंगमुद्धारिदमुपदेशक्रियेपितलदे चेतलाजुमितपूहापोहविकल्पपरमरुमप्य हिंसात-
स्तेषामप्रतिप्रहकारणमप्यात्तरीद्रव्यानकारणमप्य शल्यदंडगारवसंकाद्यप्रगस्तपरिणामकारणमप्य
इन्द्रियमनोजनित्रयवियोगप्रहृणहपमप्य मिथ्याज्ञानमनु मत्यज्ञानमेदितु निरुचयिसत्पडुडु ।

आमीयमासुरकलं भारहरामायणादि उवएसा ।

तुच्छा असाहणीया सुयअण्णाणेत्ति णं वेत्ति ॥३०४॥

आभीतमासुरकलं भारहरामायणाद्युपदेशाः । तुच्छा असाधनीयाः श्रुताज्ञानमितीदं ब्रुवन्ति ॥

तुच्छाः परमात्यंशुन्मपञ्च असाधनीयाः सत्पुरुषव्यवर्गनाबरणोयंगळुमेकं बोडे परमात्यंशुन्मत्व-
विदं आभीतासुरकलं भारहरामायणाद्युपदेशंगळुं तत्प्रबंधंगळुमवर श्ववणविदं पुट्टिदुदाबुदोडु
ज्ञानमदितु श्रुताज्ञानमेदित्ताचाप्येदंगळु पेच्ययह । आसमंतात् भीताः आभीताः चोरास्तच्छास्त्र-
गप्याज्जाभीतं । असावः प्राणास्तेषां रथा येम्यस्तेऽमुरक्षास्तलवरास्तेषां शास्त्रमासुरकलं । कौरवपांडवीप-
पंचभर्तृवैकभाष्याद्वृत्तांतयुद्धव्यतिरःरादिचर्चाप्याकुलमं भारतमेबुडु । सीताहरणरामरावणीय-
जातिघानरराधासमुद्रव्यतिकरादित्वेच्छाकल्पनारचितमं रामायणमेबुडु । आदिशब्दाद्यवन्मिथ्यादर्शनदूषित-
मिथ्यादर्शनदूषितगण्यं यैर्जातयादित्वेच्छाकल्पितरूपाप्रबंधभुवनकोशहिंसायागादिगृह्यत्वकर्मभुं वि-

१० अथनप्रहृणित्वादिश्रुताज्ञानवृत्तानुपपत्तिविशेषादित्थं गृह्यते । उपदेशपूर्वकत्वे श्रुताज्ञानत्वप्रसंगात् । उपदेशक्रियां
विना यदीदमुद्धारोविशेषात्प्रगच्छेत् हिंसातस्तेषामप्रतिप्रहृकारणं आर्तरीद्रव्यानकारणं शल्यदण्डगारवसंकाद्य-
प्रकारपरिणामकारणं च इन्द्रियमनोजनित्रयवियोगप्रहृणमप्य मिथ्याज्ञानं तन्मत्यज्ञानमिति निरुच्येतव्यं ॥३०३॥

तुच्छाः परमात्यंशुयाः असाधनीयाः अथ एव शन्युपदेशाणामनादरणीयाः परमात्यंशुन्मत्वात् आभीता-
गुणधाराशरामायणाद्युपदेशाः तन्परम्याः तेषां श्ववणानुत्पन्नं यज्ञानं तदिदं श्रुताज्ञानमिति ब्रुवन्तपावापाः ।
आ गम्यताद्वीया आभीताः चोराः तच्छास्त्रमप्यामीनं । असावः प्राणाः तेषां रथा येम्यः ते अमुरक्षाः तलवटाः
तेषां शल्यदण्डगारवसंकाद्युपदेशाः । कौरवपांडवीपंचभर्तृवैकभाष्याद्वृत्तांतयुद्धव्यतिकरादिचर्चाप्याकुलं भारतं, सीताहरण-
रामरावणीयजातिघानरराधासमुद्रव्यतिकरादित्वेच्छाकल्पनारचितं रामायणं । आदिशब्दाद्यवन्मिथ्यादर्शनदूषित-

११ हां पुट्टि सगनो दे बह कुमनि ज्ञान हे । उपदेशपूर्वक होनेपर उसे कुयुव ज्ञानका प्रसंग आता
हे । अतः उपदेशके बिना जो इस प्रकारका उदापोह विचल्परूप हिंसा, असत्य, पओरी,
विषदमेवन और परिप्रहृका कारण, आर्त तथा रीद्रव्यानका कारण, शल्य, दण्ड, गारव,
गंडा धादि अदम्य परिणामोंका कारण, जो इन्द्रिय और मनसे उत्पन्न हुआ विशेष
प्रहृणत्व मिथ्या-ज्ञान हे बह कुमनिज्ञान हे यह निरुचय करना चाहिए ॥३०३॥

तुच्छ अर्थात् परमात्यंशुं गृह्य और इमी कारणसे सज्जनोके द्वारा अनादरणीय

१० आभीत, आसुरक, भारत रामायण आदिके उपदेश, उनको रचनार्थ, उनका सुनना तथा
इतके सुननेमें प्रगच्छे हुआ ज्ञान उसे आवायं श्रुतअज्ञान कहते हैं । आभीत चोरको कहते
हे क्योंकि इमे एव आरोसे भय मताता हे । उनके शास्त्रको भी आभीत शास्त्र कहते हैं ।
अमु अर्थात् प्राणोंको रथा जिनमे होनी हे वे अमुरक्ष अर्थात् कौतवाल आदि उनके शास्त्रको
अमुरक्ष करते हैं । कौरव पांडवोंके युद्ध, पंचभर्ता औपदीका वृत्तान्त, युद्धकी कथा आदिकी

११ अर्थात् असाव असाधनीय गृह्य हे, मीमांसन, रामको हत्यारि, रावणकी जाति, घानरों और
रामको हिंसा आदि उपदेश कारणोंके उच्छा रर्षां गयो रामायण हे । आदि शब्दसे जो-जो
विषय-दर्शनमें दूषित मंत्रिया एकादिकारी यथेच्छ कथावदन्त्य, सुवनकोश हिंसाभय यज्ञादि

प्रत्ययबलात् सम्यग्दर्शनोत्पत्तिप्रतीतेर्विशिष्टस्यावधिज्ञानस्य भंगो विपर्ययो विभंगमेवितु निरक्ति-
सिद्धात्त्वैकिकर्दारदमे प्ररूपितत्वदिवं ।

अनन्तरं गायानवकदिवं स्वरूपोत्पत्तिकारणभेदविषयंगठनाश्रयिसि मतिज्ञानं पेरूपः—

अहिमुहणियमियबोहणमाभिनिबोहियमणिदिइंदियजं ।

५

अवगहईहावाया धारणगा हौति पत्तेयं ॥३०६॥

अभिमुखनियमितबोधनमाभिनिबोधिकमनिद्रियेन्द्रियजं । अयप्रहेहावायधारणकाः भवति
प्रत्येकं ॥

स्थूलवर्तमानयोस्पदेशवस्थितोऽर्थोऽभिमुखः । अत्येन्द्रियस्यायमेवातः इत्यवधारितो निय-

- मितोऽभिमुखश्चासौ नियमितश्च अभिमुखनियमितस्तस्यात्यस्य बोधनं ज्ञानमाभिनिबोधिकमेवितु
१० मतिज्ञानमेवुदत्यं । अभिनिबोध एवाभिनिबोधिकमेवितु स्वात्थ्यकृत्तु प्रत्ययविवं सिद्धमश्नुं ।
स्पर्शानादीन्द्रियंगठ्ये स्थूलादिगठ्ये स्पर्शादिस्वात्यंगठ्ये ज्ञानजननशक्तिसंभयमप्युदरिवं मूढमात-
रितदूरात्यंगठ्ये परमाणु शंखचक्रवतिनरकस्वर्गपटलमेघादिगठ्ये ज्ञानजननशक्ति
संभवितवेवुदत्यं ।

इवदिवं मतिज्ञानवके स्वरूपं पेरूपपटुदुं, एतेपुवा मतिज्ञानमेवोडे अनिद्रियेन्द्रियजं मनमुं

- १५ भवत्तत्कारणदर्शनस्मरणानुसंधानप्रत्ययबलात् सम्यग्दर्शनोत्पत्तिप्रतीतेः । विशिष्टस्य अवधिज्ञानस्य भङ्गः—
विपर्ययः विभङ्ग इति निरक्तिसिद्धात्स्यैव अनेन प्ररूपितत्वात् ॥३०५॥ अय नवभिर्गायाभिः स्वरूपोत्पत्ति-
कारणभेदविषयान् आश्रित्य मतिज्ञानं प्ररूपयति—

स्थूलवर्तमानयोस्पदेशवस्थितोऽर्थः अभिमुखः, अत्येन्द्रियस्य अयमेवायः इत्यवधारितो नियमितः ।

अभिमुखश्चासौ नियमितश्च अभिमुखनियमितः । तस्यायस्य बोधनं ज्ञानं आभिनियबोधिकं मतिज्ञानमित्यर्थः ।

- २० अभिनिबोध एव आभिनिबोधकमिति स्वाधिकेन ठण्प्रत्ययेन सिद्धं भवति । स्पर्शानादीन्द्रियाणां स्थूलादिष्वेव
स्पर्शादिषु स्वायेषु ज्ञानजननशक्तिसंभवात् । मूढमान्तरितदूरात्ये परमाणुशंखचक्रवतिमेवादिषु तेषां ज्ञानजनन-
शक्तिसंभवतोत्यर्थः । अनेन मतिज्ञानस्य स्वरूपमुक्तं । कथंभूत तत् ? अनिन्द्रियेन्द्रियजं—अनिन्द्रियं मनः,

क्योकि नारकियोके विभंग ज्ञानके द्वारा वेदनाभिभव और उसके कारणोंके दर्शन स्मरण

- आदि रूप ज्ञानके बलसे सम्यग्दर्शनकी उत्पत्ति होती है । 'वि' अर्थात् विशिष्ट अवधिज्ञानका
२५ भंग अर्थात् विपर्यय विभंग होता है इस निरक्ति सिद्ध अर्थको ही यहाँ कहा है ॥३०५॥

अय नौ गाथाओंसे स्वरूप, उत्पत्ति, कारण, भेद और विषयको लेकर मतिज्ञानका
कथन करते हैं—

स्थूल, वर्तमान और योग्यदेशमें स्थित अर्थको अभिमुख कहते हैं । इस इन्द्रियका

- यही विषय है इस अवधारणाको नियमित कहते हैं । अभिमुख और नियमितको अभिमुख-
३० नियमित कहते हैं । उस अर्थके बोधन अर्थात् ज्ञानको मतिज्ञान कहते हैं । अभिनिबोध ही
अभिनिबोधक है इस प्रकार स्वार्थमें ठण् प्रत्यय करनेसे इसकी सिद्धि होती है । स्पर्शन
आदि इन्द्रियोंकी अपने स्थूल आदि स्पर्श आदि विषयोंमें ही ज्ञानको उत्पन्न करनेकी शक्ति

१. म स्पृशार्थे । २. म यतप । ३. म अय स्वरूपोत्पत्तिकारणभेदविषयान् आश्रित्य गायानवकेन
मतिज्ञाननाह । ४. म स्थूलवर्तमानयोस्पदेशवस्थितोऽर्थोऽभिमुखः । ५. म गुनरकस्वर्गपटलमे । ६. म ०, प्ररूपितम् ।

मतिज्ञानविषयं व्यंजनमे'दुमत्यमे'दु द्विविषयमङ्कुं २ । अल्लि इन्द्रियंगळिदं प्राप्तमप्य विषयं व्यंजनमे'बुदक्कुं । इन्द्रियंगळिदमप्राप्तमप्य विषयमत्यमे'बुदक्कुमा प्राप्ताप्राप्तार्थंगळोऽऽ इमदिवं यथासंख्यं । आ व्यंजनात्प्राप्तप्रहृहेदंगळेरुं २ व्यापृती प्रवृत्ती भवतः प्रवृत्तंगळपुपु । इन्द्रियंगळिदं प्राप्तात्प्रविशेषप्रहृणं व्यंजनावप्रहृमक्कुं- । मिन्द्रियंगळिदमप्राप्तार्थंविशेषप्रहृणमत्प्रावप्रहृमङ्कुमे'दु-
५ पेञ्चदत्तरं । व्यंजनव्यक्तं शब्दादिजातमे'दितु तत्त्वात्प्रविवरणंगळोऽऽ पेञ्चत्पट्टदितु पेञ्चत्पट्टीडितो व्याख्यानदोडने'तु संगतमक्कुमे'दोड पेञ्चत्पट्टुं ।

विगतमंजनमभिव्यक्तित्यस्य तद्व्यंजनं । व्यञ्ज्यते मृश्यते प्राप्यते इति व्यंजनमे'दितंऽजगति व्यक्ति मृक्षणेपु एदितु व्यक्तिमृक्षणात्स्यंगळोऽऽ प्रहृणमप्युदरिदं । शब्दाद्यत्वं श्रोत्रादीन्द्रियदिवं प्राप्तेमुमा-
दोडमे'नेवरमभिव्यक्तमलतने'वरमे व्यंजनमे'दु पेञ्चत्पट्टदुदेकवारजलरूपसिक्तनूतनशारायवते मत्ताम-
१० भिव्यक्तियागुत्तरिलदे अर्थमक्कुमे'तीगळ पुनः पुनर्जलरूपसिच्यमाननूतनशारायमभिव्यक्तसे'ह-
मपकुमदुकारणादिवं चक्षुर्मनस्सुगळऽऽप्राप्तमप्य विषयदोऽऽ प्रथमोद्विष्टव्यंजनावप्रहृमिल्ल । चक्षु-
र्मनस्सुगळ स्वविषयमत्प्रात्यंमं प्राप्य पोद्विष्टे अल्लिज्ञानमं पुट्टिसुगुमे'य नैप्याधिकारिवितं स्याद्वाद-

मतिज्ञानविषयो व्यञ्जनं अर्थश्चेति द्विविधः । तत्र इन्द्रियैः प्राप्ते विषयो व्यञ्जनं तीरप्राप्तः अर्थः ।
उपोः प्राप्ताप्राप्तयोर्धयोः क्रमशः यथासंख्यं तौ व्यञ्जनात्प्राप्तप्रहृहेदो व्यापृती प्रवृत्ती भवतः । इन्द्रियैः
१५ प्राप्तात्प्रविशेषप्रहृणं व्यञ्जनावप्रहृः । तीरप्राप्तात्प्रविशेषप्रहृणं अर्थावप्रहृ इत्यर्थः । व्यञ्जनं-अव्यक्तं शब्दादिप्राप्तं
इति सत्त्वात्प्रविवरणेषु प्रोक्तं कथमनेन व्याख्यानेन सह संगतमिति चेदुच्यते । विगतं-अञ्जनं-अभिव्यक्तित्यस्य
तद्व्यञ्जनम् । व्यञ्ज्यते अदप्यते प्राप्यते इति व्यञ्जनं अञ्जु गतिव्यक्तिप्रणेष्विविति व्यक्तिप्रणायार्थयोर्हृणात् ।
शब्दाद्यत्वं श्रोत्रादीन्द्रियेण प्राप्तेऽपि यावन्नाभिव्यक्तस्तावद् व्यञ्जनमित्युच्यते एकवारजलरूपसिक्तनूतन-
शारायवत् । पुनरभिव्यक्तौ सत्यां स एवाथो भवति । यथा पुनः पुनर्जलरूपसिच्यमाननूतनशारायः अभिव्यक्तौको
२० भवति । अतः कारणात् चक्षुर्मनसोप्राप्ते विषये प्रथमो व्यञ्जनावप्रहृो नास्ति । चक्षुर्मनसो स्वविषयमर्थं
प्राप्यैव तत्र ज्ञानं जनयतः, इति नैयायिकादीनां मतं स्याद्वादतर्कग्रन्थेषु बहुधा निराकृतमित्यत्राहेतुवादे आगमात्ते

मतिज्ञानका विषय दो प्रकारका है—व्यंजन और अर्थ । उनमें-से इन्द्रियोंके द्वारा प्राप्त विषयको व्यंजन और अप्राप्तको अर्थ कहते हैं । उन प्राप्त और अप्राप्त अर्थोंमें क्रमसे व्यंजनावप्रहृ और अर्थावप्रहृ प्रयुक्त होते हैं । इन्द्रियोंसे प्राप्त अर्थके विशेष प्रहृणको व्यंजनावप्रहृ कहते हैं, और अप्राप्त अर्थके विशेष प्रहृणको अर्थावप्रहृ कहते हैं ।

टांका—तत्त्वार्थसूत्रकी टीकामें कहा है, शब्दादिसे होनेवाले अव्यक्त प्रहृणको व्यंजन कहते हैं । उसकी संगति इस व्याख्याके साथ कैसे सम्भव है ?

समाधान—'अञ्जु' धातुके तीन अर्थ हैं—गति, व्यक्ति और अज्ञान । यहाँ उनमें-से व्यक्ति और अज्ञान अर्थ लेकर व्यंजन शब्द बना है । 'विगतं-अञ्जनं-अभिव्यक्तित्यस्य' जिसका

१० अंजन अर्थात् अभिव्यक्ति दूर हो गया है वह व्यंजन है । यह अर्थ तत्त्वार्थकी टीकामें लिया है । 'व्यञ्ज्यते अदप्यते प्राप्यते इति व्यंजनम्' जो प्राप्त हो वह व्यंजन है यह यहाँ प्रहृण किया है । शब्द आदि रूप अर्थ योत्र आदि इन्द्रियके द्वारा प्राप्त होनेपर भी जयतक व्यक्त नहीं होता तयतक उसे व्यंजन कहते हैं । जैसे एक वार जलविन्दुसे सिक्त नया सकोरा । पुनः व्यक्त होनेपर उसे ही अर्थ कहते हैं । जैसे वार-वार जलविन्दुओंसे सींचे जानेपर नया

११ १. म प्राप्ताप्राप्तयोर्धयोः । २. व'नमिन्द्रियेप्राप्तो विषयोऽर्थः । ३. व'सार्थयोः । ४. व'णे प्रोक्तमनेन गृहं व्याख्यानं कथं संगतं ।

- पेच्छल्पदुर्दारदर्शमिद्रियात्थसंबंधानन्तरं दर्शनं पुटदुगुमेदु पेलदी गायामुत्रदोऽनुक्तमुं पूर्वाचार्य्य-
वचनानुसारदिवं व्याख्यानिसल्पदुदु ग्राह्यमत्रकुं कैरोच्छल्पदुदुदे बुदत्थं। गृहीते अवग्रहविवमिदु
श्वेतमेदितु ज्ञातात्थदोऽु विशेषमप्य बलाकाहरपत्रकागलु पताकाहरपत्रकागलु यथावस्थितयस्तुविनाऽ-
कांक्षे बलाक्या भवितव्यमेदितु भवितव्यताप्रत्ययरूपमप्य बलाकेयोऽु संजायमानमोहे यंब
५ द्वितीयज्ञानमक्कुमथवा पताकारूपमप्य विषयमनयलंयितिसि उत्पद्यमानमनया पताक्या भवितव्यमेदितु
भवितव्यताप्रत्ययरूपं पताकेयोऽु संजायमानाकांक्षे ईहेयंब द्वितीयज्ञानमक्कुमिनीद्रियांतरविषयं-
गळोळं मनोविषयदोऽुळमवग्रहगृहीतदोऽु यथावस्थितमप्य विशेषदाकांक्षाहूपमोहे येदितु निश्चित-
व्यमक्कुमेकेदोडे मतिज्ञानावरणक्षयोपशमतारतम्यभेदेदिवमवग्रहेहाजानंग्रगणे भेदसंभवमुञ्जु-
दरिदमी सम्यज्ञानप्रकरणदोऽुबलाका वा पताका वा येदितु संजायमक्कु बलाकेयोऽु पताक्या
१० भवितव्यमेदितु विषय्यंयक्कुमुमी मिष्याज्ञानंग्रगणवतारमेदरियल्पदुगु।

ज्ञानं छपस्यानां' इति श्रीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तिभिरपि प्रोक्तत्वात्, इन्द्रियाथसंबंधानन्तरं दर्शनमुत्पद्यते
इत्येतस्मिन् गाथासूत्रे अनुक्तमपि पूर्वाचार्यवचनानुसारेण व्याख्यानं ग्राह्यमित्यर्थः। गृहीते-अवग्रहेण इदं
श्वेतमिति ज्ञाते अर्थविशेषस्य बलाकारूपस्य पताकारूपस्य वा यथावस्थितवस्तुन आकाङ्क्षा बलाक्या
भवितव्यमिति भवितव्यताप्रत्ययरूपं बलाकायामेव संजायमानं ईहास्यं द्वितीयं ज्ञानं भवेत्। अथवा पताकारूपं
१५ विषयमालम्ब्य उत्पद्यमाना अनया पताक्या भवितव्यमिति भवितव्यताप्रत्ययरूपा पताकायामेव संजायमाना
आकाङ्क्षा ईहेति द्वितीयं ज्ञानं भवेत्। एवं इन्द्रियान्तरविषयेषु मनोविषये च अवग्रहगृहीते यथावस्थितरूप-
विशेषस्य आकाङ्क्षाया ईहेति निश्चेतव्यम्। मतिज्ञानावरणक्षयोपशमस्य तारतम्यभेदेन अवग्रहेहाज्ञानयोर्भेद-
संभवात्। अस्मिन् सम्यज्ञानप्रकरणे बलाका वा पताका इति संजायस्य, बलाकाया पताक्या भवितव्यमिति
विषयस्य च मिष्याज्ञानस्यानवतारत्वात् ॥३०८॥

- २० अनन्तर अर्थके आकारादिको लिये हुए जो सविकल्प ज्ञान होता है वह अवग्रह है। श्री
नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्तिनी भी कहा है कि छद्वास्थोंके दर्शनपूर्वक ज्ञान होता है। यद्यपि
इस गाथासूत्रमें यह नहीं कहा है कि इन्द्रिय और अर्थका सम्बन्ध होनेके अनन्तर दर्शन
उत्पन्न होता है। फिर भी पूर्वाचार्योंके वचनके अनुसार व्याख्यान करना चाहिए। 'गृहीते'
अर्थान् अवग्रहके द्वारा 'यह श्वेत है' ऐसा जाननेपर बलाकारूप या पताकारूप यथावस्थित
२५ अर्थको जाननेकी आकांक्षा यह बलाका—बगुल्लोंकी पंक्ति होना चाहिए इस प्रकार बगुल्लोंकी
पंक्तिमें ही जो भवितव्यत्वरूप ज्ञान होता है वह ईहा है। अथवा पताकारूप विषयका
आलम्बन लेकर अर्थान् यदि अवग्रहसे जानी हुई श्वेत वस्तु पताका प्रतीत हो तो यह
पताका होनी चाहिए, इस प्रकार जो पताकामें ही भवितव्यता प्रत्ययरूप आकांक्षा होती है
वह दूसरा ईहा ज्ञान है। इस प्रकार अन्य इन्द्रियोंके विषयमें और मनके विषयमें अवग्रहसे
३० गृहीत वस्तुमें यथावस्थित विशेषको आकांक्षारूप ज्ञान ईहा है यह निश्चय करना चाहिए।
मतिज्ञानावरणके क्षयोपशमको हीनाधिकताके भेदसे अवग्रह और ईहा ज्ञानमें भेद होता है।
इस सम्यज्ञानके प्रकरणमें 'यह बलाका है या पताका' इस संज्ञायको तथा बलाकामें यह
पताका होनी चाहिए, इस विपरीत मिष्याज्ञानको स्थान नहीं है ॥३०८॥

ओं दानुमो हु वस्तुविन प्रवेशात् एकदेशोऽनविनाभाविपप्यज्यत्तामप्य वस्तुविन प्रहणमनि-
सृतज्ञानमें बुदयवा ओ हु वस्तुविन एकदेशं मेणु सकलं वस्तुवं मेगगलंपिगितो हु मतामप्य-
वस्तुविन गतिः ज्ञानमायुदो बंदुयुमनिःसृतज्ञानमव्युमवयुदाहरणमं तोरिवयं ।

पुक्खरगहणे काले हृत्विस्स य वदणगवयगहणे वा ।

५. वत्थंतरचंदस्स य घेणुस्स य बोद्धं च हवे ॥३१३॥

पुष्परप्रहणे काले हस्तिनश्च वदनगवयप्रहणे वा । वत्थंतरचंद्रस्य घ धेनोरन बोधनं च भवेत् ॥

जलद्वंदं पोरणे हृद्यमानमप्य पुष्करद जलमग्नहस्तिकराप्र प्रहणका श्वोऽऽ, दर्शनकालबोऽऽ तदविनाभावि जलमग्नहस्तिप्रहणं जलदोऽऽ हस्तिमग्ननिर्दुं पुवे दितु प्रतीति वा इव एतं । इतिरविमो

१०. साध्याविनाभावनियमनिश्चयमनुऽऽ साधनदर्शणि "साधनात्ताप्यविज्ञानमनुमानमे"दितु अनुमान-
प्रमाणं संगृहीतमवकुं । अथवा ओ दानुमोध्यं युवतिथ वदनप्रहणकाले वदनदर्शनकालबोऽऽ वत्थंतर-
चंद्रप्रहणं मुखसादृश्यावदं चंद्रस्मरणं चंद्रसदृशं मुगमे"दितु प्रत्यभिज्ञानं मेनरभ्यरोऽऽ गवयप्रहणकाले
गवयदर्शनकालबोऽऽ धेनुविन बोधनं धेनुविन स्मरणं गोसदृशं गवयमे"दितु प्रत्यभिज्ञानं मेणु भवेत्
अवकुं । अनंतरपायोक्तमप्यनिःसृतज्ञानविक्रितितुमुदाहरणं गऽऽ । या शब्दं पश्चांतरमूचकं मेणु एतोगऽऽ

१५. कस्यचिद्वस्तुनः, प्रवेशाद्-एकदेशाद् व्यक्तात् तदविनाभाविनोऽप्यनस्य वस्तुनो प्रहणं अनिगुतज्ञानम् ।
अथवा एकस्य वस्तुनः एकदेशं वा सकलं वस्तु वा अवलम्ब्य गृहीत्वा पुनरस्यस्य वस्तुनो गतिः-ज्ञानं यन्,
तदप्यनिगुतज्ञानं भवति ॥३१२॥ तदुदाहरति-

पुष्करस्य जलाद्बहिर्दृश्यमानस्य जलमग्नहस्तिकराप्रस्य प्रहणकाले दर्शनकाले एव तदविनाभाविजलमग्न-
हस्तिप्रहणं जले हस्तो मग्नोऽऽप्रतीति प्रतीतिः । वा इव यथा अनेन अस्माद् साध्याविनाभावनियमनिरवयात्

२०. साधनात् साध्यस्य ज्ञानमनुमानमिति अनुमानप्रमाणं संगृहीतं भवति । अथवा कस्यापिच युवतेर्दशनप्रहणकाले
वत्थंतरस्य चन्द्रस्य प्रहणम् । मुखसादृश्याचन्द्रस्य स्मरणं चन्द्रसदृशं मुगमिति प्रत्यभिज्ञानं वा । अप्ये
गवयप्रहणकाले गवयदर्शनकाल एव धेनोबोधनं स्मरणं गोसदृशो गवय इति प्रत्यभिज्ञानं वा भवेत् । वा इव

किसी वस्तुके प्रकट हुए एकदेशको देखकर उसके अविनाभावी अप्रकट अंशको प्रहण
करना अनिसृत ज्ञान है । अथवा एक वस्तुके एकदेश या समस्त वस्तुको प्रहण करके अन्य

२५. वस्तुको जानना भी अनिसृत ज्ञान है ॥३१२॥

उमका उदाहरण देते हैं—

जलमें डूबे हुए हाथीकी जलसे बाहर दिखाई देनेवाली सूँडको देखते ही उसके
अविनाभावी जलमग्न हस्तिका प्रहण अनिसृत ज्ञान है । इससे, जिसका साध्यके साथ
अविनाभाय नियम निश्चित है ऐसे साधनसे साध्यके ज्ञानको अनुमान कहते हैं इस अनुमान

१०. प्रमाणका संभेद होता है । अथवा किसी युवतीके मुखको प्रहण करते समय अन्य वस्तु
अथवा गवयको देखते ही गायका स्मरण या गौके समान गवय है यह प्रत्यभिज्ञान इससे
गृहीत होता है । 'वा' शब्द उदाहरणके प्रदर्शनमें प्रयुक्त हुआ है । जो बतलाता है कि अनन्तर

१. म^० भाविपप्य प्रतीत्यनिरचयदर्शणिद साधना^० ।

मतिज्ञानं सामान्यापेक्षेयदमोऽदु १। अवग्रहेहावायधारणापेक्षेयिवं नाल्कु ४। इन्द्रिया-
निन्द्रियजनितात्प्रावग्रहेहावायधारणापेक्षेयिवं चतुर्दिग्रति २४। अत्यं व्यंजनीभवावग्रहोपेक्षेयिवं अष्टा-
विंशतिगळुमप्यु २८। वितु नाल्कुं स्थानंगळं त्रिःप्रतिकंगळं माडि ययाक्रमं प्रथमस्थानचतुष्टयं
विषयसामान्यदिदेमो'दरिवं गुणिसुबुदु। द्वितीयस्थानचतुष्टयं बह्वादिबिषयपट्टकारिवं गुणिसुबुदु।
५ तृतीयस्थानचतुष्टयं बह्वादिद्विदशविषयंगळं गुणिसुबुदितु गुणिसुत्तमिरलु मतिज्ञानदोऽदु विषय-
सामान्यार्धविषयसर्वविषयापेक्षंगळुप्यु स्थानंगळुप्यु

| | | |
|------|------|--------|
| २८।१ | २८।६ | २८।१२। |
| २४।१ | २४।६ | २४।१२। |
| ४।१। | ४।६ | ४।१२। |
| १।१ | १।६ | १।१२। |

अनंतरं श्रुतज्ञानप्ररूपणयं प्रारंभिगुयातं मोदलोळनेवरं तत्सामान्यलक्षणं पेक्ष्यं :—

अत्यादो अत्यंतरमुवलंभं तं भणाति सुदणाणं ।

आभिणिवोहियपुव्वं णियमेणिह सद्दजं पमुहं ॥३१५॥

१० अत्यादत्यांतरमुपलभमानं तदभणति श्रुतज्ञानमाभिनिवोधिकुपूद्वं निपमेनेह शम्भजं प्रमुत्तं ॥

मतिज्ञानं सामान्येन एकं १। अवग्रहेहावायधारणापेक्षया चत्वारि ४। इन्द्रियानिन्द्रियजनितात्प्रा-
वग्रहेहावायधारणापेक्षया चतुर्विंशतिः २४। अत्यं व्यंजनीभवावग्रहोपेक्षया अष्टाविंशतिः २८। एतानि
चत्वारि स्थानानि त्रिःप्रतिकानि—

| | | |
|------|------|-------|
| २८।१ | २८।६ | २८।१२ |
| २४।१ | २४।६ | २४।१२ |
| ४।१ | ४।६ | ४।१२ |
| १।१ | १।६ | १।१२ |

कृत्वा यथाक्रमं प्रथमं स्थानचतुष्टयं विषयसामान्येनेन गुणयेत्। द्वितीयं स्थानचतुष्टयं बह्वादिबिषयपट्टेन
गुणयेत्। तृतीयं स्थानचतुष्टयं बह्वादिद्विदशविषयैर्गुणयेत्। एवं गुणिते सति मतिज्ञाने सामान्यविषयार्ध-
विषयसर्वविषयापेक्षया स्थानानि भवन्ति ॥३१५॥ अथ श्रुतज्ञानप्ररूपणा प्रारंभमाणं प्रथमस्तावत्तत्सामान्य-
लक्षणमाह—

मतिज्ञान सामान्यसे एक है। अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणाकी अपेक्षा चार है।
इन्द्रिय और मनसे उत्पन्न अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणाकी अपेक्षा चौबीस हैं। अर्थात्-
२० ग्रह और व्यंजनावग्रहकी अपेक्षा अठारह हैं। इन चारों स्थानोंको तीन जगह स्थापित
करके यथाक्रम प्रथम चार स्थानोंको सामान्य विषय एकसे गुणा करना चाहिए। दूसरे
चार स्थानोंको बहु आदि छह विषयोंसे गुणा करना चाहिए। तीसरे चार स्थानोंको बहु
आदि बारह विषयोंसे गुणा करना चाहिए। इस तरह गुणा करनेपर मतिज्ञानके सामान्य
विषय, बहु आदि छह अर्धविषय और सर्व विषयकी अपेक्षा स्थान होते हैं। यथा—॥३१५॥

| | | |
|------|------|-------|
| २८×१ | २८×६ | २८×१२ |
| २४×१ | २४×६ | २४×१२ |
| ४×१ | ४×६ | ४×१२ |
| १×१ | १×६ | १×१२ |

२५ अथ श्रुतज्ञान प्ररूपणाको प्रारंभ करते हुए पहले श्रुतज्ञानका सामान्य लक्षण
कहते हैं—

१. मंदि गुं । २. वं प्ररूपयति ।

अर्थांतरज्ञानव प्रतिपादकमप्युद परमागमदोऽ हृदमन्कुमो'दानुमो'दु प्रसारसिं कर्षंचिन् निरहित-
संभविष रुदिसब्ददोऽजहत्सात्संयुक्तिरुदोऽ कुम् लातीति कुशलः एंस्ति कुशलादिशब्दंग्रोऽ
निपुणाद्यर्थंग्रोऽ रुदंगला रुदात्संग्रोऽ तत्कुशलशब्दनिर्दिष्टं येतं अरिपल्पदुपुमल्लि जीयोऽस्ति
येंस्ति नुडिपल्पदुत्तरलु जीवोऽस्ति येदंती शब्दज्ञानं श्रोत्रेन्द्रियप्रभवमतिज्ञानमन्कुमा जानविदं
जीयोऽस्तिशब्दवाच्यरूपात्मास्तित्वदोऽ वाच्यवाचकसंघसंकेतसंकलनेमा पूर्व्यंरुमागि आपुरो'दु
ज्ञानं पुदुपुमदक्षरात्मकश्रुतज्ञानमन्कुमेके दोडक्षरात्मकशब्दसमुत्पन्नतर्यादिवं काप्यंदोऽ कारणोप-
चारमुच्छुद्धरिदं । वातशीतस्पर्शज्ञानरिदं वातप्रकृतिते तत्स्पर्शानन्दोऽमनोज्ञानमनशरारामरु-
लिगजमप्य श्रुतज्ञानमं बुदक्कुमेके दोडे शब्दपूर्व्यंकरत्वाभायमप्युदरिदं ।

लोगाणमसंखमिदा अणक्खुरप्पे हवंति छट्टाणा ।

१०

चेरुवच्छट्टवग्गपमाणं रूऊणमक्खुरगं ॥३१६॥

लोकानामसंख्यमितान्जनशरारामके भवन्ति पदस्यानानि । द्विरुपपट्टयगं प्रमाणं रूपोमनशरारंगं ॥

प्रधानं भवति । श्रूयते—श्रोत्रेन्द्रियेण गृह्यते इति श्रुतः शब्दः, तस्मादुदगन्मन्मंज्ञानं श्रुतज्ञानमिति व्युत्पत्तेरिति
अक्षरात्मकप्राधान्याश्रयणात् । अथवा श्रुतमिति रुदिसब्दोऽयं मतिज्ञानपूर्वकस्य अर्थांतरज्ञानस्य प्रतिपादकः
परमागमे रुदः । यदाकर्षंचिन्निर्दिष्टसंभवः रुदिसब्दे अजहत्स्वाच्यंयुक्तिः कुम् लातीति कुशल इति कुशलादि-
शब्देषु निपुणाद्यर्थेषु रुदेषु तन्निर्दिष्टवत् । तत्र जीवोऽस्तीत्युक्ते जीवोऽस्तीति शब्दज्ञानं श्रोत्रेन्द्रियप्रभवं
मतिज्ञानं भवति । तेन ज्ञानेन जीवोऽस्तीति शब्दवाच्यरूपे आत्मास्तिरवे वाच्यवाचकसंघसंकेतसंकलनपूर्वकं
यत् ज्ञानमूलवत्ते तदक्षरात्मकं श्रुतज्ञानं भवति, अक्षरात्मकशब्दसमुत्पन्नत्वेन कार्यं कारणोपचारात् । वातशीत-
स्पर्शज्ञानेन वातप्रकृतिकस्य तत्स्पर्शं अमनोज्ञानमनशरारामकं लिङ्गजं श्रुतज्ञानं भवति, शब्दपूर्व्यंकरत्वा-
भावात् ॥३१६॥ अथ श्रुतज्ञानस्य अक्षरात्मकशरारामके भेदो प्ररूपयति—

- २० श्रुत अर्थान् शब्द है । उससे उत्पन्न अर्थज्ञान श्रुतज्ञान है । इस व्युत्पत्तिसे भी अक्षरात्मक
श्रुतज्ञानकी प्रधानता लक्षित होती है । अथवा 'श्रुत' यह रुदिसब्द है । परमागममें मतिज्ञान-
पूर्वक होनेवाले अन्य अर्थके ज्ञानको कहनेमें रुद है । फिर भी यथायोग्य निरुक्ति होती है ।
रुदिसब्द अपने अर्थको नहीं छोड़ते । जैसे कुशको जो लावा है वह कुशल है इस प्रकार कुशल
आदि शब्द चतुर आदि अर्थोंमें रुद हैं फिर भी उनकी व्युत्पत्ति उसी प्रकार की जाती है ।
इसी प्रकार श्रुतके सम्बन्धमें जानना । 'जीव है' ऐसा कहनेपर यह जो शब्दका ज्ञान
होता है कि 'जीव है', यह श्रोत्रेन्द्रियसे उत्पन्न हुआ मतिज्ञान है । और ज्ञानके द्वारा 'जीव
है' इस शब्दके वाच्यरूप आत्माके अस्तित्वमें वाच्यवाचक सम्बन्धके संकेत महणपूर्वक
जो ज्ञान उत्पन्न होवा है वह अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है । क्योंकि अक्षरात्मक शब्दसे उत्पन्न
हुआ है इस प्रकार कार्यमें कारणका उपचार किया है । तथा वायुके शीत स्पर्शके ज्ञानसे
वात प्रकृतिवाले मनुष्यको जो उसके स्पर्शमें 'यह मेरे लिए अनुकूल नहीं है' ऐसा जो ज्ञान
होता है वह अनक्षरात्मक लिगज्ज्य श्रुतज्ञान है क्योंकि वह शब्दपूर्वक नहीं हुआ है ॥३१६॥
अथ श्रुतज्ञानके अक्षरात्मक और अनक्षरात्मक भेदोंको कहते हैं—

१. म^० लनपूर्वं संकलनमागि । २. म कार्यकारणो । ३. अ^० त्वेवदज्ञानं ।

सूक्ष्मनिगोद अपञ्जत्तयस्स जादस्म पट्टमसमगन्मि ।

हावदि हु सच्चजहणं णिच्चुग्वाडं गिरावरणं ॥३२०॥

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य जातस्य प्रथमसमये भवति एतलु सर्वजघन्यं नित्योद्घाटं निरावरणं ॥

- ५ सूक्ष्मनिगोदलब्धपर्याप्तक जननद प्रथमसमयदोऽनु निरावरणं प्रच्छादनरहितमप्य नित्योद्घाटं सर्वदा प्रकाशमानमप्य सर्वजघन्यं सर्वनिकृष्टशक्तिरूपमप्य पर्यायमेव श्रुतज्ञानमनु । एतलु । ई गायामूत्रं पूर्वार्चाप्यप्रसिद्धं स्वोभूतात्थसंप्रतिपत्तिप्रदर्शनात्थमागि उदाहरणत्वेति चरेत्पट्टदुदु ।

सूक्ष्मनिगोद अपञ्जत्तगेषु सगसंभवेसु भमिऊण ।

- १० चरिमापुण्णतिवक्काणादिमवक्कट्टियेव हवे ॥३२१॥

सूक्ष्मनिगोदलब्धपर्याप्तगतेषु स्वसंभवेषु भ्रमित्वा । चरमापूर्णत्रियक्रागामाशयक्रियेत एव भवेत् ॥

- १५ सूक्ष्मनिगोदलब्धपर्याप्तगोऽनु संद स्वसंभवेषु द्वादशोत्तरपट्टसहस्रप्रमितंगच्छप्य भवेषु भवंगच्छोऽनु भ्रमित्वा भ्रमिति चरमापूर्णभवद त्रिवक्कविप्रहगतिविदमुत्पन्नजीवन प्रथमवक्क प्रथमसमयदोऽनुहृगोषे मुपेच्छद सर्वजघन्यपर्यायमेव श्रुतज्ञानमनु । मत्तल्लिये तज्जीवकं स्पशंनेन्द्रियप्रभवत्सर्वजघन्यमतिज्ञानमनुशुद्धानावरणशयोपशमसमुद्भूताचक्षुर्द्धानमुमक्कुमेकं दोऽनु ।

सूक्ष्मनिगोदलब्धपर्याप्तकस्य जात-जननं तस्य प्रथमसमये निरावरणं-प्रच्छादनरहितं नित्योद्घाटं अत्रएव सर्वदा प्रकाशमानं सर्वजघन्यं-उर्वनिकृष्टशक्तिकं पर्यायस्यं श्रुतज्ञानं भवति । एतलु एतद्गायामूत्रं पूर्वार्चाप्यप्रसिद्धं-स्वोभूतात्थसंप्रतिपत्तिप्रदर्शनात्थं उदाहरणत्वेन लिखितम् ॥३२०॥

- २० सूक्ष्मनिगोदलब्धपर्याप्तकेषु स्वसंभवेषु द्वादशोत्तरपट्टसहस्रप्रमितेषु भवेषु भ्रमित्वा चरमापूर्णभवत् त्रिवक्कविप्रहगत्या उत्पन्नस्य जीवस्य प्रथमवक्कसमये स्थितस्यैव पूर्वोक्तं सर्वजघन्यं पर्यायस्यं श्रुतज्ञानं भवति सर्वत्र तस्य जीवस्य स्पशंनेन्द्रियप्रभवत् सर्वजघन्यं मतिज्ञानं, अचक्षुर्द्धानावरणशयोपशमसंभूतं अचक्षुर्द्धानमपि

- २५ सूक्ष्मनिगोदिया लब्धपर्याप्तकके जन्मके प्रथम समय पर्यायनामक श्रुतज्ञान होता है । यह निरावरण है इसीसे सर्वदा प्रकाशमान रहता है, सबसे जघन्य अर्थात् निकृष्ट शक्तिवाला होता है । यह गायामूत्र प्राचीन है यहाँ ग्रन्थकारने अपने कथनकी यथार्थता दिखलानेके लिए उदाहरणके रूपमें लिखा है ॥३२०॥

- सूक्ष्म निगोद लब्धपर्याप्तक जीव अपने सूक्ष्म निगोद लब्धपर्याप्तक सम्बन्धी छह हजार बारह बरसोंमें भ्रमण करके अन्तिम लब्धपर्याप्तक भवमें तीन मोड़वाली विप्रहगतिसे उत्पन्न होकर प्रथम मोड़के समयमें स्थित होता है उसके ही सबसे जघन्य पर्याय श्रुतज्ञान होता है । वही समय उसके स्पशंनेन्द्रियजन्य सबसे जघन्य मतिज्ञान होता है और अचक्षुर्द्धानावरणके शयोपशमसे उत्पन्न अचक्षुर्द्धान भी होता है । वहाँ ही सबसे जघन्य पर्याय श्रुतज्ञान होनेका कारण यह है कि बहुत श्रुतबरसोंमें भ्रमण करनेसे उत्पन्न हुए बहुत

| | | | | | | | | | |
|-------|-------|-------|-------|-------|-------|-------|-------|-------|-------|
| उ उ ४ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ |
| उ उ ४ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ |
| उ उ ४ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ |
| उ उ ४ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ |
| उ उ ४ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ |
| उ उ ४ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ |
| उ उ ४ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ |
| उ उ ४ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ |
| उ उ ४ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ४ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ | उ उ ५ |

१० इस प्रकार पदस्थान वृद्धियोंका क्रम दिखलाया। मन्वमें दर्शित रचनाके अनुसार श्रोताजनोंकी बिना व्यामोहके जानना चाहिए। इस यन्त्रका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—

पर्याय नामक श्रुतज्ञानके भेदसे अनन्तभागवृद्धि युक्त पर्याय गणनाक अज्ञानका प्रथम भेद होता है। इस प्रथम भेदसे अनन्तभागवृद्धि युक्त पर्याय गणनाका दूसरा भेद होता है। इस प्रकार सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर एक बार असंख्यात भागवृद्धि होती है। ऊपर यन्त्रमें प्रथम पंक्तिके प्रथम कोठेमें दो बार उकार लिखा है वह सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धिकी पहचान जानना। उसके आगे चारका अंक लिखा वह एक बार असंख्यात भाग वृद्धिकी पहचान जानना। उसके आगे सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भागवृद्धि होनेपर दूसरी बार असंख्यात भाग वृद्धि होती है। इसी क्रमसे सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यात भाग वृद्धि होती है। इसीसे यन्त्रमें प्रथम पंक्तिके दूसरे कोठेमें प्रथम कोठाकी तरह दो उकार और एक चारका अंक लिखा है जो दो बार सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग वारका सूचक है। अतः दूसरी बार लिखनेसे सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग वार जानना। उससे आगे सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर एक बार असंख्यात भाग वृद्धि होती है। अतः प्रथम पंक्तिके तीसरे कोठेमें दो उकार और एक पाँचका अंक लिखा है। आगे जैसे पहले अनन्त भाग वृद्धिको लिये सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यात भाग वृद्धिके होनेपर पाँच सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धिके होनेपर एक बार संख्यात भाग वृद्धि हुई वैसे ही उसी क्रमसे दूसरी संख्यात भाग वृद्धि हुई। इसी क्रमसे तीसरी हुई। इस प्रकार संख्यात भाग वृद्धि भी सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण वार होती है। इससे ऊपर यन्त्रमें प्रथम पंक्तिमें जैसे तीन कोठे किये थे वैसे ही सूर्यगुलके असंख्यातवें भागकी पहचानके लिए दूसरे तीन कोठे उसी प्रथम पंक्तिमें किये। यहाँसे आगे सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धिके होनेपर एक बार असंख्यात भाग वृद्धि होती है। इस प्रकार सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यात भाग वृद्धि होती है। इस प्रकार यन्त्रमें दो उकार और चारका अंक लिये दो कोठे किये। इससे आगे सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर एक बार संख्यात गुण वृद्धि होती है। सो उसकी पहचानके लिए प्रथम पंक्तिके नीचे कोठेमें दो उकार और छहका अंक लिखा। जैसे प्रथम पंक्तिका क्रम रहा उसी प्रकार आदिसे लेकर सब क्रम दूसरी बार होनेपर एक बार दूसरी संख्यातगुणवृद्धि होती है। इसी क्रमसे सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण संख्यातगुणवृद्धि

पर्यायसमासश्चतुर्ज्ञानविकल्पं क्लृप्तं सर्वजघन्यप्रथमविकल्पमवकु ज १६ १६ मिदरन्तैकभागमन-

ल्लिये समच्छेदं माडि कूडुत्तरलुमडु पर्यायसमासद्वितीयज्ञानविकल्पमवकु ज १६ १६ मदरन्तैक-

भागमल्लिये समच्छेदं माडि कूडुत्तं विरलु पर्यायसमासतृतीयज्ञानविकल्पमवकु ज १६ १६ १६

मदरन्तैकभागमनल्लिये समच्छेदं माडि कूडिदोडे पर्यायसमासचतुर्थज्ञानविकल्पमवकु

५ ज १६ १६ १६ १६ मदरन्तैकभागमनल्लिये समच्छेदं माडि कूडिदोडे पर्यायसमासपंचम-

श्चतुर्ज्ञानविकल्पमवकु ज १६ १६ १६ १६ १६ मदरन्तैकभागमनल्लिये समच्छेदं माडि कूडु-

ज्ञानविकल्पेणु सर्वजघन्यप्रथमविकल्पः स्यान् ज १६ १६ अस्यानन्तैकभागे ज १६ १६ अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते

रा पर्यायसमासद्वितीयज्ञानविकल्पः ज १६ १६ । अस्यानन्तैकभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते पर्यायसमास-

तृतीयज्ञानविकल्पः ज १६ । १६ । १६ । अस्यानन्तैकभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते पर्यायसमास-

१० चतुर्थज्ञानविकल्पः ज १६ । १६ । १६ । १६ । अस्यानन्तैकभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते पर्यायसमास-

पञ्चमज्ञानविकल्पः ज १६ । १६ । १६ । १६ । १६ । अस्यानन्तैकभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन

आवे एते उस तीसरे भेदमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका चतुर्थ विकल्प आता है। यह चतुर्थ अनन्त भाग वृद्धि हुई। फिर इस चतुर्थ भेदमें अनन्तसे भाग देकर जो एक भाग आवे एते उस चतुर्थ विकल्पमें मिलानेपर पर्याय समासका पंचम विकल्प आता है। यह पाँचवी अनन्तभाग वृद्धि हुई। फिर इस पाँचवें भेदमें अनन्तसे भाग देनेपर जो भाग आता है उसे पाँचवें भेदमें मिलानेपर पर्याय समासका छठा विकल्प आता है। यह छठी अनन्त भाग वृद्धि हुई। इसी प्रकार मूल्यगुल्के असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर जो पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ उसको एक बार असंख्यात लोक प्रमाण संख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसे उमी भेदमें मिलानेपर एक बार असंख्यात भाग वृद्धिको लिये १० रूप पर्याय समास ज्ञानका भेद होता है। उसमें अनन्तसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसे

पर्यायगमासश्च समानविकल्पगतोऽस्य तद्व्यवप्रथमविकल्पगतः ज १६ १६ मररनीरुभागमा-

ल्लये समच्छेदं मादि कूडुसिरलुगु पर्यायगमासिनीयतानविकल्पगतः ज १६ १६ मररनीरु-
१६ १६

भागमल्लये समच्छेदं मादि कूडुसं विरनु पर्यायगमासगुणीयतानविकल्पगतः ज १६ १६ १६
१६ १६ १६

मररनीरुभागमल्लये समच्छेदं मादि कूडुसं विरनु पर्यायगमासगुणीयतानविकल्पगतः

५ ज १६ १६ १६ १६ मररनीरुभागमल्लये समच्छेदं मादि कूडुसं विरनु पर्यायगमासगुणीयतानविकल्पगतः
१६ १६ १६ १६

श्रुतानविकल्पगतः ज १६ १६ १६ १६ १६ मररनीरुभागमल्लये समच्छेदं मादि कूडु-
१६ १६ १६ १६ १६

शाविकल्पेषु शांभयप्रथमविकल्पः एषाम् ज १६ १६ मररनीरुभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन गुो
१६ १६

श पर्यायगमासिनीयतानविकल्पः ज १६ १६ १६ १६ मररनीरुभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन गुो पर्यायगमास-
१६ १६ १६ १६

गुणीयतानविकल्पः ज १६ १६ १६ १६ १६ मररनीरुभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन गुो पर्यायगमास-
१६ १६ १६ १६ १६

१० चतुर्गुणविकल्पः ज १६ १६ १६ १६ १६ मररनीरुभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन गुो पर्यायगमास-
१६ १६ १६ १६ १६

प्रथमभूतसाविकल्पः ज १६ १६ १६ १६ १६ मररनीरुभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन
१६ १६ १६ १६ १६

१५ आधे चरो वस तीसरे भेदमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका चतुर्थ विकल्प आता है। यह चतुर्थ अनन्त भाग बुद्धि हुई। फिर इस चतुर्थ भेदमें अनन्तसे भाग लेकर जो एक भाग आये चरो वस चतुर्थ विकल्पमें मिलानेपर पर्याय समासका पंचम विकल्प आता है। यह पाँचवी अनन्तभाग बुद्धि हुई। फिर इस पाँचवें भेदमें अनन्तसे भाग देनेपर जो भाग आता है चरो पाँचवें भेदमें मिलानेपर पर्याय समासका छठा विकल्प आता है। यह छठी अनन्त भाग बुद्धि हुई। इसी प्रकार सूर्यगुणके असंख्यावर्षे भाग प्रमाण अनन्त भाग बुद्धि होनेपर जो पर्याय ज्ञानका भेद हुआ उसको एक बार असंख्यात लोक प्रमाण संख्यातसे भाग जो पर्याय ज्ञानका भेद हुआ उसको एक बार असंख्यात लोक प्रमाण संख्यातसे भाग देतेपर जो परिमाण आये उसे

पर्यायसमासधुत्तज्ञानविकल्पंगळोऽ सव्यंजघत्यप्रयमविकल्पमवकु ज १६ १६ मिवरन्तैरुभागमन-

ल्लिये समच्छेदं माडि कूडुतिरलुमकु पर्यायसमासद्वितीयज्ञानविकल्पमवकु ज १६ १६ मवरन्तैरु-
१६ १६

भागममल्लिये समच्छेदं माडि कूडुत्तं विरलु पर्यायसमासतृतीयज्ञानविकल्पमवकु ज १६ १६ १६
१६ १६ १६

मवरन्तैरुभागमनल्लिये समच्छेदं माडि कूडिदोडे पर्यायसमासचतुर्थज्ञानविकल्पमवकु

५ ज १६ १६ १६ १६ मवरन्तैरुभागमनल्लिये समच्छेदं माडि कूडिदोडे पर्यायसमासपंचम-
१६ १६ १६ १६

धुत्तज्ञानविकल्पमवकु ज १६ १६ १६ १६ १६ मवरन्तैरुभागमनल्लिये समच्छेदं माडि कूडु-
१६ १६ १६ १६ १६

ज्ञानविश्लेषेणु गवंत्रपयप्रयमविकल्पाः स्यान् ज १६ अस्यानन्तैरुभागे ज १६ अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते
१६ १६

स पर्यायसमासद्वितीयज्ञानविकल्पाः ज १६ १६ अस्यानन्तैरुभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते पर्यायसमास-
१६ १६

तृतीयज्ञानविकल्पः ज १६ १६ १६ अस्यानन्तैरुभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते पर्यायसमास-
१६ १६ १६ १६

१० चतुर्थज्ञानविकल्पः ज १६ १६ १६ १६ अस्यानन्तैरुभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन युते पर्यायसमास-
१६ १६ १६ १६ १६

पञ्चमपञ्चज्ञानविकल्पः ज १६ १६ १६ १६ १६ अस्यानन्तैरुभागे अस्मिन्नेव समच्छेदेन
१६ १६ १६ १६ १६

आये षमे षम शीसरे भेदमें मिलानेपर पर्याय समास ज्ञानका चतुर्थ विकल्प आता है। यह चतुर्थ अनन्त भाग वृद्धि हुई। फिर इस चतुर्थ भेदमें अनन्तसे भाग देकर जो एक भाग आवे षमे षम चतुर्थ विकल्पमें मिलानेपर पर्याय समासका पंचम विकल्प आता है। यह पाँचवी अनन्तभाग वृद्धि हुई। फिर इस पाँचवें भेदमें अनन्तसे भाग देनेपर जो भाग आता है षमे पाँचवें भेदमें मिलानेपर पर्याय समासका छठा विकल्प आता है। यह छठी अनन्त भाग वृद्धि हुई। इसी प्रकार सूर्यगुल्ले असंख्यातयें भाग प्रमाण अनन्त भाग वृद्धि होनेपर ज्ञः पर्याय समास ज्ञानका भेद हुआ उसको एक बार असंख्यात लोक प्रमाण संख्यातसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे त्रसे त्रमी भेदमें मिलानेपर एक बार असंख्यात भाग वृद्धिको लिये १० रूप पर्याय समास ज्ञानका भेद होना है। उसमें अनन्तसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे उसे

मोदलोऽद् तद्वृद्धवृद्धिपर्यन्तं भवमुद्रप्युदरिवमवर विन्यासं तोरल्पहुगुमदं ते दोडे पर्यायसमास-
 ज्ञानप्रथमविकल्पदोऽङ्गिद् वृद्धिं तैगद् जघन्यद मेगे स्यापिति अवर केळगे एकसारान्तं कभाग-
 वृद्धियं स्यापिमुपुदं तु स्यापिमुतिरल् तद्वृद्धिगे प्रक्षेपकमेव पेशरवकु। मंते द्वितीयविकल्प-
 दोऽङ्गिद् जघन्यमं मेगे स्यापिति तदघस्तनभागदोऽद् तद्वृद्धिप्रक्षेपकांअरडुमोऽद् प्रक्षेपकप्रक्षेपक-
 मुमपुयवर्षं प्रामदिदं केळगे केळगिरिसुपुदु। तृतीयविकल्पदोऽं जघन्यमं मेगे स्यापिति तद्वृद्धि-
 गळप्य मूरं प्रक्षेपकांअं मूरं प्रक्षेपकप्रक्षेपकांअं दु पिगुलिपुमं ययारुमदिदं तज्जघन्यद केळगे केळगे
 स्यापिमुपुदु। चतुर्थविकल्पदोऽंमंते जघन्यमं मेगे स्यापिति तदघस्तनभागदोऽद् तद्वृद्धिगळप्य
 मात्तुं प्रक्षेपकांअं पदप्रक्षेपरुप्रक्षेपकांअं चतुःपिगुलिगज्जुमनोऽद् पिगुलिपिगुलिपुमं ययारुमदिदं
 केळगे केळगे स्यापिमुपुदु।

१० पंचमविकल्पदोऽंमंते जघन्यमं मेग स्यापिति तदघस्तनभागदोऽद् तद्वृद्धिगळप्य प्रक्षेपकां-
 अंअंमं प्रक्षेपकप्रक्षेपकांअं पत्तुं। पिगुलिगळ पत्तुमं पिगुलिपिगुलिगळंअंअंमनोऽद् चूर्णिपुमं ययारुम-
 दिदं केळगे केळगे स्यापिमुपुदु। षष्ठविकल्पदोऽंमंते जघन्यमं मेगे स्यापिति तदघस्तनभागदोऽद्

न३ तद्वृद्धीनां तज्जघन्यमादि वृत्ता तद्वृद्धवृद्धिपर्यन्तं भेदे सति तद्विन्यासो दस्यते। तद्यथा-

११ प्रथमविकल्पे विषयवृद्धि गुणवृत्तय जघन्यमूर्ति संस्थाप्य तस्याप्य एकवारानन्तं कभागवृद्धि स्यापयेत्, तद्वृद्धेः
 प्रक्षेपक इति नाम। तथा द्वितीयविकल्पे जघन्यमूर्ति संस्थाप्य तदघस्तनभागे तद्वृद्धेर्दो प्रक्षेपको एकं प्रक्षेपक-
 प्रक्षेपकं च अधोपो न्यसेत्। तृतीयविकल्पे जघन्यमूर्ति संस्थाप्य तद्वृद्धेस्त्रीन् प्रक्षेपकान् प्रोन् प्रक्षेपक-
 प्रक्षेपकान् एकं विगुलिं च अधोपो न्यसेत्। चतुर्थविकल्पे तज्जघन्यमूर्ति स्यस्य तदघस्तनभागे तद्वृद्धेस्त्रीन्
 प्रक्षेपकान् पद प्रक्षेपकप्रक्षेपकान् चतुरः पिगुलीन् एकं पिगुलिपिगुलिं च अधोपो न्यसेत्। पञ्चमविकल्पे

थागे यहाँ अनन्त भाग वृद्धि रूप सूर्यगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण स्थान कहते हैं

२० चातका जघन्य स्थानसे लेकर पच्छिम स्थान पर्यन्त स्थापनका विधान कहते हैं। सो प्रथम ही संज्ञाओंको कहते हैं—

विवक्षित मूल स्थानको विवक्षित भागहारका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उसे प्रक्षेपक कहते हैं। इसी प्रमाणको वसो भागहारसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उसे प्रक्षेपक-
 प्रक्षेपक कहते हैं। इसमें भी विवक्षित भागहारसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उसे पिगुलि
 कहते हैं। इसमें भी विवक्षित भागहारसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उसे पिगुलि-पिगुलि
 कहते हैं। इसमें भी विवक्षित भागहारसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उसे चूर्णि कहते हैं।
 इसमें भी विवक्षित भागहारका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उसे चूर्णि-चूर्णि कहते हैं। इसी
 प्रकार पूर्व प्रमाणमें विवक्षित भागहारका भाग देनेपर द्वितीय आदि चूर्णि-चूर्णि कही
 जाती है। अन्तु—

१० गो पर्याय समाम ज्ञानके प्रथम भेदमें ऊपर जघन्यको स्थापित करके उसके नीचे एक बार अनन्त भाग वृद्धिकी स्थापना करना चाहिए। उस वृद्धिका नाम प्रक्षेपक है।
 तथा दूसरे विकल्पमें जघन्यको ऊपर स्थापित करके उसके नीचे-नीचे उसकी वृद्धिके दो प्रक्षेपक
 और एक प्रक्षेपक-प्रक्षेपक स्थापित करें। तीसरे विकल्पमें जघन्यको ऊपर स्थापित करके
 इसकी वृद्धि के तीन प्रक्षेपक, तीन प्रक्षेपक-प्रक्षेपक और एक पिगुली नीचे-नीचे स्थापित करें।
 ११ चतुर्थ विकल्पमें जघन्यको ऊपर स्थापित करके उसके नीचे-नीचे इसकी वृद्धिके चार प्रक्षेपक,

वैकर्म्यं तद्गणन्यमं भेदो स्थापिति तदधस्तनभागदोऽत्र यथाक्रमविदं प्रशेषकंगुलं गच्छेमात्रंगुल-
 पुत्रेणु सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रंगुलं स्थापितिदवर केऽत्रो प्रशेषकप्रशेषकंगुलं रूपोनगच्छेय
 एकवारसंकलनधनमात्रंगुलपुत्रेणु रूपोनसूच्यंगुलासंख्यातभागगच्छेय एकवारसंकलनधनप्रमितंगुलं
 स्थापिसुबुदवर केऽत्रो पितुलिगुलं द्विरूपोनगच्छेय द्विकवारसंकलनधनमात्रंगुलपुत्रेणु द्विरूपोन-
 सूच्यंगुलासंख्यातभागगच्छेय द्विकवारसंकलनधनमात्रंगुलं स्थापिसुबुदवर केऽत्रो पितुलि पितुलिगुलं
 त्रिरूपोनगच्छेय त्रिवारसंकलनधनप्रमितंगुलपुत्रेणु त्रिरूपोनसूच्यंगुलासंख्यात भागगच्छेय त्रिवार-

धरमानन्तभागवद्वियुक्तस्थानविकल्पे पृथक्कृततद्व्यवहारादि न्यस्येत् । तदधस्तनभागे यथाक्रमं प्रशेषान्
 सूच्यंगुलासंख्येयभागमात्रान् न्यस्येत् । तदधः प्रशेषप्रशेषका रूपोनगच्छेय एकवारसंकलनधनमात्राः गच्छेति
 रूपोनसूच्यंगुलासंख्येयभागगच्छेय एकवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् । तदधः पितुल्यः द्विरूपोनगच्छेय
 द्विकवारसंकलनधनमात्राः सन्तीति द्विरूपोनसूच्यंगुलासंख्येयभागगच्छेय द्विकवारसंकलनधनमात्रान् न्यस्येत् ।

- स्थापित करना, उसके नीचे प्रशेषक-प्रशेषकोको, यतः वे एक कम गच्छके एक वार संकलन
 धन मात्र होते हैं अतः एक कम सूच्यंगुलके असंख्यात भाग गच्छके एक वार संकलन धन
 मात्र स्थापित करना । उनके नीचे पितुली, जो दो हीन गच्छके दो वार संकलन धन मात्र
 होती हैं, इसलिए दो हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके दो वार संकलन धन मात्र
 स्थापित करना । उनके नीचे पितुली-पितुली तीन हीन गच्छके तीन वार संकलन धन मात्र
 होती हैं इसलिए तीन हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके तीन वार संकलन धन
 मात्र स्थापित करना । उनके नीचे चूर्णि चार हीन गच्छके चार वार संकलन धन मात्र होती
 हैं इसलिए चार हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके चार वार संकलन धन मात्र
 स्थापित करना । उनके नीचे चूर्णि-चूर्णि पाँच हीन गच्छके पाँच वार संकलन धन मात्र होती
 हैं इसलिए पाँच हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके पाँच वार संकलन धन मात्र
 स्थापित करना । इसी प्रकार उसके नीचे-नीचे चूर्णि-चूर्णि छह हीन आदि गच्छके छह वार
 आदि संकलन धन मात्र होती हैं इसलिए छह हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग आदि
 गच्छके छह हीन सूच्यंगुलके असंख्यात भागादि वार संकलन धन मात्र नीचे-नीचे स्थापित
 करना । ऐसा करते-करते सबसे नीचेकी द्विचरम चूर्णि-चूर्णि दो हीन गच्छसे हीन गच्छकी
 दो हीन गच्छवार संकलित धन प्रमाण होती हैं इसलिए दो हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें
 भागसे हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके दो हीन सूच्यंगुलके असंख्यात भाग वार
 संकलन धन मात्र स्थापित करना । उनके नीचे एक हीन गच्छसे हीन गच्छके एक हीन गच्छ
 मात्र वार संकलन धन मात्र उसकी अन्तिम चूर्णि-चूर्णि हैं इसलिए एक हीन सूच्यंगुलके
 असंख्यातवें भागसे हीन सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग गच्छके एक हीन सूच्यंगुलके असंख्यात
 भाग मात्र वार संकलित धन प्रमाण स्थापित करना । परमार्थसे अन्तिम चूर्णि-चूर्णिका संक-
 लित धन ही पटित नहीं होता क्योंकि द्वितीय आदि स्थानका अभाव है ।

विशेषार्थ—अंक संदृष्टिसे उक्त कथन इस प्रकार जानना । जघन्य पर्याय ज्ञानका
 प्रमाण ६५५३६ । विशदित भागहार अनन्तका प्रमाण चार । पूर्वोक्त क्रमसे चारका भाग
 देनेपर प्रशेषकका प्रमाण १६३८४ । प्रशेषक-प्रशेषकका प्रमाण ४०९६ । पितुलीका प्रमाण

१५ १०२४ । पितुली-पितुलीका प्रमाण २५६ । चूर्णि प्रमाण ६४ । चूर्णि-चूर्णि प्रमाण १६ । इसी

पद्मपोनादिगच्छस्य पद्मवारसंकलनादिधनप्रमितंगच्छुषुवेदु पद्मपोनसूच्यंगुलासंख्यातभागादिवार-
 संकलनधनमात्रंगच्छुषुवेदु स्यापिसुत्तं पोगि सर्वापस्तनद्विचरम चूर्णिचूर्णिगच्छु द्विहपोन-
 गच्छोनगच्छद्विरूपोनागच्छोनगच्छवारसंकलनधन प्रमितंगच्छुषुवेदु द्विहपोनसूच्यंगुलासंख्यात-
 भागोनसूच्यंगुलासंख्यातभागगच्छस्य द्विरूपोनासंख्यातभागवारसंकलनधनमात्रंगच्छु

५ स्यापिसुत्तु ज २ । ३ । ४ । ००० । २-३ । २-२ । २-२ दुवतपवत्तिसि ज २ २ पवर कंके १६ ० ०
 १६ । २ २ । २ २ । २ ३ । ००० । ४ । ३ । २ । १ । १

हपोनगच्छोनगच्छहपोनगच्छमात्रवार संकलनधनमात्र तच्चरमचूर्णिचूर्णिगच्छुषुदरिदं रूपोनसूच्यं-
 गुलासंख्यातभागोनसूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रवारसंकलनधन-
 प्रमितं ज । १ । २ । ३ । ००० । २-२-२-२ अपवत्तितमनिदं ज । १ स्यापिसुत्तु
 १६ २ । २ । २-१ । २-२ । ००० ० ३-० २ । ० १ १६ । २
 ० ० ० ० ०

परमार्यरूपदिदं धरमचूर्णिचूर्णिगे संकलितमे घटिसदेकंदोडे द्वितीयादिस्थानाभायमपुदरिदं ।
 इत्ति पद्मस्थानप्रकरणदोळनंतभागवृद्धिपुक्तपर्यापिसमासजघन्यादिज्ञानविकल्पंगच्छु सद्यंत्र
 स्यापिसिद प्रशोपकंगच्छु गच्छमात्रंगच्छुषुवेदु कारणादिदं सुगमंगच्छु । प्रशोपकप्रशोपकादिगच्छ प्रमाण-
 नरिपत्तिलगे करणसूत्रमिदु ।

धनमात्रान् स्यात् । एवं तदपस्तनापस्तनचूर्णिवृणयः पद्मपोनादिगच्छस्य पद्मवारसंकलनधनप्रमिताः
 एतन्मिति पद्मपोनसूच्यंगुलासंख्यातभागादिवारसंकलनधनमात्रान्
 १५ अथोपरो विन्दुवन् परवा सर्वापस्तनद्विचरमचूर्णिवृणयः द्विरूपोनागच्छोनगच्छस्य द्विरूपोनागच्छवारसंकलनधन-
 प्रमिताः सन्तीति द्विरूपोनासंख्यातभागवृद्धिपुक्तपर्यापिसमासजघन्यादिज्ञानविकल्पंगच्छु सद्यंत्र
 स्यापिसिद प्रशोपकंगच्छु गच्छमात्रंगच्छुषुवेदु कारणादिदं सुगमंगच्छु । प्रशोपकप्रशोपकादिगच्छ प्रमाण-
 नरिपत्तिलगे करणसूत्रमिदु ।

३ २ ३ ४ १००० । २-३ २-२ २-१ २
 १६ २-१ २-१ २-२ २-३ १००० । ० । १ । ४ ० । ३ ० । २ २ । १

अथ २ २
 अथ २-१ २-१ ० तदपो रूपोनगच्छोनगच्छस्य रूपोनगच्छमात्रवारसंकलनधनमात्राः तच्चरम-

२० अथोपरो विन्दुवन् परवा सर्वापस्तनद्विचरमचूर्णिवृणयः द्विरूपोनागच्छोनगच्छस्य द्विरूपोनागच्छवारसंकलनधन-
 प्रमिताः सन्तीति द्विरूपोनासंख्यातभागवृद्धिपुक्तपर्यापिसमासजघन्यादिज्ञानविकल्पंगच्छु सद्यंत्र
 स्यापिसिद प्रशोपकंगच्छु गच्छमात्रंगच्छुषुवेदु कारणादिदं सुगमंगच्छु । प्रशोपकप्रशोपकादिगच्छ प्रमाण-
 नरिपत्तिलगे करणसूत्रमिदु ।

अथ १ २ ३ ४ १००० । २-३ २-२ २-१ २
 १६ २ २ २-१ २-२ ४ ००० २ । ३ । २-२ । २-१ । २
 ० ० ० ० ० २-३ १००० ० ४ । ० ३ । ० २ । १ । १

अथ १ २ ३ ४ १००० । २-३ २-२ २-१ २
 अथोपरो विन्दुवन् परवा सर्वापस्तनद्विचरमचूर्णिवृणयः संकलितमेव न घटेत् द्वितीयादिस्थाना-

११ इमं पद्मस्थान प्रकरणमे अन्तर्गतं भागवृद्धि युक्त विकल्पमिं मध्यं प्रशोपक गच्छ प्रमाण
 इति इति इति सुगमं इति प्रशोपक-प्रशोपक आदिका प्रमाण लानेके लिप्य करणसूत्र इति

संकलनवारंगळ प्रमाणमवकुमलिल कोष्ठघनस्थानयने विवक्षित ४ चतुर्वारसंकलनघनमंतप्पल्लि । प्रभवः आवि ये तुंठवकुमे दोडे इष्टोनितोष्वंपदसंख्या स्यात् । तन्न विवक्षितमकलनवारप्रमाणमं नालकं कळदुळिदूर्ध्वपवप्रमाणमे तुंतुतु प्रभवमवकुमेदिल्लि ऊर्ध्वगच्छमु मूरप्पुवयरोळु नालकं कळदुळिद द्विरुपुगळु प्रभवमे युवतथं ।

१ ततो रूपाधिक क्रमेण तवादिभूतप्रभवभूत द्विरूपं मोदल्लोडु मुंवे रूपाधिकक्रमविवं गुणकारा भवंत्पूर्वगच्छपर्यंतं अनुलोमक्रमदि गुणकारंगळप्पु ऊर्ध्वगच्छप्रमाणोक्तवर्गे नैवरमुत्पत्तिपरकु- मन्नेवरं ज २ । ३ । ४ । ५ । ६ ई गुणकारंगळो कळगे एकरूपादि रूपोत्तरहाराः भवन्ति एरु- १६ । ५

रूपादिहपोत्तरमप्य भागहारंगळु विलोमक्रमदिदमप्पुवु । प्रभवपर्यंतं मेलन गुणकारभूतप्रभवांरु- मायंकमवसानमन्नेवरमन्नेवरं ज ३ । ४ । ५ । ६ कळगे अपयत्तितलथं चतुर्वारसंकलन- १६ । ५ । ४ । ३ । २ । १

१० धनमयकु ज ६ इतनंतभागवृद्धियुक्तचरमज्ञानविकल्पद तिय्यंपदे १६ १६ १६ १६ १६

तिय्यंगच्छदोळु सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्रगच्छदोळु २ रूपोने २ एकरूपोनमादोडे तत् ० ०

भवन्ति उद्दगच्छोति ऊर्ध्वगच्छाद्धोत्पत्तिपर्यन्तं-ज २ ३ ४ ५ ६ तेषां गुणकाराणां अथः हारा भागहारः १६ ५

द्विरूपमादि एकरूपादयः एउतरा-रूपोत्तरा ह्येति भवन्ति विलोमक्रमेण रूपाधिकेष्टवाररूपानेषु पभवोति प्रभवाद्युपर्यन्तं ज २ ३ ४ ५ ६ अपवतिते लब्धं चतुर्वारसंकलनघनं भवति- १६ १६ १६ १६ १६ ५ ४ ३ २ १

१५ ज ६ एवमनन्तभागवृद्धियुक्तचरमविकल्पे तिर्यंगपरं सूच्यङ्गुलासंख्यातभागमात्रं २ १६ १६ १६ १६ १६ ०

- इस संकलित धनको अपने अभिप्रायके अनुसार लानेके लिए केशववर्णनि दो गाथाएँ कही हैं । उनका अर्थ उदाहरण पूर्वक कहते हैं-अनन्त भाग वृद्धि युक्त स्थानोंमें जो विवक्षित स्थान है यह तिर्यक पद है । जैसे छठा स्थान तिर्यकपद है । उसमें एक घटानेपर उसके नीचे पाँच संकलन बार होते हैं । प्रथोकके नीचे कोठोंमें-से प्रत्येकमें क्रमसे एक बार, दो बार आदि सम्भव संकलनोंकी संख्या होती है । यहाँ इष्ट चार बार संकलन धन गत कोठेके धनको लानेके लिए इष्ट संकलन बारके प्रमाण ४ को ऊर्ध्वपद ६ में कम करनेपर ६ - ४ = २ आदि होता है । इस आदि दोसे लगाकर एक-एक अधिकके क्रमसे ऊर्ध्व गच्छ छह पर्यन्त गुणकार होते हैं यथा २, ३, ४, ५, ६ । इन गुणकारोंके नीचे भागहार एक रूप आदि एक अधिक बढ़ते हुए उठते क्रमसे होते हैं । सो यहाँ चार बार संकलनके कोठोंमें चूणि है । जघन्यमें पाँच बार अनन्तका भाग देनेसे जो प्रमाण आता है उतना चूणिका प्रमाण है । इस प्रमाणके गुणकारमे क्रमसे दो, तीन, चार, पाँच, छह हैं और पाँच, चार, तीन, दो एक भागहार हैं । गुणकारमे पूर्णिके प्रमाणको गुणा करके भागहारोंका भाग देनेपर यथायोग्य अपवर्तन करने पर छह गुणित पूर्णि मात्र प्रमाण आता है । इसका आशय यह है जो १६, १६, १६, १६, १६ यह पूर्णिका प्रमाण है । 'ज' अर्थात् जघन्य पर्याय ज्ञानमें १६ अर्थात् अनन्तका पाँच बार
- १० १. मंकाः १६नेतरं ।

भागमात्रंगळु संदु द्वितीयपट्टस्थानरुकादिभूतमप्यष्टांक्रमोऽनु पुट्टुगुर्मेनेपर मन्नेररेगमो ऋगपरि-
पत्पट्टुगुं ।

आदिमछट्टाणम्मि य पंच य वड्ढी इवंति सेसेमु ।

छच्चड्ढीओ होंति हे सरिसा सच्चर्य पदमंसा ॥३२७॥

आदिमपट्टस्थाने च पंच वड्ढयो भवंति शेषेषु । पट्टुदयो भवंति तत्र सट्टो सन्त्र पर-
संख्या ॥

इत्थि संभविमुवंतप्यसंख्यातलोकमात्रपट्टस्थानंगळोऽनु आदिमपट्टस्थाने आरी भवमादिमं
पण्णां स्थानानां समाहारः पट्टस्थानं आदिम पट्टस्थानमादिमपट्टस्थानं तस्मिन् मोरल पट्टस्थानवोऽनु
पंच वड्ढयो भवंति पंचवृद्धिगळेषुपुवेके दोहे चरमाष्टांरसंज्ञेयनुऽनुतंतगुणवृद्धिपुक्तस्थानरके द्वितीय
पट्टस्थानरुकादित्व प्रतिपादनदिवं शेषेषु शेषद्वितीयोपादिचरमात्रमानमाव पट्टस्थानंगळोऽनुल्लमष्टांर-
दियाव पट्टवृद्धिगळेषुपुवंतागुत्तिरलु सट्टो सच्चत्र पदसंख्या ई पट्टस्थानंगळोऽनु संभविगुण स्थान-
विकल्पंगळ संख्यासाहस्रपनिपमरके निमित्तमप्य सूच्यंगुलासंख्यातभागरुक्स्थित्यनस्यरूपमुऽनुदरिदं ।
समस्तपट्टस्थानंगळ स्थानविकल्पंगळ संख्येसमानमेयुक्तुमंतादोहे मोरल पट्टस्थानवोऽनु पंचवृद्धि-
पुक्तस्थानंगळपुदरिनष्टांक्रमे तु षट्पिमुगुमं दोहत्तरसूत्रेदोऽनु वेच्चवं :-

५ संख्यातभागवृद्धिपुक्तस्थानान्यपि प्रत्येकं काण्डरुकाण्डक्रमिताति नीत्वा पुनरनन्तभागमस्थानभागवृद्धिपुक्त-
स्थानानि प्रत्येकं काण्डक्रमितानि नीत्वा पुनरनन्तभागवृद्धिपुक्तस्थानान्येव सूच्यंगुलासंख्यातभागमात्राणि
नीत्वा द्वितीयपट्टस्थानस्य आदिभूतमष्टाडुसंज्ञं भवति इत्येवं सर्वत्र पट्टस्थानातित्रवृद्धिभ्रमो जातस्यः ॥३२६॥
अत्र संभवत्यु असंख्यातलोकमात्रेषु पट्टस्थानेषु मध्ये आदिमे प्रथमे पट्टस्थाने पञ्च वड्ढयो भवन्ति,
२० चरमस्य अष्टादशसंज्ञेय अनन्तगुणवृद्धिपुक्तस्य द्वितीयपट्टस्थानस्यादिचरप्रतिपादान् । शेषेषु द्वितीयोपादिचरमात्र-
स्थानेषु पट्टस्थानेषु सर्वा अष्टादशसंज्ञेयः पट्टुदयो भवन्ति । तथासति सट्टो सर्वत्र पदसंख्या एतेषु पट्टस्थानेषु
संभवति—स्थानविकल्पसंख्या सट्टा समानं सादृश्यनिपमनिमित्तस्य सूच्यंगुलासंख्यातभागस्य अवस्थित-
स्वरूपत्वाद् । तथा सति प्रथमपट्टस्थाने पञ्चवृद्धिपुक्तस्थानानि संभवन्ति ॥३२७॥ अष्टादशः कथं न पठते इति
चेद्रेनुमाह—

२५ होनेपर पुनः अनन्त भाग वृद्धि युक्त स्थान सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र होनेपर द्वितीय
पट्टस्थानका आदिभूत अष्टांक होवा है । इस प्रकार सर्वत्र पट्टस्थानपतित वृद्धि क्रम
जानना ॥३२६॥

उच्यन्व पर्याय ज्ञानके ऊपर असंख्यात लोक मात्र पट्टस्थान होते हैं जो पर्याय समास
श्रुतज्ञानके विकल्प हैं । उनमें-से प्रथम पट्टस्थानमें पाँच ही वृद्धियाँ होती हैं क्योंकि अनन्त
गुण वृद्धिसे युक्त जो अष्टांक संज्ञावाला अन्तिम स्थान है उसे दूसरे पट्टस्थानका आदि स्थान
३० कहा है । शेष दूसरेसे लेकर अन्तिम पर्यन्त सब पट्टस्थानोंमें अष्टांक आदि छहों वृद्धियाँ
होती हैं । ऐसा होनेसे इन पट्टस्थानोंमें स्थानके विकल्पोंकी संख्या समान ही है क्योंकि
सर्वत्र सूच्यंगुलका असंख्यातवाँ भाग तदवस्थ है उसमें हीनाधिकता नहीं है । इस तरह प्रथम
पट्टस्थानमें पाँच वृद्धि युक्त स्थान ही होते हैं ॥३२७॥

१. म 'सूच्यंगुल' ।

मुञ्च्युर्दारिद्रं तत्रिचतुष्टयं मुपेञ्चदसंख्यातभागवृद्धिपुगतोत्कृष्टसंख्यातमात्रस्थानंगल त्रिचतुष्टयभाग-
 स्थानंगल सलुत्तं विरलल्लिय प्रक्षेपकमुं प्रक्षेपकप्रक्षेपकमेवेरदु वृद्धिगञ्जं जघन्यदोञ्चिकल्पदुत्तरलु
 लक्ष्यधरं द्विगुणमवमुमदेते दोडे प्रक्षेपकप्रक्षेपकद ह्योनगच्छदेकवारसंकलनघनप्रमितद

ज १५ ३ १ १५ ३ ऋणमं वेरिरिति ज १ ३ अपवर्तितयनमिदु ज ९ इवरोञ्जोडु ह्यं-
 १५ १५ ४ १ ४ १ १ १५ ३ २ २

५ तेगेदु घनमं वेरिरितिदु ज १ शेषापवर्तितयनं ज १ इदं प्रक्षेपकवृद्धियोडु ज ३ कूडिदोडे
 ३ २ ४

संख्यातवापस्यानानां त्रिचतुष्टयभागस्थानानि नीत्वा तत्र प्रक्षेपकः प्रक्षेपकप्रक्षेपकश्चेति वृद्धिद्वये जघन्यस्योनरि
 मुते लक्ष्यधरं द्विगुणं भवति । तद्यथा—

प्रक्षेपकप्रक्षेपकस्य ह्योनगच्छन्व्य एकवारसंकलनघनप्रमितस्य

| | | | | | | | | | | |
|--------|------------|-----|---------------------|-----|------|-----|-----------|-----|-----------------|-----|
| ज १ ३ | शेषमपरत्यं | ज ९ | एकलपं पुष्यं न्यस्य | ज १ | शेषे | ज ८ | अपवर्त्यं | ज १ | प्रक्षेपकवृद्धो | ज ३ |
| १५ ३ २ | | ३ २ | | ३ २ | | | | | | |
| | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | |

- १० संख्यात मात्र स्थानोंकां चारसे भाग देकर उनमेंसे तीन भाग प्रमाण स्थानोंके होनेपर प्रक्षे-
 पक और प्रक्षेपक-प्रक्षेपक इन दोनों वृद्धियोंको साधिक जघन्य ज्ञानमें जोड़नेपर लक्ष्यधर
 ज्ञान साधिक देना होता है । कैसे, सो कहते हैं—पूर्व वृद्धि होनेपर जो साधिक जघन्य ज्ञान
 हुआ उसमें दो बार उत्कृष्ट संख्यातसे भाग देनेपर प्रक्षेपक-प्रक्षेपक होता है । सो एक हीन
 गच्छका संकलन घन मात्र प्रक्षेपक-प्रक्षेपककी वृद्धि यहाँ करनी है । पूर्वोक्त फरण सूत्रके
 अनुसार उस प्रक्षेपक-प्रक्षेपकको एक हीन उत्कृष्ट संख्यातके तीन चौथाई भागसे और उत्कृष्ट
 संख्यातके तीन चौथाई भागसे गुणा करना और दो और एकसे भाग देना । ऐसा करनेपर
 साधिक जघन्यका एक हीन तीन गुणा उत्कृष्ट संख्यात और तीन गुणा उत्कृष्ट संख्यात तो
 गुणकार हुआ तथा दो बार उत्कृष्ट संख्यात और चार दो, चार एक भागहार हुआ । एक
 हीन सम्बन्धी ऋणराशि साधिक जघन्यको तीनका गुणकार और प्रक्षेपक संख्यात तथा
 २० वर्त्तीसको भागहार करनेपर होती है । उसको अलग रखकर शेषका अपवर्तन करनेपर
 साधिक जघन्यको नौसे गुणा और वर्त्तीससे भाग प्रमाण हुआ । साधिक जघन्यका विह
 जं देगा है सो जं ३३ हुआ ।

वित्तोपायं—यहाँ दो बार उत्कृष्ट संख्यातका गुणकार और भागहारका अपवर्तन
 किया । गुणकार तीन-तीनको परस्परमें गुणा करनेसे नौका गुणकार हुआ और चार, दो,
 २५ चार एक भागहारको परस्परमें गुणा करनेसे वर्त्तीस भागहार हुआ । ऐसे ही अन्यत्र भी
 जानना । अन्तु ।
 इस जं ३३ में एक गुणकार साधिक जघन्यका वर्त्तीसवां भाग है जं ३३ । इसको
 खटाग हतकर शेष साधिक जघन्यको आठका गुणकार और वर्त्तीसका भागहार रहा । इसका
 अपवर्तन करनेपर साधिक जघन्यका चौथा भाग रहा जं ३३ । प्रक्षेपक गच्छ प्रमाण है सो
 १० साधिक जघन्यको एक बार उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर प्रक्षेपक होता है उसको उत्कृष्ट

ज ११४१ अत्रतितनप्रयोक्तप्रयोक्त ज १६ ८१ इल्लि एकहयं घनमं वेरिरिमुकुटु
 १५।११२।५६ ११२।५६

ज १ नैगमनु ज १६।८० अपत्रतिसालु ज १५ इवं प्रयोक्तवोळु ज ४१ कूडिवोडे
 ११२।५६ ११२।५६ ५६ ५६

ज ५५ वारसितांनप्रयममनुमनुगरितनतथयसोळुडिडे लळयसंरं डिगुणमनकु ज २।
 ५६

मुनिरिगिर घनसोळु ज १ इं नोडनु संभ्रातपुगहोनमप्य श्रुणमं ज ११ ४१
 ११२।५६ १५।११२।५६

५ विविधुनमं माडि नैगमं ज १ - डिगुणतण्यरोळु कूडिवोडे साधिकमनकुय ज २ सतदसमं
 ११२।५६

वचनं वचं वचनं वचनं वचनं ज १ ८१। वचनं आनयं ज १६ ८१। एकहयं घनं पुगपुत्य
 १० ११२ ५६ ११२ ५६

ज १ नैग ज १६ ८० वराण्य ज १५ प्रयोक्ते विविधय ज ५६ आचरिते जयन्थं भवति ।
 ११२ ५६ ११२ ५६ ५६ ५६

ज १ विविधुनं वचनं वचनं वचनं वचनं डिगुण मरि । ज २ । इतमेव पुगस्युपागतघनेन

ज १ इव वचनं वचनं वचनं वचनं विविधुनीडनेल ज १ - साधिकं कुयान् ज २ ।
 ११२ ५६ १५ ११२ ५६ ११२ ५६

१० वला वचनं संख्यातका गुणकार तथा छपन, दो, छपन एकका भागदार होता है । यहाँ
 एक ही संख्या को छान मासिक जपन्यको इच्छतायोगका गुणकार और वचन संख्यात,
 एक ही वचन और छपनका भागदार मात्र है यथा जं १×४१। सो इसको अलग रररर
 १५।११२।५६

देवने ही वच वचन संख्यातका भागदान करनेपर मासिक जपन्यको सोलह सौ इच्छतासी-
 का गुणकार और एकही वचन गुण छपनका भागदार होता है यथा जं १६८१। यहाँ
 ११२×५६

१५ वचनको इच्छता योगका गुणकार के वचने परमपरमें गुणा करनेपर सोलह सौ इच्छतासी
 वचनको गुणकार दोसे गुणा करनेपर एकसौ बारह दूज तथा दूमेरे छपनको एकसे गुणा
 करे वर छपन दूज । गुणकारमें दूज अलग तथा वचनका घन मासिक जपन्यको एकसौ
 बारह गुणा करनेका भागदार मात्र होता है । नैग वचं मासिक जपन्यको सोलहसौ
 इच्छतासी गुणकार और एकसौ वचन गुणा छपनका भागदार । यथा एक श्रुणका घन
 ज १ नैग ज १६८० । इतमेव एकसौ वचनके अचरिते करनेपर मासिक जपन्यको

वचनका गुणकार और छपनका भागदार ररा जं ११। इसमें प्रयोक्तका प्रमाण जपन्यको

ज १।४९ वेरिरिसि अपवर्तितसिबोडिनितरकुं ज ३४३ इवरोळु पविमूक रूपगळं तेगेदिरि-
१५।६०० ६०००

गुडुजु ज १३ शेपमिदु ज ३३० अपवर्तितमिदु ज ११ इल्लि घन ज १३ मिदरोळु
६००० ६००० २०।१० ६०००

प्रथमद्वितीयऋणंगळु संख्यातगुणहीनंगळें दु किचिदून माडि ज १३ = मत्तं प्रक्षेपकप्रक्षेपक
६०००

ज १५।७।७ ऋणमिनितरकुं ज १।७ मिदं वेरिरिसि ज १५।७।७ अपवर्तितमिदु
१५।२।१०।१० १५।२०० १५।२००

५ ज ४९ इवरोळु मुनिन पिमुलिघनमनेकादशरूपं कूडुत्तिरलुभयघनमिदु ज ६० अपवर्तितमिदु
२०।१० २००

शेषनपारस्यं ज १५ ७।४९ अत्रत्यमूनं ज १ ४९ पुषकसंख्याप्य शेपमपवर्त्यं ज ३४३।
१५ १० ६०० १५ ६००० ६०००

इत्तरशेषरूपान्तरात् पुषकसंख्याप्य ज १३। शेपं ज ३३०। अपवर्त्यं ज ११ एकत्र संख्याप्य
६००० ६००० २० १०

अथ अत्र पुषकसंख्याप्ये ज १३ प्रथमद्वितीयऋणं संख्यातगुणहीनमिति किचिदून कृत्वा ज १३-१ एकत्र
६००० ६०००

संख्याप्य पुनः प्रथमद्वितीयोक्ते ज १५ ७।७।७ ऋणं ज १ ७। पुषकसंख्याप्य शेपं ज १५ ७ ७।
१५ २ १०।१०। १५ २०० १५ २००

- १० एक हीन गच्छका एक बार संकलन घन मात्र है सो साधिक जघन्यको दो बार उच्छ्रुत संख्यातसे भाग देनेपर प्रथोत्क-प्रथोत्क होता है। उसका पूर्व सूत्रानुसार एक हीन सात गुणा उच्छ्रुत संख्यातका तथा सात गुणा उच्छ्रुत संख्यातका गुणकार और दस, दो तथा दस एक भागहार हुआ। पिमुलि दो हीन गच्छका दो बार संकलित घन मात्र होती है। सो साधिक जघन्यको तीन बार उच्छ्रुत संख्यातका भाग देनेसे पिमुली होती है। उसको पूर्व सूत्रानुसार
- ११ दो हीन और मानसे गुणित उच्छ्रुत संख्यात और एक हीन तथा सातसे गुणित उच्छ्रुत संख्यात व सात गुणित उच्छ्रुत संख्यात गुणकार तथा दस, तीन, दस दो, दस एक भागहार होते हैं। इनमें पिमुलीके गुणकारमें दो कम किये थे उस सम्यन्धी प्रथम ऋणका प्रमाण साधिक जघन्यको दोका और एक हीन तथा सातसे गुणित उच्छ्रुत संख्यातका तथा सात गुणा उच्छ्रुत संख्यातका गुणकार तथा दो बार उच्छ्रुत संख्यातका और छहका और तीन
- १२ बार दसका भागहार करनेपर होता है। उसको अलग स्थापित करके शेपका अपवर्तन करने पर साधिक जघन्यको एक हीन सात गुणा उच्छ्रुत संख्यातका तथा उनचासका तो गुणकार हुआ और उच्छ्रुत संख्यात छह हजारका भागहार होता है यहाँ गुणकारमें एक हीन है।

समासज्ञानोत्कृष्टविकल्पद मेले एकाक्षरमे वृद्धमागुत्तरलु संघातश्रुतज्ञानमवकुं- प १००० १ मिदुबुं
 चतुर्गतिगोत्रोद्बु गतिस्वरूपनिरूपकमध्यमपदसमुदायरूपसंघातश्रवणजनितार्थज्ञानमवकुं ।

अनंतरं प्रतिपत्तिरुध्रुतज्ञानस्वरूपं पेच्छदं :-

एककदरगदिणिरूपसंघादमुदादु उवरि पुच्वं वा ।

वण्णे संसेज्जे संघादे उड्ढम्मि पडियत्ती ॥३३८॥

एकतमगतिनिरूपकसंघातश्रुताशुपरि पूष्वंवत् । यणं संक्षेपे संघाते वृद्धे प्रतिपत्तिः ॥

पूर्वोक्तप्रमाणमप्य एकतमगतिनिरूपकसंघातश्रुतव मेले पूष्वंपरिपार्ष्टियदमेकैकवर्णवृद्धि-
 सहचरितमप्येतेरुपदवृद्धिरुर्मादिदं संघपातसहस्रपदमात्रसंघातंगळ संख्यातसहस्रप्रमितंगळ हपोन-
 संघातसमासज्ञानविकल्पंगळ सलुत्तं विरलु तच्चरमसंघातोत्कृष्टविकल्पद प १०००१ । १००० १-१
 १० वृद्धि मेले एकाक्षरवृद्धिमैलेपागुत्तरलु प्रतिपत्तिकर्मं ब ध्रुतज्ञानमवकुं १६ = १०००।१।१०००१ ।
 इदुबुं नारकादिचतुर्गतिस्वरूपसविस्तरप्ररूपकप्रतिपत्तिहास्यप्रयं श्रवणसंजातार्थज्ञानमं दितु
 निरुधेगल्पदुत्तु ।

अनंतरमनुयोगश्रुतज्ञानं पेच्छदरु-

१५ १६ = १००१ १ तच्छदगुणां गतीनां मध्ये एकतमगतिसंख्यानिरूपकमध्यमपदसमुदायरूपसंघातश्रवणजनितार्थ-
 ज्ञान ॥३३७॥ अथ प्रतिपत्तिरुध्रुतज्ञानस्वरूपं निरूपयति-

पूर्वोक्तप्रमाणस्य एकतमगतिनिरूपकमथानश्रुतस्य उपरि पूर्वोक्तप्रकारेण एकैकवर्णवृद्धिसहचरितैकै-
 पदवृद्धिमैले संघातसहस्रपदसंघातेषु संख्यातगुणेषु स्तोत्रेषु संघातसमासज्ञानविकल्पेषु गतेषु तच्चरमस्य
 संघातसमासज्ञानोत्कृष्टविकल्पस्य १६ = १००० १ । १००० १-१ एतदुपरि एकस्मिन्नक्षरे वृद्धे सति प्रति-
 २० पत्तिर्दं नाम ध्रुतज्ञानं भवति १६ = १००० १ । १००० १ । तच्च नारकादिचतुर्गतिस्वरूपसविस्तरप्ररूपक-
 प्रतिपत्तिहास्यप्रयं श्रवणजनितार्थज्ञानमिति निरुच्येनम्यम् ॥३३८॥ अथानुयोगश्रुतज्ञानं प्ररूपयति-

१५ दे । इम प्रकार प्रत्येक एक पदके अक्षर मात्र विकल्पके धीवनेपर पदज्ञानके चतुर्गुणे-पंचगुने
 होते-होते संख्यात हजार गुणित पदमात्र पदसमाम ज्ञानके विकल्पोंमें एक अक्षर घटानेपर
 जो प्रमाण रहे वने पदसमाम ज्ञानके विकल्प होते हैं । अन्तिम पदसमाम ज्ञानके उत्कृष्ट
 २५ विकल्पके ऊपर एक अक्षर घटानेपर संघात श्रुतज्ञान होता है । सो चार गतियोंमें-से किसी
 एक गतिके स्वरूपका कथन करनेवाले मध्यमपदके समुदायरूप संघात श्रुतज्ञानके सुननेसे जो
 अर्थज्ञान होगा दे वह संघात श्रुतज्ञान है ॥३३७॥

अथ प्रतिपत्तिरुध्रुतज्ञानका स्वरूप कहते हैं-

१० पूर्वोक्त प्रमाण किमी एक गतिके निरूपक संघात श्रुतके ऊपर पूर्वोक्त प्रकारसे एक-
 एक अक्षरको वृद्धिपूर्वक एक-एक पदको वृद्धिके क्रमसे संख्यात हजार पदप्रमाण संख्यात
 हजार संघातमें होते हैं । उनमें एक अक्षर कम करनेपर संघात श्रुतज्ञानके विकल्प होते हैं ।
 इनके अन्तिम संघात समामके उत्कृष्ट विकल्पके ऊपर एक अक्षर घटानेपर प्रतिपत्ति नामक
 अर्थज्ञान होता है । नारक आदि चार गतियोंके स्वरूपका विचारसे कथन करनेवाले
 मध्यमपदके समुदायरूप संघात श्रुतज्ञानके सुननेसे जो अर्थज्ञान प्रतिपत्तिरुध्रुतज्ञान होता है ॥३३८॥

१५ अथ अनुयोग श्रुतज्ञानको कहते हैं-

अहियारो पाहुडयं एयट्टो पाहुडस्स अहियारो ।
पाहुडपाहुडणामं होदित्ति जिणेहि णिद्धिट्ठं ॥३४१॥

अधिकारः प्राभूतकर्मकार्यः प्राभूतस्याधिकारः प्राभूतकप्राभूतकनामा भवतीति जिनेन्निद्धिट्ठं ॥

९ वस्तुधेयं धृतज्ञानद अधिकारः प्राभूतकर्मधेरुभेकाल्यंगत्तु । प्राभूतद अधिकारं प्राभूतक प्राभूतकर्मधु बुदु अधिकारणदिदमेकाल्यंगप्य्यायगध्वमेदितु जिनेद्रभट्टारकरिदं पेत्तल्पट्टुदु । स्वशब्धि- विरचित मत्तं बुदत्तं ।

द्विकारप्राभूतानंतरं प्राभूतकस्वरूपं पेत्तदपरः—

दुगवारपाहुडादो उवारिं वण्णे कमेण चउवीसे ।

१० दुगवारपाहुडे संउद्धे खलु होदि पाहुडयं ॥३४२॥

द्विकारप्राभूतगतुपरि यणे क्रमेण चतुर्विधगती । द्विकारप्राभूते संवृद्धे खलु भवति प्राभूतकं ॥

द्विकारप्राभूतकदिदं मेले तदुपरि पूर्वोक्तकर्मदिदं प्रत्येकमेकैकवर्णंवृद्धिसहचरितपदादि- बुद्धिगतिदं चतुर्विधगतिप्राभूतकप्राभूतकंगत्तु यदंगळागुत्तरलु रूपोन्तावग्मात्रंगत्तु प्राभूतकप्राभूतक- १५ सामागज्ञानविकल्पंगत्तु तत्तुसं विरलु तच्चरमोत्कृष्ट विकल्पद मेले एकाक्षरवृद्धियागुत्तरलु प्राभूतकमेधं धृतज्ञानमकत्तं ।

अनंतरं वस्तुधेयं धृतज्ञानस्वरूपं पेत्तदयं—

वस्तुधेयं धृतज्ञानस्य अधिकारः प्राभूतकं वेत्ति दो एकाधी । प्राभूतकस्य अधिकारोऽपि प्राभूतक- प्राभूतकनामा अस्ति तस्य कारणात् एकार्थः पयोरस्यस्य इति जिनेः—अर्हत्तुद्वारकैः निर्दिष्टं न स्वशब्धिविरचित- २० नियमं ॥३४१॥ द्विकारप्राभूतानंतरं प्राभूतकस्वरूपं प्रकथयति—

द्विकारप्राभूतकानंतरं तयोपरि पूर्वोक्तक्रमेण प्रत्येकमेकैकवर्णंवृद्धिसहचरितपदादिवृद्धिभिः चतुर्विधगति- प्राभूतकप्राभूतकंगत्तु बुद्धेनु क्रमेणतदवगमनेनु प्राभूतकप्राभूतकज्ञानविकल्पेनु गतेनु तच्चरमसमागोत्कृष्टविकल्पस्य उत्तरं एकाक्षरवृद्धौ क्षया प्राभूतकं नाम धृतज्ञानं भवति ॥३४२॥ अथ वस्तुधेयं धृतज्ञानस्वरूपमाह—

समाम ज्ञानके विचरन् होते हैं । उसके अन्तिम अनुयोग समासके उत्कृष्ट विकल्पके ऊपर एक अक्षरके बदनेपर प्राभूतक-प्राभूतक नामक धृतज्ञान होता है ॥३४०॥

२१ वस्तु नामक धृतज्ञानका अधिकार कहां या प्राभूतक कहां, दोनोंका एक ही अर्थ है । प्राभूतकका अधिकार भी प्राभूतक-प्राभूतक नामक होना है । ऐसा अर्हन्त देखने कहा है । स्वशब्धि रचित नहीं है ॥३४१॥

अथ प्राभूतकका स्वरूप कहते हैं—

प्राभूतक-प्राभूतकमे आगे उसके ऊपर पूर्वोक्त प्रकारसे प्रत्येक एक-एक अक्षरकी १० वृद्धिके क्रमसे पर आदिकी वृद्धिके होते-होते चौथीम प्राभूतक प्राभूतकोंकी वृद्धिमें एक अक्षर बदनेपर प्राभूतक-प्राभूतक समामके भेद होते हैं । उसके अन्तिम भेदमें एक अक्षर बदनेपर प्राभूतक धृतज्ञान होता है । उसके ऊपर पूर्वोक्त क्रमसे एक-एक अक्षरकी वृद्धिके क्रमसे हीम प्राभूतक नामक अधिकारोंके बदनेपर प्राभूतक नामक धृतज्ञान होता है । उसमें एक अक्षर कम करनेपर करने मात्र प्राभूतक समाम ज्ञानके विकल्प ११ होते हैं । उसके अन्तिम प्राभूतक समामके उत्कृष्ट विकल्पके ऊपर एक अक्षर बदनेपर

वस्याख्यां एकदेशेन संत्यस्मिन्निति वस्तुपूर्वाधिकारः । पूरयति श्रुताख्यान् संविभर्तीति पूर । सं
संगृह्य पर्यायादीनि पूर्वपर्यन्तानि स्वोक्त्य अत्यन्ते क्षिप्यन्ते विकल्प्यन्ते इति समासाः । पर्याय-
ज्ञानवत्तानुत्तरविकल्पंगत्त्वं पर्यायसमासंगत्त्वं । अक्षरज्ञानवत्तानुत्तरविकल्पंगत्त्वं अक्षरसमासंगत्त्वं इत्यु
मुंबेल्लेडेयोक्तं पदसमासादिगत्त्वं योग्यंगत्त्वं ।

- ५ इल्लि पूर्वंगत्त्वं १४ वस्तुगत्त्वं १९५ प्राभूतंगत्त्वं ३९०० द्विक्वारप्राभूतंगत्त्वं ९३६००
अनुयोगंगत्त्वं ३७४४०० प्रतिपत्तिकसंघातपदंगत्त्वं संख्यातसहस्रगुणितक्रमंगत्त्वं । एकपदाक्षरंगत्त्वं
१६३४८३०७८८८ समस्ताक्षरंगत्त्वं ह्योनेकद्वुप्रमितंगत्त्वं १८४४६७४४०७३७०९५११६१५ ईश्वर-
गत्त्वेकपदाक्षरंगत्त्वं प्रमाणिसुत्तं विरलु द्वादशांगपदप्रमाणमशुभेदु लब्धम वेत्त्यं :—

चारुत्तरसयकोडी तेसीदी तह य हांति लक्षणां ।

- १० अट्टावण्णसहस्सा पंचेव पदाणि अंगाणं ॥३५०॥

द्वादशोत्तरं शतं कोट्यष्टशतीतिस्तथा च भवति लक्षणापट्टपंचाशन् सहास्राणि पंचेव
पदान्यानां ॥

- १५ भूतं परिपूर्णं प्राभूतं वस्तुनोऽधिकारः, प्राभूतमिति संज्ञा वस्यास्तीति प्राभूतकं, प्राभूतस्याधिकारः प्राभूत-
प्राभूतकम् । वसन्ति पूर्वमहागवस्य अर्थाः एकदेशेन सन्त्यस्मिन्निति वस्तु । पूर्वाधिकारः पूरयति श्रुताख्यान्
संविभर्तीति पूर्वम् । सं-संगृह्य पर्यायादीनि पूर्वपर्यन्तानि स्वोक्त्य अत्यन्ते क्षिप्यन्ते विकल्प्यन्ते इति समासाः ।
पर्यायज्ञानादुत्तरविकल्पाः पर्यायसमासाः । अक्षरज्ञानादुत्तरविकल्पा अक्षरसमासाः । एवमप्रेरिण सर्वत्र
पदसमासादयो योग्याः । अत्र पूर्वाणि १४, वस्तूनि १९५, प्राभूतानि ३९००, द्विक्वारप्राभूतानि ९३६००,
अनुयोगाः ३७४४००, प्रतिपत्तिकसंघातपदानि संख्यातसहस्रगुणितक्रमानि एकपदाक्षराणि १६३४८३०७८८८८,
समस्ताक्षराणि रूपोनेकद्वुप्रमितानि १८४४६७४४०७३७०९५५११६१५ । एनेष्वक्षरेषु एकपदाक्षरैः प्रमाणितेषु
२० परलब्धं तद्द्वादशाङ्गपदप्रमाणं शेषमङ्गवाह्यक्षराणि ॥३४८-३४९॥ तत्र प्रथमं तत्पदप्रमाणमाह—

- सम्यन्धी अर्थोसि जो 'आभूत' परिपूर्ण है वह प्राभूत है । और प्राभूत संज्ञा होनेसे प्राभूतक
है । प्राभूतकके अधिकारको प्राभूतक-प्राभूतक कहते हैं । जिसमें पूर्व नामक महासमुद्रके अर्थ
'वसन्ति' एक देशसे रहते हैं वह वस्तु है । यह पूर्वोका अधिकार है । श्रुतके अर्थोका 'पूर-
यति' पोषण करता है वह पूर्व है । सं अर्थात् पर्यायसे लेकर पूर्व पर्यन्त भेदोंको 'अत्यन्ते'
अवनता है वह समास है । पर्याय ज्ञानसे उत्तर भेद पर्याय समास हैं, अक्षर ज्ञानसे उत्तर
२५ भेद अक्षर समास हैं इसी प्रकार आगे भी पदसमास आदिकी योजना कर लेना । पूर्व चौदह
हैं । वस्तु एक सौ पंचानवे हैं । प्राभूतक उनतालीस सौ हैं । प्राभूतक-प्राभूतक तिरानवे हजार
एह सौ हैं । अनुयोग तीन लाख चौदह हजार चार सौ हैं । प्रतिपत्तिक, संघात और पद
उत्तरोत्तर क्रमसे संख्यात हजार गुणित हैं । एक पदके अक्षर सोलह सौ चौतीस कोटि,
३० तेरासौ लाख सत्त हजार आठ सौ अठासी है । समस्त अक्षर एक कम एकट्ठी प्रमाण
१८४४६७४४०७३७०९५५०६१५ हैं । इन अक्षरोंमें एक पदके अक्षरोंसे भाग देनेपर जो लब्ध
है ॥३४८-३४९॥

पहले द्वादशांगके पदोंकी संख्या कहते हैं—

ओ अहो व्यंजनानि अर्धमात्रंगण्य व्यंजनंगण्यप्रथमिस्त्रिंशत्प्रमितंगण्यप्यु ३३ स्वरः स्वरंगण्ये द्विन्निमात्रंगण्य सप्तविंशतिः सप्तविंशतिप्रमितंगण्य २७ योगवाहाः योगवाहंगण्य चत्वारदश नात्कु ४ अप्यु हुं मूलवर्णंगण्यचतुःषष्टिप्रमितंगण्यप्यु ६ ओ अहो भव्या नोनरिषे दितनादिनिघनपरमाण्व - दोः प्रसिद्धंगण्य प्रकारदिदमे पेठल्पदुपु ।

व्यग्यते स्फुटीक्रियतेऽर्थो वैस्तानि व्यंजनानि । स्वरस्यत्यं कथयंतीति स्वरः । योगमन्या-
 धरसंयोगं वहंतीति योगवाहाः । मूलानि संयुक्तोत्तरवर्णात्पतिकारणभूता वर्णा मूलवर्णाः एद्वितु
 समासात्पूर्वलेनिसंयुक्तमागिषे चतुःषष्टिवर्णंगण्य ग्राह्यंगण्यप्यु । ई वर्णवर्के संस्कृतदोः वीर्णा-
 भायमादोऽमनुरणदोः देशांतर भाष्यंगण्योऽं सद्भावमवकुं । ए ऐ ओ औ एंवी नात्कवर्के संस्कृत-
 दोः ह्रस्वाभायमादोऽं प्राकृतदोः देशांतरभाष्यंगण्योऽं सद्भावमवकुं ।

चउमट्टिपदं विरलिय दुगं च दारुण संगुणं किञ्चा ।

रुऊणं च कए पुण सुदणाणस्सक्खरा हंति ॥३५३॥

पनुःषष्टिपदं विरलित्या द्विकं च दत्वा संगुणं कृत्वा । रूपोर्न च कृते पुनः श्रुतज्ञानस्या-
 क्षरानि भवति ॥

ओ-प्रहो भव्य । अर्धमात्राणि क् ए ग् घ् ङ् । च् छ् ज् झ् ञ् । ट् ठ् ड् ढ् ण् ।
 १५ ए ए ६ ए न् । ए ए ६ भ् म् । ए र् ल् व् वा ए स् ह् । इत्येतानि प्रथमिस्त्रिंशत् ३३ । स्वरः एकद्वि-
 मात्राः । अ इ उ ऋ ए ऐ ओ औ इत्येते नव, प्रत्येकं ह्रस्वदीर्घप्लुतभेदे द्विभिर्गुणिताः अ आ आ ३, इ ई
 ई ३, उ ऊ ऊ ३, ऋ ऋ ऋ ३, ए ऐ ए ३, ऐ १ ऐ २ ऐ ३, ऐ १ ऐ २ ऐ ३, ओ १ ओ २ ओ ३,
 औ १ औ २ औ ३ इत्येते सप्तविंशति २७ । योगवाहाः अं अः ङ्क ङ्प इत्येते चत्वारः ४, एवं
 मिलित्वा मूलवर्णवच्यु षष्टि ६४ । मयानादिनिघने परमाण्वे प्रसिद्धास्तथैवान्न भगिताः संज्ञानीहि । व्यग्यते
 २० स्फुटीक्रियते अर्थो वैस्तानि व्यञ्जनानि । स्वरन्ति-अर्थं कथयन्तीति स्वरः । योग-अन्याधारसंयोगं वहन्तीति
 योगवाहाः । मूलानि संयुक्तोत्तरवर्णात्पतिकारणानि वर्णा मूलवर्णा इति समासात्पूर्वलेन असंयुक्ता एव
 चतुःषष्टिर्गण्ये लम्बन्ते । इवर्णाः मरुते दीर्घो नास्ति तथापि अनुकरणे देशान्तरभाषाया चास्ति । ए ऐ ओ
 औ इति चत्वारोऽपि मरुते ह्रस्वा न गन्ति तथापि प्राकृते देशान्तरभाषायां च सन्ति ॥३५३॥

'ओ' अर्थात् हे भव्य ! अर्धमात्रा जिनमें होता है ऐसे सब व्यंजन तैंतीस हैं—

२५ क् ए ग् घ् ङ् । च् छ् ज् झ् ञ् । ट् ठ् ड् ढ् ण् । न् ध् द् ध् न् । प् फ् ब् भ् म् । य् र्
 ल् व् न् ए स् ह् । ए-अ-ओ-अर्धमात्रास्व स्वर सत्ताईस होते हैं—अ, इ उ ऋ ए ऐ ओ
 औ ये नौ । प्रत्येकको द्वय, दीर्घ और प्लुत तीनसे गुणा करनेपर सत्ताईस होते हैं । अ आ
 आ ३ । इ ई ई ३ । उ ऊ ऊ ३ । ऋ ऋ ऋ ३ । ए ऐ ए ३ । ऐ १ ऐ २ ऐ ३ । ऐ १ ऐ २
 ऐ ३ । ओ १ ओ २ ओ ३ । औ १ औ २ औ ३ । अं अः ङ्क ङ्प ये चार योगवाह । इस
 ३० प्रकार सब मिलकर मूल अक्षर चौंसठ हैं । जैसा अनादिनिघन परमाण्वमें प्रसिद्ध है
 वैसा ही यहाँ कहे हैं ।

'व्यग्यते' निकके द्वारा अर्थ प्रकट दिया जाना है वे व्यंजन हैं । 'स्वरन्ति' जो अर्थको
 कहने के लिये स्वर है । योग अर्थात् अन्य अक्षरोंके संयोगको जो 'वहन्ति' वहन करते हैं वे
 योगवाह हैं । 'मूल' अर्थात् संयुक्त उत्तर वर्णोंकी उत्पत्तिके कारण वर्ण मूल वर्ण हैं । इस
 ३५ समासके अर्थके कारण असंयुक्त अक्षर ही चौंसठ है यह ज्ञान होता है । लु वर्ण संस्कृत भाषा-
 में दीर्घ नहीं है, तथापि देशान्तरको भाषामें है । ए ऐ ओ औ ये चारों संस्कृतमें ह्रस्व नहीं
 हैं । तथापि मरुत और देशान्तरामें हैं ॥३५३॥

इत्येकद्वित्रिसंयोगादिचतुःषष्टिसंयोगपर्यन्तमप्य संयोगाक्षरसंजनिताक्षरंगत्वं संख्येष्वप्युदारं ना
 एकद्वित्रिसंयोगाक्षरंगत्विमुत्पत्तिक्रमं तोरल्पदुर्गुमदेते दोषे व्यंजनंगत्वं त्रयसंज्ञाप्रमितंगत्वं । स्वरंगत्वं
 समाविशतिप्रमितंगत्वं । योगवर्हंगत्वं चतुःप्रमितंगत्वं मूलवर्णंगत्वं चतुःषष्टिप्रमितंगत्वं क्रमविद-
 मरुत्तनाल्केडेयोः क्षेत्रे क्षेत्रे तिर्य्यग्वर्णदिवं स्यापिसि प्रत्येकं द्विसंयोगादिगत्वं मात्स्वपुदंते दोषे कवर्ण-
 दोः प्रत्येकभंगमो देयकृत् १ । द्विसंयोगमुक्तं खवर्णदोः प्रत्येकभंगदु १ । द्विसंयोगभंग १ । अंतु
 २ । गवर्णदोः प्र १ । द्वि २ त्रि ३ । अंतु ४ । घवर्णदोः प्र १ । द्वि २ त्रि ३ च १ अंतु ८ । ङ
 वर्णदोः प्र १ द्वि ४ त्रि ६ च ४ पं १ अंतु १६ । च वर्णदोः प्र १ द्वि ५ त्रि १० च १० पं ५
 प १ अंतु ३२ । छवर्णदोः प्र १ द्वि ६ त्रि १५ च २० पं १५ प ६ सप्त १ अंतु ६४ । जवर्णदोः
 प्र १ द्वि ७ त्रि २१ च ३५ पं ३५ प २१ सप्त ७ अष्ट १ अंतु १२८ । झवर्णदोः प्र १ द्वि ८ त्रि २८

रूपेने वृते सति श्रुतज्ञानस्य द्वादशाङ्गप्रकीर्णकरूपश्रुतस्कन्धस्य द्रव्यश्रुतस्य अपुनरुक्ताशराणि भवन्ति ।
 वाक्यार्थप्रतीत्यर्थं गृहीतानां पुनरुक्ताशराणां संख्यानिपमाभावात् ॥३५३॥ तदपुनरुक्ताशरप्रमाणं क्रियदिति
 चेदाह—

एकाष्टचतुश्चतुःषष्टिसकं चतुश्चतुःशून्यसप्तत्रिकसप्तसप्तान्यं नवपञ्चपञ्च एकं षट्कैकद्व पञ्चकं च
 इत्येकाद्द्विषड्वाद्वावसानविशतिस्थानात्मकद्विरूपवर्गधारात्पन्नस्वोनपष्टवर्गप्रमाणाशराणि भवन्ति—
 १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ । एतानि अक्षराणि एकद्वित्रिसंयोगादीनि चतुषष्टिसंयोगपर्यन्तानि सन्ति
 तेषामुत्पत्तिक्रमो दश्यते उद्यथा—उक्तमूलवर्णचतुःषष्टि तिर्य्यग्वर्णद्वयत्वा लिखित्वा तत्र कवर्णं प्रत्येकभङ्गे एकः १ ।
 द्विसंयोगो नास्ति । खवर्णं प्रत्येकभङ्गः १ द्विसंयोगभङ्गः १ एवं २ । गवर्णं प्र १ द्वि २ त्रि १ एवं ४ ।
 घवर्णं प्र १ द्वि ३ त्रि ३ च १ एवं ८ । ङवर्णं प्र १ द्वि ४ त्रि ६ च ४ पं १ एवं १६ । चवर्णं प्र १ द्वि ५
 त्रि १० च १० पं ५ प १ एवं ३२ । छवर्णं प्र १ द्वि ६ त्रि १५ च २० पं १५ प ६ सप्त १ एवं ६४ ।
 जवर्णं प्र १ द्वि ७ त्रि २१ च ३५ पं ३५ प २१ सप्त ७ अष्ट १ एवं १२८ । झवर्णं प्र १ द्वि ८ त्रि २८

दोका अंक देकर परस्परमें गुणा करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमें एक कम करनेपर द्वादशांग
 और प्रकीर्णक श्रुतस्कन्ध रूप द्रव्य श्रुतके अपुनरुक् अक्षर होते हैं । वाक्यके अर्थका ज्ञान
 करानेके लिए गृहीत पुनरुक् अक्षरोंकी संख्याका कोई नियम नहीं है ॥३५३॥

एक आठ चार चार छह सात चार चार शून्य सात तीन सात शून्य नौ पाँच पाँच
 एक छह एक पाँच १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ इस प्रकार एक अंकसे लेकर पाँच अंक
 पर्यन्त बीस स्थानरूप अपुनरुक् अक्षर होते हैं । सो द्विरूप वर्गधारामें उत्पन्न एक हीन छठे
 वर्ग प्रमाण हैं । ये अक्षर एक संयोगी दो संयोगी तीन संयोगी आदि चौंसठ संयोग पर्यन्त
 होते हैं । उनकी दृष्टिका क्रम दिखलाते हैं—

उक्त मूल वर्ण चौंसठ एक पंक्तिमें लिखें । उनमेंसे कवर्णमें प्रत्येक भंग एक है ।
 द्विसंयोगी आदि नहीं है । खवर्णमें प्रत्येक भंग एक द्विसंयोगी भंग एक है । इस प्रकार दो भंग
 हैं । गवर्णमें प्रत्येक एक, दो संयोगी दो, तीन संयोगी एक, इस तरह चार भंग हैं । घवर्णमें
 प्रत्येक एक, दो संयोगी तीन, तीन संयोगी तीन, चार संयोगी एक, इस तरह आठ भंग हैं ।
 ङवर्णमें प्रत्येक एक, दो संयोगी चार, तीन संयोगी छह, चार संयोगी चार, पाँच संयोगी एक,
 इस तरह सोलह भंग हैं । चवर्णमें प्रत्येक एक, दो संयोगी पाँच, त्रिसंयोगी दस, चार
 संयोगी दस, पाँच संयोगी पाँच, छह संयोगी एक, इस तरह बत्तीस भंग हैं । छवर्णमें प्रत्येक
 एक, दो संयोगी छह, तीन संयोगी पन्द्रह, चार संयोगी बीस, पाँच संयोगी पन्द्रह, छह संयोगी
 छह, सात संयोगी एक, इस तरह चौंसठ भंग हैं । जवर्णमें प्रत्येक एक दो, संयोगी सात, तीन

प्रमा त्रिसंयोगचतुःसंयोगपंचसंयोगादित्स्वसंभवसंयोगं च प्रमाणं रूपाधिकवारहीनपदसंकलितं भवति । ह्यपाधिकैकद्वित्रिवारान्दित्स्वसंभवसंकलनसंख्या १ १ १ १ १ १ १ १ १ विहीनविवक्षित-
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८

पदं :—१०।-२।१०।-३।१०।-४।१०।-५।१०।-६।१०।-७।१०।-८।१०।-९।
ई पदं गच्छ तत्तद्वारसंकलितं यावत्तावद्भवति । त्रियोगं च ह्यपाधिकैकवारसंकलनसंख्याहीनपद-
देकवारसंकलितमवकुं १०-२।१०१ अपवर्तितमिदु । ३६। चतुःसंयोगं च त्रिरूपोपपदद्विकवार-

२ १

संकलितमवकुं ७।८।९ अपवर्तितमिदु । ८४। पंचसंयोगं च त्रिरूपोपपदत्रिवारसंकलितमवकुं
३।२।१

६।७।८।९ अपवर्तितमिदु । १२६। षट्संयोगं च त्रिरूपोपपदचतुर्वारसंकलितमवकुं
४।३।२।१

५।६।७।८।९ अपवर्तितमिदु-१२६ । सप्तसंयोगं च त्रिरूपोपपदपंचवारसंकलितमवकुं
५।४।३।२।१

त्रिवारसंयोगस्य यावत्तावद्भवति । यथा दशमे अवर्गे त्रिसंयोगाः द्विरूपोपपदस्य एकवारसंकलनमात्राः—
१०-२ । १०-१ अपवर्तिताः ३६ षतुःसंयोगाः त्रिरूपोपपदस्य द्विकवारसंकलनमात्राः—
७ १ १

७।८।९ अपवर्तिताः ८४। पञ्चसंयोगाः त्रिरूपोपपदस्य त्रिकवारसंकलनमात्राः ६।७।८।९
३।२।१ ४।३।२।१

अपवर्तिताः १२६। षट्संयोगाः चतुर्वारसंकलनमात्राः ५।६।७।८।९ अपवर्तिताः
५।४।३।२।१

आदिका प्रमाण यथाक्रम एक अधिक वार हीन गच्छका संकलन धन मात्र है । जितनी वार
संकलन हो उतने वारोंकी संख्यामें एक अधिक करके और उसे विवक्षित गच्छमें घटानेपर
जो शेष प्रमाण रहे उतनेका संकलन करना चाहिए । जैसे दसवें अवर्णमें त्रिसंयोगी भंग
लानेके लिए एक वार संकलनका प्रमाण एक होनेसे उसमें एक अधिक करनेपर दो हुए । इस
दोको गच्छ दशमेंसे घटानेपर शेष आठ रहे । इस आठका एक वार संकलन धन मात्र
त्रियोगी भंग होते हैं । संकलन धन लानेके लिए कहे गये करणमूत्रके अनुसार विवक्षित
दसवें अवर्णमें प्रत्येक भंग एक, द्विसंयोगी एक कम गच्छ प्रमाण नौ, त्रिसंयोगी भंग दो
हीन गच्छ प्रमाण आठका एक वार संकलन धन मात्र हैं । सो संकलन धन लानेके सूत्रके
धनुमार आठ और नौको दो और एकमें भाग देकर अपवर्तन करनेपर छत्तीस होते हैं ।
अर्धान् आठ और नौको परस्परमें गुणा करनेपर वृत्तर हुए । और दो-एकको परस्परमें गुणा
करनेपर दो हुए । दोमें बहनामें भाग देनेपर छत्तीस रहते हैं । इसी तरह चतुःसंयोगी भंग
हीन गच्छका दो वार संकलन धन मात्र हैं । सो मात्र, आठ, नौको तीन, दो, एकका
भाग देनेपर ७।८।९। अपवर्तन करनेपर चौरामी होते हैं । पंचसंयोगी भंग चार हीन
३।२।१।

गच्छका तीन वार संकलन धन मात्र हैं । सो छह, मात्र, आठ, नौको चार, तीन, दो, एकसे
भाग देकर ६।७।८।९। अपवर्तन करनेपर एक ही छत्रोम होते हैं । षट्संयोगी भंग
५।४।३।२।१।

संकलनवारसंख्याहीनपदगण ६४-२।-६४-३।-६४-४। ६४-५। ००००। ६-४-६३ तत्तद्वार-
संकलितं यावत्तावद्भवति एतदितु त्रिसंयोगंगञ्जु ह्यधिकैकवारसंकलनसंख्याहीनपदव एकवार-
संकलितमङ्कुं ६४-२। ६४। १ अपवर्तितमिदु १९५३ चतुःसंयोगंगञ्जु त्रिहूपोनपदद्विकवार-

संकलितमङ्कुं ६ १ ६२ ६३ अपवर्तितमिदु ३९७११ पंचसंयोगंगञ्जु चतुहूपोनपदत्रिवारसंकलित-

मङ्कुं ६०। ६१। ६२ अपवर्तितमिदु ५९५६६५ षट्संयोगंगञ्जु पंचहूपोनपदचतुर्वारसंकलित-

मङ्कुं ५९। ६०। ६१। ६२। ६३ अपवर्तितमिदु ७०२८८४७ सप्तसंयोगंगञ्जु षड्हूपोनपदपंच-

वारसंकलितमङ्कुं ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३ अपवर्तितमिदु गुणितमिदु ६७९४५५२१

अष्टसंयोगंगञ्जु सप्तहूपोनपद षड्वारसंकलितमङ्कुं ५७। ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३

अपवर्तितगुणितमिदु ५५३२७०६७१ नवसंयोगंगञ्जु अष्टहूपोनपदसप्तवारसंकलितमङ्कुं अपवर्तिते-

१४-२। १४-१ अपवर्तितगुणित १९५३। चतुःसंयोगाः त्रिहूपोनपदस्य द्विकवारसंकलनमात्राः

११। १२। १३। अपवर्तितः ५९५६६५। षट्संयोगाः पञ्चहूपोनपदस्य चतुर्वारसंकलनमात्राः

५९। ६०। ६१। ६२। ६३ अपवर्तितः ७०२८८४७। सप्तसंयोगाः षड्हूपोनपदस्य षड्वारसंकलन-

मात्राः। अपवर्तितः ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३। ६७९४५५२१। अष्टसंयोगाः सप्तहूपोन-

पदस्य षड्वारसंकलनमात्राः। ५७। ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३। अपवर्तितः ५५३२७०६७१।

१५ स्थानोर्मै जानना। अन्तर्के चौसठवें स्थानमें प्रत्येक भंग एक, द्विसंयोगी भंग एक हीन गच्छ मात्र त्रिसठ, त्रिसंयोगी भंग दो हीन गच्छका एक बार संकलन घन मात्र। सो यासठ और त्रिसठको दो और एकका भाग देनेपर चन्नीस सौ तिरपन होते हैं। तथा चतुःसंयोगी भंग तीन हीन गच्छका दो बार संकलन घन मात्र। सो इकसठ, यासठ, त्रिसठको तीन, दो, एकका भाग देनेपर चन्नीसठ हजार मात्र सौ ग्यारह भंग हाते हैं। पंच संयोगी भंग चार हीन गच्छका तीन बार संकलन घन मात्र। सो माठ, इकसठ, यासठ, त्रिसठको चार, तीन, दो, एकका भाग देनेपर पाँच लाख पंचचान्ने हजार छह सौ पैंसठ होते हैं। छह संयोगी भंग पाँच हीन गच्छका चार बार संकलन घन मात्र। सो उनसठ, साठ, इकसठ, यासठ, त्रिसठको पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग देनेपर मत्तर लाख अठाईस हजार आठ सौ ग्यारह होते हैं। मत्त संयोगी भंग छह हीन गच्छका पाँच बार संकलन मात्र। सो अठारह, उनसठ, माठ, इकसठ, यासठ, त्रिसठको छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग देनेपर छह करोड़ चन्नीसठ लाख पैंचाठीस हजार पाँच सौ इकसठ होते हैं। आठ संयोगी

१६ अठारह, उनसठ, माठ, इकसठ, यासठ, त्रिसठको छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकका भाग देनेपर छह करोड़ चन्नीसठ लाख पैंचाठीस हजार पाँच सौ इकसठ होते हैं। आठ संयोगी

१ = [५८०२९०१]।

द्रव्यभूतमनधिकरित्तिको षे निरुक्तिं प्रतिपाद्यात्यर्थं पदसंख्याविशेषंग्रन्थं वि
 पूर्यंगळोऽप्ररूपणे साडल्पदुगुमेके दोडे भावभूतवोऽनु निरुक्त्याद्यसंभवमप्युर्वारिदं । इ
 गळ मोदलोळाचारांगं पेरळपट्टुदेके दोडे मोशहेतुगळप्य संवरनिर्जराकारणपंचाच
 चारित्रप्रतिपादकत्वविदं । मुमुक्षुगळिनावरितल्पडुव मोभागमप्य परमागमशास्त्रचर

१ यत्कल्पत्यं युक्तिसिद्धमेदितु ।
 चतुर्नानसमद्विसंपन्नरप्य गणघरदेवखगळिदं तीत्यंकरमुत्ससरोजसंभू

रमरदिव्यप्यनिययणावचारितसमस्तशब्दात्यर्थंगळिदं शिष्यप्रतिशिष्यानुग्रहात्यंमागि नि
 भूतस्वंपद्मादशांगंगळोळये मोदळोळाचारांग विरचितल्पट्टुदु । आचरंति समंततोऽ
 मोःभागार्गंमाराचयंत्यस्मिन्ननेनेति वा आचारस्तस्मिन् आचारांगे इतत्पाचारांगदोऽ

१० जदं चरे जदं चिट्ठे जदं आसे जदं सये ।
 जदं भुजेज्ज भासेज्ज एवंपावं ण वज्जइ ॥
 कयं चरेत् कयमासोत् कयं शयीत् कयं भापेत् कय भुंजीत् कयं पापं न वप्यते ।
 गणघरप्रदानुसारविदं यतं चरेत् यतं तिष्ठेत् यतमासोत् यतं शयीत् । यतं भापेत् यतं

द्रव्यभूतमधिकृत्य निरुक्तिप्रतिपाद्यात्यर्थं पदसंख्याविशेषाणा तत्तद्गुणेषु प्ररूपणा क्रियते भा
 निरुक्त्याद्यसंभवमप्युर्वारिदं । अत्र द्वादशांगेषु प्रथमाचाराङ्गं कथितम् । कुतः ? मोशहेतुमुत्संवरनिर्जराकारण
 चाराङ्गिकलचारिकप्रतिपादकत्वेन मुमुक्षुनिराश्रियमाणस्य मोशाङ्गभूतस्य परमागमशास्त्रस्य प्रथमतो वक्तव्यत्
 मुनिगिरेश्वरान् । चतुर्नानसमद्विसंपन्नगणघरदेः तीर्थंकरमुत्ससरोजसंभूतगर्वमापात्नकदिव्यप्यनिययणा
 पारितगमसंज्ञान्द्वयं शिष्यप्रतिशिष्यानुग्रहात्यं विरचितम् तत्कल्पद्वादशाङ्गाना मध्ये प्रथममाचाराङ्गं विरचितम्

२० आचरन्ति गमन्तवोऽनुनिष्ठन्ति मोदशांगंमाराचयन्ति अस्मिन्ननेनेति वा आचारः तस्मिन् आचाराङ्गे—
 जदं चरे जदं चिट्ठे जदं आसे जदं सये ।
 जदं भुजेज्ज भासेज्ज एवंपावं ण वज्जइ ॥१॥
 कयं चरेत् ? कयं तिष्ठेत् ? कयमासोत् ? कयं शयीत् ? कयं भापेत् ? कयं भुंजीत् ? कयं पापं न वप्यते ? इति गणघरप्रदानुसारेण यत् चरेत् । यत् तिष्ठेत् । यतमासोत् । यतं शयीत् । यतं भापेत् । यतं

द्रव्यभूतको अधिकृत करके उस-उस अंग और पूर्वोक्त निरुक्ति, प्रतिपादित अर्थ और
 पदोक्त संख्याका कथन करते हैं क्योंकि भावभूतमें निरुक्ति आदि सम्भव नहीं हैं। द्वादशांग-
 में पहला आचारांग कहा है क्योंकि मोशके हेतु संवर निर्जराके कारण पंचाचार आदि
 गळ चारित्रका प्रतिपादक होनेसे मुमुक्षुओंके द्वारा आदरणीय तथा मोक्षके अंगभूत आचार-
 का परमागम शास्त्रमें प्रथम वक्तव्य होना युक्तिसिद्ध है। चार ज्ञान और सात श्रद्धियोंसे
 गम्यन्न गणघरदेवने तीर्थंकरके मुगळमलसे पत्यन्न सर्वभाषामयी दिव्यप्यनिको सुनकर
 गममन्त शब्दार्थको ध्वधारण करके शिष्य-प्रशिष्योंके अनुग्रहके लिए विरचित द्वादशांग भूत

१० शब्दोंमें प्रथम आचारांगकी रचना की। जिसमें या जिनके द्वारा 'आचरन्ति' अच्छी रीतिसँ
 आचरन करते हैं, मोश मार्गको आराधना करते हैं वह आचार है। उस आचारांगमें कैमे
 चलना, कैमे सँघे होना, कैमे पैठना, कैमे सोना, कैमे योलना, कैसे भोजन करना कि पापका
 सन्ध न हो। इन गणघरके प्रश्नके अनुसार सावधानतापूर्वक चरना

पुद्गलः विशेषापर्यणया अणुस्कन्धभेदाद्द्वितयः इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्थानानि यण्यन्त इति स्थानं नाम तृतीयमंगं ।

समसंप्रहेण सादृश्यसामान्येन अवेयन्ते ज्ञायन्ते जीवादिपदार्थाः द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य तस्मिन्निति समवायांगं । तत्र द्रव्याश्रयेण धर्मास्तिकायेनाधर्मास्तिकायः सद्गः, संसारिजीवेन संसारिजीवः सद्गः, मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सद्गः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तनरकमनुष्यक्षेत्र ऋत्विक्सिद्धक्षेत्राणि प्रवेशतः सद्गानि । अवधिस्थाननरकजम्बूद्वीपसर्वार्थसिद्धि-विमानमेतानि सद्गानोत्पत्त्यादि क्षेत्रसमवायः । एकसमयः एकसमयेन सद्गः । आवलिरावल्या सहशी । प्रथमपृथ्वीनारकभावनव्यंतराणां जघन्यायुषि सहशानि । सप्तमपृथ्वीनारक सर्वार्थसिद्धि-देवानामुल्लूषायुषीं सहशी । इत्यादि कालसमवायः । केवलज्ञानं केवलदर्शनेन सहशमित्यादिर्भाव-समवायः । इति समवायाख्यं चतुर्थमंगं । विशेषैर्व्यङ्गप्रकारैराख्या किमस्ति जीवः किं नास्ति जीवो किमेको जीवः किमनेको जीवः किं नित्यो जीवः किमनित्यो जीवः किमवक्तव्यो जीवः किं वक्तव्यो जीव इत्यादीनि (६००००) पट्टिसहस्रसंख्यानि भगवदहंतीर्षकरसन्नियो गणधरवेद्यप्रद-
१०

द्वित्रिचतुःपञ्चेन्द्रियभेदाद् दसस्थानकः इत्यादीनि जीवस्य, सामान्यापंगादेकः पुद्गलः विशेषापर्यणया

अणुस्कन्धभेदाद् द्वितयः, इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्थानानि यण्यन्ते इति स्थानं नाम तृतीयमङ्गम् ।

सं-संप्रहेण सादृश्यसामान्येन अवेयन्ते ज्ञायन्ते जीवादिपदार्थाः द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य तस्मिन्निति

समवायाङ्गम् । तत्र द्रव्याश्रयेण धर्मास्तिकायेन अधर्मास्तिकायः सद्गः । संसारिजीवेन संसारिजीवः सद्गः ।

मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सद्गः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तनरक-मनुष्यक्षेत्र-ऋत्विक्-क्षेत्राणि प्रवेशतः सद्गानि । अवधिस्थान-नरक-जम्बूद्वीप-सर्वार्थसिद्धि-विमानानि सद्गानि इत्यादि क्षेत्र-

समवायः । एकसमयः एकसमयेन सद्गः, आवलिः आवल्या सद्गो, प्रथमपृथ्वीनारकभावनव्यंतराणां

जघन्यायुषि सद्गानि । सप्तमपृथ्वीनरकसर्वार्थसिद्धिदेवानां उल्लूषायुषीं सद्गो इत्यादिः कालसमवायः ।

केवलज्ञानं केवलदर्शनेन सद्गमित्यादिर्भावसमवायः इति समवायाख्यं चतुर्थमङ्गं । विशेषैः बहुप्रकारैराख्यातं

किमस्ति जीवः ? किं नास्ति जीवः ? किमेको जीवः ? किमनेको जीवः ? किं नित्यो जीवः ? किमनित्यो

जीवः ? किं वक्तव्यो जीवः ? किमवक्तव्यो जीव इत्यादीनि पट्टिसहस्रसंख्यानि भगवदहंतीर्षकरसन्नियो

ये नौ पदार्थे उसके विषय होनेसे नौ अर्थरूप है, पृथिवी अप् तेज वायु प्रत्येक साधारण

दोइन्द्रिय श्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रियके भेदसे दस स्थानवाला है, इत्यादि जीवका

और सामान्यसे पुद्गल एक है, विशेषकी अपेक्षा अणु और स्कन्धके भेदसे दो प्रकार है,

इत्यादि पुद्गल आदिके एकादि एक-एक अधिक स्थानोंका घर्षण रहता है । इस प्रकार स्थान

नामक तीसरा अंग है । 'स' अर्थात् सादृश्य सामान्यरूप संप्रदहन्यसे 'अवेयन्ते' द्रव्य क्षेत्र

काल भावको लेकर जीवादि पदार्थ जिसमें जाने जाते हैं वह समवायांग है । उसमें द्रव्यकी

अपेक्षा धर्मास्तिकायसे अधर्मास्तिकाय समान है, संसारी जीवसे संसारी जीव समान है,

मुक्त जीवसे मुक्त जीव समान है, इत्यादि द्रव्यसमवाय है । क्षेत्रकी अपेक्षा सीमन्त नरक,

मनुष्यलोक, शत्रु नामक इन्द्रक विमान, सिद्धक्षेत्र प्रदेशसे समान है, सातवें नरकका अवधि-

स्थान नामक इन्द्रकविला, जम्बूद्वीप, सर्वार्थसिद्धि विमान समान है इत्यादि क्षेत्रसमवाय

है । एक समय एक समयके समान है, आवली आवलीके समान है, प्रथम पृथिवीके नारकी,

महनयासी और व्यन्तरीकी जघन्य आयु समान है, सातवें नरकके नारकी और सर्वार्थ-

सिद्धिके देवोंकी छल्ट्ट आयु समान है, इत्यादि कालसमवाय है । केवलज्ञान केवलदर्शनके

समान है इत्यादि भावसमवाय है । इत्यादि समवायोंका कथन समवाय नामके चतुर्थ

पुद्गलः विशेषार्थनाम अनुसक्त्यभेदाद्भित्तयः इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्यानानि वक्ष्यन्ते इति स्थानं नाम तृतीयमंगं ।

अर्थात्पुद्गल सादृश्यमामान्येन अयेति ज्ञायते जीवाविषयार्थाः द्रव्यक्षेत्रकालभावात्ताश्रित्य तद्विनिर्दिष्टे समवायिनि । तत्र द्रव्याश्रयेण धर्मास्तिहायेनाप्यर्थास्तिहायः सद्गुणः, संसारिजीवेन संगारिजीवः सद्गुणः, मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सद्गुणः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तनरक सद्गुणः अश्रित्यभिमिद्वेष्टेप्राणि प्रवेशतः सद्गुणानि । अपथिस्याननरकजंबूद्वीपसर्वार्थसिद्धि- विमलजीवनि सद्गुणानिःशरि क्षेत्रसमवायः । एकरामयः एकरामयेन सद्गुणः । आबलिरायस्या सद्गुणी । प्रथमपृथ्वीनारकभावतश्चरणा जघन्यापुंषि सद्गुणानि । सप्तमपृथ्वीनारक सव्यार्थसिद्धि- देवतापुंषि सद्गुणो । इत्यादि काठसमवायः । केवलज्ञानं केवलवर्जनेन सद्गुणमित्यादिर्भाष्य- एकरामयः । इति समाप्तमंगं सतुर्थमंगं । विशेषैर्बहुप्रकारैराख्या किमस्ति जीवः किं नास्ति जीवः किं देवः किं देवो जीवः किं नित्यो जीवः किमनित्यो जीवः किमनरकव्यो जीवः किं नरकव्यो जीवः इत्यादीनि (१००००) पट्टिमह्यसंग्रह्यानि भगवद्वर्त्तुसौत्यंकरसम्पिथी गणधरवेचप्रदान-

पुद्गलः विशेषार्थनाम अनुसक्त्यभेदाद्भित्तयः इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्यानानि वक्ष्यन्ते इति स्थानं नाम तृतीयमंगम् । अर्थात्पुद्गल सादृश्यमामान्येन अयेति ज्ञायते जीवाविषयार्थाः द्रव्यक्षेत्रकालभावात्ताश्रित्य तद्विनिर्दिष्टे समवायिनिहायः सद्गुणः । संसारिजीवेन संगारिजीवः सद्गुणः । मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सद्गुणः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तनरक-समुत्पथेन-अश्रित्यभिमिद्वेष्टेप्राणि प्रवेशतः सद्गुणानि । अपथिस्याननरक-जंबूद्वीप-सर्वार्थसिद्धि-विमलजीवनि सद्गुणानि इत्यादि क्षेत्र-समवायः । एकरामयः एकरामयेन सद्गुणः, आबलिः आबल्या सद्गुणी, प्रथमपृथ्वीनारकभावतश्चरणा जघन्यापुंषि सद्गुणानि । सप्तमपृथ्वीनारकभावतश्चरणा जघन्यापुंषि सद्गुणानि इत्यादि काठसमवायः । केवलज्ञानं केवलवर्जनेन सद्गुणमित्यादिर्भाष्य- एकरामयः । इति समाप्तमंगं सतुर्थमंगम् । विशेषैर्बहुप्रकारैराख्या किमस्ति जीवः किं नास्ति जीवः किं देवः किं देवो जीवः किं नित्यो जीवः किमनित्यो जीवः किमनरकव्यो जीवः किं नरकव्यो जीवः इत्यादीनि पट्टिमह्यसंग्रह्यानि भगवद्वर्त्तुसौत्यंकरसम्पिथी गणधरवेचप्रदान-

के जीवः इत्येवमिदं विषयं जानेने नी अर्थरूप है, पृथिवी अथु तेज वायु प्रत्येक साधारण जीव-स्य अन्विष्य अन्विष्टिय और पदेन्द्रियके भेदसे दस स्थानवाला है, इत्यादि जीवका और अर्थरूपके पुद्गल एक है, विशेषकी अपेक्षा अनु और स्तम्भके भेदसे दो प्रकार है, इत्यादि पुद्गल अन्विष्टियके एक-एक अर्थिक स्थानोंका वर्णन रहता है । इस प्रकार स्थान समक होकर भग है । 'म' अर्थात् सादृश्य सामान्यरूप संप्रदानसे 'अयेत्यन्ते' द्रव्य क्षेत्र काट काटके देकर अश्रित्य पदार्थ विमलं जाने जाने हैं वह समवायांग है । प्रथमे द्रव्यकी अपेक्षा अश्रित्य अर्थिक समान है, संगारी जीवसे संगारी जीव समान है, मुक्त जीवसे मुक्त जीव समान है, इत्यादि द्रव्यसमवाय है । क्षेत्रको अपेक्षा सीमन्त नरक, सद्गुण-क्षेत्र, सद्गुण-नरक इन्द्रिय विमल, सिद्धयेन प्रदेशसे समान है, मात्रसे नरकका अश्रित्य-समन्तनरक इन्द्रिय-वद, समुत्पथेन, सर्वार्थसिद्धि विमान समान है इत्यादि क्षेत्रसमवाय है । एक समान एक समानके समान है, आबली आबलीके समान है, प्रथम पृथिवीके नरकके नरकसमान और सप्तमपृथ्वीके अर्थिक अनु समान है, मात्रसे नरकके नरककी और सर्वार्थ-सिद्धियके नरकके इन्द्रिय अनु समान है, इत्यादि काठसमवाय है । केवलज्ञान केवलवर्जनेके समान है इत्यादि केवलसमवाय है । इत्यादि समवायोंका कथन समवाय नामके सद्गुण

पुद्गलः विशेषार्पणया अणुस्कन्धभेदाद्द्वितयः इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्थानानि यज्यन्ते इति स्थानं नाम तृतीयमंगं ।

सम्संप्रहेण सादृश्यसामान्येन अवेयन्ते ज्ञायन्ते जीवादिपदार्थाः द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य तस्मिन्निति समवायांगं । तत्र द्रव्याश्रयेण धर्मास्तिकायेनाधर्मास्तिकायः सदृशः, संसारिजीवेन संसारिजीवः सदृशः, मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सदृशः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तरक मनुष्यक्षेत्रे श्रुत्विकसिद्धिक्षेत्राणि प्रदेशतः सदृशानि । अवधिसंस्थाननरकजम्बूद्वीपसर्वार्थसिद्धि-विमानमेतानि सदृशानतीत्यादि क्षेत्रसमवायः । एकसमयः एकसमयेन सदृशः । आवलिरावल्या सहशी । प्रथमपृथ्वीनारकभावनव्यंतराणां जघन्यायुषि सहृष्टानि । सप्तमपृथ्वीनारक सर्वार्थसिद्धि-देवानामुत्कृष्टायुषीं सहृष्टी । इत्यादि कालसमवायः । केवलज्ञानं केवलदर्शनेन सहृष्टमित्यादिर्भाव-समवायः । इति समवायाख्यं चतुर्थमंगं । विशेषैर्व्यङ्ग्यकारैराख्या किमस्ति जीवः किं नास्ति जीवो किमेको जीवः किमनेको जीवः किं नित्यो जीवः किमनित्यो जीवः किमवक्तव्यो जीवः किं वक्तव्यो जीव इत्यादीनि (६००००) पट्टिसहस्रसंख्यानि भगवदहंतीत्यंकरसन्निधौ गणधरदेवप्रद-न-

द्वित्रिचतुःपञ्चन्द्रियभेदाद् दशस्थानकः इत्यादीनि जीवस्य, सामान्यार्पणादेकः पुद्गलः विशेषार्पणया अणुस्कन्धभेदाद् द्वितयः, इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्थानानि यज्यन्ते इति स्थानं नाम तृतीयमङ्गम् ।

- १५ सं-संप्रहेण सादृश्यसामान्येन अवेयन्ते ज्ञायन्ते जीवादिपदार्थाः द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य तस्मिन्निति समवायाङ्गम् । तत्र द्रव्याश्रयेण धर्मास्तिकायेन अधर्मास्तिकायः सदृशः । संसारिजीवेन संसारिजीवः सदृशः । मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सदृशः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तरक-मनुष्यक्षेत्र-श्रुत्विक-क्षेत्राणि प्रदेशतः सदृशानि । अवधिसंस्थान-नरक-जम्बूद्वीप-सर्वार्थसिद्धिविमानानि सदृशानि इत्यादि क्षेत्र-समवायः । एकसमयः एकसमयेन सदृशः, आवलिः आवल्या सदृशी, प्रथमपृथ्वीनारकभावनव्यन्तराणां जघन्यायुषि सदृशानि । सप्तमपृथ्वीनारकसर्वार्थसिद्धिदेवानां उत्कृष्टायुषीं सदृशी इत्यादिः कालसमवायः । केवलज्ञानं केवलदर्शनेन सदृशमित्यादिर्भावसमवायः इति समवायाख्यं चतुर्थमङ्गम् । विशेषैः बहुरकारैराख्या किमस्ति जीवः ? किं नास्ति जीवः ? किमेको जीवः ? किमनेको जीवः ? किं नित्यो जीवः ? किमनित्यो जीवः ? किं वक्तव्यो जीवः ? किमवक्तव्यो जीव इत्यादीनि पट्टिसहस्रसंख्यानि भगवदहंतीत्यंकरसन्निधौ

ये नौ पदार्थे उसके विषय होनेसे नौ अर्थरूप है, पृथिवी अप् तेज वायु प्रत्येक साधारण

- २५ दोइन्द्रिय श्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रियके भेदसे दस स्थानवाला है, इत्यादि जीवका और सामान्यसे पुद्गल एक है, विशेषकी अपेक्षा अणु और स्कन्धके भेदसे दो प्रकार है, इत्यादि पुद्गल आदिके एकादि एक-एक अधिक स्थानोंका वर्णन रहता है । इस प्रकार स्थान नामक तीसरा अंग है । 'स' अर्थात् सादृश्य सामान्यरूप संप्रहृत्यसे 'अवेयन्ते' द्रव्य क्षेत्र काळ भावको छेहर जीवादि पदार्थे जिसमें जाने जाते हैं वह समवायांग है । उसमें द्रव्यकी
- १० अपेक्षा धर्मास्तिकायसे अधर्मास्तिकाय समान है, संसारी जीवसे संसारी जीव समान है, मुक्त जीवसे मुक्त जीव समान है, इत्यादि द्रव्यसमवाय है । क्षेत्रकी अपेक्षा सीमन्त नरक, मनुष्यलोक, शत्रु नामक इन्द्रक विमान, सिद्धक्षेत्र प्रदेशसे समान है, सातवें नरकका अवधि-स्थान नामक इन्द्रकबिला, जम्बूद्वीप, सर्वार्थसिद्धि विमान समान है इत्यादि क्षेत्रसमवाय है । एक समय एक समयके समान है, आवली आवलीके समान है, प्रथम पृथिवीके नारकी, मधनदार्था और ग्यन्तरीकी जघन्य आयु समान है, सातवें नरकके नारकी और सर्वार्थ-सिद्धिके देवोंकी इच्छा आयु समान है, इत्यादि काळसमवाय है । केवलज्ञान केवलदर्शनेके समान है इत्यादि भावसमवाय है । इत्यादि समवायोंका कथन समवाय नामके चतुर्थ

पुद्गलः विशेषार्पणया अणुस्वप्नभेदाद्द्वितयः इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्यानानि षण्यन्त इति स्थानं नाम तृतीयमंगं ।

समुत्संघ्रेण सादृश्यसामान्येन अवेयन्ते ज्ञायन्ते जीवादिपदार्थाः द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य तस्मिन्निति समवायांगं । तत्र द्रव्याश्रयेण धर्मास्तिकायेनाधर्मास्तिकायः सद्गः, संसारिजीवेन संसारिजीवः सद्गः, मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सद्गः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तरक मनुष्यक्षेत्र श्रुत्विकसिद्धिक्षेत्राणि प्रदेसतः सद्गानि । अवधिस्याननरकजंबूद्वीपसर्वार्थसिद्धि-विमानमैतानि सद्गानोत्पत्त्यादि क्षेत्रसमवायः । एकसमयः एकसमयेन सद्गः । आवलिरावल्पा सद्गो । प्रथमपृथ्वीनारकभावनव्यन्तराणां जघन्यायुषि सद्गानि । सप्तमपृथ्वीनारक सर्वार्थसिद्धि-देवानामुत्पत्त्यायुषीं सद्गो । इत्यादि कालसमवायः । केवलज्ञानं केवलदर्शनेन सद्गमित्यादिर्भाव-समवायः । इति समवायाख्यं चतुर्थमंगं । विशेषैर्बहुप्रकारैराख्या किमस्ति जीवः किं नास्ति जीवो किनेको जीवः किमनेको जीवः किं नित्यो जीवः किमनित्यो जीवः किमवक्तव्यो जीवः किं वक्तव्यो जीव इत्यादीनि (६००००) षष्टिसहस्रसंख्यानि भगवदहंतीत्यंकरसन्निधौ गणधरदेवप्रदान-

- द्वित्रिचतुष्षष्टेन्द्रियभेदाद् दशस्थानकः इत्यादीनि जीवस्य, सामान्यार्पणादेकः पुद्गलः विशेषार्पणया धनुष्मन्मभेदाद् द्वितयः, इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्यानानि षण्यन्ते इति स्थानं नाम तृतीयमङ्गम् ।
- १५ सं-संघ्रेण सादृश्यसामान्येन अवेयन्ते ज्ञायन्ते जीवादिपदार्थाः द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य तस्मिन्निति समवायाङ्गम् । तत्र द्रव्याश्रयेण धर्मास्तिकायेन अधर्मास्तिकायः सद्गः । संसारिजीवेन संसारिजीवः सद्गः । मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सद्गः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तरक-मनुष्यक्षेत्र-श्रुत्विक-क्षेत्राणि प्रदेसतः सद्गानि । अवधिस्यान-नरक-जंबूद्वीप-सर्वार्थसिद्धि-विमानानि सद्गानि इत्यादि क्षेत्र-समवायः । एकसमयः एकसमयेन सद्गः, आवलिः आवल्पा सद्गो, प्रथमपृथ्वीनारकभावनव्यन्तराणां
- २० जघन्यायुषि सद्गानि । सप्तमपृथ्वीनारकसर्वार्थसिद्धिदेवानां उत्कृष्टायुषीं सद्गो इत्यादिः कालसमवायः । केवलज्ञानं केवलदर्शनेन सद्गमित्यादिर्भावसमवायः इति समवायाख्यं चतुर्थमङ्गम् । विशेषैः बहुप्रकारैराख्यातं किमस्ति जीवः ? किं नास्ति जीवः ? किनेको जीवः ? किमनेको जीवः ? किं नित्यो जीवः ? किमनित्यो जीवः ? किं वक्तव्यो जीवः ? किमवक्तव्यो जीव इत्यादीनि षष्टिसहस्रसंख्यानि भगवदहंतीत्यंकरसन्निधौ

- ये नो पदार्थं वसकं विषयं होनेसे नो अर्थरूप है, पृथिवी अप् तेज वायु प्रत्येक साधारण दोइन्द्रिय श्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय और षंवेन्द्रियके भेदसे दस स्थानवाला है, इत्यादि जीवका धीर सामान्यसे पुद्गल एक है, विशेषकी अपेक्षा अणु और स्कन्धके भेदसे दो प्रकार है, इत्यादि पुद्गल आदिके प्रकारि एक-एक अधिक स्थानोंका वर्णन रहता है । इस प्रकार स्थान नामक तीसरा अंग है । 'स' अर्थात् सादृश्य सामान्यरूप संग्रहणसे 'अवेयन्ते' द्रव्य क्षेत्र काट भावकी छेदक जीवादि पदार्थ जिममें जाने जाते हैं वह समवायांग है । उसमें द्रव्यकी
- १० अपेक्षा धर्मास्तिकायसे अधर्मास्तिकाय ममान है, संसारी जीवसे संसारी जीव समान है, मुक्त जीवसे मुक्त जीव समान है, इत्यादि द्रव्यसमवाय है । क्षेत्रकी अपेक्षा सीमन्त नरक, मनुष्यक्षेत्र, शत्रु नामक इन्द्रक विमान, सिद्धक्षेत्र प्रदेससे समान है, सातवें नरकका अवधिस्यान नामक इन्द्रकविला, जंबूद्वीप, सर्वार्थसिद्धि विमान समान है इत्यादि क्षेत्रसमवाय है । एक समय एक समयके समान है, आवली आवलीके समान है, प्रथम पृथिवीके नारकी, भवनवासां और इयन्तरीकी जघन्य आयु समान है, सातवें नरकके नारकी और सर्वार्थ-सिद्धिके देवोंकी उत्पत्ति आयु समान है, इत्यादि कालसमवाय है । केवलज्ञान केवलदर्शनेके ममान है इत्यादि भावसमवाय है । इत्यादि समवायोंका कथन समवाय नामके चतुर्थ

पुद्गलः विशेषापर्यणया अणुस्कन्धभेदाद्द्वितयः इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्थानानि घण्यन्ते इति स्थानं नाम तृतीयमंगं ।

सप्तसंग्रहेण सादृश्यसामान्येन अवेयन्ते ज्ञायन्ते जीवादिपदात्वाः द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य तस्मिन्निति समवायांगं । तत्र द्रव्याश्रयेण धर्मास्तिकायेनाप्यर्मास्तिकायः सद्गः, संसारिजीवेन संसारिजीवः सद्गः, मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सद्गः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तनरकमनुष्यक्षेत्र श्रृत्विकसिद्धिभेदाणि प्रवेशतः सद्गानि । अवधिस्याननरकजंबूद्वीपसर्वार्थसिद्धि-विमानमेतानि सद्गानोत्त्यादि क्षेत्रसमवायः । एकसमयः एकसमयेन सद्गः । आवलिः आवल्या सद्गः । प्रथमपृथ्वीनारकभावनव्यंतराणां जघन्यायुषि सद्गानि । सप्तमपृथ्वीनारक सर्वार्थसिद्धि-देवानामुत्कृष्टायुषीं सद्गः । इत्यादि कालसमवायः । केवलज्ञानं केवलदर्शनेन सद्गमित्यादिर्भाव-समवायः । इति समवायाख्यं चतुर्थमंगं । विशेषैर्बहुप्रकारैराख्या किमस्ति जीवः किं नास्ति जीवो किमेको जीवः किमनेको जीवः किं नित्यो जीवः किमनित्यो जीवः किमवक्तव्यो जीवः किं वक्तव्यो जीव इत्यादीनि (६००००) पष्टिसहस्रसंख्यानि भगवदहंतीत्यंकरसन्निधौ गणधरवेद्यप्रदान-

द्वित्रिचतुःपञ्चेन्द्रियभेदाद् दशस्थानकः इत्यादीनि जीवस्य, सामान्यापंगादिकः पुद्गलः विशेषापर्यणया

- अणुस्कन्धभेदाद् द्वितयः, इत्यादि पुद्गलादीनां च एकाद्येकोत्तरस्थानानि घण्यन्ते इति स्थानं नाम तृतीयमङ्गम् ।
- १५ सं-संग्रहेण सादृश्यसामान्येन अवेयन्ते ज्ञायन्ते जीवादिपदात्तां द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य तस्मिन्निति समवायाङ्गम् । तत्र द्रव्याश्रयेण धर्मास्तिकायेन अधर्मास्तिकायः सद्गः । संसारिजीवेन संसारिजीवः सद्गः । मुक्तजीवेन मुक्तजीवः सद्गः इत्यादिद्रव्यसमवायः । क्षेत्राश्रयेण सीमन्तनरक-मनुष्यक्षेत्र-श्रृत्विक-क्षेत्राणि प्रवेशतः सद्गानि । अवधिस्यान-नरक-जंबूद्वीप-सर्वार्थसिद्धि-विमानानि सद्गानि इत्यादि क्षेत्र-समवायः । एकसमयः एकसमयेन सद्गः, आवलिः आवल्या सद्गः, प्रथमपृथ्वीनारकभावनव्यन्तराणां
- २० जघन्यायुषि सद्गानि । सप्तमपृथ्वीनारकसर्वार्थसिद्धिदेवानां उत्कृष्टायुषीं सद्गः इत्यादिः कालसमवायः । केवलज्ञानं केवलदर्शनेन सद्गमित्यादिर्भावसमवायः इति समवायाख्यं चतुर्थमङ्गम् । विशेषैः बहुप्रकारैराख्या किमस्ति जीवः ? किं नास्ति जीवः ? किमेको जीवः ? किमनेको जीवः ? किं नित्यो जीवः ? किमनित्यो जीवः ? किं वक्तव्यो जीवः ? किमवक्तव्यो जीव इत्यादीनि पष्टिसहस्रसंख्यानि भगवदहंतीत्यंकरसन्निधौ

- ये नौ पदार्थं उसके विषय होनेसे नौ अर्थरूप है, पृथिवी अप् तेज वायु प्रत्येक साधारण
- २५ दोइन्द्रिय श्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रियके भेदसे दस स्थानवाला है, इत्यादि जीवका और सामान्यसे पुद्गल एक है, विशेषकी अपेक्षा अणु और स्कन्धके भेदसे दो प्रकार है, इत्यादि पुद्गल आदिके एकादि एक-एक अधिक स्थानोंका घर्णन रहता है । इस प्रकार स्थान नामक तीसरा अंग है । 'स' अर्थात् सादृश्य सामान्यरूप संग्रहणसे 'अवेयन्ते' द्रव्य क्षेत्र काल भावको लेकर जीवादि पदार्थ जिसमें जाने जाते हैं वह समवायांग है । उसमें द्रव्यकी
- ३० अपेक्षा धर्मास्तिकायसे अधर्मास्तिकाय समान है, संसारी जीवसे संसारी जीव समान है, मुक्त जीवसे मुक्त जीव समान है, इत्यादि द्रव्यसमवाय है । क्षेत्रकी अपेक्षा सीमन्त नरक, मनुष्यलोक, शत्रु नामक इन्द्रक विमान, सिद्धक्षेत्र प्रदेशसे समान है, सातवें नरकका अवधिस्यान नामक इन्द्रकविद्या, जंबूद्वीप, सर्वार्थसिद्धि विमान समान है इत्यादि क्षेत्रसमवाय है । एक समय एक समयके समान है, आवली आवलीके समान है, प्रथम पृथिवीके नारकी, भवनवासी और व्यन्तरीकी जघन्य आयु समान है, सातवें नरकके नारकी और सर्वार्थ-सिद्धिके देवोंकी पट्ट आयु समान है, इत्यादि कालसमवाय है । केवलज्ञान केवलदर्शनके समान है इत्यादि भावसमवाय है । इत्यादि समवायोंका कथन समवाय नामके चतुर्थ

अल्लिदं बट्टिकं उपासते आहारादिदानैर्नित्यमहादिपूजाविधानैश्च संघमाराधयंतोत्युपासकाः । ते अधीयन्ते पठन्ते दर्शनिकप्रतिक्रियामाधिकप्रोपधोपवाससचित्तविरतरात्रिभक्तप्रत-
ग्रह्यचार्यपरिभपरिग्रहनिवृत्ताऽनुमतोद्विष्टविरतभेदैकादशानिलयसंबन्धितगुणशीलाचारक्रियामंत्रादि-
विस्तरैर्वर्णयन्तेऽस्मिन्निति उपासकाध्ययनं नाम सप्तममंगं ।

प्रतितीर्थं दशदशमुनीश्वरास्तोत्रं चतुर्विधोपसर्गं सोढ्वा इंद्रादिभिर्विरचितं पूजादि,
प्रातिहार्यसंभावनां लब्ध्वा कर्मक्षयानंतरं संसारस्यांतमवसानं कृतवन्तोऽन्तःकृतः । श्रीवर्धमानतीर्थं
नमि मतंग सोमिल रामपुत्र सुदर्शन यमलीकवलिकरिष्कंबिल पालंबटपुत्रा इति दश । एवं
युपभादितोर्व्यपि दश दशांतकृतो वर्णयन्ते यस्मिन्तदन्तःकृतं नामाष्टममंगं । तथा उपपादः प्रयोजन-
मेपां ते इमे औपपादिकाः अनुत्तरेषु विजयवैजयंतजयन्तापराजितसर्वाथसिद्धिषाख्येषु औपपादिकाः
अनुत्तरोपपादिकाः । प्रतितीर्थं दश दश मुनयः दारुणान्महोपसर्गान्तोद्वा लब्धप्रातिहार्यस्तमाधि-
विधिना त्यक्तप्राणा ये विजयाद्यनुत्तरविमानेषूपपन्तास्ते वर्णयन्ते यस्मिन् तदनुत्तरोपपादिकदशं
नाम नवममंगं । तत्र श्रीवर्धमानतीर्थं ऋजुदास धन्य मुनक्षत्र कार्तिकेय नंद नंदन शालिभद्र

अतः परं उपासते आहारादिदानैर्नित्यमहादिपूजाविधानैश्च संघमाराधयन्तीति उपासकाः ते अधीयन्ते
पठन्ते दर्शनिकप्रतिक्रियामाधिकप्रोपधोपवाससचित्तविरतरात्रिभक्तप्रतग्रह्यचार्यपरिभपरिग्रहनिवृत्ताऽनुमतोद्विष्ट-
विरतभेदैकादशानिलयसंबन्धितगुणशीलाचारक्रियामंत्रादिविस्तरैर्वर्णयन्ते अस्मिन्निति उपासकाध्ययनं नाम
सप्तममङ्गम् । प्रति तीर्थं दश दश मुनीश्वराः स्तोत्रं चतुर्विधोपसर्गं सोढ्वा इंद्रादिभिर्विरचितं पूजादिप्राति-
हार्यसंभावनां लब्ध्वा कर्मक्षयानन्तरं संसारस्यांतं अवसानं कृतवन्तोऽन्तःकृतः । श्रीवर्धमानतीर्थं नमि-भवज्ञ-
सोमिल-रामपुत्र-सुदर्शन-यमलीक-वलिक-रिष्कंबिल-पालंबट-पुत्रा इति दश । एवं युपभादितोर्व्यपि
दश दशान्वृत्तो वर्णयन्ते यस्मिन्तदन्तःकृतं नामाष्टममङ्गम् । तथा उपपादः प्रयोजनमेपां ते इमे औपपादिकाः ।
अनुत्तरेषु विजयवैजयन्तजयन्तापराजितसर्वाथसिद्धिषाख्येषु औपपादिकाः अनुत्तरोपपादिकाः । प्रति तीर्थं दश
दश मुनयो दारुणान् महोपसर्गान् सोढ्वा लब्धप्रातिहार्याः समाधिविधिना त्यक्तप्राणाः ये विजयाद्यनुत्तर-
विमानेषूपपन्ताः ते वर्णयन्ते यस्मिन्तदनुत्तरोपपादिकदशं नाम नवममङ्गम् । तत्र श्रीवर्धमानतीर्थं ऋजुदास-

'उपासते' जो आहार आदि दानके द्वारा और नित्यमह आदि पूजाविधानके द्वारा
संघको आराधना करते हैं वे उपासक हैं । वे उपासक दर्शनिक, प्रतिक, सामयिक, प्रोपधो-
पवास, सचित्तविरत, रात्रिभक्तप्रत, प्रह्वार्य, आरम्भविरत, परिग्रहविरत, अनुमतविरत,
द्विष्टविरत इन गृहस्थोंके ग्यारह भेदोंसे सम्बद्ध प्रत, गुण, शील, आचार, क्रिया, मन्त्र आदि
विस्तारसे जिनमें 'अधीयन्ते' पढ़े जाते हैं वह उपासकाध्ययन नामक सातवाँ अंग है ।
प्रत्येक तीर्थमें दस-दस मुनीश्वर तोत्र चार प्रकारके उपसर्गको सहकर इंद्रादिके द्वारा रचित
पूजादि प्रतिहार्योंको सम्भावनाको प्राप्त करके फलोंके शयके अनन्तर संसारका अन्त करते
हुए । इमडिए षण्दे 'अन्तकृत' कहते हैं । श्री वर्धमान तीर्थकरके तीर्थमें नमि, मतंग, सोमिल,
रामपुत्र, सुदर्शन, यमलीक, पलीक, रिष्कंबिल, पालम्बु, अष्टपुत्र ये दस अन्तकृत हुए । इसी
प्रकार श्यामभदेव आदिके भी तीर्थमें हुए । जिसमें दस-दस अन्तकृतोंका वर्णन हो वह अंग
अन्तकृत नामक है । उपपाद जिनका प्रयोजन है वे औपपादिक हैं । विजय, वैजयन्त,
जयन्त, अपराजित और सर्वाथसिद्धि नामक अनुत्तरोंमें उपपाद जन्म लेनेवाले अनुत्तरो-
पपादिक होते हैं । प्रत्येक तीर्थमें दस-दस मुनि दारुण महान् उपसर्गोंको सहकर प्रातिहार्य
प्राप्त करके समाधिपूर्वक प्राणोंको त्यागकर विजयादि अनुत्तरोंमें उत्पन्न हुए । उनका
जिनमें वर्णन हो वह अनुत्तरोपपादिकदश नामक नौवाँ अंग है । उनमेंसे श्रीवर्धमान

चतुर्विंशतितीर्थंकरद्वादश चक्रवर्तिगळ नवबलदेव नववासुदेव नवप्रतिवासुदेवगळ
शलाकापुस्त्यपुराणगळं वर्णिमुणुं । मुंद्दे पूर्व्यं चतुर्दशविं विस्तरविं पेठल्पट्टुडु ।
चूलिकेयुमण्डु प्रकारमवकुमव ते बोधे जलगता स्थलगता मायागता आकाशगता

- ५ एदितिवरोळु जलगताचूलिके जलस्तंभन जलगमनाग्निस्तंभनाग्निभनागान्यासनाग्निप्र
कारणमंत्रतंत्रतपश्चरणादिगळं वर्णिमुणुं । स्थलगता चूलिकेयें बुडु मेरकुलसोलभूम्या
प्रवेशन शीघ्रगमनादिकारणमंत्रतंत्रतपश्चरणादिगळं वर्णिमुणुं । मायागता चूलिकेयें बुडु
रूपद्रजालविक्रियाकारणमंत्रतंत्रतपश्चरणादिगळं वर्णिमुणुं । रूपगताचूलिकेयें बुडु सिंह
रुपनर तरहरिणशान्दुपभव्याप्रादिरूपपरावतंनकारणमंत्रतंत्रतपश्चरणादिगळं चित्रकाष्ठ
रखननादिलक्षणघातुवावरसवावदसत्यावादादिगळं वर्णिमुणुं ।
आकाशगताचूलिकेयें बुडु आकाशगमनकारणमंत्रतंत्रतपश्चरणादिगळं वर्णिमुणुं ।
पैरो पेळद चंद्रप्रज्ञपद्यादिगळोळु क्रमनाः यथाक्रमदिदं पदप्रमाणमनंतरमे वक्ष्यमाणम

जानीहि एदितु संवोधनमघ्याहाय्यं ।

- १५ चक्रवर्तिनवबलदेवनववासुदेवनवप्रतिवासुदेवरूपविषयिष्ठिशास्त्रागपुस्त्यपुराणानि वर्णयति । पूर्व्यं चतुर्दशविं विस्तर
अप्रे वक्ष्यति । चूलिकापि पञ्चविधा जलगता स्थलगता मायागता आकाशगता रूपगता चेति । तत्र जलग
चूलिका जलस्तंभनजलगमनाग्निस्तंभनाग्निभनागान्यासनाग्निप्रवेशनादिकारणमन्त्रतंत्रतपश्चरणादीन् वर्णयति । तत्र जलग
स्थलगता चूलिका मेरकुलसोलभूम्यादिषु प्रवेशनशीघ्रगमनादिज्ञारणमन्त्रतंत्रतपश्चरणादीन् वर्णयति । रूपगता चूलिका
मायागता चूलिका मायारूपेन्द्रजालविक्रियाकारणमन्त्रतंत्रतपश्चरणादीन् वर्णयति । रूपगता चूलिका
सिंहकरिपुर्यारुखनरतरहरिणशान्दुपभव्याप्रादिरूपपरावतंनकारणमन्त्रतंत्रतपश्चरणादीन् चित्रकाष्ठेऽप्योलान
नादिलक्षणघातुवावरसवावदसत्यावादादीश्व वर्णयति । आकाशगता चूलिका आकाशगमनकारणमन्त्रतंत्र
तपश्चरणादीन् वर्णयति । प्रागुक्तवन्द्रप्रज्ञपद्यादिषु क्रमसो यथाक्रमं पदप्रमाणं अनन्तरमेव वक्ष्यमाणं जानीहि
इति संवोधनमघ्याहाय्यं ॥३६१-३६२॥

प्रथम अर्थात् मिथ्यादृष्टि, अत्रती या अब्युत्पन्न व्यक्तिके लिए जो अनुयोग रचा गया वह प्रथमानुयोग है । यह चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ बलदेव, नौ वासुदेव, नौ प्रति-
वासुदेव, इन तिरसठ शलाका प्राचीन पुरुषोंका वर्णन करता है । चौदह प्रकारके पूर्वोक्ति
सम्बन्धमें आगे विस्तारसे कहेंगे । चूलिका भी पाँच प्रकार की है—जलगता, स्थलगता,
मायागता, आकाशगता और रूपगता । जलगता चूलिका जलका स्तम्भन, जलमें गमन,
अनिका स्तम्भन, अनिका भक्षण, अग्निपर बैठना, अग्निमें प्रवेश आदिके कारण मन्त्र, तन्त्र,
तपश्चरण आदिका वर्णन करती है । स्थलगता चूलिका मेरु, कुलाचल, भूमि आदिमें प्रवेश
करने तथा शीघ्र गमन आदिके कारण मन्त्र, तन्त्र, तपश्चरण आदिका वर्णन करती है ।
मायागता चूलिका मायावी रूप, इन्द्रजाल (जादूगरी) विक्रियाके कारण मन्त्र, तन्त्र, तपश्चरण
आदिका वर्णन करती है । रूपगता चूलिका सिंह, हाथी, घोड़ा, मृग, खरगोश, बैल, व्याघ्र
आदिके रूप बदलनेमें कारण मन्त्र, तन्त्र, तपश्चरण आदिका वर्णन करती है । आकाशगता
आदिका लक्षण व घातुवाद, रसवाद, सदान आदि चारोंका कथन करती है । आकाशगता
चूलिका आकाशमें गमन करनेमें कारण मन्त्र, तन्त्र, तपश्चरण आदिका कथन करती है । इन
१५ चन्द्रप्रज्ञप्ति आदिमें क्रमसे पदोंका प्रमाण आगे कहते हैं ॥३६१-३६२॥

१. वं स्यात् ।

२०९८९२०० रूपगतं गच्छ २०९८९२०० । याजकनामेनाननं एककोटपेगातीतिश्रंगं गच्छ मधुसहस्र-
पदं गच्छ चंद्रप्रज्ञाप्यादि पंचप्रकारमनुच्छ परिकर्ममुत्पिच्छेषु १८१०५००० कानवधिवाचनाननं
दशकोटचेकोनपंचाशत्तलक्षपट्टत्वारिंशत्साहस्रपदं गच्छ पुनः मत्ते जलगतादि पंचप्रकारभूतचूलिका-
योगमिदु १०४९४६००० ।

पण्णट्टदाल पणतीस तीस पण्णास पण्ण तेरसदं ।

णउदी दुदाल पुब्बे पणवण्णा तेरससयादं ॥३६५॥

छस्सयपण्णासादं चउसयपण्णास छसयपण्णीसा ।

विहि लक्खेहि दु गुणिपा पंचम रूऊण छज्जुदा छट्ठे ॥३६६॥

पंचाशदष्टत्वारिंशत्तंचत्रिंशत् त्रिंशत् पंचाशत् पंचाशत् त्रयोदशगतं नयतिर्द्धाचत्वारिंशत्
पूर्व्वं पंच पंचाशत् त्रयोदशगतानि । षट्छतपंचाशदचतुःशतपंचाशत् षट्शतपंचविंशतिद्वाम्या
लक्षाम्यां गुणितास्तु पंचमरूपो न षड्युताः षट् ।

५० । ४८ । ३५ । ३० । ५० । ५० । १३०० । ९० । ४२ । ५५ । १३०० ।—६५० ।

४५० । ६२५ ।

पूर्व्वं उत्पादादि पूर्व्वद्वौ चतुर्दशविधदौ मयाक्रमदिदमी संरुपे षेष्टत्पट्टुदु । यस्तुविन
द्रव्यद उत्पादव्ययध्रौव्यादि अनेकधर्मपूरकमुत्पादपूर्व्वमप्यु—मदु जीवादिद्रव्यंगठ नानानय-
विषयक्रम यौगपद्यसंभावितोत्पादव्ययध्रौव्यंगच्छ त्रिकालगोचरंगच्छ । नदधर्मंगच्छेषु । तत्परिणत
द्रव्यमुं नवविधमक्कुं । उत्पन्नमुत्पद्यमानमुत्पत्त्यमानं नष्टं नश्यत् नक्ष्यत् स्थितं तिष्ठत् स्थायदिति
इतु नवप्रकारंगच्छेषुवृत्तत्वादिगच्छे प्रत्येकं नवविधत्वसंभयदत्तान्दमेकातीतिविकल्पधर्म-

चन्द्रप्रज्ञाप्यादिपञ्चविधपरिकर्मयुती याजकनामेनाननं—एककोटपेगातीतिश्रंगं गच्छ मधुसहस्रानि पदानि १८१०५००० ।
जलगतादिपञ्चविधचूलिकायोगः पुनः कानवधिवाचनाननं—दशकोटपेकोनपञ्चाशत्तलक्षपट्टत्वारिंशत्साहस्रानि
पदानि १०४९४६००० ॥३६३—३६४ ॥

उत्पादादिचतुर्दशपूर्व्वेषु मयाक्रमं पदसंख्योच्यते—वस्तुनो—द्रव्यस्य उत्पादव्ययध्रौव्याद्यनेकधर्मपूरक-
मुत्पादपूर्व्वं तच्छ जीवादिद्रव्याणां नानानयविषयक्रमयौगपद्यसंभावितोत्पादव्ययध्रौव्याणि त्रिकालगोचराणि
नवधर्मा भवन्ति । तत्परिणतं द्रव्यमपि नवविधं । उत्पन्नं उत्पद्यमानं उत्पत्त्यमानं । नष्टं नश्यत् नक्ष्यत् ।
स्थितं तिष्ठत् स्थायदिति नवप्रकारा भवन्ति । उत्पन्नादीनां प्रत्येकं नवविधत्वसंभवादेकातीतिविकल्पधर्मपरि-

प्रत्येक चूलिकामें 'रनधजधरानन' दो कोटि नौ लाख नवासी हजार दो सौ पद हैं २०९८९-
२०० । चन्द्रप्रज्ञप्ति आदि पाँच परिकर्मामें मिलाकर 'याजकनामेनानन' एक कोटि इक्यासी
लाख पाँच हजार पद हैं १८१०५००० । जलगता आदि पाँचों चूलिकाओंके पदाँका जोड़
'कानवधिवाचनानन' दस कोटि उनचास लाख छियालीस हजार १०४९४६०००
है ॥३६३-३६४॥

उत्पाद आदि चौदह पूर्व्वोंमें क्रमसे पद संख्या कहते हैं—द्रव्यके उत्पादव्यय आदि
अनेक धर्मोंका पूरक उत्पादपूर्व्व है । जीवादि द्रव्योंके नाना नय विषयक क्रम और युगपत्
होनेवाले तीन कालके उत्पादव्ययध्रौव्यरूप नौ धर्म होते हैं अतः उन धर्मरूप परिणत
द्रव्य भी नौ प्रकारका है—उत्पन्न, उत्पद्यमान, उत्पत्त्यमान, जो नष्ट हो चुका, हो
रहा है, होगा, स्थिर हुआ, हो रहा है, होगा ये नौ प्रकार हैं । उत्पाद आदि प्रत्येकके नौ

द्विसंयोगप्रिसंयोगजंगळ त्रिअयेकसंख्यगळ ७ मेलनंत सामभंगियं प्रश्नवशादिवमो'वे वस्तुविनोळविरो-
घादिव संभवपुदं नानानयमुख्यगोणभावादिदं प्ररूपिसुगुमिल्लि । द्विलक्षणगुणितप्रिशत्पदंगळ पट्टिलक्ष-
पदंगळप्युयेंबुदत्यं ६०००००० ल ।

ज्ञानानां प्रवादः प्ररूपणमस्मिन्निति ज्ञानप्रवादं । पंचमं पूर्वमिदु । मतिश्रुतावधिमतः

- ५ पच्यंय केवलमे'दु पंच सम्पज्ञानंगळ । कुमतिकुश्रुतविभंगमे'य श्र्यज्ञानंगळिवेरर स्वरूप
संख्याविषयक जंगळनाश्रयिसिषयवके प्रामाण्याप्रामाण्यविभागमुमं वर्णिसुगुमिल्लि द्विलक्षणगुणित
पंचाशःपदंगळ रूपोतकोटिगळरूपवेकेंदोडे पंचमरूळणमें बुदरिदं पंचमपूर्वव्यंदोळ द्विलक्षणगुणित
पंचाशत्पदलक्ष्यदोळो'दु कोटियोळो'दु गंडुगुमे'दु पेळुदुदरिदं ५ = अ = ९९९९९९९ । सत्यस्य
प्रवादः प्ररूपणमस्मिन्निति सत्यप्रवादं पट्टपूर्वमिदु वाग्गुमितुमं वाक्संस्कारकारणंगळम्
१० वाग्प्रयोगमुमं द्वादशभाषेगळम् वक्तृभेदगळम् वहुविधमृषाभिधानमुमं दशविधसत्यमुमं प्ररूपिसुगु

- १ वास्तव्यं च स्वद्रव्यक्षेत्रकालभावान् युगपत् स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं च संयुक्तमाश्रित्य । स्यादास्ति
पापकृत्यं च परद्रव्यक्षेत्रकालभावान् युगपत्स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं च संयुक्तमाश्रित्य । स्यादस्ति च नास्ति
पापकृत्यं च क्रमेण स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं युगपत्स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावद्वयं च संयुक्तमाश्रित्य । इत्ये
वानेनित्यानित्याद्यनन्तधर्माणां विधिनियेधावक्तव्यभङ्गानां प्रत्येकद्विसंयोगद्विसंयोगज्ञानां त्रिअयेकसंख्यानां मेल-
१५ तामभङ्गो प्रश्नवशादेरुमिन्नेव वस्तुनि अविरोधेन संभवती नानानयमुख्यगोणभावेन प्ररूपयति । तः
द्विलक्षणगुणितसत्यज्ञानि पट्टिलक्षाणि इत्यर्थः । ६००००००० । ज्ञानानां प्रवादः प्ररूपणमस्मिन्निति ज्ञानप्रवा-
दपञ्चमं पूर्व, तच्च मतिश्रुतावधिमतःपच्यंयकेवलानि पञ्च सम्पज्ञानानि, कुमतिकुश्रुतविभङ्गाज्ञानानि श्रोत्र
ज्ञानानि स्वरूपगंधास्पर्शविषयफलानि आश्रित्य तेषां प्रामाण्याप्रामाण्यविभागं च वर्णयति । तत्र द्विलक्षणगुणित
पञ्चाशत्पदज्ञानि किन्तु पञ्चमरूळणमिति कथनादेरूपोना कोटिरित्यर्थः ९९९९९९९९ । सत्यस्य प्रवाद
२० प्ररूपणमस्मिन्निति सत्यप्रवादं पठं पूर्व, तच्च वाग्गुतिः वाक्संस्कारकारणानि वाक्प्रयोगं द्वादश भाषा

- भाषकी अपेक्षा स्यात् अस्ति नास्ति हे । एक साथ स्वपर द्रव्यक्षेत्रकाल भाषकी अपेक्षा
अवच्छद्य हे क्योंकि एक साथ दोनों धर्मोंका कहना शक्य नहीं है । स्वद्रव्यक्षेत्रकाल भाष-
की तथा युगपत् स्वपरद्रव्यक्षेत्रकाल भाषकी अपेक्षा स्यादस्ति अवच्छद्य हे । परद्रव्यक्षेत्रकालभाष-
की और युगपत् स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभाषकी अपेक्षा स्यात् नास्ति अवच्छद्य हे । तथा क्रमेण
२५ स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभाव और युगपत् स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावकी अपेक्षा स्यात् अस्तिनास्ति
अवच्छद्य हे । इस प्रकार एक अनेक, नित्य अनित्य आदि अनन्त धर्मोंके विधि नियेध और
अवच्छद्य भंगोंके प्रत्येक, दो संयोगी, तीन संयोगी तीन, तीन और एक भंगोंकी संख्याकें
मिलानेसे सप्तभंगी होती है । वह प्रश्नके अनुसार एक वस्तुमें किसी विरोधके बिना नान
नयींकी मुख्यता और गौणतासे कथन करती है । उसमें दो लाखसे गुणित तीस अर्थात् साठ
३० लाख पद हैं । ज्ञानका जिसमें प्रवाद अर्थात् प्ररूपण हो वह ज्ञानप्रवाद नामक पंचम पूर्व है
वह मति, ध्रुव, अवधि, मनःपच्यं और केवल इन पाँच सम्पज्ञानोंका तथा कुमति, कुश्रुत
कुश्रुतविध इन तीन अज्ञानोंका स्वरूप, संख्या, विषय और फलको लेकर कथन करता है
जिसमें दो लाखमें गुणित पचास किन्तु 'पंचमरूप' कहनेसे एक कम एक करोड़ पद होते
हैं । सत्यका प्रवाद अर्थात् कथन जिसमें हो यह सत्यप्रवाद पूर्व है । यह वचन गुप्ति, वचन
३५ के मांकारके कारण, कथन प्रयोग, चारह भाषा, यथाके भेद, अनेक प्रकारका असत्य और

स्थंगत्तु कारणदिदं । व्यवहाराश्रयदिदं कर्मनोरुम्मंरूपमूर्तद्रव्यानादिमंबवदिदं मूर्तनु निदचपनया-
श्रयदिनमूर्तमंत्रिमायाद्यतमधम्मंगत्तु समुच्चयं माडल्पद्गुमीयातमप्रवादबोद्धु द्विलक्षणगुणितप्रयोदशशत-
पदंगत्तु पद्द्विभक्तिकोटिगत्तुपुर्वं बुदत्थं । २६००००००० २६ को ।

- कर्मंगः प्रवादः प्रहणमस्मिस्मिन्निति कर्मप्रवादमष्टमं पूर्वमदु । मूलोत्तरप्रकृतिभेदभिन्नं
- १ बहुविकल्पत्रयोदयोदीरणासत्त्वाद्यवस्थं ज्ञानावरणादिकर्मस्वरूपं सांपरायिकेभ्योपयतपस्याञ्जना-
कर्मामिगुमं यनिगुगुमस्मिन्निति द्विलक्षणगुणितनवतिपदंगत्तु एककोटियुगमतीतिलक्षणगत्तुपुर्वं बुदत्थं
१८०००००० १८० ल । प्रत्याख्यायते निषिष्यते सावद्यमस्मिन्ननेनेति वा प्रत्याख्यानं नवमं
पुत्र्यमदु नामस्यापनाद्रव्यशेप्रकालभावंगत्तुनाश्रयिसि पुरुषसंहननबलाद्यनुसारादिदं परिमितकालं
मेनपरिमितकालं प्रत्याख्यानं सावद्यवस्तुनिवृत्तियनुपवासाश्रयिष्यं तद्भावनांगमुमं पंचसमिति
प्रिगुरयादिदं यनिगुगुमस्मिन्निति द्विलक्षणगुणितद्वाचश्वारिगतपदंगत्तु चतुरशीतिलक्षणपदंगत्तुपुर्वं बुदत्थं
१० ८८००००० ८८ ल । विद्यानामनुवादोऽनुक्रमेण वर्णनं यस्मिन् तद्विद्यानुवादं दशमं पूर्वमदु ।
गतज्ञानमनुक्रमेणाद्यविद्येगत्तुं रोहिण्यादिपंचशतमहाविद्येगत्तुमं तत्स्वरूपसामर्थ्यसाधनमंत्रतंत्र-
पूजाश्रयानंगत्तुमं गिद्धमादिद्येगत्तु फलविशेषंगत्तुमनेदु महानिमित्तंगत्तुमनवायुबोद्धे अंतरिस्त

विद्येगत्तुमं निरवतनगत्तुमं इत्यादय आत्मधर्माः समुच्चोपन्ते । तस्मिन्नात्मप्रवादे द्विलक्षणगुणित-
नवतिपदंगत्तुमं वद्विभक्तिशेन इत्ययं २६००००००० । कर्मंगः प्रवादः प्रहणमस्मिन्निति कर्मप्रवादः

- १९ मूर्तं नृदं मूर्तं मूलोत्तरप्रकृतिभेदभिन्नं बहुविकल्पत्रयोदयोदीरणासत्त्वाद्यवस्थं ज्ञानावरणादिकर्मस्वरूपं
दशवक्त्रेदीरणासत्त्वाद्यवस्थं च वर्णयति । तत्र द्विलक्षणगुणितनवतिपदानि एककोट्यशीतिलक्षण-
गत्तुमं १८०००००० । प्रत्याख्यायते निषिष्यते सावद्यमस्मिन्ननेनेति वा प्रत्याख्यानं नवमं पूर्व । तत्र
नवमं प्रत्याख्यानं प्रहणमस्मिन्ननेनेति पुरुषसंहननबलाद्यनुसारेण परिमितकालं अपरिमितकालं वा प्रत्याख्यानं
नवमं प्रत्याख्यानं अशास्यं च तदनुपवादात् पञ्चसमितिगुणितदिदं च वर्णयति । तत्र द्विलक्षणगुणितद्वाचश्वारि-
२० विद्येगत्तुमं चतुरशीतिलक्षणगत्तुमं ८८ ल । विद्याना अनुवादः अनुक्रमेण वर्णनं यस्मिन् तद्विद्यानुवादं
दशमं नृदं मूर्तं मूलोत्तरप्रकृतिभेदभिन्नं रोहिण्यादिपञ्चशतमहाविद्येगत्तुमं तत्स्वरूपसामर्थ्यसाधनमन्त्र-
पूजाश्रयानंगत्तुमं गिद्धमादिद्येगत्तु फलविशेषंगत्तुमनेदु महानिमित्तंगत्तुमनवायुबोद्धे अंतरिस्त

स्वभाववाया होनेमे अन्तरात्मा हे । 'इति और च' शब्द उक्त और अनुक्त अर्थके समु-
च्चयके लिए हे । इसमे व्यवहारतयमे कर्म-नोकरूप मूर्त द्रव्य आदिके सम्बन्धसे मूर्तिक हे

- और निश्चयतयमे अनूर्तिक हे, इत्यादि आत्मधर्मका समुच्चय किया जाता हे । उस आत्म-
प्रवादाने दो लायमे मुनिव तेरह मी अर्थात् छवीम कोटि पद हे । कर्मका प्रवाद अर्थात्
१९ कथन इसमे दो बह कर्मप्रवाद नामक आठवाँ पूर्व हे । वह मूल और उत्तर प्रकृतिके भेदसे
भिन्न, अनेक प्रकारके बन्ध चदय बदीरणा मत्ता आदि अवस्थाको लिये हुए ज्ञानावरण आदि
कर्मके बहकारको तथा समबदान, दीर्घाय, तपस्या, आधाद्यो आदिका कथन करता हे । उसमे
दो लायमे मुनिव तरेव अर्थात् एक कोटि इक्यामी लाय पद हे । जिसमे 'प्रत्याख्यानमे'
१० अर्थात् सावद्य कर्मका निषेध किया गया हे वह प्रत्याख्यान नामक नौवाँ पूर्व हे । वह नाम,
प्रत्याख्यान, इतर, शेष, काट, भावके आश्रयमे पुरुषके मदनन और बन्धके अनुसार परिमित काल
या अपरिमितकालके लिए प्रत्याख्यान अर्थात् सावद्य वस्तुओंसे निवृत्ति, उपवासको विधि,
काको भावना, पंच सन्निधि, तीन मुनि आदिका वर्णन करता हे । इसमे दो लायसे मुनिव
बहकारके अर्थात् नौवाँ लाय पद हे । विद्याओंका अनुवाद अर्थात् अनुक्रमसे वर्णन
१९ किया हे दो बह विद्यानुवाद पूर्व हे । वह अनुक्रमेणा आदि सात मी अन्वयिषयको,

२. च कर्मधर्माः १६१ ।

चतुर्विंशतिशयाष्टमहाप्रातिहार्यपरमोदारिकदिव्यदेहसमवसरणसभाधर्मोपदेशनादितोत्थंकरत्व-
महिम्नयु चतुर्विंशतिस्तवनमे बुद्धु । तत्प्रतिपादकशास्त्रमु चतुर्विंशतिस्तवनमे बु
पेत्त्रल्पदुद्धु । ततः परं एकतीत्यंकरालवनचैत्यचैत्यालयादिस्तुतिर्यं वंदनेयं बुद्धु तत्प्रतिपादकशास्त्रमु
धरनेयं दु पेत्त्रल्पदुद्धु । प्रतिक्रम्यते प्रमादकृतदेवसिकादिदोषो निराक्रियते इनेनेति प्रतिक्रमणं ।

५. दैवसिक रात्रिक पाक्षिक चातुर्मासिक सांवत्सरिकेव्यापियकोत्तमार्थभेदवि सप्तविधमत्रकुं ।
भरतादिभेदं दुःपमादिकालं पदसंहननसमन्वितस्विरास्विराविपुसभेदंगुणमनाश्रयिसि तत्प्रति-
पादकमप्य शास्त्रं प्रतिक्रमणमे बुद्धु । विनयः प्रयोजनमस्येति वैनयिकमे बुद्धु ज्ञानदर्शनचारित्र-
तपउपचारविषयमप्य पंचविधविनयविधानं पेत्त्रमु ।

वृत्तेः क्रियायाः कर्मं विधानमस्मिन् वर्णयत इति कृतिकर्म । ई कृतिकर्मंशास्त्रमहंसिद्धा-

१०. चार्यंयद्बुद्धुतसाधुगुरुमोदलाद नयदेवतावंदनानिमित्तं आत्माधीनता प्रावक्षिष्य त्रिवारश्रयवतति
चतुःविरोद्वादशाप र्वादिदलगतित्वनैमित्तिकक्रियाविधानं वर्णयुगुं । विशिष्टाः कालाः विकालाः
तेषु भवानि वैकालिकानि । दशवैकालिकानि वर्णयन्तेस्मिन्निति दशवैकालिकं । ई दशवैकालिक-

भासपरानाश्रयभावनाश्रय पञ्चमहाकल्याणचतुर्विंशतिशयाष्टमहाप्रातिहार्यपरमोदारिकदिव्यदेहसमवसरण-

१५. तदभासपरं एकतीर्थकराश्रयना चैत्यचैत्यालयादिस्तुतिः वन्दना तत्प्रतिपादकं शास्त्रं वा वन्दना इत्युच्यते ।
प्रतिक्रम्यते प्रमादकृतदेवसिकादिदोषो निराक्रियते इनेनेति प्रतिक्रमणं तच्च दैवसिकरात्रिकपाक्षिकातुर्मासिक-

पाक्षिकरात्रिकेव्यापियकोत्तमार्थभेदविषय, भरतादिभेदं दुःपमादिकालं पदसंहननसमन्वितस्विरास्विरादिपुस-
भेदंगुणमनाश्रयिसि तत्प्रतिपादकं शास्त्रमपि प्रतिक्रमणम् । विनयः प्रयोजनमस्येति वैनयिकं तच्च ज्ञानदर्शनचारित्र-
तपउपचारविषयं पञ्चविधविनयविधानं कथयति । वृत्तेः क्रियायाः कर्मं विधानं अस्मिन् वर्णयते इति वृत्तिकर्म ।

२०. तच्च वर्णयन्तेऽस्मिन्पञ्चमहाप्रादित्वदेवदेवतावन्दनानिमित्तमात्माधीनताप्रावक्षिष्यत्रिवारश्रयवतचतुःविरो-
द्वादशाप र्वादिदलगतित्वनैमित्तिकक्रियाविधानं च वर्णयति । विशिष्टाः काला विकालास्तेषु भवानि वैकालिकानि

यिक् शास्त्रं षड्पुक् उसका ज्ञाता, अथवा सामायिक पर्यायरूप परिणत व्यक्ति भावसामा-
यिक हे । उस-उम काळ सम्बन्धी चौथीस तीर्थकरंकि नाम, स्थापना, द्रव्य और भावको लेहर

२५. वसतस गमा, धर्मोपदेशना आदिके द्वार, तीर्थकरकी महिमाका स्तवन चतुर्विंशतिस्तव हे ।
अपना उसका कथन करनेवाला शास्त्र चतुर्विंशतिस्तव कहा जाता हे । उसके पश्चात् एक
तीर्थकरको लेहर चैत्य-चैत्याल्य आदिकी स्तुति वन्दना हे । अथवा उसका प्रतिपादक
शास्त्र वन्दना कहलाता हे । जिसके द्वारा 'प्रतिक्रम्यते' अर्थात् प्रमादसे किये हुए दैवसिक
आदि दोषोंका विशेषण किया जाता हे वह प्रतिक्रमण हे । यह दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक,
३०. चातुर्मासिक, सांवत्सरिक, ऐषांधिक और पारमार्थिकके भेदसे सात प्रकारका हे । भरत
प्रतिक्रमणका कथन करनेवाला शास्त्र भी प्रतिक्रमण हे । विनय जिसका प्रयोजन हे वह
वैनयिक हे । यह ज्ञान, दर्शन, धारित्र, तप और षड्पुत्रके भेदसे पाँच प्रकारकी विनयका
३५. हे । इनमे अर्चन, गिद्ध-आचार्य, बृहस्पत (इसाप्याय), माधु आदि नौ देवताओंकी वन्दनाके
विभिन्न अर्थनामोंका (अर्चने अधीन होना), तीन बार प्रदक्षिणा, तीन बार नमस्कार, चार

रासम्प्रत्ययसंघमादिविधानं ततद्रूपपादस्थानवैभवाविशेषमुमं वर्णिसुगुं ।

मह्युपंडरीकमेव शास्त्रं महर्द्धिकरूपेद्रप्रतीन्द्रादिगळोळुत्पतिकारण तपोविशेषाद्याचारमं वर्णिसुगुं ।

नियोधनं प्रमाददोषनिराकरणं निषिद्धिः संज्ञेयोळु कप्रत्ययमागुत्तिरळु निषिद्धिका । एवंतु

५ प्रायश्चित्तशास्त्रमेव वृत्तबंधु प्रमाददोषविशुध्यर्थं बहुप्रकारमप्य प्रायश्चित्तमं वर्णिसुगुं । निशीतिका वा एवंतु कथञ्चित्पाठं कागल्पद्रुगुं ।

इंनु चतुर्दशविधमप्य अंगयाह्यश्रुतं परिभाषितसल्पद्रुगुं । अनंतरं शास्त्रकारं श्रुतज्ञान-
हात्म्यमं वेद्ध्यर्थं ।

सुदकेवलं च णाणं दोषिणावि सरिसाणि ह्येति बोहादो ।

सुदणाणं तु परोक्षं पञ्चकलं केवलं णाणं ॥३६९॥

१० श्रुतं केवलं च ज्ञानं द्वे अपि सदृशे भवतो बोधात् । श्रुतज्ञानं तु परोक्षं प्रत्यक्षं केवलं ज्ञानम् ।

श्रुतज्ञानमुं केवलज्ञानमुं धेरदं ज्ञानंगळु बोधात् अरिदिनिदं समस्तवस्तुद्रव्यगुणपर्यायपरि-
ज्ञानादिदं समानंगळेप्युतु । तु मत्ते इडु विशेषमुदंते दोडे परमोत्कर्षपर्यंतप्राप्तमाहुदादोडे

१५ श्रुतकेवलज्ञानं सरलपदार्थगळोळु परोक्षं अविशदमस्पष्टममूर्त्तगळोळुमत्त्यंपर्यायंगळोळुमुच्चि
श्रुतज्ञानंगळोळुं विशदस्वरिदं प्रवृत्त्यभावमपुदरिदं । मूर्त्तंगळोळु व्यंजनपर्यायंगळुप्य स्थूलांशंगळुप्य
स्वरिपयंगळोळु अवयवज्ञानादियते साक्षात्करणाभावादिदमुं सरुलावरणबोध्यंतराय निरवशेषज्ञयो-

७७७ महर्द्धेयु इत्यत्रोत्तरादिपु उतति कारणतोविशेषाद्याचरणं वर्णयति । नियोधनं प्रमाददोषनिराकरणं
निषिद्धिः संज्ञेया वदन्त्ये निषिद्धिका प्रायश्चित्तशास्त्रमित्यर्थं, तच्च प्रमाददोषविमुक्त्यर्थं बहुप्रकारं प्रायश्चित्तं

१० वर्णयति । निशीतिका इति क्वचित्पाठो दृश्यते । एवं चतुर्दशविध अङ्गयाह्यश्रुतं परिभाषनीयम् ॥३६७-३६८॥
अथ शास्त्रकारं श्रुतज्ञानमाहात्म्यं वर्णयति ॥

श्रुतज्ञानं केवलज्ञानं चेति द्वे ज्ञाने बोधात् समस्तवस्तुद्रव्यगुणपर्यायपरिज्ञानान् सदृशे समाने भवतः
तु-मुक्तः अत्र विशेषः । स कः ? परमोत्कर्षपर्यंतं प्राप्तमपि श्रुतकेवलज्ञानं सरलपदार्थेषु परोक्षं अविशदं अस्पष्टं
म-तु-तु अर्थपर्यायेषु अन्वेषु सूत्रमात्रेषु विशदस्वरिणु विशदस्वरिणु प्रवृत्त्यनगात् । मूर्त्तयपि व्यञ्जनपर्यायविषु स्थूलांशेषु

२५ पुनर्द्धीक शास्त्रको महापुण्डरीक कहते हैं । इसमें महर्द्धिक इन्द्र-प्रतीन्द्र आदिमें उत्पत्तिके
कारण तपोविशेष प्रादि आचरणका कथन होता है । नियोधन अर्थात् प्रमादसे लगे दोषोंका
निराकरण निषिद्धि है । संज्ञामें 'च' प्रत्यय करनेपर निषिद्धिका होता है, उसका अर्थ है
प्रायश्चित्त शास्त्र । इसमें प्रमादसे लगे दोषोंको विमुक्तिके लिए बहुत प्रकारके प्रायश्चित्तोंका
बर्णन है । कहीपर 'निशीतिका' पाठ भी देला जाता है । इस प्रकार चौदह प्रकारका अंग-

१० शास्त्र श्रुत ज्ञानता ॥३६७-३६८॥

अथ शास्त्रकारं श्रुतज्ञानके माहात्म्यको कहते हैं—
श्रुतज्ञान और केवलज्ञान के दोनों ज्ञान समान यद्युक्तोंके द्रव्य-गुण-पर्यायोंको जानने-

१५ श्रुतकेवल ज्ञान है । किन्तु इतना विशेष है कि परम उत्कर्ष पर्यन्तको प्राप्त भी श्रुतज्ञान
सदृश बराबरीमें वर्णन होता है, अस्पष्ट ज्ञानता है, अमूर्त्त अर्थ पर्यायोंमें तथा अन्य सूत्र
१० अन्वेषे स्पष्ट रूपमें ज्ञानको स्पष्टि नहीं होती । मूर्त्त भी व्यंजन पर्यायोंको अपने विषयोंके

विहितमुक्तं भवगुणप्रत्ययविहितं भवप्रत्ययत्वादिदं गुणप्रत्ययत्वादिदं पेञ्जल्पदृढं तद्विदमवधिज्ञान-
मिति । अंतपिदनवधिज्ञानमेदितुं श्रुवति अहंदादिगुणं पेञ्जवर । सीमाविषयमनुञ्जयविज्ञानं
भवप्रत्ययमेदुं गुणप्रत्ययमेदितुं द्विविधमवकुम्भे बुद्धतात्पर्यं ।

भवपञ्चइगो सुरणिगयाणं तित्थेवि सञ्चअंगुत्थो ।

गुणपञ्चइगो परतिरियाणं संखादिचिण्हंमवो ॥३७१॥

भवप्रत्ययकं सुरनारकाणां तीत्येपि सञ्चांगोत्यं । गुणप्रत्ययकं नरतिरइचां शंखादि-
चिह्नभवं ॥

भवप्रत्ययावधिज्ञानं देवयकंकोळं नारकरोळं चरमभवतीत्यंकरोळं संभविमुगुमदुगुमवरोळं
सञ्चांगोत्यमवकुं । सञ्चात्मप्रदेशस्यावधिज्ञानावरणवीर्यात्तरायद्वयशयोपशामोत्पन्नमे बुद्धरथं । गुण-
प्रत्ययावधिज्ञानं पर्याप्तमनुष्यगं संज्ञिवंचेंद्रियपर्याप्तित्येचंगं संभविमुगुमदुगुमवरोळं शंखादि-
चिह्नभवं नाभिप्रदेशादिदं मेगण शंखपञ्चवज्रस्वस्तिकज्ञापकलशादिगुमभिचिह्नलक्षितात्मप्रदेशस्या-
वधिज्ञानावरणवीर्यात्तरायकम्मंद्रयशयोपशामोत्यमे बुद्धरथं । भवप्रत्ययावधिज्ञानदोळं दर्शनविगुदधा-
दिगुणसद्भावमादोडमवनपेक्षिसवे भवप्रत्ययत्वमरियत्पडुगुं । गुणप्रत्ययावधिज्ञानदोळं तिय्यं-
मनुष्यभवसद्भावमादोडमवनपेक्षिसवे गुणप्रत्ययत्वमरियत्पडुगुं ।

१५ विधं भवगुणप्रत्ययविहितं—भवः नरकादिपर्यायः, गुणः सम्यग्दर्शनविगुदधादिः भवगुणो प्रत्ययो कारणे ताम्नां
विहितमुक्तं भवगुणप्रत्ययविहितं भवप्रत्ययत्वेन गुणप्रत्ययत्वेन अवधिज्ञानं द्विविधं कथितमित्यर्थः ॥३७०॥

तत्र भवप्रत्ययावधिज्ञानं सुराणां नारकाणां चरमभवतीत्यंकराणां च संभवति । तच्च तेषां सर्वांगोत्थं
भवति । सर्वात्मप्रदेशस्यावधिज्ञानावरणवीर्यान्तरायकम्मंद्रयशयोपशामोत्यं भवतीत्यर्थः । गुणप्रत्ययं अवधिज्ञानं
नराणां पर्याप्तमनुष्याणां निरुत्थां च संज्ञिपञ्चेंद्रियपर्याप्तितरुत्थां संभवति । तच्च तेषां शंखादिचिह्नभवं
भवति, नाभिप्रदेशे साङ्ख्यपञ्चवज्रस्वस्तिकज्ञापकलशादिगुमभिचिह्नलक्षितात्मप्रदेशस्यावधिज्ञानावरणवीर्यान्तराय-
कम्मंद्रयशयोपशामोत्पन्नमित्यर्थः । भवप्रत्यये अवधिज्ञाने दर्शनविगुदधादिगुणसद्भावविधिं तदनपेक्षैव भवप्रत्य-
यकं ज्ञानञ्चम् । गुणप्रत्ययेऽवधिज्ञाने तिर्यग्मनुष्यभवसद्भावविधिं तदनपेक्षैव गुणप्रत्ययत्वं ज्ञानञ्चम् ॥३७१॥

अपरिमित है येसा इमका नही है । परमागममें जो तीसरा सीमा विषयक ज्ञान कहा है उसे
अहंत आदि अवधिज्ञान कहते हैं । भव अर्थात् नरकादि पर्याय और गुण अर्थात्
सम्यग्दर्शन विगुदधि आदि । भव और गुण जिनके कारण हैं वे भवप्रत्यय और गुणप्रत्यय
नामक अवधिज्ञान हैं । इस तरह अवधिज्ञानके दो भेद हैं ॥३७०॥

उनमेंसे भवप्रत्यय अवधिज्ञान देवों, नारकियों और चरमशरीरी तीर्थकरोंके होता
है । तथा यह ममस्त आत्माके प्रदेशोंमें वर्तमान अवधिज्ञानावरण और वीर्यान्तराय नामक
दो कर्मोंके शयोपशमसे उत्पन्न होता है इसलिये इसे सर्वांगसे उत्पन्न कहा जाता है । गुण-
प्रत्यय अवधिज्ञान पर्याप्त मनुष्योंके और संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त तिर्यचोंके होता है । और वह
एकके शंख आदि चिह्नोंसे उत्पन्न होता है । अर्थात् नाभिसे ऊपर शंख, पद्म, वज्र, स्वस्तिक,
मञ्जु, कलश आदि गुण चिह्नोंसे युक्त आत्मप्रदेशोंमें स्थित अवधिज्ञानावरण और वीर्यान्व-
राय कर्मोंके शयोपशमसे उत्पन्न होता है । भवप्रत्यय अवधिज्ञानमें भी सम्यग्दर्शन, विगुदधि
आदि गुण रहते हैं फिर भी कर्मोंके उत्पत्तिमें उन गुणोंकी अपेक्षा नहीं होती, मात्र भवधारण
१५ करनेमें ही अवधिज्ञान होता है इसीलिए उसे भवप्रत्यय कहते हैं । गुणप्रत्यय अवधिज्ञानमें
एकदि मनुष्य और तिर्यचका भव रहता है फिर भी अवधिज्ञानकी उत्पत्तिमें उसकी अपेक्षा

ननुगामिये बुदवकुमावुदोडु भवांतरमं वञ्जिसल्लुवल्लु तां पुट्टिव भववोत्रे केडुगुं । धोत्रांतरमं वञ्जिसल्लो मेणमाणे अडु भवाननुगामिये बुदवकुमावुदोडु क्षोत्रांतरमं भवांतरमुमं वञ्जिसल्लुदल्लु । स्वोत्पन्नक्षेत्रभवंगळोके केडुगुमदुभयाननुगामिये बुदवकुमावुदोडु हानियुं वृद्धियुं इल्लवे सूर्य्य-मंडलवैतेकप्रकारमागिर्हत्तवकुंमदु अवस्थितावधिये बुदवकुमावुदोडु ओम्मे पेच्चुगुमोम्मे ५ कुंडुगुमोम्मे यवस्थितमागिकुंमदनवस्थितावधिज्ञानमं बुदवकुं । आवुदोडु शुशलपशर चंद्रमंडलवैते स्वोत्कृष्टपर्यंतं पेच्चुगुमदु वद्धमानदेशावधिये बुदवकुं । आवुदोडु कृष्णपशर चंद्रमंडलवैते स्वक्षय-पर्यंतं कुंडुगुमदु हीयमानदेशावधिये बुदवकुंमते सामान्यदिग्भवधिज्ञानं देशावधिये कुं वनेके परमाव-धिये कुं सर्वावधियुमेंदितु त्रिधा त्रिप्रकारमवकुमिनितु गुणप्रत्ययमप्य देशावधिये षट्प्रकारमकुं परमावधिसर्वावधिगळल्लेयुदत्थं ।

१० भवपच्चङ्गो ओहो देसोही होदि परमसर्वोही ।

गुणपच्चङ्गो णियमा देसोही वि य गुणे होदि ॥३७३॥

भवप्रत्ययावधिदेशावधिर्भवति परमसर्वावधिः । गुणप्रत्ययो नियमाद् भवतः देशावधिरपि च गुणे भवति ॥

आवुदोडु पूर्वोक्तभवप्रत्ययावधिपुनियमादवश्यंभावात् देशावधियेयकुं । देवनारक-

१५ गळगं गृहस्थतीर्थकरं गेयं परमावधियुं सर्वावधियुं संभयिसवपुदरिदं, परमावधियुं सर्वावधियुं नियमदिदं गुणप्रत्ययं ल्येयपुवेके दोडे संयमलक्षणगुणभवदोळा येरडवकभावमपुदरिदं देशावधियुं-

तद्भवाननुगामि । यत् क्षोत्रान्तरं भवान्तरं च मानुगळति स्वोत्पन्नक्षेत्रभवयोरेव विनश्यति तत् क्षेत्रभवाननु-गामि । यद्वानिवृद्धिमां विना सूर्य्यमण्डलवत् एकप्रकारमेव तिष्ठति तदवस्थितम् । यत् कदाचिदपि कदाचिदपि कदाचिदपि तद्वे च तदनवस्थितम् । यत् शुशलपशस्य चन्द्रमण्डलवत् स्वोत्कृष्टपर्यंतं वद्धते तत् वर्धमानम् ।

२० यत् कृष्णपशचन्द्रमण्डलवत् स्वक्षयपर्यंतं हीयते तद्वीयमानं देशावधिज्ञानं भवति । तथा सामान्येन अवधिज्ञानं देशावधिः परमावधिः सर्वावधिरव इति त्रिधा त्रिप्रकारं भवति । एवं गुणप्रत्ययो देशावधिः षोडश न परमावधिसर्वावधी इत्यर्थः ॥३७२॥

यः पूर्वोक्तो भवप्रत्ययोऽवधिः स नियमात्—अवश्यंभावात् देशावधिरव भवति देवनारकयोर्गृहस्थ-तीर्थकरस्य च परमावधिसर्वावधोरसंभवात् । परमावधिः सर्वावधिरव द्वावपि नियमेन गुणप्रत्ययावैव भवतः

२५ भवान्तरमं जाये या न जाये, वह क्षेत्राननुगामी है । जो अन्य भवमें साथ नहीं जाता अपने उत्पत्तिभवमें ही छूट जाता, अन्य क्षेत्रमें जाये या न जाये, वह भवाननुगामी है । जो न अन्य क्षेत्रमें साथ जाता है और न अन्य भवमें साथ जाता है अपने उत्पत्तिक्षेत्र और भवमें ही छूट जाता है वह क्षेत्र भवाननुगामी है । जो हानि-वृद्धिके विना सूर्य्यमण्डलकी तरह एक रूप ही रहता है वह अवस्थित है । जो कभी बढ़ता है, कभी घटता है, कभी तदवस्थ रहता है वह अनवस्थित है । जो शुशलपशके चन्द्रमण्डलकी तरह अपने उत्कृष्टपर्यंत बढ़ता है वह वर्धमान है । जो कृष्णपशके चन्द्रमण्डलकी तरह अपने क्षयपर्यंत घटता है वह हीयमान है । तथा सामान्यसे अवधिज्ञान देशावधि, परमावधि, सर्वावधिके भेदसे तीन प्रकार है । इस प्रकार गुणप्रत्यय देशावधि छट् प्रकारका है परमावधि सर्वावधि नहीं ॥३७३॥

पूर्वोक्त भवप्रत्यय अवधि नियमसे देशावधि ही होता है, क्योंकि देव, नारकी और

३५ पृथक् अवस्थानमें तीर्थकरके परमावधि सर्वावधि नहीं होते । परमावधि और सर्वावधि

इतितु क्षेत्रदोहं पूर्वोक्तजघन्यद्रव्यंगत्तेनितोऽप्यनितुं जघन्यदेशावधिज्ञानमरिगुमाल्लियं पोरणि-
दुंदुवनरिषदं दितु क्षेत्रसोमं पेत्तल्पददुवु ।

अवरोहिक्षेत्तदीहं विस्तारुस्तेदयं ण जाणामो ।

अण्णं-पुण समकरणे अवरोगाहणपमाणं तु ॥३७०॥

१ अवरावधिक्षेत्रदैर्घ्यं विस्तारोत्सेयकं न जानीमः । अन्यत्पुनः समकरणे अवरावगाहन-
प्रमाणं तु ।

जघन्यावधिविषयक्षेत्रदैर्घ्यंविस्तारोत्सेयप्रमाणं नामरिषे तु ईगत्तवरुपदेशाभायमप्युत्तरदं ।
तु मत्ते परमगुरुपदेशपरंपरायातं मतो दुंदुवु समकरणदोहं भुजकोटियेदिगच्छे ह्योनाधिकभाप्रमिल्लदं
समीकरणमागुतिरलु पुट्टिदं क्षेत्रफलं जघन्यावगाहनप्रमाणं घनांगुलासंख्यातेरुभागमात्रमत्रुमै-
१० विदने बल्लेवु ।

अवरोगाहणमाणं उस्सेहंगुलअसंखुमागस्स ।

सुइस्स य घणपदरं होदि हु तवसेत्तसमकरणे ॥३८०॥

अवरावगाहनमानमुत्सेयांगुलासंख्यातभागस्य । सूच्यादच घनप्रतरं भवति खलु तत् क्षेत्र-
समकरणे ।

१५ अंतादोडा सूक्ष्मनिगोद लब्ध्यपर्याप्तकन जघन्यावगाहनमेंतुडोदितु प्रश्नमागुतिरलुत्तरवचन-
मिदु तज्जघन्यावगाहनमनियतसंस्थानमत्रकुमादोडं क्षेत्रलंडनविधानदिदं भुजकोटि क्षेत्रिगच्छे सम-
करणमागुतिरलुत्सेयांगुलं परिभाषानिष्पन्नव्यवहारसूच्यांगुलमनापुदानुमोद संख्यातदिदं संडित्ति-

ज्ञानविषयभूतक्षेत्रप्रमाणं भवति ६ । ८ । २२ । एतावति क्षेत्रे पूर्वोक्तजघन्यद्रव्याणि यावन्ति सति तावन्ति

$$\begin{array}{ccccccc} & a & & & & & \\ & \downarrow & & & & & \\ & १९ & | & ८ & | & १ & | & ८ & | & २२ & | & १ & ९ \\ & a & & a & & a & & & & & & & \end{array}$$

जघन्यदेशावधिज्ञानं जानाति न तद्वह्निःस्थितानीति क्षेत्रसोमा कथिता ॥३७८॥

२० जघन्यावधिविषयक्षेत्रस्य दैर्घ्यंविस्तारोत्सेयप्रमाणं न जानीमः । इदानी तदुपदेशाभावात् । तु पुन-
परमगुरुपदेशपरंपरायातं जघन्यावगाहनप्रमाणं समकरणे-समीकरणे कृते सति घनांगुलासंख्यातेरुभागमात्रं
भवति इत्यन्यत्पुनर्जानीमः ॥३७९॥

तद्दि तत्सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकस्य जघन्यावगाहनं कोदुग् अस्ति ? इति चेत्, तदवगाहनं अनियत-
संस्थानमस्ति तथापि क्षेत्रलण्डनविधानेन भुजकोटिवेद्याना समकरणे सति उत्सेयांगुलपरिभाषानिष्पन्नव्यवहार-

२५ क्षेत्रमें पूर्वोक्त प्रमाणवाले जितने जघन्य द्रव्य होते हैं उन सबको जघन्य देशावधिज्ञान
जानता है । उस क्षेत्रसे याह रीथतको नहीं जानता । इस प्रकार जघन्य देशावधिज्ञानके
क्षेत्रकी सीमा कही ॥३७८॥

हम जघन्य देशावधि ज्ञानके विषयभूत क्षेत्रकी लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई नहीं जानते,
क्योंकि हम फालमें उसका उपदेश नहीं प्राप्य है । किन्तु परम गुरुके उपदेशकी परम्परासे
३० इनना जानते हैं कि जघन्य अवगाहनाके प्रमाणका समीकरण करनेपर क्षेत्रफल घनांगुलके
असंख्यातवें भाग मात्र होता ॥३७९॥

प्रश्न होता है कि यह सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना कैसी है ?
इसका उत्तर यह है कि उस जघन्य अवगाहनाका आकार नियत नहीं है । फिर भी क्षेत्र



नप्रमाणं जघन्यदेशावधि क्षेत्रमद्रु कारणदिवं व्यवहारांगुलमनाश्रयित्वे पेठल्पदुदु । तजघन्याव-
गाहनसुं परमाणमवोऽङ्ग देहगृहप्राप्तनगराविप्रमाणमुत्तोषांगुलविवमे धेवितु नियमितमणुर्वरिवं
व्यवहारांगुलाश्रितमे यक्कुं । मेले यावुवो देहयोऽङ्गुलमावक्रिया एकभागमसंतोऽङ्गमित्यादिगाया
सूत्रोक्तकांडकाङ्कोऽङ्गुलप्रहणमल्लि प्रमाणांगुलमे ग्राह्यमवकुमुतरोत्तर निर्दिश्यमानहस्तगण्युति-

५ योजनभरतादिक्षेत्रंगङ्गो प्रमाणांगुलाश्रितत्वविदं ।
अवरोहिखेत्तमज्जे अवरोही अवरोह्यमवगमद ।
तद्व्यवस्सवगाहो उत्सेहासंखणपदरो ॥३८२॥

अवरावधिक्षेत्रमध्ये अवरावधिरवरद्रव्यमवगच्छति । तद्व्यवस्थावगाहः उत्तोषासंख-

घनप्रतरः ।

१० जघन्यावधिक्षेत्रमध्यदोऽङ्गि र्थितं पूर्वोक्तजघन्यद्रव्यं जघन्यदेशाप्रधिज्ञानमरिगुं । तत्
क्षेत्रमध्यदोऽङ्गि र्थितं असंख्यातंगङ्गनीदारिकशरीरसंचयलोकभक्तेकभागप्रमितलंडंगङ्गननिनुमनरिगु-
मे युवत्यं । तजघन्यपुद्गलस्कंधद मेले एकद्वयादिप्रदेशोत्तरपुद्गलस्कंधंगङ्गनरिगुमे युवतिरिगु-
पेठल्येडेके बोडे सूक्ष्मविषयज्ञानके स्थूलावबोधनदोऽङ्गु सुषटत्वमणुर्वरिवं । द्रव्यावगाहक्षेत्रं जघन्या-
वधिविषयक्षेत्रं नोडलसंख्येयगुणहीनमवकुमादोऽङ्गु उत्सेधघनांगुलासंख्यातभागमात्रमक्कुं । मवर

१५ सूक्ष्मनिगोदलक्ष्यपर्याप्तकजघन्यावगाहनप्रमाणं जघन्यदेशावधि क्षेत्रं ततः कारणान्, देहगृहयामनगरादिप्रमाणं
उत्सेधाङ्गुलेनैवेति परमाणमे नियमितत्वात् व्यवहाराङ्गुलमेवाश्रितं भवति । उपरि यत्र "अङ्गुलमावक्रियाए
भागमसंखेज्जदो वि संखेज्जो, इत्यादिगाथासूत्रोक्तकाण्डकेषु अङ्गुलप्रहणं तत्र प्रमाणाङ्गुलमेव ग्राह्यं, उत्तरोत्तर-
निर्दिश्यमानहस्तगण्युतियोजनभरतादिक्षेत्राणां प्रमाणाङ्गुलाश्रितत्वान् ॥३८१॥

जघन्यावधिक्षेत्रमध्ये स्थितं पूर्वोक्तं जघन्यद्रव्यं जघन्यदेशावधिज्ञानं जानाति तत्रक्षेत्रमध्यस्थिजानि
२० औदारिकशरीरसंचयस्य लोकविभक्तिकभागप्रमितलंडंगङ्गानि असंख्यातानि जानातीत्यर्थः । तजघन्यपुद्गलस्कन्ध-
स्थोपरि एकद्वयादिप्रदेशोत्तरपुद्गलस्कन्धान् न जानातीति न वाच्यं, सूक्ष्मविषयज्ञानस्य स्थूलावबोधने
सुषटत्वान् । द्रव्यावगाहक्षेत्रं तु जघन्यावधिविषयक्षेत्रादसंख्यातगुणहीनं भवति, तथाप्युत्सेधघनाङ्गुलासंख्यात

या आत्मांगुलकी अपेक्षा नहीं, क्योंकि सूक्ष्म निगोद लक्ष्यपर्याप्तकी जघन्य अवगाहन
प्रमाण जघन्य देशावधिका क्षेत्र है । और परमाणममें यह नियम कहा है कि शरीर, प
२५ ग्राम, नगर आदिका प्रमाण उत्सेधांगुलसे ही मापा जाता है । इसलिये व्यवहार अंगुलका
आश्रय लिया है । आगे 'अंगुलमालियाए' आदि गाथासूत्रोंमें कहे गये काण्डकोंमें अंगुल
प्रमाण प्रमाणांगुलसे लिया है । उससे आगे भी जो हस्त, गव्युति, योजन भरत आदि प्रमा
क्षेत्र कहा है वह सब प्रमाणांगुलसे ही लिया है ॥३८१॥

जघन्य अवधिज्ञानके क्षेत्रके मध्यमें स्थित पूर्वोक्त जघन्य द्रव्यको जघन्य देशाव
१० ज्ञान जानता है । अर्थात् इस क्षेत्रके मध्यमें स्थित औदारिक शरीरके संचयको लोकसे भाग दे
एक भाग प्रमाण जो असंख्यात रण्ड स्थित है उनको जानता है । इस जघन्य पुद्
स्कन्धसे ऊपर एक-दो आदि अधिक प्रदेशवाले स्कन्धोंकी वह नहीं जानता ऐसा नहीं
क्योंकि जो ज्ञान सूक्ष्मको जानता है वह स्थूलको जाननेमें समर्थ होता है । द
अवगाहनाका प्रमाण जघन्य अवधिके विषयमूत क्षेत्रके प्रमाणसे असंख्यात गुण

नप्रमाणं जघन्यदेशावधिभेदमनु कारणादिवं व्यवहारांगुलमनाप्रविसिष्ये पेठल्पटुदु। तज्जघन्याप-
गाहनमुं परमागमवदोऽ देहगेहप्रासनगरादिप्रमाणमुत्तेषांगुलत्रिवमे धेद्वितु नियमितमण्डुर्वरिवं
व्यवहारांगुलाश्रितमे यश्कुं। मेले यावुदो देहयोऽंगुलमावक्रिया एकभागमसंरोजमित्पात्रिगाया
सूत्रोक्तवांडकंगळोऽ अंगुलप्रहणमल्लि प्रमाणांगुलमे प्राह्यमवक्रमुत्तरोत्तर निदिश्यमानहस्तागभ्युति-
योजनभरतादिकेशेऽंगुलो प्रमाणांगुलाश्रितत्वदिवं।

अवरोहिखेत्तमज्जे अवरोही अवरदध्यमवगमइ।

तद्द्व्यस्सवगाहो उस्सेहासंखघणपदरो ॥३८२॥

अवरावधिभेदमध्ये अवरावधिरवरदध्यमवगच्छति। तद्द्व्यस्मावगाहः उत्तेषासंख्य-
घनप्रतरः।

जघन्यावधिभेदमध्यदोऽङ्कितरिहं पूर्वोक्तजघन्यद्रव्यमं जघन्यदेशावधिज्ञानमरिषुं। तत्
क्षेत्रमध्यदोऽङ्कितरिहं असंख्यातंगळनोदारिकशरीरसंचयलोकभक्तैकभागप्रमितलंडंगळननितुमनरिषु-
मं बुवत्यं। तज्जघन्यपुद्गलस्कंधद मेले एकद्वपाविप्रदेशोत्तरपुद्गलस्कंधंगळनरिषुं बुवदिल्लि
पेठल्पटुके दोडे सूक्ष्मविषयज्ञानकं स्थूलावधोपनदोऽ सुघटत्यमण्डुदरिवं। द्रव्यावगाहक्षेत्रं जघन्या-
वधिविषयक्षेत्रं नोडलसंख्येपगुणहीनमवक्रमादोऽ उत्तेषघनांगुलासंख्यातभागमात्रमवक्रुं। मवर

सूक्ष्मनिगोदलभ्यपर्याप्तकजघन्यावगाहनप्रमाणं जघन्यदेशावधिभेदं ततः कारणान्, देहगेहप्रासनगरादिप्रमाणं
उत्तेषाङ्गुलैर्नैवति परमागमे नियमितत्वात् व्यवहाराङ्गुलमेवाश्रितं भवति। उपरि यत्र "अङ्गुलमावक्रियाए
भागमसंतेज्जदो वि संखेज्जो, इत्यादिगाथासूत्रोक्तकाण्डकेयु अङ्गुलप्रहणं तत्र प्रमाणाङ्गुलमेव प्राह्यं, उत्तरोत्तर-
निदिश्यमानहस्तागभ्युतियोजनभरतादिकेशाणां प्रमाणाङ्गुलाश्रितत्वात् ॥३८१॥

जघन्यावधिभेदमध्ये स्थितं पूर्वोक्तं जघन्यद्रव्यं जघन्यदेशावधिज्ञानं जानाति तत्क्षेत्रमध्यस्त्विति
औदारिकशरीरसंचयस्य लोकविभक्तैकभागप्रमितलंडंगळानि असंख्यातानि जानातीत्यर्थः। तज्जघन्यपुद्गलस्कन्ध-
स्योपरि एवद्वयादिप्रदेशोत्तरपुद्गलस्कन्धान् न जानातीति न वाच्यं, सूक्ष्मविषयज्ञानस्य स्थूलावधोपने
मुपटत्वान्। द्रव्यावगाहक्षेत्रं तु जघन्यावधिविषयक्षेत्रादसंख्यातगुणहीनं भवति, तथाप्युत्तेषघनाङ्गुलासंख्यात-

या आत्मांगुलफी अपेक्षा नहीं, क्योंकि सूक्ष्म निगोद लक्ष्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना
प्रमाण जघन्य देशावधिका क्षेत्र है। और परमागममें यह नियम कहा है कि शरीर, घर,
ग्राम, नगर आदिका प्रमाण उत्तेषांगुलसे ही मापा जाता है। इसलिये व्यवहार अंगुलका ही
आश्रय लिया है। आगे 'अंगुलमालियाए' आदि गाथासूत्रोंमें कहे गये काण्डकोंमें अंगुलका
प्रमाण प्रमाणांगुलसे लिया है। उससे आगे भी जो हस्त, गभ्युति, योजन भरत आदि प्रमाण
क्षेत्र कहा है यह सब प्रमाणांगुलसे ही लिया है ॥३८१॥

जघन्य अवधिज्ञानके क्षेत्रके मध्यमें स्थित पूर्वोक्त जघन्य द्रव्यको जघन्य देशावधि-
ज्ञान जानता है। अर्थात् इस क्षेत्रके मध्यमें औदारिक शरीरके संचयको लोकसे भाग देनेपर
एक भाग प्रमाण जो असंख्यात लण्ड स्थित है उनको जानता है। इस जघन्य पुद्गल
स्कन्धसे ऊपर एक-दो आदि अधिक प्रदेशवाले स्कन्धोंको वह नहीं जानता ऐसा नहीं है।
क्योंकि जो ज्ञान सूक्ष्मको जानता है वह स्थूलको जाननेमें समर्थ होता है। द्रव्यकी
अवगाहनाका प्रमाण जघन्य अवधिके विषयभूत क्षेत्रके प्रमाणसे असंख्यात गुणाहीन

अवरद्वाद्बुधवारिमद्वयवियत्पाय ह्येदि ध्रुवहारो ।

सिद्धान्तमभागो अमन्वसिद्धादणंतगुणो ॥३८४॥

अवरद्वयादुपरितनद्रव्यविकल्पाय भवति ध्रुवहारः । सिद्धान्तैकभागोऽभ्यसिद्धादणंत-
गुणः ॥

जघन्यदेशावधिज्ञानविषयद्रव्यविदं मेलनंतरदेशावधिज्ञानविकल्पविषयद्रव्यविकल्पमं तर-
त्वेडि सिद्धान्तैकभागमुमभ्यसिद्धान्तगुणमुमप्य ध्रुवभागहारमरियत्पङ्क्तुं ।

ध्रुवहारकम्मवर्गगणगुणगारं कम्मवर्गगणं गुणिदे ।

समयपवद्वपमाणं जाणित्तो ओहिविसयम्मि ॥३८५॥

ध्रुवहारकाम्मणवर्गगणागुणकारं काम्मणवर्गगणं गुणिते । समयप्रवद्वप्रमाणं ज्ञातव्यमवधि-
१० विषये ॥

काम्मणवर्गगणाया गुणकाराः काम्मणवर्गगणागुणकाराः ध्रुवहारादृचेते काम्मणवर्गगणा-
गुणकाराश्च ध्रुवहारकाम्मणवर्गगणागुणकारास्तान् । काम्मणवर्गगणां च गुणितेज्वधिविषये समय-
प्रवद्वप्रमाणं भवतीति ज्ञातव्यं । गुणरूपदिनिर्द्दं काम्मणवर्गगणे गुणकाररूपदिनिर्द्दं ध्रुवहारं पङ्क्तं
काम्मणवर्गगणेषुं गुणिसुत्तिरलु अवधिविषयसमयप्रवद्वप्रमाणमवक्तुं दु ज्ञातव्यमवक्तुं ।

जघन्यदेशावधिषयद्रव्यात् उपरितनद्वितीयावधिज्ञानविकल्पविषयद्रव्याणि आनेतु सिद्धान्तैकभाग,
१५ अभ्यसिद्धेन्योऽनन्तगुणः ध्रुवभागहारः स्यात् ॥३८५॥

द्विषोऽनदेशावधिविकल्पमात्रध्रुवहाराद् गत्युत्पन्नेन काम्मणवर्गगणागुणकारेण द्विरूपाधिकपरमावधि-
ज्ञानविकल्पमात्रध्रुवहारसंबन्धसमुत्पन्नकाम्मणवर्गगणा गुणिता सती अवधिविषये समयप्रवद्वप्रमाणं स्यादिति

जघन्य देशावधि ज्ञानके विषयभूत द्रव्यसे ऊपर द्वितीय आदि अवधिज्ञानके भेदके
२० विषयभूत द्रव्योंको खानेके लिए सिद्ध राशिका अनन्तवाँ भाग और अभव्य राशिसे अनन्त-
गुणा ध्रुवभागहार होता है ॥

विशेषार्थ—पूर्वपूर्व द्रव्यमें जिस भागहारका भाग देनेसे आगेके भेदके विषयभूत
द्रव्यका प्रमाण आता है वह ध्रुव भागहार है । जैसे जघन्य देशावधिज्ञानके विषयभूत द्रव्यमें
भाग देनेसे जो प्रमाण आता है वह उसके दूसरे भेदके विषयभूत द्रव्यका प्रमाण होता
२५ है ॥३८५॥

देशावधिज्ञानके विकल्पोंमें दो घटानेपर जितना प्रमाण रहे उतनी जगह ध्रुवहारोंको
स्थापित करके परस्परमें गुणा करनेपर जितना प्रमाण होता है उतना काम्मण वर्गगणाका
गुणकार होता है । और परमावधिज्ञानके विकल्पोंमें दो अधिक करनेपर जितना प्रमाण हो
उतनी जगह ध्रुवहारोंको स्थापित करके परस्परमें गुणा करनेपर जितना प्रमाण हो वह
३० काम्मणवर्गगणा होती है । काम्मणवर्गगणाके गुणकारसे काम्मणवर्गगणाको गुणा करनेपर जो प्रमाण
हो वह अवधिज्ञानका विषय समयप्रवद्व जानना । अर्थात् जो जघन्य देशावधिका विषय-

१. ध्रुवहारके संदृष्टि मारां तत्रमाणं मुने पेल्लवङ्गुगुमीग पेट्टवदेके दोडे देशावधिय चरमद्रव्याविकल्पं पङ्क्तं
विदु विचरमदोऽदोऽदिगि प्रथमविकल्पव्यंतमेतादपेकोत्तरकमदिनिदिदिदिदु बंदु प्रथमविकल्पदोऽ
तावन्मात्रध्रुवहारं गच्छि काम्मणवर्गगणं गुणियसिद्ध रूपप्रमाणसमानं प्रथमद्रव्यं बुदत्तं ॥

जघन्यमनोद्रव्यवर्गणाप्रमाणमनंत मदर । ज । अनंतैकभागदिनपिरुमुक्तृष्टमनो-

द्रव्यवर्गणाप्रमाणमवकु ज ए मितु मुपेन्द्र क्रमदिदमादियंते मुद्रे इत्यादिविधानदिवं तरल्पदु
ए

मनोद्रव्यवर्गणाविकल्पंगळ ज १ अनंतैकभागदोडने ज १ अवधिविषयद्रव्यविकल्पंगळोळ पुणव
ए ए

ध्रुवहारप्रमाणं समानमेतु निश्चयितुयुदु ॥ अथवा :-

ध्रुवहारस्य पमाणं सिद्धाणंतिमपमाणमेतं पि ।

समयप्रवद्धनिमित्तं कर्मणवर्गणगुणादो दु ॥३८८॥

ध्रुवहारस्य प्रमाणं सिद्धानंतैकभागप्रमाणमात्रमपि । समयप्रवद्धनिमित्तं कामर्गणवर्गणा-
गुणात् ॥

होदि अणंतिमभागो तग्गुणगारोवि देसओहिस्स ।

दोऊणद्ववमेदपमाणं ध्रुवहारसंवग्गो ॥३८९॥

भरत्यनंतैकभागस्तद्गुणकारोपि देशावर्धेद्विरूपोनद्रव्यभेदप्रमाणध्रुवहारसंवग्गः ॥

ध्रुवहारप्रमाणं सिद्धानंतैकभागप्रमाणमात्रमादोडमवधिविषयसमयप्रवद्धनिश्चयनिमित्तं
कामर्गणवर्गणागुणकारमं नोडलु तु मत्ते अनंतैकभागमवकुमा कामर्गणवर्गणागुणकारमु देशावधि-
ज्ञानद्विरूपोनद्रव्यविकल्पप्रमितध्रुवहारंगळ संवग्गंमवकुमा देशावधिज्ञानद्रव्यविकल्पंगळनिर्ते दोडे
पेळल्पदुगु ।

देशावधिद्रव्यविकल्परचनेयोळ त्रिचरमदेशावधिद्रव्यविकल्पवोळ गुण्यरूपकामर्गणवर्गणे

मनोद्रव्यवर्गणावर्धयं अनन्तो भवति । तदनन्तैकभागेनाधिकमुक्तृष्टं भवति इत्येवमुक्तरीत्या मनोद्रव्य-

वर्गणावित्यानामनन्तैकभागः स ए अवधिविषयद्रव्यविकल्पे ध्रुवहारप्रमाणं ज्ञातव्यम् । अथवा—

ध्रुवहारप्रमाणं सिद्धानंतैकभागमात्रमपि अवधिविषयसमयप्रवद्धप्रमाणमानेन उक्तस्य कामर्गणवर्गणा-

मनोद्रव्यवर्गणावर्धयं अनन्तैकभागमात्रं स्यात् । ग ष गुणगारोपि कियान् । देशावधिज्ञानस्य द्विरूपोनद्रव्यभेदमात्र-

मनोवर्गणाका जघन्य भेद अनन्त प्रमाण है । अर्थात् अनन्त परमाणुओंके रङ्गध-
रूप जघन्य मनोवर्गणा है । सममें अनन्तका भाग देनेसे जो प्रमाण आवे उसे उस जघन्य
भेदमें जोड़नेपर चर्माके वृक्षके भेदका प्रमाण होता है । इस प्रकार मनोद्रव्य वर्गणाके
विकल्पोंके अनन्तवें भाग अवधिज्ञानके विषयभूत द्रव्योंके विकल्पोंमें ध्रुवहारका प्रमाण
है ॥३८७॥

एतदि ध्रुवहारका प्रमाण सिद्ध राशिके अनन्तवें भाग है किन्तु अवधिज्ञानके
विषयभूत समयप्रवद्धका प्रमाण रानेके लिये पहले कहे कामर्गणवर्गणाके गुणकारका अनन्तवर्गी
भाग है । और यह गुणकार देशावधिज्ञानके द्रव्यकी अपेक्षा भेदोंमें दो घटाकर जो प्रमाण
देने रहे उसी तरह ध्रुवहारकी रणकर परस्परमें गुणा करनेसे जो प्रमाण हो जनना है ।
इतना प्रमाण देगे कहा, सो करते हैं—देशावधिज्ञानके विषयभूत द्रव्यकी रचनामें वृक्षके

संचयलोकविभवतैलंडप्रमाणमेपत्रकुमेडु निरुचयिमुवुडु ता ० १२—१६ रा इन्नु देशावधिपियय-

सर्वद्रव्यविकल्पंग्ळनिते दोडे पेञ्चपं :—

अंगुल असंखगुणिदा खेत्तवियप्पा य दच्चभेदा हु ।

खेत्तवियप्पा अवरुक्कस्सविसेसं हवे एत्थ ॥३९०॥

५ अंगुलासंख्यातगुणिताः क्षेत्रविकल्पादच द्रव्यभेदाः सलु । क्षेत्रविकल्पा अवरोत्कृष्टविशेषो भवेदत्र ।

सूच्यंगुलासंख्यातैकभागगुणितक्षेत्रविकल्पंग्ळ देशावधिज्ञानविषयसर्वद्रव्यभेदंग्ळप्पुवु । खलु स्फुटमागि । अंतावोडा क्षेत्रविकल्पंग्ळतामनिते दोडे अत्र इल्लि अवधिपिययवोडु क्षेत्रविकल्पाः क्षेत्रविकल्पंग्ळ अवरोत्कृष्टविशेषो भवेत् । जघन्यदेशावधिज्ञानविषय सूक्ष्मनिगोदलध्वपय्यमिरु-
१० जघन्यावगाहप्रमितजघन्यक्षेत्रमनिद ६।८।२२ नपयत्तितमं घनांगुलासंख्या-

प १२।८९।८।२२।७९

तैकभागमात्रम ६ नुरकृष्टदेशावधिज्ञानविषयक्षेत्रलोकप्रमित ≡ मवरोत्कृष्टेदुच्छिदुषेनितोच्चवनि-

तयप्पुवु ≡ ६ इयं सूच्यंगुलासंख्यातदिवं गुणितिल्लधरागियोळेकरुपं कूडुत्तिरलु देशावधिद्रव्य-

विकल्पं गळप्पुवु ≡ - ६।२ एक दोडे देशावधि जघन्यद्रव्य विकल्पं मोदल्पोडु प्रवहारभत्ते-

स्यात् ।—न ० १२—१६ स ३।८ ॥३८९॥ देशावधिद्रव्यविकल्पान् प्रमाणयति—

१५ सूच्यंगुलासंख्यातैकभागगुणितदेशावधिपियसर्वक्षेत्रविकल्पाः सलु तद्विषयद्रव्यविकल्पा भवन्ति, ते च क्षेत्रविकल्पाः अत्र देशावधिपिये अवरे जघन्यक्षेत्रे ६ तद्विषयोत्कृष्टक्षेत्रे ≡ विरोधिने दोषमात्रा भवन्ति—६

विषयभूत द्रव्यका प्रमाण हे जो लोकसे भाजित नोकर्म औदारिक शरीरका संचय प्रमाण हे । विशेषार्थ—यहाँ उत्कृष्ट भेदसे लेकर जघन्य भेद पर्यन्त रचना कही है इससे इस प्रकार गुणकारका प्रमाण कहा है । यदि जघन्यसे लेकर उत्कृष्ट भेदपर्यन्त रचनाकी जावे तो क्रमसे ध्रुवहारका भाग देते जाइए । अन्तिम भेदमें कार्मणचर्गणाको एक धार ध्रुवहारसे माग देनेपर द्रव्यका प्रमाण आ जाता है ॥३८८-३८९॥

अथ देशावधिके द्रव्यको अपेक्षा विकल्प कहते हैं—
देशावधिके विषयभूत क्षेत्रकी अपेक्षा जितने विकल्प हैं उनको सूच्यंगुलके असंख्यातवर्ष भागसे गुणा करनेपर देशावधिके विषयभूत द्रव्यकी अपेक्षा भेद होते हैं ।

- द्रव्यविकल्पगच्छतु द्विरुपहीनद्रव्यविकल्पमात्रध्रुवहारसंवर्गमे वर्गणागुणकारमे बलि येत् मावे देवके प्रसंगमश्नुमंतुमल्लद्वयं रूपयुतमल्लद क्षेत्रविकल्पमे । ४। कांडकरिवं गृणिति सन्धरोक्त-
रूपं कूडिदोडे । ४। २। अतु देशावधिद्रव्यविकल्पप्रमाणमल्लु । द्विरुपेन्द्रद्रव्यविकल्पमात्र ध्रुवहार-
संवर्गमे वर्गणागुणकारमे बलि एत्मादादात्ते प्रसंगमश्नुमंतुविरदमन्नुमल्लु बुष्टिरोपमुमागम-
५ विरोधमुमपुदरिदं रूपयुतमल्लद क्षेत्रविकल्पमे कांडकरिवं गृणिति सन्धरोक्तोडु रूपं कूडिदोडे
देशावधिद्रव्यविकल्पमो भतेयप्युविदुनिर्वाधवोधयिपयमश्नु । अंतारोडा जघन्योत्कृष्टदेशावधितान-
विषयजघन्योत्कृष्टक्षेत्रविकल्पगच्छायुर्थे दोडे पेच्यपं ।

अंगुलअसंख्यमागं अवरं उक्कस्मयं हवे लोमो ।

इदि वर्गणागुणगारो असंख ध्रुवहारसंवर्गो ॥३०१॥

- १० अंगुलासंख्यातभागोऽवरः उत्कृष्टो भवेत्लोकः । इतिवर्गणागुणकारोऽसंख्यध्रुवहारसंवर्गः ।
अंगुलासंख्यातभागः सुपेच्य घनांगुलासंख्यातेरुभागमप्य लक्ष्यपर्याप्तकजघन्यावगाहप्रमाणमे
अवरः जघन्यक्षेत्रविकल्पप्रमाणमश्नुमत्कृष्टो भवेत्लोकः । उत्कृष्टक्षेत्रविकल्पं संपूर्णलोकप्रमाण-
मश्नु-। मितु वर्गणागुणकारमसंख्य ध्रुवहारसंवर्गप्रमितमश्नु । द्विरुपेन्द्रदेशावधितानविषयसार्थ-
द्रव्यविकल्प प्रमित ध्रुवहारसंवर्गजनितलक्ष्यप्रमितं वर्गणागुणकारप्रमाणमे बुदरथं ।

- १५ वर्षते जनेन क्रमेण लोकमात्रधोत्वत्तिपर्यन्तं गमनिकासद्भावान् अवशिष्टप्रथमद्रव्यविशेषतय परवादि-
क्षेपात् ॥३१०॥ ते जघन्योत्कृष्टक्षेत्रे संख्याति—

अवरं जघन्यदेशावधिविषयधेर्भं सूक्ष्मनिगोदलक्ष्यपर्याप्तकजघन्यावगाहप्रमाणमिदं-

६।८।२२

० १-

५१९।८।९।८।२२।१।९

० ० ०

अपवर्तितं पनाङ्गुलासंख्यातभागमात्रं भवति ६ उत्कृष्टं लोकः जगत्त्रेणियघनो भवति इत्येवं द्विरुपेन्द्रदेशावधि-
प
०

- २० सर्वद्रव्यविकल्पमात्रासंख्यध्रुवहारसंवर्ग एव कार्मणरर्गणागुणकारः स्यात् ॥३११॥ अथ क्रमप्राप्तं वर्गणा-
प्रमाणमाह—

- भाग द्रव्यके विकल्प होने तक क्षेत्र एक प्रदेश अधिक उतना ही रहता है । उसके पश्चात्
क्षेत्रमें पुनः एक प्रदेश बढ़ता है । इस तरह प्रत्येक सूच्यंगुलके असंख्यातवर्गे भाग द्रव्यके
विकल्प होनेपर क्षेत्रमें एक-एक प्रदेशकी वृद्धि उत्कृष्ट क्षेत्र लोक पर्यन्त प्राप्त होने तक होती
२५ है । इसीसे क्षेत्रकी अपेक्षा विकल्पोंको सूच्यंगुलके असंख्यातवर्गे भागसे गुणा करनेपर द्रव्यकी
अपेक्षा विकल्प कहे हैं । इनमें पहला द्रव्यका भेद पीछेसे मिलाया वह अवशेष था अतः
एकको मिलाना कहा ॥३१०॥

अप देशावधिके घन जघन्य और उत्कृष्ट क्षेत्रोंको कहते हैं—

- १० जघन्य देशावधिका विषयभूत क्षेत्र सूक्ष्म निगोद लक्ष्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना
प्रमाण घनांगुलका असंख्यातवर्गे भाग मात्र होता है । उत्कृष्ट क्षेत्र जगत् श्रेणिका घनरूप
लोक-प्रमाण है । इस प्रकार देशावधिके समस्त द्रव्यकी अपेक्षा विकल्पोंमें दो कम करके

घणाहमिदु ६।८।८

५ ६ ८ ८ १ १ ९
० ०

आरी अंते गुणे इत्यादि गुणाभिप्रायिरे तत्त्वप्रतिपत्तिरुपमा-

गाहविकल्पंगच्छिनितपुत्रु ६ ० ई तेभस्कायिक सःर्भावगाहनविकल्पराजिपिरे गुणिमुत्तरला-
५
०

दोडु लव्यं तल्लघमात्रं परमावधितानविकल्पंगच्छुत्रु ६ ० ई परमावधितानविकल्पराजिपिरे
५
०

द्विरुपयुक्तं माडि विरलिसि प्रनिरुपं ध्रुवहारमनित्तु यगिगासंभर्मा मापुत्तरलु आपुरोडु लव्यमडु
काम्मंणवभंगाराजियवकुं । व । इदि इंतु ध्रुवहारप्रमाणुं वर्गंगागुणकारप्रमाणुं वर्गंगाप्रमाणुं
व्यक्तमाणि मूरं राशिगच्छं पेच्छत्पट्टुययं नीनु जानीहि अरिये बु निय्यसंभोपनं माडुत्पट्टुडु ।

देशोहि अवरदव्यं ध्रुवहारेणवहिदे हवे विदियं ।

तदियादिवियप्पेगुं वि असंखवागेत्ति एम क्रमो ॥३०४॥

देशावधेरवरदव्यं ध्रुवहारेणापहते भवेद्वितीयं । तृतीयविकल्पेव्यवि असंखयारपप्यंत-

१० मेय क्रमः ॥

देशावधितानविययजघन्यद्रव्यमं स ० १ २ । १ ६ ल ध्रुवभागहारदिवं भागिसिवेरु-
३

भागं देशावधितानविययद्वितीयद्रव्यविकल्पमवकुं स ० ० १ २ । १ ६ ल तृतीयविकल्पंगच्छोक्रमो
३

उडुत्पष्टे ६।८।८

५ ६ ८ ८ १ १ ९
० ०

विशोध्य दोषवपवत्यं ६।० एकूपे निशिते एतावन्तः ६।०। इत्येवं
५
०

ध्रुवहारप्रमाणं वर्गंगागुणकारप्रमाणं वर्गंगाप्रमाणं च जानीहि ॥३०३॥

१५ यत्रागुनं देशावधितानविययजघन्यद्रव्यं-स ० १ २-१ ६ ल । ध्रुवहारेण एकेन भक्तं द्वितीयदेशावधि-
३

को अग्निफायिकसी उत्कृष्ट अवगाहनाके प्रमाणमे-से घटाकर जो शेष बचे उसमें एक जोड़ने-
पर अग्निफायिकी अवगाहनाके भेद होते हैं । इस प्रकार ध्रुवहारका प्रमाण, वर्गंगाके
गुणकारका प्रमाण और वर्गंगाका प्रमाण जानना ॥३०३॥

जो देशावधितानका विषय जघन्य द्रव्य पहले कहा था, उसकी ध्रुवहारसे एक बार
२० भाग देनेपर देशावधिके दूसरे भेदका विषयभूत द्रव्य होता है । इसी प्रकार ध्रुवहारका

डरुदोत्रे जघन्यकालमिदु ८ तत्कांडकोत्कृष्टकालमिदु ८ आदियनंतदोत्रुक्त्वे दोडे शेषं तत्कांडक-

दोत्रु जघन्यकालद मेले पेच्चिद समयंगळ प्रमाणमप्युदु ८०१ ई कालविशेषदिवं क्षेत्रविशेषं

भागियुदुके दोडे जघन्यकालद मेले इतिनु समयंगळु पेच्चिदागञ्जा जघन्यशेवद मेलेतिनु प्रदेशंगळु
पेच्चिद यो दु समयं पेच्चिदागळेतिनु प्रदेशंगळु पेच्चंगुमेदितु त्रैराशिकं माडि प्र काल ८०१

५ फलप्रदेश ६०७ इच्छाकालसमय १ लघ्नशे प्रप्रदेशंगळु ६ इंतायलिभक्तघनांगुलप्रमितशे प्र

विरुत्पंगळु ध्रुवहृषदिवं नडेदु नडेदो दोदु समयवृद्धिमागुत्तं पौगि प्रयमकांडरुचरमविकल्पदोत्रु
जघन्यकालद मेले पेच्चिद समयंगळिनितप्युदु ८०७ इवं तज्जघन्यकालदोत्रु कूडुवागळु

समच्छेदं माडि ८७ आवळिगावळियं तोरि संख्यातरूपुगळं कूडिदोडिदु ८० अत्रत्यासंख्यात-

१० भाग्यभागहारंगळं सतिगिद शेषं संख्यातभक्तावलिप्रमितमरुदु ८ मत्तमोदु समयवृद्धि-

यादागळु क्षेत्रदोत्रु आयलिभक्तघनांगुलप्रमितप्रदेशंगळु क्षेत्रदोत्रु पेच्चुत्तं विरलागळिनितु समयंगळु
पेच्चिदलिलेगितिनु प्रदेशंगळु क्षेत्रदोत्रु पेच्चुववेदितु त्रैराशिकं माडि प्र = का स १ । फ । = प्रदेश

६ इ = का स ८०-७ लघ्नक्षेत्रप्रदेशंगळु ६०-७ इवं जघन्यशे प्रदोत्रु कूडुवागळु संख्यातरु-
गळिदं समच्छेदं माडि ६७ घनांगुलरुके घनांगुलमं तोरि संख्यातरूपुगळं कूडिदोडिदु ६० अत्र-

१५ त्यासंख्यातभाग्यभागहारंगळनवर्षतिसिद शेषं संख्यातभक्तघनांगुलप्रमितं घरमशे प्रविकल्प-
मारुदु ६

इनु ध्रुवहृषवृद्धि विशेषीय सभ्यकांडरुदोत्रुं परिपाटिकमत्ररित्यप्युगुमिन्नु ध्रुववृद्धि-
विशेषीयद तत्रयमकांडरुदोत्रु अतएवं संहयं भागं असंयवारं तु घनांगुलासंख्यातैरुभागमात्रशे प्र
प्रदेशंगळु जघन्यशेवद मेले पेच्चिदागळो दोदु समयं जघन्यकालद मेले पेच्चंगुमंते घनांगुलासंख्या-
तैरुभागमात्रशे प्रप्रदेशंगळु पेच्चिदागळो दु समयं केउगन कालदमेले पेच्चंगुमितिनु ध्रुवाश्रु वृद्धि-
गळु क्षेत्रदोत्रु तद्योग्यामंख्यातवारंगुलागुत्तं विरलु कालदोत्रु मुपेच्छिदितिनु समयंगळु ८०-७

अत्रत्यासंख्यातभाग्यभागहारंगळं अतएवं संहयं भागं असंयवारं तु घनांगुलासंख्यातैरुभागमात्रशे प्र
प्रदेशंगळु जघन्यशेवद मेले पेच्चिदागळो दोदु समयं जघन्यकालद मेले पेच्चंगुमंते घनांगुलासंख्या-
तैरुभागमात्रशे प्रप्रदेशंगळु पेच्चिदागळो दु समयं केउगन कालदमेले पेच्चंगुमितिनु ध्रुवाश्रु वृद्धि-
गळु क्षेत्रदोत्रु तद्योग्यामंख्यातवारंगुलागुत्तं विरलु कालदोत्रु मुपेच्छिदितिनु समयंगळु ८०-७

२५ देव उक्तं ध्रुववृद्धिप्रमाणेन अत्र ध्रुववृद्धिप्रमाणेन वा जघन्यदेशावधिप्रविशदशेवयोगिरे क्षेत्रे वधिरे
एवंगळु प्रदेशं यदने यदने घनांगुलके अमंख्यातये भाग प्रदेश यदनेपर जघन्य देशावधिके
विशेषभूत काठमे एव समययो वृद्धि होती हे । इम प्रकार क्षेत्रमे इतनी वृद्धि होनेपर कालमे
एव समययो वृद्धि भागे भी होती हे इमे ध्रुववृद्धि कइते हे । और पूर्वाक्त प्रकारसे ही कमी

प्रथमादिकांडकाण्डं पेच्छपेने बुदाचार्यन प्रतिनेयसत् ।

अंगुलमावल्याए भागमसंखेज्जदो वि संखेज्जा ।

अंगुलमावलियंतो आवलियं चांगुलपुधत्तं ॥४०४॥

अंगुलमावल्योर्भागेऽसंखेयतोपि संखेयः । अंगुलमावल्यंतः आयत्तिकं चांगुलपुयसत्त्वं ॥

प्रथमकांडकदोऽङ्गु जपन्यक्षेत्र कालंगळ घनांगुलावलिगळ असंख्यातैरुभागमात्रं दिवं मेले
संखेयो भागः क्षेत्रमुं कालमुं यथासंख्यमाणि घनांगुलसंखेयभागमुमावलि संखेयभागमुमवकुं ६८

द्वितीयकांडकदोऽङ्गु क्षेत्रं घनांगुलमवकुं कालमावल्यंतमेयसत्त्वं । किंचिदूनावलिकं यं बुद्धयं । ६।८-१
तृतीयकांडकदोऽङ्गु आवलिरंगुलपुयसत्त्वं घनांगुलपुयसत्त्वमुमावलियमवकुं । पुयसत्त्व । ६८।

आवलियपुधत्तं पुण इत्थं तह गाउयं गुहत्तं तु ।

जोयणभिण्णमुहुत्तं दिवसंतो पण्णुवीसंतं तु ॥४०५॥

आवलियपुयत्वं पुनहंस्तस्तथा गयूतिम्महत्तंस्तु । योजनं भिन्नमुहत्तं दिवसांतः पंच-
विंशतिस्तु ॥

चतुर्थकांडकदोऽङ्गु पुयत्ववावलिपुमेरुहस्तमुमवकुं । हस्त १।८।पु। पंचमकांडकदोऽङ्गु तथा

गयूतिम्महत्तांतः एककोशमुपसंतम्मुहत्तंमुमवकुं । को १। का २१-१। पष्ठकांडकदोऽङ्गु योजनंभिन्न-
मुहत्तं एकयोजनमुं भिन्नमुहत्तंमुमवकुं । यो १। का=भिन्नमु १॥ सप्तमकांडकदोऽङ्गु दिवसांतः
पंचविंशतिस्तु किंचिदूनदिवसमुं पंचविंशतियोजनंगळुमवकुं । यो २५ का=वि १।

विगतिकाण्डकानि यद्ये इत्याचार्यप्रतिज्ञा ॥४०३॥

प्रथमकाण्डके क्षेत्रकालो जपन्यो घनाङ्गुलावल्योरसंख्यातैरुभागो ६।८ उत्कृष्टो तयोः संखेयभागो

६।८ द्वितीयकाण्डके क्षेत्रं घनाङ्गुलम् । कालः आवश्यन्तः-किंचिदूनावलिरित्यर्थः ६।८-१। तृतीयकाण्डके

१।१

२० क्षेत्रं घनाङ्गुलपुयसत्त्वं कालः आवलियपुयसत्त्वं पु ६।८ ॥४०४॥
चतुर्थकाण्डके कालः आवलियपुयसत्त्वं । क्षेत्रं एहस्तः । ह १।८पु। पञ्चमकाण्डके क्षेत्रं एककोशः ।
कालः अन्नमुहत्तः । को १। का २१। पष्ठकाण्डके क्षेत्रमेकयोजनं, कालः भिन्नमुहत्तः । यो १ का भिन्न
मु० १-१। सप्तमकाण्डके कालः किंचिदूनदिवसः क्षेत्रं पञ्चविंशतियोजनानि यो २५ का दि १-॥४०५॥

के अन्तिम भेदमें कालका प्रमाण होता है । आगे क्षेत्र और कालको लेकर उन्नीस काण्डक
२५ करेंगे ऐसी प्रतिज्ञा आचार्यने की है ॥४०३॥
प्रथम काण्डकमें जपन्य क्षेत्र घनांगुलके असंख्यातवें भाग और जपन्य काल आवलीका
असंख्यातवर्षा भाग है । उत्कृष्ट क्षेत्र घनांगुलका संख्यातवर्षा भाग और उत्कृष्ट काल आवलीका
संख्यातवर्षा भाग है । द्वितीयकाण्डकमें क्षेत्र घनांगुल प्रमाण और काल कुछ कम आवली है ।
तीसरे काण्डकमें क्षेत्र घनांगुल पृथक्त्व प्रमाण है और काल आवली पृथक्त्व प्रमाण है ॥४०४॥

३० चतुर्थ काण्डकमें काल आवली पृथक्त्व और क्षेत्र एकहाथ प्रमाण है । पाँचवें काण्डक-
में क्षेत्र एक कोम प्रमाण काल अन्नमुहत्त है । छठे काण्डकमें क्षेत्र एक योजन और काल भिन्न
मुहत्त है । सप्तम काण्डकमें काल कुछ कम एक दिन और क्षेत्र पचीस योजन है ॥४०५॥

साधिसुबुद्धि । अध्रुववृद्धिरपि पुनरविच्छिन्नमिष्टकांडके अध्रुववृद्धियं तन्न विप्रशितकांडकोट विरुद्धमाणि ।

अंगुल असंख्यभागं संखं वा अंगुलं च तस्यैव ।

संख्यमसंखं एवं संश्लेषदरस्य अध्रुववृद्धे ॥४०९॥

- ५ अंगुलासंख्यातभागं संख्यं वा अंगुलं च तस्यैव । संख्यमसंख्यं एवं श्रेणीप्रतरस्या ध्रुवके ॥ अध्रुववृद्धिविप्रशितमादौडे तत्कांडक क्षेप्रकालगच्छत्रिविरुद्धमाणि घनांगुलासंख्यातैरुभागा-
मात्रम् ६ मेगु घनांगुल संख्यातैरुभागात्रम् ६ मेगु घनांगुलमात्रम् ६ संख्यातघनांगुलमात्रम् ६
६१ । असंख्यातघनांगुलमात्रम् ६ ० । एवं इंतु श्रेणिकं प्रतररुकरिवत्पद्गुणमदेते दौडे श्रेण्य-
संख्येयभागमात्रम् श्रेणिय संख्येयभागमात्रम् ० श्रेणिमात्रम्, संख्यातश्रेणिमात्रम् ॥—१॥ असंख्यात
१० श्रेणिमात्रम् ॥—० । असंख्येयभागप्रतरमात्रम् ० प्रतरसंख्येयभागमात्रम् १ प्रतरमात्रम् = संख्यात-
प्रतरमात्रम् = १ असंख्यातप्रतरमात्रम् = ० प्रदेगच्छ पेचि पेचिकालदोडेकेरु समय पेच्युगुमे बुद-
ध्रुववृद्धिकर्म ।

कर्महयवग्गणं ध्रुवहारैणिवारमाजिदे दृश्यं ।

उक्कससं खेत्तं पुण लोको संपुण्णयो होदि ॥४१०॥

- १५ कामर्मणवग्गणं ध्रुवहारैरुक्कारमाजिते द्रव्यमुत्कृष्टं क्षेत्रं पुनल्लोकः संपूर्णो भवति ॥
अत्र च जप्यकाले ८ समच्छेदेन ६ । १ । मिलिते प्रथमवाण्टकचरमे घनांगुलसंख्येयभागो भवति ६ एवं
सर्वकाण्डकेषु ध्रुववृद्धि साधयेत् । अध्रुववृद्धिरपि विप्रशितकाण्डकेन तत्तत्सो नकालाविरोधेन वक्तव्या ॥४०८॥
तथा—

घनांगुलासंख्यातैरुभागात्राः ६ वा घनांगुलसंख्येयभागमात्राः ६ वा घनांगुलमात्राः ६ वा

- २० संख्यातघनांगुलमात्राः ६ १ वा असंख्यातघनांगुलमात्रा ६ ० एवं श्रेणीप्रतरयोरपि, तथाहि—श्रेण्यसंख्येय-
भागमात्राः ० वा श्रेणिसंख्येयभागमात्राः १ वा श्रेणिमात्राः—वाः संख्यातश्रेणिमात्राः—१ वा असंख्येय-
श्रेणिमात्राः—० वा प्रतरसंख्येयमात्रा = १ वा प्रतरसंख्येयभागमात्राः = वा संख्यातप्रतरमात्रा = १ वा
असंख्येयप्रतरमात्राः = ० प्रदेगा वषित्वा वषित्वा काले एकैकमयो वर्धते इत्यध्रुववृद्धिकर्म ॥४०९॥

- २५ भागप्रमाण उत्कृष्टक्षेत्र प्रथमकाण्डकका होता है । इसी प्रकार सब काण्डकर्म ध्रुववृद्धिका
प्रमाण लाना चाहिए । अध्रुववृद्धि भी विप्रशित काण्डकर्म उस-उस क्षेत्रकालका विरोध न
करते हुए लाना चाहिए ॥४०८॥
वही कहते हैं—

- घनांगुलके असंख्यातवें भागमात्र अथवा घनांगुलके संख्यातवें भागमात्र, अथवा
घनांगुलमात्र, अथवा संख्यात घनांगुलमात्र, अथवा असंख्यात घनांगुलमात्र, अथवा श्रेणीके
असंख्यातवें भागमात्र, अथवा श्रेणीके संख्यातवें भागमात्र, अथवा श्रेणिप्रमाण, अथवा
१० संख्यात श्रेणिमात्र, अथवा असंख्यात श्रेणिमात्र, अथवा प्रतरके असंख्यातवें भाग, अथवा
प्रतरके संख्यातवें भाग अथवा प्रतरमात्र अथवा संख्यात प्रतरमात्र अथवा असंख्यात प्रतरमात्र
प्रदेश बढ़ा-बढ़ाकर कालमें एक-एक समय बढ़ता है । इस प्रकार अध्रुववृद्धिका क्रम है ॥४०९॥

अनंतरं परमावधिज्ञान प्ररूपणमं वेळदपं :-

देशावधिवरद्वयं ध्रुवहारेणवहिदे ह्ये नियमा ।

परमावहिस्स अवरं दव्वपमाणं तु जिणदिहं ॥४१३॥

देशावधिपरद्वयं ध्रुवहारेणापहते भवेन्नियमात् । परमावधेरवरद्वयप्रमाणं तु जिनदिहं ॥

५ सार्धोत्कृष्टदेशावधिज्ञानविषयोत्कृष्टद्रव्यमं पूर्वोक्त ध्रुवहारैकवार भक्तकाम्मंगवार्गाणा-
प्रमाणमं व ध्रुवहारदिदं भागिसुत्तिरलु व तु मत्ते परमावधिविषयजघन्यद्रव्यप्रमाणं नियमदिद-

९ मरकुमेंदु जिनदर्शदं वेळल्पदुदु । इत्था परमावधियुत्कृष्टद्रव्यप्रमाणमं वेळदपं :-

परमावहिस्स भेदा सग ओगाहणवियप्पहदतेऊ ।

चरिमे हारपमाणं जेट्टस्स य होदि दव्वं तु ॥४१४॥

१० परमावधेभेदाः स्वरागगाहनविकल्पहृतेजसः । चरमे हारप्रमाणं ज्येष्ठस्य भवेत् द्रव्यं तु ॥

परमावधिज्ञानविकल्पंगच्छेन्नितप्युवे दोडे स्वावगाहनविकल्पंगच्छिदं गुणिसत्पट्ट तेजःस्कायिक-

जीवंगच्छ संशये यावतावत्प्रमाणंगच्छप्युवुं $\approx \frac{a}{b} \frac{c}{d}$ ई परमावधिज्ञानसर्ध्वं विकल्पंगच्छोत्तु सार्धो-

१५ उत्कृष्टवरमविकल्पवोदु तु मत्ते द्रव्यमत्कृष्टपरमावधिगे ध्रुवहारप्रमाणमेयक्कु ॥ ९ ॥

सव्वावहिस्स एक्को परमाणू होदि णिव्वियप्पो सो ।

गंगामहाणइस्स पवाहोव्व ध्रुवो हवे हारो ॥४१५॥

१५ ताव्वावधेरैकः परमाणुः भवेन्नित्यकल्पः । सः गंगामहानद्याः प्रवाहवत् ध्रुवो भवेद्धारः ॥

देशावधेरुत्कृष्टद्रव्यमिदं व तु-तुनः ध्रुवहारेण भक्तं तदा व परमावधिविषयजघन्यद्रव्यं नियमेन प्र-

वीरि त्रिनेत्रक ॥४१३॥ इतानीं परमावधेरुत्कृष्टद्रव्यप्रमाणमाह-

परमावधिज्ञानविज्ञानाः स्वावगाहनविकल्पगुणितनेत्रस्कायिकजीवंगच्छ्या भवन्ति $\approx \frac{a}{b} \frac{c}{d} \frac{e}{f}$

२० एतं सर्वोत्कृष्टवरमविकल्पवोदु तुनः इत्य ध्रुवहारप्रमाणमेव ९ भवेत् ॥४१४॥

अथ परमावधिज्ञानका कथन करते हैं-

देशावधिके उत्कृष्ट द्रव्यको ध्रुवहारमे भाग देनेपर परमावधिके विषयभूत जघन्य द्रव्यका प्रमाण होता है ऐसा जिनदेशने कहा है ॥४१३॥

अथ परमावधिके उत्कृष्ट द्रव्यका प्रमाण कहते हैं-

२५ तेजःकायिक जीवोको अवगाहनाके भेदोमे तेजःकायिक जीवोको संख्याको गुण चरनेपर जो प्रमाण आता है वने परमावधिज्ञानके भेद हैं । उनमेंसे सपमे उत्कृष्ट अन्विष्ट भेदके विषयभूत द्रव्य ध्रुवहार प्रमाण ही होता है । अर्थात् ध्रुवहारका जितना प्रमाण है वने परमाणुओंके समुत्करण मूलन गच्छ्यको जानना है ॥४१४॥

आवलिअसंखभागा इच्छिद्गच्छधनमाणमेचाओ ।

देशावहिस्स खेत्ते काले वि य होंति संवग्गे ।।४१७ ।

आवलयसंख्यभागा ईप्सितगच्छधनमानमात्राः । देशावधेः क्षेत्रे कालेऽपि च भवति संवर्गे ॥

परमावधिज्ञानविषयंगळप्यु क्षेत्रकालंगळु तंतम्म जघन्यं मोदल्गोडु असंख्यातगणित-

५ क्रमादिदं परमावधिज्ञानसर्व्वोत्कृष्टपर्य्यंतमविच्छिन्नरूपविदं नडेवयंतु नडेय क्षेत्रकालविरूपंगळा-
घडेयोळु विवक्षितंगळप्युवल्लि देशावधिज्ञानविषयोत्कृष्टक्षेत्रकालमात्रगुण्यंगळगे आवलयसंख्यात-

भागगुणकारंगळु तद्विवक्षितगच्छधनमानमात्रंगळु संवर्गंगळागुतिरळु तायनमात्रांसंख्यातगुणित-

क्रमंगळु दरिथल्पडुवदे ते दोडे परमावधिज्ञानप्रथमविरूपयोळु आवलयसंख्यातभागगुणकारंगळु

तद्गच्छमोददर संकलितधनमात्रंगळु १२ अप्युवेवल्लियोदोदे गुणकारमक्कु = ८५ - १८

२१

१० मंते विवक्षितद्वितीयविकल्पयोळु तद्गच्छसंकलनधनमानमात्रंगळप्यु २३ मूळ मूळ गुणकारं-

२१ ।

गळप्यु = ४८८८८ । ५ - १८८८ अंते विवक्षिततृतीयविकल्पयोळु तद्गच्छसंकलनधनमानमात्रंगळ-

४४४

४४४

प्यु ३ । ४ घेवारारप्यु = ८८८८८८ । ५ - १८८८८८८ मो प्रकारविदं विवक्षितचतुर्थविकल्प-

२ । १

४४४४४४

४४४४४४

योळु तद्गच्छसंकलनधनमानमात्रंगळप्यु ४ । ५ घेडु पत्तं पत्तं गुणकारंगळप्यु

२ । १

= ८ । १० ५ - १ । ८ । १० मिते पंचमविकल्पयोळु तद्गच्छसंकलनधनमात्रंगळप्यु २६ घेडु

४

४

२१

१९ परमावधेविवक्षितक्षेत्रविकल्पे विवक्षितकालविकल्पे च तद्विकल्पस्य यावत्संकलितधनं तावत्प्रमाणमात्रा
आवलयसंख्यभागाः परस्परं संवर्गे देशावधेरुत्कृष्टक्षेत्रे उत्कृष्टकालेऽपि च गुणकारा भवन्ति । ततस्ते गुणकाराः
प्रथमविकल्पे एकः । द्वितीयविकल्पे त्रयः । तृतीयविकल्पे पट् । चतुर्थविकल्पे दश । पञ्चमविकल्पे पञ्चदश एवं

परमावधिके विवक्षित क्षेत्र और विवक्षित कालके भेदमें उस भेदका जितना संक-
लित धन हो, उतने प्रमाण आवलीके असंख्यातवें भागोंको परस्परमें गुणा करनेपर जो
२० प्रमाण आवे उतना देशावधिके उत्कृष्ट क्षेत्र और उत्कृष्ट कालमें गुणकार होते हैं । वे गुणकार
प्रथम भेदमें एक, दूसरे भेदमें तीन, तीसरे भेदमें छह, चतुर्थ भेदमें दस, पंचम भेदमें पन्द्रह
इस प्रकार अन्तिम भेद पर्यन्त जानना ।

विशेषार्थ—जिस नम्बरके भेदकी विवक्षा हो, एकसे लगाकर उस भेद पर्यन्तके एक-
एक अधिक अंकोंको जोड़नेसे जो प्रमाण आवे उतना ही उसका संकलित धन होता है । जैसे
२५ प्रथम भेदमें एक ही अंक है अतः उसका संकलित धन एक जानना । दूसरे भेदमें एक और
दोको जोड़नेपर संकलित धन तीन होता है । तीसरे भेदमें एक, दो तीनको जोड़नेसे संक-
लित धन छह होता है । चौथे भेदमें उसमें चार जोड़नेसे संकलित धन दस होता है ।
पाँचवें भेदमें पाँचका अंक और जोड़नेसे संकलित धन पन्द्रह होता है । सो पन्द्रह जगह
आवलीके असंख्यातवें भागोंको रगकर परस्परमें गुणा करनेसे जो परिमाण हो वही पाँचवें
१० भेदका गुणकार होता है । इस गुणकारसे उत्कृष्ट देशावधिके क्षेत्र लोकको गुणा करनेपर जो

मात्र ६। एतावन्मात्र गुणकारंगळपुत्रु ६४।६४।६४।६४।६४।६४ मिल्लि ईस्ति-

राशिच्छेवं विवक्षितराशियदु वेसद छप्पणगरर छेदराशिये दु ८। इवनु वेयच्छेदेः वेयमापत्यमं-
ख्यातकंसंदृष्टि ६४ इदरद्वंछेदंगळनितपुयें बोडे भग्गस्सद्वच्छेरा भाग्गवद्वंछेदंगळार ६।

५ हारद्वच्छेदणाहि परिहीणा हारद्वंछेदंगळिवं परिहीनंग त्राडोडे । ६। २। नात्कु। लद्वस्सद्वच्छेरा
तल्लब्धराशिगद्वंछेदशलाकंगळपुत्रुवरिदमो वेयराशियद्वंछेदंगळिवं भागंगो तृत्तिरलु १ ८

लब्धं यावन्मात्रं २ तावन्मात्रदेयराशीगन्भासे वेयराशिगळग्न्योन्याम्यातामागुत्तिरलु ६४।६४

तन्न विवक्षितराशियप्य वेसद छप्पणं पुट्टुगुमित । पत्य । सूच्यंगुल । जगच्छ्रेणिलोकंगळोस्ति-
राशिगळारोडं तत्तद्वंछेदंगळना देयमप्यायत्यसंरपातदद्वंछेदंगळिवं भागिति

पत्यच्छेद सूच्यंगुलच्छेद जगच्छ्रेणीच्छेद लोकरच्छेद तत्तल्लब्धमात्रमायत्यसंख्यातंगलं
छे छे छे वि वि छे छे ९
१६-४ १६-४ १६-छे छे ३ १।६-४

१० गुणिसुत्तिरलु तत्तत्पत्यसूच्यंगुल जगच्छ्रेणिलोकंगळं पुट्टुगुमेदरियुदु ।

दिण्णच्छेदेणवहिदलोगच्छेदेण पदधणे मजिदे ।

लद्धमिदलोगगुणणं परमावह्चिरमगुणगारो ॥४२१॥

वेयच्छेदनापहृत लोकरच्छेदेन पदधने भक्ते । लब्धमितलोकगुणनं परमावधिचरमगुणकारः ।
वेयच्छेदंगळिवं भागिसत्पट्ट लोकरच्छेदंगळिवं ८ पदधने मुन्नं विवक्षित तृतीयपर

१५ धनमं ३।४ भजिदे भागिसुत्तिरलु ३।४ यल्लब्धं तल्लब्धमपवत्तितं मूर ३। तावन्मात्र
२।१ २।१ २।१ ६-२

| | | | | | |
|-----------|-------------------------|---------------------------------|---------------------------------------|---------------------------------|-----------------------------|
| दैनवतेपु— | पत्यच्छेद छे १६-४ | सूच्यंगुलच्छेद छे छे १६-४ | जगच्छ्रेणिच्छेद वि छे छे ३ १६-४ | लोकरच्छेद वि छे छे ९ १६-४ | तत्र यल्लब्धं तत्तन्मात्रा- |
|-----------|-------------------------|---------------------------------|---------------------------------------|---------------------------------|-----------------------------|

बल्यसंख्येयभागानामप्यासे वृते ते पत्यादीप्सितराशयः उत्पद्यन्ते ॥४२०॥

वेयच्छेदमत्तलोकरच्छेदेः ८ पदधने विवक्षिततृतीयपरस्य धने ३।४ भक्ते ३।४
६-२ २।१ २।१।८

२५६ उत्पन्न होती है । इसी प्रकार पत्य प्रमाण या सूच्यंगुल प्रमाण या जगतश्रेणी प्रमाण

२० अथवा लोकप्रमाण जो भी इच्छित राशि हो उसके अर्धच्छेदोंमें देयराशि आवलीके
असंख्यातवर्षे भागके अर्धच्छेदोंसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उसका एक-एकके रूपमें
विरलन करके प्रत्येकके ऊपर आवलीका असंख्यातवर्षों भाग रखकर परस्परमें गुणा करनेपर
इच्छित राशि पत्य आदि उत्पन्न होती है ॥४२०॥
देयराशिके अर्धच्छेदोंका भाग लोकराशिके अर्धच्छेदोंमें देनेपर जो प्रमाण आवे

अनंतरं तिर्यग्मनुष्यगतिगच्छोऽयधिविषयक्षेत्रं पेक्ष्यं ।

तिरिए अवरं ओषो तेजालत्रे (तेजोयंतं) होदि उक्त्सस्तं ।

मणुए ओषं देवे जहाकमं गुणुह बोच्छामि ॥४२५॥

तिर्यग्श्चवरमोषः तेजोऽवलंभे च भवत्युत्कृष्टं । मनुजे ओषः देवे यथाक्रमं श्रुतं
५ वक्ष्यामि ॥

तिर्यग्गतिय तिर्यग्चरोऽश्च देशावधिज्ञान जघन्यमरकुं । मेले तेजः शरीरपर्यन्तं सामान्योक्त
द्रव्यक्षेत्रकालभावांगुत्कृष्टदिदमल्लिप्यन्तं विषयमप्यु ।

मनुजरोऽश्च देशावधिजघन्यं मोदलोऽद्दु सध्वावधिज्ञानपर्यन्तं सामान्योक्तसर्व्यंमुमप्यु ।
देवगतिपोऽश्च देवकर्मणो यथाक्रमदिदं पेक्ष्यं केऽश्च :-

१० पणुवीसजोपणाइं दिवसंतं च म कुमारभोम्माणं ।

संखेज्जगुणं खेचं बहुगं कालं तु जोइसिगे ॥४२६॥

पंचविंशतिर्ध्वोजनानि दिवसस्यांतश्च कुमारभोमानां । संख्येयगुणं क्षेत्रं बहुकःकालस्तु
ज्योतिष्के ॥

१५ भावनरोऽश्च ध्यंतरोऽश्च जघन्यदिदमिप्पत्तदु योजनंगुम्माद्दु दिनदोऽश्चो विषयमरकुं ।
ज्योतिष्करोऽश्च भवनवासिष्यंतररुगळ जघन्यविषयक्षेत्रं नोडलु संख्यातगुणितं क्षेत्रमरकुं बहु-
कालमवकुं ।

नरके योजनं संपूर्णं भवति ॥४२४॥ अथ तिर्यग्मनुष्यगत्योराह-

तिर्यग्जीवे देशावधिज्ञानं जघन्यादारम्य उत्कृष्टतः तेजःशरीरविषयविकल्पपर्यन्तमेव सामान्योक्तस्य
स्यादिविषयं भवति । मनुजे देशावधिजघन्यादारम्य सर्वावधिज्ञानपर्यन्तं सामान्योक्तं सर्वं भवति ॥४२५॥

२० देवगती यथाक्रमं वक्ष्यामि शृणुत-

भावनन्पन्तरयोर्जघन्येन पञ्चविंशतियोजनानि किंचिदूनदिवसश्च विषयो भवति । ज्योतिष्के क्षेत्रं ततः
संख्यातगुणं, कालस्तु बहुकः ॥४२६॥

पृथिवीमें आधा-आधा कोस बढ़ता जाता है । इस तरह प्रथम नरकमें सम्पूर्ण योजन
क्षेत्र होता है ॥४२४॥

२५ अथ तिर्यग्गति और मनुष्यगतिमें कहते हैं-

तिर्यग्जीवमें देशावधिज्ञान जघन्यसे लेकर उत्कृष्टसे तेजसशरीर जिस भेदका विषय
है उस भेद पर्यन्त होता है । सामान्य अवधिज्ञानके वर्णनमें वहाँ तक द्रव्यादि विषय जो
कहे हैं वे सय होते हैं । मनुष्यमें देशावधिके जघन्यसे लेकर सर्वावधिज्ञान पर्यन्त जो
सामान्य कथन किया है वह सय होता है । आगे यथाक्रम देवगति में कहूंगा । उसे
२० सुनो ॥४२५॥

अथ देवगतिमें कहते हैं-

भवनयासी और व्यन्तरोंमें अवधिज्ञानका विषयभूत क्षेत्र जघन्यसे पचीस योजन
है और काल कुछ कम एक दिन है । तथा ज्योतिषी देवोंमें क्षेत्र तो इससे संख्यातगुणा है
और काल बहुत है ॥४२६॥

| | | | |
|-----------|--------|------|------------|
| जघन्य | जघन्य | उ | उ |
| भयनव्यंतर | जोयिति | अगुर | भ ९।४५। जो |
| घो २५ | ६५१ | को ० | १०००।० |
| दि १ | बहुकाल | घ ० | घ ० |
| | | | १ |

सक्कीसाणा पढमं चिदियं तु सणयकुमारमाहिदा ।
तदियं तु वम्ह लांतव सुक्कसहस्सारया तुरियं ॥४३०॥

शकेशानो प्रथमां द्वितीयां तु सान्तकुमारमाहेन्द्रो । तृतीयां तु ब्रह्मलांतयो शुक्रसहस्रारजां
५ तुप्यां ॥ सौधर्मेशानकल्पजगत् प्रथमपृथ्वीपर्यन्तं काण्वरं । सान्तकुमारमाहेन्द्रकल्पसंभूतं तु मत्ते
द्वितीयपृथ्वीपर्यन्तं काण्वरं । ब्रह्मलांतयकल्पजगत् तृतीयपृथ्वीपर्यन्तं काण्वरं । शुक्रशतारकल्पजगत्
चतुर्थपृथ्वीपर्यन्तं काण्वरं ।

१० आणदप्राणदवासी आरण तह अच्युदा य पस्संति ।
पंचमखिदिपेरंतं छट्ठिं भवेज्जगा देवा ॥४३१॥

आनतप्राणतवासिनः आरणास्तयाऽच्युतारश्च पर्यन्ति पंचमक्षितिपर्यन्तं पट्ठिं भ्रैवेयका देवाः ॥
आनतप्राणतवासिपञ्च आरणाच्युतकल्पजगत्पर्यन्तं पंचमक्षितिपर्यन्तं काण्वरं । नवभ्रैवेयकह-
मिन्द्र पृथ्वीपर्यन्तं काण्वरं ।

१५ स्वर्चं च लोयनालिं पस्संति अणुत्तरेसु जे देवा ।
सक्खेत्ते य सक्कम्मे रूवगदमणंतभागं च ॥४३२॥

सर्वां च लोकनाडीं परयंत्यनुत्तरेषु ये देवाः । स्वक्षेत्रे स्वकर्मणि रूपगतमर्गतभागां च ॥

स्वकीयावस्थितस्थानानुपरि सुरगिरिशिखरपर्यन्तं अधिदर्शनेन पर्यन्ति ॥४२९॥
सौधर्मेशानजाः प्रथमपृथ्वीपर्यन्तं पर्यन्ति । सान्तकुमारमाहेन्द्रजाः पुनर्द्वितीयपृथ्वीपर्यन्तं पर्यन्ति ।
ब्रह्मलान्तवजास्तृतीयपृथ्वीपर्यन्तं पर्यन्ति । शुक्रशतारजाः चतुर्थपृथ्वीपर्यन्तं पर्यन्ति ॥४३०॥

२० आनतप्राणतवासिनः तथा आरणाच्युतवासिनश्च पञ्चमपृथ्वीपर्यन्तं पर्यन्ति, नवभ्रैवेयका देवाः
पृथ्वीपर्यन्तं पर्यन्ति ॥४३१॥

शिरारपर्यन्तं अधिदर्शनके द्वारा देखते हैं ॥४२९॥
सौधर्म और पेशान स्वर्गके देव अधिजानके द्वारा प्रथम नरक पृथ्वीपर्यन्त देखते
हैं । सान्तकुमार और माहेन्द्र स्वर्गके देव दूसरी पृथ्वीपर्यन्त देखते हैं । ब्रह्म ब्रह्मोत्तर और
लान्तव-कापिष्ठ स्वर्गके देव तीसरी पृथ्वी पर्यन्त देखते हैं ॥४३०॥
सहस्रार स्वर्गके देव चतुर्थ पृथ्वीपर्यन्त देखते हैं ॥४३१॥
आनत-प्राणत तथा आरण-अच्युत स्वर्गके वासी देव पाँचवीं पृथ्वीपर्यन्त देखते हैं
तथा नौ भ्रैवेयकोके देव छठी पृथ्वीपर्यन्त देखते हैं ॥४३१॥

पेळत्पट्टुडु । नरलोके तदुत्पत्तिप्रवृत्तिगच्छेरडुं मनुष्यक्षेत्रबोध्यैयकुं । मनुष्यक्षेत्रदिवं पोरगे मनःपर्यय-
यज्ञानवकुत्पत्तियं प्रवृत्तियुमिल्लं बुदत्त्यं ।

परकीयमनसि व्यवस्थितोऽर्थः मन इत्युच्यते । मनः पर्येति गच्छति जानातीति मनः
पर्ययः एदितु परमनोगतार्थग्राहकं मनःपर्ययज्ञानमवकुमा परमनोगतार्थमुं चितितमर्चितितमर्द-
चितितमे दितनेऽभेदमप्युवदं मनुष्यक्षेत्रबोध्यै मनःपर्ययज्ञानमरिगुमे बुदं तात्पर्यं ।

मणपञ्चवं च दुविहं उजुविउलमदिति उजुमदी तिविहा ।

उजु मणवयणे काये गदत्यविसयचि णियमेण ॥४३९॥

मनः पर्ययश्च द्विविधः श्रुजुविपुलमती इति । श्रुजुमतिस्त्रिविधः श्रुजु मनोवचने काये
गतात्पर्यविषय इति नियमेन ।

सामान्यदिवं मनःपर्ययज्ञानमो'डु अवं भेदिसिबोड श्रुजुमतिमनःपर्ययमे'डु विपुलमति- १०
मनःपर्ययम'दितु मनःपर्ययज्ञानं द्विविधमवकु- । मल्लि श्रुजुवो श्रुजुकायवाचमनस्कृतात्पर्यस्य
परकीयमनोगतस्य विज्ञानान्निर्व्वर्त्तितता निष्पन्ना मतिपर्यस्य सः श्रुजुमतिः स चासी मनः-
पर्ययश्च श्रुजुमतिमनःपर्ययः । विपुला कायवाग्मनस्कृतात्पर्यस्य परकीयमनोगतस्य विज्ञाना
निर्व्वर्त्तितताऽनिर्व्वर्त्तितता कुटिला च मतिपर्यस्य सः विपुलमतिः । स चासी मनःपर्ययश्च
विपुलमतिमनःपर्ययः । एदितु निर्व्वर्त्तिसिद्धं गळप्युवल्लि श्रुजुदच विपुला च श्रुजु १५
विपुले । ते मती ययोस्ती श्रुजुविपुलमती । श्रुजुमनोगतार्थविषयमनःपर्ययमे'डु श्रुजुवचन-
गतात्पर्यविषयमनःपर्ययमे'डु श्रुजुकायगतात्पर्यविषयमनःपर्ययमुमे'दितु श्रुजुमतिमनःपर्ययं नियम-

मनुष्यक्षेत्र एव न तद्रहिः । परकीयमनसि व्यवस्थितोऽर्थः मनः तज् पर्येति गच्छति जानातीति मनः-
पर्ययः ॥४३९॥

स मनःपर्ययः सामान्येनकोऽपि भेदविवक्षया श्रुजुमतिमनःपर्ययः विपुलमतिमनःपर्ययश्चेति द्विविधः ।
तत्र श्रुजु-श्रुजुकायवाग्मनःकृतात्पर्यस्य—परकीयमनोगतस्य विज्ञानान्निर्व्वर्त्तितता-निष्पन्ना मतिपर्यस्य स श्रुजुमतिः स २०
चासी मनःपर्ययश्च श्रुजुमतिमनःपर्ययः । विपुला कायवाग्मनःकृतात्पर्यस्य—परकीयमनोगतस्य विज्ञानान्निर्व्वर्त्तितता
निर्व्वर्त्तितता कुटिला च मतिपर्यस्य स विपुलमतिः स चासी मनःपर्ययश्च विपुलमतिमनःपर्ययः । अथवा श्रुजुश्च
विपुला च श्रुजुविपुले ते मती ययोस्ती श्रुजुविपुलमती तौ च तौ मनःपर्ययो च श्रुजुविपुलमतिमनःपर्ययो ।
तत्र श्रुजुमतिमनःपर्ययः श्रुजुमनोगतार्थविषयः, श्रुजुवचनगतार्थविषयः, श्रुजुकायगतार्थविषयश्चेति नियमेन

का जो अर्थ दूसरेके मनमें स्थित है, उसको जो ज्ञान जानता है वह मनःपर्यय कहर जाजर २५
है । दूसरेके मनमें स्थित अर्थ मन हुआ, उसे जो जानता है वह मनःपर्यय है । इस ज्ञानकी
वृत्ति और प्रवृत्ति मनुष्यक्षेत्रमें ही होती है, उसके बाहर नहीं ॥४३९॥

वह मनःपर्यय सामान्यसे एक होनेपर भी भेदविवक्षासे श्रुजुमतिमनःपर्यय विपुल-
मतिमनःपर्यय इस तरह दो प्रकार है । सरल काय, वचन और मनके द्वारा किया गया जो
अर्थ दूसरेके मनमें स्थित है उसको जाननेसे निष्पन्न हुई मति जिसकी है वह श्रुजुमति है ३०
और श्रुजुमति और मनःपर्यय श्रुजुमतिमनःपर्यय है । तथा सरल अथवा कुटिल काय-
वचन-मनके द्वारा किया गया जो अर्थ दूसरेके मनमें स्थित है उसको जाननेसे निष्पन्न या
अनिष्पन्न मति जिसकी है वह विपुलमति है । विपुलमति और मनःपर्यय विपुलमति मनः-
पर्यय है । अथवा श्रुजु और विपुला मति जिनकी है वे श्रुजुमति, विपुलमति मनःपर्यय
हैं । श्रुजुमतिमनःपर्यय नियमसे तीन प्रकारका है—सरल मनके द्वारा चिन्तित मनोगत ३५

पेच्छपट्टदुबु । नरलोके तदुत्पत्तिप्रवृत्तिगच्छेरङ्गं मनुष्यशेखरोपपङ्कं । मनुष्यशेखरविं पोरगे मनःपर्यय-
ज्ञानरदुत्पत्तिं प्रवृत्तिमुमित्ते बुवत्पं ।

परकोपमनसि ध्यवस्थितोऽर्थः मन इत्युच्यते । मनः पठति गच्छति जानातीति मनः-
पर्ययः एदितु परमनोगतात्पर्यं प्राहूँ मनःपर्ययज्ञानमरकुमा परमनोगतात्पर्यं चितितमचितितमर्द-
चितितमे रितनेरुभेदमभ्युपव मनुष्यशेखरोक्त मनःपर्ययज्ञानमरिगुमे बुवं तात्पर्यं ।

मणपञ्चवं च दुविहं उजुविउलमदिचि उजुमदी विविहा ।

उजु मणपयणे काये गदत्यविसयचि णियमेण ॥४३९॥

मनःपर्ययश्च द्विविधः श्रुजुविपुलमती इति । श्रुजुमतिस्त्रिविधः श्रुजु मनोवचने काये
गतात्पर्यवियय इति नियमेन ।

सामान्यविदं मनःपर्ययज्ञानमोडु अवं भेदिविदोडु श्रुजुमतिमनःपर्ययमेडु विपुलमति- १०
मनःपर्ययमदितु मनःपर्ययज्ञानं द्विविधमरकु- । मल्लि श्रुजो श्रुजुकायरात्रमनहृतात्पर्यस्य
परकोपमनोगतस्य विज्ञानान्निर्घ्यतिता निष्पन्ना मतिपर्यस्य सः श्रुजुमतिः स चासी मनः-
पर्ययश्च श्रुजुमतिमनःपर्ययः । विपुला काययामनहृतात्पर्यस्य परकोपमनोगतस्य विज्ञाना
निर्घ्यतिताऽनिर्घ्यतिता कुटिला च मतिपर्यस्य सः विपुलमतिः । स चासी मनःपर्ययश्च
विपुलमतिमनःपर्ययः । एदितु निरर्क्तिसिद्धं गच्छपुवलि श्रुजुश्च विपुला च श्रुजु १५
विपुले । ते मती ययोस्ती श्रुजुविपुलमती । श्रुजुमनोगतात्पर्यविययमनःपर्ययमेडु श्रुजुयचन-
गतात्पर्यविययमनःपर्ययमेडु श्रुजुकायगतात्पर्यविययमनःपर्ययमुमेदितु श्रुजुमतिमनःपर्ययं नियम-

मनुष्यशेख एव न वदतिः । परकोपमनसि ध्यवस्थितोऽर्थः मनः दत् पठति गच्छति जानातीति मनः-
पर्ययः ॥४३९॥

स मनःपर्ययः सामान्येनकोऽर्थे भेदविवहाया श्रुजुमतिमनःपर्ययः विपुलमतिमनःपर्ययश्चेति द्विविधः ।
तत्र श्रुजो-श्रुजुकायवाग्मनःकृतात्पर्यस्य-परकोपमनोगतस्य विज्ञानान्निर्घ्यतिता-निष्पन्ना मतिपर्यस्य च श्रुजुमतिः च २०
चासी मनःपर्ययश्च श्रुजुमतिमनःपर्ययः । विपुला कायवाग्मन कृतात्पर्यस्य-परकोपमनोगतस्य विज्ञानान्निर्घ्यतिता
निष्पन्ना कुटिला च मतिपर्यस्य च विपुलमतिः स चासी मनःपर्ययश्च विपुलमतिमनःपर्ययः । अथवा श्रुजुश्च
विपुला च श्रुजुविपुले ते मती ययोस्ती श्रुजुविपुलमती ती च ती मनःपर्ययो च श्रुजुविपुलमतिमनःपर्ययो ।
तत्र श्रुजुमतिमनःपर्ययः श्रुजुमनोगतात्पर्यविययः, श्रुजुवचनगतात्पर्यविययः, श्रुजुकायगतात्पर्यविययश्चेति नियमेन

का जो अर्थ दूसरेके मनमें स्थित है, उसको जो ज्ञान जानता है वह मनःपर्यय कहा जाता २५
है । दूसरेके मनमें स्थित अर्थ मन हुआ, उसे जो जानता है वह मनःपर्यय है । इस ज्ञानकी
व्यवृत्ति और प्रवृत्ति मनुष्यक्षेत्रमें ही होती है, उसके बाहर नहीं ॥४३९॥

वह मनःपर्यय सामान्यसे एक होनेपर भी भेदविवहासे श्रुजुमतिमनःपर्यय विपुल-
मतिमनःपर्यय इस तरह दो प्रकार है । सरल काय, वचन और मनके द्वारा किया गया जो
अर्थ दूसरेके मनमें स्थित है उसको जाननेसे निष्पन्न हुई मति जिसकी है वह श्रुजुमति है ३०
और श्रुजुमति और मनःपर्यय श्रुजुमतिमनःपर्यय है । तथा सरल अथवा कुटिल काय-
वचन-मनके द्वारा किया गया जो अर्थ दूसरेके मनमें स्थित है उसको जाननेसे निष्पन्न या
अनिष्पन्न मति जिसकी है वह विपुलमति है । विपुलमति और मनःपर्यय विपुलमति मनः-
पर्यय है । अथवा श्रुजु और विपुला मति जिनकी है वे श्रुजुमति, विपुलमति मनःपर्यय
हैं । श्रुजुमतिमनःपर्यय नियमसे तीन प्रकारका है-सरल मनके द्वारा चिन्तित मनोगत ३५

बोडं घेसगोळदिहेई विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानमरिगुमे चितितिल्यं शब्दगतारंगं मत्पर्ययज्ञानं गच्छ-
मेदंतु द्विमकारांगळपुत्रु ।

तियकालविसयरूवि चिंतंतं बद्धमाणजीवेण ।

उजुमदिणाणं जाणदि भूदभविस्सं च विउलमदी ॥४४१॥

त्रिकालविषयरूपिणं चित्यमानं वर्तमानजीवेन । ऋजुमतिज्ञानं जानाति भूतभविष्यंतो च ५
विपुलमतिः ।

त्रिकालविषयपुद्गलद्रव्यं वर्तमानजीवेन चितिसत्पडुत्तिद्वंदं ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञान-
मरिगुं । भूतभविष्यद्वर्तमानकालविषयंगळप्य चितितमं चिन्तयिष्यमाणं चित्यमानं विपुलमतिः
मनःपर्ययज्ञानमरिगुं ॥

सर्वंगअंगसंभवचिण्हादुप्पज्जदे जहा ओही ।

मणपज्जवं च दब्बमणादो उप्पज्जदे णियमा ॥४४२॥

सर्वांगांगसंभवचिह्नादुत्पद्यते यथावधिः । मनःपर्ययइच्च द्रव्यमनसः उत्पद्यते नियमात् ॥

सर्वांगदोळमंगसंभवसंज्ञाविशुभचिह्नं गळोळं यथा ये तीगळवधिज्ञानं पुट्टुगुमंते मनःपर्य-
यज्ञानं द्रव्यमनसि च पुट्टुगुं नियमदिवं । नियमशब्दं द्रव्यमनसोऽल्लखदे मत्तिल्लियुमंगप्रदेशदोळु
मनःपर्ययं पुट्टुदंबवधारणात्पर्यमक्कुं ॥

हिदि होदि हु दब्बमणं वियसिय अट्टच्छद्वारविंदं वा ।

अंगोवंगुदयादो मणवगणखंददो णियमा ॥४४३॥

हृदि भवति खलु द्रव्यमनो विकसिताच्छद्वारविन्दवत् । अंगोपांगोदयात् मनोवर्गणा-
स्कन्धतो नियमात् ॥

त्रिकालविषयपदार्थान् चिन्तितवान् वा उक्तान् वा कृतवान् विस्मृत्य कालान्तरेण स्मर्तुमशक्तः आगत्य २०
पृच्छति वा तूष्णीं विप्रति तदा विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानं जानाति ॥४४०॥

त्रिकालविषयपुद्गलद्रव्यं वर्तमानजीवेन चित्यमानं ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानं जानाति । भूतभविष्यद्वर्त-
मानकालविषयं चिन्तितं चिन्तयिष्यमाणं चित्यमानं च विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानं जानाति ॥४४१॥

सर्वाङ्गे अङ्गसंभवचिह्नादिशुभचिह्ने च यथा अवधिज्ञानमुत्पद्यते तथा मनःपर्ययज्ञानं द्रव्यमनसि
एवोत्पद्यते नियमेन नान्यत्राङ्गप्रदेशेषु ॥४४२॥

कायसे किये गये त्रिकालवर्ती पदार्थोंको विचार किया कहा या शरीरसे किया । पीछे भूल
गया और समय बीतनेपर स्मरण नहीं कर सका । आकर पूछता है या चुप बैठता है तब
विपुलमति मनः पर्ययज्ञानी जानता है ॥४४०॥

त्रिकालवर्ती पुद्गल द्रव्य वर्तमान जीवके द्वारा चिन्तनवन किया गया हो तो उसे
ऋजुमति मनःपर्ययज्ञान जानता है । और त्रिकालवर्ती पुद्गलद्रव्य भूतकालमें चिन्तन ३०
किया गया हो, भविष्यत् कालमें चिन्तन किया जानेवाला हो या वर्तमानमें चिन्तन
किया जाता हो तो उसे विपुलमतिमनःपर्ययज्ञान जानता है ॥४४१॥

जैसे भयप्रत्यय अवधिज्ञान सर्वांगसे उत्पन्न होता है और गुणप्रत्यय अवधिज्ञान
शरीरमें प्रकट हुए शंख आदि शुभ चिह्नोंसे उत्पन्न होता है वैसे ही मनःपर्ययज्ञान द्रव्यमनसे
ही उत्पन्न होता है ऐसा नियम है, शरीरके अन्य प्रदेशोंमें उत्पन्न नहीं होता ॥४४२॥ ३५

स्वर्गनाशोद्भिन्नगन्धमं नोद्भिद्यमुमं मनोवचनरूपयोगमुमं विषं तन्न पेरर संबधिगज्जमन-
पेक्षितिये श्रुजुमतिमनःपर्ययतानं संबनिगुणु । तु मत्ते इन्द्रियनोद्भिद्ययोगाविगळं स्वपरसांविधि-
गन्धनोक्षितिये विपुलमतिमनःपर्ययतानं धशुरिन्द्रियमोगळं तु रसादिगळं परिहूरिति रूपमोबने
परिच्छेदिसुगुमंते मनःपर्ययज्ञानमं भवविषयाद्योपानंतपर्ययंगळं परिहूरिति ज्ञानुबोबु कारण-
विदं भवसंज्ञितद्वित्रिभ्यंजनपर्ययंगळं, परिच्छेदिसुगुमु, कारणविदंभिवधियज्ञानवते नियमविदं
संबनिगुणु ।

पडिचादी पुण पंडमा अप्पडिचादी ङु होदि विदिया ङु ।

मुद्धो पटमो बोहो मुद्धतरो विदिययोहो ङु ॥४४७॥

प्रतिपातो पुनः प्रथमोऽप्रतिपातो एतद् भवति द्वितीयः । गुडः प्रथमो बोधः गुडतरो द्वितीय-
बोपस्तु ॥

प्रथमः मोदत श्रुजुमतिमनःपर्ययं प्रतिपातो प्रतिपातियरुं । प्रतिपतनं प्रतिपातः
उपशान्तरूपायं चारिप्रमोहोद्भेकविदं प्रच्युतसंधमदिपरंये प्रतिपातमवकुं । शोणकपायंये प्रतिपात-
कारणाभावविदं अप्रतिपातमवकुं । तदपेभोविदं प्रतिपातोऽस्यास्तोति प्रतिपातो । पुनः मत्ते
द्वितीयः विपुलमतिमनःपर्ययं अप्रतिपातो एतद् प्रतिपातरहितमवकुं । न प्रतिपातो अप्रतिपातो ।
गुडः प्रथमो बोधः मोदत श्रुजुमतिमनःपर्ययं विगुडबोधमवकुं । प्रतिपशरुमर्भसयोपातमंटागुत्तिरलु
आत्मन प्रसादमं विगुडिये बुडु । तदस्यास्तोति विगुडः गुडतरो द्वितीयोपस्तु । तु मत्ते अतिशय-
विदं विगुडमवकुं विपुलमतिमनःपर्ययं ।

परमणसिद्धियमदुं ईहामदिणा उजुद्वियं लद्विय ।

पच्छा पच्चकखेण य उजुमदिणा जाणदे णियमा ॥४४८॥

परमनसि स्थितमर्त्यं इहामत्या श्रुजुस्वितं लब्ध्वा । पश्चात्प्रत्यक्षेण च श्रुजुमतिना
जानीते नियमात् ॥

श्रुजुमतिमनःपर्ययः स्वर्गनाशोद्भिद्योगि नोद्भिद्वयं मनोवचनरूपयोगांश्च स्वपरसंबधिपनोमेधैबोपलयेते ।
विपुलमतिमनःपर्ययस्तु अविज्ञानमिव शान्तनोऽधैबोपलयेते नियमेन ॥४४६॥

प्रथमः श्रुजुमतिमनःपर्ययः प्रतिपातो भवति । शोणकपायस्याप्यप्रतिपातेऽपि, उपशान्तरूपायस्य
चारिप्रमोहोद्भेकात्संभवत् । पुनः द्वितीयो विपुलमतिमनःपर्ययः अप्रतिपातो एतद् । श्रुजुमतिमनःपर्ययो
विगुडः, प्रतिपशरुमर्भसयोऽयं यति आत्मप्रसादरूपविगुडः संभवत् । तु पुनः विपुलमतिमनःपर्ययः अतिशयेन
विगुडो भवति ॥४४८॥

श्रुजुमतिमनःपर्ययं अपने और अन्य जीवोंके स्पर्शन आदि इन्द्रियों, मन, और मन-
वचन-रूप योगोंकी अपेक्षासे ही उत्पन्न होता है । और विपुलमतिमनःपर्ययं अविज्ञानकी
वदह उनकी अपेक्षाके बिना ही उत्पन्न होता है ॥४४६॥

प्रथम श्रुजुमति मनःपर्ययं प्रतिपातो होता है । जो श्रुजुमति मनःपर्ययज्ञानी क्षपक-
श्रेणीपर आरोहण करके शोणकपाय हो जाता है यद्यपि वह वहाँसे गिरता नहीं है किन्तु जो
क्षपक श्रेणीपर आरोहण करके उपशान्त कपाय नामक ग्यारहवें गुणस्थानधर्वां होता है,
चारिप्रमोहका वद्रेक हानेसे उसका प्रतिपात होता है । किन्तु दूसरा विपुलमतिमनःपर्ययं
अप्रतिपातो है । श्रुजुमति मनःपर्ययं विगुड है क्योंकि प्रतिपक्षी कर्मका क्षयोपशम होनेपर

अवरं द्रव्यमुरालियसरीरणिज्जिण्णसमयप्रदं तु ।

चक्षुस्त्रियणिज्जिण्णं उक्कस्सं उजुमदिसस हवे ॥४५१॥

अवरं द्रव्यमौदारिकशरीरनिर्जाणसमयप्रबद्धत्तु । चक्षुरिन्द्रियनिर्जाणमुत्कृष्टं श्रु-
जुमते भवेत् ।

श्रुजुमतिमनःपर्ययज्ञानरक्के विपयमप्य जघन्यद्रव्यमौदारिकशरीरनिर्जाणसमयप्रबद्ध ५

मवहुं । स ० १६ ख । तु मत्ते । उत्कृष्टं द्रव्यं चक्षुरिन्द्रियनिर्जाणद्रव्यमवहुं । अवर
प्रमाणमनिते दोषे त्रैराशिकविषं सापिसल्पङ्गं ।

वा त्रैराशिकविधानमनिते दोषे संख्यातघनागुलप्रमितमौदारिकशरीरावगाहनप्रदेशगुल्लो-
त्समेतलानुं सविषसोपचयोदारिकशरीरसमयप्रबद्धगुल्लोत्समेतलानुं सविषसोपचयोदारिक-
शरीरसमयप्रबद्धगुल्लेषियुयागुल्लु चक्षुरिन्द्रियाम्यन्तरनिःसृत्तिप्रदेशप्रचयमितितरोळिनितु द्रव्यगुल्लेषियु- १०

गुभेदितु त्रैराशिकं माडि प्र ६ । १ । फ स ० १६ ख ६ ६ प आद्यंतगहर्षं त्रैराशिकं

५ १ १ ० ५
० ०

मध्यम नाम फलं भवेत् एतु बंद लघं चक्षुरिन्द्रियनिर्जाणद्रव्यमितु श्रुजुमतिमनःपर्ययक्कुरकृष्ट-

द्रव्यमवहुं स ० १६ ख ६ ५

६ । १ ५ १ १ ५

तत्र श्रुजुमतिमनःपर्ययः जघन्यद्रव्यं औदारिकशरीरनिर्जाणसमयप्रबद्धं जानाति स ० १६ ख । तु-युनः,
उत्कृष्टद्रव्यं चक्षुरिन्द्रियनिर्जाणमात्रं जानाति । तस्मिन् ? औदारिकशरीरावगाहने संख्यातघनागुले सविषसोप-
चयोदारिकशरीरसमयप्रबद्धो गलति तदा चक्षुरिन्द्रियाम्यन्तरनिःसृत्तिप्रदेशप्रचये कियदिति त्रैराशिकेन १५

प्र ६ १ । फ स ० १६ ख । ६ ६ प लघ्यमात्रं भवति-स ० १६ ख । ६ । ५ ॥४५१॥

५ १ १ ५
० ०
६ १ ५ १ १ ५
० ०

श्रुजुमति मनःपर्यय औदारिक शरीरके निर्जाण समय प्रबद्धरूप जघन्य द्रव्यको
जानता है और उत्कृष्टद्रव्यके रूपमें चक्षु इन्द्रियके निर्जाणद्रव्यको जानता है । वह कितना है
सो कहते हैं—औदारिक शरीरकी अवगाहना संख्यात घनागुल है । उसके विषसोपचय
सहित औदारिक शरीरके समय प्रबद्ध परमाणुओंकी निर्जरा होती है । तब चक्षु इन्द्रियकी
अध्यन्तर निर्युक्तिके प्रदेश प्रचयमें कितनी निर्जरा हुई, ऐसा त्रैराशिक करनेपर जितना १०
परिमाण आवे उतने परमाणुओंके रकन्यको श्रुजुमति उत्कृष्ट रूपसे जानता है ॥४५१॥

अवरं द्रव्यमुरालिपसरीरणिज्जिज्ञप्णसमयवद्धं तु ।

चक्षुस्त्रिदियणिज्जिज्ञप्णं उक्कस्सं उजुमदिरस हवे ॥४५१॥

अवरं द्रव्यमौदारिकशरीरनिर्जाणसमयप्रवद्धस्तु । चक्षुरिन्द्रियनिर्जाणमुत्कृष्टं श्रु-
मते भवेत् ।

श्रुजुमतिमनःपर्ययज्ञानवक्त्रे विषयमप्य जघन्यद्रव्यमौदारिकशरीरनिर्जाणसमयप्रवद्ध ५

मवहुं । स ० १६ ख । तु मते । उत्कृष्टं द्रव्यं चक्षुरिन्द्रियनिर्जाणद्रव्यमवहुं । अवर
प्रमाणमेतिते बोधे त्रैराशिकविदं साधिसल्पद्रुगं ।

आ त्रैराशिकविधानमेतिते बोधे संख्यातघनांगुलप्रमितमौदारिकशरीरावगाहनप्रदेशगच्छे-
ल्लमेतलानुं सविद्वसोपचयोदारिकशरीरसमयप्रवद्धगच्छेत्लमेतलानुं सविद्वसोपचयोदारिक-
शरीरसमयप्रवद्धगच्छेत्पिमुचागच्छेत् चक्षुरिन्द्रियाम्बन्तरनिर्वृत्तिप्रदेशप्रचयमितितरोक्तिनितु द्रव्यगच्छेत्पिमु- १०

गुमेदितु त्रैराशिकं मादि प्र ६ । १ । फ स ० १६ ख इ ६ प आद्यंतगतदां त्रैराशिकं

५ १ १ ० ५
० ०

मप्यम नाम फलं भवेत् एतु वंद लघ्यं चक्षुरिन्द्रियनिर्जाणद्रव्यमितु श्रुजुमतिमनःपर्ययक्कुरकृष्ट-

द्रव्यमवहुं स ० १६ ख ६ प
६ १ १ १ १ ५

तत्र श्रुजुमतिमनःपर्ययः जघन्यद्रव्यं औदारिकशरीरनिर्जाणसमयप्रवद्धं जानाति स ० १६ ख । तु-पुनः,
उत्कृष्टद्रव्यं चक्षुरिन्द्रियनिर्जाणमात्रं जानाति । तदिक्यन् ? औदारिकशरीरावगाहने संख्यातघनांगुले सविद्वसोप-
चयोदारिकशरीरसमयप्रवद्धो गच्छति तदा चक्षुरिन्द्रियाम्बन्तरनिर्वृत्तिप्रदेशप्रचये कियदिति त्रैराशिकेन १५
प्र ६ । १ । फ स ० १६ ख । इ ६ प लघ्यमात्रं भवति-स ० १६ ख । ६ । प ॥४५१॥

५ १ १ ५
० ० ६ १ १ १ १ ५
० ०

श्रुजुमति मनःपर्यय औदारिक शरीरके निर्जाण समय प्रवद्धरूप जघन्य द्रव्यको
जानता है और उत्कृष्टद्रव्यके रूपमें चक्षु इन्द्रियके निर्जाणद्रव्यको जानता है । वह कितना है
सो कहते हैं—औदारिक शरीरकी अवगाहना संख्यात घनांगुल है । उसके विद्वसोपचय
सहित औदारिक शरीरके समय प्रवद्ध परमाणुओंकी निर्जरा होती है । तब चक्षु इन्द्रियकी
अम्बन्तर निर्धुतिके प्रदेश प्रचयमें कितनी निर्जरा हुई, ऐसा त्रैराशिक करनेपर जितनी २०
परिमाण आवे उतने परमाणुओंके स्कन्धको श्रुजुमति उत्कृष्ट रूपसे जानता है ॥४५१॥

अवरं दन्वमुरालियसरीरणिज्जिण्णसमयवद्धं तु ।

चक्षुंस्त्रियणिज्जिण्णं उक्कस्सं उजुमदिस हवे ॥४५१॥

अवरं द्रव्यमौदारिकशरीरनिर्जोर्णसमयप्रबद्धस्तु । चक्षुरिन्द्रियनिर्जोर्णमुत्कृष्टं श्रु-
मते भवेत् ।

श्रुमतिमनःपर्ययज्ञानरुके विषयमप्य जघन्यद्रव्यमौदारिकशरीरनिर्जोर्णसमयप्रबद्ध ५

मवकुं । स ० १६ ख । तु मत्ते । उत्कृष्टं द्रव्यं चक्षुरिन्द्रियनिर्जोर्णद्रव्यमवकुं । अवर
प्रमाणमेतिते दोहे त्रैराशिकविंशं साधितल्पङ्गुं ।

या त्रैराशिकविधानमेतिते दोहे संख्यातघनांगुलप्रमितमौदारिकशरीरावगाहनप्रदेशगच्छे-
ल्लमेतलानुं सविस्त्रसोपचयीदारिकशरीरसमयप्रबद्धगच्छे ल्लमेतलानुं सविस्त्रसोपचयीदारिक-
शरीरसमयप्रबद्धगच्छेपिसुवागळु चक्षुरिन्द्रियाम्यन्तरनिर्वृत्तिप्रदेशप्रचयमितरौलिनितु द्रव्यगच्छेपिसु- १०

गुमेदितु त्रैराशिकं माडि प्र ६ । १ । फ स ० १६ ख ६ ६ प आद्यंतग्रहशं त्रैराशिकं

प १ १ ० प

० ०

मध्यम नाम फलं भवेत् एतु बंद लघ्यं चक्षुरिन्द्रियनिर्जोर्णद्रव्यमिदु श्रुमतिमनःपर्ययककुट्ट-
द्रव्यमवकुं स ० १६ ख ६ प

६ । १ १ १ १ प

तत्र श्रुमतिमनःपर्ययः जघन्यद्रव्यं औदारिकशरीरनिर्जोर्णसमयप्रबद्धं जानाति स ० १६ ख । तु-युनः,
उत्कृष्टद्रव्यं चक्षुरिन्द्रियनिर्जोर्णमात्रं जानाति । तत्किमप्य ? औदारिकशरीरावगाहने संख्यातघनाङ्गुले सविस्त्रसोप-
चयीदारिकशरीरसमयप्रबद्धो गलति तदा चक्षुरिन्द्रियाम्यन्तरनिर्वृत्तिप्रदेशप्रचये कियदिति त्रैराशिकेन १५

प्र ६ १ । फ स ० १६ ख । ६ ६ प लघ्वमात्रं भवति-स ० १६ ख । ६ । प ॥४५१॥

प १ १ प

० ०

६ १ प १ १ प

० ०

श्रुमतिमनःपर्यय औदारिक शरीरके निर्जोर्ण समय प्रबद्धरूप जघन्य द्रव्यको
जानता हे और उत्कृष्टद्रव्यके रूपमें चक्षु इन्द्रियके निर्जोर्णद्रव्यको जानता है । यह कितना है
सो कहते हैं—औदारिक शरीरकी अवगाहना संख्यात घनांगुल है । उसके विस्त्रसोपचय
सहित औदारिक शरीरके समय प्रबद्ध परमाणुओंकी निर्जरा होती है । तब चक्षु इन्द्रियकी
अध्यन्तर निर्वृत्तिके प्रदेश प्रचयमें कितनी निर्जरा हुई, ऐसा त्रैराशिक करनेपर जितना २०
परिमाण आवे उतने परमाणुओंके स्फन्धको श्रुमति उत्कृष्ट रूपसे जानता है ॥४५१॥

अवरं द्रव्यमुरालियसरीरणिज्जिण्णसमयप्रवद्धं तु ।

चच्चिन्द्रियणिज्जिण्णं उक्कस्सं उज्जुमदिसस हवे ॥४५१॥

अवरं द्रव्यमौदारिकशरीरनिर्जोर्णसमयप्रवद्धस्तु । चक्षुरिन्द्रियनिर्जोर्णमुत्कृष्टं श्रज्जु-
मते भवेत् ।

श्रज्जुमतिमनःपर्ययज्ञानवक्के विषयमप्य जघन्यद्रव्यमौदारिकशरीरनिर्जोर्णसमयप्रवद्ध ५

मक्कुं । स ० १६ ख । तु मत्ते । उत्कृष्टं द्रव्यं चक्षुरिन्द्रियनिर्जोर्णद्रव्यमक्कुं । अवर
प्रमाणमेनिते बोडे त्रैराशिकरुविवं साधिसत्पद्दुगं ।

आ त्रैराशिकविधानमेनितेबोडे संख्यातघनागुलप्रमितमौदारिकशरीरावगाहनप्रदेशगळोळे
स्लेमेत्तलानुं सविस्त्रसोपचयीदारिकशरीरसमयप्रवद्धगळोळेल्लमेत्तलानुं सविस्त्रसोपचयीदारिक-
शरीरसमयप्रवद्धगळोळियिमुयागळु चक्षुरिन्द्रियाम्यन्तरनिर्वृत्तिप्रदेशप्रचयमितितरोळिनिनु द्रव्यगळेयिसु- १०

गुमेदितु त्रैराशिकं माडि प्र ६ । १ । फ स ० १६ ख इ ६ प आद्यंतगहशं त्रैराशिकं

प १ १ ० प
० ०

मध्यम नाम फलं भवेत् एतु वंद लघ्यं चक्षुरिन्द्रियनिर्जोर्णद्रव्यमितु श्रज्जुमतिमनःपर्ययक्कुत्कृष्ट-

द्रव्यमक्कुं स ० १६ ख ६ प

६ । १ १ १ १ प

तत्र श्रज्जुमतिमनःपर्ययः जघन्यद्रव्यं औदारिकशरीरनिर्जोर्णसमयप्रवद्धं जानाति स ० १६ ख । तु-पुनः,
उत्कृष्टद्रव्यं चक्षुरिन्द्रियनिर्जोर्णमात्रं जानाति । तत्क्रियन् ? औदारिकशरीरावगाहने संख्यातघनाङ्गुले सविस्त्रसोप-
चयीदारिकशरीरसमयप्रवद्धो गलति तदा चक्षुरिन्द्रियाम्यन्तरनिर्वृत्तिप्रदेशप्रचये कियदिति त्रैराशिकेन १५

प्र ६ १ । फ स ० १६ ख । इ ६ प लघ्यमात्रं भवति-स ० १६ ख । ६ । प ॥४५१॥

प १ १ १ प
० ०
६ १ १ १ प
० ०

श्रज्जुमति मनःपर्यय औदारिक शरीरके निर्जोर्ण समय प्रवद्धरूप जघन्य द्रव्यको
जानता है और उत्कृष्टद्रव्यके रूपमें चक्षु इन्द्रियके निर्जोर्णद्रव्यको जानता है । वह कितना है
सो कहते हैं—औदारिक शरीरकी अवगाहना संख्यात घनागुल है । उसके विस्त्रसोपचय
सहित औदारिक शरीरके समय प्रवद्ध परमाणुओंकी निर्जरा होती है । तब चक्षु इन्द्रियकी
अभ्यन्तर निर्वृत्तिके प्रदेश प्रचयमें कितनी निर्जरा हुई, ऐसा त्रैराशिक करनेपर जितना २०
परिमाण आवे उतने परमाणुओंके रकन्धको श्रज्जुमति उत्कृष्ट रूपसे जानता है ॥४५१॥

तच्चिदियं कल्पाणमसंखेज्जाणं च समयसंखसमं ।

ध्रुवहारेणवहरिदे होदि हु उक्कस्सयं दव्वं ॥४५४॥

तद्विहितोयं कल्पाणामसंख्यातानां च समयसंख्यासमं ध्रुवहारेणपहृते भपति खलूत्कृष्टं द्रव्यं ।
तं द्वितोयं विपुलमनःपर्ययज्ञानविषयद्वितोयद्रव्यविकल्पमं असंख्यातकल्पंगळ समयंगळ
संख्यासमानध्रुवहारेणार्णवं भागिसुतं विरलु यावत्प्रमाणं लब्धं तावत्प्रमाणं विपुलमतिमनःपर्यय- ५
ज्ञानविषयसंखेत्कृष्टद्रव्यविकल्पमश्नुं खलु स्फुटमाणि स a ख ख
९ क a ९९९

गाउपपुधचमवरं उक्कस्सं होदि जौयणपुधत्तं ।

विउलमदिस्स य अवरं तस्स पुधत्तं वरं सु णरलोयं ॥४५५॥

गव्यूतिपुयस्त्वमवरमुत्कृष्टं भवति योजनपुयस्त्वं । विपुलमतेरवरं तस्य पुयस्त्वं खलु १०
नरलोकः ॥

श्रुजुमतिमनःपर्ययज्ञानविषयजघन्यक्षेत्रं गव्यूतिपुयस्त्वमेरदुमूह क्रोशंगळपुत्रु । क्रो २ ।
३ । भवत्कृष्टक्षेत्रं योजनपुयस्त्वसमाष्टयोजनप्रमाणमवकं । यो ७ । ८ । विपुलमतिमनःपर्ययज्ञान
विषयजघन्यक्षेत्रं तस्य पुयस्त्वमा योजनंगळ पुयस्त्वमष्टयोजननवयोजनप्रमाणमवकं । ८ । ९ ।
तदुत्कृष्टज्ञानविषयोत्कृष्टक्षेत्रं खलु स्फुटमाणि । नरलोकः मनुष्यलोकमेतितानिनु प्रमाणमवकं ।

णरलोएत्ति य वपणं विक्खंमणियामयं ण वट्टस्स । १५

जम्हा तग्घणपदरं मणपज्जवखेत्तमुद्दिट्टं ॥४५६॥

नरलोक इति वचनं विष्कंभनियामकं न वृत्तस्य । यस्मात्तदपनप्रतरं मनःपर्यायक्षेत्रमुद्दिष्टं ॥
विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानविषयसंखेत्कृष्टक्षेत्रप्रमाणबोडु नरलोक इति वचनं नरलोकनेर्धो
शब्दं तन्मनुष्यक्षेत्रवृत्तिविष्कंभनियामकमस्तेके बोडे यस्मात् आयुबोडु कारणदिवं तदपनप्रतरमा

तस्मिन् विपुलमतिविषयद्वितीयद्रव्ये असंख्यातकल्पसमयसंख्यैर्द्रुवहारैर्नवते विपुलमतिविषयं सर्वोत्कृष्ट- २०

द्रव्यं नवति— स a a a ख ख ॥४५७॥

९ । क a ९९९

श्रुजुमतिविषयजघन्यक्षेत्रं गव्यूतिपुयस्त्वं द्वित्रिकोशाः २ । ३ । उत्कृष्टं योजनपुयस्त्वं समाष्टयोज-
नानि ७ । ८ । विपुलमतिविषयजघन्यक्षेत्रं योजनपुयस्त्वं अष्टनवयोजनानि । ८ । ९ । उत्कृष्टं स्फुटं
नरलोकः ॥४५९॥

अष्टिपुलमतिविषयोत्कृष्टक्षेत्ररूपे नरलोक इति वचनमुत्तरं तत् तद्वृत्तविष्कंभस्य नियामकं निश्चायकं २५

विपुलमतिके विषयभूत उस दूसरे द्रव्यमें असंख्यात कल्पकालके समयोक्ती संख्या
जितनी है एतनी बार ध्रुवहारसे भाग देनेपर विपुलमतिके विषयभूत सर्व उत्कृष्टद्रव्य
आवा है ॥४५४॥

श्रुजुमतिका विषयभूत जघन्य क्षेत्र गव्यूति पृथक्त्व अर्थात् दो-तीन कोस है । और
उत्कृष्ट क्षेत्र योजन पृथक्त्व अर्थात् सात-आठ योजन है । विपुलमतिका विषयभूत जघन्य ३०
क्षेत्र योजन पृथक्त्व अर्थात् आठ-नौ योजन है और उत्कृष्टक्षेत्र मनुष्यलोक है ॥४५५॥

विपुलमतिका विषय उत्कृष्टक्षेत्रका कथन करते हुए जो मनुष्यलोक कहा है वह

तन्त्रिदियं कल्पाणमसंखेज्जाणं च समयसंखसमं ।

ध्रुवहारेणवहरिदे होदि हु उक्कस्सयं दब्बं ॥४५४॥

तद्वितीयं कल्पानामसंख्यातानां च समयसंख्यासमं ध्रुवहारेणपहृते भवति खलूत्कृष्टं द्रव्यं ।
तं द्वितीयं विपुलमनःपर्य्यपज्ञानविषयद्वितीयद्रव्यविकल्पमं असंख्यातकल्पंगळ समयंगळ
संख्यासमानप्रयहारंगळं भागितुतं विरलु यात्रप्रमाणं लब्धं तावत्प्रमाणं विपुलमतिमनःपर्य्यप- ५
ज्ञानविषयसंबोत्कृष्टद्रव्यविकल्पमसंखुं खलु स्फुटमागि स ० ख ख
९ क ० ९९९

गाउपपुधत्तमवरं उक्कस्सं होदि जौयणपुधत्तं ।

विउलमदिस्स य अवरं तस्स पुधत्तं वरं खु णरलोयं ॥४५५॥

गम्भूतिपुषत्त्वमवरमुत्कृष्टं भवति योजनपुषत्त्वं । विपुलमतेरवरं तस्य पुषत्त्वं खलु १०
नरलोकः ॥

श्रुजुमतिमनःपर्य्यपज्ञानविषयजपन्यक्षेत्रं गम्भूतिपुषस्त्वमेरडुमूक् क्रोशंगळपुतु । क्रो २ ।
३ । मवखलूत्कृष्टक्षेत्रं योजनपुषत्त्वसमाष्टयोजनप्रमाणमक्कं । यो ७ । ८ । विपुलमतिमनःपर्य्यपज्ञान
विषयजपन्यक्षेत्रं तस्य पुषत्त्वमा योजनंगळ पुषत्त्वमष्टयोजननवयोजनप्रमाणमक्कं । ८ । ९ ।
तदुत्कृष्टज्ञानविषयोत्कृष्टक्षेत्रं खलु स्फुटमागि । नरलोकः मनुष्यलोकमेतितनिनु प्रमाणमसंखुं ।

णरलोएत्ति य वयणं विक्खंमणिपामयं ण वट्टस्स । १५

जम्हा तग्घणपदरं मणपज्जवखेत्तमुदिट्ठं ॥४५६॥

नरलोक इति वचनं विष्कंभनियामकं न वृत्तस्य । यस्मात्तद्वचनप्रतरं मनःपर्य्यपक्षेत्रमुदिष्टं ॥
विपुलमतिमनःपर्य्यपज्ञानविषयसंबोत्कृष्टक्षेत्रप्रमाणवोळु नरलोक इति वचनं नरलोकमेवो
शब्दं तन्मनुष्यक्षेत्रवृत्तविष्कंभनियामकमल्लेकेवोडे यस्मात् आत्रुवोडु कारणविचं तद्वचनप्रतरमा

उस्मिन् विपुलमतिविषयद्वितीयद्रव्ये असंख्यातकल्पसमयसंखुं प्रवहारंभक्ते विपुलमतिविषयं सर्वोत्कृष्ट- २०

द्रव्यं भवति— स ० ० ० ख ख ॥४५४॥

९) क ० ९९९

श्रुजुमतिविषयजपन्यक्षेत्रं गम्भूतिपुषत्त्वं द्विजिज्ञोषाः २ । ३ । उत्कृष्टं योजनपुषत्त्वं सताष्टयोज-
नानि ७ । ८ । 'विपुलमातिविषयजपन्यक्षेत्रं' योजनपुषत्त्वं अष्टमवयोजनानि ७ । ८ । ९ । उत्कृष्टं स्फुटं
नरलोकः ॥४५५॥

यद्विपुलमतिविषयोत्कृष्टक्षेत्ररूपेण नरलोक इति वचनमुच्यते खलु तद्वृत्तविष्कान्तस्य नियामकं विरचायकं २५

विपुलमतिके विषयभूत उत दूसरे द्रव्यमे असंख्यात कल्पकालके समयोक्ती संख्या
जितनी है एतनी बार ध्रुवहारसे भाग देनेपर विपुलमतिके विषयभूत सर्व उत्कृष्टद्रव्य
आता है ॥४५४॥

श्रुजुमतिविका विषयभूत जपन्य क्षेत्र गम्भूति पृथक्त्व अर्थात् दो-तीन कोस है । और
उत्कृष्ट क्षेत्र योजन पृथक्त्व अर्थात् साव-आठ योजन है । विपुलमतिविका विषयभूत जपन्य ३०
क्षेत्र योजन पृथक्त्व अर्थात् आठ-नौ योजन है और उत्कृष्टक्षेत्र मनुष्यलोक है ॥४५५॥

विपुलमतिविका विषय उत्कृष्टक्षेत्रका कथन करते हुए जो मनुष्यलोक कहा है वह

तद्विदियं कष्पाणमसंखेज्जाणं च समयसंखसमं ।

ध्रुवहारेणवहरीदे होदि हु उक्कस्सयं दब्बं ॥४५४॥

तद्वितीयं कल्पानानसंख्यातानां च समयसंख्यासमं ध्रुवहारेणापहृते भवति खल्लुक्कट्टं द्रव्यं ।

तं द्वितीयं विपुलमनःपर्ययज्ञानविषयद्वितीयद्रव्यविकल्पमं असंख्यातकल्पंगळ समयंगळ संख्यासमानान्प्रवहारंगळं भागिमुत्तं विरलु मावत्प्रमाणं लब्धं तावत्प्रमाणं विपुलमतिमनःपर्यय- ५
ज्ञानविषयसंखेज्जाणं द्रव्यविकल्पमं कुरुं खलु स्फुटमाणि त ७ प ख
९ क ७ ९९९

गाउयपुधत्तमवरं उक्कस्सं होदि जौयणपुधत्तं ।

विउलमदिस्स य अवरं तस्स पुधत्तं वरं सु णरलोयं ॥४५५॥

गव्यूतिपुयत्तवनवरमुक्कट्टं भवति योजनपुयत्तवं । विपुलमतेरवरं तस्य पुयत्तवं खलु १०
नरलोकः ॥

ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञानविषयजघन्यक्षेत्रं गव्यूतिपुयस्त्वमेरडुमुर क्रोदंगळपुत्तु । क्रो २ ।
३ । मवक्कट्टक्षेत्रं योजनपुयस्त्वसमाष्टयोजनप्रमाणमरुं । यो ७ । ८ । विपुलमतिमनःपर्ययज्ञान
विषयजघन्यक्षेत्रं तस्य पुयत्तवमा योजनंगळ पुयत्तयमष्टयोजननवयोजनप्रमाणमरुं । ८ । ९ ।
तदुक्कट्टज्ञानविषयोक्कट्टक्षेत्रं खलु स्फुटमाणि । नरलोकः मनुष्यलोकमेनितनिनु प्रमाणमरुं ।

णरलोएत्ति य वयणं विक्खंमणिपामयं ण वट्टस्स । १५

अम्हा तग्गणपदरं मणपज्जवखेत्तमुद्दिट्ठं ॥४५६॥

नरलोक इति वचनं विष्कंभनियामकं न वृत्तस्य । यस्मात्तद्वचनप्रतरं मनःपर्यायक्षेत्रमुद्दिष्टं ॥
विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानविषयसंखेज्जाणप्रमाणबोद्धुं नरलोक इति वचनं नरलोकक्षेत्रे
शब्दं तन्मनुष्यक्षेत्रवृत्तविष्कंभनियामकमत्तेके बोद्धे यस्मात् आशुबोद्धुं कारणदिवं तद्वचनप्रतरमा

तस्मिन् विपुलमतिविषयद्वितीयद्रव्ये असंख्यातकल्पसमयसंखं प्रवहारंभक्ते विपुलमतिविषयं संखेज्जाण- २०

द्रव्यं भवति— स ७ ७ ७ ख ख ॥४५४॥

९ । क ७ ९९९

ऋजुमतिविषयजघन्यक्षेत्रं गव्यूतिपुयत्तवं द्वित्रिकोणाः २ । ३ । उक्कट्टं योजनपुयत्तवं समाष्टयोज-
नानि ७ । ८ । विपुलमतिविषयजघन्यक्षेत्रं योजनपुयत्तवं अष्टययोजनानि ८ । ९ । उक्कट्टं स्फुटं
नरलोकः ॥४५५॥

यद्विपुलमतिविषयोक्कट्टक्षेत्ररूपे नरलोक इति वचनमुक्तं तत् तद्वचनविष्कंभस्य नियामकं निरवापकं २५

विपुलमतिके विषयभूत उच दूसरे द्रव्यमे असंख्यात कल्पकालके समययोकी संख्या
चित्तनी हे वतनी धार ध्रुवहारसे भाग देनेपर विपुलमतिके विषयभूत सर्व उक्कट्टद्रव्य
आवा है ॥४५४॥

ऋजुमतिविका विषयभूत जघन्य क्षेत्र गव्यूति प्रथमत्वं अर्थात् दो-वीन कोस है । और
उक्कट्ट क्षेत्र योजन प्रथमत्वं अर्थात् साठ-आठ योजन है । विपुलमतिविका विषयभूत जघन्य ३०
क्षेत्र योजन प्रथमत्वं अर्थात् आठ-नी योजन है और उक्कट्टक्षेत्र मनुष्यलोक है ॥४५५॥

विपुलमतिविका विषय उक्कट्टक्षेत्रका कथन करते हुए जो मनुष्यलोक कहा है वह

तद्विदियं कल्याणमसंखेज्जाणं च समयसंखसमं ।

ध्रुवहारेणवहरिदे होदि हु उक्कस्सयं दब्बं ॥४५४॥

तद्वितीयं कल्याणमसंख्यातानां च समयसंख्यासमं ध्रुवहारेणापहृते भवति खल्लुक्कष्टं द्रव्यं ।
तं द्वितीयं विपुलमनःपर्व्यज्ञानविषयद्वितीयद्रव्यविकल्पमं असंख्यातकल्पंगळ समयंगळ
संख्यासमानध्रुवहारंगळं भागिनुत्तं जिरलु मायत्प्रमाणं लब्धं तावत्प्रमाणं विपुलमतिमनःपर्व्य- ५
ज्ञानविषयतःखेत्कष्टद्रव्यविकल्पमश्कुं खलु स्फुटमागि स ० ख ख
९ क ० ९९९

गाउयपुधत्तमवरं उक्कस्सं होदि जौयणपुधत्तं ।

विउलमदिस्स य अवरं तस्स पुभत्तं वरं तु परलोयं ॥४५५॥

गव्यूतिपुयस्त्वमवरमुत्कष्टं भवति योजनपुयस्त्वं । विपुलमतेरवरं तस्य पुयस्त्वं खलु १०
नरलोकः ॥

ऋजुमतिमनःपर्व्यज्ञानविषयजपन्यक्षेत्रं गव्यूतिपुयस्त्वमेरडुमुक्क क्रोदंगळपुत्तु । क्रो २ ।
३ । मवत्कष्टक्षेत्रं योजनपुयस्त्वसप्तप्रयोजनप्रमाणमवक्कं । यो ७ । ८ । विपुलमतिमनःपर्व्यज्ञान
विषयजपन्यक्षेत्रं तस्य पुयस्त्वयमा योजनंगळ पुयस्त्वमष्टयोजनवयोजनप्रमाणमवक्कं । ८ । ९ ।
तदुत्कष्टज्ञानविषयोत्कष्टक्षेत्रं खलु स्फुटमागि । नरलोकः मनुष्यलोकमेनितानि प्रमाणमवक्कं ।

परलोएत्ति य वयणं विक्खंमणियामयं ण वडुस्स ।

लम्हा तग्घणपदरं मणपज्जवखेत्तमुद्दिट्ठं ॥४५६॥

नरलोक इति यत्तं विष्कंभनियामकं न वृत्तस्य । यस्मात्तद्वधनप्रतरं मनःपर्व्यायक्षेत्रमुद्दिष्टं ॥
विपुलमतिमनःपर्व्यज्ञानविषयसर्व्योत्कष्टक्षेत्रप्रमाणवोक्क नरलोक इति यत्तं नरलोकमेवो
शब्दं तन्मनुष्यक्षेत्रवृत्तविष्कंभनियामकमत्तेकेवोक्के यस्मात् आवुवोडु कारणदिदं तद्वधनप्रतरमा १५

तस्मिन् विपुलमतिविषयद्वितीयद्रव्ये असंख्यातकल्पसमयसंख्यं ध्रुवहारैर्भक्ते विपुलमतिविषयं सर्वोत्कष्ट- २०

द्रव्यं नरवि— स ० ० ० ख ख ॥४५४॥

९ । क ० ९ ९ ९

ऋजुमतिविषयजपन्यक्षेत्रं गव्यूतिपुयस्त्वं द्वित्रिक्रोशाः २ । ३ । उत्कष्टं योजनपुयस्त्वं सप्तप्रयोज-
नानि ७ । ८ । ९ । विपुलमतिविषयजपन्यक्षेत्रं योक्केमपुयस्त्वं अष्टकयथाभेगाणि ८ । ८ । ९ । उत्कष्टं स्फुटं
नरलोकः ॥४५५॥

यद्विपुलमतिविषयोत्कष्टक्षेत्ररूपेण नरलोक इति यत्तमनुत्तं तत् तद्गतविष्कम्भस्य नियामकं निरवायकं २५

विपुलमतिके विषयभूत उत दूसरे द्रव्यमे असंख्यात कल्पकालके समयोकी संख्या
जितनी है उतनी वार ध्रुवहारसे भाग देनेपर विपुलमतिके विषयभूत सर्व उत्कष्टद्रव्य
आवा है ॥४५४॥

ऋजुमतिविका विषयभूत जपन्य क्षेत्र गव्यूति प्रथक्त्वं अर्थात् दो-वीन कोस है । और
उत्कष्ट क्षेत्र योजन प्रथक्त्वं अर्थात् साठ-आठ योजन है । विपुलमतिविका विषयभूत जपन्य ३०
क्षेत्र योजन प्रथक्त्वं अर्थात् आठ-नी योजन है और उत्कष्टक्षेत्र मनुष्यलोक है ॥४५५॥

विपुलमतिविका विषय उत्कष्टक्षेत्रका कथन करते हुए जो मनुष्यलोक कहा है वह ८५

आवलिअसंखभागं अवरं च वरं च वरमसंखगुणं ।

वचो अनंखगुणिदं असंखलोगं तु विउलमदी ॥४५८॥

आवत्यसंखभागो अवरदच वरदच यरोजसंखगुणः ततोअसंखगुणितः अयंखलीरस्तु विपुलमतेः ॥

भावं प्रति वक्ति । श्रुजुमतिमनःपर्व्ययज्ञानविषयजपन्यमापत्यसंख्यातीरुभागमरुमुनु-
हृष्टनुमते आवत्यसंखभागमरुमादोडे जपन्यम नोइतसंख्यातगुणमरुहुं । ततः आ श्रुजुमति-
मनःपर्व्ययज्ञानविषयोहृष्टभाषप्रमानमं नोइतु विपुलमतिमनःपर्व्ययज्ञानविषयजपन्यभाषम-
संख्यातगुणितमरुमुमा विपुलमतिमनःपर्व्ययज्ञानविषयोहृष्टभाषं तु मते असंख्यातलोकः असंख्यात-
लोकानमरुहुं । ३७ ।

मज्झिमदव्यं खेचं कालं भावं च मज्झिमं णाणं ।

वागदि इदि मणपज्जयणाणं कहिदं समासेण ॥४५९॥

मध्यमद्वयं क्षेत्रं कालं भावं च मध्यमज्ञानं जानाति । इतिमनःपर्व्ययज्ञानं कथितं समासेन ॥

श्रुजुमतिमनःपर्व्ययज्ञानजपन्योहृष्टज्ञानंगत्तुं विपुलमतिमनःपर्व्ययजपन्योहृष्टज्ञानंगत्तुं
ई पेठल्लट्टु तंनमजपन्योहृष्टद्वयक्षेत्रकालभावंगत्तनरियमुमा मध्यमज्ञानविरुल्यंगत्तुं तंतम्म
मध्यमद्वयक्षेत्रकालं भावंगत्तनरियविनु मनःपर्व्ययज्ञानं संक्षेपविचं पेठल्लट्टुदुडु । तत्तद्वयक्षेत्रकाल-
भावंगत्तुं संक्षेपिः :-

भावं प्रति श्रुजुमतेविषयजपन्यं आवत्यसंख्यातीरुभागः ८ । उरुहृष्टे उदालानमवि जपन्यार्यंख्यात-

० ० ०

गुणं ८ ७ । उड. विपुलमतेविषयजपन्ययंख्यातगुणं ८ ७ उरुहृष्टे तु पुनः अयंख्यातलोकः ॥३७॥४५८॥

० ० ०

० ० ०

श्रुजुविपुलमते. जपन्योहृष्टविकल्पो उल्लसससजपन्योहृष्टद्वयक्षेत्रकालभावान् जानीतः । मध्यम-
विकल्पाल्लु हसस्वमध्यमद्वयक्षेत्रकालभावान् जानन्ति इत्येवं मनःपर्व्ययज्ञान संक्षेपोवतम् ॥४५९॥

२०

भावं अपेक्षा श्रुजुमतिका जपन्य विषय आवलीका असंख्यातवर्षां भाग है । उल्लष्ट
भी वतना दी है किन्तु जपन्यसे असंख्यातगुणा है । उससे विपुलमतिका जपन्य विषय
असंख्यातगुणा है और उल्लष्ट असंख्यात लोक है ॥४५८॥

श्रुजुमति और विपुलमतिके जपन्य और उल्लष्ट भेद अपने-अपने जपन्य और उल्लष्ट
द्वय-क्षेत्र-काल और भावोंको जानवे हैं । तथा मध्यमभेद अपने-अपने मध्यम क्षेत्र-काल-भाव-
को जानवे हैं । इस प्रकार मनःपर्व्ययज्ञानका संक्षेपसे कथन किया ॥४५९॥

२५

अनंतरं ज्ञानमार्गणोयोज्ज जीवसंख्येयं पञ्चवचं ।

चतुर्गदिमदिसुदबोहा पन्त्यासंखेज्जया हु मणपज्जा ।

संखेज्जा केवलिनो सिद्धादो होंति अदिरिचा ॥४६१॥

चतुर्गतिमतिश्रुतबोधाः पत्यासंख्येयमात्राः एतु मनःपर्ययज्ञानिनः संख्येयाः केवलिनः
सिद्धेभ्यो भवंत्यतिरिक्ताः ॥

चतुर्गतिव मतिज्ञानिगच्छं श्रुतज्ञानिगच्छं प्रत्येकं पत्यासंख्यातभागप्रमितर स्फुटमाणि ।
म । प । श्रु । प । मनःपर्ययज्ञानिगच्छं संख्यातप्रमितरेयपुत्रु । १ । केवलज्ञानिगच्छं सिद्धरं नोडे

जिनर संख्येयवचं साधिकरूप्य १ ।

ओहिरहिदा तिरिक्खा मदिणाणि असंखमागगा मणुवा ।

संखेज्जा हु तदूणा मदिणाणी ओहिपरिमाणं ॥४६२॥

अवधिरहितास्तिष्येचो मतिज्ञान्यसंख्यभागप्रमिता मानवाः । संख्येयाः एतु तदूना मति-
ज्ञानिनो अवधिज्ञानिनः परिमाणं ॥

अवधिज्ञानरहिततिष्येचव मतिज्ञानिगच्छ संख्येयं नोडलसंख्यातभागप्रमितरूप्य प १ अवधि-

रहितमनुष्यव संख्यातप्रमितरूप्य- । १ । मो येरड् राशिगच्छं प १ होनमप्य मतिज्ञानिगच्छ

संख्ये अवधिज्ञानिगच्छ परिमाणमक्कु प १

१५

मन्तव्यम् ॥४६०॥ अथ ज्ञानमार्गणायां जीवसंख्यामाह—

चतुर्गतिमतिज्ञानिनः श्रुतज्ञानिनश्च प्रत्येकं पत्यासंख्यातैकभागमात्राः स्तुः स्फुटं म प श्रु प । मनःपर्यय-

ज्ञानिनः संख्याताः १ । केवलज्ञानिनः जिनसंख्यया समधिकसिद्धराशिः ३ ॥४६१॥

अवधिज्ञानरहिततिष्येचव मतिज्ञानिगच्छाया असंख्येयभागः प १ । अवधिरहितमनुष्याः संख्याताः १

एतद्राशिद्वयोना मतिज्ञानसंख्येयं चतुर्गतिवचधिज्ञानपरिमाणं भवति प १-१ ॥४६२॥

२०

अथ ज्ञानमार्गणार्थं जीवोंकी संख्या कहते हैं—

चारों गतियोंमें मतिज्ञानी पक्षके असंख्यातवचं भाग हैं और श्रुतज्ञानी भी पक्षके असंख्यातवचं भाग हैं । मनःपर्ययज्ञानी संख्यात हैं । और केवलज्ञानी सिद्धराशिमें तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानके जिनोंकी संख्या मिलानेपर जो प्रमाण हो उतने हैं ॥४६१॥

अवधिज्ञानसे रहित तिष्येच मतिज्ञानियोंकी संख्यासे असंख्यातवचं भाग हैं । अवधि-
ज्ञानसे रहित मनुष्य संख्यात हैं । मतिज्ञानियोंकी संख्यामें ये दोनों राशि घटा देनेपर
चारों गतिके अवधिज्ञानियोंका प्रमाण होता है ॥४६२॥

२५

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानिगळ संख्येगळनष्टु राशिगळं कूडिदोडे केवलज्ञानिगळ संख्येय मेले साधिकमवकु $\frac{1}{3}$ मी राशिंयं सर्वजीवराशिंयोळ १६ कलेयुत्तिरलुट्टिद शेयं १३-

प्रत्येकं मत्यज्ञानिगळ संख्येयुं श्रुताज्ञानिगळ संख्येयुमवकु १३।१३। मितु पेळल्पट्ट संख्येगळ संदृष्टि चतुर्गंतियवकु । मतिज्ञानिगळ १३-१ चतुर्गंतियवकु श्रुतज्ञानिगळ १३-१ चतुर्गंतिय विभंगज्ञानिगळ

$$\frac{III}{= 1} \quad \text{चतुर्गंतियमतिज्ञानिगळ } 5 \quad \text{चतुर्गंतिय श्रुतज्ञानिगळ } 5 \quad \text{चतुर्गंतिय अवधिज्ञानिगळ } 9$$

$$१६५ = १$$

$\frac{0}{प ०}$ मनुष्यगतियमनःपर्ययज्ञानिगळ १ केवलज्ञानिगळ सिद्धरं जिनरं १ तिपर्यगतिय विभंग-ज्ञानिगळ ६ प मनुष्यगतिय विभंगज्ञानिगळ १ नारकविभंगज्ञानिगळ—२—। देवविभंगज्ञानि-

$$\frac{-1}{गळ = १} \quad \text{संदृष्टिः—}$$

$$१६५ = १$$

| | | | | | | |
|-------|---------|------------------------|---------------|---------------|---------------|--------------|
| कुमति | कुश्रुत | विभंग | मतिश्रुत | अवधि मनः | केवल | तिरि=विभंग ॥ |
| १३- | १३- | $\frac{III}{४।६५ = १}$ | $\frac{1}{5}$ | $\frac{1}{5}$ | $\frac{1}{३}$ | - ६ ५ |
| | | | a | a | a | a |

| | | |
|-----------|------------|----------------------|
| मनु=विभंग | नारक=विभंग | देव=विभंग |
| १ | —२— | $\frac{1}{४।६५ = १}$ |

इंतु भगवदहृत्परमेश्वरचारुचरणारविदद्वंद्वंदनानंदित पुष्यपुंजायमान धीमद्रायराजगुरु-मंडलाचाप्यंमहावादीदयररायवादिपितामह सकलविद्वज्जनचक्रवर्तितश्रीमदभयमूरिसिद्धांतचक्र-वर्त्सि श्रीपादपंकज्रजोरंजितललाटपट्टं धीमत्केदावणविरचितमप्य गोममदसारकर्णाटकवृत्ति जीव-तत्त्वप्रदीपिकेयोळ जीवकांडवैशतिप्ररूपगंगळोळ द्वादशज्ञानमार्गंगामहाधिकारं समाप्तमप्यु ॥

मत्यादिसम्यग्ज्ञानराशिपञ्चकेन साधिककेवलरायिमात्रेण १ सर्वजीवराशि. १६ हीनस्तदा १३-प्रत्येकं मतिश्रुताज्ञानिपरिमाणं स्यात् ॥४६४॥

मति आदि पाँच सम्यग्ज्ञानियोंकी संख्या केवलज्ञानियोंके संख्यासे कुछ अधिक है। इसको सर्वजीवराशियों-से घटानेपर मतिअज्ञानों और श्रुतअज्ञानों जीवका परिमाण होता है ॥४६४॥

संयममार्गणा ॥१३॥

ज्ञानमार्गणा स्वरूपमं पेच्छन्नंतरं संयममार्गणास्वरूपमं पेच्छत्वेऽडि मुंदण मूत्रमं पेच्छपं—
वदसमिदिकसायाणं दंडाण तहिंदिपाण पंचणहं ।

धारण-पालणणिग्गाहचागज्जो संजमो भणियो ॥४६५॥

व्रतसमितिकयायाणां बंडानां तचेंद्रियाणां पंचानां । धारणपालननिग्रहत्यागजयः संयमो भणितः ॥

व्रतसमितिकयायबंधेंद्रियंगठेंधो अप्पु यथासंख्यमाणि धारणपालननिग्रहत्यागजयं संयम-
मे बुद्ध परमाणमदोच्चेच्छल्पट्टुदु । व्रतधारणं समितिपालनं कयायनिग्रहं बंडत्यागमिन्द्रियजयमे धो
पंचप्रकारमनुच्छुद्धु संयममे धुवत्थं । सम् सम्यग्यमनं संयमः एंदिती निवृत्तिगनुरुपलक्षणं संयमकके
पेच्छल्पट्टुवं बुद्ध तात्पर्यं ।

वादरसंज्वलणुदए सुहुमुदए समखए-य मोहस्स ।

संजमभावो णियमा होदित्ति जिणेहि णिदिट्ठं ॥४६६॥

वादरसंज्वलनोदये सूक्ष्मोदये उपदमे क्षये च मोहस्य । संयमभावो नियमात् भवतीति
जिनेंनिहितः ॥

वादरसंज्वलनोदयवोळं सूक्ष्मलोभोदयवोळं मोहनीयकम्मोपग्रमवोळं क्षयवोळं नियमविदं
संयमभायमक्कुमे बुद्ध अर्हवादिगाळिवं पेच्छल्पट्टुदु ।

विदवं विमलयन्त्वीरैर्गुणैर्विश्वाविद्याभिनिः ।

विमलत्तीर्यकर्ता यो वन्दे तं तत्पदासये ॥१३॥

अथ ज्ञानमार्गणां प्रत्येदानीं संयममार्गणामाह—

व्रतसमितिकयायदधेन्द्रियाणां पञ्चानां यथासंख्यं धारणपालननिग्रहत्यागजयाः संयमो भणितः ।
व्रतधारणं व्रतसमितिकयायदधेन्द्रियाणां पञ्चानां यथासंख्यं धारणपालननिग्रहत्यागजयः इति पञ्च का अंगक इत्यर्थः । अं-अम्पहु, पचनं
संयमः ॥४६५॥

वादरसंज्वलनोदये सूक्ष्मलोभोदये मोहनीयोरग्रमे क्षये च नियमेन संयमभावः स्यात् । तथा हि—प्रमत्ता-

ज्ञानमार्गणाकी प्ररूपणा करके अथ संयममार्गणाकी प्ररूपणा करते हैं—व्रत, समिति,
कयाय, मन-वचन कायरूप दण्ड और इन्द्रियोंका यथाक्रम धारण, पालन, निग्रह, त्याग और
जयको संयम कहा है । अर्थात् व्रतोंका धारण, समितियोंका पालन, कयायोंका निग्रह, दण्डों-
का त्याग और इन्द्रियोंका जय इस प्रकार पाँच प्रकारका संयम है । 'सं' अर्थात् सम्यक् रूपसे
यमको संयम कहते हैं ॥४६५॥

वादरसंज्वलन कयायका उदय होते, सूक्ष्म लोभकयायका उदय रहते तथा मोहनीय-
का उपग्रम और क्षय होनेपर नियमसे संयमभाव होता है ऐसा जिनदेवने कहा है । इसका

गुणमस्कु ।

जहसादसंजमो पुण उवसमदो होदि मोहणोयस्य ।

खयदो वि य सो णियमा होदि चि जिणेहि णिदिदुद्धं ॥४६८॥

यथाह्यातसंयमः पुनर्यथात्तद्वृत्ति मोहनोयस्य । दस्यतोपि च स नियमाद् भरति इति जितैस्निदिष्टं ॥

यथाह्यातसंयमं मत्ते मोहनोयगुणदामदिवमस्कु । मोहनोयनिरवशेषदामदिवमुं वा यथाह्यातसंयमं नियमादिवमस्कुमं वितु जिनर्याजिबं पेळत्पट्टुडु ।

तदियकसायुदयेण य विरदाविरदो गुणो हवे जुगवं ।

विदियकसायुदयेण य असंजमो होदि णियमेण ॥४६९॥

ततोयकसायोदयेन च विरताविरतगुणो भवेत्तुगणम् । द्वितीयकसायोदयेन च असंयमो भरति नियमेन ॥

प्रथाह्यानावरणततोयकसायोदयविवं विरताविरतगुणोमोमो बलोब्देयस्कु । संयमसंयमगुणोमोमो बलोब्देयस्कुमनुकारणमाणि सम्मग्निभ्यावृष्टियं तं देशसंपत्तुमिधसंयमियस्कुमं सुर्यं । द्वितीयकसायोदयवोळप्रथाह्यानावरणकसायोदयवोळसंयमं नियमविवं मस्कु ।

संगहिय सयलसंजममेयजममणुचरं दुरवगमं ।

जीवो समुब्धहंतो सामाह्यसंजदो होदि ॥४७०॥

संगृह्य सकलसंयममेकयममनुतरं दुरवगम्यं । जीवःसमुद्बहन् तानामिकसंयमो भरति ॥

संगृह्य सकलसंयमं प्रतधारणादिवंचविषमस्यसंयमं गुणपस्यसाष्टाद्विरतोस्मि येरितु संप्रतिष्ठि संक्षेपिष्ठि एकयमं भेदरहितसकलसावपनियुतित्यहयमस्य एकयममं अनुतरं अतदुनं

सूक्ष्मसावपनयंयमगुणो भरति ॥४७१॥

यथाह्यातसंयमः पुनः मोहनोयवोरयस्यतः निरवशेषधयस्यतः निरमेन भरतीति जितैरन्य ॥४७१॥

प्रथाह्यानावरणकसायोदयेन विरताविरतगुणो गुणम् भरति, संयमासंयमोयुंसावभवाण् । दस्यतोपि च स नियमाद् भरति इति जितैस्निदिष्टं । अत्रत्याह्यानावरणकसायोदयेन अतदुनं नियमेन भरति ॥४७१॥

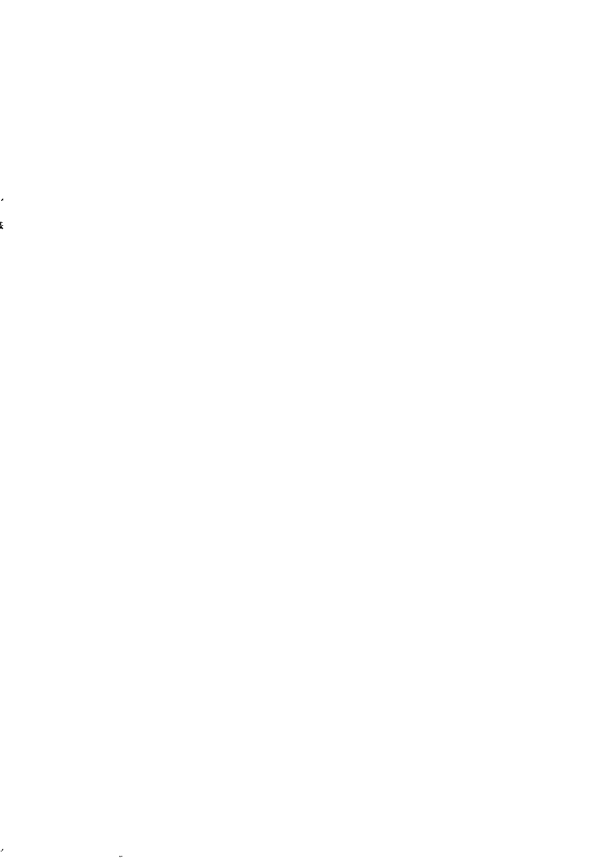
सकलसंयमं—प्रतधारणादिवंचविषं गुणपस्यसाष्टाद्विरतोस्मि अनुत्तु—संयम, एकयम—वेरतैरन्य-

पर्यन्त होते हैं । सूक्ष्मकृष्टिको प्राप्त संग्रहण बोधका इत्यं ह्ये सुक्ष्म सावपनय नामक संयमगुण होता है ॥४७१॥

यथाह्यात संयम नियमसे मोहनोयके वरजमसे अथवा सम्पूर्ण धयसे होता है 'यम' जिनवेधने कहा है ॥४७२॥

तीसरी प्रथाह्यानावरणकसायोदये इत्यसे एक साथ विरतविरतरूप गुण होता है योकि संयम और असंयम एक साथ होते हैं । अथोर् जैसे तीसरे गुणस्थानमें मध्यकष और मिथ्यात्व मिळे-जुळे होते हैं ऐसे ही देशसंयम नामक संयम गुणस्थानमें संयम और असंयम मिळा हुआ होता है । दूसरी अत्रत्याह्यानावरणकसायोदये इत्यसे नियमसे प्रथमयम होता है ॥४७२॥

प्रतधारण आदि रूप पाँच प्रकारके सकल संयमको एक साथ 'यम' मन्त्र माध्यमे विरत है इस प्रकार संगृहीत करके एक यम रूपसे धारण करना तानामिक संयम है ।



पंचसमितयोज्यसंतोति पंचसमितः । पंचसमितियुक्तं त्रयो गुणयोऽस्मिन्निति त्रिगुण-
त्रिगुणित्युक्तं त्रिगुणित्युक्तं त्रयो गुणयोऽस्मिन्निति त्रिगुण-
यः प्रायनोर्व पंचकल्पमः पंचकल्पमनुच्छ पुरयः पुष्यतु सः जात परिहारकसंयतः सत्तु परिहार-
विगुणिसंयतनकुं स्फुटमाणि ।

तीसं वासो जन्मे वासपुपुधत्तं सु तित्ययरमूले ।

पचकखाणं पठिदो संज्ञणदुगाउयपिहारो ॥४७३॥

विगारः ॥

जन्मबोजु विगारुपमनुच्छं सध्वंवा मुतियप्यं यदु बीजेतोडु यदप्यस्त्वं वरं तोत्यंकर
प्रत्याह्यानं वै भसनय पुष्यं पठियित्तिवातं परिहारविगुणिसंयममं केकोडु १०

धोपावमूलबोजु प्रत्याह्यानं वै भसनय पुष्यं पठियित्तिवातं परिहारविगुणिसंयममं केकोडु १०
संध्याप्रयगुणसत्त्वकालबोजरडु क्रोडप्रमाणविहारमनुच्छं रात्रियोज्विहाररहितं प्रायुट्काल-
नियममिल्लवतुं परिहारविगुणिसंयमनकुं । परिहरणं परिहारः प्राणियथानिवृत्तित्तं परि-
हारेण विगारिष्ठा मुद्रियंतिमन् स परिहारविगुणिसंयमो यत् स परिहारविगुणिसंयमः एवित्तु
परिहारविगुणिसंयमगे जपन्यकालमंतस्मूहंतंमकुमेकेबोडे परिहारविगुणिसंयममं पोदि जपन्य-
कालपम्यंतमिदंयगुणस्थानमं पोदिदंये तवंतस्मूहंतंकालसंभवमकुमुदर्दिवं । उट्टुष्टविदमष्ट- १५
विगारुपमनुच्छंकोटिययंमकुमुमेकेबोडे पुट्टिविनं मोदसोडु मूवनु ययंवरं सध्वंवा मुतियाणि
कालमं कळुडु संयममं पोदि मेले यदप्यस्त्वं वरं तोत्यंकरधोपावमूलबोजु प्रत्याह्यानमधेय-

पञ्चसमितिसमेतः त्रिगुणियुतः सधापि प्राणिवधं परिहारि, यः पञ्चानां गामाधिकारिणां मन्वे परिहार-
विगुणिसंयमः पुष्यः सः परिहारविगुणिसंयतः स्फुटं भवति ॥४७३॥

जन्मनि विगारिष्ठा स ध्वंवा मुषो सनागत्य रोधां दूशोत्वा वपुपुष्यस्त्वयं तोत्यंकरधोपावमूलं २०
प्रत्याह्यानं नवमबुधं पठित स परिहारविगुणिसंयमं स्वीकृत्य संध्याप्रयानसंध्याकाले त्रिगुणप्रमाणविहारो एतौ
विहाररहितः प्रायुट्कालनियमरहितः परिहारविगुणिसंयमो भवति । परिहरणं परिहारः प्राणिवधनिवृत्तिः,
तेन विगारिष्ठा मुद्रियंतिमन् स परिहारविगुणिसंयमो यत् स परिहारविगुणिसंयमः यत् यत्नयापेक्ष-
मुहूर्तः, जपन्येन तावकालमेव तत्र विचारो गुणस्थानान्तरपचनात् । उट्टुष्टः ब्रह्मविगुणिसंयमोऽस्ति, जन्मनि-

जो पांच समिति और तीन गुणियांसे युक्त होकर सदा ही प्राणिवधसे दूर रहता है २५
बहु सामायािक आदि पांच संयमोंमेंसे परिहारविगुणिसंयमक एक संयमको धारण करनेसे
परिहारविगुणिसंयमो होता है ॥४७३॥

जन्म से वासं ययं तक सर्वदा मुजपूर्वक रहते हुए उसे त्याग दोज्या महान करके
वर्षपुष्यस्त्वयं तोत्यंकरके पादमूलमें जिसने प्रत्याह्यान नामक नीधं पूरंको पदा है यह
परिहारविगुणिसंयमको स्वीकार करके सदा काळ वानो सन्ध्याओंको छोड़कर दो वासं १०
प्रमाण विहार करता है, रात्रिमें विहार नहीं करता, वर्षाकालमें उसको विहार न करनेका
नियम नहीं रहता, वह परिहारविगुणिसंयमो होता है । परिहरण अर्थात् प्राणिवधसे
निवृत्तिको परिहार कहते हैं । उनसे विरिष्ठा मुद्रि जिसमें है यह परिहारविगुणिसंयमो है । यह
संयम जिसके होता है वह परिहारविगुणिसंयमो है । उसका जपन्य काळ अन्तुह्वं है
क्योंकि कमसे कम इतने काळ पर्यंत ही उस संयममें रहकर अन्य गुणस्थानोंमें बजा जाया १५
है । उट्टुष्ट काळ अङ्गुवोस वर्ष कम एक पूर्वं कोटि है क्योंकि उत्तम दिनसे केहर वासं ययं

त्मस्यभावावस्थापेक्षालक्षणं यथाख्यातं चारित्रमित्याख्यायते ।

पंचतिहिचउविद्देहि य अणुगुणसिक्खावएहि संजुत्ता ।

उच्चंति देसविरया सम्माइह्ठी शलियकम्मा ॥४७६॥

पंचत्रिचतुर्विधेशच अणुगुणमिज्ञावतैः संयुक्तः । उच्चते देसविरतः सम्यग्दृष्ट्यो क्षटित-
कर्मणः ॥

पंचविधाणुप्रतंगच्छिदं त्रिविधगुणप्रतंगच्छिदं चतुर्विधयतिशाप्रतंगच्छिदं संयुक्तरण्य सम्यग्दृष्टि-
अणु कर्मनिर्जरेयोळ्ळूडिदवग्गळु देसविरतरेडु परमाणमदोळ्ळेडत्पट्टव ।

दंसणवदसामायियपोसहसचिचराइभत्ते य ।

वम्हारंभपरिगगइ अणुमणमुद्दिदइ देसविरदेदे ॥४७७॥

दर्शनिकप्रतिरुसामायिकप्रोपधोपवाससचित्तविरत-रात्रिभक्तविरतब्रह्मचाम्पारिंभविरतपरि-
प्रहृविरतानुमतिविरतोद्विष्टविरताः देसविरता एते ॥

इल्लि नामैकदेवो नाम्नि वत्तते एवो न्यायदिदं छाये माडत्पट्टुडु । वा देसविरतमेवंगळ्ळंनो
दप्पुवदे ते बोडे दर्शनिकुं वतिकुं सामायिकुं प्रोपधोपवासुं सचित्तविरतुं रात्रिभक्तविर-
तनुं ब्रह्मचारिपुं आरंभविरतनुं परिप्रहृविरतनुमनुमतिविरतनुमुद्दिष्टविरतनुमे वितिल्लि
दर्शनिकनेवं ।

“पंचुंवरसहियाइं सत्तइ वसणाइ जो विवज्जेइ ।

सम्मत्तविमुत्तमई सो दंसणसावधो भणियो ॥” [वजु. था १७]

यथाख्यातचारित्रमित्याख्यायते ॥४७५॥

पञ्चत्रिचतुर्गुणमिज्ञावतैः संयुक्तमस्यदृष्टः कर्मान्तरान्तः ते देसविरताः इति परमाणमे
उच्चन्ते ॥४७६॥

अत्र नामैकदेवो नाम्नि वत्तते इति नियमाद् गाथायां व्याख्यायते । दर्शनिको, वतिकः, सामायिकः,
प्रोपधोपवासः, सचित्तविरतः, रात्रिभक्तविरतः, ब्रह्मचारी, आरम्भविरतः, परिप्रहृविरतः, अनुमतिविरतः,
उद्विष्टविरतश्चेत्येकान्तर्गते विरतभेदाः । अत्र—“पञ्चुंवरसहियाइं सत्तइ वसणानि जो विवज्जेई । सम्मत्तविमुत्तमई
सो दंसणसावधो भणियो ।” (वजु था १७) इत्यादिकथनानि प्रत्यान्तरेजगन्तव्यानि ॥४७५॥

समस्त मोहनीय कर्मके उपराम अथवा क्षयसे आत्मस्वभावकी अवस्थारूप लक्षणवाळा
यथाख्यात चारित्र कहलावा है ॥४७५॥

पाँच अणुप्रव, तीन गुणप्रव और चार सिक्षात्रवोंसे संयुक्त सम्यग्दृष्टी जो कर्माँकी
निर्जरा करते हैं उन्हें परमाणममें देसविरत कहते हैं ॥४७६॥

यहाँ नामका एकदेस नामका वाचक होता है इस नियमके अनुसार गाथाका अर्थ
कहते हैं—दर्शनिक, वतिक, सामायिक, प्रोपधोपवास, सचित्तविरत, रात्रिभक्तविरत, १०
ब्रह्मचारी, आरम्भविरत, परिप्रहृविरत, अनुमतिविरत और उद्विष्टविरत ये ग्यारह देस-
विरतके भेद हैं । पाँच उदुम्भरादिकके साथ साव न्यसनोंको जो छोड़वा है उस विमुद्
सम्यक्त्वचारीको दर्शनिक भावक कहते हैं । इत्यादि इन भेदोंके लक्षण अन्य ग्रन्थोंसे
जानना ॥४७५॥

प्रमत्तादिचतुर्णांयुतिः सामायिकद्विकं प्रमत्तर संख्ये ५९३९८२०६ । अप्रमत्तरसंख्ये २९६९९१०३ । उपशमकापूर्वकरणह । २९९ । उपशमकानिवृत्तिकरणह २९९ । क्षपकापूर्वकरणह ५९८ । क्षपकानिवृत्तिकरणह ५९८ । इंतु प्रमत्तादिचतुर्गुणस्थानवर्तिगळ युति प्रत्येकसामायिक-संयमिगळसंख्येयुं छेदोपस्थापनसंयमिगळ संख्येयुं कुमेकैदोडे सामायिकसंयमिगळनिवरनिबरे छेदोपस्थापनसंयमिगळपुर्वारवं । ८२०९९१०३ । ८२०९९१०३ । क्रमविद शोपत्रयं परिहार-विशुद्धिसंयमिगळ संख्येयुं सूक्ष्मसांपरायसंयमिगळ संख्येयुं यथाख्यातसंयमिगळ संख्येयुं त्रिरूपोन-सप्तसहस्रमुं ६९९७ । त्रिरूपोननवशतमुं ८९७ । त्रिरूपोननवलक्षमुमकुं । ८९९९९७ ।

पन्लासंख्येज्जदिमं विरदाविरदाण दन्वपरिमाणं ।

पुञ्चुत्तरासिहोणो संसारी अविरदाण पमा ॥४८१॥

पल्यासंख्येयभागो विरताविरतानां द्रव्यप्रमाणं । पूर्वोक्तराशिहीनः संसारी अविरतानां प्रमा ॥

पल्यासंख्यातैकभागं देशसंयतजीवद्रव्यप्रमाणमवकु ५ मो पूर्वोक्तयट्ाराशिविहीन-
a a ४ a

प्रमत्ताः ५, ९३, ९८, २०६ अप्रमत्ताः २, ९६, ९९, १०३, उपशमकापूर्वकरणाः २९९, उपशम-कानिवृत्तिकरणाः २९९, क्षपकापूर्वकरणाः ५९८, क्षपकानिवृत्तिकरणाः ५९८, एषां चतुर्णां युतिः प्रत्येकं सामायिकछेदोपस्थापनसंयमिसंख्या भवति उभयत्र समसंख्यात्वात् ८, ९०, ९९, १०३ । ८, ९०, ९९, १०३ । परिहारविशुद्धिसूक्ष्मसांपराययथाख्यातसंयमिसंख्या क्रमेण त्रिरूपोनसप्तसहस्रं ६९९७ त्रिरूपोननवशतं ८९७, त्रिरूपोननवलक्षं ८९९९९७ भवति ॥४८०॥

पल्यासंख्यातैकभागो देशसंयतजीवद्रव्यप्रमाणं भवति ५ एतत्पूर्वोक्तयट्ाराशिविहीनसंसारिराशिविद
a a ४ a

प्रमत्तादि चार गुणस्थानवर्ती जीवोंका जितना जोड़ है इतने ही सामायिक और छेदोपस्थापना संयमी होते हैं । सो प्रमत्तसंयत पाँच करोड़ तिरानवे लाख, अठानवे हजार दो सौ छह ५९३ ९८ २०६, अप्रमत्तसंयत दो करोड़ छियानवे लाख, निन्यानवे हजार एक सौ तीन २९६९९१०३, उपशम श्रेणीवाले अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती दो सौ निन्यानवे २९९, उपशम श्रेणीवाले अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती दो सौ निन्यानवे २९९, उपशम श्रेणीवाले अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती दो सौ निन्यानवे २९९, क्षपक श्रेणीवाले अपूर्वकरण पाँचसौ अठानवे, क्षपक-श्रेणीवाले अनिवृत्तिकरण पाँचसौ अठानवे ५९८ इन सबका जोड़ आठ करोड़, नव्वे लाख, निन्यानवे हजार एक सौ तीन ८२०९९१०३ इतने जीव सामायिक संयमी और इतने ही छेदोपस्थापना संयमी होते हैं । दोनोंकी संख्या समान होती है । परिहार विशुद्धि संयमोंकी संख्या तीन कम सात हजार ६९९७ है । सूक्ष्मसाम्पराय संयमियोंकी संख्या तीन कम नौ सौ ८९७ है । यथाख्यात संयमोंकी संख्या तीन कम नौ लाख ८९९९९७ है ॥४८०॥

पह्यके असंख्यातवें भाग देश संयमी जीवोंका प्रमाण है । इन छहों राशियोंकी
८७

दर्शन-मार्गणा ॥१४॥

संयममार्गणानंतरं दर्शनमार्षणं येच्छ्वं :—

जं साम्पणं गृहणं भावाणं णेव कट्टुमापारं ।

अविसेसिदूण अट्ठे दंसणमिदि भण्णये समये ॥४८२॥

यत्सामान्यग्रहणं भावानां नैव कृत्वाऽऽकारमविशेष्यात्पार्थान्दर्शनमिति भण्यते समये ॥

भावानां सामान्यविशेषात्मकबाह्यपदार्थगठ आकारं नैव कृत्वा भेदग्रहणं माडवे
यत्सामान्यग्रहणं आयुवो'दु स्वरूपमात्रं केको'ब्बुवदु दर्शनमे'दितु परमागमबो'ळु पेळल्पट्टु ।
वस्तुस्वरूपमात्रग्रहणमे'ते बोडे अर्थाविशेष्य बाह्यात्थं'गळं जातिक्रियागुणप्रकारं'गळिदं
विकल्पसदे स्वपरसत्तावभासनं दर्शनमे'दितु पेळल्पट्टुवे' बुवत्यं । मत्तमोपत्यंमने विशदं माडिवपं—

भावाणं साम्पणविसेसयाणं सरूवमेत्तं जं ।

वण्णणहीणरगृहण जीवेण य दंसणं होदि ॥४८३॥

भावानां सामान्यविशेषात्मकानां स्वरूपमात्रं यद्दर्शनहीनग्रहणं जीवेन च दर्शनं भवति ॥

सामान्यविशेषात्मकगठप पदार्थगठ आयुवो'दु स्वरूपमात्रं विकल्परहितमाणि जीवनिदं
स्वपरसत्तावभासनमवु दर्शनमे' बुववकुं । पश्यति दृश्यते'ज्जेन दर्शनमात्रं वा दर्शनमे'दितु कर्तुंकरण-

अनन्तानन्दसंसारसागरोत्तारसेतुकम् ।

अनन्तं तीर्थकर्तार वन्देऽनन्तमूदे सदा ॥१४॥

अथ संयममार्गणां व्याख्याय दर्शनमार्गणां व्याख्याति—

भावानां सामान्यविशेषात्मकबाह्यपदार्थानां आकारं-भेदग्रहणं, अकृत्वा यत्सामान्यग्रहणं-स्वरूपमात्र-
वभासनं तद् दर्शनमिति परमागमे भण्यते । वस्तुस्वरूपमात्रग्रहणं कथम् ? अर्थात्-बाह्यपदार्थान् अविशेष्य-
जातित्रियाग्रहणविकारैरविकल्प्य स्वपरसत्तावभासनं दर्शनमित्यर्थः ॥४८२॥ अमुमेवार्थं विशदयति—

भावानां सामान्यविशेषात्मकपदार्थानां यत्स्वरूपमात्रं विकल्परहितं यथा भवति तथा जीवेन स्वपर-

संयममार्गणाको कइकर दर्शनं मार्गणाको कइते हैं—

भाव अर्थात् सामान्य विशेषात्मक पदार्थकिं आकार अर्थात् भेदग्रहण न करके जो
सामान्य ग्रहण अर्थात् स्वरूपमात्रका अवभासन है, उसे परमागममें दर्शन कइते हैं । वस्तु-
स्वरूपमात्रका ग्रहण कैसे करता है ? अर्थात् पदार्थकिं जाति, क्रिया, गुण आदि विकारों-
का विकल्प न करते हुए अपना और अन्यका केवल सत्तामात्रका अवभासन दर्शन
है ॥४८२॥

इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं—

सामान्य विशेषात्मक पदार्थका विकल्परहित स्वरूपमात्र जैसा है वैसा जीवके साथ
स्वपर सत्ताका अवभासन दर्शन है । जो देखता है, जिसके द्वारा देखा जाता है या देखना

एकैन्द्रियप्रभृतीणं शीणकसायंतणंतरासीणं ।

योगो अचक्षुदंतणजीवाणं होदि परिमाणं ॥४८८॥

एकैन्द्रियप्रभृतीनां शीणकसायान्ताणान्तरासीणानां योगो अचक्षुर्दशनजीवानां भवति परिमाणं ।

एकैन्द्रियप्रभृति शीणकसायान्ताणान्तानंतजीवंगलयोगं अचक्षुर्दशनजीवंगळ प्रमाणमवकुं ॥३॥

| शक्तिचक्षु | व्यक्तिचक्षु | अचक्षु | अवपिदर्शन | केयलदर्शन |
|------------|--------------|--------|-----------|-----------|
| २ | २ | १ | ५ | ७ |
| ४ | ४ | ० | ० | ३ |
| २ | ५ | | ० | |
| ० | | | | |

इतु भगवदहंत्वपरमेद्वरवाहवरणारविबहुं द्रव्यं वनानं दितुस्यपुंजापमानश्रीमद्वायराजगुप्त मंड- ५
लाम्यं महापादवादीश्वरराययादिपितामह सरुलविद्वज्जनचक्रवर्तिश्रीमद्वभयसूरि सिद्धांतचक्रवर्ति
श्रीपारंपरुज्जरजोरंजित ललाटपट्ट श्रीमत्केसवपुनजिरचित गोम्मटसारकर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपि-
पिकेयोऽऽ जीयकांडविनातिप्ररूपनंगळोऽऽ चतुर्दशं दर्शनमार्गणाधिकारं निगदितमाप्तु ।

एकैन्द्रियप्रभृतिशीणकसायान्ताणान्तानन्तदीवानां योगः अचक्षुर्दशनजीवप्रमाणं भवति १३-॥४८८॥

एकैन्द्रियसे लेकर श्रीमत्कपाय गुणस्वान पर्यन्त अनन्त जीवोंका जो योग है उतना १०
अचक्षुर्दशनो जीवोंका प्रमाण है ॥४८८॥

एक प्रकार सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य नेमिचन्द्र रचित गोम्मटसार अपर नाम
पंचसंग्रहकी केसववर्गी रचित कर्नाटक वृत्ति अनुसारीणी हिन्दी टीकामें
जीवशाब्दके अन्वयगतं दर्शनं मार्गणां प्ररूपणा नामक चौदहवाँ
अधिकार समाप्त हुआ ३३५॥

उष्णपणीलकचोदसुहेमंजुजसंखसंगिहा वण्णे ।

संखेज्जाऽसंखेज्जाऽगंतवियप्पा य पत्तेयं ॥४९५॥

पद्परनीलकपोतमुहेमानुजसंतसन्निभा वर्णं । संखेयासंखेया अनंतविकल्पाश्च प्रत्येकं ॥
 सुंघिय, नीलरत्नव, कपोतपक्षिय, मुहेमव, अंजुजव, शंखव सन्निभंगुं यथाक्रमविषमप्यु ।
 कृष्णलेऽयादिगुं वर्णवोऽं विद्रियप्यक्तगच्छिर्बं प्रत्येकं संख्यातंगुं प्यु । कृ १ नो १ क १ ते १
 प १ गु १ ॥ स्फुंभेदेविर्बं प्रत्येकमसंख्यातंगुं प्यु । कृ ० नील ० क ० ते ० प ० गु ० ॥ परमाणु-
 भेदविर्बं प्रत्येकमनंतानंतगुं प्यु । कृ ए नो ए क ए ते ए प ए गु ए ॥

गिरया क्खिहा कप्पा भावाणुगया हु तिसुरणरतिरिये ।

उत्तरदेहे उक्कं भोगे रविचंदहरिदंगा ॥४९६॥

नारकाः कृष्णाः कल्पजा भावानुगता एतु तिसुरनरतिर्व्यंशु । उत्तरदेहे पदकं भोगे
 रविचंद्रहरितांगाः ॥

नारकरत्नवर्षं कृष्णदगुंयप्यव कल्पजरत्नव भावलेऽयानुगतप्यव । भवनप्रयदेवकंजुं
 मनुष्यवर्षं तिस्रंषदगुं उत्तरदेहंगुं देवकंजुं येकुब्जं शरीरंगुं अयं पद्मवर्णंगुं प्यु यथाक्रम-
 मुत्तममध्यमजपन्यभोगभूमिजरप्य नरतिर्व्यंषदगुं शरीरंगुं रविचंद्रहरिदंगुं प्यु ॥

कृष्णादिदेवताः वर्णं पद्पर-नीलरत्न-कपोत-मुहेम-अंजुज-शंखसन्निभा भवन्ति । पुनस्ता इन्द्रिय-
 व्यतिभिः प्रत्येकं संख्याताः कृ १ । नो १ । क १ । ते १ । प १ । गु १ । स्फुंभेदेनासंख्याताः कृ ० । नो ०
 क ० । ते ० । प ० । गु ० । परमाणुभेदेन अंनंतानन्ताश्च भवन्ति । कृ ए । नो ए । क ए । ते ए । प ए ।
 गु ए ॥४९५॥

नारकाः सर्वे कृष्णा एव, कल्पजाः सर्वे स्वस्वभावलेऽयानुगा एव । भवनप्रयदेवाः मनुष्यास्तिर्व्यंशु
 देविकुवर्णदेहाश्च सर्वे पद्मवर्णाः । उत्तममध्यमजपन्यभोगभूमिजनरतिर्व्यंशुः क्रमदाः रविचंद्रहरिद्वर्णा
 एव ॥४९६॥

वर्णके रूपमें कृष्ण आदि रंश्या भौरि, नीलम, कवूतर, स्वर्ण, कमल और शंखके
 समान होती हैं । अर्थात् भौरिके समान जिनके शरीरका रंग काला है, उनके द्रव्यरंश्या कृष्ण
 है । नीलमके समान नील रंग वालोंकी द्रव्यरंश्या नील होती है । कवूतरके समान शरीरके
 वर्णवालोंनेकी द्रव्यरंश्या कापोत होती है । स्वर्णके समान पीत वर्ण वालोंकी द्रव्यरंश्या पीत
 होती है । कमलके समान शरीरके वर्णवालोंनेकी द्रव्यरंश्या पद्म होती है । और जिनका शरीर-
 का रंग शंखके समान सफेद होता है उनको द्रव्यरंश्या शुक्ल होती है । इन्द्रियोंके द्वारा प्रतीत
 होनेकी अपेक्षा प्रत्येक रंश्याके संख्यात भेद होते हैं । स्फुंभोंके भेदसे असंख्यात भेद हैं और
 परमाणुओंके भेदसे अनन्त भेद हैं ॥४९५॥

सब नारकी कृष्णवर्ण ही होते हैं । सब कल्पवासी देव अपनी-अपनी भावलेऽयाके
 अनुसार ही द्रव्यलेऽयावाले होते हैं । अर्थात् जैसी उनकी भावलेऽया होती है वसीके
 अनुसार उनके शरीरका वर्ण होता है । भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषोदेव, मनुष्य, तिर्यच
 और देवोंके विक्रियासे घना शरीर ये सब छहों वर्णवाले होते हैं । उत्तम, मध्यम और जपन्य

काऊ णीलं किण्हं परिणमदि किलेसवद्धिदो अप्पा ।

एवं किलेसहाणीवद्धीदो होदि असुइतियं ॥५०२॥

कपोतं नीलं कृष्णं परिणमति क्लेशवृद्धित आत्मा । एवं क्लेशहानिवृद्धितोऽनुभवयं भवति ।

संक्लेशवृद्धिर्विद्यमात्मं कपोतनीलकृष्णलेश्याहपमैतत्पुवंते परिणमति परिणमिसुगुमितु संक्लेशहानिवृद्धिर्गात्रिमनुभवयरूपनक्कुं ।

तेऊ पम्मे सुक्के गुहाणमवरादि अंसगे अप्पा ।

सुद्धिस्म य वद्धीदो हाणीदो अण्णहा होदि ॥५०३॥

तेजसि पधे सुक्के पुमानामवराद्यंशके आत्मा विमुद्धेश्च वृद्धितो हानितोऽप्यया भवति ।

शुभंगळप्य तेजःपद्यसुक्कलेश्येयं गळ जघन्याद्यंशंगळोळात्मं विमुद्धिवृद्धिर्विद्यं भवति परिणमिसुगुं । हानितोऽप्यया भवति विमुद्धिय हानिर्विद्यं सुक्कलेश्योत्कृष्टं मोवल्गोडु तेजोलेश्याजघन्यांशः पर्यंतं भवति परिणमिसुगुं । संवृष्टिः :-

| अनुभलेश्या स्थानानि ९०८ | सख्वंधनं ३० | शुभलेश्या स्थानानि | ९०११ |
|-------------------------|--------------|--------------------|-----------|
| तीव्रतमकृष्ण | तिष्वत्तरणीळ | मंदतेज | मंदतरपद्य |
| उ ०००००० | उ ०००००० | ज ०००००० | ज ०००००० |
| ३०८८ | ३०८८८ | ३०८८ | ३०८८ |
| ९९ | ९९९ | ९९ | ९९९ |

परिणामाधिकारं तृतीयं समाप्तमाप्नु ।

अनंतरं संक्रमणाधिकारं गायानर्थाविवं स्वस्थानपरस्थानसंक्रमणमनि परिणामपरावृत्तिरचनेयं कटाशिसिको डु पेळ्वयं ।

संक्लेशवृद्धिपात्मा कपोतनीलकृष्णलेश्यारूपेण परिणमति इति संक्लेशहानिवृद्धिम्यामनुभवयरूपो भवति ॥५०२॥

शुभानां तेजःपद्यसुक्कलेश्यानां जघन्याद्यंशेषु आत्मा विमुद्धिवृद्धितो भवति परिणमति, हानितोऽप्यया सुक्कलोत्कृष्टात्तेजोघन्याद्यंशपर्यंतं परिणमति ॥५०३॥ इति परिणामाधिकारः । उक्तपरिणामपरावृत्तिरचनान् मनसिहृत्य संक्रमणाधिकारं गायानर्थेपाह—

तथा संक्लेश परिणामोर्ध्वं वृद्धि होनेसे कपोत, नील और कृष्ण लेश्यारूपसे परिणमन करता है । इस प्रकार संक्लेश परिणामोर्ध्वं हानि, वृद्धि होनेसे तीन अनुभ लेश्या रूपसे परिणमन करता है ॥५०२॥

शुभ तेज, पद्य और सुक्क लेश्याओंके जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट अंशोंमें आत्मा विमुद्धि की वृद्धिसे परिणमन करता है । और विमुद्धिको हानिसे अन्यथा अर्थात् सुक्क लेश्याके उत्कृष्ट अंशसे तेजोलेश्याके जघन्य अंश तक परिणमन करता है ॥५०३॥

इस प्रकार परिणामाधिकार समाप्त हुआ ।

उक्त परिणामोंके परिवर्तनकी रचनाको मनमें रखकर तीन गायानर्थोंसे संक्रमण अधिकारको कहते हैं—

लेस्यानां कृष्णादिसर्वलेश्येयगळ उत्कृष्टात् उत्कृष्टवर्ताणिवं अनंतरस्थलेस्यास्थानविकल्पदोळु
 अवरहानिः अनंतैकभागहानियक्कुं । एकं दोडकृष्टलेशयोदयस्थानकमप्युदरिदमनंतरोर्वकस्थान-
 दोळनंतैकभागहानियक्कुमप्युदरिदं । अवरस्मात् सर्वलेश्येयगळ जघन्यस्थानवर्ताणिवं स्वस्थाने स्वस्था-
 नदोळु अवरवृद्धिः अनंतभागवृद्धिये अक्कुमेके दोडे लेश्याजघन्यस्थानंगळनितुमष्टांगगळप्युदरिदमनं-
 तरस्थानंगळोळु अनंतभागवृद्धिये नियमदिदमक्कुमेके दोडा जघन्यमा पदस्थानादिमप्युदरिदं । १
 उत्तरस्थानमनंतैकभागवृद्धिस्थानमक्कुमप्युदरिदं । अवरस्मात् सर्वलेश्येयगळ जघन्यस्थानवर्ताणिवं
 परस्थाने परस्थानसंक्रमणदोळु अनंतरस्थानदोळु हानिः अनंतगुणहानिये नियमात् भवति नियमवि-
 मक्कुमेकेदोडे शुक्ललेश्याजघन्यादिदमनंतरपदलेश्यास्थानदोळुनंतगुणहानि नियमदिमं तक्कुमंते
 कृष्णालेश्याजघन्यादिदमनंतरनीललेश्यास्थानदोळुनंतगुणहानियक्कुमंतेत्त्या लेश्येयगळामक्कुं ॥

संक्रमणे छट्टाणा हाणिसु वद्धीसु हीति तण्णामा ।

१०

परिमाणं च य पुवं उचकमं होदि सुदपाणे ॥५०६॥

संक्रमणे पदस्थानानि हानिषु वृद्धिषु भवति तन्नामानि । परिमाणं च पूर्वमुक्तज्ञानो भवति
 श्रुतज्ञाने ॥

ई संक्रमणदोळु हानियगळोळं वृद्धियगळोळं पद्वृद्धियगळं पदहानियगळं मप्युवु । तद्वृद्धिहानियगळ
 पेशांगळुमवर प्रमाणगळुमं मुनं धृतज्ञानमागणेयोळ्येळ्ळ क्रममेयक्कुमं वरिवुववेते दोडे अनंत- ११

कृष्णादिसर्वलेश्योत्कृष्टादनन्तरस्वलेस्यास्थानविकल्पे अवरहानिः अनन्तैकभागहानिर्भवति, कुतः ?
 वदनन्तरस्योर्वकृष्टाकरुत्वात् । सर्वलेश्यानां जघन्यास्तुतः स्वस्थाने अवरवृद्धिः अनन्तैकभागवृद्धिरेव भवति ।
 कुतः ? तज्जघन्यानामष्टांकरुत्वात् । सर्वलेश्याजघन्यस्थानात् परस्थानसंक्रमणेनन्तरस्थाने अनन्तगुणहानिरेव
 नियमाद्भवति । कुतः ? शुक्ललेश्याजघन्यादनन्तरपदलेश्यास्थानवत्कृष्णलेश्याजघन्यादनन्तरीललेश्यास्थानेऽपि
 वदानेरेव संभवात् । एवं सर्वलेश्यानां भवति ॥५०५॥ २०

अस्मिन् संक्रमणे हानिषु वृद्धिषु च पद्वृद्धयः पदज्ञानयज्ञ भवन्ति । तासां नामानि प्रमाणानि च पूर्व

कृष्ण आदि सब लेश्याओंके उत्कृष्ट स्थानमें जितने परिणाम होते हैं उनसे उत्कृष्ट
 स्थानके समीपवर्ती उसी लेश्याके स्थानमें 'अवरहानि' अर्थात् उत्कृष्ट स्थानसे अनन्त भाग
 हानिको लिये हुए परिणाम होते हैं क्योंकि उत्कृष्टके अनन्तरवर्ती परिणाम सर्वैकरूप होता है
 और अनन्त भागकी संवृष्टि उर्वक है । तथा सब लेश्याओंके जघन्य स्थानसे उसी लेश्यामें २५
 उसके समीपवर्ती स्थानमें अनन्तवें भागवृद्धि ही होती है क्योंकि उनके जघन्य अष्टांकरूप
 होते हैं । सब लेश्याओंके जघन्य स्थानसे परस्थानसंक्रमण होनेपर इसके अनन्तरवर्ती
 स्थानमें अनन्त गुणहानि ही नियमसे होती है । क्योंकि शुक्ललेश्याके जघन्य स्थानके
 अनन्तर जो पदलेश्याका उत्कृष्ट स्थान है उसीकी तरह कृष्णलेश्याके जघन्य स्थानके
 अनन्तर जो नीललेश्याका उत्कृष्ट स्थान है उनमें भी अनन्त गुणहानि ही सम्भव है । इसी ३०
 प्रकार सब लेश्याओंमें जानना ॥५०५॥

इस संक्रमणमें हानि और वृद्धिमें छह हानियाँ और छह वृद्धियाँ होती हैं । उनके

१. म अकस्मात् अवरवृद्धि स. । २. म. हानिः हानिभे ।

पहिया जे छप्पुरिसा परिभट्टारणमज्झदेसम्मि ।

फलभरिपरुक्खमेगं पंविखत्ता ते विचिंतंति ॥५०७॥

पयिका ये पट्पुष्पाः परिभ्रष्टाः अरप्यमप्यदेशे, फलभरितमेकं वृक्षं प्रेक्ष्य ते विचिंतयन्ति ॥

णिग्मूलखंधसाह्वसाहं छित्तुं चिणित्तुं पडिदाइं ।

खाउं फलाइ इदि जं मणेण वयणं हवे कम्मं ॥५०८॥

निग्मूलस्कंधसाक्षोपशाखाश्लिष्टत्वा उच्चित्य पतितानि । जावित्तुं फलानीति यन्मनसा वचनं भवेत्कम्मं ॥

मुपेब्ब पयिकरववं तोळ्ळत्तमरप्यमध्यवोळ्ळोवुं फलभरितमाकं ववुक्षमं कंङ्कु तत्फलभक्षणोपायमं कृष्णलेस्याविपरिणामजोवंगीळ्ळित्तं तु चित्तिसिदपक्कं । मरनं निग्मूलमप्यंतु कडिदुं, स्कंधमने कडिदुं, शाखेयने कडिदुं, उपशाखेयने कडिदुं, मरनं नोपिसवे पण्णत्तने तिरिदुं, इत्थि विदिदुं, वने मेल्लेयमे वित्तपुदोवुं मनविनाळापमवा कृष्णलेस्यादि पट्प्रकारव जीवंगळ्ळो यथाकमविदं कम्ममं बुदक्कुं । अपिदनेयक कर्माधिकारं तोवुदुं ॥

अनतरं लक्षणाधिकारमं गायानवकादिवं पेब्बपं ॥

चंडो ण मुचइ वेरं भंडणसीलो य धम्मदयारहितो ।

दुट्ठो ण य एदि वसं लक्खणमेयं तु किण्हस्स ॥५०९॥

चंडो न मुंचति वैरं भंडनशीलश्च धम्मदयारहितः । दुष्टः न चैति वसं लक्षणमेतत् कृष्णस्य ॥

चंडः तीव्रकोपनं न मुंचति वैरं वैरमं विद्वनल्लं । भंडनशीलश्च युद्धशीलनं धम्मदयारहितः धम्मं नु दपेपुमिल्लदनुं दुष्टः दुष्टं न चैति वसं वसवत्तिपप्पनुमल्लं । एतल्लक्षणं इंतप्प लक्षणमनुळुं तु

कृष्णावकैकलेस्यायुक्तपट्पयिकाः पुष्पाः पयः परिभ्रष्टाः अरप्यमप्यदेशे फलभरितमेकं वृक्षं दृष्ट्वा ते विचिंतयन्ति । तत्र आद्यः—वृक्षं निग्मूलं छित्त्वा, अन्यः स्कंधं छित्त्वा, परः शाखां छित्त्वा, अन्यः उपशाखां छित्त्वा, परो वृक्षावाधं फलान्येव छित्त्वा, अन्यः पतितान्येव मुहीत्वा च फलान्यपोति यन्मनपूर्वकं वचः तत्कममस्तथा कर्म भवति ॥५०७-५०८॥ इति कर्माधिकारः ॥ अथ लक्षणाधिकारं गायानवकानां—

चण्डनस्तीव्रकोपिनः वैरं न मुञ्चति, भण्डनशीलश्च युद्धशीलश्च धर्मदयारहितः दुष्टः निर्दयो वय नैति

कृष्ण आदि एक-एक लेस्यावाले छह पथिक मार्ग भूल गये । वनके मध्यमें फलोंसे लदे हुए एक वृक्षको देखकर वे विचार करते हैं—कृष्णलेस्यावाला विचारता है कि वृक्षको जड़से उखाड़कर इसके फल खाऊँगा । नीललेस्यावाला विचारता है कि इस वृक्षके स्कन्धको काटकर फल खाऊँगा । कपोतलेस्यावाला विचारता है, इसकी बड़ी डाल काटकर फल खाऊँगा । तेजो लेस्यावाला विचारता है इसकी छोटी डाल काटकर फल खाऊँगा । पद्म-लेस्यावाला विचारता है वृक्षको हानि न पहुँचाकर केवल फल ही तोड़कर खाऊँगा । शुक्ल-लेस्यावाला विचारता है गिरे हुए फलोंको ही खाऊँगा । इस प्रकार मनपूर्वक जो वचन होता है वह क्रमसे उन लेस्याओंका कार्य होता है ॥५०७-५०८॥

अथ नो गायानांसे लक्षणाधिकार कहते हैं—

वीर क्रोधी हो, वैर न छोड़े, लड़ाई-शगड़ा करनेका स्वभाव हो, दया-धर्मसे रहित

पेररं कोपिसुगुं बहुप्रकारदिदं पेररं निदिसुगुं । बहुप्रकारदिदं पेररं रूपिसुगुं । शोकबहुलनुं भयबहुलनुं परनं सैरिसनुं परनं परिभविसुगुं तन्न बहुप्रकारदिदं प्रसंसंयं मादिकोळुगुं ।

ण य पत्तियद् परं सो अप्पाणं यिव परं पि मण्णंतो ।

धूसद् अभित्थुवंतो ण य जाणद् हाणि वडिद्ध वा ॥५१३॥

न च विदवसिति परं सः आत्मानमिव परमपि मन्यमानः । तुष्यत्यभिष्टुवतो न च जानाति हानि वृद्धि वा ।

सः अंतप्य जीवं परनं नंबुवनल्लं तन्नंत्ये एंद्दु परनं बपेयुं । तन्न पोगद्धत्तिरलु संतोपिसुगुं तनगं परंगं हानियुमं वृद्धियुमं न जानाति अरियं ।

मरणं पत्थेद् रणे देह सुबहुगंपि धुव्वमाणो दु ।

ण गणद् कज्जाकज्जं लक्खणमेयं तु काउस्स ॥५१४॥

मरणं प्रार्थयति रणे वदाति सुबहुकमपि स्तुतः । न गणयति कार्प्याकार्प्यं लक्षणमेतत्कपोतलेश्यस्य ।

काळगदोळु मरणमं बयसुगुं स्तुतिमाळंगे बहुधेनमनोगुं । कार्प्यमुनकार्प्यमुमं गणिद्दुसुवनल्लान्तिदु कपोतलेश्येयमनुळंगे लक्षणमक्कुं ।

जाणद् कज्जाकज्जं सेयमसेयं च सब्बसमंपासी ।

दयदाणरदो य मिद् लक्खणमेयं तु तेउस्स ॥५१५॥

जानाति कार्प्याकार्प्यं सेव्यमसेव्यं च सब्बसमदर्शी । दयादानरतश्च मृदुलक्षणमेतत्तेजो-
लेश्यस्य ।

पैरस्मि कुप्यति, बहुषा परं निन्दति, बहुषा परं दुष्यति, च षोकबहुलः, भयबहुलः, परं न सहते परं परिभवति आत्मानं बहुषा प्रसंसति ॥५१२॥

स परं न प्रत्येति—न विदवसिति आत्मानमिव परमपि मन्यमानः अभिष्टुवतः परस्वोपरि तुष्यति स्वपरयोर्हानिवृद्धौ न च—नंब जानाति ॥५१३॥

रणे मरणं प्रार्थयते, स्तुति कुर्वते बहुधनं (स्तुयमानस्तु बहुकमपि धनं) ददाति, न्यायंकार्यं च न गणयति इत्येतत्कपोतलेश्यस्य लक्षणं भवति ॥५१४॥

दूसरोंपर बहुत श्लोघ करता हो, दूसरोंको बहुत निन्दा करता हो, दूसरोंको बहुधा दोष लगाता हो, बहुत शोक करता हो, बहुत डरता हो, दूसरोंको अच्छा न देख सकता हो, अन्यकी निन्दा और अपनी बहुत प्रशंसा करता हो, दूसरोंका विश्वास न करता हो, दूसरोंको भी अपनी ही तरह अविश्वास करनेवाला मानता हो, प्रशंसा करनेवालेपर परम प्रसन्न हो, अपनी और परकी हानि-वृद्धिकी परवाह न करता हो, युद्धमें मरनेको तैयार हो, अपनी स्तुति करनेवालेको बहुत कुछ दे डालता हो, कार्य-अकार्यको न जाने, ये सब कपोत-
लेदयावालेके लक्षण हैं ॥५१२-५१४॥

लेस्साणं खलु अंसा छव्वीसा ह्येति तत्थ मज्झिमया ।

आउगबंधणजोग्गा अट्टट्टुवगरिसकालभवा ॥५१८॥

लेश्यानां खल्वंशाः पड्विंशतिर्भवन्ति तत्र मध्यमगाः । आयुबंधनयोग्याः अष्टाष्टापकर्ष-
कालभवाः ।

| शिला भेदसमान | पृथ्वी भेदसमान | धूळीरेखासमान | जल रेखासमान |
|--------------|--|--|--------------|
| उ ००००००० ज | उ ०००००००००० ज | उ ०००००००००००० ज | उ ०००००००० ज |
| क १ ० ११ | क ३ ११२१३४५६ १११११४१४४ २ ३ | ते ३ ६१५४३१२११ ४१११११०१ ३ २० श ८ | शु १ ० |

आहं लेश्येगन्त्रे अंशंगन्त्रिणुं कूडि पड्विंशतिगळ्पुवु २६ । अवेतं बोडे कृष्णाद्युभलेश्या-
त्रयकं जघन्यमध्यमोत्कृष्टगळ् प्रत्येकं सूक्ष्मरागलीभतंशंगळ्पुवु । शुक्ललेश्यादि शुभलेश्यात्रय-
वक्रमंतयो भतंशंगळ्पुवु-। मा करोतलेश्येय उत्कृष्टांशविं मवे तेजोलेश्येय उत्कृष्टांशविं पिवे
कपायोदयस्थानंगळ नडु

| | |
|----------|--|
| लेश्या | यणाहं लेश्येगळ यथासंभवंगळायुबंधनयोग्यमा- |
| ४५५६६५५४ | |
| ४४४४४१११ | |
| स्थिति | |

पड्विंशत्यानांशा जघन्यमध्यमोत्कृष्टभेदादष्टादश । पुनः करोतलेश्योत्कृष्टांशदशे तेजोलेश्योत्कृष्टांशात्प्राक्-
कपायोदयस्थानेषु मध्यमांशा आयुबंधनयोग्या अष्टौ । एवं पड्विंशतिर्भवन्ति । तेषु—

| शिला | पृथ्वी | धूलि | जल |
|------------|-------------|-------------|------------|
| उ ०००००० ज | उ ०००००० ज | उ ०००००० ज | उ ०००००० ज |
| क १ | १ २ ३ ४ ५ ६ | ६ ५ ४ ३ २ १ | ७ १ |
| ० १ | १ १ १ ४ ४ ४ | ४ १ १ १ ० ० | ० |
| | २ | ३ | |
| | ३ | २ | |
| | ० ० ० ० | ० ० ० ० | |

मध्यमांशाः

मध्यमा अष्टौ अष्टापर्यंकाले संभवन्ति । तद्यथा—भुज्यमानायुत्कृष्णापर्यन्त परभवायुबंधनते इत्यपर्यन्तः ।
अपर्यन्तयो स्वरूपमन्वरे-कर्मभूमितिर्यग्मनुष्याणां भुज्यमानायुबंधन्यमध्यमोत्कृष्टं विवक्षितमिदं ६५६१ अत्र

छह लेश्याओंके उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्यके भेदसे अठारह अंश होते हैं । पुनः
करोतलेश्याके उत्कृष्ट अंशसे आगे और तेजोलेश्याके उत्कृष्ट अंशसे पहले कपायके
उदयस्थानोंमें आठ मध्यम अंश हैं जो आयुबंधके योग्य होते हैं । इस प्रकार छव्वीस अंश
होते हैं । आठ मध्यम अंश अपकर्ष कालमें होते हैं । जो इस प्रकार हैं—भुज्यमान अर्थात्
चर्वमानमें जिसे भोग रहे हैं उस आयुका अपकर्षण कर-करके परभवकी आयुका बन्ध

कण्टिवृत्ति जीवतत्वप्रदीपिका

| | |
|--|---------------|
| | २ |
| | ० |
| | १ |
| | ३ |
| | ९ |
| | २७ |
| | ८१ |
| | २४३ |
| | ७२९ |
| | २१८७ |
| | ६५६१ सव्यायुः |

इल्लि विशेषनिर्णयं माडल्पडुगुमवे ते दोडे जावनोव्वं सोपक्रमायुष्यनत्प जीवं सोपक्रमायुष्यने वे बुदेने दोडे कदलीघातायुष्यमनुळ्ळने बवत्यंमडु कारणमागि देवनारकरं भोगभूमिजह-
 मनुपक्रमायुष्यरे बुदत्यं । आ सोपक्रमायुष्यजोवंगळु तंतम्म भुज्यमानायुष्यस्थितियोळु द्वित्रिभाग-
 मतिक्रांतमागुत्तिरलु शेषत्रिभागव प्रथमसमयं मोदलोडु अंतम्मसुहसंपर्ग्यंतं परभवायुष्यं-
 प्रायोगपरप्पर । सुपेळ्ळा संक्षेपाद्विपय्यंतमल्लि आयुस्तोकबंधादा कालाम्यंतरवोऽयुष्यंप्रायो-
 ग्यपरिणामंगळिव केल्यु जोवंगळु अष्टवारंगळं केल्यु जोवंगळु सप्तवारंगळं केल्यु जोवंगळु
 षड्वारंगळं केल्यु जोवंगळु पंचवारंगळं केल्यु जोवंगळु चतुर्वारंगळं केल्यु जोवंगळु त्रिवारं-
 गळं केल्यु जोवंगळु द्विवारंगळं केल्यु जोवंगळं कवारंगळं परिणमिगुववेके दोडे स्वभावादिदमेतद्वंप-
 प्रायोग्यपरिणमना जोवंगळुगे कारणांतरनिरपेक्षमे बुदत्यं । संदृष्टिरचने ॥

- २
- ३
- १
- ३
- ९
- २७
- ८१
- २४३
- ७२९
- २१८७
- ६५६१

अत्र विशेषनिर्णयः क्रियते । सोपक्रमायुष्काः कदलीघातायुष्काः तेन देवनारकभोग-
 भूमिजा अनुपक्रमायुष्का भवन्ति । सोपक्रमायुष्का उक्तरीत्या आयुर्वृण्णन्ति । १०
 तत्रायुस्तोकबंधाम्यन्तरे तद्योग्यपरिणामैः केचिदष्टवारं केचित्सातवारं केचित्
 षड्वारं केचित्पञ्चवारं केचित् चतुर्वारं केचित्त्रिवारं केचिद् द्विवारं केचिदेकवारं
 परिणमन्ति । स्वभावादेव उद्बन्धप्रायोग्यपरिणमनं जीवानां कारणान्तरनिरपेक्ष-
 मित्यर्थः । संदृष्टिः—

निर्णय करते हैं । जिनका विपादिके द्वारा कदलीघातमरण होता है वे सोपक्रम आयुवाले
 होते हैं । अतः देव, नारकी और भोगभूमिया निरुपक्रम आयुवाले होते हैं । सोपक्रम आयु-
 वाले एक रीतिसे आयुबन्ध करते हैं । उन अपकर्षोंमें आयुबन्धके कालमें आयुबन्धके योग्य
 परिणामोंसे कोई आठ वार, कोई सात वार, कोई छह वार, कोई पाँच वार, कोई चार वार,
 कोई तीन वार, कोई दो वार, कोई एकवार परिणमन करते हैं । अपकर्ष कालमें ही जीवोंके
 आयुबन्धके योग्य परिणमन स्वभावसे होता है । उसका कोई अन्य कारण नहीं है । आयुके २०

पद्मलेक्ष्योत्कृष्टांशदिवं मृतराव जीवंगळु सहस्रारमुपयाति सहस्रारकल्पदोळु पुट्टुवव ललु स्फुटमागि । पद्मलेक्ष्याजघन्यांशदिवं मृतराव जीवंगळु, सनत्कुमारं च माहेन्द्रमुपयाति सनत्कुमार कल्पदोळं माहेन्द्रकल्पदोळं पुट्टुवव ।

मज्झिमअंसेण मुदा तम्मज्झं जाति तेउजेट्ठमुदा ।

साणक्कुमारमाहिंदंतिमचक्किंदसेट्ठिमि ॥५२२॥

मध्यमांशेन मृताः तन्मध्यं याति तेजोऽपेष्टमृताः सानत्कुमारमाहेन्द्रातिमचक्रेंद्रकश्रेण्यां ।

पद्मलेक्ष्यामध्यमांशदिवं मृतराव जीवंगळु तन्मध्यं याति सहस्रारकल्पदिवं कळुये सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पपंगळुदिवं भेले यथासंभवरामि पुट्टुवव । तेजोलेक्ष्योत्कृष्टांशदिवं मृतराव जीवंगळु सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पंगळु चरमपटलचक्रेंद्रकप्रणिधिगतश्रेणीबद्धविमानंगळोपुट्टुवव ।

अवरंसमुदा सोहम्मीसाणादिमउडुमि सेट्ठिमि ।

मज्झिम अंसेण मुदा विमलविमानादिवलमद्दे ॥५२३॥

अवरांशमृताः सौधर्मज्ञानाविभूतश्चत्वींद्रके श्रेण्यां । मध्यमांशेन मृताः विमलविमानादिवलभद्रे ।

तेजोलेक्ष्याजघन्यांशदिवं मृतराव जीवंगळु सौधर्मज्ञानकल्पंगळुादिभूतश्चत्वींद्रकदोळं श्रेणीबद्धदोळं पुट्टुवव । तेजोलेक्ष्यामध्यमांशदिवं मृतराव जीवंगळु सौधर्मज्ञानकल्पद्वितीयपटलदिवकं विमलविमानमद्दु मोडलागि सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पंगळु द्विचरमपटलदिवकं बलभद्रविमानमवकु मल्लि पर्यंतं पुट्टुवव ।

पद्मलेक्ष्योत्कृष्टांशेन मृता जीवाः सहस्रारकल्पमुपयान्ति ललु स्फुटम् । पद्मलेक्ष्याजघन्यांशेन मृता जीवाः सानत्कुमारं माहेन्द्रं चोपयान्ति ॥५२१॥

पद्मलेक्ष्यामध्यमांशेन मृता जीवाः सहस्रारकल्पादयः सानत्कुमारमाहेन्द्रयादुपरि यथासंभवमुत्पद्यन्ते । तेजोलेक्ष्योत्कृष्टांशेन मृता जीवाः सानत्कुमारमाहेन्द्रकल्पयोदचरमपटलचक्रेंद्रकप्रणिधिगतश्रेणीबद्धविमाने-प्लवद्यन्ते ॥५२२॥

तेजोलेक्ष्याजघन्यांशेन मृता जीवाः सौधर्मज्ञानकल्पयोरादिभूतश्चत्वीन्द्रके श्रेणीबद्धे चोत्पद्यन्ते । तेजोलेक्ष्यामध्यमांशेन मृता जीवाः सौधर्मज्ञानकल्पद्वितीयपटलस्येन्द्रकं विमलनामकमादि कृत्वा सानत्कुमारमाहेन्द्रद्विचरमपटलस्येन्द्रकं बलभद्रनामकं तत्पर्यन्तम् उत्पद्यन्ते ॥५२३॥

पद्मलेक्ष्याके उत्कृष्ट अंशसे मरे जीव सहस्रारकल्पमें उत्पन्न होते हैं । पद्मलेक्ष्याके जघन्य अंशसे मरे जीव सानत्कुमार माहेन्द्र स्वर्गमें उत्पन्न होते हैं ॥५२१॥

पद्मलेक्ष्याके मध्यम अंशसे मरे जीव सहस्रारकल्पसे नीचे और सानत्कुमार माहेन्द्रसे ऊपर यथासंभव उत्पन्न होते हैं । तेजोलेक्ष्याके उत्कृष्ट अंशसे मरे जीव सानत्कुमार माहेन्द्र कल्पके अन्तिम पटल चक्रेंद्रक सम्बन्धी श्रेणीबद्ध विमानोंमें उत्पन्न होते हैं ॥५२२॥

तेजोलेक्ष्याके जघन्य अंशसे मरे जीव सौधर्म ऐशान कल्पके प्रथम चतु नामक इन्द्रके श्रेणीबद्ध विमानोंमें उत्पन्न होते हैं । तेजोलेक्ष्याके मध्यम अंशसे मरे जीव सौधर्म ऐशान कल्पके द्वितीय पटलके विमल नामक इन्द्रकसे लेकर सानत्कुमार माहेन्द्रके द्विचरम पटलके बलभद्र नामक इन्द्रक पर्यन्त उत्पन्न होते हैं ॥५२३॥

गञ्जोञ्च चरमपटलद्वयसंज्ञितेन्द्रकविलिखितोञ्च जायते पट्टदुष्य । नीललेस्यामध्यमांशोञ्च मृतराव
जीवंगञ्च तृतीयपृष्ठीमेघेयनवपटलद्वयसंज्ञितेन्द्रकविलिखितं केलगे चतुर्थपृष्ठी अंजनपटल-
सप्तकंगञ्जोञ्च पंचमपृष्ठीअरिप्रेय पटलपंचकंगञ्जोञ्च चतुर्थपटलद्वयसंज्ञितेन्द्रकविलिखितं मेले
मध्योञ्च यथायोग्यमागि जायते पट्टदुष्य ।

वरकाओदंसमुदा संजलिदं याति तदिपणिरस्यस ।

सीमंतं अवरमुदा मज्जे मज्जेण जायते ॥५२६॥

जहृष्टकपोतांशमृताः संज्वलितं याति तृतीयनरकस्य । सीमंतं अवरमृताः मध्ये मध्येन
जायते ॥

कपोतलेस्यात्कृष्णांशदिवं मृतराव जीवंगञ्च तृतीयपृष्ठीमेघेय नवपटलंगञ्जोञ्च द्विचरमा-
ष्टमपटलद्वयसंज्ञितेन्द्रकविलिखितोञ्च पुट्टदुष्य । फेलेयद्वयञ्च चरमसंज्ञितेन्द्रकविलिखितं पुट्टदुष्ये १०
विशेषमरिपत्यद्वयं । कपोतलेस्याजघन्यांशदिवं मृतराव जीवंगञ्च सीमंतं याति धर्मेय प्रथम-
पटलद्वय सीमंतं कविलिखितोञ्च पुट्टदुष्य ।

कपोतलेस्यामध्यमांशदिवं मृतराव जीवंगञ्च सीमंतं कविलिखितं केलगम पन्नेरद्वय पटलंगञ्जोञ्च
मेघेय द्विचरमसंज्ञितेन्द्रकविलिखितं मेलन पटलंगञ्जोञ्चोञ्चोञ्च द्वितीयपृष्ठीवर्णोय पन्नेरद्वय पटल-
गञ्जोञ्च यथायोग्यमागि पुट्टदुष्य । १५

इति विष्टेरो ज्ञातव्यः । नीललेस्याजघन्यांशेन मृता जीवाः बालुकाप्रभानवपटलेषु चरमपटलस्य संज्ञितेन्द्रके
जायन्ते । नीललेस्याजघन्यांशेन मृताः जीवाः तृतीयपृष्ठीनवपटलस्य संज्ञितेन्द्रकेऽदशपदचतुर्थपृष्ठीपटलसप्तके
पञ्चमपृष्ठीचतुर्थपटलस्यान्धेन्द्रकादुत्तरि यथायोग्यं जायन्ते ॥५२५॥

कपोतलेस्याजघन्यांशेन मृता जीवाः तृतीयपृष्ठीनवपटलेषु द्विचरमाष्टमपटलस्य संज्ञितेन्द्रके उत्पद्यन्ते ।
केचित् चरमसंज्ञितेन्द्रकेऽपि विष्टेरोऽप्युत्पद्यन्ते । कपोतलेस्याजघन्यांशेन मृता जीवाः धर्माप्रथमपटलस्य २०
सीमन्तेन्द्रके उत्पद्यन्ते । कपोतलेस्यामध्यमांशेन मृता जीवाः सीमन्तेन्द्रकादशपदसप्तपटलेषु विधाया
द्विचरमसंज्ञितेन्द्रकादुत्तरितसप्तमपटलेषु द्वितीयपृष्ठीकादशपटलेषु च यथायोग्यमुत्पद्यन्ते ॥५२६॥

होते हैं । नीललेस्याके मध्यम अंशसे मरे जीव तीसरी पृष्ठीके नीचे पटलके संज्ञितेन्द्रके
इन्द्रक विलेसे नीचे और चतुर्थ पृष्ठीके सातों पटलोंमें तथा पंचम पृष्ठीके चतुर्थ पटल
सम्बन्धी आन्धेन्द्रकसे ऊपर यथायोग्य उत्पन्न होते हैं ॥५२५॥

कपोतलेस्याके षट्कृष्ट अंशसे मरे जीव तीसरी पृष्ठीके नीचे पटलोंमेंसे द्विचरम
आठवें पटलके संज्ञितेन्द्रके इन्द्रक विलेमें उत्पन्न होते हैं । कोई-कोई अन्तिम संज्ञितेन्द्रके
इन्द्रकमें भी उत्पन्न होते हैं यह विशेष जानना । कपोतलेस्याके जघन्य अंशसे मरे जीव धर्मा
नामक प्रथम पृष्ठीके प्रथम पटल सम्बन्धी सीमन्त इन्द्रकमें उत्पन्न होते हैं । कपोतलेस्याके
मध्यम अंशसे मरे जीव सीमन्त इन्द्रकसे नीचेके चारह पटलोंमें विधा नामक तीसरी पृष्ठीके ३०
द्विचरम संज्ञितेन्द्रके ऊपरके सात पटलोंमें और दूसरी पृष्ठीके ग्यारह पटलोंमें
यथायोग्य उत्पन्न होते हैं ॥५२६॥

१. म^०लेगलेरुल^० । २. जघन्यांशेनापि मृता. । मु. । ३. छ. संज्ञितेन्द्रके ।

मोदलागि सर्वात्वंसिद्धिजलसानमाद मुरं घर्मे मोदलागि अवधिस्थानायसानमाद
वस्वलेश्यानुगमत्प नरत्वमुमं तिम्यंस्त्वमुमं यांति येदुवह । एळनेय गत्यधिकारं तिवुं ॥
नंतरं स्वाम्याधिकारं गाथासप्तकदिदं पेळ्दपं—

काऊ काऊ काऊ नीला नीला य नीलकिण्हा य ।

किण्हा य परमकिण्हा लेस्ता पढमादिपुढवीणं ॥५२९॥

गापोतो कापोतो तथा कापोतो नीळे नीला च नीलकृष्णे च । कृष्णा च परमकृष्णा लेस्याः
दिपुष्वीनां ॥

धर्माविसप्तपृथ्विगळ नारकागे यथासंख्यमागि धर्मेय नारकागे कपोतलेस्याजघन्यमक्कुं ।
नारकागे कपोतलेस्यामध्यमांशमक्कुं । मेघेय नारकागे कपोतलेस्योत्कृष्टमुं नीललेस्याजघन्यां-
स्कुं । अंजनेय नारकागे नीललेस्यामध्यमांशमक्कुं । अरिष्टेय नारकागे नीललेस्योत्कृष्टमुं
लेस्याजघन्यांशममक्कुं । मधवीय नारकागे कृष्णलेस्यामध्यांशमक्कुं । माधवीय नारकागे
लेस्योत्कृष्टांशममक्कुं ।

परतिरियाणं ओषो इगिविगले तिण्णि चउ असण्णिस्त ।

सण्णि-अपुण्णगमिच्छे सासणसम्मे वि असुहतियं ॥५३०॥

नरतिरदचामोष एकविकले तिल्लः चतस्रोसंज्ञिनः संख्यपूर्णमिध्यादृष्टी सासादनसम्यग्दृष्टा-
व्यधुनत्रयो ॥

नरतिरदचामोषः नरतिर्यंचरुगळगे प्रत्येकं सामान्योक्त पइलेश्येगळम्पुवरोळु तिम्यंचरोळु
कविकलेपु एकंद्रियजीवंगळ्यां विकलत्रयजीवंगळ्यां तिल्लः कृष्णाद्यशुभलेस्यात्रयमेयक्कुं ।

त्वदयन्ते । भवनत्रयादि सर्वावमिद्वपन्तमुराः धर्मावधिस्थानान्तनारकादेव स्वस्वलेस्यानुगं नरतिर्यंचरं
गन्ति ॥५२८॥ इति गत्यधिकारः ॥ अथ स्वाम्याधिकारं गाथासप्तकेनाह—

प्रथमादिपृथ्वीनारकाणां च लेस्योच्यते—तत्र धर्मायां कापोतत्रयन्यांशः । वंशया कापोतमध्यमाशः ।
मेघाया कापोतोत्कृष्टाशनीलत्रयन्यांशो । अंजनायां नीलमध्यमाशः । अरिष्टाया नीलोत्कृष्टाशकृष्णत्रयन्यांशो ।
मधव्यां कृष्णमध्यमाशः । माधव्या कृष्णोत्कृष्टांशः ॥५२९॥

नरतिरदचं प्रत्येकं ओषः सामान्योत्कृष्टपदलेस्याः स्युः । तत्र एकैन्द्रियविकलत्रयजीवेषु तिल्लः—

कायिक, वायुकायिक, विकलत्रय, असंज्ञिपंचेन्द्रिय और साधारण वनस्पति जीवन्ति एतन्
होते हैं । भवनत्रिकसे लेकर सर्वावसिद्धि पर्यन्त देव और धर्मा प्रथिवीसे लेकर
पृथ्वी तकके नारको अपनी-अपनी लेस्याके अनुसार मनुष्य और तियंच होते हैं ।

गतिअधिकार समाप्त हुआ ।
आगे सात गाथाओंसे स्वामी अधिकार कहते हैं—
प्रथम पृथ्वी आदिके नारकियोंको लेस्या कहते हैं—धर्मांशं कपोतत्रयन्यांशः ।
अंश है । वंशामें कपोतका मध्यम अंश है । मेघामें कपोतका उत्कृष्ट अंश है ।
अंश है । अंजनामें नीलका मध्यम अंश है । अरिष्टामें नीलका उत्कृष्ट अंश है ।
जघन्य अंश है । मधवीमें कृष्णका मध्यम अंश है । माधवीमें
मनुष्यों और तियंचों

मक्कुं । भवनप्रयत्न निर्वृत्यपय्यांमरुगं अद्भुतभलेऽस्याश्रयमेयमकुमिर्वरिदमे देयवेमानिकनिर्वृत्यपय्यांम-
रुगं पय्यांमरुगं ततम्म लेख्यं गच्छेत्पुण्यं बु मूर्च्छितमरित्यल्पदुःखं । एतन्नेय स्वात्म्यधिकारं तोदुर्दुःखं ।
अनंतरं साधनाधिकारमनो वे गायामूर्च्छितं पेच्छवः ।

वृष्णोदयसंपादिद् सरीरवृष्णो दु दग्धदो लेस्ता ।

मोहोदयखओत्रसमोवसमरखयत्रजीवहृदं भावो ॥५३६॥

वर्णोदयसंपादितशरीरवर्णस्तु द्रव्यतो लेस्या । मोहोदयखओत्रसमोवसमरखयत्रोत्पंरन
भावः ॥

वर्णनामरुग्मोदयसंपादितसंजनितशरीरवर्णमनु द्रव्यलेख्येयमकुं । अमंयतरोऽत्र मोहोरपरिदं
देवविरतप्रयवोऽत्र मोहोदयवपनामविदं उपनामरुरोऽत्र मोहोदयवपनामविदं धारुकरोऽत्र मोहोदयवपिदं
संजनितसंस्कारं जीवस्वंपवमं बु भेयमक्कुमनु भावलेख्येयमकुं । मा जीवनपरिणामप्रदेवसंस्कारिद
भावलेख्ये माहस्वपट्टदुर्वेचुवत्यं । अद्भु कारणविदं योगरुपायंगच्छिदं भावलेख्ये एवितु पेडत्पट्ट-
वक्कुं । जो भक्तनेय साधनाधिकारं तिदुर्दुःखं ॥

अनंतरं संख्याधिकारं गाया पट्टकविदं पेच्छवः :-

अनुदिसानुतरपणु संविमानाना एव शरीरवर्णो भवति । भवनप्रयत्नाः अर्थाय काने अमुनि केरा एव, अनेन
वैमानिकाः अर्थाय काने एव शरीरवर्णो एवति मूर्च्छितं ज्ञातव्यं ॥५३६-५३७॥ इति स्वात्म्यधिकारोऽष्टमः ॥ १५
अथ साधनाधिकारमाह -

वर्णनामरुग्मोदयेन शरीरिण-संजनित शरीरवर्णो द्रव्यमेव भवति । अमंयतरोऽत्र मोहोरपरिदं
मोहुरव उपनेन, देवविरतप्रयवे धनोत्पत्तेन, उपनामके उपनामेन, धारुके धारणे च संजनितसंस्कारो जीवस्वप-
नामः च भावलेख्ये जीवस्वपनामप्रदेवसंस्कारेण होतव्यः । तेन शरीरेन जीवस्वपनामना भाव देवोऽनुदिसानुत्पत्त
इति साधनाधिकारो नवमः ॥ अथ संख्याधिकारं साधनाधिकारः -

संख्याधिकारो अत्र कृष्ट अत्र होता है । भवनप्रयत्नके देव अर्थाय अर्थाय अनेन अनेन
लेख्यावाले ही होते हैं । इससे यह सूचित किया जानना कि वैमानिक देवोंके अर्थाय अनेन
अपनी-अपनी लेख्या ही होती है ॥५३६-५३७॥

जाडया रयामि अधिकार ममान हुआ ।

अथ साधनाधिकार कहते हैं -

वर्णनाम रुग्मके अर्थसे उत्पन्न हुआ शरीरका र्वं द्रव्यमेव है । अमंयतरोऽत्र
पार गुणरथानोमो मोहके उपयवे, देवविरत आदि तीन गुणस्थानोमो मोहके उपयवे
मे, उपनाम धनोके पार गुणरथानोमो मोहोदयके उपयवे, धारुके धारणे च संजनितसंस्कारो
मोहोदयके अर्थसे जो संस्कार उत्पन्न होता है जिसे शरीरका र्वं कहते हैं वह संस्कार
ही । अर्थात् जीवके परिवर्तनो और परिवर्तनोका अर्थ ही होता है । अर्थात्
अर्थ ही होता है और परिवर्तनोका अर्थ ही होता है । अर्थात्
भावलेख्या कहते हैं ॥५३६॥

मोर्चा साधनाधिकारः
आने यह साधनाधिकारः

आ ।

सद्गुणसमुग्धादे उववादे सन्वलोपमसुद्धान् ।

लोयस्सासंखेज्जदिभागं खेचं तु तेउतिये ॥५४३॥

स्वस्थाने समुद्रपाते उपपादे सर्वलोकोग्गुभानां । लोकास्यासंख्येयभागं क्षेत्रं तु तेजस्त्रितये ॥

जगुभानां कृष्णनोलकापोतागुभलेइयाप्रपव स्वस्थानबोळं समुद्रपातबोळं उपपावबोळमितु

त्रिस्थानरबोळं क्षेत्रं सन्वलोकमेयम् ॥ तेजस्त्रितये तेजःपद्मसुसुगुभलेइयाप्रपव स्वस्थानबोळं ५

समुद्रपातबोळं उपपावबोळमितो त्रिस्थानबोळं तु मत्तं क्षेत्रं क्षेत्रतु लोकस्यासंख्येयभागः सन्वलोकव

वसंस्थ्यातेरुभागमवकुमितु सामान्यविबमगुभलेइयेगळ्यां गुभलेइयेगळ्यां त्रिस्थानरबोळु क्षेत्रं

पेळल्पटदुदु । विदोपविबं पटलेइयेगळ्यो वगस्थानगळोळु क्षेत्रं पेळल्पटदुगुमल्लि क्षेत्रमेंबुदेनें बोडे

विबधितलेइयाबोवंगळिं वसंभानकालबोळु विबधितपवविशिष्टविबमवष्टयाकाप्रदेशगळं क्षेत्र-

मेंबुदयंमेंबुदिल्लि सामान्यविबं स्वस्थानम् समुद्रपातमुमुपपावमुमेंबु त्रिपदंगळोळु लेइयेगळ्यो क्षेत्रं १०

पेळल्पटदुदु । विदोपविबं वगस्थानगळोळु पटलेइयेगळ्यो क्षेत्रं पेळल्पटदुगुमल्लि स्वस्थानं सामान्य-

विदमो वं भेदिसिबोडे स्वस्थानस्वस्थानमेंबु विहारपत्त्वस्थानमेंबु द्विविधमक्कुं ।

सामान्यविबं समुद्रपातमो वं भेदिसिबोडे वेदनासमुद्रपातमेंबु कपायसमुद्रपातमेंबु

वैक्यिकसमुद्रपातमेंबु मारणांतिकसमुद्रपातमेंबु तेजःसमुद्रपातमेंबुमाहारकसमुद्रपातमेंबु

केवलिसमुद्रपातमेंबु समुद्रपातं सप्तविधमक्कुमुपपावमेकप्रकारमेयपकुं । १५

विबधितलेइयाबीवैवंतमानकाले विबधितपदविशिष्टस्वनावष्टयाकारः क्षेत्रम् । तत्र स्वस्थाने समुद्रपाते

उपपादे च अगुभलेइयानां सर्वलोकः ॥ सेबोलेइयादित्रयस्य तु पुनः लोकस्यासंख्यातंरुभागः सामान्येन भवति

विशेषेण तु तत्र दशपदेपुच्यते । तत्र तावत् उत्पन्नप्रयोगामादिक्षेत्रं तत् स्वस्थानस्वस्थानं, विबधितपर्यायपरिणतेन

परिभ्रमिनुमुचिउधेवं तद्विहारवत्स्वस्थानमिति स्वस्थानं देया । वेदनादिवद्येन निजचरीराजत्रीवप्रदेशानां

बहिःप्रदेशे तत्रायोर्ग्यविषयं समुद्रपातः । स च वेदनाकपायवैक्यिकमारणान्तिष्ठतेजसाहारककेवलिभेदात् २०

यतया । परित्यक्तपूर्वभवस्य उत्तरभवप्रथमसमये प्रवर्तनमुपपाद इति दशपदानि । तेषु स्वस्थानस्वस्थाने

वेदनासमुद्रपाते कपायसमुद्रपाते मारणान्तिकसमुद्रपाते उपपादे चेति पञ्चपदेपु कृष्णलेइयाबीवधेवं सर्वलोकः ॥

विबधित लेइयावाले जीव वर्तमान कालमें विबधित स्वस्थानादि पदसे विशिष्ट होते

हुए जितने आकाशमें पाये जाते हैं उसका नाम क्षेत्र है । वह क्षेत्र स्वस्थान, समुद्रपात और २५

उपपादमें तीन अगुभ लेइयावालोक सार्वलोक है । तेजोलेइया आदि तीनका क्षेत्र सामान्यसे

लोकका असंख्यातवां भाग है । विशेष रूपसे दस स्थानोंमें कहते हैं—स्वस्थानके दो भेद

हैं—स्वस्थानस्वस्थान और विहारवत्स्वस्थान । उत्पन्न होनेके प्राम-नगर आदि क्षेत्रको

स्वस्थानस्वस्थान कहते हैं । और विबधित पर्यायसे परिणत होते हुए परिभ्रमण करनेके

उचित क्षेत्रको विहारवत्स्वस्थान कहते हैं । वेदना आदिके कारणसे अपने शरीरसे जीवके ३०

प्रदेशोंके उसके योग्य बाह्य प्रदेशमें फैलनेको समुद्रपात कहते हैं । उसके सात भेद

हैं—वेदना, कपाय, वैक्यिक, मारणान्तिक, तेजस, आहारक और केवली समुद्रपात ।

पूर्वभवको छोड़कर उत्तरभवके प्रथम समयमें प्रवर्तनको उपपाद कहते हैं । इस प्रकार ये

दस स्थान हैं । उनमेंसे स्वस्थानस्वस्थान, वेदना समुद्रपात, कपाय समुद्रपात, मारणान्तिक

समुद्रपात और उपपाद इन पाँच पदोंमें कृष्णलेइयावाले जीवोंका क्षेत्र सर्वलोक है । अब

मीयुपपादपर कृष्णलेद्याजीवंगळ संख्येयं फल राशियं माडि मारणांतिकसमुद्युपातकालप्रमाणमंत-
 म्मूहंतंनदनच्छाराशियं माडि गुणियुत्तं विरलु प्र स १ फ = १३ - इच्छे २७। लब्ध-
 ३-५। ५५। २९

राशियं मूलराशिय संख्यातेरुभागमवकुमा मारणांतिकसमुद्युपातपवबोळु कृष्णलेद्याजीवंगळप्यु
 १३ मत्तं कृष्णलेद्याप्रसपर्याप्तराशियं संख्यातदिवं भागिसि बहुभागं = ४ स्वस्थान-
 ३-९ ३-४। ५

स्वस्थानबोळित्तु शेषैरुभागं मत्तं संख्यातदिवं भागिसि बहुभागं = ४ विहारवत्स्वस्थान- ५
 ३-४। ५। ५
 ५-

पदबोळित्तु शेषैरुभागं ४। ३-१। ५। ५ शेषपदंगळोळु यथायोग्यमागि दातव्यैमप्यु।

प्रसपर्याप्तमध्यमावगाहनजनितसंख्यातघनांगुलंगळं फलराशियंमाडि विहारवत्स्वस्थानकृष्णलेद्या-
 जीवराशियनिच्छाराशियं माडि प्र १ फ ६९ इ = ४ लब्धराशियनपववत्तित्तुबोडे संख्यात-
 ३-४। ५। ५

सूच्यंगुलगुणितजगत्प्रतरभायं विहारवत्स्वस्थानबोळु क्षेत्रमधुं। = सू २९। मत्तं पत्यासंख्यात-

= ४ भागः-४। ३-५। स्वस्थानस्वस्थानेऽतीति^३ देवः। शेषैरुभागस्य संख्यातमत्रबहुभागो ४। ३-५। ५ विहार- १०
 ५-

= १ वत्स्वस्थाने देवः। शेषैरुभागः ४। ३। ५ शेषपदेषु यथायोग्यं पतितोऽतीति^३ ज्ञातव्यः। प्रसपर्याप्तमध्य-
 ५-

मावगाहनं संख्यातपनामूलं फलराशि कृत्वा विहारवत्स्वस्थानकृष्णलेद्याजीवराशिमिच्छां कृत्वा—

प्र १। फ ६९। इ = ४
 ४। ३-५। ५ लब्धमपववत्तितं संख्यातमूच्यंगुलगुणितजगत्प्रतरौ विहारवत्स्वस्थाने क्षेत्रं
 ५-

प्रस जीवोके प्रमाणको संख्यातसे भाग देकर बहुभाग प्रमाण स्वरधानस्वस्थानवाले जीव
 हैं। शेष एक भागमें संख्यातका भाग देकर बहुभाग प्रमाण विहारवत्स्वस्थानवाले जीव १५
 हैं। शेष एक भाग रहा सो शेष स्थानोंमें यथायोग्य जानना। प्रसपर्याप्त जीवोंकी मध्यम
 अवगाहनाके अनेक प्रकार हैं। उसे धरावर करनेपर एक प्रसपर्याप्त जीवकी मध्यम अव-
 गाहना संख्यात घनांगुल है। उसे फलराशि करके और विहारवत्स्वस्थान की अपेक्षा कृष्ण-
 लेद्यावाले जीवोंकी राशिको इच्छाराशि करो। तथा एक जीवको प्रमाणराशि करो। फलसे
 इच्छाको गुणा करके प्रमाण राशिका भाग देनेपर संख्यात सूच्यंगुलसे गुणित जगत्प्रतर २०
 प्रमाण विहारवत्स्वस्थानका क्षेत्र आता है।

१. म^० भागसंख्यात बहुभाग^०। २. म^० व्यंगलप्यु। ३. प. ^०ति ज्ञातव्यः।

$\frac{1}{(3)}$

॥ १ ॥ इत्लि सातधनुस्तेषु ७ तद्भागभागमुत्तविस्तारमुं ७ अल्प देवायगाहनंगळोऽः-
= १०

४१६५ = ११११५

"यासो तिगुणो परिहो यासघज्जपाहो ३ घेतफळं, ७१३१७१७ घेतफळं वेहगुणं
१०११०१४

७१३१७१७ रावकळं होइ तत्त्वत्व।"
१०११०१४

एवो देवायगाहनं घनात्मकां गळण धनुगळंमंगुळं गळं माइत्वेडि तो भतारर घनात्मकां विवं
गुणिसि मत्तमानंगुळं गळं प्रमाणांगुळं गळं माइत्वेडि पंचरातविवं घनात्मकां विवं भागिसि स्वापिसि—
७१३१७१७१९६१९६१९६ अर्पवत्तितीडोइ देवायगाहनं प्रमाणघनांगुळसंख्यातैरुभाग-
१०११०१४१५००१५००१५००

$\frac{1}{(3)}$

मधुमदरिवं स्वस्थानस्वस्थानराशिं गुणियिसि ॥ १ ॥ १५१६। मत्तमो येकायगाहनव एकादि-
४१६५ = ७५७

॥ १ ॥ १—
= १४
४१६५ = १५१५१५१५
घेपेरुभागो वैक्रियिकसमुद्घाते देयः

॥ १ ॥ १—
= ११
४१६५ = १५१५१५१५
तत्र स्वस्थानस्वस्थानराशिः सप्तधनुस्तेषु ७ तद्भागभागमुत्तविस्तारविस्तार ७
१०

देशवगाहनेन वासोतिगुणं त्वापानीतधनुस्वरुपात्तद्वयेन ७१३१७१७ घनाङ्गुलीकनुं पण्यवतिपनगुणितेन पुनः
१०११०१४
प्रमाणाङ्गुलीकनुं पञ्चमत्तपनभनेन ७१३१७१७१९६१९६१९६ अर्पवदिते जातघनाङ्गुल-
१०११०१४१ ५००१५००१५००

प्रकार जीवोका प्रमाण कहा। स्वस्थानस्वस्थान अपेक्षा क्षेत्रका प्रमाण लानेके लिए कहते
हैं—वेजालेदया मुख्य रूपसे भयनत्रिक आदि देवोंमें होती है। उनमें एक देवकी अधगाहना-
का प्रमाण सात धनुष ऊंचा और सात धनुषके दसवें भाग चौड़ा है। इसका क्षेत्रफल लानेके
लिए सात धनुषके दसवें भाग चौड़ाईको तिगुना करनेपर परिधि होती है क्योंकि चौड़ाईसे
तिगुनी परिधि कही है। इस परिधिकी चौड़ाईके चतुर्थ भागसे गुणा करनेपर क्षेत्रफल होता
है। इसकी ऊंचाई सात धनुषसे गुणा करनेपर घनरूप क्षेत्रफल होता है। घनरूप राशिके
गुणकार भागहार घनरूप ही होते हैं। सो यहाँ घनांगुल करनेके लिए एक छियानवे
अंगुल होते हैं अतः घनरूप क्षेत्रफलको छियानवके घनसे गुणिते छियानवके
गुणसे है और देवोंके शरीरका प्रमाण उत्सेधांगुलसे दो अतः भाग

१. मं गलमनंगुलं ।

संख्यातदिवं संदिसिद बहुभागं विप्रहृगतियोल्लप्सु -३ प मत्तमिदं पत्यासंख्यातदिवं
 प प
 अ अ

सिद बहुभागंगळ मारणांतिकसमुद्घातमुळ्ळयप्सु -३ प प इवर पत्यासंख्यातैकभाग-
 अ अ अ
 प प प
 अ अ अ

गळ दूरमारणांतिकसमुद्घातजीवंगळप्सु -३ प प ई दूरमारणांतिकसमुद्घातजीव-
 अ अ अ
 प प प प
 अ अ अ अ

य द्वितीयदीर्घदंडस्थितमारणांतिकपूर्वोपपावजीवागमनात्तयं पत्यासंख्यातदिवं भागिसिदेक-
 मुपपावजीवंगळप्सु -३ प प ईमुपपावजीवराशियं समीकरणकृततिर्यग्जीवमूलप्रमाण-
 अ अ अ
 प प प प प
 अ अ अ अ अ

तेन भक्ते एकभाग. प्रतिसमयं प्रियमाणराशिर्भवति—३ तस्मिन् पत्यासंख्यातेन भक्ते बहुभागो विप्रहृगतो
 प
 अ

—३ प तस्मिन् पत्यासंख्यातेन भक्ते बहुभागो मारणान्तिकसमुद्घाते भवति
 प प अ
 अ अ

—३ प प अस्य पत्यासंख्यातैकभागो दूरमारणान्तिके जीवा भवन्ति —३। प प १
 प प अ अ प प प प अ अ
 अ अ अ अ अ

द्वितीयदीर्घदंडस्थितमारणांतिकपूर्वोपपावजीवानानेतुं पत्यासंख्यातेन भक्ते एकभाग उपपावजीव-

की मुख्यतासे कहते हैं। सो सौधर्म और ऐशान स्वर्गके देवोंकी राशि घनांगुलके तीसरे १०
 मूलसे गुणित जगतत्रेणि प्रमाण है। इसमें पत्यके असंख्यातवें भागसे भाग देनेपर एक
 प्रमाण प्रतिसमय मरनेवाले जीवोंकी राशि होती है। उसमें पत्यके असंख्यातवें भागसे
 देनेपर बहुभाग प्रमाण विप्रहृगतिवाले जीवोंका प्रमाण होता है। उस प्रमाणमें पत्यके
 ख्यातवें भागसे भाग देनेपर बहुभाग प्रमाण मारणान्तिक समुद्घात करनेवाले जीवोंका
 प्रमाण होता है। उसमें पत्यके असंख्यातवें भागसे भाग देनेपर एक भाग प्रमाण दूर १५
 णान्तिक करनेवाले जीव होते हैं। इसमें द्वितीय दीर्घदण्डमें स्थित मारणान्तिक समुद्-
 घातसे पूर्व होनेवाले उपपावसे युक्त जीवोंका प्रमाण लानेके लिये पत्यके असंख्यातवें भागसे
 देनेपर एक भाग प्रमाण उपपाव जीवोंका प्रमाण होता है। यहाँ तिर्यचोंके उत्पन्न होने-

विष्णुसुखायुक्तं बीरज्जवदरीकं — $\begin{matrix} \overline{१} & \overline{१} \\ १ & १ \\ १ & १ \\ १ & १ \\ १ & १ \end{matrix}$ मत्तमिदं पापानां वनादिरं भागित्तरेकभागं

दुःखारण्यविष्णुसुखायुक्तं बीरज्जवदरीकं — $\begin{matrix} \overline{१} & \overline{१} \\ १ & १ \\ १ & १ \\ १ & १ \\ १ & १ \end{matrix}$ मत्तं पापानां वनादिरयोरागिदं भागि-

दुःखारण्यं तदेकभागमुत्तरादिरं विष्णुसुखायुक्तं — $\begin{matrix} \overline{१} & \overline{१} \\ १ & १ \\ १ & १ \\ १ & १ \\ १ & १ \end{matrix}$ मी देव्यु रागिदं विर-

न्यायं दुःखं दुःखं व्याजभाषितिकभोसोपय तन्नुकुमारमाहेइकपत्रदेवकीजं द्विदमानमारण्यं-
विष्णुसुखायुक्तं बीरज्जवदरीकं मत्तं पापानां वनादिरं भागित्तरेकभागं विष्णुसुखायुक्तं बीरज्जवदरीकं

$\begin{matrix} \overline{१} & \overline{१} & \overline{१} \\ १ & १ & १ \\ १ & १ & १ \\ १ & १ & १ \\ १ & १ & १ \end{matrix}$ दुःखं पापानां वनादिरं मत्तं पापानां वनादिरं मत्तं पापानां वनादिरं

दुःखारण्यं तदेकभागमुत्तरादिरं विष्णुसुखायुक्तं — $\begin{matrix} \overline{१} & \overline{१} \\ १ & १ \\ १ & १ \\ १ & १ \\ १ & १ \end{matrix}$ मत्तं पापानां वनादिरं भागित्तरेकभागं

दुःखारण्यं तदेकभागमुत्तरादिरं विष्णुसुखायुक्तं — $\begin{matrix} \overline{१} & \overline{१} \\ १ & १ \\ १ & १ \\ १ & १ \\ १ & १ \end{matrix}$ मत्तं पापानां वनादिरं भागित्तरेकभागं

‘मर्तु अर्धविष्णुसुखायुक्तं’ इत्यादि मापायुक्तं अनुसार मानकुमार माहेइदु इत्यंके
देवोके प्रमानये पत्रके अर्धविष्णुसुखायुक्तं भागमे भाग है। एक भाग प्रमान देव प्रविद्यमान मरते 10
है। इस मर्तुमे भी पत्रके अर्धविष्णुसुखायुक्तं भागमे भाग है। चतुर्भाग प्रमान विषयगतियामे जीव
होते है। इस रासिको पत्रके अर्धविष्णुसुखायुक्तं भागमे भाग है। चतुर्भाग प्रमान मारण्यनिक
मनुस्वायुक्तं जीव है। इस रासिको भी पत्रके अर्धविष्णुसुखायुक्तं भागमे भाग है। एक भाग
प्रमान दूर मारण्यनिक मनुस्वायुक्तं करनेवाले जीव है। इस रासिको भी पत्रके अर्धविष्णुसुखायुक्तं
भागमे भाग है। एक भाग प्रमान चत्वारदशविध जीविका प्रमान है। मानकुमार 14
माहेइदुके देवोके द्वारा किये गये मारण्यनिक पत्रका छेत्र तीन राजू सखा और सुख्युक्तके
संख्यायुक्तं भाग श्रीका व ऊँचा है। तमका पत्रके पत्रका पत्रके संख्यायुक्तं भागमे तीन
राजुको गुणा करनेपर जो प्रमान हो जना है। इस पत्रके पत्रके दूर मारण्यनिक मनुस्वायुक्तं
पत्रके जीवोको रासिको गुणा करनेपर मारण्यनिक मनुस्वायुक्तं छेत्रका प्रमान होता

भागिसि भागिसि बहुभागबहुभागंळं स्वस्थानस्वस्थानदोळं ५४ विहारवत् स्वस्थानदोळं

५४ वेदनासमुद्घातदोळं ५४ कषायसमुद्घातदोळं ५४ कोट्टु दोषैकभागं

वैक्रियिकसमुद्घातदोळीवुदु ५१ बज्जिकरुमो पंचरागिगळोळु प्रथमरागियं तृतीयरागियं

चतुर्थराशिपुमं यथासंख्यमागि त्रिहस्तोत्पेध तद्दशमभागमुखव्यासविदं "ध्यासत्रिगुणः

परिधिष्योत्तचतुर्त्याहृतस्तु क्षेत्रफलम् । क्षेत्रफलं वेदगुणं खातफलं भवति सर्वत्र ।" एवौ

सूत्राभिप्रायविदं ह । ३ । ३ । ह ३ । ह ३ जनितवेवावगाहनप्रमाणवृंदांगुलसंख्यातेकभागविदं

मत्तं नवाङ्घनांगुलसंख्यातभागविदं मत्तं तावन्मात्रविदं गुणिसिदोष्टे यथाक्रमवि

स्यस्थानपरस्थानवेदनासमुद्घातकषायसमुद्घातधोर्गळप्पु । स्व = स्व = ५४ । ६ वेद

५४ । ६ । ९ कषाय— ५४ । ६ । ९ मत्तं विहारवत्स्वस्थानद्वितीयपदजीवराशिपुसंख्यात-

योजनायामसूत्र्यंगुलसंख्यातभागविष्कंभोत्पेध २१ २१ क्षेत्रघनफलं संख्यातघनांगुलं गच्छं विदं गुणिसि-

यो १

वैक्रियिकसमुद्घाते दद्यात्— १ अत्र प्रथमराशौ त्रिहस्तोत्पेधतद्दशमभागमुखम्भाषैकवेवावगाहनस्व

वासो त्रिगुणो परिहीत्यायानोत ह ३ । ३ । ह ३ । ३ घनफलेन घनाङ्गुलसंख्यातकभागेन ६ पुनस्तृतीयराशौ

नवापंपनाङ्गुलसंख्यातभागेन ६ । ९ पुनश्चतुर्थराशौ तावदं च ६ । ९ गुणिते सति क्रमेण

स्वस्थानस्वस्थानवेदनासमुद्घातधोर्गळि भवन्ति— स्व = ५४ । ६ वेद = ५४ । ६ । ९ कषा

= ५४ ६ । ९ पुनः द्वितीयराशौ संख्यातवेदनायामसूत्र्यङ्गुलसंख्यातभागविष्कंभोत्पेध— २१ । २१

१५

शेष एक भाग प्रमाण जीव वैक्रियिक समुद्घातमें जानना । मुस्तल्लेस्यावाले देवोई मुख्या

होनेसे एक देवकी अवगाहना तीन हाथ ऊँची और उसके दसवें भाग मुखको पौड़ाई है । 'वासो त्रिगुणो परिही' इत्यादि सूत्रके अनुसार क्षेत्रफळ घनांगुलका संख्यातवर्वा भाग होता है । इससे स्वस्थानस्वस्थानवाले जीवके प्रमाणको गुणा करनेपर स्वस्थानस्वस्थान सम्बन्धी क्षेत्रका परिमाण होता है । एक जीवका मूलसरोरकी अवगाहनासे साढ़े चार गुणा क्षेत्र वेदना तथा कषाय समुद्घातमें होता है । इस साढ़े चार गुणा घनांगुलके संख्यातवें भागसे वेदना और कषाय समुद्घातवाले जीवके प्रमाणको गुणा करनेपर वेदना और कषाय समुद्घातमें क्षेत्र होता है । एक देवके विहार करते हुए अपने मूलसरोरसे पाहर निकल उत्तर दिक्कियासे उत्पन्न हुए सरोर पर्यन्त आत्माके प्रदेश संख्यात योत्रन लम्बे और सूत्र्यंगुलके संख्यातवें भाग पौड़ा ष ऊँचा क्षेत्र रोकते हैं । इसका पनरर क्षेत्रफळ संख्यात घनांगुल होता है । इससे विहारवत्स्वस्थान जीवके प्रमाणको गुणा करनेपर

सत्तासीविचतुस्सदसहस्सतिसीदिलक्खउणवोसं ।

चउवीसधिपं कोडोसहस्सगुणिदं तु जगपवरं ॥

सट्ठीसत्तसएहं णवयसहस्सैगलक्खभजिदं तु ।

सव्वं वादाकद्धं गुणिधं भणिदं समासेण ॥ —त्रिलोक. १३९-१४० गा. ।

एंदी सूत्रद्वयदिदं पेळ्ळपट्टं सव्वंवातावकद्धक्षेत्रमुत्तियं = १०१२४१९८३४८७ सव्वंलोका-
१०१९७ २०

संख्यातेरुभागं ≡ १ कळेवुळिद सव्वंलोकमेकजीवप्रतिबद्धप्रतरसमुद्रघातक्षेत्रमक्कु

≡ १ लोकरूपणसमुद्रघातदोलमेकजीवप्रतिबद्धक्षेत्रं सव्वंलोकमक्कु = १ मिल्लि आरोह-

घतचत्वारिसत्सुअहंगुलहतबगत्तरमुत्तराभिमुद्योधीनकवाटसमुद्रघातयोत्रं भवति = सू २ । १४४० प्रतर-
समुद्रघातस्य बहिर्वातत्रयाम्बन्तरे सर्वलोके व्याप्तत्वात् तद्गतयोत्रफलं लोकासंख्यातेरुभागेन ≡ १ । १ ऊनं

लोकमात्रमेकजीवप्रतिबद्धयोत्रं भवति ≡ १ लोकरूपणसमुद्रघाते एकजीवप्रतिबद्धक्षेत्रं सर्वलोको भवति ≡ ३

अधोलोकके नीचे सात राजू चौड़ा है। कमसे घटते-घटते मध्यलोकमें एक राजू चौड़ा है। इसका क्षेत्रफल निकालनेके लिए करणसूत्रके अनुसार मुस एक राजू, भूमि सात राजू दोनोंको जोड़नेपर आठ हुए। उसका आधा चारको अधोलोककी ऊँचाई सातसे गुणा करनेपर अठाईस राजू अधोलोकका प्रतररूप क्षेत्रफल होता है। मध्यलोकमें एक राजू चौड़ा है। वहाँसे बढ़ते-बढ़ते मल्लस्वर्गके निकट पाँच राजू चौड़ा है। सो यहाँ मुस एक राजू, भूमि पाँच राजू। दोनोंको जोड़नेपर छह हुए। उसका आधा तीनसे मध्य लोकसे मल्लस्वर्ग तक की ऊँचाई साढ़े तीन राजूसे गुणा करनेपर आधे ऊर्ध्वलोकका क्षेत्रफळ साढ़े दस राजू होता है। इतना ही क्षेत्रफळ ऊपरके आधे ऊर्ध्वलोकका होता है। इसमें अधोलोकका फल मिलानेपर जगत्प्रतर होता है। बारह अंगुल प्रमाण उत्तर-दक्षिण दिशामें ऊँचा है। सो जगत्प्रतरको बारह सूच्यंगुलसे गुणा करनेपर एक जीव-सम्बन्धी क्षेत्र बारह अंगुल गुणित जगत्प्रतर प्रमाण होता है। इसको चालीससे गुणा करनेपर चार सौ अस्सी अंगुलसे गुणित जगत्प्रतर प्रमाण उत्तराभिमुख कपाट समुद्रावका क्षेत्र होता है। स्थितमें ऊँचाई बारह अंगुल कही, षपविष्टमें (बैठनेपर) उससे विगुणी छत्तीस अंगुल ऊँचाई होती है। अतः षष्ठ प्रमाणको तीनसे गुणा करनेपर एक हजार चार सौ चालीस सूच्यंगुलसे गुणित जगत्प्रतर प्रमाण उत्तराभिमुख बैठे हुए कपाट समुद्रावसम्बन्धी क्षेत्र होता है। प्रतरसमुद्रावमें तीन वातवल्लयको छोड़कर सर्वलोकमें प्रदेश ग्याप्त होते हैं। सो तीन वातवल्लयका क्षेत्रफळ लोकका असंख्यातवाँ भाग है। इसे लोकमें पटानेपर जो शेष रहे उतना एक जीव सम्बन्धी

१. व. ० मुद्यस्विकं ।

रुज्जसला २ । वारस १२ । सलाग २ । गुणिवे दु २ । १२ । २ । वलयखण्डाणि ।

२४ । बाहिरसूई सलागा ५ कवी २५ । तवंताखिला खंडा ।

बाहिरसूईवलयवासुणा चउगुणिट्टुवासहवा ।

इगिलक्खवग्गभजिदा जंबूसमवलपखंडाणि ॥ — त्रि. सा. ३१८ गा. ।

बाहिरसूई ५ ल । वळयं । वास २ ल । ऊगा ३ ल । चउगुण ३ ल । ४ । इट्टुवास २ ल ।
हदा २४ ल ल । इगिलक्खवग्ग १ ल ल भजिदा २४ ल ल जंबूसमवलपखंडाणि २४ । इल्लि
१ ल ल

सर्वद्वीपखंडंगळं विट्टु समुद्रखंडंगळने यागुकोडु प्रकृतं पेळल्पडुगुमवेत्ते दोडे लवणसमुद्रदोळु
जंबद्वीपोपमानखंडंगळु चतुर्विंशतिप्रमितग २४ । लघनोडु लवणसमुद्रखंडंभेडु माडि १ । या
चतुर्विंशतिलखंडंगळं काळोदकसमुद्र जंबद्वीपसमानद सर्वखंडंगळं भागिसिदोडे ६७२ लवण-
२४

समूद्रोपमानलघनखंडंगळुपुविष्पत्तेडु २८ । मत्तमा चतुर्विंशतिलखंडंगळं पुष्करसमुद्रद जंबद्वीप-

खण्डाणि २४ । रुज्जसला २ वारस १२ सलाग २ । गुणिवे दु २ १२ । २ वलयखण्डाणि २४ ।
बाहिरसूई सलागा ५ कवी २५ तदन्ताखिलाखण्डा । बाहिरसूई ५ ल वलयवासु २ ल, गा ३ ल, चउगुणिट्टुवास
४२ ल, हदा २४ ल ल, इगिलक्खवग्गभजिदा २४ ल ल जंबूसमवलपखण्डाणि २४ । अय सर्वद्वीपखण्डाणि
१ ल ल

त्वक्त्वा सर्वसमुद्रखण्डेषु जंबद्वीपसमचतुर्विंशतिलखण्डंभक्तेषु लवणसमुद्रे लवणसमुद्रसमखण्डमेकं १ ।
कालोदकखण्डेषु भक्तेषु ६७२ अष्टाविंशतिः २८ । पुष्करसमुद्रखण्डेषु भक्तेषु ११९०४ चतुःशतपणवतिः ४९६,
२४ २४

शेष रहे चौबीस लाख लाख योजन । इस तरह बाह्य सूचीके वर्गमें-से अभ्यन्तर सूचीके
वर्गकी घटाना । फिर उसे जम्बूद्वीपके व्यास लाख योजनके वर्गसे भाग देनेपर चौबीस
लख आया । उतने ही खण्ड लवणसमुद्रमें होते हैं । तथा लवणसमुद्रका व्यास दो लाख
होनेसे उसकी शलाका दो है । उसमें-से एक घटानेपर एक रहा । उसको बारह और शलाका
दोसे गुणा करनेपर चौबीस वलयखण्ड होते हैं । तथा लवणसमुद्रकी बाह्य सूची पाँच लाख
योजन है अतः शलाकाका प्रमाण पाँच, उसका वर्ग पचीस । सो लवण समुद्र पर्यन्त
पचीस खण्ड होते हैं । तथा लवण समुद्रकी बाह्य सूची पाँच लाख योजन, उसमें-से उसका
व्यास दो लाख योजन घटानेपर तीन लाख शेष रहे । इनको चौगुणे व्यास आठ लाख
योजनसे गुणा करनेपर चौबीस लाख हुए । इसमें एक लाखके वर्गसे भाग देनेपर चौबीस
आये । उतने ही जम्बूद्वीपके समान वलयाकार खण्ड लवण समुद्रमें होते हैं ।

सो यहाँ सर्वद्वीप सम्बन्धी खण्डोंको छोड़कर सर्वसमुद्र सम्बन्धी खण्ड ही लेना ।
तथा जम्बूद्वीप समान चौबीस खण्डोंका भाग समुद्रके खण्डोंमें देना । तब लवणसमुद्रमें
लवणसमुद्रके समान एक खण्ड होवा है । कालोदके छह सौ बहत्तर खण्डोंमें चौबीससे भाग
द देनेपर कालोद समुद्रमें लवणसमुद्रके समान अठारस खण्ड होते हैं । पुष्कर समुद्रके ग्यारह

१. व. कालोदके अष्टाविं । २. व. समुद्रे चतुः ।

पूर्वोक्तद्वय भक्तजगत्प्रतरमात्रच्छेदोत्रं सिद्धमादुवाहणधोत्रं रज्जुप्रतरमात्रधोत्रोक्तं = सम-

च्छेदं माडिकरिदोत्रे शेषमित्तु = ११९० इदंनपवत्तिसलेदु भाग्यवि भागहारं भागिसिदोत्रे
४९
४९।१२३९

साधिककाम ५१ भक्तजगत्प्रतरमात्रं विवक्षितधोत्रं तलस्पर्शमवकं = १ इदमूर्ध्वस्पर्शग्रहणात्यं-

मागि जीवोत्तेषजनिनसंख्यातसूच्यंगुलंगण्डिदं गुणिसिदोत्रे शुभलेश्यगङ्गे स्वस्थानस्वस्थानस्पर्श-
मवकं = २३ इदं कटाक्षिसि तेजोलेश्यगे स्वस्थानस्वस्थानापेक्षीयदं लोकासंख्यातभागं स्पर्शमं दु
५
५१

पेच्छत्पटदु । विहारवत् स्वस्थानोक्तं वेदनाकषायवैक्रियिकसमुद्घातदोत्रं तेजोलेश्यगे अष्टचतु-
दंशनायंगञ्ज किञ्चिद्वृत्तगण्डागि ८ = प्रत्येकं नात्केडेयोक्तमवकुमी किञ्चिद्वृत्तचतुदंशभागं
१४

ऋणधेयं सिद्धम् । इदं रज्जुप्रतरे = समच्छेदेनापनीय = ११९० अपवर्तनार्थं भाग्येन भागहारं भक्त्वा
४९ ४९ । १२३९

साधिककाम ५१ भक्तजगत्प्रतरं विवक्षितधोत्रस्य तलस्पर्शो भवति = १ । इदमूर्ध्वस्पर्शग्रहणार्थं जीवोत्तेषजनिन-

संख्यातसूच्यंगुलंगणितं शुभलेस्यानां स्वस्थानस्वस्थानस्पर्शो भवति = २३ । इदं दृष्ट्वा तेजोलेस्यायाः स्वस्थान-
१०
५१

स्वस्थानापेक्षया लोकासंख्येयभागः स्पर्शः इत्युक्तम् । विहारवत्स्वस्थाने वेदनाकषायवैक्रियिकसमुद्घाते च
तेजोलेस्याया अष्टचतुदंशभागः किञ्चिद्वृत्तः स्वात् । ८- कुतः ? तनकुमारमाहेन्द्रजाना तेजोलेस्योक्तंशानां
१४

सूच्यंगुलसे गुणित जगत्त्रयेण मात्र क्षेत्रफल हुआ । इसे पूर्वांक धनराशिरूप क्षेत्रफलमेंसे
घटाना चाहिए । सो किञ्चित्द्वीन साधिक वारह सी उनतालीससे भाजित जगत्प्रतर प्रमाण
सर्वजलचर रहित समुद्रोंका ऋणरूप क्षेत्रफल हुआ । इसको एक राजू लम्बा चौड़ा तथा १५
जगत्प्रतरका वनचासवाँ भाग मात्र रज्जु प्रतरक्षेत्रमेंसे समच्छेद करके घटाइए । तब
जगत्प्रतरमें ग्यारह सी नन्वेका गुणकार और वनचास गुणा वारह सी उनतालीसका
भागहार हुआ । $\frac{ज. प्र. \times ११९०}{४९ \times १२३९}$ । अपवर्तन करनेके लिए भाग्यसे भागहारमें भाग देनेपर

साधिक इक्ष्यावनसे भाजित जगत्प्रतर प्रमाण विवक्षित क्षेत्रका प्रतररूप तलस्पर्श होता है ।
इसको ऊँचाईका स्पर्श ग्रहण करनेके लिए जीवोंकी ऊँचाईके प्रमाण संख्यात सूच्यंगुलसे २०
गुणा करनेपर कुछ अधिक इक्ष्यावनसे भाजित संख्यात सूच्यंगुल गुणित जगत्प्रतर मात्र
शुभलेस्याओंका स्वस्थान-स्वस्थान सम्बन्धी स्पर्श होता है । इसको देखकर तेजोलेस्याका
स्वस्थान-स्वस्थानकी अपेक्षा स्पर्श लोकका असंख्यातवाँ भाग मात्र कहा है ।

समस्तप्रकृतिस्यित्तिअनुभागप्रदेशबंधयोगंगळप्य स्थितिबंधाध्यवसायानुभागबंधाध्यवसाय-
योगस्थानंगळनितोळबन्धितुं पृथ्व्योऽनु भावसंसारबोऽन्तोऽत्य जीवनिबमनुभयिसत्पट्टु । इल्लि
स्थितिबंधाध्यवसायजघन्य मोरस्तो इरुहृष्टपय्यंतमते अनुभागबंधाध्यवसायजघन्यस्थानमोरस्तो इ-
रुहृष्टस्थानपय्यंतं योगस्थानंगळ जघन्यं मोरस्तो इरुहृष्टस्थानपय्यंतं सध्वंजघन्यस्थितिबंधधि
गन्मोरस्तागि सध्वंरुहृष्टस्थितिपय्यंतं तत्तत्संबंधिगळं स्थापिसि अक्षसंचारक्रमविदे भावसंसार-
बोऽनुभयिसत्पट्टु स्थितिबंधाध्यवसायाविगळमं साधितुपुदे बुद्धर्थं ।

इल्लि एकपुद्गलपरिवर्तनकालमनंतमरकुमर्दं नोडलु दोत्रपरिवर्तनकालमनंतगुणं अवं
नोडलु कालपरिवर्तनवारंगळनंतगुणमवं नोडलु भःपरिवर्तनकालमनंतगुणमवं नोडलुं भावपरि-
वर्तनकालमनंतगुणमःकुमिल्लि संदृष्टिचनेयितुः—भाः । ए ए ए ए ए

भव । ए ए ए ए

काल । ए ए ए

क्षेत्र । ए ए

द्रव्य । ए

१०

ओष्यं जीवंगे अतीतकालबोऽनु भावपरिवर्तनवारंगळ अनंतगळ । ए । अवं नोडलु भव-
परिवर्तनवारंगळनंतगुणंगळवं नोडलु कालपरिवर्तनवारंगळ अनंतगुणंगळवं नोडलु क्षेत्रपरिवर्तन-
वारंगळ अनंतगुणंगळवं नोडलु द्रव्यपरिवर्तनवारंगळनंतगुणंगळपुवु । संवृष्टिः—

१५

गवंप्रकृतिस्यित्त्वनुभागप्रदेशाध्ययोग्यानि ।

स्थानान्यनुगुणानि भ्रमता भूति भावसंसारे ॥

अथ स्थितिबन्धाध्यवसायव्यवसायसदुष्टदृष्टवर्तमानि पुनः अनुभागवन्धाध्यवसायव्यवसायसदुष्टदृष्टवर्तमानि
योगस्थानव्यवसायसदुष्टदृष्टवर्तमानि च सर्वव्यवस्थितिसंबन्धीनि आदि वृत्ता सध्वंरुहृष्टस्थितिपय्यंतं तत्तत्संबन्धीनि
संस्थाप्य अक्षसंचारक्रमेण भावसंसारं अनुभूयस्थित्यादिस्थितिबन्धाध्यवसायादीन् साधयेदित्यर्थः । अर्द-
पुद्गलपरिवर्तनकालः अनन्तः । ततः क्षेत्रपरिवर्तनकालः अनन्तगुणः । अतः वाक्परिवर्तनकालः अनन्तगुणः,
ततो नवपरिवर्तनकालः अनन्तगुणः । ततो भावपरिवर्तनकालः अनन्तगुणः । संदृष्टिः—

२०

भाः ए ए ए ए ए

भव ए ए ए ए

काल ए ए ए

क्षेत्र ए ए

द्रव्य ए

एकजीवस्य अतीतकाले भावपरिवर्तनवारं अनन्ताः । तेष्वः भवपरिवर्तनवारं
अनन्तगुणाः । तेष्वः क्षेत्रपरिवर्तनवारं अनन्तगुणाः । तेष्वः द्रव्यपरिवर्तनवारं
अनन्तगुणाः । संदृष्टिः—

२५

'भावसंसारमे भ्रमण करते हुए जीवने सब प्रकृतियोंके स्थितिवन्ध, अनुभागवन्ध
और प्रदेशवन्धके योग स्थानोंका अनुभव किया ।'

३०

सबसे जघन्य स्थितिसे लेकर उत्कृष्ट स्थिति पर्यन्त तत्सम्बन्धी स्थिति बन्धाध्यवसाय-
स्थान, अनुभागवन्धाध्यवसायस्थान और योगस्थान जघन्यसे लेकर उत्कृष्ट पर्यन्त स्थापित
करके जैसे पहले प्रमादोंमें अक्षसंचार कहा है उसी क्रमसे भावसंसारमें अनुभूत स्थिति आदि
सम्बन्धी स्थिति बन्धाध्यवसाय आदिको साधना चाहिए ।

यहाँ एक पुद्गलपरावर्तन काल सबसे थोड़ा अर्थात् अनन्त है । उससे क्षेत्रपरिवर्तन
काल अनन्त गुणा है । उससे कालपरिवर्तनका काल अनन्त गुणा है । उससे भवपरिवर्तनका
काल अनन्त गुणा है । उससे भावपरिवर्तनकाल अनन्त गुणा है । इसीसे एक जीवके अतीत

३५

जीवाजीवं द्रव्यं रूवारुविचि होदि पचेयं ।

संसारत्था रूवा कर्मविमुक्ता अरुवगया ॥५६३॥

जीवाजीवद्रव्ये रूपारूपिणेति भवतः प्रत्येकं । संसारत्था रूपाः रूपाभ्येषां संतोति -रूपाः कर्मविमुक्ता अरुवगताः ॥

सामान्यादिवं संग्रहनपापेक्षोयदं द्रव्यमो'दु । अदं भेदिसिदोडे जीवद्रव्यमे'दु अजीवद्रव्यमे'दु ५
द्विविधमक्कुमल्लि जीवद्रव्यं रूपि जीवद्रव्यमे'दुमरूपिजीवद्रव्यमे'दु' द्विविधमपुवल्लि संसार-
स्यंगळु रूपिजीवद्रव्यंगळुप्पु । कर्मविमुक्तसिद्धपरमेष्ठिजीवंगळु अरुवगतजीवद्रव्यंगळुप्पु ।
अजीवद्रव्यमुं रूप्यजीवद्रव्यमे'दुमरूप्यजीवद्रव्यमे'दु द्विविधमक्कु ।

अज्जीवेसु य रूवी पोगगलदव्वाणि धम्म इदरो वि ।

आगासं कालो वि य चत्तारि अरुविणो होति ॥५६४॥

अजीवेषु च रूपीणि पुद्गलद्रव्याणि धर्म इतरापि च । आकाशं कालोपि च चत्वार्य-
रूपीणि भवन्ति ॥

अजीवद्रव्यंगळोळु पुद्गलद्रव्यंगळु रूपिद्रव्यंगळुप्पु । इल्लि

“वर्णगंधरसस्पर्शः पूरणं गलनं च यत् ।

कुर्वन्ति स्कंधवत्तस्मात्पुद्गलाः परमाणवः ॥” [] १५

ए'दितु परमाणुगळंगं पुद्गलत्वमुंदापुत्तं विरलु द्विप्रदेशादि स्कंधंगळंगेये प्रहणमक्कुमेकं'दोडे
प्रदेशपूरणगलनरूपदिदं द्रवति द्रोप्यति अदुद्भवन्ति पुद्गलद्रव्यमे'दितु द्व्यणुकादिस्कंधंगळंगेये
पुद्गलगदव्वाच्यत्वं यथावत्तापि संभविमुगुन'पुव'रिदं परमाणुविगे “वट्केन युगपद्योगात्परमाणोः

सामान्येन संग्रहनपापेक्षया द्रव्यमेकम् । तदेव भेदविवक्षाया जीवद्रव्यं अजीवद्रव्यं च । तत्र जीवद्रव्यं
रूपरूपि च । तत्र संसारत्थाः रूपिणः, कर्मविमुक्ताः सिद्धा अरूपिणो भवन्ति । अजीवद्रव्यमपि रूपरूपि २०
च ॥५६३॥

अजीवेषु पुद्गलद्रव्याणि रूपीणि भवन्ति धर्मद्रव्यं तथा अधर्मद्रव्यं आकाशद्रव्यं कालद्रव्यं चेति
चत्वारि अरूपीणि भवन्ति । अत्र “वर्णगंधरसस्पर्शः पूरणं गलनं च यत् । कुर्वन्ति स्कंधवत् तस्मात्पुद्गलाः
परमाणवः” इत्येवं परमाणूनां पुद्गलत्वे द्व्यणुकादीनामेव कथं ? प्रदेशपूरणगलनरूपेण द्रवन्ति द्रोप्यन्ति
बहुद्वविति धूमः । ननु— २५

सामान्यसे संग्रहनयकी अपेक्षा द्रव्य एक हे । भेदविवक्षासे दो प्रकारका हे—जीव
द्रव्य और अजीव द्रव्य । वसमें जीव द्रव्यके दो प्रकार हैं—रूपी और अरूपी । संसारी
जीव रूपी हैं और कर्मसे मुक्त सिद्ध अरूपी हैं । अजीव द्रव्य भी रूपी और अरूपी
होता है ॥ ५६३ ॥

अजीवोंमें पुद्गल द्रव्य रूपी होते हैं । धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और काल- ३०
द्रव्य ये चार अरूपी हैं ।

शंका—कहा है कि 'परमाणु स्कन्धकी तरह वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्शके द्वारा पूरण गलन
करते हैं अतः वे पुद्गल हैं' इस प्रकार परमाणुको पुद्गल कहनेपर द्व्यणुक आदिमें पुद्गल-
पना कैसे घटित होता है ?

समाधान—द्व्यणुक आदि प्रदेशोंके पूरण गलन रूपके द्वारा अन्य परमाणुओंको प्राप्त ३५

गदिठाणोग्गहकिरिया जीवाणं पोग्गलाणमेव हवे ।

धम्मतिथे ण हि किरिया सुक्खा पुण साधगा होति ॥५६६॥

गतिस्थानावगाहक्रियाः जीवानां पुद्गलानामेव भयेषुः । धर्मत्रये न हि क्रियाः सुखा पुनः साधका भवन्ति ॥

गतिस्थानावगाहक्रियेगळंबी मूरं जीवंगळं पुद्गलंगळं पणुवु । धर्मत्रये धर्माधर्मा- १
कांगळंबी मूरं द्रव्यंगळं न हि क्रिया क्रियेपिल्लेके बोडे स्थानचलनमुं प्रदेशचलनमुनिल्ल-
मणुवुदरिवं । पुनः मत्तेने बोडे धर्मादिद्रव्यंगळं गत्यादिगळं मुख्यसाधकंगळं पणुवु अडे ते बोडे :-

जत्तस्स पहं ठत्तस्स आसणं निवसगस्स वसदी वा ।

गदिठाणोग्गहकरणे धम्मतिथं साधगं होति ॥५६७॥

गच्छतः पंथाः तिष्ठतः आसनं निवसकस्य वसतिरिव गतिस्थानावगाहकरणे धर्मत्रयं १०
साधकं भवति ॥

नडेबंधे वट्टियं कुनिल्लिपंबंगासनमुं इपंबंगे निवासमुमेदितु गतिस्थानावगाहकरणबोळं
सायसंगळं पणुवते धर्मत्रयमुं गमनादिकरणबोळं साधकमवकं । कारणमवकुमे बुदत्थं ।

वत्तणहेदू कालो वत्तणगुणमविय दब्बणिचयेसु ।

कालाधारेणेव य वट्टंति सब्बदब्बाणि ॥५६८॥

१५

वर्तनाहेतुः कालो वर्तनगुणोपि च द्रव्यनिचयेषु । कालाधारेणैव वर्तते सब्बद्रव्याणि ॥

गिजंतमप्य वृत्तं धातुविनत्तणिदं कर्मबोळं मेग्भावबोळं खीलिपदोळं वर्तना एदितु
शब्दस्थितियक्कु । वर्यते वर्तनमात्रं वा वर्तना । धर्मादिद्रव्यंगळं स्वपर्यायनिवृत्तियं फुष्टु

गतिस्थानावगाहनक्रियास्तिस्रः जीवपुद्गलयोरेव भवन्ति, धर्माधर्माकाशेषु क्रिया नहि स्थानचलनप्रदेश-
चलनयोरनावात् । किं तर्हि ? धर्मादिद्रव्याणि गत्यादीनां मुख्यसाधिकानि भवन्ति ॥५६६॥ तदथा - २०

गच्छतः पंथाः, तिष्ठतः आसने, निवसदो निवासे, यथा गतिस्थानावगाहकरणे साधका भवन्ति
तथा धर्मादिद्रव्यमपि साधकं कारणमित्थर्यः ॥५६७॥

णिजन्ताए वृत्तुधातोः कर्मणि भावे वा वर्तनाशब्दव्यवस्थितिः वर्यते वर्तनमात्रं वेति । धर्मादि-

गति, स्थिति और अवगाह ये तीन क्रियाएँ जीव और पुद्गलमें ही होती हैं । धर्म, २५
अधर्म और आकाशमें क्रिया नहीं है क्योंकि न तो ये अपने स्थानको छोड़कर अन्य स्थानमें
जाते हैं और न इनके प्रदेशोंमें ही चलन होता है । किन्तु ये धर्मादि द्रव्य, गति आदि
क्रियाओंमें मुख्य साधक होते हैं ॥ ५६६ ॥

वही कहते हैं—

जैसे जाते हुएको मार्ग, बैठनेवालेको आसन, निवास करनेवालेको निवासस्थान,
चलने, ठहरने, अवगाह करनेमें साधक होता है उसी तरह धर्मादि तीन द्रव्य भी सहायक ३०
कारण होते हैं ॥ ५६७ ॥

णिजंत वृत्तु धातुसे कर्ममें अथवा भावमें वर्तना शब्द निष्पन्न होता है । सो वर्ये
या वर्तन मात्र वर्तना है । धर्मादि द्रव्य अपनी-अपनी पर्यायोंकी निर्वृत्तिके प्रति स्वयं ही

ओषपुद्गलंगळोऽऽ परिणामादिपरत्वापरत्वंगळु काणल्पडुगुं । धर्माद्यमूर्त्तद्रव्यंगळोऽऽ
परिणामादिगळें तें बोडे वेळवपं :—

धर्माधर्मादीनां अगुरुगलहुगं तु छद्दिहि वड्ढीहिं ।

हाणीहि वि वड्ढंतो हापंतो वड्ढे जम्हा ॥५६९॥

धर्माधर्मादीनां अगुरुलघुकस्तु पड्भिरपि वृद्धिभिर्हानिभिरपि वर्द्धमानो हीयमानो वत्तते ५
यस्मात् ॥

आतुरोऽऽ कारणदिवं धर्माधर्मादिद्रव्यंगळु अगुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदंगळु स्वद्रव्यत्वकके
निमित्तमप्य शक्तिविशेषंगळु पड्बुद्धिगळिदं पड्हानिगळिदं वर्द्धमानंगळु हीयमानंगळुमागुत्तं
परिणमिसुववु । कारणं मुख्यकालमेषकुं ।

ण य परिणमदि सयं सो ण य परिणामेद् अण्णमण्णेहि । १०

विविधपरिणामियाणं हवदि हु कालो सयं हेद्दु ॥५७०॥

न च परिणमति स्वयं सः न च परिणामयति अन्यदन्यैः । विविधपरिणामिकानां भवति हु
कालः स्वयं हेतुः ॥

सः कालः आ कालं न च परिणमति संक्रमविधानदिदं स्वकीयगुणंगळिदं अन्यद्रव्यदोऽऽय-
रिणमिसवु । ये तो गळु परद्रव्यगुणंगळो तन्नोऽऽ संक्रमदिदं परिणमनमिल्लंतें मत्तं हेतु कर्तृत्वदिदं १५
अन्यद्रव्यमनन्यगुणंगळोऽऽकडि न च परिणमयति परिणमननं भाडिसवु । मत्तनं बोडे विविधपरि-
णामिकानां विविधपरिणामिगळुप्य द्रव्यंगळु परिणमनकके कालं ताने उदासीननिमित्तमक्कुं ।

कालं अस्सिय दब्बं सगसगपज्जायपरिणदं होदि ।

पज्जायावट्ठाणं सुट्ठणए होदि खणमेत्तं ॥५७१॥

कालमाधित्य द्रव्यं स्वस्वधर्माद्यपरिणतं भवति । धर्मायावस्थानं शुद्धतये भवति क्षणमात्रं ॥ २०

यतः धर्माधर्मादीनां अगुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदा स्वद्रव्यत्वस्य निमित्तभूतशक्तिविशेषाः पड्बुद्धि-
निर्वर्धमाना पड्हानिभिरव हीयमानाः परिणमन्ति ततः कारणात्तत्रापि च मुख्यकालस्यैव कारणात्वात् ॥५६९॥

स कालः संक्रमविधानेन स्वगुणैरन्यद्रव्ये न परिणमति । न च परद्रव्यगुणान् स्वस्मिन् परिणामयति ।
नापि हेतुकर्तृत्वेन अन्यद् द्रव्यम् अन्यगुणैः सह परिणामयति । किं तद्दि ? विविधपरिणामिकानां द्रव्याणां
परिणमनस्य स्वयमुदासीननिमित्तं भवति ॥५७०॥ २५

अपरत्वं उपकार कालके ही कहे हैं । और ये जीव और पुद्गलमें ही देखे जाते हैं ॥५६८॥

तय धर्मादि अमूर्त्तद्रव्योर्में वर्तना कैसे होती है यह बतलाते हैं—

यतः धर्म, अधर्म आदिमें अपने द्रव्यत्वमें निमित्त भूत शक्ति विशेष अगुरुलघु नामक
गुणके अविभागी प्रतिच्छेद छह प्रकारकी वृद्धिसे वर्धमान और छह प्रकारकी हानिसे
हीयमान होकर परिणमन करते हैं । इस कारणसे वहाँ भी मुख्य काल ही कारण है ॥५६९॥ ३०

वह काल संक्रमविधानके द्वारा अपने गुणोंसे अन्य द्रव्यके रूपमें परिणमन नहीं
करता । और अन्य द्रव्यके गुणोंको अपने रूपमें भी नहीं परिणमाता । हेतुकर्ता होकर अन्य
द्रव्यको अन्य द्रव्यके गुणोंके साथ भी नहीं परिणमाता । किन्तु अनेक रूपसे स्वयं परिणमन
करनेवाले द्रव्योंके परिणमनमें उदासीन निमित्त होता है ॥ ५७० ॥

आकाशव एकप्रदेशबोद्धिर् परमाणु मंदगतिविषयं परिणतमावुतु द्वितीयमन्तरक्षेत्रमं याव-
 यिनितु योञ्जितगोष्ठुगुमडु समयमें च कालमनुकुमा नभः प्रदेशमें बुवे तें बोडे :-
 जेत वि खेतमेतं अणुणा खंडं तु गयणदब्धं च ।
 तं च पदेसं भणियं अबरावरकारणं जस्त ॥ []
 आयुर्बो तु परमाणु विगे अपरापरकारणं पितु मुंडुमें बो ध्यवस्थितिते निमित्तमप्य गगनद्रव्य-
 नेमाम्रं परमाणुविषयं दगापित्तदडुतु तु स्फुटमागि सः अतु प्रदेशो भणितः प्रदेशमें बु
 तु ।
 नंतरं ध्यवहारकालमं वेद्द्वयं :-

आवलि असंखुसमया संखेज्जावलिसमूहमुस्तासो ।
 सन्धुस्तासो योवो सत्तयोवो लवो भणियो ॥५७४॥
 लिरसंखुसमया संखेयावलिसमूह उच्छ्वासः । समोच्छ्वासा स्तोकः सप्तस्तोका लवो

अं ये बुतु असंख्यातसमंग ठनुञ्जदेके बोडे युक्तासंख्यातजघन्यराशिप्रमाणमप्युवरिवं ।
 समूहमुच्छ्वासमें बुदरकुमा उच्छ्वासमें तप्परोञ्जे बोडे :-
 अद्दस्त अपलसस्त य निश्वहृदस्त य ह्वेज्ज जीवस्त ।
 उस्तासो निस्तासो एगो पाणोत्ति आहीदो ॥ []

एकप्रदेशस्थितपरमाणुः मन्दगतिपरिणतः सन् द्वितीयमन्तरक्षेत्रं यावदाति स समयाख्य-
 स च प्रदेशः कियान्-
 जेतीवि खेतमेतं अणुणा खंडं तु गयणदब्धं च ।
 तं च पदेसं भणियं अबरावरकारणं जस्त ॥२॥
 तोः अपरपरकारणं गगनद्रव्यं यावत्क्षेत्रमार्गं परमाणुना व्याप्तं स्फुटं स प्रदेशो भणितः ॥२॥

यावत्समयरातिः आवलिः । संख्यातावलिसमूह उच्छ्वासः । स च तिल्यः ?
 अद्दस्त अपलसस्त य निश्वहृदस्त य ह्वेज्ज जीवस्त ।
 उस्तासाणिस्तासो एगो पाणोत्ति आहीदो ॥१॥

दो गाथाओंका अर्थ इस प्रकार है—
 प्रदेशमें स्थित परमाणु मन्द गतिसे चलता हुआ अनन्तरवर्ती दूसरे
 जावा है वह समय नामक काल है । वह प्रदेश कितना है यह कहते
 क्षेत्रको एक परमाणु रोकता है उसे प्रदेश कहते हैं । वह दूर और
 होता है ।
 गालको कहते हैं—

यावत्समयसंयोगे समूहका नाम आवली है । संख्यात आवलीके
 है । वह सुखी, निरालसी और नीरोगी जीवका उच्छ्वास-

दिवसमें बुं पक्षमें बुं मासमें बुं ऋतुमें बुं मयनमें बुं वर्षमें दित्यवमाविगळ् स्फुटमागि
आवत्यादिभेदादि संख्यातासंख्यातानंतपर्यंत यथासंख्यमागि ध्रुतावधिकेवलज्ञानविषयतेयिदं
विकल्पंगळपुवबेलं व्यवहारकालमवर्क ।

व्यवहारो पुण कालो माणुसखेत्तमि जाणिदव्यो दु ।

जोइसियाणं चारे व्यवहारो खलु समापोत्ति ॥५७७॥

व्यवहारः पुनः कालो मनुष्यक्षेत्रे ज्ञातव्यस्तु । ज्योतिष्काणां चारे व्यवहारः खलु समान
इति ॥

व्यवहारकालमें बुदु मत्ते मनुष्यक्षेत्रे ज्ञातव्यमवकुमेके बोडे ज्योतिष्कारवोळ् व्यव-
हारकालं तु मत्ते खलु स्फुटमागि समानमें वित्तु कारणमागि ।

व्यवहारो पुण त्रिविधो तीदो वट्टंतगो भविस्सो दु ।

तीदो संखेज्जावलहदसिद्धानं पमाणो दु ॥५७८॥

व्यवहारः पुनस्त्रिविधोऽतीतो वर्तमानो भविष्यस्तु । अतीतः संख्यातावलहतसिद्धानां
प्रमाणं तु ॥

व्यवहारकालमें बुदु मत्ते त्रिविधमवकुं । अतीतकालमें बुं वर्तमानकालमें बुं भविष्यत्काल-
में दिवु । अल्लि अतीतकालप्रमाणं तु मत्ते संख्यातावलिपर्यं गुणिसल्पट्ट सिद्धरगळ प्रमाणमेनित-
नितेयवकुमेके बोडे त्रैराशिक सिद्धमपुवविरमा त्रैराशिकमें ते बोडे अदरुन एंडु जीवंगळ् मुक्तिगे
सलुत्तिरलु अर्हादिगळमेले दु समयकालमागुत्तिरलु सवर्जोवराशिय अनंतैकनागमात्रमप्य जीवंगळ्

दिवसः पक्षः मासः ऋतुः अयनं वर्षं इत्यादयः स्फुटं आवत्यादिभेदतः संख्यातासंख्यातानन्तपर्यन्तं
क्रमयः ध्रुतावधिकेवलज्ञानविषयविकल्पाः सर्वे व्यवहारकालो भवति ॥५७९॥

व्यवहारकालः पुनः मनुष्यक्षेत्रे स्फुटं ज्ञातव्यः । कुतः ? ज्योतिष्काणां चारे स समान इति २०
कारणात् ॥५७७॥

व्यवहारकालः पुनस्त्रिविधः अतीतोऽनागतो वर्तमानवर्धेति । तु-पुन. अनातीतः संख्यातावलहगुणित-
सिद्धराशिर्भवति, कुतः ? अष्टोत्तरपदछतजीवानां भुक्तिगमनकालोऽष्टसमयाधिकपश्चात्ताः तदा, सर्वोवराशय-

एक समय अधिक आवली जघन्य अन्तर्मुहूर्त है । एक समय कम मुहूर्त उल्कष्ट अन्त-
र्मुहूर्त है । दोनोके मध्यमें असंख्यात भेद हैं वे सब अन्तर्मुहूर्त जानना ।

दिवस, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष इत्यादि आवली आदिसे लेकर संख्यात,
असंख्यात अनन्तपर्यन्त क्रमसे ध्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और केवलज्ञानके विषयभूत सब
विकल्प व्यवहार काल हैं ॥५७९॥

व्यवहारकाल मनुष्यलोकमें ही जाना जाता है क्योंकि ज्योतिषी देवोंके चलनेसे ही
व्यवहारकाल निर्णय होता है अतः ज्योतिषी देवोंके चलनेका काल और व्यवहार काल २०
दोनों समान हैं ॥ ५७७ ॥

व्यवहारकाल तीन प्रकारका है—अतीत, अनागत और वर्तमान । अतीतकाल संख्यात
आवलीसे गुणित सिद्धराशि प्रमाण है । क्योंकि उह सौ आठ जीवोंके भुक्ति जानेका काल
आठ समय अधिक छह मास है । तय समस्त जीव राशिके अनन्तवै भाग मुक्त जीवोंका

लोगस्त असंखेज्जदिभागप्पहुडिं तु सव्वलोगोत्ति ।

अप्पपदेसविसप्पणसंहारे वावदो जीवो ॥५८४॥

लोकस्यासंख्येयभागप्रभृतिस्तु सर्व्वलोकपर्व्वतमात्मप्रदेशविसर्पणसंहारे व्याप्तो जीवः ॥

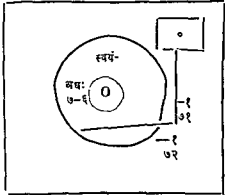
सूक्ष्मनिगोदलब्धपर्याप्तजघन्यावगाहं मोदलो'डु महामत्स्यावगाहपर्यंतं प्रदेशोत्तरवृद्धि-

क्रमंगलप्पुत्रु ६ ६ ६०००६१११११ वेदनायुतंगे एकप्रदेशोत्तरवृद्धिकर्मादिदं जघन्यदिदं मेले ५
 ५ ० १ ०

नडदुत्कृष्टं त्रिगुणितमक्कुं ६ १ १ १ १ १ ३ । मेले मत्ते मारणांतिकसमुद्घातजघन्यं मोदलो'डु

६ १ १ १ १ १ ३ पदेशोत्तरकर्मादिदं नडेदुत्कृष्टंस्वयंभूरमणसमुद्रबहिस्थितस्यंडिलक्षेत्रदोळिहं महा-
 मत्स्यसंबंधि सप्तमपृथ्विय महाहारीरवनामथेणीबद्धं कुस्तु मारणांतिकसमुद्घातबंधमुत्कृष्टमक्कुं
 १५ । ४१ मो क्षेत्रक्के संदृष्टि :-

१ २



सूक्ष्मनिगोदलब्धपर्याप्तजघन्यात्मप्रदेशोत्तरेषु महामत्स्यपर्यन्तेषु तदुपरि प्रदेशोत्तरेषु वेदनासमुद्घातस्य १०
 त्रिगुणव्याप्तमहामत्स्यपर्यन्तेषु तदुपरि प्रदेशोत्तरेषु स्वयंभूरमणसमुद्रबाह्यस्थिण्डिलक्षेत्रस्थितमहामत्स्येन सप्तम-
 पृथ्वीमहारीरवनामथेणीबद्धं प्रति मुक्तमारणांतिकसमुद्घातस्य पञ्चघातयोजनतदर्पविष्कम्भोत्सेधैकार्धपद्मज्वा-
 यतप्रपमद्वितीयतृतीयचक्रोत्कृष्टपर्यन्तेषु तदुपरिलोकपूरणपर्यन्तेषु च अवगाहनविकल्पेषु आत्मप्रदेशविसर्पणसंहारे

सूक्ष्मनिगोदिधा लब्धपर्याप्तककी जघन्य अवगाहनासे लेकर एक-एक प्रदेश बढ़ते-
 बढ़ते महामत्स्यपर्यन्त उत्कृष्ट अवगाहना होती है । उससे ऊपर एक-एक प्रदेश बढ़ते हुए वेदना १५
 समुद्घातवाले हा क्षेत्र महामत्स्यकी अवगाहनासे तीन गुणा लम्बा, चौड़ा होता है पुनः एक-
 एक प्रदेश बढ़ते हुए स्वयंभूरमण समुद्रके बाहर स्थण्डिलक्षेत्रमें रहनेवाला महामत्स्य सप्तम
 पृथ्वीके महारीरव नामक क्षणीबद्ध विलेकी ओर मारणान्तिक समुद्घात करता है तब पांच
 सौ योजन चौड़ा, अर्द्धाई सौ योजन ऊँचा तथा प्रथम मोडेमें एक राजू, दूसरेमें आधा राजू
 और तीसरेमें छह राजू लम्बा उत्कृष्टक्षेत्र होता है । उसके ऊपर केवलिसमुद्घातमें लोकपूरण २०

लोगस्त असंखेज्जदिमागप्पहुडिं तु सव्वलोगोत्ति ।

अप्पपदेसविसप्पणसंहारे वावदो जीवो ॥५८४॥

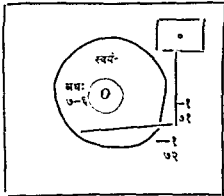
लोकस्यासंख्येयभागप्रभृतिस्तु सध्वंलोरुपप्यंतमात्मप्रवेशविसर्पणसंहारे व्याप्तो जीवः ॥

सूक्ष्मनिगोदलक्ष्यपर्याप्तजपण्यावगाहं मोवल्गोऽु महामत्स्यायगाहपर्यंतं प्रवेशोत्तरपृच्छि-

कमंगदप्पुयु ६६ ६००६१११११ वेदनापुत्तंगे एरुप्रवेशोत्तरपृच्छिक्रमविदं जपण्यविदं मेले ५
५०१०

नद्धुत्कृष्टं त्रिगुणितमक्कुं ६१११११३। मेले मत्ते मारणातिकसमुद्रपातजपण्यं मोवल्गोऽु

६११११३ पदेशोत्तरकमविदं नद्धुत्कृष्टंस्वयंभूरमणसमुद्रबहिस्थितस्यंङ्गिलक्षेप्रवेशोत्तिं महा-
मत्स्यसंघंषि सप्तमपृष्पिय महारौरवनामधेणीयद्वरं कुदत्तु मारणातिकसमुद्रपातबंडमुत्कृष्टमक्कुं
१५।४१ मो क्षेप्रकं संदृष्टिः—
१२



सूक्ष्मनिगोदलक्ष्यपर्याप्तजपण्यात्मप्रवेशोत्तरेषु महामत्स्यपर्यन्तेषु तदुपरि प्रवेशोत्तरेषु वेदनासमुद्रपातस्य त्रिगुणभासमहामत्स्यपर्यन्तेषु तदुपरि प्रवेशोत्तरेषु स्वयंभूरमणसमुद्रबाह्यस्थितस्यंङ्गिलक्षेप्रस्थितमहामत्स्येन सप्तम-
पृष्ठीमहारौरवनामधेणीयद्वरं प्रति मूलमारणान्तिकसमुद्रपातस्य पञ्चतयोजनवर्षांषिष्कभोस्तेषु काश्चपद्मरज्ज्वा-
यत्रप्रथमद्वितीयतृतीयचतुर्थकृष्टापर्यन्तेषु तदुपरिलोकपूरणपर्यन्तेषु च अवगाहनविकल्पेषु आर्यप्रदेशविसर्पणसंहारे

सूक्ष्मनिगोदिया लक्ष्यपर्याप्तकफी जघन्य अवगाहनासे लेकर एक-एक प्रवेश बदते-
बदते महामत्स्यपर्यन्तं उत्कृष्ट अवगाहना होती है। उससे ऊपर एक-एक प्रवेश बदते हुए वेदना १५
समुद्रपातवाले का क्षेत्र महामत्स्यकी अवगाहनासे तीन गुणा लम्बा, चौड़ा होता है पुनः एक-
एक प्रवेश बदते हुए स्वयंभूरमण समुद्रके बाहर स्थण्डिलक्षेत्रमें रहनेवाला महामत्स्य सप्तम
पृष्ठीके महारौरव नामक त्रेणीयद्वर विलेकी ओर मारणान्तिक समुद्रपात करता है तब पांच
सौ योजन चौड़ा, अर्द्धाई सौ योजन ऊँचा तथा प्रथम मोड़में एक राजू, दूसरेमें आधा राजू
और तीसरेमें छह राजू लम्बा उत्कृष्टक्षेत्र होता है। उसके ऊपर कैवलिसमुद्रपातमें लोकपूरण २०

विशतिभेदंगळपुत्रु । इल्लिगुपयोगिदलोकमिनु :-

“मूर्तिमत्सु पदार्थेषु संसारिण्यपि पुद्गलाः ।

अकर्मकर्मनो कर्मजातिभेदेषु वर्गणाः ॥” []

मूर्तिमंतंगळप पदार्थंगळोळं संसारिजीवनोळं पुद्गलशब्दं, अकर्मजातिगळोळं कर्म-
जातिगळोळं नोकर्मजातिगळोळं वर्गणं^२ यंब शब्दं वत्तिमुगुं । इल्लिगुपुवर्गणंगळ सुगमंगळ ।
संख्याताणुसमूह वर्गणंगळ द्वघणुक त्रघणुकं भोदलावसदश धनिकंगळ मेले मेलेकैक परमाणुविद-
धिकंगळ नडदु चरमबोळ संख्यातोत्कृष्टप्रमितपरमाणुस्कंधंगळ सदृशधनिकंगळ तद्योग्यंगळपुत्रु
उ १५ । १५ । १५ । असंख्यातवर्गणंगळोळ जघन्यवर्गणंगळ सदृशधनिकंगळ । परि-

५

० ३ । ३ । ३ । ३ । ३ । ३
ज २ । २ । २ । २ । २ । २
अणु १ । १ । १ । १ । १ । १

मितासंख्यातजघन्याराशिप्रमितपरमाणुस्कंधंगळपुत्रु । मेलेकैकपरमाणुचयक्रमदिवं पोगि चरमबोळ
द्विकवारासंख्यातोत्कृष्टराशिप्रमितपरमाणुगळ स्कंधंगळ सदृशधनिकंगळपुत्रु

१०

मूर्तिमत्सु पदार्थेषु संसारिण्यपि पुद्गलः ।

अकर्मकर्मनो कर्मजातिभेदेषु वर्गणाः ॥१॥

मूर्तिमत्सु पदार्थेषु संसारिजीवेषु च पुद्गलशब्दो वर्तते । अकर्मजातिषु कर्मजातिषु नोकर्मजातिषु च
वर्गणाद्यन्तो वर्तते । अणुवर्गणा (सुगमा) एकैकपरमाणुरूपा स्यात् १ । १ । १ । १ । १ । अणुवर्गणा ।
संख्याताणुवर्गणा द्वघणुकादयः एकैकाधिकाः, उत्कृष्टसंख्याताणुहरकन्धपर्यन्ताः—

१५

| | | | | |
|---|----|----|----|----|
| उ | १५ | १५ | ०० | १५ |
| | ० | ० | ० | |
| | ० | ० | ० | |
| म | ३ | ३ | ०० | ३ |
| ज | २ | २ | ०० | २ |

असंख्याताणुवर्गणा जघन्यपरिमितासंख्याताणुकादयः एकैकाधिका उत्कृष्टद्विकवारासंख्याताणुस्कन्ध-
पर्यन्ताः—

ह—पुद्गल शब्द मूर्तिमान् पदार्थोंका और संसारी जीवोंका वाचक है । और वर्गणाशब्द
अकर्मजातिके, कर्म जातिके और नोकर्मजातिके पुद्गलोंको कहता है ।

इनमेंसे अणुवर्गणा सुगम है । एक-एक परमाणुको अणुवर्गणा कहते हैं । अन्य दार्ष्ट
वर्गणाओंमें भेद है सो उनमें जघन्य और उत्कृष्ट भेद कहते हैं । द्वघणुसे लेकर एक-एक
परमाणु बढ़ते-बढ़ते उत्कृष्ट संख्यात परमाणुओंके स्कन्ध पर्यन्त संख्याताणुवर्गणा है । उसमें
जघन्य दो अणुओंका स्कन्ध है और उत्कृष्ट-उत्कृष्ट संख्यात अणुओंका स्कन्ध है । जघन्य
परिमितासंख्यात परमाणुओंसे लेकर एक-एक अणु बढ़ते-बढ़ते उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात
परमाणुओंके स्कन्ध पर्यन्त असंख्याताणुवर्गणा है । यहाँ जघन्य परीतासंख्यात परमाणुओंका
स्कन्ध है और उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात परमाणुओंका स्कन्ध है । संख्याताणुवर्गणा और
असंख्याताणुवर्गणांमें विवक्षितवर्गणाको लानेके लिए गुणकार नीचेकी वर्गणासे विवक्षित-

२०

२५

१. म पुद्गलंगळ । २. म णेगलेनुवपुत्रु ।

पुबुत्कृष्टं । तज्जघन्यान्तैकभागदि विशेषाधिकमक्कुं उ २५६ ख ख मेलपऽप्राह्ववर्गंगेगळोळु
आ ०

ज २५६ ख

जघन्यमेकपरमाणुविदमधिकमक्कुं । तदुत्कृष्टं जघन्यमं नोडलनंतगुणितमक्कुः :-

उ २५६ ख १ ख ख तदनंतरोपरितनतेजःशरीरवर्गंगेगळोळु जघन्यवांगणे एकपरमाणु-
अप्रा ० ख

ख

ज २५६ ख १ ख

विदधिकमक्कुं तदुत्कृष्टं तदनंतैकभागदिदं विशेषाधिकमक्कुं उ २५६ ख १ ख १ ख ख
तेज ० ख ख

अथ २५६ ख १ ख १ ख
ख

तनमनन्तवर्गणाजघन्यमेकाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽनन्तगुणं उ २५६ ख तदनन्तरोपरितनाहारवर्गणाजघन्य- ५

०
०
ज २५६

मेकाणुनाधिकं तदुत्कृष्टं तदनन्तैकभागेनाधिकं उ २५६ ख ख तदनन्तरोपरितनाप्राह्ववर्गणाजघन्यमेकाणु-

० ख
आहा ०
ज २५६ ख

माधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽनन्तगुणं— उ २५६ ख १ ख ख तदनन्तरोपरितनतेजःशरीरवर्गणाजघन्यमेकाणुनाधिकं

० ख
अगेउद ०
ज २५६ ख १ ख
ख

उत्कृष्ट होता है । उत्कृष्ट आहारवर्गणामें एक परमाणु अधिक होनेपर उससे ऊपरकी अमाह-
वर्गणाका जघन्य होता है । उसमें सिद्धराशिके अनन्तवें भागसे भाग देकर जो लब्ध आवे उसे
उसीमें मिला देनेपर अमाहवर्गणाका उत्कृष्ट होता है । इसमें एक परमाणु अधिक होनेपर उससे

तवनन्तरोपरितनसातरनिरन्तरवर्गभोग्यञ्च जघन्यमेकरुपरमाणुविरधिकमन्त्रं । तदुत्कृष्ट तदजघन्यमं
नोऽनन्ततत्रोपरारिगुणितमन्त्रकुमदवक्त्रे संदृष्टिः—

उ २५६ स १ स स स स स १ स स स १६ स १६ स
सांतर नि ० स स स स स

ज २५६ स १ स स १ स स स १ स १ स स स १६ स
स स स स स

इति विशेषं देवत्वद्वयं । परमाणुवर्गभे मोदलो'ष्ट ई सांतरनिरन्तरवर्गभोग्यञ्च उत्कृष्टवर्गभे
पर्यन्तं पदिनेतुं वर्गभोग्यञ्च सदुत्पन्निकवर्गभोग्यञ्च अनन्तपुद्गलवर्गमूलमात्रंग्यञ्चपुत्रु । पु=मुद्यत्ता-
गुत्तं विशेषहीनमन्त्रस्युपपत्ति प्रतिभागहारं सिद्धान्तैकरुभागपन्त्रमे'बिबु तवनन्तरोपरितनस्यु- ५
वर्गभोग्यञ्चोऽत्र जघन्यमेकरुपाधिकमन्त्रमुत्कृष्टमन्ततजीवराशि गुणितमन्त्रं :—

उ २५६ स १ स १ स १ स स स स स १ स स १६ स १६ स १६ स
स्यु ० स स स स स

ज २५६ स १ स स स १ स स १ स स १ स स १ १६ स १६ स
स स स स स

यिन्नु पदिनावं वर्गभोग्यञ्चैकरुकारदिवं सिद्धान्तस्युपु ।

तदनन्तरोपरितनसान्तरनिरन्तरवर्गनाजघन्यमेकागुनाधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽनन्तजीवराशिगुणं—

उ २५६ स १ स १ स १ स १ स १ स १ स १ स १ स १६ स १६ स
सान्तर ० स स स स स

निरन्तर ०

ज २५६ स १ स १ स १ स १ स १ स १ स १ स १ स १६ स
स स स स स

अथर्व विधेयः—परमाणुवर्गनादि इत्या सान्तरनिरन्तरवर्गनापर्यन्तं पञ्चदशवर्गनात् सदुत्पन्निकानि
अनन्तपुत्रुद्वयवर्गमूलमात्राभ्यदि विधेयहीनरुमानि भवन्ति । तत्र प्रतिभागहारः सिद्धान्तैकरुभागः । १०
तदनन्तरोपरितनस्युवर्गनाजघन्यं एकरुपाधिकं तदुत्कृष्टं ततोऽनन्तजीवराशिगुणं—

जघन्य है । उससे अनन्तजीवराशिसे गुणा करनेपर उसका उत्कृष्ट होता है । उससे एक
परमाणु अधिक उससे ऊपरकी सान्तरनिरन्तरवर्गनाका जघन्य है । उससे अनन्तजीवराशिसे
गुणा करनेपर उसका उत्कृष्ट होता है । यहाँ इतना विशेष है कि परमाणुवर्गनासे लेकर
सान्तरनिरन्तरवर्गना पर्यन्त पन्द्रह वर्गनाओंका समानधन अनन्तगुणे पुद्गल्लोके वर्गमूल १५
प्रमाण होनेपर भी क्रमसे विशेषहीन है । उनका प्रतिभागहार सिद्धराशिका अनन्तवा
भाग है ।

पर्याप्ततेजस्कायिकजीव्यगच्छेकबंधनवद्वंगळसंस्थातावलिवर्गप्रमितंगळवरोळु गुणितकर्मशागळप्य जीवंगळु यवि मुष्टु बहुकंगळप्युवाबोडभावत्यसंस्थातैकभागप्रमितंगळेयप्युज्जिदबेह्लम गुणित- कर्मांशंगळेयप्युवा गुणितकर्मांशंगळेकबंधनवद्वंगळु यादरपर्याप्ततेजस्कायिकंगळ सविस्तसोपचय- त्रिशरीरसंचयं औदारिकतैजसकाम्मंशरीरसंचयं प्रत्येकदेहोत्कृष्टवर्गोपचयः—

उ स ३२ ० ० ल स १२ १६ ल ८

ई प्रत्येकशरीरोत्कृष्टवर्गोपचये रूपाधिकमावोडे ५

ज स ० ० ल १२-१६ ल ३

ध्रुवभूयवर्गोपचयः जघन्यवर्गोपचयः

आवनोर्ध्वं क्षपितकर्मांशलक्षणदिवं यदु पूर्वकोटिवर्षाण्युमंनुप्यनागि पुष्टि गर्भाच्छष्टवर्ष- मंतम्भूर्हृत्साधिकंगळमेले सम्यक्त्वमुमं संयममुमं युगपत्कैकोडु कर्मंबकुत्कृष्टगुणश्रेणिनिर्जरांरं देगोनपूर्वकोटिवर्षपरं माडियंतम्भूर्हृत्साधिकंगळमेले सिद्धितव्यनेदितु क्षपकथेणियनेरिदोनुत्कृष्टकर्म- निज्जरेयं क्रियमाणं क्षीणकयायानादोनातंगे शरीरवोळु जघन्यदिवमुत्कृष्टदिवमुमेकबंधनवद्वंगळप्य वेपु गुणितकर्मांशः मुष्टु बहुत्वेऽपि आवल्पसंस्थातैकभागमात्राः ८ तेषा सविस्तसोपचयत्रिशरीरसंचयस्तदुत्कृष्ट-

भवति— उ

स ३२ ० ० ल स १२- १६ ल ८

इदमेव रूपाधिकं ध्रुवभूयवर्गमात्रपन्थं

पत्तयशरीर

ज स ० ० ल स १२- १६ ल ३

भवति । कश्चित् क्षपितकर्मांशलक्षणो जीवः पूर्वकोटिवर्षाण्युः मनुष्यो भूत्वा अन्तर्मुहूर्ताधिकगर्भाच्छष्टवर्षपरि सम्पत्त्वसंयमौ युगपत् स्वीकृत्य कर्मणामुत्कृष्टगुणश्रेणिनिर्जरां देगोनपूर्वकोटिवर्षपर्यन्तं कुर्वन् अन्तर्मुहूर्तं सिद्धितव्यमास्ते तथा क्षपकथेष्पारूढः उत्कृष्टकर्मनिर्जरां कुर्वन् क्षीणकयापो जातः, तच्छरीरे जघन्येन उत्कृष्टेन

१५

आवलीके वर्गं प्रमाण यादर पर्याप्त तैजस्कायिक जीवोंके शरीरोंका एक स्कन्ध रूप हैं । उनमें गुणित कर्मांश जीव बहुत अधिक होनेपर भी आवलीके असंख्यातवर्षे भागमात्र हैं । उनका औदारिक तैजस कार्मणशरीरोंका विस्तसोपचयसहित उत्कृष्ट संचय उत्कृष्ट प्रत्येक शरीरवर्गणा है । उसमें एक परमाणु अधिक होनेपर जघन्य ध्रुवभूयवर्गणा होती है । इस जघन्यको सब मिथ्यावृष्टि जीवोंके प्रमाणको असंख्यात लोकसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे २० उससे गुणा करनेपर उत्कृष्ट भेद होता है । उससे एक परमाणु अधिक यादरनिगोद वर्गणा है । यादर निगोद्वर्गणा जीवोंके विस्तसोपचय सहित कर्म-नोकर्म परमाणुओंके एक स्कन्धको कोई जीव एक पूर्वकोटि वर्षकी आयुवाला मनुष्य हुआ । अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षके ऊपर सम्यक्त्व और संयमको एक साथ धारण करके कुछ कम पूर्व कोटिवर्ष पर्यन्त कर्मांश २५ उत्कृष्ट गुणश्रेणि निर्जरा करते हुए जब सिद्ध पद प्राप्त करनेमें अन्तर्मुहूर्तकाल जोर रहा तब

एकचंपनबद्धावत्यंतरंयातैरुभागमात्रपुत्रविगजोद्धिस्तिर्दं
सविप्रसोपचयनिगरोरसंचयनं कौटुं धिरलरकु
मूधमनिगोर

दापितकर्मांगानंतानंतमूधमनिगोरंगळ

उ त ० ० ० ० ० ० १२- १६ ० १३।८३१।३।८-८२०
१.३० ५- ००

उ त ० ० ० ० ० ० १२- १६ ० १३-८००८२० इतिलोपकनिर्देवं बाबरनिगोरौट्ट-
१.३० ५- ००

नृतीमन्यवर्गं धेधसंस्वेयभागमात्रंगळ जपन्यमूधमनिगोरवर्गंगेयोळ पुत्रविगज्ज् आयत्य-
वर्गंगेयोळ पुत्रविगज्ज् धेधसंस्वेयभागमात्रंगळ जपन्यमूधमनिगोरवर्गंगेयोळ पुत्रविगज्ज् आयत्य-
१.३० ५- ००

तंस्वातैरुभागमात्रंगळनुकालेनमागिपुत्रुट्टाबाबरनिगोरवर्गंगेयोळ कौटुं मूधमनिगोरजपन्यवर्गंगेया-
गलेयेळकुर्मं देने बोहिदु बोपमत्तेके बोहे बाबरनिगोरवर्गंगेयाळ निगोरदारोरंगळ नोडनु मूधम-
निगोरवर्गंगेयातोरंगळगे मूधंगुलांतरंयातैरुभागमात्रंगुपकारोपसंभमपुत्रविरिदं । मूधमनिगो-
१.३० ५- ००

उने स्वते आकाये वा एकरन्यनबद्धावत्यंतरंयातैरुभागमात्रंगु विधुतातं धनितकर्मांगानन्तमूधम-
निगोरौट्टां धनितकर्मांगानन्तमूधमनिगोरौट्टां धनितकर्मांगानन्तमूधमनिगोरौट्टां धनितकर्मांगानन्तमूधम-
१.३० ५- ००

उ त ० ० ० ० ० ० १२- १६ ० १३-८३०२८० इतमेरुकोना नृतीमन्यवर्गंगेयोळ-
१.३० ५- ००

उ त ० ० ० ० ० ० १२- १६ ० १३-८३०२८० ननु बाबरनिगोरवर्गंगेयोळ-
१.३० ५- ००

वह कृच्छ्र बाबरनिगोदवर्गंगा हे । उसमें एक परमाणु अधिक होनेपर तीसरी मूल्यवर्गंगा-
का जपन्य होता है । वह फेले है सो कहते हैं—जल-थल अथवा आकाशमें एकपन्धनवद्ध १५
आवळोंके अर्धक्यावर्धे भाग पुत्रवियोंमें दापितकर्मांग अनन्तानन्त मूधमनिगोद जीव रहते
हैं उनके विप्रसोपचय सहित औदारिक तेजस कामणदारीरका संचय मूधमनिगोद जपन्य
वर्गंगा हे । उसमें एक परमाणु हीन करनेपर तीसरी मूल्यवर्गंगाका कृच्छ्र होता है ।
चंका—बाबरनिगोदवर्गंगाके जपन्यमें आवळीके अर्धक्यावर्धे भाग फही हैं
और मूधमनिगोदवर्गंगाके जपन्यमें आवळीके अर्धक्यावर्धे भाग फही हैं । अतः बाबरनिगोद २०
वर्गंगासे पहले मूधमनिगोदवर्गंगा हीनी चाहिए । क्योंकि पुत्रवियोंका प्रमाण बहुत होनेसे
परमाणुओंका प्रमाण बहुत होना सम्भव है ।
१. न बोधक ।



तन्महास्फोटकृष्टवर्गभोग्यवकुर्मेवुदत्यं ।

संखेज्जासंखेजे गुणगारो सो दु होदि हु अणंते ।
चचारि अगेज्जेसु वि सिद्धानमणंतिमो भागो ॥५९८॥

संख्यातासंख्यातयोर्ध्वर्गणयोगुंणकारी तो तु भवतः एतु अनंते । चतुर्ध्वप्राह्येव्यवि
सिद्धानामनंतैरुभागः ॥

संख्यातवर्गभोग्योऽं असंख्यातवर्गभोग्योऽं तंतम्मुकृष्टवर्गणानिमित्तमागि गुणकारं यया-
संख्यमागि तु मत्ते तो आ संख्यातमुमसंख्यातमु भवतः अप्पुपु । अवेतेंदोऽं संख्यातवर्गणा-
अध्वरादिननुकृष्टसंख्याताऽंदिदं गुणिसिदोऽं संख्यातकृष्टवर्गभोग्यवकु २१५ अपवत्तितमिदु

१५ । असंख्यातवर्गणानुध्वरादियं परिमितासंख्यातजपन्यमं तद्रागिबिभक्तविकवारासंख्यातो-
कृष्टरागिपिबं गुणिसुत्तिरलु तदुकृष्टवर्गभोग्यवकु १६।२५५ मपवत्तितमिदु २५५ । अनंतदोऽंम- १०

प्राह्यचतुष्टयवोऽं तदुकृष्टवर्गणानिमित्तं गुणकारं सिद्धानंतैरुभागमाप्रमक्कुना गुणकारविबं
तंतम् अध्वरावर्गभोग्यं गुणिसुत्तिरलु तंतम्मुकृष्टवर्गभोग्यवकु १६

जीवादोणंतगुणो धुवादिदिण्हं असंखभागो दु ।
पन्लस्स तदो तचो असंखलोगवहिदो मिच्छो ॥५९९॥

जीवादनंतगुणो ध्रुवादितिसृणां असंख्यातभागस्तु पत्यस्य ततस्ततोऽसंखलोकापहृत- १५
मिध्यादुष्टिः ॥

संभभागः ॥५९७॥

दु-गुनः संख्यातासंख्यातवर्गभोग्योस्तुष्टार्यं स्वस्वजपन्यस्य गुणकारः स संख्यातवर्गणायां स्वजपन्यमक्त-

सोत्कृष्टमानसंख्यातः १५ असंख्यातवर्गणायां स्वजपन्यमक्तसोत्कृष्टमानासंख्यातो भवति २५५ ताम्यां १६
स्वजपन्यं गुणयित्वा २ । १५ । १६ । २५५ अपवति १५ । २५५ एतु कृष्टं तयोस्तुष्टे ह्याताम् इत्यर्थः । २०

अनन्तवर्गणायां अप्राह्यवर्गणावकुके च उत्कृष्टार्यं गुणकारः सिद्धानंतैरुभागः ॥५९८॥

जपन्यमें मिलानेपर अपना-अपना उत्कृष्ट होवा है । अन्तिम महास्कन्धका उत्कृष्ट लानेके
लिए भागहार पत्यका असंख्यातवर्षा भाग है ॥५९७॥
संख्याताणुवर्गणा और असंख्याताणुवर्गणामें अपने-अपने उत्कृष्टमें अपने-अपने
जपन्यसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उवना ही गुणकार होवा है । उनसे अपने-अपने
जपन्यको गुणा करनेपर अपना-अपना उत्कृष्ट होवा है । अनन्ताणुवर्गणा और चार अप्राह्य- २५
वर्गणामें उत्कृष्ट लानेके लिए गुणकार सिद्धराशिका अनन्तवर्षा भाग है ॥५९८॥

आ गुणकारंगच्छिदं तंतम्म जघन्यवर्गण्यं गुणिसिबोडे तंतम्मुक्तवर्गण्येगळ्प्युवेबुदव्यं-
मयरोळ् शून्यवर्गण्येगळ् सूच्यंगुलासंख्यातगुणकारमे तं बोडे :-सूक्ष्मनिगोदजघन्यवर्गण्येगळ्
सूच्यंगुलासंख्यातं तद्वर्गण्येगळ्करूपहोनिमाणि शून्यवर्गण्येगळ्प्युदरिना गुणकारं
तज्जघन्यबोडिल्लपुदरिं सूक्ष्मनिगोदवर्गण्येगळ् पल्यासंख्यातगुणकारमे तं बोडे गुणितकर्मांश-
जोडप्रतिप्रदसमयप्रतिप्रदमृच्छुष्टयोगाजितमपुदरिं पल्पच्छेदासंख्यातेकभागं गुणकारमपुदरिं । ५

इतु प्रयोविशतिवर्गण्येगळ्कथंभ्याधिंतंगळ् पेळ्पट्टुविन्नु नानाश्रेणियनाश्रयिसि पेळ्प-
ट्टुपुदरिं तं बोडे :-परमाणुवर्गण्ये मोदलोड् सांतरनिरंतरवर्गण्येगळ्प्युदरिं वासानमाद वर्गण्ये-
गळ् सद्भाषनिकवर्गण्येगळ् अनंतपुद्गलवर्गमूलमात्रंगळ्गुतलं मेले मेले विशेषहोनिंगळ्प्युदरिं
प्रतिभागहारं सिद्धान्तैकभागयुक्तं । प्रत्येकदेहजघन्यसद्भाषनिकंगळ् वर्तमानकालबोड् क्षपितकर्मां-
शलशाषिदं यंदयोगिचरमसमयबोड् नाल्केयपुवु । ४ । पुद्गलवर्गण्येगळ् वर्तमानकालबोड् १०
एतितु संभविमुगुमें बोडे स्वयंभूरमण्डीपदकाळिकुचु मोदलावबोड् आवल्यसंख्यातेकभाग-
मात्रंगळ् संभविमुवु । बादरनिगोदजघन्यवर्गण्येगळ् वर्तमानकालबोडेनितु संभविमुगुमें बोडे
शीगकपायचरमसमयबोड् नाल्केयपुवु । तदुक्तवर्गण्येगळ् महामत्स्यादिगळ् आवल्य-

सति षडुक्तवर्गण्ये । सूक्ष्मनिगोदवर्गण्ये पल्यासंख्यातगुणकारोऽपि तसमयप्रवदाना गुणितकर्मांशजोडप्रति-
बद्धत्वान् । एवं त्रयोविशतिवर्गणा एकधेयाधिताः कथिताः । इदानीं नानाश्रेणोराधित्योच्यन्ते-तद्यथा- १५
परमाणुवर्गणातः सांतरनिरन्तरोक्तवर्गण्येगळ् सद्भाषनिकानि अनन्तपुद्गलवर्गमूलमात्राण्यपि उपर्युपरि
विशेषहोनिानि भवन्ति । तत्र प्रतिभागहारः सिद्धान्तैकभागः । प्रत्येकदेहजघन्यसद्भाषनिकानि वर्तमानकाले
क्षपितकर्मांशलशाषेनाश्रय जयोगिचरमसमये चत्वारि । उक्तवर्गण्ये स्वयंभूरमण्डीपस्य दावानलादिषु आवल्य-
संख्यातेकभागमात्राणि बादरनिगोदवर्गण्येगळ् वर्तमानकाले शीगकपायचरमसमये चत्वारि तदुक्तवर्गण्ये

असंख्यातर्वा भाग और जगत्प्रवरका असंख्यातर्वा भाग होता है, यहाँ जो शून्यवर्गण्ये २०
सूच्यंगुलेके असंख्यातर्वे भाग गुणकार कहा है उसका कारण यह है कि सूक्ष्मनिगोदवर्गण्येके
जघन्यमें एक घटानेपर शून्यवर्गण्येका उत्कृष्ट होता है । सूक्ष्मनिगोद वर्गण्येमें गुणकार
पल्पके असंख्यातर्वे भाग कहा है सो उसके समयप्रवद्ध गुणित कर्मांश जीधसे सन्बद्ध होनेसे
कहा है । इस प्रकार एक श्रेणि रूपसे तेईस वर्गण्ये कहीं । अब नाना श्रेणियोंको लेकर
कहते हैं— २५

अर्थात् जो ये वर्गणा कही है वे लोकमें वर्तमान कोई एक कालमें कितनी-कितनी
पायी जाती हैं, यह कहते हैं—परमाणुवर्गण्येसे लेकर सान्तरनिरन्तरवर्गणा पर्यन्त पन्द्रह
वर्गण्ये समानधनवाली है । ये पुद्गल द्रव्यराशिके वर्गमूलको अनन्तसे गुणा करनेपर जो
प्रमाण हो उतनी-उतनी लोकमें पायी जाती हैं किन्तु आगे-आगे कुछ-कुछ कम होती जाती हैं ।
इनमें प्रति भागहार सिद्धराशिका अनन्तर्वा भाग है अर्थात् जितनी अणुवर्गण्ये हैं उनमें ३०
सिद्धराशिके अनन्तर्वा भागसे भाग देनेपर जो प्रमाण आये उतना अणुवर्गण्येके परिमाणमें
घटानेपर जो प्रमाण शेष है उतनी संख्यावाणुवर्गणा जगत्में होती हैं । इसी प्रकार आगे
जानना । किन्तु सामान्यसे प्रत्येक पृथक्-पृथक् वर्गण्येका प्रमाण अनन्त पुद्गल राशिका
वर्गमूल मात्र है । प्रत्येक शरीरवर्गण्येका जघन्य वर्तमानकालमें क्षपितकर्मांशरूपसे आकर
अयोगकेवलीके अन्त समयमें पाया जाता है सो उत्कृष्टसे चार है । उत्कृष्ट प्रत्येक शरीरवर्गणा ३५

मागि । ई त्रयोविंशतिवर्गणैर्गण्योऽत्र प्रत्येकवर्गणेषु बादरनिगोदवर्गणेषु सूदमनिगोदवर्गणेषु-
 मंबो मूकं वर्गणैर्गण्योऽत्र सच्चित्तवर्गणैर्गण्योऽत्र अयोगिचरमसमययोऽत्र प्रथमप्रत्येकशरीरवर्गणैर्गण्योऽत्र
 जघन्यवर्गणाद्रव्यं स्यादस्ति स्यान्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं मेणु उत्कृष्टादिवं
 चतुष्टयमवकं द्वितीयवर्गणैर्गण्योऽत्र द्वयं स्यादस्ति स्यान्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा
 उत्कृष्टेन चत्वारि भवति इतवस्थितकर्मविदमनंतवर्गणैर्गण्योऽत्र सलुत्तविरलु बळिष्कालि मेले
 आयुवो दनंतरवर्गणैर्गण्योऽत्र वर्गणैर्गण्योऽत्र द्वयं स्यादस्ति स्यान्नास्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा
 त्रयं वा उत्कृष्टेन पंच भवति सहस्राधनिकानि । इतवस्थितकर्मविदमनंतवर्गणैर्गण्योऽत्र सलुत्तं विरलु
 बळिष्कमायुवो दनंतरवर्गणैर्गण्योऽत्र वर्गणैर्गण्योऽत्र कर्षचिदुं कर्षचिदिल्ल येत्तलानुमुटक्कुमप्योडा-
 गन्तु एकं मेणु द्वयं मेणु त्रयं मेणु उत्कृष्टादिवं सहस्राधनिकं गन्तु पञ्जोयंगळप्युवो क्रमदिवं समाष्ट-
 सप्तपदपंचचतुस्त्रिद्विसदुधाधनिकवर्गणैर्गण्योऽत्र संभविमुवयु । ई यभिप्रायव मध्यप्ररूपणे भव्यसिद्ध-
 प्रायोग्यस्यानंगण्योऽत्र गृहीतव्यमवकु- । मल्लिबं मेले यायुवोदनंतरवर्गणैर्गण्योऽत्र संसारिजीवप्रायोग्य-
 वर्गणैर्गण्योऽत्र वर्गणैर्गण्योऽत्र कर्षचिदुं कर्षचिदिल्ल एत्तलानुमुटक्कुमप्योडागन्तु एकं मेणु द्वयं

५

१०

एलु स्फुटम् । तामु प्रत्येकबादरनिगोदसूदमनिगोदवर्गणाः तिस्रः सचिप्ताः । तत्र अयोगिचरमसमये प्रत्येकशरीर-
 वर्गणं स्यादस्ति स्यान्नास्ति ? यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन चत्वारि । तथा तद्वितीय-
 वर्गणाद्रव्यं स्यादस्ति स्यान्नास्ति । यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन चत्वारि इत्यवस्थितक्रमेणा-
 नन्तवर्गणा अतीत्य अनन्तरवर्गणाद्रव्यं स्यादस्ति स्यान्नास्ति । यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन
 पञ्च इत्यवस्थितक्रमेण अनन्तवर्गणा अतीत्य अनन्तरवर्गणाद्रव्यं कषश्चिदस्ति कषश्चिदस्ति । यद्यस्ति तदा
 एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन पद अनेन क्रमेण सप्ताष्ट सप्तपद पञ्चचतुस्त्रिद्विसदुधाधनिकानि भवन्ति ।
 इयं यवमध्यप्ररूपणा भव्यसिद्धप्रायोग्यस्थानेषु प्राह्या । अनन्तरवर्गणा सा संसारिजीवप्रायोग्या तद् द्वयं
 कषश्चिदस्ति कषश्चिदस्ति यद्यस्ति तदा एकं वा द्वयं वा त्रयं वा उत्कृष्टेन आवत्यवस्थातैकभागः इत्यवस्थित-

१५

२०

वर्गणाके भेद लिये हुए पुद्गल द्रव्योंका कथन किया है । उनमें प्रत्येक शरीर, बादरनिगोद
 और ये तीन वर्गणा सचिच हैं । उनका विशेष कहते हैं—उनमेंसे अयोगकेबलीके अन्तिम
 समयमें पायी जानेवाली जघन्य प्रत्येक शरीरवर्गणा लोकमें होती भी है और नहीं भी होती ।
 यदि होती है तो एक या दो या तीन या उत्कृष्टसे चार तक होती हैं । उस जघन्य वर्गणासे
 एक परमाणु अधिक द्वितीय प्रत्येक शरीरवर्गणा होती भी है और नहीं भी होती । यदि होती
 है तो एक या दो या तीन या उत्कृष्टसे चार होती हैं । इसी अवस्थित क्रमसे एक-एक परमाणु
 बढ़ाते-बढ़ाते अनन्त वर्गणाओंके होनेपर उसके अनन्तर एक परमाणु अधिक वर्गणा लोकमें
 होती भी है और नहीं भी होती । यदि है तब एक या दो या तीन या उत्कृष्टसे पाँच होती
 हैं । इसी अवस्थित क्रमसे एक-एक परमाणु बढ़ाते-बढ़ाते अनन्त वर्गणाएँ वीतनेपर पुनः
 एक परमाणु अधिक वर्गणा होती भी है और नहीं भी होती । यदि है तब एक या दो या
 तीन वा उत्कृष्टसे छह होती हैं । इसी क्रमसे अनन्तवर्गणा पर्यन्त उत्कृष्ट सात, आठ, सात,
 छह, पाँच, चार, तीन-दो वर्गणा लोकमें समान परमाणुओंके परिमाणको लिये हुए होती हैं ।
 यह यवमध्यप्ररूपणा मोक्ष जानेवाले भव्य जीवोंके योग्य स्थानोंमें प्रहण करनेके योग्य है ।
 अथ जो अनन्तरवर्गणा संसारि जीवोंके योग्य हैं उसे कहते हैं । पूर्वमें कही प्रत्येक

२५

३०

वादरवादरवादर वादरसुह्रुमं च सुह्रुमधूलं च ।

सुह्रुमं च सुह्रुमसुह्रुमं धरादिप्यं ह्येदि छन्देभ्यं ॥६०३॥

वादरवादरं वादरसूक्ष्मं च सूक्ष्मसूपूलं च । सूक्ष्मं च सूक्ष्मसूक्ष्मं पराविकं भवति पदभेवं ॥
पृथ्वीरूपपुद्गलद्रव्यमं वादरवादरमं बुधु । छेदिसत्कं भेदिसत्कं अन्यत्रमोष्वेवं शक्यमपुद्गु
वादरवादरमं बुदत्यं । जलमं वादरमं बुधु । आयुदोदु छेदिसत्कं भेदिसत्कं अशक्यमन्यत्रमोष्वे
शक्यमपुद्गु वादरमं बुदत्यं । छायेयं वादरसूक्ष्ममं बुधु । आयुदोदु छेदिसत्कं भेदिसत्कदुमन्यत्रमोष्वे
शक्यमपुद्गु वादरसूक्ष्ममं बुदत्यं । आयुदोदु चक्षुरिन्द्रियरहितशेषचतुरिन्द्रियविषयमप्य बाह्यात्यंमदं
सूक्ष्मसूपूलमं बुधु । कर्ममं सूक्ष्ममं बुधु । आयुदोदु द्रव्यं देशावधिपरमावधिविषयमपुद्गु सूक्ष्ममं बुदत्यं ।
परमाणुवं सूक्ष्मसूक्ष्ममं बुधु । आयुदोदु पुद्गलद्रव्यमपुद्गु सत्त्वावधिविषयमेवावोडे सूक्ष्मसूक्ष्ममं-
बुदत्यं ।

खंधं सयलसमत्थं तस्स य अद्धं भणंति देसो चि ।

अद्धद्धं च पदेसो अविभागी चेव परमाणु ॥६०४॥

स्कंधं सकलसमत्थं तस्य चाद्धं भणंति देश इति । अद्धाद्धं च प्रदेशः अविभागी चेव
परमाणुः ॥

स्कंधमं बुधु सत्त्वांशगच्छिवं संपूर्णमस्कुमदरद्धंमं देशमेदितु पेञ्चरह । अद्धंस्थाद्धंमद्धाद्धंमदं
प्रदेशमं बुधु पेञ्चरह । अविभागियणुर्दारवं परमाणुवेदु पेञ्चरह गणधरादिपरमाणुमज्ञानिगळु । इंतु
स्थानस्वरूपाधिकारंतिदुद्धु ।

पृथ्वीरूपपुद्गलद्रव्यं वादरवादरं छेतु भेतु अन्यत्र नेतुं शक्यं तद्वादरवादरमित्यर्थः । जलं वादरं,
पच्छेतुं भेतुमशक्यं, अन्यत्र नेतुं शक्यं तद्वादरमित्यर्थः । छाया वादरसूक्ष्मं यच्छेतुं भेतुमन्यत्र नेतुमशक्यं
तद्वादरसूक्ष्ममित्यर्थः । यः चक्षुरावितचतुरिन्द्रियविषयो बाह्यार्थः तत्सूक्ष्मसूपूलम् । कर्म सूक्ष्मं, यद्द्रव्यं देशा-
वधिपरमावधिविषयं तत्सूक्ष्ममित्यर्थः । परमाणुसूक्ष्मसूक्ष्मं तत्सत्त्वावधिविषयं तत्सूक्ष्मसूक्ष्ममित्यर्थः ॥६०३॥

स्कन्धं सर्वांशसंपूर्णं भणन्ति तदर्थं च देशं, अर्थस्थाधं प्रदेशं अविभागिमूर्तं परमाणुम् ॥६०४॥ इति
स्थानस्वरूपाधिकारः ।

पृथ्वीरूप पुद्गल द्रव्य वादर-वादर है । जिसका छेदन-भेदन किया जा सके, जिसे
एक स्थानसे दूसरे स्थानपर ले जाया जा सके वह वादर-वादर है । जिसका छेदन-भेदन
तो न हो सके किन्तु अन्यत्र ले जाया जा सके वह वादर है । छाया वादरसूक्ष्म है । जो
छेदन-भेदन और अन्यत्र ले जानेमें अशक्य हो वह वादर सूक्ष्म है । जो चक्षुको छोड़ शेष
चार इन्द्रियोंका विषय बाह्य पदार्थ है वह सूक्ष्म स्थूल है । कर्मस्कन्ध सूक्ष्म है । जो द्रव्य
देशावधि और परमावधिज्ञानका विषय होता है वह सूक्ष्म है । परमाणु सूक्ष्मसूक्ष्म है ।
जो सर्वावधिज्ञानका विषय है वह सूक्ष्मसूक्ष्म है ॥६०३॥

जो सब अंशोंसे पूर्ण हो उसे स्कन्ध कहते हैं । उसके आघेको देश कहते हैं । और
आघेके आघेको प्रदेश कहते हैं । जिसका विभाग न हो सके वह परमाणु है ॥६०४॥

स्थानाधिकार समाप्त हुआ ।

वादरवादरवादर वादरसुहुमं च सुहुमधूलं च ।

सुहुमं च सुहुमसुहुमं धरादियं होदि छन्मेयं ॥६०३॥

वादरवादरं वादरसूक्ष्मं च सूक्ष्मस्थूलं च । सूक्ष्मं च सूक्ष्मसूक्ष्मं धरादिकं भवति पद्भेदं ॥
पृथ्वीरूपपुद्गलद्रव्यमं वादरवादरमे बुद्धु । छेदिसत्कं भेदिसत्कं अन्यत्रमोष्येडं शक्यमप्युद्गु
वादरवादरमे बुद्धत्वं । जलमं वादरमे बुद्धु । आवुदोदु छेदिसत्कं भेदिसत्कं अशक्यमन्यत्रमोष्येडं
शक्यमप्युद्गु वादरमे बुद्धत्वं । छायेयं वादरसूक्ष्ममे बुद्धु । आवुदोदु छेदिसत्कं भेदिसत्कदुमन्यत्रमोष्येड-
शक्यमप्युद्गु वादरसूक्ष्ममे बुद्धत्वं । आवुदोदु चक्षुरिन्द्रियरहितज्ञेयचतुरिन्द्रियविषयमप्य वाहात्यंमदं
सूक्ष्मस्थूलमे बुद्धु । कर्ममं सूक्ष्ममे बुद्धु । आवुदोदु द्रव्यं देशावधिपरमावधि विषयमप्युद्गु सूक्ष्ममे बुद्धत्वं ।
परमाणुवं सूक्ष्मसूक्ष्ममे बुद्धु । आवुदोदु पुद्गलद्रव्यमप्युद्गु सर्वावधि विषयमेवावोडे सूक्ष्मसूक्ष्ममे-
बुद्धत्वं ।

खुंधं सयलसमत्वं तस्स य अद्दं भणंति देसो चि ।

अद्ददं च पदेसो अविभागी चैव परमाणु ॥६०४॥

स्कंधं सकलसमत्वं तस्य चादं भणंति देश इति । अर्द्धादं च प्रदेशः अविभागी चैव
परमाणुः ॥

स्कंधमे बुद्धु सर्वशांशांशद्वयं संपूर्णमक्कुमदरदं देशमे वितु पेळ्वर । अर्द्धस्यार्द्धमर्द्धादंमदं
प्रदेशमे बुद्धु पेळ्वर । अविभागीयप्युद्धारवं परमाणुवे बुद्धु पेळ्वर गणधरादिपरमाणुमज्ञानिगळु । इंतु
स्थानत्वरूपाधिकारंतिदुद्धु ।

पृथ्वीरूपपुद्गलद्रव्यं वादरवादरं छेत्तु भेत्तु अन्यत्र नेत्तु शक्यं तद्वादरवादरमित्यर्थः । जलं वादरं,
यच्छेत्तु भेत्तुमशक्यं, अन्यत्र नेत्तु शक्यं तद्वादरमित्यर्थः । छाया वादरसूक्ष्मं यच्छेत्तु भेत्तुमन्यत्र नेत्तुमशक्यं
तद्वादरसूक्ष्ममित्यर्थः । यः चक्षुर्वजितचतुरिन्द्रियविषयो बाह्यायः तत्सूक्ष्मस्थूलम् । कर्म सूक्ष्मं, यद्द्रव्यं देशा-
वधिपरमावधि विषयं तत्सूक्ष्ममित्यर्थः । परमाणुमूदमसूक्ष्मं तत्सर्वावधि विषयं तत्सूक्ष्ममूदममित्यर्थः ॥६०३॥

स्कंधं सर्वाशासंपूर्णं भणन्ति तदर्थं च देशं, अर्धस्यार्धं प्रदेशं अविभागीभूतं परमाणुम् ॥६०४॥ इति
स्थानत्वरूपाधिकारः ।

पृथ्वीरूप पुद्गल द्रव्यं वादर-वादर है । जिसका छेदन-भेदन किया जा सके, जिसे
एक स्थानसे दूसरे स्थानपर ले जाया जा सके वह वादर-वादर है । जिसका छेदन-भेदन
तो न हो सके किन्तु अन्यत्र ले जाया जा सके वह वादर है । छाया वादरसूक्ष्म है । जो
छेदन-भेदन और अन्यत्र ले जानेमें अशक्य हो वह वादर सूक्ष्म है । जो चक्षुको छोड़ शेष
चार इन्द्रियोंका विषय बाह्य पदार्थ है वह सूक्ष्म स्थूल है । कर्मस्कन्ध सूक्ष्म है । जो द्रव्य
देशावधि और परमावधिज्ञानका विषय होता है वह सूक्ष्म है । परमाणु सूक्ष्मसूक्ष्म है ।
जो सर्वावधिज्ञानका विषय है वह सूक्ष्मसूक्ष्म है ॥६०३॥

जो सब अंशोंसे पूर्ण हो उसे स्कन्ध कहते हैं । उसके आघेको देश कहते हैं । और
आघेके आघेको प्रदेश कहते हैं । जिसका विभाग न हो सके वह परमाणु है ॥६०४॥
स्थानाधिकार समाप्त हुआ ।

पातमागुशं विरलु विपच्यमानत्वविदं पौद्गलिकमेवे निरघेतत्पद्भुतु । पाग् द्विप्रकारमश्नुं द्रव्यवाक्
 भाववाचकं दित्तिल भाववाचकं भुतु घोष्पातरायमतिभूतज्ञानावरणयोपशमांगोपांगनामलाभनिमित्त-
 त्वविदं पौद्गलिकमेव कुमेके बोधे तव भावमागुत्तिरलु तद्व्युत्पत्त्यभावमप्युदरिदं । तत्सामर्थ्योपेतत्वविदं
 क्रियायंतनत्पत्तमनिदं प्रेम्बंभाषंगद्वय्य पुद्गलंगञ्जु धातत्त्वविदं परिणमिमुक्तेवेदितु द्रव्यवाक्कुं
 पौद्गलिकमेव कुं मेके बोधे धोत्रेन्द्रियविपयत्वविदं इतरेंद्रियविपयमेतु कारणमागवे बोधे तद्वप्रहणा-
 योम्यत्वविदं प्राणप्राण्यं पद्मवोञ्जु रसाद्युपलम्बियंते, अमूर्तं वाचके वेत्तलानुमे वेपपोधे युक्त
 मत्तेके बोधे मूर्तिमत्पद्महणावरणोपम्याघाताभिभवादिदशनेविदं मूर्तिमत्त्व सिद्धियप्युदरिदं ।

५

मनमुं द्विप्रकारमश्नुं द्रव्यभावभेदविदित्तिल भावमनस्तं चतु लम्ब्युपयोगलक्षणं पुद्गला-
 लंबनविदं पौद्गलिकमश्नुं । द्रव्यमनमुं ज्ञानावरणयोष्पातरायशयोपशमांगोपांगनामलाभप्रत्ययं-
 गद्वय्य गुणदोषविचारस्मरणादिप्रणिधानाभिमुखमत्प्रातमंगुप्राहकपुद्गलंगञ्जुमनस्त्वविदं परिण- १०
 तंगळं दितु पौद्गलिकमश्नुं । योद्वंनें दयं :—मनं द्रव्यांतरं रूपादिपरिणमनविरहितमगुमात्र-

१०

दमाज्ञोपाङ्गनामकर्मलाभनिमित्तः चतु पौद्गलिका तदभावे तद्व्युत्पत्त्यभावात् । तत्सामर्थ्योपेतत्वेन त्रिधावतामना
 प्रेम्बंभाषणपुद्गलाः वास्तवेन परिणमन्तीति द्रव्यवागपि पौद्गलिकैर धोत्रेन्द्रियविपयत्वात् । इतरेंद्रियविपयापि
 कुतो न स्यात् तद्वप्रहणाद्योपम्यात् प्राणप्राण्यं गन्धश्चे रसाद्युपलम्बिवत् । अमूर्तं वाग् इत्यप्यमुक्तं
 मूर्तेर्हृणावरणोपम्याघाताभिभवादिदशने चतु मूर्तत्वविदः । मनोर्षि तथा देवा । तत्र भावमनः लम्ब्युपयोगलक्षणं
 पुद्गलात्मन्नात् पौद्गलिकम् । द्रव्यमनोर्षि ज्ञानावरणवोर्यान्तरायशयोपशमाङ्गोपाङ्गनामकर्मलाभप्रत्यय- १५
 गुणदोषविचारस्मरणादिप्रणिधानाभिमुखमत्प्रातमंगुप्राहकपुद्गलानां तथात्वेन परिणमनात् पौद्गलिकम् ।
 कद्विदोह—मनः द्रव्यान्तर रूपादिपरिणमनविरहितमगुमात्रं, पौद्गलिकं न । आचार्य आह—तेन आत्मनः

१५

वरण और ध्रुवज्ञानावरणके क्षयोपशम तथा अंगोपांग नामक कर्मके उदयके निमित्तसे होनेसे
 पौद्गलिक है । उसके अभावमें भाववचन—योलनेकी शक्ति नहीं होती । भाववचनकी २०
 सत्तिसे युक्त क्रियावान् आत्मको द्वारा प्रेरित पुद्गल वचन रूप परिणत होते हैं इसलिय
 द्रव्यवाक् भी पौद्गलिक ही है क्योंकि श्रोत्र इन्द्रियका विषय है ।

२०

जंका—जब वचन पौद्गलिक है तो अन्य इन्द्रियोंका भी विषय क्यों नहीं है ?
 समाधान—यह अन्य इन्द्रियोंसे प्रहण करनेके अयोग्य है । जैसे प्राण इन्द्रियसे प्राह्य २५
 सुगन्धित द्रव्यमें रसना आदि इन्द्रियोंकी प्रवृत्ति नहीं होती ।

२५

वचन अमूर्तिक है ऐसा कहना भी अयुक्त है क्योंकि मूर्त इन्द्रियके द्वारा शब्दका
 प्रहण होता है, मूर्त शीशर आदिसे रोका जाता है, मूर्त पदार्थसे टकराता है तथा बहुत
 तीव्र शब्दसे मन्द शब्द दब जाता है इससे वचन मूर्तिक सिद्ध होता है । मन भी दो प्रकार-
 का है—भावमन और द्रव्यमन । भावमन लब्धि और उपयोग लक्षणवाला है । यह पुद्गलके
 अवलम्बनसे होता है । इसलिय पौद्गलिक है । द्रव्यमन भी पौद्गलिक है क्योंकि ज्ञानावरण ३०
 और धोर्यान्तरायके क्षयोपशम तथा अंगोपांग नामककर्मके उदयसे जब आत्मा गुण-दोषके
 विचार, स्मरण आदिके अभिमुख होता है तो उसके उपकारी पुद्गल मन रूपसे परिणमन
 करते हैं इसलिय पौद्गलिक है । किसीका कहना है—मन एक पृथक् द्रव्य है उसमें रूपादि

३०

पातमागुञ्जं विरलं विपच्यमानत्वदिवं पौद्गलिकमवे निरघोस्तत्पुद्गु। वाग् द्विप्रकारमवकुं द्रव्ययाक्
 भाववाचकं दितस्ति भाववाचकं बन्तु वोप्यातरायमति धृतज्ञानावरणक्षयोपशमांगोपांगनामलाभनिमित्त-
 त्वदिवं पौद्गलिकेयकमेके बोधे तदभावमागुत्तिरलु तद्वृत्त्यभावमपुद्गदिवं। तत्सामर्थ्योपेतत्वदिवं
 क्रियापतनत्प्यात्मनिबं प्रेम्भ्यापंगठप्य पुद्गलंगठ् वाक्यत्वदिवं परिणामिसुवयेदितु द्रव्यवाचकुं
 पौद्गलिकेयककुं मेके बोधे शोनेन्द्रियविषयत्वदिवं इतरेंद्रियविषयमेतु कारणमागवे बोधे तद्ग्रहणा- ५
 योम्यत्वदिवं प्राणप्राह्ण्यंप्रव्यवोऽनु रसाद्युपलम्बियंते, अमूर्तं वाचकं देतलानुमे वेद्यप्योडे युक्त
 मत्तेकं बोधे मूर्तिमद्ग्रहणावरणोपभ्यापाताभिभवादिवशं नदिवं मूर्तिमत्त्व सिद्धियपुद्गदिवं।

मनमु द्विप्रकारमरकुं द्रव्यभावभेददिवल्लि भावमनस्तेपुद्ग लब्धुपयोगलक्षण पुद्गला
 लंबनदिवं पौद्गलिकमरकुं। द्रव्यमनमु ज्ञानावरणयोप्यातरायक्षयोपशमांगोपांगनामलाभप्रत्यय-
 गठप्य गुणदोषविधारस्मरणादिप्रणिधानाभिमुखमत्प्यात्मंगनुप्राहकपुद्गलंगठ् मनस्त्वदिवं परिण- १०
 तंगळं दितु पौद्गलिकमरकुं। योध्वंने वषः—मनं द्रव्यांतरं रूपादिपरिणमनविरहितमणुमात्र-

यमाज्ञोपाज्ञनामकर्मलाभनिमित्तत्वाद् पौद्गलिका उदभावे तद्वृत्त्यभावात्। तत्सामर्थ्योपेतत्वेन क्रियावतात्मना
 प्रेम्भ्यागपुद्गलाः वाक्येन परिणमन्तीति द्रव्यवाचपि पौद्गलिकेय शोनेन्द्रियविषयत्वात्। इतरेंद्रियविषयापि
 कुतो न स्यात् तद्वृत्त्ययोग्यत्वात् प्राणप्राह्ये गणपदभ्ये रसाद्युपलम्बिवत्। अमूर्तं वाग् इत्यप्यमुक्तं
 मूर्तं ग्रहणावरणोपभ्यापाताभिभवादिदशांनान् मूर्तत्वविधेः। मनोऽपि तथा द्रेश। तत्र भावमनः लब्धुपयोगलक्षणं १५
 पुद्गलात्मन्नात् पौद्गलिकम्। द्रव्यमनोऽपि ज्ञानावरणयोप्यातरायक्षयोपशमाज्ञोपाज्ञनामकर्मलाभप्रत्यय-
 गुणदोषविधारस्मरणादिप्रणिधानाभिमुखमत्प्यात्मनोऽनुप्राहकपुद्गलानां तथात्वेन परिणमनात् पौद्गलिकम्।
 कश्चिदाह—मनः इत्यान्तर रूपादिपरिणमनविरहितमणुमानं, पौद्गलिकं न। आचार्य आह—तेन आत्मनः

घरण और धृतज्ञानावरणके क्षयोपशम तथा अंगोपांग नामक कर्मके उदयके निमित्तसे होनेसे
 पौद्गलिक है। उसके अभावमें भाववचन—बोलनेकी शक्ति नहीं होती। भाववचनकी २०
 शक्तिसे युक्त क्रियावान् आत्माके द्वारा प्रेरित पुद्गल वचन रूप परिणत होते हैं इसलिये
 द्रव्यवाक् भी पौद्गलिक ही है क्योंकि श्रोत्र इन्द्रियका विषय है।

संका—जब वचन पौद्गलिक है तो अन्य इन्द्रियोंका भी विषय क्यों नहीं है ?

समाधान—यह अन्य इन्द्रियोंसे ग्रहण करनेके अयोग्य है। जैसे प्राण इन्द्रियसे प्राण २५
 सुगन्धित द्रव्यमें रसना आदि इन्द्रियोंकी प्रवृत्ति नहीं होती।

वचन अमूर्तिक है ऐसा कहना भी अयुक्त है क्योंकि मूर्त इन्द्रियके द्वारा शब्दका
 ग्रहण होता है, मूर्त शब्द आदिसे रोक जाया है, मूर्त पदार्थसे टकराता है तथा बहुत
 तीव्र शब्दसे मन्द शब्द दब जाता है इससे वचन मूर्तिक सिद्ध होता है। मन भी दो प्रकार-
 का है—भावमन और द्रव्यमन। भावमन लब्धि और उपयोग लक्षणवाला है। यह पुद्गलके
 अवलम्बनसे होता है। इसलिये पौद्गलिक है। द्रव्यमन भी पौद्गलिक है क्योंकि ज्ञानावरण ३०
 और वीर्यान्तरायके क्षयोपशम तथा अंगोपांग नामक कर्मके उदयसे जब आत्मा गुण-दोषके
 विचार, स्मरण आदिके अभिमुख होता है तो उसके उपकारी पुद्गल मन रूपसे परिणमन
 करते हैं इसलिये पौद्गलिक है। किसीका कहना है—मन एक पृथक् द्रव्य है उसमें रूपादि

प्राणापानगन्धो प्रतिघातं पश्येत्पट्टदु, श्लेष्मदिबं मेणु अभिभवं काणल्पट्टदु । अमूर्तंक्के मूर्तिमत्-
 गच्छिदभिघातादिगळामवु । अदु कारणदिबमे आत्मास्तित्वसिद्धियक्कुमे तोगळेत्तिलयानुं प्रतिमा-
 चेष्टितं प्रयोक्तृलिगस्तित्वमनरिपुगुमते प्राणापानादिव्यापारमुं क्रियावंतनप्पात्मनं साधिसुगुमि-
 वल्लदेयं . मत्ते केलवुं जीवितमरणसुखदुःखनिर्वर्तनकारणभूतंगळ पुद्गलंगळप्पुवु । सदसद्वेद्यो-
 दयमंतरंगहेतुवुंटापुत्तिरलु बाह्यद्रव्यादिपरिपाकनिमित्तवर्शादिबमुत्पद्यमानप्रीतिपरितापक्षपपरिणामं ५
 सुखदुःखमं दु पेळल्पट्टदु । भवधारणकारणायुराख्यकर्मोदयदिदं भवस्थितियं धरिसिद जीववके
 पूर्वोक्तप्राणपानक्रियाविशेषाव्युच्छेदं जीवितमं दु पेळल्पट्टदु, तदुच्छेदं मरणमं दु पेळल्पट्टदु ।
 ई सुखादिगळ जीववके पुद्गलंगळदिबमे संभविमुववु । मूर्तिमद्वेतु सन्निधानमापुत्तिरलु तदुत्पत्ति-
 यं ट्टपुदरिदं । केवलं जीवंगळ शरीरादिनिर्वर्तनकारणभूतंगळ पुद्गलंगळं बुदित्त । पुद्गलवकं
 पुद्गलंगळ निर्वर्तनहेतुगळप्पुवु । कांस्यादिगळो भस्मादिगळिदं जलादिगळो कतकादिगळिदं १०
 अयःप्रभृतिगळो जलादिगळिदं उपकारं भाडल्पट्टदु काणल्पट्टुगुमप्पुदरिदं । इंतु औदारिक-
 वैक्रियिक आहारकशरीरनामकर्मोदयदिदमा मूहं शरीरंगळ मुच्छ्वासानिश्वासमुमाहारवर्गणे-
 यिनप्पुवु । तैजसशरीरनामकर्मोदयदिदं तेजोवर्गणेयिदं तैजसशरीरमक्कुं । कामर्गणशरीरनाम-

प्राणापानबोध इवादिपूदिगन्धिप्रतिभयेन हस्ततलपुटादिभिरास्वसंवरणेन श्लेष्मणा वा प्रतिघातदर्शनात्,
 अमूर्तस्य मूर्तिमद्भिस्तदसंभवाच्च । तत एव प्राणापानादिव्यापारादात्मनोऽस्तित्वसिद्धिः प्रयोनुरभावे १५
 प्रतिमाचेष्टितस्यैव आत्माभावे तद्वदनात् । तथा सदसद्वेद्योदयान्तरङ्गहेतौ सति बाह्यद्रव्यादिपरिपाकनिमित्त-
 वयेन उत्पद्यमानप्रीतिपरितापक्षपपरिणामो सुखदुःखे । आयुश्चयेन भवस्थितिं विभ्रतः प्राणापानक्रियाविशेषा-
 व्युच्छेदो जीवितं, तदुच्छेदो मरणम् । तान्यपि पौद्गलिकानि मूर्तिमद्वेतुसन्निधाने सति तदुत्पत्तिसंभवात् ।
 न केवलं जीवशरीरादीनामेव निर्वर्तनकारणभूताः पुद्गलाः पुद्गलादीनामपि कास्यादीना भस्मादीनिः २०
 जलादीनां कतकादिभिः अयःप्रभृतीनां जलादिभिरप्युपकारदर्शनात् । एवमौदारिकवैक्रियिकाहारकनामकर्मोदयात् २०
 आहारवर्गणायातानि त्रीणि शरीराणि उच्छ्वासानिश्वासा च । तैजसनामकर्मोदयात् तेजोवर्गण्या तैजसशरीरम् ।

दुर्गन्ध आदिके भयसे ह्येही आदिसे मुखको बन्द कर लेनेसे तथा जुकामसे प्राण अपानका
 प्रतिघात देखा जाता है । अमूर्तका मूर्तिमानके द्वारा प्रतिघात सम्भव नहीं है । उसी प्राण
 अपान आदि की क्रियासे आत्माके अस्तित्वकी सिद्धि होती है । जैसे प्रयोक्ताके अभावमें
 यन्त्रादि मशीनमें क्रिया सम्भव नहीं है । तथा सात्वा-असात्वा वेदनीयके उदयरूप अन्तरंग २५
 कारणके होनेपर बाह्य द्रव्यादिके परिपाकके निमित्तसे जो प्रीतिरूप या सन्तापरूप परिणाम
 उत्पन्न होता है उसे सुख और दुःख कहते हैं । आयुर्कर्मके उदयसे भवमें स्थिति करते हुए
 श्वास-उच्छ्वास आदि क्रिया विशेषका होते रहना जीवन है और उसका छेद होना मरण
 है । ये भी पौद्गलिक हैं क्योंकि मूर्तिमान् कारणोंके होनेपर सुखादिकी उत्पत्ति होती है ।
 पुद्गल केवल जीवोंके ही शरीरादिकी रचनामें कारण नहीं हैं पुद्गल पुद्गलोंका भी उपकार ३०
 करते हैं । भस्मसे कांसीके घरतन आदि, निर्मली आदिसे जलादि तथा जलादिसे खोहा आदि
 स्वच्छ होते हैं । इसी प्रकार औदारिक, वैक्रियिक और आहारक नामकर्मके उदयसे आहार-
 वर्गणके रूपमें आये तीन शरीर और उच्छ्वास-निश्वास, तैजस नामकर्मके उदयसे

मनुञ्ज जीवंगळं पाप जीवंगळं प्युबन्तानुबन्धन्यतरोवपमिप्यागुणपुतरप्युवरिनवृधुं पल्यासंख्यातैक-
भागप्रमाणमप्युव ५

३३४

मिञ्ज सावयसासणमिस्सा विरदा दुवारणंता य ।

पन्लासंखेज्जदिमसंखगुणं संखगुणमसंखेज्जगुणं ॥६२४॥

मिप्याद्दृष्टिधावकसासादनमिथाविरताः द्विकवारानंतास्य । पल्यासंख्यातैकभागोसंखेयगुणः ५
संखेयगुणोऽसंखेयगुणः ॥

मिप्याद्दृष्टिजीवंगळु किचिदूनसंसारिराशिप्रमितमप्युदरिदमन्तानंतगळप्युव ॥ १३—॥ देश-
संयतरुगळु पदिमूरकोटि मनुप्य देशसंयतरिनधिकमप्य तिप्यंग्गतिजह पल्यासंख्यातैकभागप्रमित-
रप्यह ५ । घन १३ को । सासादनरुगळु मनुप्यगतिजद्विषंचागरकोटिसासादनरिदमधिकमप्य
३ ३४।३

इतरगतिप्रयजसासादनरितुं देशसंयतरं नोडलु असंख्यातगुणमप्यह ५ घन ५२ को ई सासादनर १०
३ ३ ४

संखेयं नोडलु मनुप्यगतिजमिथरिदं नूर नाल्कु कोटिगळिदमधिकमप्य त्रिगतिजमिथह संख्यात-
गुणमप्यह ५ घन १०४ को ई मिथ्रगुणस्थानवर्तिजीवंगळं नोडलु मनुप्यगतिजासंयतरिदमेळु
३ ३

नूर कोटिगळिदमधिकमप्य त्रिगतिजासंयतरुमसंख्यातगुणरप्यह ५ घन ७०० को
३

१३- । सासादनगुणा अपि पापाः अनन्तानुबन्धन्यतरोदयेन प्राप्तमिध्यात्वगुणत्वात् पल्यासंख्यातैकभागमात्रा
भवन्ति ५ ॥६२३॥
३ ३ ४

१५

मिप्याद्दृष्टयः किचिदूनसंसारित्वादनन्तानन्ताः १३- । देशसंयताः प्रयोदशकोटिमनुप्याधिकतिर्यञ्जः
पल्यासंख्यातैकभागमात्राः- ५ घन १३ को । तेभ्यः द्विपञ्चाशत्कोटिमनुप्याधिकेतरत्रिगतिजासादानाः असंख्यात-
३ ३ ४ ३

गुणाः ५ घन ५२ को । तेभ्यः चतुस्तरशतकोटिमनुप्याधिकत्रिगतिमिथाः संख्यातगुणाः ५ घन १०४ को ।
३ ३ ३ ३ ३

तेभ्यः सप्तशतकोटिमनुप्याधिकत्रिगत्यसंयता असंख्यातगुणा ५ घन ७०० को ॥६२४॥
३

सासादनगुणस्थानवाले भी पापी हैं क्योंकि अनन्तानुबन्धीकपायकी चौकड़ीमें-से किसी भी
एक क्रोधादिका उद्यय होनेसे मिध्यात्वगुणस्थानको प्राप्त होते हैं । उनकी संख्या पल्यके
असंख्यातवें भाग है ॥६२३॥ २०

मिध्यादृष्टि कुछ कम संसारी राशि प्रमाण होनेसे अनन्तानन्त हैं । देश संयत गुण-
स्थानवाले तेरह कोटि मनुप्य तथा पल्यके असंख्यातवें भागमात्र तिर्यंच हैं । उनसे वाचन
कोटि मनुप्य तथा शेष तीन गतिके सब सासादनगुणस्थानवाले असंख्यातगुणे हैं । उनसे २५
एक सौ चार कोटि मनुप्य और शेष तीन गतिके सब मिथ्र गुणस्थानवाले संख्यातगुणे हैं ।
उनसे सात सौ कोटि मनुप्य और शेष तीन गतिके अविरत गुणस्थानवाले सब असंख्यात-
गुणे हैं ॥६२४॥

उपगमकरोऽनु दोहानु चतुर्विधमित्युं त्रिजतिनु यद्विजतिनु द्विचरगारितानित्युं अष्ट-
पत्वारितमित्युं चतुर्पंचामित्युं चतुर्पंचामित्युं निरंतराष्टमपंगमोऽनुः । १६ । २४ । ३० ।
१६ । १२ । ४८ । १४ । १४ ।

चर्योमं अदशालं मष्टी पावचरी य पूतसीदी ।

उगचउदी अदुधामगममदुधुचरमयं य सुवगेमु ॥६२८॥

५

इतिरन्तराष्टमपंगमोऽनु पट्टि इतिरन्तराष्टमपंगमोऽनुः । यन्मयतिरष्टोत्तराष्टमपंगमोऽनुः
पट्टेऽनु ॥

धरकरोऽनु निरंतराष्टमपंगमोऽनु उपगमकर संक्षेपेन मोहनु द्विगुणमाणि इतिप्रगारारि-
पट्टानुः । ३२ । ४८ । ६० । ७२ । ८४ । ९६ । १०८ । १०८ ॥ इति संक्षेपेन निरंतराष्टमपंगमोऽनु

१०

समीकरणविधानरिषं धरकह । आदि ३४ । उत्तरं १२ । गच्छे ८ । परमेगेन विहीनमित्यादि
संरुचनपुत्ररिषं तत्पट्टु कथ्यप्रमितव महोत्तरपट्टमप्यव । ६०८ ॥ उपगमकरं । आदि १७ ।
उत्तरं १६ । गच्छे ८ । इत्यित्युं आ गुररिषं तत्पट्टु कथ्यप्रमितव चतुःसतरिजतिरप्यव । ३०४ ॥

अष्टेन मयमहसमा अष्टाणउदी तदा सहस्रमाणं ।

मंगा योगिजिनाणं पंचमयविउत्तरं वदे ॥६२९॥

१५

अष्टेन मयमहसमा अष्टाणउदी तदा सहस्रमाणं । संख्या योगिजिनानां पंचगतं द्वपुत्तरं
वदे ॥

उपगमके दोहः चतुर्विधः त्रिजति यद्विजति इतिरन्तराष्टमपंगमोऽनु चतुर्विधः चतु-
र्विधः निरन्तराष्टमपंगमोऽनु पट्टिः । १६ । २४ । ३० । ३६ । ४२ । ४८ । ५४ । ५४ ॥६२३॥

उत्तरे निरन्तराष्टमपंगमोऽनु उपगमकेऽनु द्विगुणमाणि इतिप्रगारारिपट्टिः इतिरन्तराष्टमपंगमोऽनु
पट्टिः इतिरन्तराष्टमपंगमोऽनु पट्टिः इतिरन्तराष्टमपंगमोऽनु पट्टिः इतिरन्तराष्टमपंगमोऽनु पट्टिः
आदिः ३४ उत्तरः १२ गच्छे ८ परमेगेन विहीनमित्यादिनां उपगमम् । धरका महोत्तरपट्टं प्रभवति ।
६०८ । उपगमका आदिः १७ उत्तरः १६ गच्छे ८ पत्रं चतुःसतरिजतिरं ३०४ प्रभवति ॥६२८॥

२०

उपगमकेनिरन्तर निरन्तर पट्टेनवाले जीयोको आठ समयोमिं संख्या कमसे सोलह,
पौषोष, सोम, उताम, पयाळीस, अकृतालीस, पीयन, पीयन होवी हे ॥६२७॥

धपदधेनिकी संख्या उपगमवालेसे दुगुनो होतो हे इगट्टिय निरन्तर आठ समयोमिं
धरकपेन पट्टेनवालेकी संख्या कमसे पत्तीस, अकृतालीस, साठ, पदधर, पौरासी, द्वियान-
थे, एक मी आठ, एक मी आठ होवी हे । इमी संख्याको निरन्तर आठ समयोमिं समीकरण
विधानके द्वारा बराबर करके पहेले समयमें पत्तीस, फिट आठ समयोमिं पारह-पारह अधिक
करनेसे आदिपधन पत्तीस, पत्तर पारह और गच्छ आठ, इसको 'पट्टमेगेन विहीन' इत्यादि
मूत्रके अनुसार गच्छ आठमें एक पट्टानेसे सात रहे, शोका भाग देनेसे साडे तीन रहे ।
पत्तर पारहसे गुणा करनेपर पयाळीस हुए । इसमें आदिपधन पत्तीस जोडनेसे छियत्तर हुए ।
इथे गच्छ आठसे गुणा करनेसे छह मी आठ हुए । ये सध धपकोका जोड होवा हे । इसी
तरह उपगमकेनिरन्तराष्टमपंगमोऽनु आदिपधन सत्तरह, पत्तर छह, गच्छ आठका पत्र वससे आधा तीन
मी पार होवा हे ॥६२८॥

२५

३०

इतिबोद्धुं यक्षांतरमरियत्पद्भु । अनंतरनेक समयदोषु युगपत्तन्निदिष्टुं संख्येयुमनुपशमकर विरोपसंख्येयुमं गायत्रयदिदं पेक्ष्यपव ।

होति खवा इगिसमये बोधिययुद्धा य पुरिसवेदा य ।

उक्त्स्सेणद्दुत्तरसयप्पमा सम्गदो य चुदा ॥६३०॥

भवंति क्षपकाः एकस्मिन्समये बोधितयुद्धाश्च पुरपवेदाश्च । स्वर्णतश्च च्युताः ॥

पत्तेयबुद्धतित्थयरित्थिणवुं समयमणोद्धिणाणुदा ।

दसच्छक्कवीसदसवीसद्वावीसं जहाकमसो ॥६३१॥

प्रत्येकबद्धतीत्यंकररुत्रीनपुंसकमनोवधिज्ञानप्रताः । दश दत्त

मप्युह १०८ प्रत्येकबुद्ध क्षपकश्च पत्तुपशमकरव्यह १० तीर्थ्यकरश्च क्षपकरश्चपशमकश्च
 ५४ ५
 भूवह ६ स्त्रीवेदिक्षपकश्चमिप्यत्तुपशमकर्णदिवह २० नपुंसकवेदिगळ् क्षपकश्च पदिबरवरद्ध-
 ३ १०
 मुपशमकश्च १० मनःपर्ययज्ञानिगळ् क्षपकरुगळिप्यत्तु तदद्धंमुपशमकश्च २० अवधिज्ञानिगळ्
 ५ १०
 क्षपकरुगळिप्यत्तुमुपशमकरुगळ् तदद्धंमप्यह २८ उत्कृष्टावगाहनयुतक्षपकरुगळीर्ध्वंरुपशमक-
 १४
 नोर्ध्वने २ जघन्यावगाहनयुतक्षपकश्च नाल्वरुपशमकरीर्ध्वंश्च ४ बहुमध्यमावगाहनयुतक्षपक- ५
 १
 र्ध्वरुपशमकन्तल्वश्च ८ मितेत्ला क्षपकश्च ४३२ । उपशमकश्च २१६ ।

अनतरं अयोगिजिनरसंख्येयं कंठोक्तमागि पेञ्जुदिल्लप्युदरिदं प्रमत्तगुणस्यानं मोदलोडु
 अयोगकेवलभट्टारकावसानमाद समस्तसंयमिगळ् संख्येयं पेञ्जुददरोळु सयोगकेवलपिपर्यंतं कंठोक्त-
 मागि पेञ्जुत्पट्ट संयमिगळ् संख्येयं कूडि कळेदोडे शेषमयोगिकेवलिगळ् संख्येयवकुमेंबुदं मनवोळि-
 रिसि संयमिगळ् सर्वसंख्येयं पेञ्जुदपं :—

सत्तादी अहुंता छणवमज्झा य संजदा सव्वे ।
 अंजलिमौलियहत्थो तियरणसुद्धे णमंसामि ॥६३३॥

सत्ताद्यष्टांतान् पणवमध्यांश्च संयुतान्सर्वान् । अंजलिमौलिकहस्तस्त्रिकरणशुद्धया नम-
 स्यामि ॥

सत्तांकमादियामि अध्तांकमवसानमागि धम्मवांश्कंगळं मध्यमागुळ्ळ त्रिहीननवकोटिसंयतह- १५
 गळनंजलिमौलिकहस्तनागि मनोवाक्कायशुद्धिगळिदं वंदिसुवे ॥ एदितु सध्वंसंयमिगळ् संख्येयो

कास्तदर्थं भवन्ति । पुनः प्रत्येकबुद्धाः तीर्थ्यकराः स्त्रीवेदिनः नपुंसकवेदिनः मनःपर्ययज्ञानिनः अवधिज्ञानिनः
 उत्कृष्टावगाहाः जघन्यावगाहाः बहुमध्यमावगाहाश्च क्षपकाः क्रमशः दश पद्विधातिः दश विधातिः अष्टाविधातिः
 द्वौ चत्वारः अष्टौ, उपशमकाः तदर्थं भवन्ति । सर्वे मिलित्वा क्षपकाः ४३२ । उपशमकाः २१६ ॥६३०-६३२॥
 अथ सर्वसंयमिसंख्यामाह—

धादो सत्ताहुं अन्तेऽष्टाहुं च लिखित्वा तयोर्मध्ये च पट्सु नवाङ्केषु लिखितेषु संजनितभूननवकोटि-
 संख्यामाकान् सर्वसंयतान् अञ्जलिमौलिकहस्तोर्ध्वं मनोवानकायशुद्धया नमस्यामि । ८९९९९९९७ । अथ च २०

होते हैं । और उपशमक इनसे आधे अर्थात् चौबन-चौबन होते हैं । पुनः क्षपकश्रेणीवाले
 प्रत्येकबुद्ध दस, तीर्थ्यकर छह, स्त्रीवेदी बीस, नपुंसकवेदी दस, मनःपर्ययज्ञानी बीस,
 अवधिज्ञानी अट्ठाईस, उत्कृष्ट अवगाहनावाले दो, जघन्य अवगाहनावाले चार, बहुमध्यम २५
 अवगाहनावाले आठ एक समयमें उत्कृष्ट रूपसे होते हैं । उपशमक इनसे आधे होते हैं ।
 सो उक्त सब क्षपकोंकी संख्या मिलकर चार सौ बत्तीस होती है और उपशमकोंकी दो सौ
 सोलह ॥६३०-६३२॥

आगे सब संयमियोंकी संख्या कहते हैं—
 सातका अंक आदिमें और अन्वमें आठका अंक लिखकर दोनोंके मध्यमें छह नीके ३०

गुणस्थानबोद्धेऽसंयतसम्पद्गृष्टि सम्पत्तिमध्यावृष्टि सासादनसम्पद्गृष्टिगच्छे'वी मूर्धं
 गुणस्थानगच्छ वायुतु केलुतु पञ्चफले पोषक भागहारंगच्छ अ ० पुष्पोनावल्पसंख्यातदिवं
 मि ० ०
 सा ० ० ४

०-१ । भागिति भागिति तंतम्म हारबोद्धे कल्पद्रुवाबोद्धे देवोषबोद्धे तंतम्म भागहारंगच्छपुषु ।
 अ ० ० मत्तमो देवसामान्यगुणस्थानप्रथभागहारंगच्छं पुष्पोनावल्पसंख्यातदिवं भागिति
 ०-१
 मि ० ० ०
 ०-१
 सा ० ० ४ ०
 ०-१

भागितिदेरुभागमं तंतम्म हारंगच्छोद्धे प्रथेपिमुत्तं विरलु सौषम्भंशानकल्पद्रुयव असंयतमिश्रसासा- ५
 दनरुगच्छ भागहारंगच्छपुषु । सौषम्भंकल्पद्रुयव असंयतन भागहारंगच्छ प मिश्रभागहारंगच्छ
 ० ० ०
 ०-१ ०-१

प सासादनर भागहारंगच्छ प अनंतरमो सौषम्भंकल्पद्रुयासंयतावि सासादनगुण-
 ० ० ० ० ० ४ ० ०
 ०-१ ०-१ ०-१ ०-१

गुणस्थानोक्तः असंयतसम्पत्तिमध्यावृष्टिसासादनानां ये पत्यासंश्रितप्रविष्टभागहाराः अ ०
 मि ० ०
 सा ० ० ४

एतेषु रूपोनावल्पसंख्यातेन ०-१ भक्त्या एतेष्वेव निमित्तेषु देशेषु स्वत्वभागहारा भवन्ति ।
 अ ० ० एतान् पुनः रूपोनावल्पसंख्यातेन भक्त्या एकैकभागे स्वत्वहारे प्रतिष्ठे सौषम्भंशानासंयत- १०
 ०-१
 मि ० ० ०
 ०-१
 सा ० ० ४ ०
 ०-१

गुणस्थानोर्नि जीवोकी संख्या कहते हुए पूर्वमें जो असंयत, सम्पत्तिमध्यावृष्टि और
 सासादनोके पक्षके भागहार कहे हैं उनमें एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे भाग
 देनेसे जो प्रमाण आवे उन्हें उन्हीं भागहारोंमें मिलानेसे देवगतिमें अपना-अपना भागहार
 होता है । इन भागहारोंको पुनः एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक-एक १५
 भाग अपने-अपने भागहारमें मिलानेपर सौषम्भं और ऐशान स्वर्गमें असंयत मिश्र और
 सासादनोके भागहार होते हैं ।

विशेषार्थ—पहले असंयतगुणस्थानमें भागहारका प्रमाण एक है । अतएव कदा
 था । उसे एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे भाग
 उस भागहारमें मिलानेपर जो प्रमाण हो उतना दे
 भागहार जानना । इस भागहारका भाग पक्षमें देनेसे
 असंयतगुणस्थानवर्ती जीव है । मिश्रमें दो

सोहम्मादासारं जोइसवणभवणतिरियपुढवीसु ।

अविरदमिस्सेऽसंखं संखासंखगुण सासणे देसे ॥६३७॥

सौधर्मादासहस्रारं ज्योतिषिकवानभावनतिर्य्यम्पुष्पवीपु । अविरतमिश्रेऽसंख्ये संख्य असंख्य-
गुणं सासादने देशसंयते ॥

सौधर्मद्वयवर्त्तणिवं मेळे सानत्कुमारकल्पद्वयं मोदल्लोड्डु सहस्रारकल्पपर्यन्तं कल्पद्वय- ५
पंचरुदोऽं ज्योतिषिकवानभावनतिर्य्यं च प्रथमद्वितीयतृतीयचतुर्थपंचमषष्ठसप्तमपुष्पिवं वी योइश
स्थानदोळमवितरोळं मिथरोळमसंख्यातगुणितरुममक्कु । सासादनरोळसंख्यातगुणमक्कु । तिर्य्यं च-
देशसंयतरोळसंख्यातगुणमक्कुमवे तं दोडेमुं पेळ्द सानत्कुमारकल्पद्वयव सासादनहारमं नोडलु
प्लसकल्पद्वयासंयतहारमसंख्यातगुण ००००४००४० मवं नोडलु मिथहारमसंख्यातगुण
०-१०-१

००००४००४०० मवं नोडलु सासादनर हारं संख्यातं गुणमक्कु ००००४००४००४ १०
०-१०-१ ०-१०-१

मवं नोडलु सांतवकल्पद्वयवऽसंयतहारमसंख्यातगुण ००००४००४।२।० मवं नोडलु
०-१०-१

मिथर हारमसंख्यातगुण ००००४००४।२।०० मवं नोडलु सासादनहारं संख्यातगुण
०-१०-१

मक्कु ००००४००४।२।००४ मवं नोडलु गुरुकल्पद्वयासंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु
०-१०-१

००००४००४।३।० मवं नोडलु मिथहारमसंख्यातगुणमक्कु ००००४००४।३।००
०-१०-१ ०-१०-१

मवं नोडलु तत्रत्य सासादनहारं संख्यातगुणमक्कु ००००४००४।३००४ मवं नोडलु १५
०-१०-१

सौधर्मद्वयादुपरि सानत्कुमारादिसहस्रारपर्यन्तं पञ्चगुमेषु ज्योतिषिकवानभावनतिर्य्यं सप्तपुष्पीपु वेति
योइशस्थानेषु अविरते मिथे त्वसंख्येयगुणितक्रमः सासादने संख्यातगुणितक्रमः, तिर्य्यं देशसंयते असंख्यातगुणित-
क्रमव भवति । तथाहि—उक्तसानत्कुमारद्वयसासादनहाराद् ब्रह्मद्वयस्य असंयतहारोऽसंख्यातगुणः । ततो
मिथहारोऽसंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । अत्र संख्यातस्य संदृष्टिचतुरङ्कः । ततः लान्तवद्वये
असंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिथहारः असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः गुरुद्वये- २०

सौधर्मसे ऊार सानत्कुमारसे लेकर सहस्रार पर्यन्त पाँच स्वर्ग युगलोंमें और
ज्योतिषी, ग्यन्वर, भवनवासी, तिर्यंच, और सात नरक इन सोलह स्थानोंमें अविरत और
मिश्रमें असंख्यात गुणितक्रम जानना । सासादनमें संख्यात गुणितक्रम जानना । और तिर्यंच
सम्यन्धी देशसंयत गुणस्थानमें असंख्यात गुणितक्रम जानना । इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार
है—सानत्कुमार, माहेन्द्रमें जो सासादनका भागहार कहा उससे ब्रह्म-ब्रह्मोत्तरमें असंयतका २५
भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका
भागहार संख्यातगुणा है । यहाँ संख्यातकी संदृष्टि चारका अंक ४ है । उससे लान्तव-
कापिष्ठमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा
है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे गुरु महागुरुमें असंयतका
भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिश्रका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासा- ३०
दनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे शतारसहस्रारमें असंयतका भागहार

- संयतहारमुमसंख्यातगुणमक्कुं ० ० ० ० ४ ० ० ४ ९ ० प्रथमपुण्ड्रि = असंयताहार
० - १० - १
- ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ९ १ ० मवं नोडलु तन्मिथहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ९ १ ० ०
० - १० - १ ० - १० - १
- मवं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ९ ० ० ४ मवं नोडलु
० - १० - १
- द्वितीयपुण्ड्रिय असंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ १० १ ० १ ० मवं नोडलु
० - १० - १
- तन्मिथहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ १० १ ० ० ० मवं नोडलु तत्रत्यसासादन- ५
० - १० - १
- हारं संख्यातगुणमक्कुं ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ १० १ ० ० ४ १ मवं नोडलु तृतीयधराऽसंयत-
० - ०१ - १
- हारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ११ ० १ ० १ ० मवं नोडलु तन्मिथहारमसंख्यातगुण-
० - १० - १
- मक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ ११ ० ० ० ० मवं नोडलु तत्रत्य सासादनहारं संख्यातगुणमक्कु
० - १० - १
- ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ ११ ० ० ० ४ मवं नोडलु चतुर्थभूनारकाऽसंयतहारमसंख्यातगुणमक्कु
० - १० - १
- ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ १२ १ ० ० ० मवं नोडलु तन्मिथहारमसंख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ १२ १ ० ० ० १०
० - १० - १ ० - १० - १
- मवं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ १२ १ ० ० ४ मवं नोडलु
० - १० - १
- पंचमधराऽसंयतहारमसंख्यातगुणमक्कुं ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ १३ १ ० ० ० मवं नोडलु तन्मिथहारम-
० - १० - १
- संख्यातगुणमक्कु ० ० ० ० ४ ० ० ४ १ १३ १ ० ० ० मवं नोडलु तत्रत्यसासादनहारं संख्यातगुण-
० - १० - १

संयतहारः असंख्यातगुणः । अयमेव प्रथमपुण्ड्रिसंयतस्यापि हारः । ततः मिथहारः असंख्यातगुणः ।
ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः द्वितीयपुण्ड्रिसंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिथहारः असंख्यात- १५
गुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः तृतीयपुण्ड्रिसंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिथहारः
असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः चतुर्थपुण्ड्रिसंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिथहारः
असंख्यातगुणः । ततः सासादनहारः संख्यातगुणः । ततः पञ्चमधरासंयतहारः असंख्यातगुणः । ततः मिथहारः

हे वही भागहार प्रथम नरकमें असंयतका भी है । उससे मिथका भागहार असंख्यातगुणा
है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे दूसरे नरकमें असंयतका भागहार २०
असंख्यातगुणा है । उससे मिथका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका भागहार
संख्यातगुणा है । उससे तीसरे नरकमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे
मिथका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे
चौथे नरकमें असंयतका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिथका भागहार असंख्यात-
गुणा है । उससे सासादनका भागहार संख्यातगुणा है । उससे पंचम नरकमें असंयत २५
भागहार असंख्यातगुणा है । उससे मिथका भागहार असंख्यातगुणा है । उससे सासादनका

भक्तजगद्गुणिमात्रं वामरुगळप्पु ८ । पंचमपुंभ्योऽङ्गु गुणप्रतिपन्नराशिप्रयविहीननिज-

पळमुक्तभक्तजगद्गुणिमात्रं वामरुगळप्पु ९ । षष्ठपुंभ्योऽङ्गु गुणप्रतिपन्नराशिप्रयविहीननिज-

तृतीयमुक्तभक्तजगद्गुणिमात्रं वामरुगळप्पु १० । साप्तमपुंभ्योऽङ्गु गुणप्रतिपन्नराशिप्रयविहीन-

निजद्वितीयमुक्तभक्तजगद्गुणिमात्रं वामरुगळप्पु ११ । आनताविगुळोऽङ्गु कंठोक्तमागि पेळ्ल-

पट्टु । सर्वार्थसिद्धिबिमानाहमिन्द्र असंयतसम्यग्दृष्टिगुळु । 'तिगुणा सत्तगुणा वा सव्यवृत्ता माणुसो

पमानासो' एंवितु संख्यातमप्य ४२ = ४२ = ४२ = ३ । ३ । ७ । मनुष्यगतिप्योऽङ्गु वेदासंपताविगुळं

पेळ्ळपं :—

तेरसकोडीदेमे वावण्णं सासणे मुणेदव्वा ।

मिस्सावि य तद्दुगुणा असंज्जदा सचकोटिसया ॥६४२॥

प्रयोदशकोटयो वेदासंयते द्विपंचादात्कोटयः सासादने ज्ञातव्याः । मिधाश्चापि तद्विगुणा १०
वंति असंयताः सप्तकोटिज्ञाताः ॥

मनुष्यगतिप्योऽङ्गु वेदासंयतसु पविमूळ कोटिगळप्पु ११ को । सासादनसु द्विपंचादात्कोटि-
रप्य ५२ को । मिधरुगळु तद्विगुणमप्य १०४ को । असंयतसम्यग्दृष्टिगुळु साप्तकोटिज्ञात-
मितरप्य ७०० को । प्रमत्तादिसंख्ये मुल्लमे पेळ्ळपट्टुदु ।

नीवु किञ्चिद्दत्ता रूपयो निजद्वारादयदमाहमपठ्ठुतीयमुक्तभक्तजगद्गुणिः । आनतादिपु कण्ठोक्तप्योत्तर १५
वार्थसिद्धावहमिन्द्रा अर्धवता एव । ते च मानुषोत्तमाणात्त्रिगुणाः सप्तगुणा वा भवन्ति ॥६४१॥
मुप्यगताश्च—

देवसंयते प्रयोदशकोटयो मन्तव्याः । १३ को । सासादने द्विपञ्चादात् कोटयः ५२ को । मिधे सतो
गुणाः १०४ को । असंयते सप्त सप्तकोटयः ७०० को । प्रमत्तादीनां संख्या तु प्रागुक्ता ॥६४२॥

सर्वे, आठवे, छठे, तीसरे और दूसरे वर्गमूलका भाग जगत्त्रेणिमिं देनेसे जो-जो प्रमाण २०
प्राये उसमें कुछ-कुछ कम मिथ्यादृष्टियोंका प्रमाण है । यहाँ जो अपनी-अपनी समस्त राशि-
कुछ कम किया है सो दूसरे आदि गुणस्थानवाले जीवोंके प्रमाणको घटानेके लिए
किया है क्योंकि मिथ्यादृष्टियोंकी तुलनामें उनका परिमाण बहुत अल्प है । आनतादिमें
मिथ्यादृष्टियोंका प्रमाण पहले कहा ही है । सर्वार्थसिद्धिमें अहमिन्द्र असंयत सम्यग्दृष्टि
के हैं । मानुषियोंके प्रमाणसे उनका प्रमाण तिगुना और किन्हींके मतसे सात गुणा २५
कहा है ॥६४१॥

मनुष्यगतिमें कहते हैं—

मनुष्य देवसंयत गुणस्थानमें सेरह कोटि जानना । सासादनमें वावन कोटि जानना ।
मेश्रमें उससे दुगुने अर्थात् एक सौ चार कोटि जानना । असंयतमें सात सौ कोटि जानना ।
मत्त आदिकी संख्या पहले कही है ॥६४२॥

ण य मिच्छत्तं पचो सम्मत्तादो य जो य परिवडिदो ।

सो सासणोत्ति णेयो पंचमभावेण संजुत्तो ॥६५४॥

न च मिथ्यात्वं प्राप्तः सम्यक्त्वतश्च यश्च परिपतितः । सासादन इति ज्ञेयः पंचमभावेन संयुक्तः ॥

आवनोर्ध्वं जीवतु सम्यक्त्वविदं ब्रह्मिचि मिथ्यात्वमं योर्द्धेर्नेवरमिष्यं वनेवरमा जीवं सासादननें वितरियल्पडुवं । दर्शनमोहनीयोदयोपशमादिनिरपेक्षापेक्षोपिबं पारिणामिकभावदोऽङ्कडि-
वनुमपनेकं दोडे चारित्रमोहनीयापेक्षेयिनातंगौदयिकभावमप्युदरिवं ।

सद्दहणासद्दहणं ज्ञेस य जीवस्स होइ तच्चेसु ।

चिरयाविरयेण समो सम्मामिच्छोत्ति णायव्वो ॥६५५॥

श्रद्धानाश्रद्धानं यस्य च जीयस्य भवति तत्त्वेयु । विरताविरतेन समः सम्यग्मिथ्यावृष्टिरिति ज्ञातव्यः ।

जीवादिपदात्यं गच्छेत् आवनोर्ध्वं जीवंगे श्रद्धानमुमश्रद्धानमुमोर्म्मो बलोर्ळे संपतासंपतंगंतु संपममुमसंपममुमोर्म्मो बलोर्ळे यक्कुमते । मिथ्योर्ळे तत्वात्यं श्रद्धानमुमतत्वात्यं श्रद्धानमुमोर्म्मो ब-
लोर्ळे यक्कुमपुदरिना जीवं सम्यग्मिथ्यावृष्टिये वितरियल्पडुवं ।

मिच्छाद्द्वो जीवो उवइह्ठं पवयणं ण सद्दहदि ।

सद्दहदि असम्भावं उवइह्ठं वा अणुवइह्ठं ॥६५६॥

मिथ्यावृष्टिर्जीवः उपदिष्टं प्रवचनं न श्रद्दधाति । श्रद्दधात्यसद्भावमुपदिष्टं धानुपदिष्टं ॥

मिथ्यावृष्टिर्जीवं उपदेशं गेप्यल्पट्टागमपदात्यंगळं नयुवनल्लं । उपदेशं गेप्यल्पट्टुमनुपदेशं गेप्यल्पडुवुमनसद्भावमननागमपदात्यंगळं नयुवं ।

यो जीवः सम्यक्त्वाल्लितो मिथ्यात्वं यावन्न प्राप्तः तावत् सासादन इति ज्ञेयं स च दर्शनमोहनीय-
स्वैवापेक्षया पारिणामिकभावेन सहितः, चारित्रमोहनीयापेक्षया तस्यौदयिकभावसद्भावात् ॥६५४॥

जीवादिपदात्यं यस्य जीवस्य श्रद्धानमश्रद्धानं च युगपदेव दैवसंयमस्य संयमार्थयमवद्भवति स जीवः
सम्यग्मिथ्यावृष्टिरिति ज्ञातव्यः ॥६५५॥

मिथ्यावृष्टिर्जीवः उपदिष्टान् आसागमपदार्थान् न श्रद्दधाति । उपदिष्टान् वानुपदिष्टान्च असद्भावान्
अनाप्यागमपदार्थान् श्रद्दधाति ॥६५६॥ अथ सम्यक्त्वमार्गभायां जीवसंस्थो गाथायनेपाह—

जो जीव सम्यक्त्वसे गिरकर जयत्तक मिथ्यात्वको प्राप्त नही होवा तवत्तक उसे
सासादन जानना । वह दर्शन मोहनीयकी अपेक्षा ही पारिणामिक भाववाला होता है ।
पारित्र मोहनीयकी अपेक्षा तो अनन्तानुबन्धीका उदय होनेसे औदयिक भाववाला है ॥६५४॥
जैसे देशसंयमकी एक साथ संयम और असंयम दोनों होते हैं वैसे ही जिस जीवके
जीवादि पदार्थोंमें श्रद्धान और अश्रद्धान दोनों ही एक साथ होते हैं वह जीव सम्यग्मिथ्या-
वृष्टि जानना ॥६५५॥

मिथ्यावृष्टि जीव जिन भगवान्के द्वारा कहे गये आस, आगम और पदार्थोंका श्रद्धान
नहीं करता । किन्तु कुदेवोंके द्वारा उपदिष्ट और अनुपदिष्ट असमीचीन मिथ्या आस, मिथ्या
आगम और मिथ्या पदार्थोंका श्रद्धान करता है ॥६५६॥

पन्नासंसेज्जदिमा सासणमिच्छा य संखगुणिदा इ ।

मिस्ता तेहि विहीणो संसारी वामपरिमाणं ॥६५९॥

पत्यासंख्यातैकभागः सासादनमिध्यादृष्टयश्च संख्यातगुणिताः खलु । मिश्राः तैर्विहीनः

संसारी वामपरिमाणं ॥

पत्यासंख्यातैकभागप्रमितः सासादनमिध्यादृष्टिगण्यः ५ मा सासादनरं नोडलु ५

० ० ४

सम्यग्मिध्यादृष्टिगण्यः संख्यातगुणितमाप्ररप्पुः ५ स्फुटमागि ई राशिचक्रविहीनसंसारिराशि-

० ०

वामदण्ड प्रमाणमङ्कुं । या १३- ।

नवपदार्यगण्ड प्रमाणं पेटल्पडुगुं । जीवंगलु । १६ अजीवंगलु पुद्गलंगलु सखंजीवराशिचं

नोडलनंतगुणमङ्कुं । १६ ख । धम्मद्रव्यमो'बु १ । अधम्मद्रव्यमो'बु १ । आकाशद्रव्यमो'बु १ । काल-

द्रव्यं जगत्त्रेणिघनप्रमितमङ्कुं ≡ मितजीवं गुदि साधिकपुद्गलराशिप्रमितमङ्कुं ३ पुण्यभोर्व- १०

१६ ख

गलु असंपतकं देशसंयतकं कूडि प्रमत्ताद्युपरितनगुणस्यानर्वात्तगळं संख्यातविदं साधिकरप्पुः

५ ० ० ४ अजीवगुण्यं द्वचद्वंगुणहानिसंख्यातैकभागमवकु स ०-१२-१ पापजीवंगलु

० ० ० ४

साधिकसिद्धराशिबिहीन संसारिराशिप्रमाणमप्यः १३ । अजीवपापं द्वचद्वंगुणहानिसंख्यातबहु-

पत्यासंख्यातैकभागमात्रः सासादनमिध्यादृष्टयः ५ तेभ्यः सम्यग्मिध्यादृष्टयः संख्यातगुणाः ५

० ० ४

० ०

स्फुटं एतद्राशिपञ्चकोनसंसारिराशिचक्रपरिमाणं भवति या १३-नवपदार्यप्रमाणमुच्यते—

१५

जीवाः १६ अजीवेषु पुद्गलाः सर्वजीवराशितोऽन्तगुणाः १६ ख । धम्मद्रव्यमेकं । अधम्मद्रव्यमेकं ।

आकाशद्रव्यमेकं । कालद्रव्यं जगत्त्रेणिघनमात्रं । ≡ । एवमजीवपदार्थो मिलित्वा साधिकपुद्गलराशिमात्रः

३

१

१६ ख । पुण्यजीवा अवंपतदेशसंयतान्मेलयित्वा तत्र प्रमत्तादीना संख्याते मुते एतावन्तः ५ ० ० ४ अजीव-

० ० ० ४

पुण्यं द्वचद्वंगुणहानिसंख्यातैकभागः स ० १२-१ पापजीवाः साधिकपुण्यजीवसिद्धराशिबिहीनसंसारिराशिः १३-१

१

पहलके असंख्यातवै भाग सासादन होते हैं जिनकी रुचि मिध्या होती है । उनसे २०

सम्यग्मिध्यादृष्टि संख्यातगुणे हैं । संसारी जीवोंकी राशिमेंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदक-

सम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादन और मिश्र इन पाँचकी राशियोंको घटानेपर मिध्या-

दृष्टियोंका परिमाण होता है । अब नौ पदार्थोंका परिमाण कहते हैं—जीव अनन्त हैं ।

अजीवोंमें पुद्गल समस्त जीवराशिसे अनन्तगुणा है । धम्मद्रव्य एक है । अधम्मद्रव्य एक है ।

आकाशद्रव्य एक है । कालद्रव्य जगत्त्रेणिके पन अर्थात् लोकप्रमाण है । इस प्रकार अजीव २५

पदार्थ सभ मिलकर साधिक पुद्गलराशिप्रमाण है । असंयत और देशसंयतके प्रमाणको

प्रमत्त आदिके प्रमाणमें मिलानेपर पुण्य जीवोंका प्रमाण होता है । डेढ़ गुण-हानि प्रमाण

इंनु भगवदहंत्वरभेऽपर घादचरनारविग्रहंइवंदनानंरितजुष्युंजायमान श्रीमद्वायराजगुह-
मंडलाचार्यमहाचार्यादीवररायवशिष्यामहत्कलविद्वज्जनचक्रवर्ति धीमवभवगुत्तितित्वातचक्र-
वर्ति धीपादचंकरजोरंनितललाटपट्टं धीमत्केतवपुणविरचितगोम्मदसारकणादवृत्तिजीवतत्त्व-
प्रदीपिकेयोञ्जीवकावृत्तितप्ररूपपथंगञ्जीञ्जी समवरां सम्पत्त्वभाग्यंनामहाधिकारं व्याकृतमाप्नु ॥

इत्याचार्यभोनेमिबन्धविद्वान्प्रचक्रवृत्तिविरचितयो गोम्मदसाधारनामवत्तवंप्रहनुती जीवतत्त्व-
प्रदीपिकाप्रणयनी जीवकावृत्ते विनतिरक्षणपागु सम्पत्त्वरभाषंपात्रस्वभावात्
सतदयोर्भिकारः ॥१७॥

५

इस प्रकार भाषाये श्री वेमिषन्ध विरचित गोम्मदसार अथवा नाम संघर्षमहकी भगवान् अहंत्त्व देव
पामेश्वरके सुन्दर चरमकर्मकी बन्धनासे प्राप्त पुरुषके पुंनस्वरूप राजगुह मण्डलाचार्य
महावारी श्री भगवदहंत्वी विद्वान् प्रचक्रवृत्तिके चरमकर्मकी भूमिसे सोमिष कजादवाके
श्री केमचक्रवृत्तिके द्वारा रचित गोम्मदसार कणादवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी
अनुसारीनी मंडल-उद्योका तथा बसकी अनुसारीनी पं, दोहरमकाचित
सम्पत्त्वभाषणिका नामक भाषादीकाकी अनुसारीनी हिन्दी भाषा
दीकामें जीवकावृत्तिकी कौत प्ररूपणात्रोमे-से सम्पत्त्वभाग्यं
प्ररूपणा नामक सप्रहर्षा अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥१७॥

१०

१५

आहारमारंभंतिपदुगं वि नियमेण पृगदितिगंतु ।
दसदिसिगदा हृ सेना पंचसमुत्पाद्या हीति ॥६६९॥

आहारमारणान्तिरुतमुत्पाद्यपेकविधिकं तु । अदिगताः समु दीयाः पंचसमुत्पाता भवति ॥

आहारसमुत्पातुं मारणातिरुतमुत्पातमेवेरुं समुत्पातगत्रेकरितिकंग्रुपुतु । दीय- ५
वेरनासमुत्पातारिचंचसमुत्पातंगमु अदिगतांग्रुपुतु ।

आहारानहारकासमे वेन्दरं:—

अंगुलप्रमंरुभागो कालो आहारयस्य उरुस्तो ।

कम्मन्नि अनाहारो उरुस्तं विष्णि समया हृ ॥६७०॥

अंगुलांतस्वागभागः काल आहारस्योःरुतः । कम्मंनि अनाहारः उरुष्टयस्यः समयाः सतु ॥ १०

सूच्यंनुतातंस्वातैरुभागमारकातमहाररुतुहृष्टमवहुं । त्रिसमयोनोन्प्रासाष्टारतैरुभाग-
मारकातं जयन्यमवहुं । कम्मंनकारोऽङ्गु अनाहाररुतुहृष्टकातं मूव समयंग्रुपुतु । जयन्यकाल-
मेकसमयमवहु आहार अनाहार

उ गुर जय १—१ उरुष्ट सम ३ अ - स १
० १८

अनंतरमाहारमाणंघेयोऽङ्ग जीवतंस्वेवं वेन्दरं ।

१५

कम्मन्इकायजोगी होदि अनाहारयाण परिमाणं ।

तच्चिरदिदमंसारी मज्जो आहारपरिमाणं ॥६७१॥

कम्मंनकाययोगिनो भवतनाहारकाणां परिमाणं । तच्चिरहिततंसारी सस्यः आहारक-
परिमाणं ॥

आहारमारणान्तिरुतमुत्पाद्यपेक एवदिभतं भवति तु- पुनः सेनाः पंचसमुत्पाताः अदिगता २०
भवति ॥६६९॥ आहारानहारकासमाह—

आहारकाः उरुष्ट सूच्यंनुतातंस्वातैरुभागः २ । जयन्यः त्रिसमयोनोन्प्रासाष्टारतैरुभागः ।

अनाहारकाः कम्मंनकारे उरुष्टः त्रिसमयः । जयन्यः एकसमयः । सतु—रुष्टं ॥६७०॥ अथात्र जीव-
तंस्वामाह—

आहारक और मारणातिक ये दो समुत्पात ही एक विज्ञानं गमन करते हैं । किन्तु २५
येच पांच समुत्पात दसों दिनाओंमें गमन करते हैं ॥६६९॥

आगे आहार और अनाहारका फाल कहते हैं—

आहारका उरुष्टकाल सूच्यंगुलके अंसंनयातये भाग है । जयन्यकाल तीन समय कम
उरुष्टकामका अठारहवां भाग है । अनाहारका फाल कम्मणकायमें उरुष्ट तीन समय और
जयन्य एक समय है ॥६७०॥

इनमें जीर्णकी संख्या कहते हैं—

१०

आहारनाशंशिवद्युं वि नियमेन श्मश्रुतिमंनु ।
दमशिविगदा द्दु मेना संनमनुपादया होति ॥६६९॥

आहारान्नाशिककनुपादयमेवशिविगदं नु । दमशिविगदा द्दु मेना संनमनुपादया भवति ॥

आहारकमनुपादानुं शारणागिकमनुपादानमेवशुं मनुपादानमेवशिविगदमनुपादुं । दम- १
वेरनामनुपादानाशिकमनुपादाननुं दमशिविगदमनुपादुं ।

आहारानाहारकालमे वेन्दरं —
अंगुलप्रमंशुनागो कापो आहारयन् उरुहन्तो ।
कम्ममि अनाहारो उरुहन्तं विज्जि मन्वा द्दु ॥६७०॥

अंगुलप्रमंशुनागो कापो आहारयन् उरुहन्तो । कम्ममेव अनाहारो उरुहन्तं विज्जि मन्वा द्दु ॥ १०
शुभंशुनागोकापोकेकामानावकालमहाहरकनुपादयमेवशुं । विज्जिमन्तोःशुभंशुनागोकापोकेकाम-
मात्रकालं उरुहन्तंशुं । कम्ममेवकापोःशुभंशुनागोकापोकेकामानावकालं उरुहन्तंशुं । अनाहारक-
मेककालमवशुं आहार मन्वा

उ म्पु रे जय १-१ आहार मय १ म- ११
१८

अनंशुमाहारमागंवेदोः प्रवृत्तमेव वेन्दरं ।
कम्ममि कापजोगं होदि अनाहारयान विज्जिवापं ।
विज्जिगदिसंमंशुं मन्तो आहारपरिमाणं ॥६७१॥

अनंशुमाहारमागंवेदोः प्रवृत्तमेव वेन्दरं । ११
कम्ममि कापजोगं होदि अनाहारयान विज्जिवापं ।
विज्जिगदिसंमंशुं मन्तो आहारपरिमाणं ॥६७१॥
कम्ममेवकापजोगो भवत्यनाहारकालो विज्जिवापं । विज्जिगदिसंमंशुं मन्तो आहारक-
परिमाणं ॥

आहारान्नाशिककनुपादयमेवशिविगदं नु- १०
भवति ॥६६९॥ आहारानाहारकालमनुपादुं—

आहारकालं उरुहन्तंशुं मन्तोःशुभंशुनागोकापोकेकामानावकालं उरुहन्तंशुं । अनाहारक-
कालमवशुं मन्तोःशुभंशुनागोकापोकेकामानावकालं उरुहन्तंशुं । अनाहारक-
कालमवशुं मन्तोःशुभंशुनागोकापोकेकामानावकालं उरुहन्तंशुं । अनाहारक-
कालमवशुं मन्तोःशुभंशुनागोकापोकेकामानावकालं उरुहन्तंशुं ।

आहारक और आहारानाशिक के दो अनुपादान ही एक विधा में एकत्र करी है । किन्तु १०
ऐस वीच मनुपादान एसी विधाओमें मन्व करके है । ११९१
आगे आहार और अनाहारका काळ बहुरे है—
आहारिका कनुपादान शुरुआरुके अर्थकाएके काए है । अनाहारिका काळ अनाहार
कनुपादानका अनाहारकी अना है । अनाहारका काळ कम्ममेवकापोके कनुपादान एव एकर मीर
अनाहार के अना है ॥६७०॥
इसके तीसरी मन्वा बहुरे है—
१११

इतु धीमद्वहृत्तरमेदवरचापचरनारविद्वद्वंशवंदानंदितुष्पुंजापमान धीमद्वापराजगुरु-
 मंडलावाप्यं गभ्यंनहावावयावोद्वरराजवाशिपितामहसकलविद्वन्जनचक्रवर्ति धीमदभयमूर्तिस्त्रोत-
 चक्रवर्तिधोपादपंकजरजोरंजितललाटपट्टं धीमत्केलावभगविरचितमप्य गोम्मटसारकर्णाटकवृत्ति-
 जीवतत्त्वप्रदीपिकेपोऽऽ जीवकांडवृत्ति प्ररूपनंगोऽऽ एकान्तवृत्ति माहारमार्गवापिकारं
 निरूपितमाप्नु ।

५

हरवाचार्यधीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तिविरचिताया गोम्मटसाधारणानाम्प्रसंगहृत्सो एतन्मदीपिका-
 स्वाया जीवकाण्डे विद्यतिप्रकरणानु माहारमार्गनामप्रकरणानामैकान्तविरचोर्नपिकाः ॥१९॥

इस प्रकार भाषार्थ धी नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अथ नाम पंचमसहस्रको भगवान् अहंश्च रेव
 पामेइरके मुन्दर चरगक्रमकोकी बन्दनासे प्रात पुष्पके पुंश्रवकर राजगुह मण्डलाचार्य
 महावादी धी भमपयन्दी सिद्धान्त चक्रवर्तीके चरगक्रमकोकी पूर्वमे घोमिठ कलाटवाडे
 धी केलाचक्रणीके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी
 अनुसारीको संस्कृतकोडा तथा इसको अनुसारिणी पं. दोडरमळराचित
 सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक भाषाटीकाकी अनुसारीणी हिन्दी भाषा
 टीकामें जीवकाण्डको धीम प्रकरणकोमैसे माहारमार्गवा
 प्ररूपना नामक कबोसर्वा भविकाए सम्पूर्ण हुआ ॥१९॥

१०

१५

राशि गस्ति चभुहंशनिगळु = २ व्यसित चभुहंशनिजीवंगळु । प्र १ फ = ४ इ । २ लक्ष्य = २
 ४१४ ५ ४४ ५

अचभुहंशनिगळु १३-अवधिदर्शनिगळु ५० केवलदर्शनिगळु ३-॥
 ००

इतु भगववहंत्यपरमेश्वरषास्त्ररपारविबहुं द्वचंदनानं वितपुण्यपुं ज्ञायमानधोमद्रायराजगुरुभूमं-
 डलाचार्य्यंमहावाबवाशेश्वरराय याद्विपितामहसकलविद्वज्जनचक्रर्योत्तधोमदभयसूरिसिद्धात-
 पुरुवर्तितधोपादपंकजंरजोरंजितलाटपट्टं धोमत्केमयणविरचितमप्य गोम्मटसारकण्टिकवृत्ति ५
 जीवतत्व प्रदीपिकेयोळु विमानुपयोगाधिकारं निगदितमावुतु ॥

४। फ = १ इ च । पं । २ । इति त्रैराशिकलक्ष्यमात्राः - = २ = व्यक्तिवधुंशनिः - प्र - ४ । फ = ६ २
 ४ ४ ० ४ ५ ५

इति त्रैराशिकलक्ष्यमात्राः = २ - अचभुहंशनिः १३- अवधिदर्शनिः ५० केवलदर्शनिः ३ ॥६७६॥
 २ ०० १ १
 ४ ५ ४

हरयाचामंधोनेमिचन्द्रविद्वान्तचक्रवर्तिविरचिताया गोम्मटसारापरनामपञ्चसंपहवृत्तौ तत्वप्रदीपिका-
 श्यायं जीवकाण्डे विद्यतिप्ररूपणानु उपयोगमार्गणाप्ररूपणा नाम विशेषधिकारः ॥२०॥ १०

४८७ को टीकामें कहा है । अवधिदर्शनवालोंका परिमाण अवधिज्ञानियोंके समान और
 केवलदर्शनिषोंका परिमाण केवलज्ञानियोंके समान जानना । एकेन्द्रियसे लेकर क्षीणरूपाय
 गुणस्थान पर्यन्त अनन्तानन्त जीवराशि प्रमाण अचक्षुदर्शनी हैं ॥६७६॥

इस प्रकार भाषार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार भयर नाम पंचसंमहकी भगवान् अर्हन्त देव
 परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डकाचार्य महायादी १५
 श्री भमरनन्दो सिद्धान्तचक्रवर्तीके चरणकमलोंकी भूकिसे गोभित छकाटवाले श्री केशववर्णा-
 के द्वारा रचित गोम्मटसार कणाटवृत्ति जीवतत्व प्रदीपिकाकी अनुसारीणी संस्कृतटीका
 यथा उसकी अनुसारीणी पं. टोडरमल रचित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक
 मायाटीकाकी अनुसारीणी हिन्दी भाषा टीकामें जीवकाण्डके अन्तर्गत
 मध्य प्ररूपणाओंमेंसे उपयोगमार्गणा प्ररूपणा नामक बीसवों
 अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥२०॥ २०

नियमविदमवकुमा नात्कमपर्ष्यात्तगुणस्थानंगच्छाद्युर्वेधोडे पेच्छवपं :-

मिच्छे सासणसम्मि पुवेदयदे कवाडजोगिम्मि ।

णरतिरिये वि य दोष्णिण वि होंतिचि जिणेहि णिदिदुं ॥६८१॥

मिथ्यादृष्टो सासावनसम्यग्दृष्टो पुवेदासंयते कवाटयोगिनि नरतिरिचि च द्वावपि भवत इति जिनैर्निदिष्टं ॥

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानबोळं सासावनसम्यग्दृष्टिगुणस्थानबोळं पुवेदोदपासंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानबोळं कपाटसमुद्घातसयोगकेवलिगुणस्थानबोळंमिनु मनुष्यरोळं तिम्यंचरोळमा यरडुमोदारिकाययोगमं तन्मिश्रकाययोगमुमपुवे विनु बीतरागसख्वंजरिवं पेळस्पट्टुडु । मत्तमोदारिकमिश्रकाययोगबोळं एकंद्रियबादरसूक्ष्मद्वित्रिचतुरिद्रियासंज्ञिपंचेंद्रियसंज्ञिपंचेंद्रियापर्ष्यात्प्रजोवसमाससप्तकमं सयोगिरेवलियोळं कवाटसमुद्घातबोळं औदारिकमिश्रयोगमदुवुं कूडि जीवसमासाष्टकमक्कुं १०

| | |
|----|-------|
| औ | मिश्र |
| १३ | ४ |
| ७ | ८ |

वेगुवं पज्जते इदरे खलु होदि तस्स मिस्सं तु ।

सुरणिरयचउट्टाणे मिस्से ण हि मिस्सजोगो दु ॥६८२॥

वेगुवंधः पर्याप्ति इतरस्मिन् खलु भवति तस्य मिथस्तु । सुरनारकचतुःस्थाने मिश्रे न हि मिश्रयोगस्तु ॥

वैक्रियिककाययोग पंचेंद्रियपर्ष्यात्तवेचनारकमिथ्यादृष्टिसासादनमिथासंयतगुणस्थानचतुष्टयबोळंक्कुं । तन्मिश्रयोगं देवनारकमिथ्यादृष्टिसासादनासंयतगुणस्थानत्रयबोळमक्कुं । वैक्रियिक-

तन्मिश्रयोगः अपर्याप्तचतुर्गुणस्थानेष्वेव नियमेन ॥६८०॥ तेषु केपु ? इति चेदाह—

मिथ्यादृष्टो सासादने पुवेदोदपासंयते कपाटसमुद्घातसयोगे, चैतेषु अपर्याप्तचतुर्गुणस्थानेषु स औदारिकमिश्रयोगः स्यादित्यर्थः । तौ योगौ द्वावपि नरतिरस्चोरेवेति संधंज्ञेयत् । जीवसमासाः औदारिकयोगे पर्याप्ताः सन्त । तेन मिश्रयोगे अपर्याप्ताः सन्त । सयोगस्य चक्रः एवमष्टो ॥६८१॥

वैक्रियिककाययोगः पर्याप्तदेवनारकमिथ्यादृष्ट्यादिचतुर्गुणस्थानेषु भवति खलु स्फुटम् । तु-गुनः

चार गुणस्थानोंमें होवा है ॥६८०॥

किन गुणस्थानोंमें होवा है यह कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिमें, सासादनमें, पुरुषवेदके उदय सहित असंयतमें और कपाट समुद्घात सहित सयोगकेबलीमें इन चार अपर्याप्त अवस्था सहित गुणस्थानोंमें औदारिकमिश्रयोग होवा है । औदारिक और औदारिकमिश्र ये दोनों भी योग मनुष्य और तिर्यचोंमें ही सर्वज्ञ-देवने कहे हैं । औदारिक योगमें सात पर्याप्त जीवसमास होते हैं । अतः औदारिक मिश्र योगमें सात अपर्याप्त जीवसमास होते हैं और सयोगकेबलीके एक जीवसमास होता है इस तरह आठ जीवसमास होते हैं ॥६८१॥

वैक्रियिक काययोग पर्याप्त देव नारकियोंके मिथ्यादृष्टि आदि चार गुणस्थानोंमें होवा है । वैक्रियिक मिश्रकाय योग मिश्रगुणस्थानमें तो नहीं होवा, अतः देवनारकियोंके

स्थानचतुष्टयम् एकैन्द्रियबावरसूक्ष्मद्वित्रिचतुरिन्द्रियासंज्ञिपंचेंद्रियसंज्ञिपंचेंद्रियजीवगण उत्तरभव-
शरीरग्रहणात्स्यं स्वस्वयोग्यचतुर्गतिगच्छते धोपुदं विग्रहगतियं युवा विग्रहगतियोऽप्य अपर्ष्यामिजीव-
समासिगच्छेत् प्रतरसमुत्पातलोरुपुरणसमुत्पातसमयप्रमवत्तिसयोगिभट्टारकन काम्मंगकाययोगाऽ
पर्ष्यामिजीवसमासेगृह्णति काम्मंगकाययोगदोऽर्द्धं जीवसमासेगच्छन्पुत्रु का =

गु ४
जी ८

धावरकायपद्भुडी संदो सेसा असण्णिआदी य ।

अणियद्विससय पढमो भागोत्ति जिणेहि णिद्विददं ॥६८५॥

स्थावरकायप्रभृति पंडः शेषाः असंशयान्भवत् । अनिवृत्तेः प्रथमभागपर्यन्तं जिनैर्निर्दिष्टं ॥

वेदमार्गणयोः स्थावरकायदोः मिथ्यादृष्टिप्रभृतियानि पंडवेदिगच्छनिवृत्तिकरणगुणस्थान-

पंचमार्गदोः प्रथमसवेदभागपर्यन्तमो भूतं गुणस्थानं गच्छोऽप्यह । अत्र कारणमागि नपुंसक-

वेददोः गुणस्थाननवरुम् एकैन्द्रियबावरसूक्ष्मद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियसंज्ञिसंज्ञिपर्ष्यामिजीवसमासेगच्छ १०

पदिनात्कुमप्युत्रु । शेषस्त्रीवेदिगच्छं पुंवेदिगच्छं संज्ञिसंज्ञिमिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोदल्लोऽनिवृत्ति-

करणगुणस्थानं तंतम्म सवेदभागपर्यन्तमो भूतं गुणस्थानं गच्छोऽप्यह । अत्र कारणमागि स्त्रीवेद-

दोः पुंवेददोःमो भूतमो भूतं गुणस्थानं गच्छं । संज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तपर्य्यामिजीवसमासेगच्छ

नात्कु नात्कुमप्युत्रु न । स्त्रीः पुं

१ । १ । १ ।
४ ४ ४

धावरकायपद्भुडी अणियद्वीवितिचउत्थभागोत्ति ।

कोद्वितियं लोहो पुण सुद्धमसरागोत्ति विण्णोयो ॥६८६॥

स्थावरकायप्रभृत्यनिवृत्तिद्वित्रिचतुर्धंभागपर्यन्तं । क्रोधप्रयं भवति लोभः पुनः सूक्ष्मसराग-

पर्यन्तं चित्तोयः ॥

पूरणवाले च भवति तेन तत्र गुणस्थानानि जीवसमासाश्च तदत्र चत्वारि अष्टौ भवन्ति ॥६८७॥

वेदमार्गणयोः पञ्चवेदः स्थावरकायमिथ्यादृष्ट्याद्यनिवृत्तिकरणप्रथमसवेदभागान्तं भवति तेन तत्र

गुणस्थानानि नव । जीवसमासाश्चतुर्दश । शेषस्त्रीवेदी संज्ञिसंज्ञिमिथ्यादृष्ट्याद्यनिवृत्तिकरणस्वस्ववेदभाग-

पर्यन्तं भवतः तेन दशगुणस्थानानि नव नव । जीवसमासाः संज्ञिसंज्ञिनौ पर्याप्तपर्याप्ताविति चत्वारः इति

विनैरुत्तम् ॥६८५॥

फालमें होवा हे । इससे उसमें गुणस्थान और जीवसमास उसीकी तरह क्रमसे चार और

आठ होते हैं ॥६८४॥

वेदमार्गणार्थे नपुंसकवेद स्थावरकायसम्बन्धी मिथ्यादृष्टिसे लेकर अनिवृत्तिकरणके

प्रथम सवेदभागपर्यन्त होवा हे । अतः उसमें नौ गुणस्थान होते हैं । जीवसमास चौदह

होते हैं । शेष स्त्रीवेद और पुरुषवेद संज्ञी-असंज्ञी मिथ्यादृष्टिसे लेकर अनिवृत्तिकरणके अपने-

अपने सवेद भागपर्यन्त होते हैं । इससे उनमें नौ-नौ गुणस्थान होते हैं । तथा जीवसमास

संज्ञी, असंज्ञी, पर्याप्त, अपर्याप्त चार होते हैं ऐसा जिनवेदने कहा है ॥६८५॥

सण्णाणतिरां अविरदसन्मादी छट्टगादि मणपञ्जो ।

खीणकसायं जात्र दु केवलणार्णं जिणे सिद्धे ॥६८८॥

सज्ज्ञानत्रिकमसंयतसम्पद्दृष्टपावि पप्रकावि मनःपर्यायः क्षीणकपायं यावत् केवलज्ञानं जिनेसिद्धे ॥

मतिश्रुतावधि सम्यग्ज्ञानत्रितयमसंयतसम्पद्दृष्ट्यादिक्षीणकपायगुणस्थानपर्यन्तं मोभत् ५
गुणस्थानंगळोच्छ्रुत्तु । संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्ताऽपर्याप्तजीवसमासेगळेरडेरडणुयु । मनःपर्यायज्ञानं
पप्रगुणस्थानवर्ति प्रमत्तसंयतनविद्यायि क्षीणकपायपर्यन्तनेऽ गुणस्थानबोळणुयु । संज्ञिपंचेंद्रिय-
पर्याप्तजीवसमासो देयक्कुं । केवलज्ञानं सयोगिकेवलियोळमयोगिकेवलियोळं सिद्धरोळमक्कुमल्लि
संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तजीवसमासमुं समुद्घातजिननल्लि ओदारिकमिश्रमुं काम्मंणकाययोगमुमुळ्ळ-
वरिदमपर्याप्तजीवसमासमुं कूडि जीवसमासद्वयं संभवितुगुं— १०

कु । कु । वि । म । श्रु । अ । म । के
२ । २ । २ । ९ । ९ । ९ । ७ । २
१४ । १४ । १ । २ । २ । २ । १ । २

अयदोचि हु अविरमणं देसे देसो पमचइदरे य ।

परिहारो सामाहयच्छेदो छट्टादि धूलोचि ॥६८९॥

असंयतपर्यन्तमविरमणं देसे देशः प्रमत्ते इतरस्मिन्श्च । परिहारः सामायिकच्छेदोपस्था-
पनो पप्रादिस्थूलपर्यन्तं ॥

सुहुमो सुहुमकसाए संते खीणे जिणे जइसखादं ।

संजममग्गणभेदा सिद्धे णत्थिचि णिदिदट्ठं ॥६९०॥

सूक्ष्मः सूक्ष्मकपाये शांते क्षीणे जिने यथाख्यातः । संयममार्गणाभेदाः सिद्धे न संति
इति निहिट्टं ॥

संयममार्गणेपोळु मिप्यादृष्टिगुणस्थानं मोबलोडसंयतसम्पद्दृष्टिगुणस्थानपर्यन्तं नाल्कुं
गुणस्थानंगळोच्चविरमणमक्कुमल्लि पदिनाल्कुं जीवसमासंगळुमणुयु । देशसंयतगुणस्थानबोळु देश- २०

मत्यादिसम्पद्ज्ञानत्रयं असंयतादिक्षीणकपायान्तं तेन तत्र गुणस्थानानि नव । जीवसमासो संज्ञिपर्याया-
पर्याप्तो द्वौ । मनःपर्ययज्ञानं पप्रदिक्षीणकपायान्तं तेन तत्र गुणस्थानानि सप्त जीवसमासः संज्ञिपर्याप्त एवैकः ।
केवलज्ञानं सयोगीयोगोः सिद्धे च । तत्र जीवसमासो संज्ञिपर्याप्तसयोगीपर्याप्तो द्वौ ॥६८८॥

संयममार्गणाया अविरमणं मिप्यादृष्ट्याद्यसंयतान्तचतुर्गुणस्थानेषु । तत्र जीवसमासाश्चतुर्दश । देगसंयमः

मति आदि तीन सम्यग्ज्ञान असंयतसे लेकर क्षीणकपाय गुणस्थानपर्यन्त होते हैं इससे २५
उनमें नौ गुणस्थान होते हैं । जीवसमास संज्ञिपर्याप्त अपर्याप्त दो होते हैं । मनःपर्ययज्ञान
छठे गुणस्थानसे क्षीणकपाय पर्यन्त होता है अतः उसमें सात गुणस्थान होते हैं और जीव-
समास एक संज्ञिपर्याप्त ही होता है । केवलज्ञान सयोगी, अयोगी और सिद्धोंमें होता है ।
उसमें संज्ञी पर्याप्त तथा समुद्घातगत सयोगीकी अपेक्षा संज्ञी अपर्याप्त ये दो जीवसमास
होते हैं ॥६८८॥

संयममार्गणामें असंयम मिप्यादृष्टिसे लेकर असंयतपर्यन्त चार गुणस्थानोंमें होता ३०

दर्शनमार्गणयोः चक्षुर्दृशनं चतुरिन्द्रियमिध्यादृष्टि मोदलोऽङ्घ्रि क्षीणकपायगुणस्थानपर्यन्तं पन्नेरङ्घ्रि गुणस्थानं गच्छेत्पुनरुल्लि चतुरिन्द्रियसंज्ञि संज्ञियासंज्ञिपंचेन्द्रियपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासे गच्छेत्पुनरु । अचक्षुर्दृशनं स्थावरकायमिध्यादृष्टिगुणस्थानमावियागि क्षीणकपायगुणस्थानपर्यन्तं पन्नेरङ्घ्रि गुणस्थानं गच्छेत्पुनरुल्लि पदिनात्कुं जीवसमासे गच्छेत्पुनरु । अवधिदर्शनमसंयतसम्यग्दृष्टि- गुणस्थानमावियागि क्षीणकपायगुणस्थानपर्यन्तमो भन्तु गुणस्थानं गच्छेत्पुनरुल्लि संज्ञिपंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्तजीवसमासे गच्छेत्पुनरु । केवलदर्शनं सयोगिकेवलिययोगिकेवलियगच्छेत्पुनरु गुण- स्थानं गच्छेत्पुनरुल्लि संज्ञि चेंद्रियपर्याप्तजीवसमासेयुं समुद्रपातकेवलिय अपर्याप्तजीवसमासेम- मितेरङ्घ्रि जीवसमासे गच्छेत्पुनरु — च । अ । अ । के । गुणस्थानातीतरप्य सिद्धरोक्तं केव-

१२।१२।९।२।

६।१४।२।२।

लदशनं नरकुं ॥

धावरकायप्यङ्घ्रि अवरिदसम्मोचि असुदृतिपणिलेस्सा ।

सण्णीदो अपमत्तो जाव द्दु सहतिणिलेस्साओ ॥६९२॥

१०

स्थावरकायप्रभृत्पविरतसम्यग्दृष्टिपर्यन्तमनुभ्रयलेदयाः । संज्ञितोऽप्रमत्तं पावत् शुभ्रयलेदयाः ॥

लेश्यामार्गणयोः अशुभ्रयलेदयेगच्छे स्थावरकायमिध्यादृष्टिगुणस्थानमावियागि असंयत- सम्यग्दृष्टिगुणस्थानपर्यन्तं नोत्कुं गुणस्थानं गच्छेत् संभविमुववलि एकेन्द्रियधावरसूकमद्वित्रिघत्तुः पंचेन्द्रियसंयतसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्तभेदविभिन्नजीवसमासे गच्छेत्पुनरु । तेजःपक्षलेदयेगच्छेत् संज्ञिमिध्यादृष्टिगुणस्थानमावियागि अप्रमत्तगुणस्थानपर्यन्तमेळुं गुणस्थानं गच्छेत्पुनरुल्लि संज्ञि- पर्याप्तापर्याप्तजीवसमासे गच्छेत्पुनरु ।

१५

दर्शनमार्गणयोः चक्षुर्दर्शनं चतुरिन्द्रियमिध्यादृष्ट्यादिक्षीणकपायान्तं । तत्र जीवसमासाः चतुरिन्द्रिय- संयतसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताः यद् । अचक्षुर्दर्शनं स्थावरकायमिध्यादृष्ट्यादिक्षीणकपायान्तं तत्र जीवसमासाश्चतुर्दश । अवधिदर्शनं असंयतसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताः । केवलदर्शनं सयोगियोगगुण- स्थानयोः तत्र जीवसमासो केवलज्ञानोक्तो द्वौ । सिद्धेऽपि केवलदर्शनं भवति ।

२०

लेश्यामार्गणयोः अनुभ्रयलेदयाः स्थावरकायमिध्यादृष्ट्याद्यसंयतान्तं तत्र जीवसमासाः चतुर्दश । तेजःपक्षलेदये संज्ञिमिध्यादृष्ट्याद्यप्रमत्तान्तं तत्र जीवसमासो संज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताः ॥६९२॥

दर्शनमार्गणयोः चक्षुर्दर्शनं चतुरिन्द्रिय मिध्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकपाय पर्यन्तं होता है । उसमें जीवसमास चौद्विन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय, असंज्ञि पंचेन्द्रिय इनके पर्याप्त और अपर्याप्त के भेदसे छह होते हैं । अचक्षुर्दर्शनं स्थावरकाय मिध्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकपाय गुणस्थान पर्यन्त होता है । उसमें जीवसमास चौद्वह होते हैं । अवधिदर्शनं असंयतसे लेकर क्षीण- कपाय गुणस्थानपर्यन्त होता है । उसमें जीवसमास संज्ञिपर्याप्त और अपर्याप्त होते हैं । केवलदर्शनं सयोगी-अयोगी गुणस्थानोंमें होता है । उसमें दो जीवसमास होते हैं जो केवल- ज्ञानमें होते हैं । सिद्धोंमें भी केवलदर्शनं होता है ॥६९१॥

२५

लेश्यामार्गणयोः तीन अनुभ्रय लेदया स्थावरकाय मिध्यादृष्टिसे लेकर असंयत गुणस्थान पर्यन्त होती है उनमें जीवसमास चौद्वह हैं । तेजोलेदया और पक्षलेदया संज्ञिमिध्यादृष्टिसे लेकर अप्रमत्त गुणस्थान पर्यन्त होती हैं । उसमें जीवसमास संज्ञिपर्याप्त और संज्ञिअपर्याप्त होते हैं ॥६९२॥

३०

सम्यक्त्वमार्गणयोः सिध्यादृष्टिः सासादनं मिथुनं तंतम्म गुणस्थानदोऽयवकुमल्लि
 सिध्यादृष्टिः पविनाल्लु जीवसमासेगळप्पु । सासादनोऽयवकेन्द्रियवावरापव्याप्त द्विद्विषापव्याप्त
 त्रीद्विषापव्याप्तचतुरिद्विषापव्याप्तं संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तापर्याप्ता संज्ञिपंचेंद्रिषापव्याप्तजीवसमासे-
 गळेळप्पु । द्वितीयोपशमसम्यक्त्वविराधकनप्प सासादननुमोऽने वाचाप्यापेर्धैविबं
 संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तिजीवसमासेयुं देवापव्याप्तिजीवसमासेमुनेरडप्पु । मिथुनोऽय संज्ञिपंचेंद्रिय- ५
 पर्याप्तिजीवसमासेयो देयकुं । प्रथमोपशमसम्यक्त्वमु वेदकसम्यक्त्वमुमयंतसम्यग्दृष्टि-
 यागियागप्रमत्तपव्यांतं नाल्लुं नाल्लुं गुणस्थानंगळेळप्पु । अल्लि प्रथमोपशमसम्यक्त्ववोऽय
 मरणमिल्लप्पुवरिबं संज्ञिपव्याप्तिपंचेंद्रियजीवसमासेयो देयकुं । वेदकसम्यक्त्ववोऽय संज्ञिपंचेंद्रिय-
 पर्याप्तापर्याप्तिजीवसमासेगळेरडप्पुवेकेऽबोडे धम्मंय नारकापव्याप्तिनुं भवनप्रयवज्जितदेवापव्याप्तिनुं
 भोगभूमिजमनुष्यतियं चापव्याप्तिनुं वेदकसम्यग्दृष्टियोऽनप्पुवरिबं । १०

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वको येळवपं ।

विदियुवसमसम्मत्तं अविरदसम्मादि संतमोहो ति ।

खड्गं सम्मं च तथा सिद्धोत्ति जिणेहि जिदिहं ॥६९६॥

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमविरतसम्यग्दृष्ट्याद्युपशांतमोहगुणस्थानपव्यांतं धाधिकसम्यक्त्वं च
 तथा सिद्धपव्यांत जिनेप्रिद्विष्टं ॥ १५

सम्यक्त्वमार्गणयोः सिध्यादृष्टिः सासादनः मिथुन स्वस्वगुणस्थाने एव भवति । तत्र सिध्यादृष्टि
 जीवसमासाद्यनुसृतं । सासादने बादरैकद्विचतुरिन्द्रियसंयुक्तपर्याप्तिर्धैविपव्याप्तिः सात । द्वितीयोपशमसम्य-
 क्त्वविराधकस्य सासादनत्वप्रातिपक्षे च संज्ञिपव्याप्तिवशापर्याप्तौवपि दो । मिथे संज्ञिपव्याप्तिः । प्रथमोपशमवेदक-
 धम्यक्त्वे द्वे भ्रंशयत्ताद्यप्रमत्तान्तं स्तः । तत्र जीवसमासः प्रथमोपशमसम्यक्त्वे मरणाभावात् संज्ञिपव्याप्त एवैकः ।
 वेदकधम्यक्त्वे संज्ञिपव्याप्तापर्याप्ताौ दो । पर्याप्तारकस्य भवनप्रयवज्जितदेवस्य भोगभूमिनरतिरत्तरोच वर्यातात्वेर्नर
 वत्संभवात् ॥६९५॥ द्वितीयोपशमसम्यक्त्वस्याह— २०

सम्यक्त्वमार्गणयोः सिध्यादृष्टिः, सासादन, और मिथ अपने-अपने गुणस्थानमें होते
 हैं । सिध्यादृष्टिमें जीवसमास चौदह होते हैं । सासादनमें बादर एकेन्द्रिय, दोइन्द्रिय,
 त्रेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञिअपर्याप्त तथा संज्ञिपर्याप्तअपर्याप्त ये सात जीवसमास होते हैं ।
 द्वितीयोपशम सम्यक्त्वकी विराधना करके सासादनको प्राप्त होनेके पक्षमें संज्ञिपर्याप्त और २५
 वेदअपर्याप्त दो जीवसमास होते हैं । मिथगुणस्थानमें संज्ञिपर्याप्त जीवसमास होता है ।
 प्रथमोपशम सम्यक्त्व और वेदकसम्यक्त्व असंयतसे अममत्त गुणस्थान पर्यन्त होते हैं ।
 प्रथमोपशम सम्यक्त्वमें मरणका अभाव होनेसे जीवसमास एक संज्ञिपर्याप्त ही है । वेदक
 सम्यक्त्वमें संज्ञिपर्याप्त, अपर्याप्त दो होते हैं । क्योंकि पर्याप्त नामक प्रधान नरकमें भयनप्रिकको
 छोड़कर देवोंमें और भोगभूमिया मनुष्य तथा तिर्यंचोंमें अपर्याप्त दसामें भी वेदक सम्यक्त्व १०
 होता है ॥६९५॥

द्वितीयोपशम सम्यक्त्वको कहते हैं—

१. धु. सावित्री दो ।

दृष्टिगुणस्थानमोदेयश्कुमल्लि संज्ञिजीवसंबंधिपर्याप्तापर्याप्तजीवसमासद्वयमुच्चियलुट्टिद द्वावरा-
जीवसमासेगळनितुमप्युवु नियमविदं सं । अ
१२ । १ ।
२ । १२ ।

धावरकायप्पहुडो सजोगिचरिमोत्ति होदि आहारी ।

कम्मइय अणाहारी अजोगिसिद्धे वि णायव्वो ॥६९८॥

स्यावरकायप्रभृति सयोगिचरमन्त्रं भवत्याहारो । काम्मणे अनाहारी अयोगिसिद्धेपि
ज्ञातव्यः ॥

आहारमार्गणेषु स्यावरकायमिथ्यादृष्टिपादियामि सयोगकेवलपर्यन्तं पविमूलं गुणस्या-
नंगळोळाहारिगळोळु आहारियक्कुमल्लि सर्व्वमुं जीवसमासेगळु पदिनाल्कुमप्युवु । विप्रहृति-
काम्मणकाययोगद मिथ्यादृष्टिसासादनसम्पद्दृष्टि असंयतसम्पद्दृष्टिगुणस्थानत्रयमुं प्रतरलोकपूरण-
समुद्घातसयोगिगुणस्थानमुमयोगिगुणस्थानमुमितुगुणस्थानपंचकदोळमनाहारियक्कुमल्लि एकंद्रिय-
बादरसूक्ष्मापर्याप्तजीवसमासद्वयमुं द्वित्रिचतुरिंद्रियापर्याप्तजीवसमासत्रयमुं संज्ञिरंचेन्द्रियपर्याप्ता-
पर्याप्तद्वयमुमसंयतपर्याप्तजीवसमासेयुमितु जीवसमासाष्टकमत्रकुं जा । अ अनंतरं गुण-
१३ । ५
१४ । ८

स्थानंगळोळु जीवसमासयं पेद्दपवः—

मिच्छे चोद्दसजीवा सासण अयदे पमत्तविरदे य ।

सण्णिदुगं सेसगुणे सण्णी पुण्णो दु खीणोत्ति ॥६९९॥

मिथ्यादृष्टौ चतुर्दशजीवाः सासादने अयते प्रमत्तविरते च । संज्ञिद्वयं दोयगुणे सजिदुग्गंस्तु
क्षीणकषायपर्यन्तं ॥

द्वौ । तु—तुनः अज्ञिजीवः स्यावरकायासंबन्धन्तमिथ्यादृष्टिगुणस्थाने एव स्थानियमेन तत्र जीवसमासा द्वावरा
सजिनो द्वयभावात् ॥६९७॥

आहारमार्गणायां स्यावरकायमिथ्यादृष्टिपादिसयोगान्तं आहारी भवति । तत्र जीवसमासासचतुर्दश
मिथ्यादृष्टिसासादानसंयतसयोगानां काम्मणयोगावसरे अयोगिसिद्धयोश्च अनाहारी ज्ञातव्यः । तत्र जीवसमासा
अर्थात्ताः सप्त । अयोगस्य चंकः ॥६९८॥ अथ गुणस्थानेषु जीवसमासानाह—

असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यन्त मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही होता है । नियमसे उसमें चारह जीव-
समास होते हैं क्योंकि संज्ञी सम्बन्धी दो जीवसमास नहीं होते ॥६९७॥

आहारमार्गणामें स्यावरकाय मिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगकेवलपर्यन्त आहारी होता
है । उसमें जीवसमास चोद्दह होते हैं । मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत, और सयोगकेवली
के काम्मणयोगके समय तथा अयोगी और सिद्धोंमें अनाहारी जानना । उसमें जीवसमास
अपर्याप्त सम्बन्धी सात होते हैं और अयोगीके एक पर्याप्त होता है ॥६९८॥

अथ गुणस्थानोंमें जीवसमासोंको कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोरल्लोड्ड पदिनाल्लु' गुणस्थानंगळोळु पय्याप्तिगळुं प्राणंगळुं पयक्कागि पेळ्ळपडवेळं बोडे सुगमंगळप्पुबारिवमवेते बोडे क्षीणकपायगुणस्थानपर्यंतं प्रत्येकमारु-
 पय्याप्तिगळं बशप्राणंगळुमप्पुवु । सयोगिकेवल्लिभट्टारकनोळु भावेन्द्रियमिल्ल । द्रव्येन्द्रियापेक्षेयिनारं
 पय्याप्तिगळोळुवु चाग्वलप्राणमुमुच्छ्वासनिश्वासप्राणमुमायुःप्राणमुं कायवलप्राणमेधो नाल्लुं
 प्राणंगळप्पुवु । उळ्ळिबिन्द्रिय प्राणंगळुं मनोबलप्राणमुं संभविस्तवु । आ सयोगिकेवल्लिगे चाग्योः
 निलुत्तिरल्लु मूह प्राणंगळप्पुवु । उच्छ्वासनिःश्वासमुपरतमागुत्तिरल्लुमेरडेप्राणंगळप्पुवु । अयोगि
 भट्टारकनोळु आयुष्यप्राणमो देयक्कु' । पूर्वसंचितनोकर्मकर्मसंचयं प्रतिसमयमेकैकनिपेकस्थिति-
 गळिधि चरमतसमयबोळु किच्चिन्नूनडपण्डंगुणहानिमात्रनोकर्मसंचयमुं कर्मसंचयमुमुवपिसि
 द्रव्यात्यिकनयापेक्षेयिवमयोगिचरमतसमयबोळु कर्ममुं नोकर्ममुं केट्टुवु पय्याप्यात्यिकनयापेक्षेयिन-
 नंतरसमयबोळिहट्टित्तिरल्लु लोकाप्रतिवासि सिद्धपरमेष्ठियपपने वुवु तात्पर्यं ।

५
१०

अनंतर गुणस्थानंगळोळु संज्ञेगळं पेळ्ळपड :-

छट्टोचि पढमसण्णा सकज्ज सेसा य कारणावेक्खा ।

पुव्वो पढमणियट्टी सुहूमोत्ति कमेण सेसाओ ॥७०२॥

पट्टपय्यंतं प्रथमसंज्ञा सकार्या शोदादच कारणापेक्षाः । अपूर्वप्रथमानिवृत्ति सूक्ष्मपर्यंतं
 क्रमेण शोदादच ॥

१५

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादिद्यागि प्रमत्तगुणस्थानपर्यंतमूहं गुणस्थानंगळोळु सकार्यमप्पा-
 हारादिचतुःसंज्ञेगळुमप्युधा पट्टनल्लि आहारसंज्ञे व्युच्छित्तिपाटु । उपरितनगुणस्थानबोळुभावमं

चतुर्दशगुणस्थानेषु पर्याप्तयः प्राणादच पृथक् नोच्यन्ते सुगमत्वात् । तथाहि-क्षीणकपायपर्यन्तं
 पट्टपर्याप्तयः दस प्राणाः । सयोगिजिने भावेन्द्रियं न, द्रव्येन्द्रियापेक्षया पट्टपर्याप्तयः बागुच्छ्वासनिश्वासायु-
 कायप्राणादचत्वारि भवन्ति । ऐवेन्द्रियमनःप्राणाः पट्ट न सन्ति । तथापि बाग्योगे विश्रान्ते त्रयः । पुनः
 उच्छ्वासानिश्वासे विश्रान्ते द्वौ । अयोगे आयुः प्राण एकः । प्राक्संचितनोकर्मकर्मसंचयः प्रतिसमयमेकैकनिपेकं
 गळु किच्चिन्नूनडपण्डंगुणहानिमात्रो द्रव्याधिकनयेन अयोगिचरमे विनश्यति पर्यायाधिकनयेन अनन्तरसमये
 एवेति तात्पर्यम् ॥७०१॥ अथ गुणस्थानेषु संज्ञा आह—

२०

मिथ्यादृष्ट्यादिप्रमत्तान्तं सकार्याः आहारादिचतसः संज्ञा भवन्ति । पट्टगुणस्थाने आहारसंज्ञा

चौदह गुणस्थानोर्मि पर्याप्ति और प्राण पृथक् नहीं कहे हैं क्योंकि सुगम है । यथा—
 क्षीणरूपाय गुणस्थान पर्यन्त छह पर्याप्तियाँ और दस प्राण होते हैं । सयोगिकेवलीमें भावेन्द्रिय
 नहीं है । उनके द्रव्येन्द्रियकी अपेक्षा छह पर्याप्तियाँ हैं और चचनचल, उच्छ्वास-निश्वास,
 आयु और कायवल ये चार प्राण होते हैं । शेष इन्द्रियाँ और मन ये छह प्राण नहीं हैं । उन
 चार प्राणोंमें-से भी चचनयोगके रूक जानेपर तीन रहते हैं, पुनः उच्छ्वास-निश्वासका
 निरोध होनेपर दो रहते हैं । अयोगिकेवलीके एक आयुप्राण होता है । पूर्व संचित कर्म-
 नोकर्मका संचय प्रतिसमय एक-एक निपेक गळते-गळते किंचित् न्यून डेह गुणहानि प्रमाण
 रहता है । सो द्रव्याधिक नयसे तो अयोगीके अन्तिम समयमें नष्ट होता है और पर्यायाधिक
 नयसे अनन्तर समयमें नष्ट होता है ॥७०१॥

२५
३०

गुणस्थानोर्मि संज्ञा कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिसे डेकर प्रमत्त गुणस्थान पर्यन्त आहार आदि चारों संज्ञाएँ कार्यरूपमें

३५

निराणमप्युतु। मिथगुणस्थानबोद्धुं पय्याप्तपंचेंद्रियप्रसकाधिक्रमेयवक्तुं। असंपतगुणस्थानबोद्धुं पय्याप्तापय्याप्तसंज्ञिपंचेंद्रियप्रसकाधिक्रमेयवक्तुं। वैशतंपतगुणस्थानबोद्धुं पय्याप्तसंज्ञिपंचेंद्रियप्रसकाधिक्रमेयवक्तुं। प्रमतगुणस्थानबोद्धुं संज्ञिपंचेंद्रियपय्याप्तप्रसकाधिक्रमेयवक्तुं। अग्रमतगुणस्थानं मोदलोद्धुं पत्नोद्धुं अहृत्कारोत्तरपंचेंद्रियपय्याप्तापय्याप्तप्रसकाधिक्रमेयवक्तुं। अग्रमतगुणस्थानं मोदलोद्धुं क्षीणकृपायगुणस्थानपय्याप्तमाहं गुणस्थानंगोद्धुं प्रत्येकं पय्याप्तपंचेंद्रियप्रसकाधिक्रमेयवक्तुं। सयोगकेवलगुणस्थानबोद्धुं पय्याप्तसंज्ञिपंचेंद्रियप्रसकाधिक्रमेयवक्तुं। समुद्घातसयोगकेवलमृत्कारकोद्धुं औदारिकनिधयोगनुं कार्मणकाययोगमुमुळुद्धुं बरिदमपय्याप्तपंचेंद्रियप्रसकाधिक्रमेयवक्तुं। अयोगिकेवलमृत्कारकोद्धुं पय्याप्तपंचेंद्रियप्रसकाधिक्रमेयवक्तुं—

पुद्गलविपाकिशरीरंगोपांगनामकर्मोदयर्गच्छिवं मनोवचनकाययुक्तमप्य जीववके कर्मनो-
 कर्मांगमनकारणमप्युवावुवोद्धुं शक्ति जीवप्रवेदापरिस्पंदसंभूतमदु योगमं बुद्धकुम्बु मनोवचनकाय- १०
 प्रवृत्तिभेदवि त्रिविधमवक्तुमल्लि पय्याप्तरायनोद्द्विद्रियावरणक्षयोपशमदिवमंगोपांगनामकर्मोदयविवं-
 मनःपय्याप्तिपुक्तमे मनोवर्गणापातपुद्गलस्फंगञ्जो अष्टच्छरारविवाकाराविवं हृदयबोद्धुं निर्माणा-
 नामकर्मोदयसंपावितद्रव्यमनः पदपत्रंप्रगोद्धुं नोद्द्विद्रियक्षयोपशमजीवप्रवेदप्रचयबोद्धुं लक्ष्म्युप-
 योगलक्षणभावेत्रियं मनमंबुद्धकुमा मनोव्यापारमं मनोयोगमेंबुवा मनोयोगमुं सत्याद्यत्थं

पय्याप्ताः सन्निवकायः उभयसंचेति पदजीवनिःकायः। मिथे सन्निपञ्चेंद्रियप्रसकायपय्याप्त एव। असंपते उभयः, १५
 देवसंपते पय्याप्त एव। प्रमते पय्याप्तः। साधारकपित्स्त्रुमयः। अग्रमत्तादिधीवचयायान्तेषु पय्याप्त एव।
 सयोगे पय्याप्तः। समुद्घाते त्रुमयः। अयोगे पय्याप्त एव।
 पुद्गलविपाकिशरीरान्नोपाङ्गनामकर्मोदयैः मनोवचनकाययुक्तजीवस्य कर्मनोकर्माणकारणा या शक्तिः
 तज्जनितजीवप्रवेदपरिस्पन्दनं वा योगः स च मनोवचनकायवृत्तिभेदारनेषा। तत्र वीर्यनिद्रायनोद्द्विद्रियावरण-
 क्षयोपशमेन अन्नोपाङ्गनामोदयेन च मनःपय्याप्तिपुक्तजीवस्य मनोवर्गणापातपुद्गलस्फन्धानां अष्टच्छरारविद्या- २०
 क्षरेण हृदये निर्माणनामोदयसंपावितं द्रव्यमनः। तत्पत्रापेषु नोद्द्विद्रियावरणक्षयोपशमयुक्तजीवप्रवेदप्रचये

इन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और असंक्षी पंचेन्द्रिय प्रसकाय अपर्याप्त होते हैं। संक्षी पंचेन्द्रिय
 सकाय दोनो होते हैं। इस प्रकार इस गुणस्थानमें छहो जीवनिःकाय होते हैं। मिथमें संक्षी
 रेन्द्रिय प्रसकाय पर्याप्त ही है। असंयतमें दोनो है। देवसंयतमें पर्याप्त ही है। प्रमत्तमें
 संक्षी है। आहारक श्रद्धि सहिव दोनो है। अग्रमत्तसे क्षीणकृपायपर्यन्त दोनो है। सयोगीमें
 संक्षी है। ससुद्घातमें दोनो है। अयोगीमें पर्याप्त ही है।
 पुद्गलविपाकी शरीर और अंगोपांग नामकर्मके उदयके साथ मन-वचन-कायसे युक्त
 जीवके कर्म-नोकर्मेके आनेमें कारण जो शक्ति है अथवा उसके द्वारा होनेवाला जो जीवके
 शीका चलन है वह योग है। वह मन-वचन-कायकी प्रवृत्तिके भेदसे तीन प्रकारका है।
 गान्धराय और नोद्द्विद्रियावरणके क्षयोपशमसे तथा अंगोपांगनाम कर्मके उदयसे मनः- ३०
 तिसे युक्त जीवके मनोवर्गणारूपसे आये हुए पुद्गल स्फन्धोका आठ पांशुकीके कमलके
 तरसे हृदयमें निर्माणनाम कर्मके उदयसे रचा गया द्रव्यमन है। उन पांशुकीके अमभागोंमें

सम्यग्दृष्टियागिद्वयं मातृकुमपया केळगे देहासंपन्नगुणस्थानमं पोहि द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टियागिकं-
 मपया, असंपन्नगुणस्थानमं पोहि असंपन्नसम्यग्दृष्टियागिकंमपया मरणमावोडे देवाऽसंपन्नकं ।
 मेनु मिथप्रकृत्युदयविवं मिथनक्कु । मन्तानुबंधिख्यापोदयविवं द्वितीयोपशमसम्यक्त्वविराधकं
 सासादननुमोळनं याचाप्यंपशवोळ सासादननुमक्कुमपया मिध्यात्वकम्मोंवपविवं मिध्यादृष्टिगु-
 मरकुमंवी विदोषं द्वितीयोपशमसम्यक्त्ववोळरियल्पडुगं । धायिकसम्यक्त्वमसंपत्ताविचतुगुण-
 स्थानवर्तिगळ येदकसम्यग्दृष्टिगळकम्मंभूमि जेदमप्परवगंरुक्कुमवगंळं केवल श्रुतकेवलद्वय
 धोपादपादवंवीळ सामप्रकृतिगळं निरवदोषं कोळिसि धायिकसम्यग्दृष्टिगळप्पह । मानुषियदम-
 संपन्नसम्यग्दृष्टिगळ देहासंपन्नक्येपुपचारमहाप्रतिकेपह केवलद्वयपादमूलवोळ सामप्रकृतिगळं
 धायिकसि धायिकसम्यग्दृष्टिगळप्पह । मित्तु सम्यक्त्वं सामान्यविवदोवु विदोषविवं मिध्यात्व
 सासादननिधउपशमवेदकसायिकमे वित्तु यद्विधिमकुं । मिध्यादृष्टिगुणस्थानवोळ मिध्यादृष्टिगुण-
 सासादननोऽमा सासादनद्विधिमकुं । मिधगुणस्थानवोळ मिधद्विधिमकुं । असंपन्नगुणस्थानमादि-
 यानिअप्रमत्तगुणस्थानपप्यंतं प्रत्येकमुपशमवेदकसायिकंगळमूहं सम्यक्त्वंगळपुयु ।

अपूर्वकरणागुणस्थानं मोदलागि उपसांतकपायगुणस्थानपम्यंतमुपशमश्रेणियोळ नात्तुं गुण-
 स्थानंगळोळ प्रत्येकमुपशमसम्यक्त्वमुं धायिकसम्यक्त्वमुमेरुं संभविमुयवु । क्षपकश्रेणियोळ

मिध्यादृष्टो भवन्ति । द्वितीयोपशमसम्यक्त्वे विदोषः । स कः ? उपशमश्रेण्योहणायं साविद्याप्रमत्तवेदक-
 ण्यमदृष्टिः कर्मव्यपरीणामसामर्थ्यान् अनन्तानुबन्धिनां प्रवृत्तौपशमं विना अप्रवृत्तौपशमं बधोनिषेकानु-
 त्थम् वा विसंयोज्य सायित्वा दर्शनमोहप्रसव्य अन्तरकरणेन अन्तरं कृत्वा उपशमविधानेन उपशमस्य
 अनन्तरप्रथमसमये द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टिर्भूत्वा उपशमश्रेण्यमाह्वय उपशमश्रेण्यमायं गत्वा अन्तर्मुहं स्पित्वा
 क्लेशं अवतीर्य अप्रमत्तगुणस्थानं प्राप्य प्रमत्ताप्रमत्तारावृत्तिवृत्तानि करोति । वा अपः देहासंपन्नो भूत्वा
 आस्ते । वा अदंशतो भूत्वा आस्ते । वा मरणे देहासंपन्नः स्यात् वा मिथप्रकृत्युदये मिथः स्यात् । अनन्तानु-
 बन्धनमउमोदये द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं विराधपदीत्याचार्यवधे सासादनः स्यात् वा मिध्यात्वोदये मिध्यादृष्टिः
 स्यात् इति । धायिकसम्यक्त्वं तु असंपन्नविचतुगुणस्थानमनुभवाणां असंपन्नदेहासंपन्नोपचारमहाप्रतमानुषीणां

मिध्यात्वका उदय होनेपर मिध्यादृष्टि हो जाते हैं । द्वितीयोपशम सम्यक्त्वमें विदोष कथन
 है । उपशम श्रेणीपर आरोहण करनेके लिए साविशय अप्रमत्तवेदक सम्यग्दृष्टि तीन फरणरूप
 परिणामांकी सामर्थ्यसे अनन्तानुबन्धी कपार्योका प्रशस्त उपशमके विना अप्रशस्त उपशमके
 द्वारा नीचेके निषेकोको उत्कर्षणके द्वारा ऊपरके निषेकोमें स्थापित करता है अथवा विसंयो-
 जन द्वारा अन्य प्रकृतिरूप परिणमाता है । इस तरह उनके क्षपण करके दर्शनमोहकी तीन
 प्रकृतिर्योका अन्तरकरणके द्वारा अन्तर करके उपशम विधानके द्वारा उपशम करता है ।
 उदन्तर प्रथम समयमें द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी होकर उपशम श्रेणीपर पड़ता है । और
 उपशान्त कपाय तक जाकर वहाँ अन्तर्मुह तक ठहरकर क्लेशसे उतरता हुआ अप्रमत्त
 गुणस्थानको प्राप्त करके हजारों धार सातवेंसे छठेमें और छठेसे सातवेंमें आता-जाता है ।
 अथवा नीचे उतरकर देहासंपन्नी या असंपन्नी हो जाता है । अथवा मरणकाल आनेपर
 असंपन्नदेह हो जाता है अथवा मिथ प्रकृतिके उदयमें मिथगुणस्थानवर्ती हो जाता है । जिन
 आचार्योंका मत है कि अनन्तानुबन्धीका उदय होनेपर द्वितीयोपशम सम्यक्त्वकी विरा-
 धना करता है उनके मतसे सासादन हो जाता है । अथवा मिध्यात्वके उदयमें मिध्यादृष्टि

१. म जहलवकुमर्गळ ।

स्थानंगळोळं आहारमो देयवक्त्वं । अयोगिकेवल्लिभट्टारकरोळं गुणस्थानात्तीतरप्प सिद्धपरमेष्ठिगळो-
ळमनाहारमेयवक्त्वं :—

मि । सा । मि । अ । दे । प्र । अ । छ । अ । सू । उ । क्षी । स । अ । सि
२ । २ । १ । २ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । २ । १ । १

अनंतरं गुणस्थानंगळोळपयोगमं पेळ्दपं :—

दोणहं पंच य छन्वेव दोसु मिस्सम्मि होति यामिस्सा ।

सचुवजोगा सचसु दो चेव जिणे य सिद्धे य ॥७०५॥

५

द्वयोः पंच च षट् चैव द्वयोः मिथे भवंति व्यामिथाः । सप्तोपयोगाः सप्तमु द्वावेव जिनयोः
सिद्धे च ॥

गुणपर्ययवद्वस्तुग्रहणव्यापारमुपयोगमे बुदक्त्वं । ज्ञानमं वस्तु पुट्टितसुदत्तुमंते पेळ्दत्तुदु ।
स्वहेतुजनितोप्यत्यंः परिच्छेद्यः स्वतो यथा ।

तथा ज्ञानं स्वहेत्वत्यं परिच्छेद्यात्मकं स्वतः ॥ []

१०

‘नात्याल्लोको कारणं परिच्छेद्यत्वात्तमोवत्’ । [परी० मु०] एदितु अंतप्पुपयोगं जानोपयोग-
मे बुं दर्शनोपयोगमे बुं द्विविधमश्कुमल्लि कुमति कुश्रुत विभंग मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञान-
मे बुं जानोपयोगमे बुं तेरनवक्त्वं । चक्षुरचक्षुरवधिकेवलदर्शनमे बुं दर्शनोपयोगं नाल्कु तेरनक्त्वं ।
मिध्यादृष्टिगुणस्थानदोळ कुमतिकुश्रुतविभंगमे बुं मूर्धं जानोपयोगंगळं चक्षुरचक्षुर्दर्शनमे बुं वेरुं
दर्शनोपयोगंगळमितु अद्युमुपयोगंगळप्पुवु । सासादनगुणस्थानदोळमंते अद्युमुपयोगंगळप्पुवु ।
मिथगुणस्थानदोळ मतिश्रुतावधिचक्षुरचक्षुरवधिगळं बाह मिथोपयोगंगळप्पुवु । असंयतसम्यग्दृष्टि-

१५

सयोगे अयोगे सिद्धे च अनाहारः । तेन मिध्यादृष्टिशासादनासंयतसंयोगेषु तौ द्वौ शेषनवस्वाहारः । अयोगि-
सिद्धे वा अनाहारः ॥७०५॥ गुणस्थानेषु उपयोगमाह—

गुणपर्ययवद्वस्तु उदग्रहणव्यापार उपयोगः । ज्ञानं न वस्तुत्यं तथा चोर्कं—

स्वहेतुजनितोप्यत्यंः परिच्छेद्यः स्वतो यथा ।

२०

तथा ज्ञानं स्वहेत्वत्यं परिच्छेदात्मकं स्वतः ॥१॥

“नात्याल्लोको कारणं परिच्छेद्यत्वात् तमोवत् इति” । ए चोपयोगः ज्ञानदर्शनभेदाद्वेधा । तत्र
ज्ञानोपयोगः—कुमतिकुश्रुतविभंगमतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानभेदाददृष्टा । दर्शनोपयोगः चक्षुरचक्षुरवधि-

शरीर और अंगोपांग नामकर्मसे उत्पन्न शरीर वचन और मनके योग्य नोर्कर्म वर्गणाओंके
ग्रहणको आहार कहते हैं । विग्रहगतिमें प्रतर और लोकपूरण समुद्घात सहित सयोगीमें,
अयोगी और सिद्ध अनाहारक है । अतः मिध्यादृष्टि, सासादन, असंयत और सयोगकेवलीमें
प्रतर लोकपूरणवाले अनाहारक हैं । शेष नौ गुणस्थानोंमें आहार है । अयोगकेवली और सिद्ध
अनाहारक हैं ॥७०४॥

२५

गुणस्थानोंमें उपयोग कहते हैं—

गुणपर्यायसे जो युक्त है वह वस्तु है । उसको ग्रहण करनेरूप व्यापारका नाम उपयोग
है । ज्ञान वस्तुसे उत्पन्न नहीं होता । कहा है—जैसे अर्थ अपने कारणसे उत्पन्न होता है, आप
स्वतः ही ज्ञानका विषय होनेके योग्य होता है । उसी प्रकार ज्ञान अपने कारणसे उत्पन्न होता
है और स्वतः अर्थको ज्ञानरूप होता है ॥ और कहा है—अर्थ और प्रकाश ज्ञानके कारण नहीं

३०

आलापाधिकारः ॥२२॥

अनंतरमालापाधिकारं पेठलुपक्रममुत्तमिष्टदेवतानमस्काररूपपरमंगलमनंगीकरि सुत्तं गुणस्थानदोळं मार्गणास्थानदोळं विंशतिभेदंगळ्णे प्राग्योजितंगळ्णाळापत्रयमं पेठ्ठपेने'दाचार्यं प्रतिनेयं माडिदपं :—

गोदमस्थेरं पणमिय ओघादेसेसु वीसभेदार्ण ।

जोजणिकाणालावं वोळ्ळामि जहाकर्म सुणुह ॥७०६॥

गोतमस्थविरं प्रणम्य ओघादेशेषु विंशतिभेदानां । योजितानामालापं वक्ष्यामि यथाक्रमं श्रुणुत ॥

विशिष्टा गोभूमिर्गोतमा अष्टमपृथ्वी सा स्थविरा नित्या यस्य सिद्धपरमेष्ठिसमूहस्य स गोतमस्थविरः गोतमस्थविरः गोतमस्थविर एव गोतमस्थविरस्तं । अथवा गोतमो गोतमस्वामी स्थविरो यस्यासौ गोतमस्थविरः श्रीवीरवर्द्धमानस्वामी तं । अथवा विशिष्टा गोर्वाणी गोतम सव्यंभारतो तां वेत्ति अपोते वा गोतमः । स चासौ स्थविरश्च गोतमस्थविरः गोतमस्वामी तं प्रणम्येःयर्थः । सिद्धपरमेष्ठिसमूहं श्रीवीरवर्द्धमानस्वामियुग्मं भेषु गोतमगणधरस्वामियुग्मं नमस्कारं माडि गुणस्थानमार्गणास्थानंगळोळ्ळु मुनं योजिसत्पट्ट विंशतिप्रकारंगळ्णाळापमं सामान्यवर्ष्यासपर्व्यासमे'त्र जिप्रकाराळापमं यथाक्रमदिदं पेठ्ठपे केळिमे'दाचार्यं शिष्यरं शिक्षि- सिदिपं । अदे'ते'दोडे :—

नेमि धर्मरथे नेमि पूज्य सर्वनरामरैः ।

बहिरत्वःश्रियोपेतं जिनेन्दं तच्छिष्ये श्ये ॥२२॥

अथालापाधिकारं स्वैष्टदेवतानमस्कारपूर्वकं वक्तुं प्रतिजानीते—

विशिष्टा गोभूमिः गोतमा—अष्टमपृथ्वी सा स्थविरा नित्या यस्य स गोतमस्थविरः सिद्धसमूहः, गोतम- स्थविर एव गोतमस्थविरः तं अथवा गोतमः गोतमस्वामी स्थविरो यस्यासौ गोतमस्थविरः श्रीवर्द्धमानस्वामी तं । अथवा विशिष्टा गोः वाणी यस्यासौ गोतमः गोतम एव गोतमः स चासौ स्थविरश्च गोतमस्थविरः तं प्रणम्य गुणस्थानमार्गणास्थानयोः प्राग् योजितानां विंशतिप्रकाराणां आलापं यथाक्रमं वक्ष्यामि ॥७०६॥ सद्यथा—

अपने इष्टदेवको नमस्कारपूर्वक आलापाधिकारको कहनेको प्रतिज्ञा करते हैं—विशिष्ट 'गो' अर्थात् भूमि गोवमा अर्थात् आठवी पृथ्वी वह जिसकी स्थविर अर्थात् नित्य है वह गोतमस्थविर अर्थात् सिद्ध समूह । अथवा गोतम स्वामी जिसके गणधर हैं वे वर्द्धमान स्वामी, अथवा जिसकी गो अर्थात् वाणी विशिष्ट है उन गोतमस्थविरको नमस्कार करके गुणस्थान और मार्गणास्थानोंमें पूर्वयोजित वीस प्रकारके आलापोंको यथाक्रम कहेंगा ॥७०६॥

१. म'र्वाणी यस्यासौ गोतमः । गोतम एव गोतमः स चासौ ।

सामर्णं पञ्चतमपञ्चतं चेदि तिण्णि आलावा ।

दुवियप्पमपञ्चतं लद्धी णिव्वत्तमं चेदि ॥७०९॥

सामान्यपर्याप्तमपर्याप्तं चेति त्रय एवालावाः । द्विविकल्पमपर्याप्तं लक्ष्यन्तिवृत्तिश्चेति ॥

सामान्यमे'दु' पर्याप्तमे'दुमपर्याप्तमे'दितु आलापंगळु मूर्त्त्युबल्लि अपर्याप्तालापं लक्ष्य-
पर्याप्तं निवृत्यपर्याप्तमे'दितु द्विविकल्पमकम् ।

दुविहंपि अपञ्चतं ओघे मिच्छेव होदि णियमेण ।

सासण अयदपमत्ते णिव्वत्ति अपुण्णमं होदि ॥७१०॥

द्विविधमप्यपर्याप्तं ओघे मिष्यादृष्टादेव भवति नियमेन । सात्तावनानंयतप्रमत्ते निवृत्य-
पर्याप्तं भवति ॥

द्विप्रकारमनुच्छेदपर्याप्तं ओघवेळु सामान्यवेळु मिष्यादृष्टियोल्लेयक्कु नियमदिवं ।

सात्तावनसम्पद्वृष्टिगुणस्थानवेळुमसंयतसम्पद्वृष्टिगुणस्थानवेळु प्रमत्तसंयतगुणस्थान-
वेळुमी मूहं गुणस्थानंगळोळु नियमदिवं निवृत्यपर्याप्तमेयक्कु ।

जोगं पडि जोगिजिणे होदि दु णियमा अपुण्णमत्तं तु ।

अवसेसणवट्टाणे पञ्चत्तालावगो एक्को ॥७११॥

योगं प्रति योगिजिने भवति एतु नियमावपूर्णाकारं तु । अवरोधं नवस्थाने पर्याप्तालापक
एकः ॥

योगमं कुदत्तु सयोगिकेवल्लिभट्टारकजिननोळु एतु इफुटमाणि अपूर्णाकारमपर्याप्तकल्प-
मकम् । तु मत्ते अवरोधं नवगुणस्थानंगळोळु पर्याप्तालापमो देयक्कु ।

अनंतरं एतुहंदा मार्गंगास्थानंगळोळालापमं पेञ्जलुपळमिस्सि मोवलोळु गतिमार्गंगेयोळु
पेञ्जपं :—

ते आलावाः सामान्यः पर्याप्तः अपर्याप्तश्चेति त्रयो भवन्ति । तत्रापर्याप्तालापः लक्ष्यपर्याप्तः
निवृत्यपर्याप्तश्चेति द्विविधो भवति ॥७०९॥

ए द्विविधोऽपि अपर्याप्तालापः सामान्यमिष्यादृष्टादेव भवति नियमेन । सात्तावनानंयतप्रमत्तेषु नियमेन
निवृत्यपर्याप्तालाप एव भवति ॥७१०॥

योगमाधिवेव सयोगिजिने नियमेन सन् अवरोधकारं भवति । गु-दुनः ब्रह्मरोपनवगुणस्थानेषु एकः
पर्याप्तालापः ॥७११॥ अथ ऋतुसंयतमार्गंगास्थानेषु द्वौ—

इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं—

ये आलाप सामान्य, पर्याप्त, अपर्याप्त इस तरह तीन हैं । उनमेंसे अपर्याप्त आलापके
भेद दो हैं—लक्ष्यपर्याप्त और निवृत्यपर्याप्त ॥७०९॥

यह दोनों ही प्रकारका अपर्याप्त आलाप नियमसे सामान्य मिष्यादृष्टिमें ही होता
है । सात्तावन, असंयत और प्रमत्तमें नियमसे निवृत्यपर्याप्त आलाप ही होता है ॥७१०॥

सयोगी जिनेमें नियमसे योगको अपेक्षा ही अपर्याप्त आलाप होता है । तैयरी
गुणस्थानोंमें एक पर्याप्त आलाप ही होता है ॥७११॥

चौदह मार्गंगास्थानोंमें कहते हैं—

१. म धेदि । २. म धेदि ।

तेरिच्छियलद्वियपञ्जते एको अपुण्ण आलावो ।

मूलोपं मणुसतिये मणुसिणि अयदग्ग्मि पञ्जत्तो ॥७१४॥

तिर्य्यंलक्ष्यपर्याप्तौ एकोऽपुण्णालापः मूलोपो मनुष्यत्रये मानुष्यसंपत्तेः पर्याप्तः ॥

तिर्य्यंचलक्ष्यपर्याप्तोऽपुण्णो अपर्याप्तालापमो देयकं । मनुष्यगतियोर्य्यविनात्कुं गुणस्थानंग-
 लोऽपुण्णो सामान्यमनुष्यपर्याप्तमनुष्ययोनिमतिमनुष्यमेवो मनुष्यत्रयद प्रत्येकं पविनात्कुं पविनात्कुं ५
 गुणस्थानंगलोऽपुण्णो मुपेऽलापं मूलोपमेयक्कुमावोऽं योनिमत्यसंपत्तसम्यग्दृष्टिगुणस्थानवोऽपुण्णो
 लापमेयक्कुमेकेऽवोऽं कारणं मुन्नं तिर्य्यंगतिपोऽपुण्णो वेऽपुण्णो देयकं । मत्तोऽपुण्णो विशेषमुंटावोऽं
 असंयतयोनिमतिरितिर्य्यंचेयदमसंयतयोनिमतिमानुषियं प्रथमोपशमवेदकशाधिकसम्यग्दृष्टिगुण-
 लोऽपुण्णोऽपुण्णो । भुज्यमानपर्याप्तालापमेयकं । योनिमतिमनुष्यरुगळ्यु गुणस्थानंगळ्यपुण्णोऽपुण्णो
 शमथेष्यवतरणवोऽपुण्णो द्वितीयोपशमसम्यक्त्वसंभवमित्त एकेऽवोऽपुण्णो श्रेण्यारोहणे पटिसव- १०
 पुण्णोऽपुण्णो ॥

मणुसिणि पमत्तविरदे आहारदुगं तु णत्थि णियमेण ।

अवगदवेदे मणुसिणि सण्णा भूदगदिमासेज्ज ॥७१५॥

मानुषि प्रमत्तविरते आहारद्वयं नास्ति तु नियमेन । अपगतवेवायां मानुष्यां संज्ञा
 भूतगतिमाभित्य ॥ १५

तिर्य्यंचलक्ष्यपर्याप्तौ एकः अपर्याप्तालाप एव । मनुष्यगतौ सामान्यपर्याप्तयोनिमन्मनुष्येषु प्रत्येकं
 षण्णुदंशगुणस्थानेषु गुणस्थानवत् मूलोपः स्यात् तथापि योनिमदसंयते पर्याप्तालाप एव । कारणं प्राणुकमेव ।
 पुनरयं विदोषः—असंयतवैरवस्था प्रथमोपशमवेदकसम्यक्त्वद्वयं, असंयतमानुष्यां प्रथमोपशमवेदकशाधिक-
 सम्यक्त्वत्रयं च संभवति तथापि एको भुज्यमानपर्याप्तालाप एव । योनिमतौ न पञ्चगुणस्थानादुपरि गमना-
 संभवात् द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं नास्ति ॥७१४॥ २०

स्त्री और नपुंसकांमें उत्पन्न नहीं होता । तथा श्रेय मिश्र और देश संयत गुणस्थानोंमें भी एक
 पर्याप्त आलाप ही होता है ॥७१३॥

तिर्य्यंच लक्ष्यपर्याप्तकमें एक अपर्याप्त आलाप ही होता है । मनुष्यगतिमें सामान्य,
 पर्याप्त और योनिमत मनुष्योंमें-से प्रत्येकमें चौदह गुणस्थानोंमें गुणस्थानवत् जानना । फिर
 भी योनिमत मनुष्यके असंयत गुणस्थानमें एक पर्याप्त आलाप ही होता है । कारण पहले २५
 कहा ही है । पुनः इतना विशेष और है कि असंयत गुणस्थानमें तिर्य्यंचोके प्रथमोपशम और
 वेदक दो ही सम्यक्त्व होते हैं । और मानुषीके प्रथमोपशम, वेदक तथा श्वायिक तीन
 सम्यक्त्व होते हैं । तथापि एक भुज्यमान पर्याप्त आलाप ही है । योनिमती पंचम गुण स्थानसे
 ऊपर नहीं जाती इसलिये उसके द्वितीयोपशम सम्यक्त्व नहीं होता ॥७१४॥

१. म^० आलापमेयक्कुमुपशमश्रेण्यवतरणवोऽपुण्णो द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं योनिमतिगलम्बु गलेयपुण्णोऽपुण्णो ३०
 द्वितीयोपशमसम्यक्त्वसंभवमित्त ।



गुणस्थानंगळोळु पद्यगुणस्थानवृत्तिप्रमत्तसंयतनोळाहारक आहारकमिथमं बाळापद्वयमं वेळुकोळ-
 त्वेडेकं बोडा गुणस्थानवोळु अद्युभवेदोवयमुळुळोळोहारद्वि संभविसवप्पदरिंवं हृत्यपमाणं पसत्यु-
 दयमं बाहारकशरीरवोळु प्रशस्तप्रकृतिगळुगुदयनियममंतुप्पुदरिंवं । येदमागंणोळुनिवृत्तिकरण-
 सवेदभागिपर्यंतमो भत्तुं गुणस्थानंगळुपुत्रु । मेलण नालुकुमवेदभागिपर्यंतं कषायमागंणोय
 क्रोधवो भत्तुं मानवो भत्तुं मायेयो भत्तुं बावरलोभवो भत्तुं मिथ्यावृष्टिगुणस्थानमादियागिर्ह
 गुणस्थानंगळोळं सूक्ष्मलोभवकं सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानवोळं ज्ञानमागंणोय कुमतिज्ञानवेरंडुं कुश्रुत-
 ज्ञानवेरंडुं विभंगज्ञानवेरंडुं मतिज्ञानवो भत्तुं श्रुतज्ञानवो भत्तुं अवधिज्ञानवो भत्तुं मनःपर्ययज्ञानदेळुं
 केवलज्ञानवेरंडुं गुणस्थानंगळोळु । संयममागंणोय असंयमव नालुकुं देशसंयमवोडुं सामायिकव
 नालुकुं छेदोपस्थापनव नालुकुं परिहारविशुद्धि संयमवेरंडुं सूक्ष्मसांपरायसंयमवोडुं यथाख्यातसंयमव
 नालुकुं गुणस्थानंगळोळं दर्शनमागंणोय चक्षुर्दर्शनव पन्नेरेडु गुणस्थानंगळोळमचक्षुर्दर्शनव पन्नेरेडुं
 अवधिदर्शनवो भत्तुं केवलदर्शनवेरंडुं गुणस्थानंगळोळं लेख्यामागंणोय कृष्णनीलकपोतंगळनालुकुं
 नालुकुं गुणस्थानंगळोळं तेजःपदमंगळोळं गुणस्थानंगळोळं शुबललेइयय पविपूदं गुणस्थानंगळोळं
 भव्यमागंणोयोळु भव्यन पविनालुकुमभव्यनवोडुं गुणस्थानंगळोळं सम्यक्त्वमागंणोय मिथ्यात्ववोडुं
 सासादनतन्नोडुं मिथ्यन तन्नोडुं द्वितीयोपशमसम्यक्त्ववेडुं प्रथमोपशमसम्यक्त्वदनालुकुं
 वेदकसम्यक्त्वव नालुकुं क्षायिकसम्यक्त्वव पन्नोडुं गुणस्थानंगळोळं संज्ञिमागंणोयोळु संज्ञिय

द्रव्यपुष्टे भावस्थीद्रव्यपुष्टे च प्रमत्तसंयते आहारकतस्मिन्नालापी न । 'हृत्यपमाणं पसत्युदयं' इत्याहारक-
 शरीरे प्रशस्तप्रकृतीनामेवोदयनियमात् । वेदानामनिवृत्तिकरणसवेदभागान्तेषु क्रोधमानमायाबादरलोभानां
 अवेदचतुर्भागान्तेषु सूक्ष्मलोभस्य सूक्ष्मसांपराये । ज्ञानमागंणायामां कुमतिकुश्रुतविभङ्गानां द्वयोः, मतिभ्रुतावधीनां
 नवमु, मनःपर्ययस्य सप्तमु, केवलज्ञानस्य द्वयोः, असंयमस्य चतुर्मु, देशसंयमस्य एकस्मिन्, सामायिकछेदोप-
 स्थापनयोश्चतुर्मु, परिहारविशुद्धेर्द्वयोः, सूक्ष्मसांपरायस्य एकस्मिन्, यथाख्यातस्य चतुर्मु, चक्षुश्चक्षुर्दर्शनयोः
 द्वादशमु, अवधिदर्शनस्य नवमु, केवलदर्शनस्य द्वयोः, कृष्णनीलकपोतानां चतुर्मु, तेजःपद्योः सप्तमु, शुनलाया-
 स्त्रयोदशमु, भव्यमागंणायामां भव्यस्य चतुर्दशमु, अभव्यस्य एकस्मिन्, सम्यक्त्वमागंणायामां मिथ्यात्वसासादन-
 मिथ्याणामेकस्मिन्, द्वितीयोपशमस्य अष्टमु, प्रथमोपशमवेदकयोश्चतुर्मु, क्षायिकस्य एकादशमु, संज्ञिनो-

खो द्रव्यसे पुरुषके प्रमत्तसंयतमे आहारक-आहारक मिथ आलाप नहीं होते क्योंकि
 'हृत्यपमाणं पसत्युदयं' इस आगम प्रमाणके अनुसार आहारक शरीरमें प्रशस्त प्रकृतियोंके
 ही उदयका नियम है । वेद अनिवृत्तिकरणके सवेद भाग पर्यन्त होते हैं । क्रोध, मान, माया,
 बादर लोभ अनिवृत्तिकरणके वेदरहित चार भागपर्यन्त क्रमसे होते हैं । सूक्ष्मलोभ सूक्ष्म-
 साम्परायमें होता है । ज्ञानमागंणामें कुमति, कुश्रुच और विभंगके दो गुणस्थान हैं । मतिश्रुत-
 अवधिके नौ गुणस्थान हैं । मनःपर्ययके सात गुणस्थान हैं । केवलज्ञानके दो गुणस्थान
 हैं । असंयतके चार गुणस्थान हैं, देशसंयतका एक गुणस्थान है । सामायिक छेदोपस्थापनाके
 चार गुणस्थान हैं । परिहारविशुद्धिके दो, सूक्ष्मसाम्परायका एक, यथाख्यातके चार, चक्षु-
 दर्शन-अचक्षुदर्शनके चारह, अवधिदर्शनके नौ, केवलदर्शनके दो, कृष्ण-नील-कपोत लेइयाके
 चार, तेज और पद्यके सात, शुक्ललेइयाके तेरह, भव्यमागंणामें भव्यके चौदह, अभव्यका
 एक, सम्यक्त्वमागंणामें मिथ्यात्व सासादन मिथका एक-एक गुणस्थान है । द्वितीयोपशम-
 सम्यक्त्वके आठ, प्रथमोपशम और वेदकके चार, क्षायिक सम्यक्त्वके ग्यारह, संज्ञीके

स्थानदोळे दिव्यहाय प्राणंगळेरडुं अयोगिकेवल्लिगुणस्थानदायुष्प्राणमोडुं नाल्कुं संज्ञेगळुं नाल्कुं गतिगळुं धम्बुमिद्रिदंगळुं । आरुकापंगळुं पम्प्याप्रयोगंगळुपनोडुं । अपम्प्याप्रयोगंगळुं नाल्कुं मूरुवेदंगळुं नाल्कुं कयापंगळुं एंडुं ज्ञानंगळुं एळु संयमंगळुं नाल्कुं दर्शनंगळुं आरुं लेद्वयंगळुं यरडुं भयंगळुं आरुं सम्पत्त्वगळुं येरडुं संज्ञेगळुं यरडुमाहारंगळुं । पन्नेरडुमुपयोगंगळुं एंधी समुच्चयं गुणस्थानंगळोळं मार्गणास्थानंगळोळं यथायोग्यंगळ्याणि प्रहृषिसत्त्वपुण्ड्रवलि संवृष्टिः—

गु । प । जी । उ । अ । प । ५ । ६ । प्राणंगळुं १० । ३ । ९ । ३ । ८ ।
१४ । अ । ६ । ५ । अ । ५ । ५ ।

६ । ३ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । ४ । स । २ । अ । १ । संज्ञेगळुं नाल्कुं ४ । गतिगळुं नाल्कुं ४ । इन्द्रिय ५ । काय ६ । यो ११ । ४ । वे ३ । का ४ । ज्ञा ८ । सं ३ । व ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । वा २ । उ १२ ॥

जीवसमासेयोळुं विद्येयमं पेळ्ळवः—

ओघे आदेसे वा सण्णी पज्जंतगा हवे जत्थ ।

तत्थ य उणवीसंता इगिवित्तिगुणिदा हवे ठाणा ॥७२७॥

ओघे आदेशे वा संज्ञिपय्यंता भवेयुष्यं तत्र चैकान्तविज्ञाप्यंता एकद्वित्रिगुणिता भवेयुः स्थानानि ॥

सामान्यदोळं विशेषदोळं संज्ञिपय्यंतमात्र मूलजीवसमासंगळार्येडयोळुं पेळ्ळत्त्वपुण्ड्रवलि एकान्तविदातिअंतमात्र उत्तरजीवसमासस्थानविकल्पंगळुं एकद्वित्रिगुणितमात्रोळे सर्वजीवसमास- स्थानविकल्पंगळुपुण्ड्रु । सा १ । अ १ । स्या १ । ए १ । पि १ । सं १ । ए १ । वि १ । अ १ । सं १ ।

पुनः मिश्रकायापुणो, अयोग्यत्व आयुर्नामिकः । संज्ञारचतस्रः, यतयः चतस्रः, इन्द्रियाणि पञ्च, कान्याः षट्, योगाः पचाशत् एकादश, अर्थाप्याश्चतस्रारः, वेदाः त्रयः, कयापारचतस्रारः, ज्ञानानि षष्टौ, संयमाः षष्ठ, दर्शनानि चत्वारि, लेख्याः षट्, भय्यद्वयं, सम्पत्त्वानि षट्, संज्ञिद्वयं आहारद्वय उपयोगा द्वादश-एते सर्वे समुच्चयं गुणस्थानेषु मार्गणास्थानेषु च यथायोग्यं प्रहृषयिष्याः ॥७२५-७२९॥ जीवसमासेषु विष्टेपनाह—

सामान्ये विद्येये वा संज्ञिपय्यंता मूलजीवसमासा यत्र विकल्पन्ते तत्र एकाप्रविशय्यन्ता उत्तरजीव- समासस्थानविकल्प्या एकद्वित्रिगुणिताः संतः सर्वजीवसमासस्थानविकल्प्या भवन्ति ।

अयोगिके एक आयुष्प्राण है । संज्ञा चार, यवि चार, इन्द्रियाँ पाँच, काय छट्, पचाश्वयोग स्यारह, अपय्याँ चार, वेद तीन, कयाय चार, ज्ञान आठ, संयम सात, दर्शन चार, लेख्या छट्, भय्य-अभय्य, सम्पत्त्व छह, संज्ञी-असंज्ञी, आहारक-अनाहारक, उपयोग चारह । ये सब गुणस्थानों और मार्गणास्थानोंमें यथायोग्य प्ररूपनीय हैं ॥७२५-७२९॥

जीवसमासोंमें विशेष कहते हैं—

गुणस्थानों वा मार्गणाओंमें जहाँ संज्ञापय्यन्त मूल जीवसमास कहे जायें वहाँ उन्नांत पय्यन्त उत्तर जीवसमास स्थानके विकल्पोंको एक सामान्य, दो पचाँत-अपचाँत और तीन

१।१२।१५।१८।२१।२४।२७।३०।३३।३६।३९।४२।४५।४८।५१।५४।

५७ ॥ गुणकार ३ युति ५७० ॥ इतु गुणस्थानंगळोळ मागंगास्थानंगळोळ विप्रतिग्रिथं गळ

योजिसत्यइगुमवे तेंवोडे :-

वीरमुहकमलणिगगयसयलसुपगगहणपपडणसमत्यं ।

णमियूण मोदममहं सिद्धांतालावमणुवोच्छं ॥७२८॥

वीरमुहकमलनिर्गतसकलधृतग्रहणप्रतिपादनसमत्यं । नत्वा गीतममहं सिद्धांतालावमणु-
यदयामि ॥

सूरप्रवृत्तंगळप्य विप्रतिविपंगळाळापनिरूपणे माडल्पदृबन्ति मोडळोळं गुणस्थानांविवं
येळल्पइगुमवे तेंवोडे पदिनाल्कुं गुणस्थानवर्तितगळं गुणस्थानातीतरगळुमोळरु । पदिनाल्कुं जीव-
समासंगळनुळरुमतीतजोयसमासगळुमोळरु पट्पर्याप्तिगळोळरुद्विदवं । पट्पर्याप्तिपुक्तवं १०
पंचपंचपर्याप्तिपर्याप्तिपुक्तवं । चतुःचतुःपर्याप्तिपर्याप्तिपुक्तरगळुमोळरु । अतीतपर्याप्तिरगळु-
मोळरु । दशप्राण । सप्तप्राण । नवप्राण । नवप्राण । सप्तप्राण । अष्टप्राण । पट्प्राण । सप्तप्राण ।
पंचप्राण । पट्प्राण । चतुःप्राण । चतुःप्राण । त्रिप्राण । चतुःप्राण । द्विप्राण । एकप्राण । युतरु-
मतीतप्राणरगळुमोळरु । चतुर्विधसंज्ञायुक्तवं । शीतसंज्ञरगळुमोळरु । चतुर्गतिजोवंगळं
सिद्धगतिजोवंगळुमोळरु । १५

एकद्विधादिपंचजातिपुतजोवंगळुमतीतजातिगळुमोळरु । दृष्योकापिकादिपट्कापिकंगळु-
मतीतकापिकंगळुमोळरु । पंचदशयोगयुक्तदशयोगदगळुमोळरु । त्रिवेदिगळुमपगतवेदगळुमोळरु ।

एकः १ । युतिः १९० । २ ४ ६ ८ १० १२ १४ १६ १८ २० २२ २४ २६ २८ ३० ३२ ३४ ३६ ३८

गुणकारः २ युतिः ३८० । ३ ६ ९ १२ १५ १८ २१ २४ २७ ३० ३३ ३६ ३९ ४२ ४५ ४८ ५१ ५४ ५७

गुणकारः ३ । युतिः ५७० ॥७२७॥ इतोऽपि गुणस्थानेषु मागंगास्थानेषु च ते गुणजोवन्त्यादिविचरितभेदा
योजयन्ते तदथा— २०

एतन् गुणस्थानेषु यथा तावन्ननुसंगुणस्थानबीजाः तदतीताश्च सन्ति । चतुर्दशबीजप्रमाणात्तदतीताश्च
सन्ति । यद् यद् पञ्च पञ्चचतुर्दशुः पर्याप्तवर्गसंज्ञायाः तदतीताश्च सन्ति । दशमनवसप्तदशमत्रयं यद् च-
तुर्दशुस्त्रिचतुर्दशुर्दशुः तदतीताश्च सन्ति । चतुर्दशाः तदतीताश्च सन्ति । चतुर्दशिका विद्याश्च सन्ति ।

होता है । इन्हें दोसे गुणा करनेपर सबका जोड़ ३८० होता है और वीनसे गुणा करनेपर
सबका जोड़ ५७० होता है ॥७२७॥

यहसि आगे गुणस्थानोंमें और मार्गणाओंमें गुणस्थान जीवसमास इत्यादि बीस
भेदोंकी योजना करते हैं—

वर्धमान स्वामीके सुखरूपी कमलसे निकले सकलभूतको ग्रहण और प्रकट करनेमें
समर्थ गौतम स्वामीको नभस्कार करके सिद्धान्तालावको कर्तृगा ।

गुणस्थानोंमें जैसे चौदह गुणस्थानवर्ती जीव हैं । गुणस्थानसे रहित सिद्ध हैं । बीस
जीवसमाससे कुछ जीव हैं उनसे रहित जीव हैं । उह-उह, पाँच-पाँच, चार-चार पर्याप्ति
और अपर्याप्तिसे कुछ जीव हैं और उनसे रहित जीव हैं । दस सात, नौ सात, आठ उह,
सात पाँच, उह चार, चार वीन, चार दो और एक मानके पारो जीव हैं और उनसे रहित
जीव हैं । चार संज्ञावाले और उनसे रहित जीव हैं । चार गतिपाळे और गतिरहित सिद्ध १५

के। सं४। अ। सा। छे। यया। द४ ले२ क। गु॥
भा ६

सर्व्वेति सुहृमाणं कावोवं सव्वविगहे सुक्का ।
सव्वो मिस्सो देहो कवोदवण्णो ह्वे णियमा ॥

भ२। सं५। मिधरुचिरहित सं२। आ२। उ१०। विभंग ज्ञानसहित मिय्याहट्टिगुण-
स्यानर्वात्तिगळ्णे गु१। जो १४ प६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा१०। ७। ९। ७। ८। ६। ५
७। ५। ६। ४। ४। ३। सं४। ग४। इं५। का६। यो१३। आहारकद्वयरहित। वे३।
क४। ज्ञा३। कु। कु। वि। सं१। अ। द२। ले६ भ२। सं१। मि। सं२। आ२।
उ५। पर्याप्तमिय्याहट्टिगळ्णे। गु१। मि। जो७। प६। ५। ४। प्रा१०। ९। ८।
७। ६। ४॥

सं४। ग४। इं५। का६। यो१०। वे३। क४। ज्ञा३। कु। कु। वि। सं१। अ।
द२। ले३। ६। भा६। भ२। सं१। मि। सं२। आ१। उ५॥ अपर्याप्तमिध्याहट्टिगळ्णे १०
गु१। मि। जि७। पर्या। ६। ५। ४। प्रा७। ७। ६। ५। ४। ३। सं१। ग४। इं५।
का६। यो३। ओमि। वैमि। कार्म्म। वे३। क४। ज्ञा२। सं१। अ। द२। ले२ क।
भा ६
गु। भ२। सं१। मि। सं२। आ२। उ४॥

सासादनगुणस्यार्वात्तिगळ्णे गु१। सासा। जो२। प। अ। प६। ६। प्रा१०। ७।
सं४। ग४। इं१। का१। अ। यो१३। म४। वा४। ओ२। वै२। का१। वे३। क४। १५
ज्ञा३। कु। कु। वि। सं१। अ। द२। ले६। भ१। सं१। सा। सा। सं१। आ२।
६ भा

सं४ अ सा छे यया। द४ ले२ क गु।
भा ६

भ२। सं५। मिथं न हि, सं२। आ२ उ१०। विभङ्गमनःपर्ययो नहि, सामान्यमिय्यादुष्टीनां ।
गु१। जो १४। प६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा१०। ७। ९। ७। ८। ६। ५। ६। ४। ३। सं४। ग४। इं५।
का६। यो१३ आहारकद्वयं नहि। वे३। क४। ज्ञा३ कु कु वि। सं१ अ। द२। ले६। भ२ सं१ २०
भा ६

मि। सं३। आ२। उ५। तदपर्याप्तानां गु१। जो७। प६। ५। ४। प्रा१०। ९। ८। ७। ६। ४। सं४।
प४। इं५। का६। यो१०। वे३। क४। ज्ञा३ कु कु वि। सं१ अ। द२। ले६। भ२।
भा ६

स१ मि। सं२। आ१। उ५। तदपर्याप्तानां-गु१। जो७। प६। ५। ४। प्रा७। ७। ६। ५। ४। ३।
सं४। ग४। इं५। का६। यो३। ओमि। वैमि। का। वे३। क४। ज्ञा२। सं१ अ। द२
ले२। क। गु। भ२। सं१ मि। सं२। आ२। उ४। सासादनानां-गु१ सासा। जो२ प। अ। २५
भा ६

प६। ६। प्रा१०। ७। सं४। ग४। इं१। का१। यो१३। म४। वा४। ओ२। वै२।
वा१। वे३। क४। ज्ञा३ कु, कु, वि। सं१ अ। द२ ले६। भ१। सं१ सासा। सं१ आ२।
भा ६

अतस्तत्त्वगुणस्थानवर्ति अथर्ष्याप्ता संवत्साम्यगुट्टिगच्छे । गु १ । अ सं । जी १ । अ । प ।
 अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । प्र । यो ३ । ओ मि । वे मि । का ।
 । मधु । अ । म ४ । सा ३ । म । थु । अ । सं १ । अ । व ३ । घ । अ । अ । ले २ । क । गु ।
 भा ६

। सं ३ । उ वे । शा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

देवसंयतगुणस्थानवर्तिगच्छे गु १ । देव । जी १ । प । प ६ । प । प्रा १० । सं ४ ।
 । ति । म । इं १ । पं । का १ । प्र । यो ९ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे ३ । क ४ । सा ३ ।
 थु । अ । सं १ । देव । व ३ । घ । अ । अ । ले ६ । म १ । सं ३ । उ । वे । शा । सं १ ।
 भा ३

१ । उ ६ ॥

प्रमत्तगुणस्थानवर्तिप्रमत्तगे गु १ । प्र । जी २ । प । अ । प ६ । ६ प्रा १० । ७ । सं ४ ।
 । म । इं १ । पं । का १ । प्र । यो ११ । म ४ । व ४ । ओ । का १ । आ २ । वे ३ । क ४ ।
 ४ । म । थु । अ । म ४ । सं ३ । सा । छे । प । व ३ । घ । अ । अ । ले ६ । म १ । सं ३ ।
 वे । शा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥ भा ३

अप्रमत्तगुणस्थानवर्ति अप्रमत्तगे गु १ । अ प्र जी १ । प । प ६ । प । प्रा १० । सं ३ ।
 । मे । प । कारणाभावे कार्यस्याप्यभावः एतु सवसद्वेद्यंगिगे प्रमत्तनोऽदीरणे ध्युच्छित्तियादु-
 पुर्वरिदमाहारसंज्ञे अप्रमत्तनोऽु संभषित्तु । ग १ । म । इं १ । पं । का १ । प्र । यो ९ ।
 ४ । वा ४ । ओ का १ । वे ३ । क ४ । सा ४ । म । थु । अ । म । सं ३ । सा । छे । प । व ३ ।
 । अ । अ । ले ६ । म १ । सं ३ । उ । वे । शा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥

भा ३

अपूर्वकरणगुणस्थानवर्तिगच्छे गु १ । अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ ।
 अ । सं १ । अ । व ३ । घ । अ । ले ६ । म १ । सं ३ । उ । वे । शा । सं १ । आ १ । उ ६ । तत्त्वप्राप्ताना-
 भा ६

१ अ सं । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । प्र । यो ३ । ओ मि । वे मि ।
 । वे २ न पुं । क ४ । सा ३ । म थु । अ । सं १ । अ । व ३ । घ । अ । ले २ क गु । म १ । व ३ उ
 भा ६

शा । सं १ । आ २ । उ ६ । देवसंयतानां—गु १ देव । जी १ प । प ६ प । प्रा १० प । सं ४ । ग २
 म । इं १ पं । का १ प्र । यो ९ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे ३ । क ४ । सा ३ म थु । अ । सं १ देव ।
 ३ व ४ अ । ले ६ । म १ । व ३ उ । वे । शा । सं १ । आ १ । उ ६ । प्रमत्तानां—गु १ प्र । जी २
 भा ६

अ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ म । इं १ पं । का १ प्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । ओ का १ ।
 २ । वे ३ । क ४ । सा ४ म थु । अ । म । सं ३ सा छे प । व ३ व ४ अ । ले ६ । म १ । व ३ उ वे
 भा ३

। सं १ । आ १ । उ ७ । अप्रमत्तानां—गु १ अप्र । जी १ । प ६ प । प्रा १० । सं ३—म मे प । कारणा-
 वे कार्यस्याप्यभावात् मत्सद्वेद्यनुदीरणानु अथ आहारसंज्ञा नहि । ग १ म । इं १ पं । का १ प्र । यो ९
 ४ व ४ । ओ का १ । वे ३ । क ४ । सा ४ म थु । अ । म । सं ३ सा छे प । व ३ व ४ अ । ले ६ ।
 भा ३

१ । म ३ उ वे शा । सं १ । आ १ । उ ७ । अपूर्वकरणानां—गु १ अपूर् । जी १ । प ६ । प्रा १० ।

गुणमसांपरायणनस्थानवत्तिगुणमसांपरायणे गु १। गू। जी १। प ६। प्रा १०। सं १। प।

इ १। का १। यो ९। वे ०। कया १। सा ४। सं १। गू। व ३। से ६। सं २। उ।
भा १

शा। सं १। जा १। उ ७।।

उपसांतक्यायमपस्थानवत्तिउपसांतक्यायणे। गु १। उ ५। जी १। प ६। प्रा १०।
स ०। ग १। मा ३। इ १। का १। यो ९। वे ०। क ०। सा ४। सं १। यया। व ३। से ६।
भा १

भ १। सं २। उ। शा। सं १। बा १। उ ७।।

शोनक्यायमपस्थानवत्तिशोनक्यायणे। गु १। शो। जी १। प ६। प्रा १०। स ०।
ग १। मा ३। इ १। का १। यो ९। वे ०। क ०। सा ४। सं १। यया। व ३। से ६। भ १।
भा १

सं १। शा। सं १। जा १। उ ७।।

सयोगकेवलतिगुणस्थानवत्ति सयोगकेवलतिभट्टारकणे गु १। जी २। प ६। ६। प्रा ४। २। १०
स ०। ०। ग १। मा ३। इ १। का १। यो ७। म २। य २। जो २। का १। वे ०। क ०। सा १।
के। सं १। यया। व १। के से ६। भ १। सं १। शा। सं ०। बा २। उ २।।
भा १

अयोगकेवलतिगुणस्थानवत्ति अयोगकेवलतिभट्टारकणे। गु १। अयो। जी १। प ६। प्रा १।
वायुध्म। सं ०। ग १। म १। इ १। प ०। का १। यो ०। वे ०। क ०। सा १। के।
सं १। यया। व १। के से ६। भ १। सं १। शा। सं ०। बा १। अनाहार। उ २।। १५
भा ०

अतीतगुणस्थानवत्तिउपरमेष्ठिगुणो गु ० जी ० प ० प्रा ० सं ० ग १। सिद्धिगति।

छे। द ३। ले ६। भ १। घ २ व ४। सं १। बा १। उ ७। गुणमसांपरायणा—गु १ गू। जी १।

प ६। प्रा १०। सं १। प। ग १। मा ३। इ १। का १। यो ९। वे ०। क १। सा ४। सं १। गू। व ३।
ले ६। भ १। घ २ व ४। सं १। बा १। उ ७। उपसांतक्यायणा—गु १ उ। जी १। प ६।
भा १

प्रा १०। स ०। ग १। मा ३। इ १। का १। यो ९। वे ०। क ०। सा ४। सं १। यया। व ३। ले ६। २०
भा १

भ १। सं २। उ। शा। सं १। बा १। उ ७। शोनक्यायणा—गु १ शो। जी १। प ६। प्रा १०।
सं ०। ग १। मा ३। इ १। का १। यो ९। वे ०। क ०। सा ४। सं १। यया। व ३। ले ६। भ १।
भा १

स १। शा। सं १। बा १। उ ७। सयोगकेवलति—गु १ जी २। प ६। ६। प्रा ४। २। सं ०। ग १। म।
इ १। वा १। यो ७। म २। वा २। जो २। का १। वे ०। क ०। सा १। के। सं १। यया। व १। के।
ले ६। भ ०। स १। शा। सं ०। बा २। उ २। अयोगकेवलति—गु १ अयो। जी १। प ६। प्रा १। २५
भा १

आनुष्यं। सं ०। ग १। मा ३। इ १। वा १। यो ०। वे ०। क ०। सा १। के। सं १। यया। व १। के।
ले ६। भ ०। स १। शा। सं ०। बा १। अनाहार। उ २। गुणस्थानातीतसिद्धपरमेष्ठिना—गु ० जी ०।
भा ०

सामान्यनारकपर्याप्तमिध्यादृष्टिगच्छे । गु १ मि । जी १ । पर्या । ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग १ । न । इ १ । का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । वै । का १ । वे १ । प ० । क ४ । ज्ञा ३ ।
 कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले १ कृ भ २ । सं १ । मिध्यावृत्ति । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
 भा ३

सामान्यनारकापर्याप्तमिध्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ ।
 अ । सं ४ । ग १ । नरक । इ १ । का १ । यो २ । वै मि । का । वे १ पं ० । क ४ । ज्ञा २ । कु । ५
 कु । सं १ । अ । व २ । ले २ क गु भ २ । सं १ । मिध्यावृत्ति । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
 भा ३ अ शु

सामान्यनारकसात्तादनसम्भ्यदृष्टिगच्छे । गु १ । सा । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग १ । न । इ १ । का १ । यो ९ । म ४ । व ४ । वै का १ । वे पं ० । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु ।
 वि । सं १ । अ । व २ । ले १ कृ भ १ । सं १ । सात्तादनवृत्ति । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
 भा ३

नारकसामान्यमिश्रणे । गु १ । जि १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ । १०
 यो ९ । वे १ । प ० । क ४ । ज्ञा ३ । मिथ । सं १ । अ । व ३ । ले १ कृ भ १ । सं १ ।
 भा ३
 मिथ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

नारकसामान्यासंयते । गु १ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
 न । इ १ । का १ । यो ११ । म ४ । व ४ । वै २ का १ । वै १ । प ० । क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु ।
 अ । सं १ । अ । व ३ । ले ३ कृ । का । शु । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । १५
 भा ३ अ शु
 उ ६ ॥

मि । सं १ । आ २ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । न । इ १ ।
 का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । वै का १ । वे १ पं ० । क ४ । ज्ञा ३ । कु कु वि । सं १ । अ । व २ । ले १ कृ ।
 भा ३

भ २ । सं १ । मिध्यावृत्ति । सं १ । आ १ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां गु १ मि । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७
 अ । सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ । यो २ । वै मि । का । वे १ पं ० । क ४ । ज्ञा २ । कु कु । सं १ । अ । २०
 व २ । ले २ । कृ गु भ २ । सं १ । मिध्यावृत्ति । सं १ । आ २ । उ ४ । सात्तादनानां—गु १ सा । जी १ । प
 भा ३

प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । वै का १ । वे १ पं ० । क ४ । ज्ञा ३
 कु कु वि । सं १ । अ । व २ । ले १ कृ । भ १ । सं १ । सात्तादनवृत्ति । सं १ । आ १ । उ ५ । मिथ्याणां—
 भा ३

गु १ मिथ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ । यो ९ । वे १ पं ० । क ४ । ज्ञा ३
 मिथ्याणि सं १ । अ । व २ । ले १ कृ । भ १ । सं १ । मिथ । सं १ । आ १ । उ ५ । अर्चनानां—गु १ २५
 भा ३

जी २ । प ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । यो ११ । म ४ ।
 वे १ पं ० । क ४ । ज्ञा ३ । म शु । अ । सं १ । अ । व ३ । ले ३ कृ क गु भ १ । सं ३ ।

धर्मोप निम्प्यावृष्टिगन्धो । गु १ । जो २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । न ।
इ १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । वे २ । का १ । ये १ । प ० । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि ।
सं १ । वा २ । ले ३ । कृ क गु भ २ । सं १ । मि । सं १ । वा २ । उ ५ ॥

भा १ क

धर्मोप नारकपर्याप्तिकमिष्यावृष्टिगन्धो । गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ ।
न । इ १ । का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । वे २ । का १ । ये १ । प ० । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । ५
सं १ । वा २ । ले १ । भ २ । सं १ । मिष्यादवि । सं १ । वा १ । उ ५ ॥

भा १ क

धर्मोपनारकापर्याप्तिकमिष्यावृष्टिगन्धो । गु १ । जो १ । प ६ । अ प्रा ७ । वा सं ४ । ग
१ । इ १ । का १ । यो २ । वे मि । का । वे १ । क वा ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । वा २ । ले
भा १ क

२ क गु । भ २ । सं १ । सं १ । वा २ । उ ४ । कु । कु । वा । अ ॥

धर्मोप पर्याप्ततास्तवन्धो गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । १०
यो ९ । वे १ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । व २ । ले १ । कृ भ १ । सं १ । वा
भा १ क

१ उ ५ ॥ कु । कु । वि । वा । अ ॥

धर्मोप मिश्रणो । गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । यो
९ । वे १ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले १ । कृ भ १ । सं १ । वा १ । उ ५ ।

भा १ क

धर्मोप असंपत्तौ । गु १ । जो २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । १५

तन्मिष्यावृष्टां—गु १ । जो २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ । यो ११ । म ४
वा ४ । वे २ । का १ । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा ३ । कु कु वि । सं १ । वा २ । ले ३ । कृ क गु । भ २ । सं १
भा १ क

मि । सं १ । वा २ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । न । इ १ ।
का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । वे २ । का १ । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा ३ । कु कु वि । सं १ । वा २ । ले १ । कृ
भा १ क

भ २ । सं १ । मिष्यादवि । सं १ । वा १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ । जो १ । प ६ । प्रा ७ । वा । २०
सं ४ । ग १ । न । इ १ । का १ । यो २ । वे मि । का । वे १ । क ४ । ज्ञा २ । कु कु । सं १ । वा २ ।
ले २ । कृ गु । भ २ । सं १ । सं १ । वा २ । उ ४ । कु कु व । साक्षादनां—गु १ । जो १ । प ६ ।

भा १ क
प्रा १० । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । यो ९ । वे १ । क ४ । ज्ञा ३ । कु कु वि । सं १ । व २ ।
ले १ । कृ । भ १ । सं १ । वा १ । उ ५ । कु कु वि । वा । मिष्याणां—गु १ । जो १ । प ६ ।

भा १ क
प्रा १० । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । यो ९ । वे १ । क ४ । ज्ञा ३ । कु कु वि । सं १ । व २ । २५
ले १ । कृ । भ १ । सं १ । वा १ । उ ५ । असंपत्तानां—गु १ । जो २ । प ६ । प्रा १० । ७ ।

भा १ क

सा। ये। सं२। आ२। उ८। मा। घ। ङ। कु। कु। ष। ष। ब॥

तिष्यं च सामान्यमिष्यान्वृष्टिगन्धे । गु१। जो१। प६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा१०।
७। ९। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं४। ग१। इ५। का६। यो१। वे३। क४।
सा३। कु। कु। वि। सं१। आ। व२। ष। ष। ले६। भ२। सं१। मि। सं२। आ२।
उ५। कु। कु। वि। ष। ब॥

तिष्यं च सामान्यमिष्यान्वृष्टिगन्धे । गु१। जो७। प६। ५। ४। प्रा१०। ९।
८। ७। ६। ४। सं४। ग१। ति। इ५। का६। यो१। वे३। क४। सा३। कु। कु। वि।
सं१। आ। व२। ले६। भ२। सं१। मि। सं२। आ१। प५॥

तिष्यं च सामान्यमिष्यान्वृष्टिगन्धे । गु१। मि। जो७। आ। प६। ५। ४। ब॥
प्रा७। ७। ६। ५। ४। ३। सं४। ग१। ति। इ५। का६। यो२। मि। का। वे३। १०।
क४। सा२। कु। कु। सं१। आ। व२। ष। ष। ले२। क५। भ२। सं१। मि। सं२।
आ२। उ४। कु। कु। ष। ब॥

तिष्यं च सामान्यसात्तादनं गे । गु१। जो२। प६। ६। प्रा१०। ७। सं४। ग१।
ति। इ१। का१। यो१। वे३। क४। सा३। सं१। व२। ले६। भ१। सं१।
सा। सं१। आ२। उ५। कु। कु। वि। ष। ब॥

तिष्यं च सामान्यसात्तादनपर्वानं गे । गु१। जो१। प६। प्रा१०। सं४। ग१। ति।
इ१। पं। का१। यो१। वे३। क४। सा३। सं१। आ। व२। ले६। भ१। सं१।

व३। ष। ब॥ वे२। क५। भ२। त४। पि। सा। सा। वे। सं२। आ२। उ८। म५। ब५। कु। कु। ष।
भा३। ब५।

अ. अ। तमिष्यान्वृष्टि—गु१। जो१। प६। ५। ५। ४। ब॥ प्रा१०। ७। ७। ७। ७। ५। ५। ४। ४।
सं४। ग१। इ५। का६। यो१। वे३। क४। सा३। कु। कु। वि। सं१। आ। व२। ष। ब॥ २०।

भ२। म। मि। सं२। आ२। उ५। कु। कु। वि। ष। ब॥ तमिष्यान्वृष्टि—गु१। जो७। प६। ५। ४।
उ५। सं४। ग१। ति। इ५। का६। यो१। वे३। क४। सा३। कु। कु। वि। सं१। आ। व२। ले६। भ२। सं१।
भा३।

ग१। मि। सं२। आ२। उ५। तमिष्यान्वृष्टि—गु१। जो७। प६। ५। ४। ब॥ प्रा१०। ७। ७। ७। ७। ५। ५। ४। ४।
सं४। ग१। इ५। का६। यो१। वे३। क४। सा३। कु। कु। वि। सं१। आ। व२। ले६। भ२। सं१।
भा३। २५।

प्रा१०। ७। सं४। ग१। ति। इ५। का६। यो१। वे३। क४। सा३। कु। कु। वि। सं१। आ। व२। ले६। भ२। सं१।
भा३। २५।
१। सा। सं१। आ२। उ५। कु। कु। वि। ष। ब॥ तमिष्यान्वृष्टि—गु१। जो७। प६। ५। ४। ब॥ प्रा१०। ७। ७। ७। ७। ५। ५। ४। ४।
सं४। ग१। इ५। का६। यो१। वे३। क४। सा३। कु। कु। वि। सं१। आ। व२। ले६। भ२। सं१।

सामान्यतिर्ष्यवेशसंयतंगे । गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । मा ५ । अ । सं १ । वे ३ । ब ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । वे ।
भा सु भ

सं १ । वा १ । उ । ६ । मा ५ । अ । चा । अ । अ ॥

पंचेंद्रियतिर्ष्यचंग्गे । गु ५ । जो ४ ॥ पंचेंद्रियसंश्रयंतिपर्व्याताऽपर्व्यात् ॥ प ६ । ६ ।
प्रा १० । ७ । ९ । ७ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ११ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ ।
मा ५ । अ । कु । कु । वि । सं २ । अ । दे । ब ३ । चा । अ । अ । ले ६ । भ २ । सं ६ । उ ।
६

वे । क्षा । मि । सा । मि । सं २ । वा २ । उ ९ । मा ५ । अ । कु । कु । वि । चा । अ । अ ॥

पंचेंद्रियतिर्ष्यचपर्व्यात्प्रकग्गे । गु ५ । जो २ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । सं २ । वा । दे । ब ३ । चा । अ । अ । ले ६ । भ २ ।
६

सं ६ । उ । वे । क्षा । मि । सा । मि । सं २ । वा १ । उ ९ ॥

पंचेंद्रियतिर्ष्यचापर्व्यात्प्रकग्गे । गु ३ । मि । सा । अ । जीय २ । प ६ । ५ । अ । प्रा ७ । १०
७ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । मा ५ । अ ।
कु । कु । सं १ । अ । ब ३ । चा । अ । अ । ले २ । कु । गु । भ २ । सं ४ । वे । क्षा । मि । सा ।
भा ३

सं २ । वा २ । उ ८ । मा ५ । अ । कु । कु । चा । अ । अ । अ ॥

पंचेंद्रियतिर्ष्यग्मिष्याद्दृष्टिगर्भा । गु १ । जो ४ । संतिपर्व्यात्पर्व्यात् । अचंतिपर्व्यात्पर्व्यात् ।
प ६ । ६ । ५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ११ । वे ३ । क ४ ।
ज्ञा ३ । सं १ । अ । ब २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । वा २ । उ ५ ॥
६

म १, स २ वे क्षा, सं १, वा २, उ ६ देगसंयतानां—गु १, जो १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १,
वा १, यो ९, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म थु अ, सं १ दे, द ३, ले ६, भ १, स २ उ वे, सं १, वा १,
भा ३ सु भ

उ ६ म थु अ च अ अ, पञ्चेंद्रियतिरस्वा—गु ५, जो ४ संयसंतिपर्व्यात्पर्व्यात्, प ६ ६ ५ ५, प्रा १० ७
९ ७, सं ४, ग १ ति, इं १ पं, का १ प, यो ११, वे ३, क ४, ज्ञा ६ म थु अ कु कु वि, सं २ अ दे,
द ३ च अ अ, ले ६, भ २, स ६, उ वे धा मि सा मि, सं २, वा २, उ ९ म थु अ कु कु वि च अ अ,
भा ६

तत्पर्यासानां—गु ५, जो २, प ६ ५, प्रा १० ९, सं ४, ग १, इं १, वा १, यो ९, वे ३, क ४, ज्ञा ६,
स २ अ दे, द ३ च अ अ, ले ६ । भ २, स ६ उ वे धा मि सा मि, सं २, वा १, उ ९ म थु अ कु कु
भा १

वि च अ अ, तदपर्यासानां—गु ३ मि सा अ, जो २, प ६ ५ अ, प्रा ७ ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १,
यो २ मि का, वे ३, क ४, ज्ञा ५ म थु अ कु कु, सं १ वा, द ३ च अ अ । ले २ क गु, भ २, स ४
भा ३ अ

वे धा मि सा, सं २, वा २, उ ८ म थु अ कु कु च अ अ, मिष्याद्दृष्टा—गु १,
१० ७ ९ ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १,
भा ३ अ

मो१। बे३। क४। सा३। मत्पारिमिधत्रयं। सं१। अ। द२। ख। अ। से६। भ१। त१
मिध सं१। आ१। उ५॥

मत्पारिमिधत्रयं धातुरधः ॥ पंचेन्द्रियं गतं यतमे। गु१। जी२। प६। अ६। प्रा१०।
७। सं४। ग१। इं१। का१। मो११। बे३। क४। सा३। मत्पारिमिधत्रयं सं१। अ।
द३। से६। भ१। सं३। सं१। आ२। उ६। मा। यु। अ। ख। अ। अ॥

पंचेन्द्रियं गतं यतमे। गु१। जी२। प६। प्रा१०। सं४। ग१। इं१।
का१। मो१। क४। सा३। सं१। अ। द३। से६। भ१। सं३। उ। यो। सा। सं१।
आ१। उ६॥

पंचेन्द्रियं गतं यतमे। गु१। जी२। अ। प६। अ। प्रा७। अ।
सं४। ग१। ति। इं१। पां। का१। प्रा। मो२। मिध। का। ये१। पुं। क४। सा३। २०
मा। यु। अ। सं१। अ। द३। ख। अ। अ। से२। क। गु। भ१। सं२। दा। यो। सं१।
आ१। क
आ२। उ६। मा। यु। अ। ख। अ। अ॥

पंचेन्द्रियं गतं यतमे। गु१। जी२। प६। प्रा१०। सं४। ग१। ति। इं१।
पां। का१। प्रा। मो१। बे३। क४। सा३। सं१। दे। गतं यतमे। द३। से६। भ१। सं२।
भा३

उ। यो। सं१। आ१। उ६। मा। यु। अ। ख। अ। अ॥

पंचेन्द्रियं गतं यतमे पंचेन्द्रियं गतं यतमे वेत्तते वेत्तुकोऽप्य ॥

बे३, क४, सा३ मत्पारिमिधत्रयं, सं१ अ, द२ ख अ, से६, भ१, ग१ मिध, सं१, आ१, उ५,
भा६

मत्पारिमिधत्रयं धातुरधः। अतं यतमे—गु१, जी२, प६, अ६, प्रा१०, अ प्रा७, सं४,
ग१, इं१, का१, मो११, बे३, क४, सा३ म यु अ, सं१ अ। द३। से६। भ१। सं३।
भा६

सं१। आ२। उ६ म यु अ ख अ अ। अतं यतमे—गु१। जी२। प६। प्रा१०। सं४। ग१।
इं१। का१। मो१। बे३। क४। सा३। सं१। अ। द३। से६। भ१। सं३। उ। यो। सा। सं१।
भा६

आ१। उ६। अतं यतमे—गु१ जी२ अ, प६ अ, प्रा७ अ, सं४। ग१ ति, इं१ सं, का१ अ,
मो२ मि का, बे३ पुं, क४, सा३ म यु अ, सं१ अ, द३ ख अ अ, से२ क गु, भ१ उ२ दा वे,
भा६ क

सं१, आ२, उ६ म यु अ ख अ अ, अतं यतमे—गु१, जी२, प६, प्रा१० सं४, ग१ ति, इं१,
पां, का१ अ, मो१, बे३, क४, सा३, सं१ वे, द३, से६ भ१, उ२ उ वे, सं१, आ१, उ६
भा३ गु

म यु अ ख अ अ, पंचेन्द्रियं गतं यतमे पंचेन्द्रियं गतं यतमे वेत्तते वेत्तुकोऽप्य ॥

पंचेंद्रियतिव्यंग्योनिमतिपर्याप्तमिष्यादृष्टिगन्धर्वे । गु १ । मि । जी २ । संज्ञिपर्याप्तासंज्ञि-
पर्याप्ति । प ६ ॥ संज्ञिपर्याप्तिगच्छ ५ ॥ असंज्ञिपर्याप्तिगच्छ प्रा १० । संज्ञि । ९ । असंज्ञि । सं ४ ।
ग १ । ति । इं १ । पं । का १ । प्र । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । व २ ।
ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

पंचेंद्रियतिव्यंग्योनिमत्यपर्याप्तमिष्यादृष्टिगन्धर्वे । गु १ । मि । जी २ । संज्ञिपर्याप्तासंज्ञि-
पर्याप्ति । प ६ । संज्ञिपर्याप्तिगच्छ ५ । असंज्ञिपर्याप्तिगच्छ प्रा ७ । संज्ञि । ७ । असंज्ञि । सं ४ ॥
ग १ । इं १ । पं । का १ । प्र । यो २ । मिथ । का । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ ।
अ । व २ । च । अ । ले २ क शु भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ । कु । कु । च । अ ॥
भा ३ अशु

पंचेंद्रियतिव्यंग्योनिमतिसासादनंग । गु १ । सा । जी २ । सं । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
७ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । पं । का १ । प्र । यो ११ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ ।
अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥

पंचेंद्रियतिव्यंग्योनिमतिसासादनपर्याप्तकंठे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ ।
सं १ । आ १ । उ ५ ॥

पंचेंद्रियतिव्यंग्योनिमत्यपर्याप्तसासादनंगे । गु १ । जी १ । पं ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का । यो २ । मिथ । का । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । व २ । ले २ क शु भ १ ।
सं १ । सं १ । आ २ । उ ४ । कु । कु । च । अ ॥
भा ३ अशुभ

मिष्यास्वं, सं २, आ २, उ ५ कु कु वि च अ, तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जी २ संज्ञिसंज्ञिपर्याप्ति, प ६ संज्ञि
५ असंज्ञि, प्रा १० सं, ९ असंज्ञि, सं ४, ग १ वि, इं १ पं, का १ प्र, यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३ कु
कु वि, सं १ अ, व २, ले ६, भ २, सं १ मि, सं २, आ १, उ ५, तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी २ संज्ञि-
संज्ञिपर्याप्ति, प ६ संज्ञिपर्याप्तयः, ५ असंज्ञिपर्याप्तयः, प्रा ७ सं, ७ असंज्ञि, सं ४, ग १ वि, इं १ पं, का १
प्र, यो २ मिथ, का, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, व २ च अ, ले २ क शु भ २, सं १ मि,
सं २, आ २, उ ४, कु कु च अ, सासादनानां—गु १ सा, जी २ सं प अ, प ६ ६, प्रा १०, ७, सं ४,
ग १ वि, इं १ पं, का १ प्र, यो ११, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, व २, ले ६, भ १, सं १ सा,
सं १, आ २, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का, ३, यो ९, वे १
स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, व २, ले ६ भ १, सं १, आ १, उ ५, तदपर्याप्तानां—गु १, जी १ ।
प ६ । प्रा ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २ मि का, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, व २,
१२२

कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिका

का १। यो ११। वे ३। क ४। जा ८। सं ७। द ४। ले ६ भ २। सं ६। सं १।
 वा २। उ १२॥

सामान्यमनुष्यापर्याप्तकर्णे । गु ५। मि। सा। अ। प्र। स। जो १। प ६। अ। प्रा ७।
 अ। सं ४। ग १। ई १। का १। यो ३। ओ ३। रिकमिध आहारकमिध काम्मणि । वे ३। क ४।
 जा ६। म ३। अ। के। कु। कु। सं ४। अ। सा। छे। ययास्यात् । द ४। ले क शु भ २। ५
 सं ४। मि। सा। वे। क्षा। सं १। आ २। उ १०॥ कु। कु। म। थु। अ। के। च।
 अ। अ। के ॥

सामान्यमनुष्यमिध्यावृष्टिगन्धे । गु १। जो २। प ६। द। प्रा १०। उ। सं ४। ग १।
 ई १। का १। यो ११। म ४। य ४। ओ २। का १। वे ३। क ४। जा ३। सं १। अ। व २।
 च। अ। ले ६ भ २। सं १। मि। सं १। आ २। उ ५॥ १०

सामान्यमनुष्यपर्याप्तमिध्यावृष्टिगन्धे । गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। म।
 ई १। व। का १। प्र। यो ९। वे ३। क ४। जा ३। सं १। अ। व २। ले ६ भ २। सं १।
 मि। सं १। आ १। उ ५॥

सामान्यमनुष्यापर्याप्तमिध्यावृष्टिगन्धे । गु १। जो १। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४। ग १।
 म। ई। व। का १। प्र। यो २। ओ मि का १। वे ३। क ४। जा २। सं १। व २ १५
 ले २। क। शु। भ २। सं १। मि। सं १। आ २। उ ४॥
 भा ३। अशुभ

ग १, ई १, का १, यो १०, वे ३, क ४, जा ८, सं ७, द ४, ले ६, भ २, सं ६, सं १, आ २, उ १२,
 भा ६

उदपर्याप्तानां—गु ५, मि सा अ प्र स, जो १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १, ई १, का १, यो ३, ओमि
 कामि का, वे ३, क ४, जा ६ म थु अ के कु कु, सं ४ अ सा छे ययास्यात्, द ४, ले २ क शु, भ २,
 भा ६

स ४ मि सा वे क्षा, स १ आ २, उ १० कु कु म थु अ के च अ अ के, तन्मिध्यावृष्टा—गु १, जो २, प ६ २०
 ६, प्रा १० उ, सं ४, ग १, ई १, का १, यो ११ म ४ वा ४ ओ २ का १, वे ३, क ४, जा ३, सं १ अ,
 द २ च अ, ले ६, भ २, सं १ मि, सं १, आ २, उ ५, उदपर्याप्तानां—गु १, जो १, प ६, प्रा १०,
 भा ६

सं ४, ग १ म, ई १ पं, का १ व, यो ९, वे ३, क ४, जा ३, सं १ अ, द २, ले ६, भ २, सं १ मि.
 भा ६

सं १, आ १, उ ५, उदपर्याप्तानां—गु १ जो १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १ म, ई १ पं, का १ व,
 यो २ ओमि का, वे ३, क ४, जा २, सं १, द २, ले २ क शु, भ २, सं १ मि, सं १, आ २, उ ४। २५
 भा ३ अशुभ.

सं १। आ १। उ ६। मा १। ध। अ। ष। अ। अ॥

सामान्यमनुष्यपर्व्यात्तासंयतंगे। गु १। अ। जो १। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४।
ग १। मा ६। र १। व १। का १। प्र। यो २। मि। का। ये १। पु। क ४। सा ३। मा १। ध। अ।
सं १। अ। द ३। चा ३। अ। अ। से २। क गु। भ १। सं २। ये ३। सं १। आ २। उ ६॥
भा ६

सामान्यमनुष्यसंयतासंयतंगे गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। मा ६। र १।
व १। का १। प्र। यो २। ये ३। क ४। सा ३। सं १। दे। द ३। से ६। भ १। सं ३। सं १।
आ २। उ ६॥
भा ३ गुभ

सामान्यमनुष्यप्रमत्तंगे। गु १। जो २। प ६। द १। प्रा १०। उ। सं ४। ग १। मा ६।
र १। का १। यो १। म ४। ष ४। जो १। आ २। ये ३। इष्यविं पुंवेदी। भाषयेत्ते-
पिबे स्त्रीनुन्नपुंसक। क ४। सा ४। सं ३। द ३। से ६। भ १। सं ३। सं १। आ २। उ ७।
भा ३ गुभ

सामान्यमनुष्यप्रमत्तपर्व्यात्तंगे। गु १। प्र जो १। प ६। प १। प्रा १०। प। सं ४।
ग १। मा ६। र १। व १। का १। प्र। यो १०। म ४। ष ४। जो १। आ २। ये ३। क ४। सा ४।
मा १। ध। अ। म। सं ३। सा ७। प। द ३। ष। अ। अ। से ६। भ १। सं ३। उ।
ये ३। सं १। आ २। उ ७। मा १। ध। अ। मा १। ष। अ। अ॥
भा ३ गु

सामान्यमनुष्यप्रमत्तापर्व्यात्तकंगे गु १। जो १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४।
द ३। से ६। भ १। सं ३। उ ६। अ। सं १। अ। उ ६ म भु क व व अ। तत्पर्व्यात्ता—गु १। जो १।
प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४। ग १। मा ६। र १। व १। का १। प्र। यो २। मि। का। ये १। पु। क ४। सा ३। म भु
अ। सं १। अ। द ३। चा ३। अ। अ। से २। क गु। भ १। सं २। ये ३। सं १। आ २। उ ६। संयत्तकपर्व्यात्ता—
भा ६

गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। मा ६। र १। व १। का १। प्र। यो २। ये ३। क ४। सा ३।
सं १। दे। द ३। से ६। भ १। सं ३। सं १। आ २। उ ६। इष्यत्ता—गु १। जो २। प ६। र १।
भा ३ गुभ

१० उ। सं ४। प १। प १। व १। र १। व १। का १। प्र। यो १०। म ४। ष ४। जो १। आ २। ये ३। इष्यत्तक-
भाषयेत्ता विदेदिक इत्यंति। क ४। सा ४। सं ३। द ३। से ६। भ १। सं ३। सं १। आ २। उ ७।
भा ३ गुभ

उ ७ म भु क व व अ। तत्पर्व्यात्ता—गु १। जो १। प ६। र १। प्रा १०। सं ४। ग १। मा ६। र १।
व १। का १। प्र। यो १०। म ४। ष ४। जो १। आ २। ये ३। क ४। सा ४। म भु क व व अ। सं १। अ।
द ३। चा ३। अ। अ। से २। क गु। भ १। सं २। ये ३। सं १। आ २। उ ६। संयत्तकपर्व्यात्ता—
भा ३ गु

ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क ३। मा। मा। लो। आ ४। सं २। छा। छे। द ३।
 से ६। भ १। स २। उ। ङा।। सं १। सं १। आ १। उ ७॥
 भा १

सामान्यमनुष्यचतुर्व्यंभानिभूतिगे। गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। परिष्ठा।
 ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क २। माया। लो। आ ४। सं २। द ३। से ६। भ १।
 भा १
 सं २। स १। आ १। उ ७॥

सामान्यमनुष्यत्रयमभानिभूतिगे। गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। ग १। इ १।
 का १। यो ९। वे ०। क १। सोम। आ ४। सं २। द ३। से ६। भ १। सं २। सं १।
 भा १
 आ १। उ ७॥

सामान्यमनुष्यगुहसंपरायणे गु १। गु। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। परिष्ठा। ग १।
 इ १। का १। यो ९। वे ०। क १। लो। आ ४। सं १। गु। द ३। से ६। भ १। सं २। १०
 भा १
 उ। ङा। सं १। आ १। उ ७॥

सामान्यमनुष्योपजातश्यायणे। गु १। उ। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। ग १।
 इ १। का १। यो ९। वे ०। क ०। आ ४। सं १। यथाख्यात। द ३। से ६। भ १। सं २।
 भा १
 उ। ङा। सं १। आ १। उ ७॥

सामान्यमनुष्यशीमश्यायणे। गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। ग १। इ १। १५
 का १। यो ९। वे ०। क ०। आ ४। सं १। यथाख्यात। द ३। से ६। भ १। सं १। ङा।
 भा १
 सं १। आ १। उ ७॥

गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। परिष्ठा। ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क ३। मा। मा।
 लो। आ ४। सं २। छा। छे। द ३। से ६। भ १। स २। उ। ङा।। सं १। आ १। उ ७। चतुर्व्यंभे—
 भा १

गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। परिष्ठा। ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क २। मा। मा। आ ४। २०
 सं २। द ३। से ६। भ १। स २। सं १। आ १। उ ७। चतुर्व्यंभे—गु १। जो १। प ६।
 भा १

प्रा १०। सं १। ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क १। लो। आ ४। सं २। द ३। से ६। उ ७।
 भा १

ग २। सं १। आ १। उ ७। चतुर्व्यंभे—गु १। गु। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। परिष्ठा। ग १।
 इ १। का १। यो ९। वे ०। क १। लो। आ ४। सं १। गु। द ३। से ६। भ १। स २। उ। ङा।। सं १।
 भा १

आ १। उ ७। चतुर्व्यंभे—गु १। उ। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। क १। इ १। ग १। इ १। २५
 वे ०। क ०। आ ४। सं १। यथाख्यात। द ३। से ६। भ १। स २। उ। ङा।। सं १। आ १। उ ७।
 भा १

शीमश्यायणे गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। ग १। इ १। का १। यो ९। वे ०। क ०। आ ४।

मनःपर्ययज्ञानोपयोगं । स्त्रीवेदगल्प सक्लिष्टरोक्त्रु संभयितवपुर्वारिवं । अपर्याप्तमानुषि-
 यमे । गु २ । मि । सा । सयोग । जी १ । प ६ । अ प्रा ७ ॥ अ । सं ४ । ० । संतारहितव ।
 ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । ० । अयोगदं । वे १ । स्त्री । ० । अवेवदं । क ४ । ० ।
 अकयापदं । शा ३ । कु । कु । के । सं २ । अ । ययात्यातमुं । ब ३ । अ । ख । के । ले २ । का । गु
 भा ४ अ ३ गु १
 भ २ । सं ३ । मि । सा । शा । सं । १ । ० । संभितवपुन्यदं । आ २ । उ ६ । कु । कु । के । ५
 घ । अ । के ॥

मानुषिमिध्याहृष्टिगळो । गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का
 १ । यो ११ । वे २ । आ २ । नून्यं । वे १ । स्त्री । क ४ । शा ३ । कु । कु । वि । सं १ । आ । व
 २ । च । अ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ५ । कु । कु । वि । च । अ ॥
 ६

पर्याप्तमानुषिमिध्याहृष्टिर्ग—गु १ । मि जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । १०
 का १ । यो २ । वे १ । स्त्री । क ४ । शा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ ।
 सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
 ६

अपर्याप्तमानुषिमिध्याहृष्टिगे—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
 का १ । यो २ । मि । का । वे १ । स्त्री । क ४ । शा २ । सं १ । अ । व २ । ले २ । का । गु । भ २ ।
 सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
 भा ३ अगुभ
 १५

मानुषितासावनगे—गु १ । सा । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
 का १ । यो ११ । वे १ । स्त्री । क ४ । शा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ ।
 ६

१ नून्यं ख । आ २ । उ ११ । मनःपर्ययः स्त्रीवेदिषु नहि संक्लिष्टपरिणामितान् । तदपर्याप्तानां—गु ३ मि
 सा सयोगः । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ नून्यं ख । ग १ । इं १ । का १ । यो २ मि वा नून्यं ख ।
 वे १ स्त्री । नून्यं ख । क ४ । नून्यं ख । शा ३ कु कु के । सं २ अ य । द ३ ख अ के । ले २ क गु
 भा ४ अ गु ३ गु १
 भ २ । सं ३ मि सा धा । सं १ नून्यं ख । आ २ । उ ६ कु कु के व अ के । मानुषीमिध्याहृष्टा—गु १ ।
 जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ११ । वैदिकिक्रमाहारकन्यं नहि । वे १
 स्त्री । क ४ । शा ३ कु कु वि । सं १ अ । व २ ख अ । ले १ । भ २ । सं १ मि । सं १ । आ २ । उ ५
 ६

कु कु वि ख अ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ ।
 वे १ स्त्री । क ४ । शा ३ कु कु वि । सं १ अ । व २ ख अ । ले १ । भ २ । सं १ मि । सं १ । आ २ । उ ५
 ६

तदपर्याप्तानां—गु १ मि । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ मि का । वे
 १ स्त्री । क ४ । शा २ । सं १ अ । व २ । ले २ क गु । भ २ । सं १ मि । सं १ । आ २ । उ ५ । शाना-
 ३ अगुभ
 २५

दनां—गु १ सा । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ११ । वे १ स्त्री ।
 १२१

स्त्रीपुंनपुंसकवेदोदयगण्डिवं । आहारद्विकं मनःपर्ययज्ञानं परिहारविशुद्धिसंयममुमित्तल ।

सं २ । सा छे । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । क्षा । सं १ । वा १ । उ ६ ॥

भा ३

मानुष्यप्रमत्तसंयतगो । गु १ । जि १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । आहारसंज्ञे शून्यं । ग १ ।

इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं २ । व ३ । ले ६ । भ १ । स ३ । सं १ ।

भा ३

वा १ । उ ६ ॥

५

मानुष्यपूर्वकरणगो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ । इं १ । का १ ।

यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं २ । सा छे । व ३ । चा । वा । अ । ले ६ । भ १ । सं २ ।

भा १

उ । क्षा । सं १ । वा १ । उ ६ ॥

मानुषिप्रथमभागानिवृत्तिगो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं २ । मैयु । प ।

ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । प्रा ३ । सं २ । सा । छे । व ३ । ले ६ । भ १ ।

भा १

१०

सं २ । उ । क्षा । सं १ । वा १ । उ ६ ॥

मानुषिद्वितीयानिवृत्तिगो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । ग १ । इं १ । का १ ।

यो ९ । वे ० । क ४ । ज्ञा ३ । सं २ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । वा १ । उ ६ ॥

भा १

यो ९ । वे १ स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ दे । द ३ । ले ६ भ १ । स ३ । सं १ । वा १ । उ ६ ।

भा ३ अद्यु

प्रमत्तस्य—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९, वे १ स्त्री, क ४,

ज्ञा ३, स्त्रीनपुंसकोदये आहारकद्विमनःपर्ययपरिहारविशुद्धयो नहि सं २ सा छे, द ३ । ले ६, भ १, स ३

३

१५

उ वे छा, सं १, वा १, उ ६, अप्रमत्तस्य—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ३ आहारसंज्ञा नहि, ग १, इं

१, का १, यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं २, व ३, ले ६ । भ १, स ३, सं १, वा १, उ ६, अपूर्व-

भा ३

करणाणां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ३, ग १, इं १, का १, यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं २

सा छे, द ३ व अ ब, ले ६ । भ १, स २ उ क्षा, सं १, वा १, उ ६, अनिवृत्तेः प्रथमभागे—गु १, जी १,

भा १

२०

प ६, प्रा १०, सं २ मै य, ग १, इं १, का १, यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं २ सा छे, द ३, ले ६ ।

भा १

भ १, स २ उ क्षा, सं १ । वा १ । उ ६, द्वितीयभागे—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं १ परिपहः ग १,

इं १, का १, यो ९, वे ०, क ४, ज्ञा ३, सं २, द ३, ले ६ । भ १, स २ उ क्षा, सं १, वा १, उ ६,

भा १

१०००००

मानुषिक्षीणकथार्यमे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ० । ग १ । इं १ । का १ ।
 यो ९ । वे ० । क ० । ज्ञा ३ । सं १ । यथा । व ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । सं १ ।
 भा १

आ १ । उ ६ ।

मानुषित्तयोगकेवलित्ते । गु १ । जी २ । प ६ । प्रा ४ । अ । सं ० । ग १ । इं १ ।
 का १ । यो ७ । म २ । व २ । औ २ । का १ । वे ० । क ० । ज्ञा १ । के । सं १ । यथा । व १ । ९
 के ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । सं ० । आ २ । उ २ । के । के ॥

भा १

मानुषिययोगिकेवलिजिनगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १ । आयुष्य । सं ० । ग १ । इं ।
 ० । का १ । यो ० । वे ० । क ० । ज्ञा १ । सं १ । व १ । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । सं ० ।
 भा ०

आ १ । अनाहार । उ २ । के ॥

मनुष्यलब्धपर्व्यामिर्कग । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १०
 १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे १ । पंढ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । असंयम ।
 व २ । च । अ । ले २ । क । गु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ४ ॥

भा ३ अगुभ

इंतु मनुष्यगति समाप्रमावुतु ॥

देवगतिपौळु देवकळ्गे पेल्लपडुवल्लि । गु ४ । जी २ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ ।
 वे । इं १ । का १ । त्र । यो ११ । म ४ । व ४ । वे २ । का १ । वे २ । स्त्री । पुं ० । क ४ । ज्ञा ६ । १५
 म श्रु अ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ २ । सं १ । आ २ ।
 भा ६

उ ९ । म । श्रु । अ । कु । कु । वि । च । अ । अ ॥

सं १ । आ १ । उ ६ । क्षीणकथामस्य—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ० । ग १ । इं १ । का १ । यो
 ९ । वे ० । क ० । प्रा ३ । सं १ । य । व ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । यथा । सं १ । आ १ । उ ६ । संयोगस्य—
 भा १

गु १ । जी २ । प ६ । प्रा ४ । सं ० । ग १ । इं १ । का १ । यो ७ । म २ । व २ । औ २ । का १ । २०
 वे ० । क ० । ज्ञा १ । के । सं १ । य । व १ । के । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । सं १ । आ २ । उ २ । के । के ।
 भा १

अयोगस्य—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १ । आयुः । सं ० । ग १ । इं १ । का १ । यो ० । वे ० । क ० ।
 ज्ञा १ । के । सं १ । व १ । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा । सं ० । आ १ । अनाहार । उ २ । के । के । मनुष्यलब्ध-
 भा ०

पर्वानानी—गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का ।
 वे १ । पं । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ । च । अ । ले २ । क । गु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । २५
 भा ३ अगुभ

आ २ । उ ४ । देवगती—गु ४ । जी २ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । पं । का १ । व ।
 यो ११ । म । ४ । अ । ४ । का १ । वं । वे २ । स्त्री । पुं । क ४ । ज्ञा ६ । म श्रु अ कु कु वि । सं १ । य । व ३

देवसामान्यसासादनं^१ । गु १ । सा । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
 इं १ । का १ । यो १ । वे २ । क ४ । सा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ ।
 भा ६
 सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥

देवसामान्यसासादनपर्याप्तिकर्म^१ । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
 का १ । यो १ । वे २ । क ४ । सा ३ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ । ५
 भा ३ गु
 वा १ । उ ५ ॥

देवसामान्यसासादनापर्याप्तिकर्म^१ । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
 इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । सा २ । सं १ । व २ । ले २ क । गु । भ १ ।
 भा ६
 सं १ । सा । सं १ । आ २ । अ ४ ॥

देवसामान्यसाम्यमिष्याहृष्टिगण्ये^१ । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । १०
 का १ । यो १ । वे २ । क ४ । सा ३ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । मिथ । सं १ ।
 भा ३
 आ १ । उ ५ ॥

देवसामान्यसंयतग्ये^१ । गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
 का १ । यो १ । वे २ । क ४ । सा ३ । सा । आ । सं । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं ३ ।
 भा ३
 सं १ । आ २ । उ ६ ॥

१५

का । वे २ । क ४ । सा २ । सं १ । अ । व २ । ले २ क गु । भ २ । स १ मि । सं १ । आ २ । उ ४
 भा ६

कु कु च अ । गाणाद्वानां—गु १ सा । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो
 १ । वे २ । क ४ । सा ३ । कु कु वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । स १ सा । सं १ । आ २ । उ ५ ।
 भा ६

तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो १ । वे २ । क ४ । सा
 २ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । स १ सा । सं १ । आ २ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां गु १ जी १ । प ६ । ६ ।
 भा ३ गु

प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । सा २ । सं १ । व २ ।
 ले २ क गु । न १ । स १ सा । सं १ । आ २ । उ ४ । साम्यमिष्यादुर्गां—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
 भा ६

सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो १ । वे २ । क ४ । सा ३ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । स १
 भा ३

मिथ । सं १ । आ १ । उ ५ । असंयतानां—गु १ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
 का १ । यो १ । वे २ । क ४ । सा ३ । म । आ । सं । अ । व २ । ले ६ । भ १ । स ३ । सं १ । आ २ । २५
 भा ३

भवनप्रयमिम्यादृष्टिगण्ये । गु १ । मि । जो २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
भा ४

आ २ । उ ५ ॥

भवनप्रयपय्यामिमिम्यादृष्टिगण्ये । गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । का ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले ६ । भ २ । स १ । मि । सं १ । ५
भा १

या १ । उ ५ ॥

भवनप्रयापय्याप्तमिम्यादृष्टिगण्ये । गु १ । जो १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । व २ । ले २ । क गु । भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
भा ३ । अ शु

आ २ । उ ४ ॥

भवनप्रयसासावर्तये गु १ । सा । जो २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । १०
का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ ।
भा ४

आ २ । उ ५ ॥

भवनप्रयसासावर्तय्यामिरुग्णे । गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ ।
भा १

आ २ । उ ५ ॥

भवनप्रयसासावर्तय्यामिरुग्णे । गु १ । जो १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो २ । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । व २ । ले २ । क गु । भ १ । सं १ । सा ।
भा ३ । अ शु

सं १ । आ २ । उ ४ ॥

१५

मिम्यादृष्टानां—गु १ मि, जो २, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे २, क ४,
ज्ञा ३, सं १, व २, ले ६, भ २, स १ मि, सं १, आ २, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १ जो १, प ६, प्रा १०, २०
भा ४

सं ४, ग १, इं १ का १, यो ९, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, व २ ले ६, भ २, स १ मि, सं १, आ १, उ ५,
१

तदपर्याप्तानां—गु १, जो १, प ६ ७, प्रा १० अ, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २ मि का, वे २, क ४,
ज्ञा २, सं १, व २, ले २ क गु भ २, स १ मि, सं १, आ २, उ ४, सासावर्तानां—गु १ सा, जो २,
भा ३ अ शु

प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, व २, ले ६ भ १,
भा ४

स १ सा, सं १, आ २, उ ५, तत्पर्याप्तानां—गु १, जो १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो १,
वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, व २, ले ६, भ १, स १ सा, सं १, आ १, उ ५, तदपर्याप्तानां—गु १,
भा १

२५

जो १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २, वे २, क ४, ज्ञा २, सं १, व २, स अ,
१२४

सौधर्मद्वयमिभ्यावृष्टिपर्याप्तकर्मो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले १ । भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
भा १

वा १ । उ ५ ॥

सौधर्मद्वयमिभ्यावृष्टि अपर्याप्तकर्मो । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ ।
ग १ । इं १ । का १ । यो २ । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । व २ । ले २ । भ २ । सं १ । मि ।
भा १

सं १ । वा २ । उ ४ ॥

सौधर्मद्वयसातादनंगे । गु १ । जी २ । प ६ । ष । प्रा १० । उ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ ॥ सं १ । व २ । ले ३ । भ १ । सं १ । सा । सं १ ।
भा १

वा २ । उ ५ ॥

सौधर्मद्वयपर्याप्तसातादनंगे । गु १ सा । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । १०
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले १ । भ १ । सं १ । सं १ । वा १ । उ ५ ॥
भा १

सौधर्मद्वयसातादनापर्याप्तकर्मो । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । व २ । ले २ क शु भ १ ।
भा १

सं १ । सा । सं १ । वा २ । उ ४ ॥

सौधर्मद्वयसम्यगिभ्यावृष्टिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । १५
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले १ । ते । भ १ । सं १ । मिथ । सं १ ।
भा १

वा १ । उ ५ ॥

जी २, प ६, प्रा १०, उ, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, व २, ले ३,
भा १

भ २, सं १ मि, सं १, वा २, उ ५, लक्षणां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १,
का १, यो ९, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, व २, ले १, भ २, सं १ मि, सं १, वा १, उ १, लक्षणां— २०
भा १

गु १, जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २, वे २, क ४, ज्ञा २, सं १, व २, ले २,
भा १

भ २, सं १ मि, सं १, वा २, उ ४, लक्षणां—गु १, जी २, प ६, ष, प्रा १० उ, सं ४, ग १, इं १,
का १, यो ११, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, व २, ले ३, भ १, सं १ वा,
भा १

गु १ सा, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे २

भ १, सं १, सं १, वा १, उ ५, लक्षणां—गु १, जी १, प ६ अ,
यो २ मि का, वे २, क ४, ज्ञा २, सं १, व २, ले २ क शु, भ

सम्यगिभ्यावृष्टां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं

सानत्कुमारमाहेन्द्रदेवकर्णम् । गु ४ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
का १ । यो ११ । वे १ । पुं० त्रयोविंशत्ये सोपमर्णद्वयबोद्धे उत्पत्तियप्युर्वरिदं । क ४ । गा ६ ।
१ । व ३ । ले ४ । ते प क १ गु १ भ २ । सं ६ । उ । वे । क्षा । मि । सा । मि । सं १ ।
भा २ । ते प
२ । उ ९ ॥

सानत्कुमारद्वयदेवपर्व्याप्तम् । गु ४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । ५
१ । वे १ । क ४ । गा ६ । सं १ । व ३ । ले २ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ ९ ॥
२

सानत्कुमारद्वयदेवापम्यप्तिकर्णम् । गु ३ । मि । सा । अ । जी १ । अ । प ६ । अ प्रा ७ ।
सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । प्र । यो २ । वे ० मिश्र १ । का १ । वे १ । पुं० । क ४ ।
५ । कु । कु । म । भु । अ । सं १ । अ । व ३ । च । अ । अ । ले २ । क गु । भ २ । सं ५ ।
२
। सा । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ ॥ १०

संप्रति निम्प्यादृष्टिप्रभृति यावत्संयतसम्यग्दृष्टि तावत्तुगुणत्यानंगळो सोपमर्णपुंयेभंगं
व्यमक्कुं । ई प्रकारविदं मेलेयुं संतम्मलेदयानुसारविदं वक्तव्यमक्कुं । अनुविशानुत्तरविमानंगळ
गदृष्टिगळो सम्यक्त्वप्रमाटापं कतंभ्यमक्कुमल्लि विशेषमुंटापुबे बोद्धे उपशमसम्यक्त्वमं बिट्टु
मिकालबोद्धे वेकशाधिकसम्यक्त्वद्वयमे वक्तव्यमक्कुं । इतु बेवगति समाप्तानुत्तु ॥

सिद्धगतिबोद्धे सिद्धगोवंते वक्तव्यमक्कुं । विशेषमुंटापुबे बोद्धे अस्ति सिद्धगतिस्तत्र केवल- १५
केवलब्रह्मज्ञानशाधिकसम्यक्त्वमनाहारमुपयोगद्वयमुंटापोदाटापमिल्लि एके बोद्धे सिद्धगळो एके-
साविजातिनामकर्म्मोदियाभायमप्युर्वरिदं । इतु गतिमागंभेसमागंभे समाप्तानुत्तु ।

सनत्कुमारमाहेन्द्रदेवानां-गु ४, जी २, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११,
पुं कल्पत्रयोणां सोपमर्णद्वय एवोत्पत्तेः, क ४, गा ६, सं १, व ३, ले ४ ते प क गु, भ २, स ६ उ वे
भा २ ते प

वि सा मि, सं १, आ २, उ ९, उत्पत्तितानां-गु ४, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, २०
९, वे १, का ४, गा ६, सं १, व ३, ले २, भ २, स ६, सं १, आ १, उ ९ ।

उत्पत्तितानां-गु ३ मि सा अ, जी १ अ, प ६ अ, प्रा १० ७ अ, सं ४, ग १ इं, इं १ सं, का १ व,
२ वे मि का, वे १ पु, क ४, गा ५ कु कु म भु अ, सं १ अ, व ३ अ अ अ, ले २ क गु, भ २, स ५
२

सा उ वे क्षा, सं १, आ २, उ ८, सपिम्प्यादृष्टिपादसंयतान्तानां सोपमर्णपुंयेभंगं एवमूर्धनि त्वाव-
सानुसारेण बोधं, अनुविशानुत्तरविमानयानामसंयतान्तर एव तथाचरं विदेषः, पर्वत्रयमे वेकशाधिक- २५
व्यक्तद्वयमेरे, सिद्धगती सिद्धानां यथासम्भवं यवत्वं, अस्ति सिद्धगतिस्तत्र केवलज्ञानद्वयंशाधिकसम्यक्त्वा-
हापोपयोगद्वयैः पोषात्तयो अस्ति सिद्धानामेरेन्द्रियविनासोदयाभवात्, इति भाष्यं पश्चात् ।

बादरेकेंद्रियापर्व्याप्तकर्गो । गु १ । मि । जी १ । अ । प ४ । अ । प्रा ३ । ए । का । आ ।
 ४ । ग १ । ति । इं १ । का ५ । यो २ । मि । का । वे । १ । प ० । क ४ । ज्ञा २ । सं १ ।
 । व १ । अ घ से २ क गु भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंति । आ २ । उ ३ ॥
 भा ३ अ

इंतु बादरपर्व्याप्तनामकर्म्मोदियसहितगे आलापत्रयं पेळल्पट्टुवपर्व्याप्तनामकर्म्मोदियसहित
 वरेकेंद्रियलभ्यपर्व्याप्तकर्गो पेळल्पट्टुवल्लि बादरेकेंद्रियापर्व्याप्तायापवंतायापमवकुं ॥

५

मूधमेन्द्रियंगले । गु १ । मि । जी २ । प । अ प ४ । ४ । प्रा ४ । ३ । स ४ । ग १ । इं १ ।
 । का ५ । यो ३ । ओ २ । का १ । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व १ । अघ ।
 २ क गु एके बोडे :—
 भा ३ अ

सर्वोसि मूधुमाणं काओदा सव्यविग्गहे मुक्का ।
 सव्यो मित्तो देहो कवोदवण्णो हवे पियमा ॥

१०

एवं नियममुंत्पुवरिद । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंति । आ २ । उ ३ ॥

मूधमेन्द्रियपर्व्याप्तकर्गो । गु १ । जी १ । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ । इं १ । का ५ ।
 ० १ । ओ का । वे १ । प ९ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व १ । अघ । से २ क भ २ ।
 भा ३
 । १ । मि । सं १ । असंति । आ १ । उ ३ ॥

का ५, यो १ जी, वे १ पं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द १ अघ, ले ६, भ २, स १ मि, सं १ १ अ १ १५

संज्ञी, आ १, उ ३, तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ अ, प ४ अ, प्रा ३ एका आ, सं ४, ग १ ति, इं १
 का ५, यो २ मि का, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अघ, ले २ क गु, भ २, स १ मि, स १
 भा ३ अ १

संज्ञी, आ २, उ ३, एवं बादरपर्व्याप्तानामोदयानामेकेन्द्रियाणामुक्तं, अपर्याप्तानामोदयानां तल्लभ्यपर्व्याप्तानां
 तदपर्याप्तवचोग्यं,

मूधमाणां—गु १ मि, जी २ प अ, प ४ अ, प्रा ४ ३, सं ४, ग १ ति, इं १ ए, का ५, यो ३ जी २ २०
 का १, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अघ, ले २ क गु

भा ३ अ १—कुतः ?
 सर्वोसि मूधुमाणं काओदा सव्यविग्गहे मुक्का ।
 सव्यो मित्तो देहो कवोदवण्णो हवे पियमा ॥१॥
 सर्वेषां मूधमाणां काओदा सर्वविग्गहे मुक्का ।
 सर्वो मित्तो देहः कपोतवर्णो भवेन्नियमात् ॥१॥

२५

भ २, स १ मि, सं १ असंति, आ २, उ ३, तदपर्याप्तानां—गु १, जी १, प ४, प्रा ४, सं ४, ग १, इं १,
 का ५, यो १ जी, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अघ, ले १ क, भ २, सं १ मि, सं १ अघंती,
 भा ३ अ १

त्रौद्रियपर्याप्तिकर्णे । गु १ । जी १ । त्री । प । प ५ । प्रा ७ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ ।
 प्रो । का १ । त्र । यो २ । औ । वा । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ २ । अ ३ ।
 ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । आ १ । उ ३ ॥
 भा ३

त्रौद्रियापर्याप्तिकर्णे । गु १ । जी १ । प ५ । अ प्रा ५ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ ।
 यो २ । मि । का । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ २ । अ ३ । ले २ क गु । भ २ । सं १ । ५
 भा ३ अगु
 मि । सं १ । अ । आ २ । उ ३ ॥

त्रौद्रियलब्धपर्याप्तिकर्णेयुमो प्रकारद्विदमो देवाब्जापमस्कृं ॥ चतुरिद्रियगण्ठे । गु १ । मि ।
 जी २ । प । अ ५ । ५ । प्रा ८ । ६ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । चतुरिद्रिया । का १ । त्र । यो ४ ।
 औ २ । वा १ । का १ । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । आ २ । अ ३ । अ ३ ।
 सं १ । मि । सं १ । अ । आ २ । उ ४ ॥

१०

चतुरिद्रियपर्याप्तिकर्णे । गु । मि । जी १ । च । प ५ । प्रा ८ । च ४ । वा १ । का १ ।
 उ १ । आ १ । सं ४ । ग १ । इं १ । च । का १ । त्र । यो २ । औदारिक का १ । वा १ । वे १ पं ।
 क ४ । ज्ञा २ । सं १ । आ २ । अ ३ । अ । ले ६ द्रव्य भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ सं ।
 भा ३ । अ गु
 आ १ । ऊ ४ ॥

चतुरिद्रियापर्याप्तिकर्णे । गु १ । जी १ । प ५ । अ । प्रा ६ । च ४ । का १ । आ १ । १५
 सं ४ । ग १ । इं १ । च । का १ । यो २ । मि । का । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ ।
 द २ । च । अ । ले २ क गु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ सं । आ २ । ऊ ४ ॥
 भा ३ अगु

१५

इंतु दाब्जापप्रयं पैळल्पदुदु ॥

स १ मि, सं १ अ, आ २, उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ श्री ५, प ५, प्रा ७, सं ४, ग १ ति,
 इं १ श्री, का १ त्र, यो २ औ १ वा १, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अ च, ले ६, भ २, स १
 भा ३

मि, सं १ अ, आ १, उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १, जी १, प ५ अ, प्रा ५ अ, सं ४, ग १, इं १, का १, २०
 यो २ मि का, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अ च, ले २ क गु, भ २, स १ मि, सं १, आ २,
 भा ३ अ गु

उ ३ । तल्लब्धपर्याप्तानां तदपर्याप्तवत्, चतुरिद्रियाणां—गु १ मि, जी २ प अ, प ५ ५, प्रा ८, ६, सं ४,
 ग १, इं १ चतुरि, का १ त्र, यो ४ औ २ वा १ का, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २ अ अ, ले ६,
 भा ३

भ २, स १ मि, सं १ अ, आ २, उ ४ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ च प, प ५, प्रा ८ च ४ वा १
 का १ औ १ आ १, सं ४, ग १ ति, इं १ च, का १ त्र, यो २ औ १ वा १, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १
 अ, द २ अ अ, ले ६, भ २, स १ मि, सं १ अ, आ १, उ ४ । तदपर्याप्तानां—गु १, जी १ अ, प ५ अ, २५
 भा ३

प्रा ६ अ, च ४, का १ आ १, सं ४, ग १, इं १ च, का १, यो २ मि का, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १
 १२५

पट्कपायसामान्यपर्याप्तकर्म । गु १४ । जी १९ । ३७ । १८६ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । सयोगि । ४ । ४ । अयोगि १ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ११ । मिथ-
चतुष्पहीनं । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ ॥
६

पट्कपायसामान्यापर्याप्तकर्म । गु ५ । मि । सा । अ । प्र । सयो । जी ३८ । ६१ । २२० ।
प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ४ । मिथ ५
चतुष्टयं । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ ॥ मनःपर्यायविभंगरहितं । सं ४ । अ । सा । छे । यथा । द ४
ले २ क गु भ २ । सं ५ । मि । सा । उ । वे । क्षा । सं २ । आ २ । उ १० । ज्ञा ६ । द ४ ॥
भा ६

मिथ्यादृष्टिप्रभृतिगन्धे मूलोपभंगमक्कुमल्लि मिथ्यादृष्टि त्रिविवरुगन्धे कायानुवादवलि
मूलोपवेष्टु येन्द्रजीवसमासगन्धु वक्तव्यंगन्धुषु । नास्त्यन्यत्र विशेषः ॥

पृथ्वीकायपर्याप्तकर्म । गु १ । जी ४ । बादरपर्याप्तापर्याप्तमूकमपर्याप्तापर्याप्ता । प ४ । ४ । १०
प्रा ४ । ३ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ । ए । का १ । पृ । यो ३ । ओ २ । का १ । वे १ । पं । क ४ ।
ज्ञा २ । सं १ । अ सं । द १ । अच । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ सं । आ २ । उ ३ ॥
भा ३

पृथ्वीकायपर्याप्तकर्म । गु १ । जी २ । या । सू । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ । ति । इं १ ।
ए । का १ । पृ । यो २ । ओ का । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ । अच । ले ६
भा ३
भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । सं । आ १ । उ ३ ॥

१५.

तत्पर्याप्तानां—गु १४ । जी १९ । ३७ । १८६ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ ।
४ । ४ । १ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ११ । मिथश्चकार्मणाभावात् । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ ।
सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ । तदपर्याप्तानां—गु ५ मि सा अ प्र स ।
६

जी ३८ । ६१ । २२० । प ६ ५ ४ । प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३ २ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ४ यो
मिथाः कार्मणश्च । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ मनःपर्यायविभंगाभावात् । सं ४ अ सा छे यथा । द ४ । ले २ क गु । २०
भा ६

भ २ । सं ५ मि सा उ वे क्षा । सं २ । आ २ । उ १० ज्ञा ६ द ४ । मिथ्यादृष्ट्यादीनां मूलोपः किन्तु
सामान्यादिविधिमिथ्यादृष्टीनामेव कायानुवादमूलोपोक्तजीवसमासा वक्तव्याः । अन्यत्र विशेषो नास्ति ।

पृथ्वीकायिकानां—गु १ । जी ४ बादरमूकमपर्याप्तापर्याप्ताः । प ४ ४ । प्रा ४ । ३ । सं ४ । ग १
ति । इं १ । ए । का १ । पृ । यो ३ ओ २ का १ । वे १ पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ अच । ले ६
३

भ २ । सं १ मि । सं १ अ सं । आ २ । उ ३ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी २ वा सू । प ४ । प्रा ४ । २५
सं ४ । ग १ ति । इं १ । ए । का १ । पृ । यो १ ओ । वे १ पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । द १ अच ।

कपोतमे बाबरंगञ्जो पर्व्यानिपोऽनु योतवणमे उन्नयनकं । विप्रहृगतिपोऽनु गुस्तमे । घातकादिहं-
गञ्जोयुमपर्व्यानिपालबोऽनु गोमूत्रमुद्गाप्यत्तवर्षमस्कुं । वनस्पतिकामिकंगञ्जे । गु १ । जो १२ ॥

प्रतिद्वितप्रत्येक पर्व्यानापर्व्यानि अत्रतिद्वितप्रत्येकपर्व्यानापर्व्यानि ४ । नित्यनिगोहबाबरगुडम-
धनुर्गतिनिगोहबाबरगुडमंगळंतु ४ वकं पर्व्यानापर्व्यानिभेदद्विरेमे दुकूटि पम्पेरदू । १ ४ १ ४ । प्रा ४ ।
३ । सं ४ । ग १ ति । ई १ । ए । का १ । वन । यो ३ । जो । का मि । वे १ । ये । क ४ । प्रा २ ।
नं १ । अ । ब १ । अच । से ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ मं । आ २ । उ ३ ॥

भा ३

वनस्पतिपर्व्यानिरूपे । गु १ । जो ६ । प्र । अ । नित्यनिगोह बाबरगुडमपर्व्यानिधनुर्गति-
निगोहबाबरगुडमपर्व्यानिगळंतु ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । ई १ । ए । का १ । वन । यो १ ।
जो । ये १ । यं । क ४ । प्रा २ । नं १ । अ । ब १ । अच । से ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
भा ३

अ । आ १ । उ ३ ॥

वनस्पतिकामिकापर्व्यानिकरणे । गु १ । मि । जो ६ । अ । १ ४ ४ । प्रा ३ । अ । सं ४ ।
ग । ति । १ । ई १ । ए । का १ । वन । यो २ । मि का । वे १ । यं । क ४ । प्रा २ । सं १ । अ । ब १ ।
अच । से २ कनु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ मं । आ २ । उ ३ ॥

भा ३ अणु

प्रायेकवनस्पतिगणेषु । गु १ मि । जो ४ । प्रति । अर्धति । पा । अ । १ ४ ४ । प्रा ४ ।
३ । सं ४ । ग १ ति । ई १ । ए । का १ । वन । यो ३ । जो २ । का १ । वे १ । यं । क ४ । प्रा २ ।
सं १ । अ । ब १ । अच । से ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ मं । आ २ । उ ३ ॥

भा ३

पीडा । उभयविप्रहृगती मुखका । बाबरकादिनामं अत्रदीपिकाये करोडा । विप्रहृगती मुखका । पर्व्यानिनामं
गोमूत्रमुद्गाप्यत्तवर्षमं ।

वनस्पतिकामिकापर्व्यानि—गु १ । जो ३ । प्रतिद्वितप्रत्येकपर्व्यानापर्व्यानि ४ । नित्यनिगोहबाबरगुडम-
धनुर्गतिनिगोहबाबरगुडमंगळंतु ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । ई १ । ए । का १ । वन । यो ३ । जो । का मि । वे १ । ये । क ४ । प्रा २ ।
नं १ । अ । ब १ । अच । से ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ मं । आ २ । उ ३ ॥

गु १ । जो ६ । प्रतिद्वितप्रत्येकपर्व्यानापर्व्यानि ४ । नित्यनिगोहबाबरगुडमधनुर्गतिनिगोहबाबरगुडमंगळंतु ४ । प्रा ४ । सं ४ ।
ग १ ति । ई १ । ए । का १ । वन । यो ३ । जो । का मि । वे १ । ये । क ४ । प्रा २ । नं १ । अ । ब १ । अच । से ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ मं । आ २ । उ ३ ॥

अ । आ १ । उ ३ ॥ पर्व्यानिनामं—गु १ मि । जो ६ । अ । १ ४ ४ । प्रा ३ । अ । सं ४ ।
ग । ति । १ । ई १ । ए । का १ । वन । यो २ । मि का । वे १ । यं । क ४ । प्रा २ । सं १ । अ । ब १ । अच । से २ कनु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ मं । आ २ । उ ३ ॥

भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ मं । आ २ । उ ३ ॥ पर्व्यानिनामं—गु १ मि । जो ४ । प्रतिद्वितप्रत्येकपर्व्यानापर्व्यानि ४ । नित्यनिगोहबाबरगुडम-
धनुर्गतिनिगोहबाबरगुडमंगळंतु ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । ई १ । ए । का १ । वन । यो ३ । जो २ । का १ । वे १ । यं । क ४ । प्रा २ ।

यथा। द४ ले२ क शु भ२। सं५। मि। सा उ। वे। क्षा। सं२। आ२। उ१०॥
भा ६

प्रसमिष्यादृष्टिगन्धो। गु१। मि। जो१०। वि। ति। च। सं। अ। प६। ६।
२ २ २ २ २

५। ५। प्रा१०। ७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। सं४। ग४। इ४। का१। अ। यो१३।
आहारद्वयवर्जितमागि। वे३। क४। ज्ञा३। कु। कु। वि। सं१। अ। व। २। ले६। भ२।
६

सं१। मि। सं२। आ२। उ५॥

प्रसपर्याप्तमिष्यादृष्टिगन्धो। गु१। मि। जो५। वि। ति। च। सं। अ। प६। ५।
१ १ १ १ १

प्रा१०। ९। ८। ७। ६। सं४। ग४। इ४। वि। ति। च। सं। का१। अ। यो१०।
१ १ १ १
म४। वा४। ओ१। वे१। वे३। क४। ज्ञा३। सं१। अ। व२। ले६। भ२। संमि।
६

सं२। आ१। उ५॥

प्रसाऽपर्याप्तमिष्यादृष्टिगन्धो। गु१। मि। जो५। वि। ति। च। सं। अ। प६। ५। १०
१ १ १ १ १

अ। प्रा७। ७। ६। ५। ४। सं४। ग४। इ४। वि। ति। च। सं। का१। अ। यो३।
१ १ १ १
ओमि। वेमि। का। वे३। क४। ज्ञा२। सं१। अ। व२। ले२। कशु। भ२। सं१।
भा ६

मि। सं२। आ२। उ४॥

सासावनसम्यग्दृष्टिप्रभृतियागि अयोगिकेवलपर्म्यंतं मूलौघभंगमक्कुं ॥

सं४। अ। सा। छे। य। द४। ले२। कशु। भ२। सं५। मि। सा। उ। वे। क्षा। सं२। आ२। उ१०॥ १५
भा ३

मिष्यादृष्टां—गु१। मि। जो१०। वि। ति। च। सं। अ। प६। ६। ५। ५। प्रा१०। ७। ९। ७। ८। ६। ७। ५।
२ २ २ २ २

६। ४। सं४। ग४। इ४। का१। अ। यो१३। आहारद्वयवर्जितं। वे३। क४। ज्ञा३। कु। कु। वि। सं१। अ।
द२। ले६। भ२। सं१। मि। सं२। आ२। उ५। तत्पर्याप्तानां—गु१। मि। जो५। वि। ति। च। सं। अ।
१ १ १ १ १

प६। ५। प्रा१०। ९। ८। ७। ६। सं४। ग४। इ४। वि। ति। च। सं। का१। अ। यो१०। म४। वा४। ओ१।
१ १ १ १

वे१। वे३। क४। ज्ञा३। सं१। अ। व२। ले६। भ२। सं१। मि। सं२। आ१। उ५। तत्पर्याप्तानां— २०

गु१। मि। जो५। वि। ति। च। सं। अ। प६। ५। अ। प्रा७। ७। ६। ५। ४। सं४। ग४। इ४। वि। ति। च। सं। का१। अ।
१ १ १ १ १

यो३। ओमि१। वेमि१। का१। वे३। क४। ज्ञा२। सं१। अ। व२। ले२। कशु। भ२। सं१। मि। सं२।
भा ६

मनोयोगिमिषये । गृ १ । मिष । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इ १ । पं ।
का १ । जो ४ । मनो । वे ३ । क ४ । प्रा ३ । सं १ । आ २ । सं ६ । भ १ । सं १ । मिष ।
सं १ । आ १ । उ ६ ॥

मनोयोगि अर्चनार्थे गृ १ । अर्च । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इ १ । का १ ।
जो ४ । मनो । वे ३ । क ४ । प्रा ३ । मा । पु । अ । सं १ । आ २ । पा । आ । आ । सं ६ ।
भ १ । सं १ । उ । वे । ता । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

मनोयोगिनेमन्यते । गृ १ । ने । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । ति । मा । इ १ ।
का १ । जो ४ । मनो । वे ३ । क ४ । प्रा ३ । सं १ । दे । वा । र ३ । सं ६ । भ १ । सं १ । उ । वे ।
भा ३ । गु ।
छा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

मनोयोगिप्रसाधे । गृ १ । प्र । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । मा । इ १ । का १ । १०
जो ४ । मनोयोगि । वे ३ । क ४ । प्रा ४ । मा । पु । आ । मा । सं ३ । ता । छे । वा । र ३ । पा । आ ।
आ । सं ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । ता । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
भा ३

मनोयोगि अन्नमग्नभूति तस्योर्केवतिवर्धते मूलोपभोगमश्नुते । सर्वप्रनास्तु मनोयोगंगम्
तस्योपरोऽस्य तस्यानुभवमनोयोगद्वयं तस्यमनोयोगिमिष्यादुष्टिप्रभुतितास्योर्केवतिवर्धते मनोयोगि
भंगराहस्यमश्नुते । विशेषमानुषेदोहे तस्यमनोयोगमोदे वाहस्यमश्नुते । ई प्रकारमे अनुभवमनो- १५
योगिगन्धमश्नुते । विशेषमानुषेदोहे अनुभवमनोयोगमोदेवश्नुते ॥

६ २, के ६ । अ १, ग १ गा, सं १, आ १, उ ५ । तमिषय—गृ १ मिषं जो १ । प ६, प्रा १०, प ४,
१

प ४, इ १ पं, का १ प, जो ४ प, वे ३, क ४, प्रा ३ म पु अ, सं १ अ, र २, के ६ । भ १ । प १ मिषं,
६

सं १, आ १ । उ ५ । तस्यप्रसाध—गृ १ प्र, जो १, प ६ । प्रा १०, सं ४, प ४, इ १ पं, का १ प,
जो ४ म, वे ३, क ४, प्रा ३ म पु अ, सं १ अ, र ३ अ प अ, के ६, भ १, प ३ उ वे छा, सं १, २०
६

आ १, उ ६ । तद्वेजमउप—गृ १ वे, जो १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २ ति म, इ १ पं, का १ प,
जो ४ म, वे ३, क ४, प्रा ३, सं १ दे, र ३ अ अ अ, सं ६ । भ १ । ग ३ उ वे छा । सं १ । आ १ ।
भा ३ गु

उ ६ । तस्यप्रसाध—गृ १ प्र, जो १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १ म, इ १ पं, का १ प, जो ४ म,
वे ३, क ४, प्रा ४ म पु अ म, सं ३ ता छे प, र ३ अ अ अ, के ६, भ १, प ३ उ वे छा । सं १, आ १ ।
भा ३

उ ७ । तस्यप्रसाधिविषयार्थं मूलोपः किन्तु सर्वत्र मनोयोगाश्चरवारः सयोगे सत्यानुभवो ही सत्यानुभवमनो- २५
योगिना मिष्यादुष्ट्यादिविषयार्थं मनोयोगिष्यन् किन्तु योगिनामे त्वत्त्वनामकः ।

काययोगिपर्याप्तकर्मे । गु १३ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ ।
 ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । औ । वै । आ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ ।
 ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ १ । आहारकः । उ १२ ॥
 ६

अपर्याप्तिकाययोगिगन्त्रे । गु ५ । मि । सा । अ । प्रा । सा । जी ७ । आ । पा । ६ । ५ । ४ ।
 प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ४ । औ मि । वै मि । आ मि । ५
 का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । कु । कु । म । थु । अ । के । सं ४ । अ १ । सा १ । छे १ । यथा
 १ । व ४ । ले २ । क शु । भ २ । सं ५ । मि । सा । ऊ । वे । क्षा । सं २ । आ २ । उ १० ॥
 भा ६

काययोगिमिव्यादृष्टिगन्त्रे । गु १ । मि । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० ।
 ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ५ ॥ आहार-
 द्वयरहित । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । आ ६ । र । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । १०
 आ २ । उ ५ ॥
 ६

काययोगिमिव्यादृष्टिपर्याप्तकर्मे । गु १ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ ।
 ६ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो २ । औ । वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि ।
 सं १ । आ ६ । र । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥
 ६

काययोगिमिव्यादृष्ट्यपर्याप्तकर्मे । गु १ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । १५
 ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । औ । मि । वै । मि । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ ।
 सं १ । आ ६ । र । ले २ । क शु । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥
 भा ६

सं २ । आ २ । उ १२ । तत्पर्याप्तानां—गु १३ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ ।
 ४ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । औ । वै । आ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ ।
 ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ १ । आहारकः । उ १२ । तत्पर्याप्तानां—गु ५ मि सा अ प्र स । जी २०
 ६

उ आ १ ६ ५ ४ । प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३ २ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ४ औ मि वै मि आ मि का ।
 वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । कु कु म थु अ के । सं ४ अ सा छे य । द ४ । ले २ क शु । भ २ । सं ५ मि
 भा ६

सा उ वे क्षा । सं २ । आ २ । उ १० । तन्विव्यादृष्ट्यां—गु १ । जी १४ । प ६ ६ ५ ५ ४ ४ । प्रा १० ७
 ९ ७ ८ ६ ७ ५ ६ ४ ४ ३ । सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो ५ आहारकद्वयं नहि, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १
 अ, द २, ले ६, भ २, सं १ मि, सं २, आ २, उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी ७ । प ६ ५ ४ । प्रा २५
 ६

१० ९ ८ ७ ६ ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो २ । औ । वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि ।
 सं १ । आ ६ । र । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं २ । आ १ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी ७ ।
 ६

प ६ ५ ४ । प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ औ मि वै मि का । वे ३ । क ४ ।

औदारिककाययोगिजसंयतसम्यग्दृष्टिगे । गु १ । अ । जो १ । पं । बि । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । ति । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १ । औ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

औदारिककाययोगि वेशप्रतिगच्छे । गु १ । वे । जो १ । पं । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । ति । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १ । औ । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । वे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा ३

प्रमत्तसंयतप्रभृति सयोगिकेवलपर्व्यंतं काययोगिभंगं यत्तव्यमवक्तुं विशेषमायुर्वेदोडे सर्वप्रौदारिककाययोगिगे वे यत्तव्यमवक्तुं ॥

औदारिकमिथकाययोगिगच्छे । गु ४ । मि । सा । अ । सयो । जो ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ । सं ४ । ग २ । म । ति । इ ५ । का ६ । यो १ । औ मि । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । विभंगमनःपर्व्यंतरहितं । सं २ । अ । यथा । व ४ । ले १ । का । भ २ । सं ४ । मि । सा । वे । क्षा । सं २ । आ १ । उ १० ॥
भा ६

औदारिकमिथकाययोगिमिथ्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जो ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग २ । ति । म । इ ५ । का १ । यो १ । औ मि । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व २ । ले १ । का । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ४ ॥
भा ३

औदारिकसासादनमिथ्यगे । गु १ । सासा । जो १ । सं । पं । अ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग २ । ति । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १ । औ मि । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ ।

जो १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २ ति म, इ १, का १ त्र, यो १ औ, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द ३, ले ६ । भ १, स १ मिथं, सं १, आ १, उ ५, असंयतानां—गु १ अ, जो १ पं प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २ ति म, इ १ पं, का १ त्र, यो १ औ, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द ३, ले ६ । भ १, स ३, सं १, आ १, उ ६, प्रमत्तात्संयोगात्
२०

सं १, आ १, उ ६, देवप्रतानां—गु १ वे, जो १ पं प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २ ति म, इ १ पं, का १ त्र, यो १ औ, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ दे, द ३ ले ६, भ १, स ३, सं १, आ १, उ ६, प्रमत्तात्संयोगात्
३

काययोगिवत् किनु सर्वत्र औदारिकयोग एव यत्तव्यः ।

औदारिकमिथयोगिनां—गु ४ मि सा अ सा । जो ७ अ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ । सं ४ । ग २ ति म । इ ५ । का ६ । यो १ औ मि । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६, विभंगमनःपर्व्याभावात् । सं २ अ य । द ४ । ले १ का । भ २ । स ४ मि सा वे क्षा । सं २ । आ १ । उ १० । तन्मिथ्यादुतां
भा ६

गु १ मि । जो ७ अ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग २ ति म । इ ५ । का ६ । यो १ औ मि । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द २ । ले १ । भ २ । स १ मि । सं २ । आ १ ।
भा ३

उ ४ । वत्सासादनानां—गु १ सा । जो १ सं अ । प ६ अ । प्रा ७ । सं ४ । ग २ ति म । इ १ पं ।

वैक्रियिककाययोगिसम्यग्मिथ्यावृष्टिगन्धो । गु १ । मिथ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
ग २ न वे । इ १ । पं । का १ त्र । यो १ । वै । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ ।
अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । मिथ । सं १ । आ १ । उ ४ ॥
भा ६

वैक्रियिककाययोगि असंयतसम्यग्मिथ्यावृष्टिगन्धो । गु १ । अ सं । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
सं ४ । ग २ । न वे । इ १ । पं । का १ त्र । यो १ । वै का । वे ३ । का ४ । ज्ञा ३ । म ध्रु अ । ५
सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
६

वैक्रियिकमिथकाययोगिगन्धो । गु ३ । मि । सा । अ । जी १ । प ६ । अ । प्राण ७ । अ ।
सं ४ । ग २ । न वे । इ १ । पं । का १ त्र । यो १ । वै मि । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । कु । कु । म ।
ध्रु । अ । सं १ । अ । व ३ । ले १ । भ २ । सं ५ । मि । सा । उ । वे । क्षा । सं १ ।
भा ६

आ १ । उ ८ ॥

१०

वैक्रियिकमिथकाययोगिमिथ्यावृष्टिगन्धो । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ६ ।
अ । सं ४ । ग २ । न वे । इ १ । पं । का १ त्र । यो १ । वै मि । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ ।
अ व २ । ले १ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ १ । उ ४ ॥
भा ६

वैक्रियिकमिथकाययोगिसावनसम्यग्मिथ्यावृष्टिगन्धो । गु १ । सासा । जी १ । अ । प ६ । अ ।
प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ देव । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १ । वै मि । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । १५

प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ न वे । इ १ पं । का १ त्र । यो १ वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि ।
सं १ अ । व २ । ले ६ । भ १ । स १ सा । सं १ । आ १ । उ ५ । तत्सम्यग्मिथ्यादृशां— गु १ मिथं ।
६

जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ न वे । इ १ पं । का १ त्र । यो १ वै । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु
वि । सं १ अ । व २ । ले ६ । भ १ । स १ मिथं । सं १ । आ १ । उ ५ । तदस्यतानां— गु १ अ ।
६

जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ न वे । इ १ पं । का १ त्र । यो १ वै । वे ३ । क ४ । २०
ज्ञा ३ म ध्रु अ । व ३ । ले ६ । भ १ । स ३ । सं १ । आ १ । उ ६ । तन्मिथयोगिनां— गु १ मि
६

सा अ । जी १ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग २ न वे । इ १ पं । का १ त्र । यो १ वै मि । वे ३ । क ४ ।
ज्ञा ५ कु कु म ध्रु अ । सं १ अ । व ३ । ले १ क । भ २ । स ५ मि सा उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ८ ।
भा ६

तन्मिथ्यादृशां— गु १ मि । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग २ न वे । इ १ पं । का १ त्र । यो १ वै मि ।
वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । व २ । ले १ । भ २ । स १ मि । सं १ । आ १ । उ ४ । तत्सावादनानां— गु १ सा । २५
६

जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । स ४ । ग १ दे । इ १ पं । ज्ञा १ त्र । यो १ वै मि । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ अ ।

का। वे १ स्त्री। क ४। मा २। कु। कु। सं १। अ। ब २। घ। अ। से २ क गु भ २।
 भा ३ अ गु
 सं १। नि। सं २। वा २। उ ४॥

स्त्रीवेदिसासादनये*। गु १। साता। जो २। पंचेद्रियसंज्ञिपर्यायापर्याति। प ६। प ६।
 प्रा १०। उ। सं ४। ग ३। ति। मा। वे। इ १। पं। का १। प्र। यो १३। आहारश्चरहित।
 वे १ स्त्री। क ४। मा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। ब २। से ६। भ १ सं १। साता।
 सं १। वा २। उ ५॥

स्त्रीवेदिसासादनपर्यायक्रमे*। गु १। साता। जो १। संज्ञिपंचद्रियपर्यायक। प ६।
 प्रा १०। सं ४। ग ३। ति। मा। वे। इ १। पं। का १। प्र। यो १०। म ४। य ४। श्री। वे।
 वे १ स्त्री। क ४। मा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। ब २। घ। अ। से ६ भ १। सं १।
 साता। सं १। वा १। उ ५॥

स्त्रीवेदिसासादनाश्रमपर्यायक्रमे*। गु १। साता। जो १। सपंच ० प ६। अ। प्रा ७।
 अ। सं ४। ग ३। ति। मा। वे। इ १। पं। का १। प्र। यो ३। श्री। मि। यं। नि। का। वे १।
 स्त्री। क ४। मा २। कु। कु। सं १। अ। ब २। घ। अ। से २ क गु। भ १। सं १।
 साता। सं १। वा २। उ ४॥

स्त्रीवेदिसाम्यग्निध्यादृष्टिगन्धे*। गु १। मिथः। जो १। प। प ६। प्रा १०। सं ४।
 ग ३। ति। मा। वे। इ १। पं। का १। प्र। योग १०। म ४। य ४। श्री १। वे १। ये १। स्त्री।
 क ४। मा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। ब २। घ। अ। से ६। भ १। सं १। मिथः।
 साता। सं १। वा २। उ ४॥

का। वे १ स्त्री। क ४। मा २। कु। कु। सं १। ज। व २। घ। अ से २ क गु भ २।
भा ३ अ गु
सं १। नि। सं २। आ २। उ ४॥

स्त्रीवेदिसासादनगे^०। गु १। साता। जो २। वंचेद्रियमन्त्रिपर्व्यासापर्व्यात्। प ६। प ६।
प्रा १०। उ। सं ४। ग ३। ति। मा। दे। इं १। पं। का १। प्र। यो १३। आहारद्वयपरहित।
वे १ स्त्री। क ४। मा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। घ। अ। से ६। भ १ सं १। साता।
सं १। आ २। उ ५॥

स्त्रीवेदिसासादनपर्व्यान्निर्गणे^०। गु १। साता। जो १। संतिपंचद्रियपर्व्यान्निर्गणे। प ६।
प्रा १०। सं ४। ग ३। ति। मा। दे। इं १। पं। का १। प्र। यो १०। म ४। य ४। ओ। वे।
वे १। स्त्री। क ४। मा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। घ। अ। से ६। भ १। सं १।
साता। सं १। आ २। उ ५॥

स्त्रीवेदिसासादनपर्व्यान्निर्गणे^०। गु १। साता। जो १। सं वं अ ० प ६। अ। प्रा ७।
अ। सं ४। ग ३। ति। मा। दे। इं १। पं। का १। प्र। यो ३। ओ। मि। यं। मि। का। वे १।
स्त्री। क ४। मा २। कु। कु। सं १। अ। व २। घ। अ। से २ क गु। भ १। सं १।
साता। सं १। आ २। उ ४॥

स्त्रीवेदिसाम्यग्मिभ्यादुष्टिगन्धे^०। गु १। मिथ। जो १। प। प ६। प्रा १०। सं ४।
ग ३। ति। मा। दे। इं १। पं। का १। प्र। योग १०। म ४। य ४। ओ १। वे १। वे १। स्त्री।
क ४। मा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। घ। अ। से ६। भ १। सं १। मिथ।

प ६ ६ अ। प्रा ७ ७। सं ४। ग ३ वि म दे। इं १ पं। का १ न। यो ३ ओमि बंमि का। वे १ स्त्री।
क ४। मा २ कु कु। सं १ अ। व २ घ अ। से २ क गु। म २। छ १ मि। छं २। आ २। उ ४।
भा ३ अ गु

तत्त्वसाधनानां—गु १ या। श्री २ संक्षिप्यसाधनानां। प ६ ६। प्रा १० ७। सं ४। ग ३ वि म दे। इं १
पं। का १ न। यो १३ आहारद्वयान्नायु। वे १ स्त्री। क ४। मा ३ कु कु वि। छं १ अ। व २। छे ६।

म १। य १ या। छं १। आ २। उ ५। तत्त्वसाधनानां—गु १ या। जो १ संक्षिप्यसाधनानां। प ६। प्रा १०।
छं ४। ग ३ वि म दे। इं १ पं। का १ न। यो १० म ४ य ४ ओ १ वे १। वे १ स्त्री। क ४। मा ३
कु कु वि। सं १ अ। व २ घ अ। से ६। भ १। छ १ या। छं १। आ २। उ ५। तत्त्वसाधनानां—गु

१ या। जो १ सं अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, छं ४, ग ३ वि म दे, इं १ पं, का १ न, यो ३ ओमि बंमि का।
वे १ स्त्री। क ४। मा २ कु कु, सं १ अ, व २ घ अ, से २ क गु, म १, छ १ या, छं १, आ २, उ ४,
भा ३ अ गु

साम्यग्मिभ्यादुष्टां—गु १ मिथ, जो १, प ६, प्रा १०, छं ४, ग ३ वि म दे, इं १ पं, का १ न, यो १० म
४ य ४ ओ वे १। वे १ स्त्री, क ४, मा ३ कु कु वि, छं १ अ, व २ घ अ, से ६, भ १, छ १ मिथ,

भा १२। ता १०। द ३। पा ३। अ। से ६। भ १। सं २। उ। शा। सं १। आ १। उ ६।
भा १

पुंवेदि अतिप्रकृत्यै। गु १। अति। जो १। व ६। प्रा १०। सं २। मे। वा। ग १।
मा १। सं १। का १। य। जो १। म ४। व ४। जो १। वे १। ए। क ४। ता ३। म। पु।
भा १२। ता १०। द ३। पा ३। अ। से ६। भ १। सं २। उ। शा। सं १। आ १। उ ६।
भा १

पुंवेदिमौ। गु १। जो १। सं २। म ३। म ३। म ३। म ३। म ३। व ६। ६। ५। ५। प्रा १०। ५
७। १। ७। सं ४। ग ३। ति। मा ३। वे १। का १। य। जो १। वे १। पु। क ४।
मा ७। देवतानां महि। सं ५। अ ३। ता १०। पा ३। अ। से ६। भ २।
सं ६। सं २। आ २। उ १०।

पुंवेदिमतिप्रकृत्यै। गु १। जो २। सं ४। व ६। ५। प्रा १०। सं ४। ग ३। ति। मा ३।
वे १। का १। य। जो १। म ४। व ४। जो १। वे १। आ १। वे १। पु। क ४। १०
मा ७। सं ५। अ ३। ता १०। पा ३। अ। से ६। भ २। सं ६। सं २।
आ १। उ १०।

पुंवेदि अत्यतिप्रकृत्यै। गु ४। मि। ता। अ। प्रा। जो २। व ६। ५। प्रा ७। ७। सं ४।
ग ३। ति। मा ३। वे १। का १। य। जो १। म ३। वे १। मि। अ। मि। का। वे १। पुं। क ४।
मा ५। कु। कु। म। पु। अ। सं ३। अ। ता १०। पा ३। अ। से २। क गु भ २। १५
सं ५। मि। ता। उ। वे १। शा। सं २। आ २। उ ८।
भा ६

सं ३, ग १, इ १, का १, य, जो १, म ४, व ४, जो १, वे १, ए, क ४, प्रा ३, म ३, ग ३, सं २, ता १०,
द ३, प ३, अ ३, भ १, ग २, उ १०, सं १, आ १, उ ६। अतिप्रकृत्यानां—गु १ अति, जो १,
१

व ६, प्रा १०, सं २, मे १, ग १, म, इ १, का १, य, जो १, म ४, व ४, जो १, वे १, ए, क ४, प्रा ३,
म ३, ग ३, सं २, ता १०, द ३, प ३, अ ३, भ १, ग २, उ १०, सं १, आ १, उ ६। पुंवेदिनां—गु १, २०

जो ४ सं २ म ३ म ३ म ३ म ३, व ६ ५ ५ ५, प्रा १० ७ ७, सं ४, ग ३ ति म वे, द १, का १, य,
जो १, वे १, पु, क ४, प्रा ७ देवतानां महि, सं ५ अ वे ता १०, द ३, प ३, अ ३, भ २, उ ६,
१

सं २, आ २, उ १०। अत्यतिप्रकृत्यानां—गु ४, जो २ सं ४, व ६ ५, प्रा १० ९। सं ४, ग ३ ति म वे,
इ १, का १, य, जो १, म ४, व ४, जो १, वे १, पु, क ४, मा ५, सं ५ अ वे ता १०, द ३,
प ३, अ ३, भ २। सं ५, सं २। आ १। उ १०। अत्यतिप्रकृत्यानां—गु ४ मि ता अ प्र, जो २, २५

व ६ ५। प्रा ७ ७। सं ४। ग ३ ति म वे। इ १। का १, य, जो १, म ३, वे १, मि। अ। मि। का। वे १, पुं, क ४,
मा ५ कु कु म पु अ। सं ३ अ ता १०, द ३, प ३, अ ३, भ २। सं ५ मि ता उ वे शा, सं २,
भा ६

भा २। उ ८।

क ४। ज्ञा ६। कु। कु। वि। म। श्रु। अ। सं ४। अ। वे। सा। छे। व ३। च। अ। अले ६।
६

भ २। सं ६। सं २। आ १। उ ९॥

नपुंसकवेदिअप्यनिकण्ठे । गु ३। मि। सा। अ। जो ७। प ६। ५। ४। प्रा ७। ७।
६। ५। ४। ३। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६। यो ३। ओमि। वैमि। का।
१ १ १
वे १। पं। क ४। ज्ञा ५। कु। कु। म। श्रु। अ। सं १। अ। व ३। च। अ। अ। ले २ क श्रु।
भा ३ अशु

भ २ सं १। ४। मि। सा। वे। धा। सं २। आ २। उ ८॥

नपुंसकवेदिमिध्यावृष्टिगङ्गे । गु १। मि। जो १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा १०।
७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६।
यो १३। आहारकद्वयवर्जित। वे १। नपुं। क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २।
ले ६। भ २। सं १। मि। सं २। आ २। उ ५॥

६

नपुंसकवेदिमिध्यावृष्टिपर्व्याप्तकंठे । गु १। मि। जो ७। प ६। ५। ४। प्रा १०। ९। ८।
७। ६। ४। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६। यो १०। म ४। व ४। औ। वे।
वे १ पं। क ४ ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। ले ६। भ २। सं १। मि। सं २।
६

आ १। उ ५॥

नपुंसकमिध्यावृष्टि अपर्व्याप्तकंठे । गु १। मि। जो ७। प ६। ५। ४। प्रा ७। ७। ६।
५। ४। ३। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६। यो ३। ओमि। वैमि। का ४। वे १

१० म ४ व ४ ओ १ वे १, वे १ पं, क ४, ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ, सं ४ अ दे सा छे, व ३ च अ अ,
ले ६। भ २, स ६, सं २, आ १, उ ९। तदपर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ, जो ७, प ६ ५, ४ अ, प्रा ७, ७,
६

६, ५, ४, ३। ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४। ग ३ न ति म, इं ५, का ६, यो ३ ओमि वैमि
का, वे १ पं, क ४, ज्ञा ५ कु कु म श्रु अ, सं १ अ, व ३ अ च अ, ले २ क श्रु भ २, स ४ मि सा वे धा,
भा ३ अशु

सं २, आ २, उ ८। तन्मिध्यावृष्टां—गु १ मि, जो १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ७, ८,
६, ७, ५, ६, ४, ४, ३, सं ४, ग ३ न ति म, इं ५, का ६, यो १३ आहारद्वयं नहि, वे १ न, क ४,
ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, व २, ले ६, भ २, स १ मि, सं २, आ २ उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जो
६

७, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८ ७ ६, ४, सं ४, ग ३ न ति म, इं ५, का ६, यो १० म ४ व ४ औ वै,
वे १ पं, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, व २। ले ६। भ २, स १ मि, सं २, आ १, उ ५। तद-
६

पर्याप्तानां—गु १ मि, जो ७, प ६, ५, ४, प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३, सं ४, ग ३ न ति म, इं ५, का ६,

क ४। ज्ञा ६। कु। कु। वि। म। श्रु। अ। सं ४। अ। वे। सा। छे। द ३। च। अ। अले ६।
 भ २। सं ६। सं २। आ १। उ ९॥

नपुंसकवेदिविष्यादृष्टिगण्ये । गु ३। मि। सा। अ। जी ७। प ६। ५। ४। प्रा ७। ७।
 ६। ५। ४। ३। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६। यो ३। ओमि। वैमि। का।
 वे १। पं। क ४। ज्ञा ५। कु। कु। म। श्रु। अ। सं १। अ। द ३। च। अ। अ। ले २ क श्रु।
 भा ३ अश्रु।
 भ २ सं १ ४। मि। सा। वे। क्षा। सं २। आ २। उ ८॥

नपुंसकवेदिविष्यादृष्टिगण्ये । गु १। मि। जी १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा १०।
 ७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६।
 यो १३। आहारकद्रुपवर्जित। वे १। नपुं। क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २।
 ले ६। भ २। सं १। मि। सं २। आ २। उ ५॥

नपुंसकवेदिविष्यादृष्टिगण्ये । गु १। मि। जी ७। प ६। ५। ४। प्रा १०। ९। ८।
 ७। ६। ४। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६। यो १०। म ४। व ४। ओ। वै।
 वे १ पं। क ४ ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। ले ६। भ २। सं १। मि। सं २।
 आ १। उ ५॥

नपुंसकविष्यादृष्टि अपर्ष्याप्तकंये । गु १। मि। जी ७। प ६। ५। ४। प्रा ७। ७। ६।
 ५। ४। ३। सं ४। ग ३। न। ति। म। इं ५। का ६। यो ३। ओमि। वैमि। का ४। वे १

१० म ४ व ४ ओ १ वे १, वे १ पं, क ४, ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ, सं ४ अ वे सा छे, द ३ च अ अ,
 ले ६। भ २, स ६, सं २, आ १, उ ९। तदपर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ, जी ७, प ६ ५, ४ अ, प्रा ७, ७,
 ६

६, ५, ४, ३। ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४। ग ३ न ति म, इं ५, का ६, यो ३ ओमि वैमि
 का, वे १ पं, क ४, ज्ञा ५ कु कु म श्रु अ, सं १ अ, द ३ अ च अ, ले २ क श्रु भ २, स ४ मि सा वे क्षा,
 भा ३ अश्रु

सं २, आ २, उ ८। तन्विष्यादृष्टां—गु १ मि, जी १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ७, ८,
 ६, ७, ५, ६, ४, ४, ३, सं ४, ग ३ न ति म, इं ५, का ६, यो १३ आहारद्रव्यं महि, वे १ न, क ४,
 ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६, भ २, स १ मि, सं २, आ २ उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी

७, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८ ७ ६, ४, सं ४, ग ३ न ति म, इं ५, का ६, यो १० म ४ व ४ ओ वै,
 वे १ पं, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २। ले ६। भ २, स १ मि, सं २, आ १, उ ५। तद-

पर्याप्तानां—गु १ मि, जी ७, प ६, ५, ४, प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३, सं ४, ग ३ न ति म, इं ५, का ६,

नपुंसकवेदिअसंयतसम्यग्बुद्धिगच्छे । गु १ । असं । जी २ । पा । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
 ७ । सं ४ । ग ३ । न ति । म । इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । व ४ । ओ का १ । वै का १ ।
 का १ । वे १ नपुं । क ४ । ज्ञा ३ । म । थु । अ । सं १ । अ । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ ।
 सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

नपुंसकवेदि असंयतपर्याप्तिकंगे । गु १ । अ । जी १ । पा । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ । ५
 न । ति । म । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । व ४ । औ १ । ये १ । वे १ । नपुं । क ४ । ज्ञा ३ ।
 म । थु । अ । सं १ । अ । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ ।
 आ १ । उ ६ ॥

नपुंसकवेदिअपर्याप्तिसंयतगे । गु १ । अ । जी १ । अ । प ६ । अ प्रा ७ । अ । सं ४ ।
 ग १ । न । इं १ । का १ । यो २ । वै मि १ । का १ । ये १ । नपुं । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । १०
 द ३ । च । अ । अ । ले २ क सु । भ १ । सं २ । क्षा । वे । सं १ । आ २ । उ ६ ॥
 भा १ अ शु

नपुंसकवेदिअप्रतिगच्छे । गु १ । वे । जी १ । पा । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । ति म ।
 इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । या ४ । औ का १ । वे १ नपुं । क ४ । ज्ञा ३ । म । थु । अ ।
 सं १ । वे । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
 भा ३ शु

नपुंसकवेदिप्रमत्तप्रभृतिप्रथमभागानिवृत्तिपर्याप्तं स्त्रीवेदिगच्छ भंगमवकुं विशेषमायुर्देवोडे १५
 सव्यं नपुंसकवेदमोदे वक्तव्यमवकुं ॥

जा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, च अ, ले ६, भ १, स १ मिथं, सं १, आ १, उ ५ । तदसंयतानां—

गु १ अ, जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग ३ न ति म, इं १ पं, का १ अ, यो १२ म ४ व
 ४ औ वै वैमि का, वे १ न, क ४, ज्ञा ३ म थु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६, भ १, स ३,
 सं १, आ २, उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ न ति म । इं १, का १, २०
 यो १० म ४ व ४ औ १ वै १, वे १ न, क ४, ज्ञा ३ म थु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६ । भ १,
 सं ३ उ वे दा, सं १, आ १, उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ ।
 ग १ न । इं १ । का १ । यो २ वैमि का । वे १ न । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ अ । द ३ च अ अ ।
 ले २ क सु । भ १ । स २ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ । देशवृत्तिनां—गु १ दे । जी १ पा । प ६ ।
 भा ३ अ शु

प्रा १० । सं ४ । ग २ ति म । इं १ । का १ । यो ९ म ४ व ४ औ १ । वे १ न । क ४ । ज्ञा ३ म थु २५
 अ । सं १ दे । द ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे दा । सं १ । आ १ । उ ६ । प्रमत्तात् प्रथम-
 भा ३ शु

भागानिवृत्तं स्त्रीवेदिवत् किन्तु वेदस्याने नपुंसकवेद एव ।

अ। अ। ले २ क गु। भ २। सं ५। मि। सा। उ। वे। धा। सं २। आ २। उ ८॥
भा ६

क्षोपक्यायिमिम्यादृष्टिगन्धो। गु १। मि। जो १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा १०।
७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १३। आहारद्वय-
रहित। वे ३। क १ क्रो। जा ३। कु। कु। वि। सं १। आ। व २। धा। अ। ले ६। भ २।
सं १। मि। सं २। आ २। उ ५॥

क्षोपक्यायिमिम्यादृष्टिगन्धिकंगे। गु १। मि। जो ७। प। प ६। ५। ४। प। प्रा १०।
९। ८। ७। ६। ४। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १०। म ४। या ४। ओ। ये। वे ३।
क १। क्रो। जा ३। कु। कु। वि। सं १। आ। व २। धा। अ। ले ६। भ २। सं १। मि।
सं २। आ १। उ ५॥

क्षोपक्यायिमिम्यादृष्टपश्चमिकंगे। गु १। मि। जो ७। अ। प ६। ५। ४। अ। प्रा ७। १०
७। ६। ५। ४। ३। आ। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो ३। ओ। मि।। ये। मि। का। वे ३।
क १। क्रो। जा २। कु। कु। सं १। आ। व २। ले २ क गु। भ २। सं १। मि। सं २।
भा ६
आ २। उ ४॥

क्षोपक्यायिसासावनगे। गु १। सा। जो २। प ४। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४।
ग ४। इं १। पं। का १। प्र। यो १३। आहारद्वयजित। वे ३। क १। क्रो। जा ३। कु। कु। १५
वि। सं १। आ। व २। ले ६। भ १। सं १। सासा। सं १। आ २। उ ५॥

म धु अ, सं ३ अ सा ऐ, द ३ च अ अ, ले २ क गु, भ २, सं ५ मि सा उ वे धा, सं २
भा ६

आ २, उ ८। तन्मिम्यादृष्टां—गु १ मि, जो १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १० ७ ९ ७ ८ ६ ७ ५
६ ४ ४ ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६। यो १३ आहारद्वय नहि, वे ३, क १ क्रो, जा ३ कु कु वि, सं १-अ,
द २ प अ। ले ६। भ २। सं १ मि। सं २। आ २। उ ५। तत्पर्याप्तानां—गु १ मि। जो ७। प ६। २०
भा ६

५। ४। प्रा १०। ९। ८। ७। ६। ४। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १० म ४ व ४ ओ १
वे १। वे ३। क १ क्रो। जा ३ कु कु वि। सं १। आ। द २ प अ। ले ६। भ २। सं १ मि। सं २।
६

आ १। उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १ मि। जो ७ अ। प ६ ५ ४ अ। प्रा ७। ७। ६। ५। ४।
३ अ। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो ३ ओमि वंमि का। वे ३। क १ क्रो। जा २ कु कु।
सं १ अ। द २। ले २ क गु। भ २। सं १ मि। सं २। आ २। उ ४। तत्सासावनानां—गु १ सा। २५
भा ६

जो २ प अ। प ६ ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग ४। इं १ पं। का १ प्र। यो १३ आहारद्वयवर्ज्यं। वे ३।
क १ क्रो। जा ३ कु कु वि। सं १ अ। व २। ले ६। भ १। सं १ सा। सं १। आ १। उ ५।
६

। क्रोषकरुपायिअपव्याप्तिासंपतंगे । गु १ । अ सं । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ ।
 ग ४ । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ३ । ओ मि । वै मि । का । वे २ । पुं । न पुं । क १ । क्रो ।
 ज्ञा ३ । म । थु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । । ले २ क गु । भ १ । सं ३ । उ ।
 भा ६
 वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

क्रोषकरुपायिदेशव्रतिकंगे । गु १ । दे । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । ति । म । ५
 इं १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे ३ । क १ । क्रो । ज्ञा ३ । म । थु । अ । सं १ । दे । य ३ । च ।
 अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
 भा ६

क्रोषकरुपायिप्रमत्तसंपतंगे । गु १ । प्र । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । म ।
 इं १ । पं । का १ । त्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । ओ १ । आ २ । वे ३ । क १ । क्रो । ज्ञा ४ ।
 म । थु । अ । म । सं ३ । सा । छे । प । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । १०
 भा ३
 आ १ । उ ७ ॥

क्रोषकरुपायाप्रमत्तंगे । गु १ । अ प्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । भ । मे । प । ग १ ।
 म । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे ३ । क १ । क्रो । ज्ञा ४ । म । थु । अ । म । सं ३ । सा । छे ।
 प । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
 भा ३

क्रोषकरुपायिअपूर्वकरणंगे । गु १ । अ पू । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ३ । भ । मे । १५
 प । ग १ । म । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे ३ । क १ । क्रो । ज्ञा ४ । म । थु । अ । म । सं २ ।
 सा । छे । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
 भा १

उ ६ । तदपयप्तानां—गु १ । अ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । त्र ।
 यो ३ । ओ मि । वै मि । का । वे २ । पुं । न पुं । क १ । क्रो । ज्ञा ३ । म । थु । अ । सं १ । अ । द ३ । च । अ । अ । ले २ क गु ।
 भा ६

भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ । देवत्राणां—गु १ । दे । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । २०
 ग २ । ति । म । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे ३ । क १ । क्रो । ज्ञा ३ । म । थु । अ । सं १ । दे । द ३ । च । अ । अ ।
 ले ६ । भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ । प्रमत्तानां—गु १ । प्र । जी २ । प ६ । प ६ ।
 ३

प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । म । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । ओ १ । आ २ । वे ३ । क १ ।
 क्रो । ज्ञा ४ । म । थु । अ । म । सं ३ । सा छे प । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ।
 ३

अप्रमत्तानां—गु १ । अ प्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । भ । मे । प । ग १ । म । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ९ । वे ३ । २५
 क १ । क्रो । ज्ञा ४ । म । थु । अ । म । सं ३ । सा छे प । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ ।
 ३

उ ७ । अपूर्वकरणानां—गु १ । अ पू । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ३ । भ । मे । प । ग १ । म । इं १ । पं । का १ । त्र ।
 यो ९ । वे ३ । क १ । क्रो । ज्ञा ४ । म । थु । अ । म । सं २ । सा छे । द ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं २ उ
 १

३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १३। वे ३। क ४। ज्ञा २। सं १। अ। व २। ले ६।
भ २। सं २। मि। सा। सं २। आ २। उ ४॥

कुमतिकुभ्रुतज्ञानिप्रप्याप्तक्रमे । गु २। मि। सा। जो ७। प। प ६। ५। ४। प्रा १०।
९। ८। ७। ६। ४। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १०। म ४। वा ४। ओ का १। वे का १।
वे ३। क ४। ज्ञा २। कु। कु। सं १। अ। व २। च। अ। ले ६। भ २। सं २। मि।
सा। सं २। आ १। उ ४॥

कुमतिकुभ्रुतज्ञानिप्रप्याप्तक्रमे । गु २। मि। सा। जो ७। अ। प ६। ५। ४। अ।
प्रा ७। ७। ६। ५। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो ३। ओमि। वैमि। का।
वे ३। क ४। ज्ञा २। सं १। अ। व २। ले २। क गु। भ २। सं २। मि। सा। सं २।
आ ६।
आ २। उ ४॥

कुमतिकुभ्रुतज्ञानिमिप्यादृष्टिगर्भे । गु १। मि। जो १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४।
प्रा १०। ७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६।
यो १३। वे ३। क ४। ज्ञा २। सं १। अ। व २। ले ६। भ २। सं १। मि। सं २।
आ ६।
आ २। उ ४॥

कुमतिकुभ्रुतज्ञानिप्रप्याप्तक्रमे । गु २। मि। सा। जो ७। प। प ६। ५। ४। प्रा १०।
९। ८। ७। ६। ४। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १०। म ४। वा ४। ओ का १। वे का
१। वे ३। क ४। ज्ञा २। कु। कु। सं १। अ। व २। च। अ। ले ६। भ २। सं २। मि।
सा। सं २। आ १। उ ४॥

३, सं ४। ग ४, इं ५, का ६, यो १३, वे ३, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, व २, ले ६, भ २, सं २ मि सा,
सं २, आ २, उ ४। तद्वर्षान्तरानां—गु २ मि सा, जो ७ प, प ६ ५ ४, प्रा १० ९ ८ ७ ६ ४, सं ४, ग ४,
इं ५, का ६, यो १० म ४ व ४ ओ १ व १, वे ३, क ४, ज्ञा २, कु कु, सं १ अ, व २ च अ, ले ६,
भ २, सं २ मि सा, सं २, आ १, उ ४। तद्वर्षान्तरानां—गु २ मि सा, जो ७ अ, प ६ ५ ४, प्रा ७ ७ ६
५ ४ ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो ३ ओमि संमि का, वे ३, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, व २ च अ,
ले २ क गु। भ २, सं २ मि सा, सं २, आ २, उ ४। तन्मिप्यादर्शां—गु १ मि, जो १४, प ६ ६ ५ ५
मा ६

४ ४, प्रा १० ७ ९ ७ ८ ६ ७ ५ ६ ४ ४ ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १३ आहायद्यवर्ष, वे ३,
क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, व २ च अ, ले ६, भ २, सं १ मि, सं २, आ २, उ ४। तद्वर्षान्तरानां—

गु १ मि, जो ७ प, प ६ ५ ४ प, प्रा १० ९ ८ ७ ६ ४, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १०, म ४ व ४
ओ १ वे १, वे ३, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, व २ च अ, ले ६, भ २। सं १ मि, सं २, आ १,
मा ६

२५

कुमतिकुश्रुतज्ञानिसासादनापय्याप्तिकर्म्मो । गु १ । सास । जो १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ ।
 अ । सं ४ । ग ३ । ति । मा । वे । इं १ । पं । का १ । त्र । यो ३ । ओ मि । वै मि । का । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ । ले २ क गु । भ १ । सं १ । सासा । सं १ ।
 भा ६
 आ २ । उ ४ ॥

विभंगज्ञानिगण्ये । गु २ । मि । सा । जो १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं ।
 का १ । त्र । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा १ । विभंग ।
 सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं २ । मि । सा । सं १ । आ १ । उ ३ ॥
 ६

विभंगज्ञानिमिथ्यादृष्टिगण्ये । गु १ । मि । जो १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ ।
 इं १ । पं । का १ । त्र । यो १० । वे ३ । क ४ । ज्ञा १ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ ।
 सं १ । मि । सं १ । आ १ । उ ३ ॥
 ६

विभंगज्ञानिसासावनगे । गु १ । सासा । जो १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ ।
 का १ । यो १० । म ४ । व ४ । ओ का १ । वे का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा १ । विभंग । सं १ ।
 अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ १ । उ ३ ॥
 ६

मतिश्रुतज्ञानिगण्ये । गु १ । जो २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ ।
 इं १ । का १ । त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । म । श्रु । सं ७ । व ३ । अ । अ । अ । ले ६ ।
 सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
 ६

सं १, आ १, उ ४, तरपर्याप्तानां—गु १ सा, जो १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १ पं,
 का १ त्र, यो ३ ओमि वैमि का, वे ३, क ४, प्रा २ कु कु, सं १ अ, व २, ले २ क गु । भ १, स १ सा,
 भा ६

सं १, आ २, उ ४ । विभंगज्ञानिनां—गु २ मि सा, जो १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १ पं,
 का १ त्र, यो १० म ४ व ४ ओ १ वे १, वे ३, क ४, ज्ञा १ विभंगः । सं १ अ, व २, ले ६ । भ २, र ०
 ६

स २ मि सा, स १, आ १, उ ३ वि च अ । तनिम्यादृष्टा—गु १ मि, जो १ प, प ६, प्रा १०, सं ४,
 ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो १०, वे ३, क ४, ज्ञा १, सं १ अ, व २, ले ६, भ २, स १ मि, सं १, आ
 १

१, उ ३ । तस्यासादनानां—गु १ सा, जो १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १, अ १, यो १०, म ४
 व ४ ओ वे, वे ३, क ४, प्रा १ विभंगः । सं १ अ, व २, ले ६ । भ १, व १ अ, सं १, आ १, उ ३ ।
 ६

मतिश्रुतानां—गु १, जो २ व अ । प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग ४ इं १ । का १ त्र, यो १५ । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा २ म श्रु । सं ७ । व ३ व अ अ । ले ६ । भ १ । स ३ उ वे या । सं १, आ २ । उ ५ ।
 ६

औ २। का १। वे ०। क ०। ज्ञा ५। म। श्रु। अ। म। के। सं १। यया। व ४। ले ६।
भा १

भ १। सं २। उ। क्षा। सं १। आ २। उ ९॥

उपशांतरूपायप्रभृति अपोयिकेवल्लिप्यंतं मूलौघभंगमवकुं । देशसंयमवके ओघभंगमेयकुं ।

असंयमरुग्णो गु ४। मि। सा। मि। अ। जो १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४।

प्रा १०। ७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १३। ५

आहारकद्रवरहित। वे ३। क ४। ज्ञा ६। कु। कु। वि। मा। श्रु। अ। सं १। अ। व ३।

ले ६। भ २। सं ६। सं २। आ २। उ ९॥

असंयमिप्य्याप्तिकर्णे गु ४। मि। सा। मि। अ। जो ७। प। प ६। ५। ४। प्रा १०।

९। ८। ७। ६। ४। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १०। म ४। वा ४। औ। का। वे। का।

वे ३। क ४। ज्ञा ६। कु। कु। वि। मा। श्रु। अ। सं १। अ। व ३। ले ६। भ २। सं ६। १०

मि। सा। उ। ये। क्षा। सं २। आ १। उ ९॥

असंयमि अप्य्याप्तिकर्णे गु ३। मि। सा। अ। जो ७। अ। प ६। ५। ४। अ। प्रा ७। ७।

६। ५। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो ३। औ। मि। वे। मि। का। वे ३। क ४।

ज्ञा ५। कु। कु। मा। श्रु। अ। सं १। अ। व ३। च। अ। अ। ले २ क गु। भ २। सं ५।

मि। सा। उ। वे। क्षा। सं २। आ २। उ ८॥

मि। सा। उ। वे। क्षा। सं २। आ २। उ ८॥

मिथ्यादृष्टिप्रभृति असंयतसम्यग्दृष्टिप्यंतं मूलौघभंगमवकुं । इंतु संयममार्गर्णे समाप्त-

मादुवु ॥

ग १ म। इं १ पं। का १ न। यो १ १ म ४ व ४ औ २ का १। वे ०। क ०। सा ५ म श्रु व म के।

सं १ य। व ४। ले ६। भ १। स २ उ या। सं १। आ २। उ ९। उपशातरूपायादयोऽप्यंतं देश-

संयतानां च मूलौघभंगः ।

असंयतानां—गु ४ मि सा मि अ। जो १४। प ६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा १०। ७। ९।

७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। इं ५। का ६। यो १३ आहारद्रव्यं नहि। वे ३। क ४।

ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ। सं १ अ। व ३। ले ६। भ २। सं ६। सं २। आ २। उ ९। तत्पर्याप्तानां—

गु ४ मि सा मि अ। जो ७। प ६। ५। ४। प्रा १०। ९। ८। ७। ६। ४। सं ४। ग ४। इं ५।

का ६। यो १० म ४ व ४ औ १ वे १। वे ३। क ४। ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ। सं १ अ। व ३। २५

ले ६। भ २। सं ६ मि सा मि उ वे क्षा। सं २। आ १। उ ९। तत्पर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ।

जो ७ अ। प ६। ५। ४। प्रा ७। ७। ६। ५। ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो ३

औ मि वे मि का। वे ३। क ४। ज्ञा ५ कु कु म श्रु अ। सं १ अ, व ३ च अ अ, ले २ क गु। भ २,

भा ६

स ५ मि सा उ वे क्षा, सं २, आ २, उ ८। मिथ्यादृष्टिप्रभृतेऽसंयतानां मूलौघभंगो भवति, संयममार्गणा मता ।

दर्शनानुवादे ओपालापो भवति—

अवधिदर्शनिगमो । गु ९ । जो २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ ।
इं १ । पं । का १ प्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । जा ४ । मा थ्रु । अ । मा । सं ७ । द १ । अवधि-
दर्शना । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे ३ । सं १ । आ २ । उ ५ ॥

अवधिदर्शनिपर्याप्तिकर्मो । गु ९ । जो १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं ।
का १ प्र । यो ११ । म ४ । व ४ । जो का । वे का । आ का । वे ३ । क ४ । जा ४ । मा थ्रु । ५
अ । मा । सं ७ । द १ । अवधि । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

अवधिदर्शनिअपर्याप्तिकर्मो । गु २ । अ । प्र । जो १ । प ६ । अ प्रा ७ । सं ४ । ग ४ ।
इं १ पं । का १ प्र । यो ४ । ओ मि । वे मि । आ मि । का । वे २ । पुं । पं । क ४ । जा ३ ।
मा थ्रु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । द १ । अवधि । ले २ । भ १ । सं ३ । सं १ ।
भा ६
आ २ । उ ४ ॥

१०

“असंयतप्रभृतिधीणकषायपप्यंतं अवधिज्ञानवक्त्रे वेद्भवते वक्तव्यमवकुं । केवलदर्शनिर्गे
केवलदर्शनिर्गे केवलज्ञानिर्गे वेद्भवते वक्तव्यमवकुं । इतु दर्शनमार्गर्ण समाममादुवु ॥

लेदयानुवादबोद्धु गुणस्थानालायं मूलोपवतकं । विदोयमावुर्वेवोडे अयोगिगुणस्थानमिल्ल ।
कृष्णलेदयानुवादे । गु ४ । मि । सा । मि । अ । जो १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० ।
७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १३ । वे ३ । १५
क ४ । जा ६ । कु । कु । वि । म । थ्रु । अ । सं १ । अ । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ २ ।
भा १ कृ
सं ६ । मि । सा । मि । उ । वे । सा । सं २ । आ २ । उ ९ ॥

कृष्णलेदयपपर्याप्तिकर्मो । गु ४ । मि । सा । मि । अ । जो ७ । प । प ६ । ५ । ४ ।

अवधिदर्शनिना—गु ९, जो २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७, सं ४ ग ४, इं १ पं, का १ प्र,
यो १५, वे ३, क ४, जा ४ म थ्रु अ म, सं ७, द १ अ, ले ६ । भ १, स ३ उ वे ३, सं १, आ २, २०

उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु ९, जो १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ प्र, यो ११ म ४, व ४,
ओ १, वे १, आ १, वे ३, क ४, जा ४ म थ्रु अ म, सं ७, द १ अ, ले ६ । भ १ । स ३, सं १, आ १,

उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु २ अ प्र, जो १ अ, प ६ अ, प्रा ७, सं ४, ग ४, इं ५, का १ प्र, यो ४ ओ मि
वे मि आ मि का, वे २ पुं न, क ४, जा ३ म थ्रु अ, स ३ अ सा छे, द १ अ, ले २, भ २, स ३, सं १ ।

आ २, उ ४ । असंयतात् क्षीणकषायार्तं अवधिज्ञानिवत् । केवलदर्शनिनां केवलज्ञानिवत् । दर्शनमार्गणा
गता । लेदयानुवादे गुणस्थानालायो मूलोपवत् । अयोगिगुणस्थानं नास्ति । २५

कृष्णलेदयानां—गु ४ मि सा मि अ । जो १४ । प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ८, ६,
७, ५, ६, ४, ४, ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १३, वे ३, क ४, जा ६ कु कु वि म थ्रु अ,
सं १ अ, द ३ अ अ अ, ले ६ । भ २ । स ६ मि सा मि उ वे सा, सं २, आ २, उ ९ । तत्पर्याप्तानां—
भा १ कृ

अवधिरसंनिगन्धे । गु ९ । जो २ । पा । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ ।
 ई १ । पां । का १ । प्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । सा ४ । मा । थु । अ । मा । सं ७ । व १ । अवधि-
 रसं । से ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । सा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥

६

अवधिरसंनिगन्धे । गु ९ । जो १ । पा । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । ई १ । पां ।
 का १ । प्र । यो ११ । म ४ । व ४ । ओ । का । वे । का । आ । का । ये ३ । क ४ । सा ४ । मा । थु । ५
 अ । मा । सं ७ । व १ । अवधि । से ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

६

अवधिरसंनिगन्धे । गु २ । अ । प्रा । जो १ । प ६ । अ प्रा ७ । सं ४ । ग ४ ।
 ई १ । पां । का १ । प्र । यो ४ । जो । मि । वे । मि । आ । मि । का । ये २ । पुं । पां । क ४ । सा ३ ।
 मा । थु । अ । सं ३ । आ । सा । छे । व १ । अवधि । से २ । भ १ । सं ३ । सं १ ।
 भा ६

आ २ । उ ४ ॥

१०

“असंपतन्नभूतिशोभकपापव्यसंते अवधितानरके वेद्वंते वस्तव्यमवष्टुं । केवलदर्शननिगे
 केवलदर्शननिगे केवलज्ञाननिगे वेद्वंते वस्तव्यमवष्टुं । इतु दर्शनमार्गार्णे समानमावतु ॥

छेदयानुवाकशेडु गुणरसानात्पापं मूलोपरंतवृत्तं । विदोपमानुबेदोहे अयोगिगुणस्थानमित्त ।
 कृष्णछेदयानुवाकशेडु । गु ४ । मि । सा । मि । अ । जो १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० ।
 ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । ई ५ । का ६ । यो १३ । वे ३ । १५
 क ४ । सा ६ । कु । कु । वि । मा । थु । अ । सं १ । आ । व ३ । घ । अ । अ । से ६ । भ २ ।
 भा १ कृ
 मं ६ । मि । सा । मि । उ । वे । सा । सं २ । आ २ । उ ९ ॥

वृष्णछेदयानुवाकशेडु । गु ४ । मि । सा । मि । अ । जो ७ । पा । प ६ । ५ । ४ ।

अवधिरसंनिगं—गु ९, जो २ व अ, प ९, ९, प्रा १०, ७, सं ४ । ग ४, ई १ पं, का १ न,
 यो १५, वे ३, क ४, आ ४ म थु अ म, सं ७, व १ अ, से ६ । भ १, उ ३ उ वे सा, सं १, आ २, २०

६

उ ५ । छेदयानुवाकशेडु—गु ९, जो १ व, प ९, प्रा १०, सं ४, ग ४, ई १ पं, का १ न, यो ११ म ४, व ४,
 जो १, वे ३, आ १, वे ३, क ४, आ ४ म थु अ म, सं ७, व १ अ, से ६ । भ १ । उ ३, सं १, आ १,
 भा १

६

उ ५ । छेदयानुवाकशेडु—गु २ व अ, जो १ व, प ९ अ, प्रा ७, सं ४, ग ४, ई ५, का १ न, यो ४ यो मि
 वे मि आ मि वा, वे २ पुं अ, क ४, आ ३ म थु अ, उ ३ अ सा छे, व १ अ, से २, भ २, उ ३, सं १ ।

६

आ २, उ ४ । अत्यंतान् दीनरुपायां अवधितानिषत् । केवलदर्शननिगे केवलज्ञानिवत् । दर्शनमार्गार्णा २५
 गता । छेदयानुवाकशे गुणरसानात्पापं मूलोपवत् । अयोगिगुणस्थानं नास्ति ।

कृष्णछेदयानुवाकशेडु—गु ४ मि सा मि अ । जो १४ । प ९, ९, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ८, ९,
 ७, ५, ९, ४, ४, ३, सं ४, ग ४, ई ५, का ६, यो १३, वे ३, क ४, सा ६ कु कु वि म थु अ,
 व १ अ, व ३ अ अ अ, से ६ । भ २ । उ ५ मि सा मि उ वे सा, सं २, आ २, उ ९ । छेदयानुवाकशेडु—
 भा १ कृ

जा २। कु। कु। सं १। अ। द २। ले २ क गु। भ २। सं १। मि। सं २। आ २। उ ४॥
भा १ कृ

कृष्णलेश्यासासावनंगे। गु १। सासा। जी २। प। अ। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४।
ग ४। इं १। पं। का १ प्र। यो १३। आहारद्वयरहित। वे ३। क ४। जा ३। कु। कु। वि।
सं १। अ। द २। ले ६। भ १। सं १। सासा। सं १। आ २। उ ५॥
भा १ कृ

कृष्णलेश्यासासादनापर्व्यामिकर्गे। गु १। सा। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४। ग ३ ५
न। ति। म। इं १। पं। का १ प्र। यो १०। म ४। वा ४। ओ का। वे का। वे ३। क ४।
जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। ले ६। भ १। सं १। सासा। सं १। आ २। उ ५॥
भा १ कृ

कृष्णलेश्यासासादनापर्व्यामिकर्गे। गु १। सा। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ।
सं ४। ग ३। ति। म। वे। इं १। पं। का १ प्र। यो ३। ओ मि। वे मि। का। वे ३।
क ४। जा २। सं १। अ। द २। ले २ क गु। भ १। सं १। सासा। सं १। आ २। उ ४॥ १०
भा १ कृ

कृष्णलेश्यामिथ्रंग। गु १ मिथ्र। जी १ प। प ६। प। प्रा १०। सं ४। ग ३। न। ति।
म। देवगतिपौंड्र कृष्णलेश्ये पर्व्यामिकर्गे संभविस्तदु। अपर्व्यामिकालदोक्त्रिमधनिल्ल। इं १। पं।
का १ प्र। यो १०। म ४। वा ४। ओ का। वे का। वे ३। क ४। जा ३। मिथ्रज्ञानंगळु।
सं १। अ। द २। च। अ। ले ६। भ १। सं १। मिथ्ररचि। सं १। आ १। उ ५॥
भा १ कृ

कृष्णलेश्यासंतयतसम्यग्दृष्टिगन्धो। गु १। अ सं। जी २। प। अ। प ६। ६। प्रा १०। १५
७। सं ४। ग ३। न। ति। म। कृष्णलेश्यासंतयते। देवगति संभविस्तदु। इं १ पं। का १ प्र।

वे ३, क ४, जा २, कु कु, स १। सं १ अ, द २, ले २ क गु। भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ४।
भा १ कृ

तत्सासादनां—गु १ सा, जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ प्र, यो १३
आहारद्वयानावात्। वे ३, क ४, जा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६, भ १, स १ सा, सं १, आ २,
भा १ कृ

उ ५। तत्पर्यायानां—गु १ सा, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ न ति म, इं १ पं, का १ प्र, यो १० २०
म ४ व ४ ओ वे, वे ३, क ४। जा ३ कु कु वि। सं १ अ, द २, ले ६। भ १, सा १ सा, सं १, आ १,
भा १

उ ५। तदपर्यायानां—गु १ सा, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग ३ वि म दे, इं १ पं, का १ प्र,
यो ३ ओ मि वे मि का, वे ३, क ४, जा २ कु कु, सं १ अ, द २, च अ ले २ क गु। भ १, स १ सा,
भा १ कृ

सं १, आ २, उ ४। तन्मिथ्राणां—गु १ मिथ्र, जी १ पं, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ न ति म, देवगती
पयन्ति कृष्णलेश्या अपयन्ति मिथ्रगुणस्थानं च नहि। इं १ पं, का १ प्र, यो १० म ४ व ४ ओ वे, वे ३, २५
क ४, जा ३ मिथ्राणि, सं १ अ, द २ च अ, ले ६, भ १, स १ मिथ्र, सं १, आ १, उ ५। तदसंयतानां—
भा १ कृ

गु १ अ सं। जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग ३ न ति म तेषां देवगतिर्नहि। इं १ पं, का १ प्र,
१३१

कपोतलेश्या पय्याप्तकर्मो । गु ४ । मि । सा । मि । अ । जो ७ । पा । प ६ । ५ । ४ ।
 प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग ३ । न । ति । म । अद्युभलेश्याऽपय्याप्तकर्मो देवगति
 संभविसदु । भवनत्रयादिवेवकंठनितुं पय्याप्तकालदोळ् शुभलेश्यरेप्युदरिवं । इ ५ । का ६ ।
 यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का । वे का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । कु । कु । वि । म । श्रु । अ ।
 सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । मि । सा । मि । उ । वे । क्षा । सं २ । आ १ । उ ९ ॥ ५
 भा १

कपोतलेश्या अपय्याप्तकर्मो । गु ३ । मि । सा । अ । जो ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । अ ।
 प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो ३ । ओ मि । वे मि । का ।
 वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । कु । कु । म । श्रु । अ । सं । अ । व ३ । चा । अ । अ । ले २ क शु ।
 भा १ क
 भ २ । सं २ । मि । सा । वे । क्षा । सं २ । आ २ । उ ८ ॥

कपोतलेश्यामिध्यादृष्टिगन्धो । गु १ । मि । जो १ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । १०
 ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो १३ । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । चा । अ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि ।
 भा १ क
 आ २ । उ ५ ॥

कपोतलेश्यामिध्यादृष्टिपय्याप्तकर्मो । गु १ । मि । जो ७ । पा । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० ।
 ९ । ८ । ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग ३ । न । ति । म । इ ५ । का ६ । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ १५
 का । वे का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । चा । अ । ले ६ । भ २ ।
 भा १ क
 सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

तत्पर्याप्तानां—गु ४ मि सा मि अ, जो ७ प, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४, ग ३ न ति म,
 देवगतिर्नहि भवनत्रयदेवानामपि पय्यप्तकाले शुभलेश्यत्वात्, इ ५, का ६, यो १० म ४ व ४ ओ वं, वे ३,
 क ४, ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ, सं १ अ, व ३, ले ६ भ २, स ६ मि सा मि उ वे क्षा, सं २, आ १, २०
 भा १ क

उ ९ । तत्पर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ, जो ७ अ, प ६, ५, ४ अ । प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३, सं ४, ग ४,
 इ ५, का ६, यो ३ ओ मि वे मि का, वे ३, क ४, ज्ञा ६ कु कु वि म श्रु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ,
 ले २ क शु, भ २, स ४ मि सा वे क्षा, सं २, आ २, उ ८ । तन्मिध्यादुर्गा—गु १ मि, जो १४, प
 भा १ क
 ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ७, ८, ६, ७, ५, ६, ४, ४, ३, सं ४, ग ४, इ ५, का ६, यो १३,
 वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २ च अ, ले ६ भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ५ । २५
 भा १ क

तत्पर्याप्तानां—गु १ मि, जो ७ प, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४, ग ३ न ति म, इ ५,
 का १, यो १० म ४ व ४ ओ वं, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २ च अ, ले ६ भ २,
 भा १ क

कपोतलेदयानसंपतताम्यबुष्टियर्वात्रकमे । गु १ । अतं । जो २ । पा । ब । प ६ । ६ । प्रा १० ।
 ७ । सं ४ । ग ३ । न । ति । मा । ई १ । पं । का १ । प्र । यो १३ । जो २ । बे २ । म ४ । वा ४ ।
 का १ । ये ३ । क ४ । मा ३ । म भु ३ । अ सं १ । जा ३ । से ६ । भ १ । सं ३ । सं १ ।
 भा १ क
 आ १ । उ ६ ॥

कपोतलेदयानसंपतताम्यबुष्टियर्वात्रकमे । गु १ । अतं । जो १ । पा । प ६ । प्रा १० ।
 सं ४ । ग ३ । न । ति । मा । ई १ । पं । का १ । प्र । यो १० । म ४ । वा ४ । बे २ । जो का ।
 ये ३ । क ४ । मा ३ । म भु ३ । अ सं १ । जा ३ । से ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । जा २ । उ ६ ॥
 भा १ क

कपोतलेदयानसंपतताम्यबुष्टियर्वात्रकमे । गु १ । अतं । जो १ । पा । प ६ । प्रा ३ । म । सं ४ ।
 ग ३ । न । ति । मा । ई १ । पं । का १ । प्र । यो ३ । जो मि । बे मि । का । बे २ । पु । म्पु ।
 क ४ । मा ३ । सं १ । जा ३ । से २ क गु । भ १ । सं २ । बे । धा । सं १ । जा २ । उ ६ ॥
 भा १ क

तेजोलेदयानसंपतताम्यबुष्टियर्वात्रकमे । गु ७ । जो २ । पा । ब । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
 ग ३ । म । ति । वे । ई १ । पं । का १ । प्र । यो १५ । बे ३ । क ४ । मा ७ । के य क र हित । सं ५ ।
 आ । वे । ता । ठे । पा । ब ३ । से ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । जा २ । उ १० ॥
 भा १ के

तेजोलेदयानसंपतताम्यबुष्टियर्वात्रकमे । गु ७ । जो १ । पा । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ । ति । मा । वे ।
 ई १ । पं । का १ । प्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । जो का १ । बे १ । जा १ । बे ३ । क ४ ।
 मा ७ । के य क र हित । सं ५ । आ । वे । ता । ठे । पा । ब ३ । से ६ । भ २ । सं ६ । सं १ ।
 भा १ के

आ १ । उ १० ॥

क ४, मा ३ विधावि, सं १ क, व २, से ६, भ १, व १ विध, धं १, का १, उ ५ । अत्रात्रा—
 भा १ क

गु १ क, जो २ प भ, प ६, ६, प्रा १०, उ, वं ४, व ३ व डि क, ई १ रं, का १ क, को १ क क क क
 को २ बे २ वा १, बे ३, क ४, मा ३ म भु ३, म १ क, व ३, से ६, भ १, व ३, धं १, का २, १०
 भा १ क

उ ६ । उदरार्णजा—गु १ क, जो १ क, प ६, प्रा १०, सं ४, व ३ व डि क, ई १ रं, का १ क,
 यो १० म ४ क ४ को २, बे ३, क ४, मा ३ म भु ३, म १ क, व ३, से ६, व १, व ३, धं १,
 भा १ क

म १, उ ६ । उदरार्णजा—गु १ क, जो १ क, प ६ क, प्रा ७ क, वं ४, व ३ व डि क, ई १ रं,
 का १ क, को १ को वि दी व क, दे २, पु ४, क ४, मा ३, धं १ क, व ३, से २ क गु । ध १, व ३
 भा १ क

बे धा । धं १, का २, उ ६ । उदरार्णजा—गु ७, जो २ क, प ६ ६, प्रा १०, वं ४, व ३ व डि क १५
 ई, ई १ क, का १ क, यो १५, बे ३, क ४, मा ७ क र हित, व ५ क दे ३ से ६, धं १, से ६, व ३,
 भा १ क

क ४, धं १, का २, उ १० । उदरार्णजा—गु ७, जो १ क, प ६, प्रा १०, वं ४, व ३ व डि क ६

का १। वे ३। क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। ले ६। भ १। सं १।
सासादनश्चि। सं १। आ २। उ ५॥
भा १ ते

तेजोलेश्यासासादनपर्व्याप्तकम्^०। गु १। सा। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४।
ग ३। ति म दे। इं १। पं। का १। त्र। यो १०। म ४। वा ४। औ का। वै का। वे ३।
क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। द २। ले ६। भ १। सं १। सासा। सं १। आ १।
उ ५॥
भा १ ते

तेजोलेश्यासासादनपर्व्याप्तकम्^०। गु १। सासा। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ।
सं ४। ग १। दे। इं १। पं। का १। त्र। यो २। वै मि। का। वे २। स्त्री पुं। क ४। ज्ञा २।
सं १। अ। द २। ले २। क ५। भ १। सं १। सासा। सं १। आ २। उ ४॥
भा १ ते

तेजोलेश्यासम्पन्मिध्यादृष्टिगन्धो^०। गु १। मिध। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४। ग ३।
ति। म। दे। इं १। का १। यो १०। वे ३। क ४। ज्ञा ३। सं १। अ। व २। ले ६। भ १।
सं १। मिध। सं १। आ १। उ ५॥
भा १ ते

तेजोलेश्यासंयतसम्पन्वृष्टिगन्धो^०। गु १। अ सं। जी २। प। अ। प ६। द। प्रा १०। ७।
सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। का १। यो १३। वे ३। क ४। ज्ञा ३। सं १। अ। व ३।
ले ६। भ १। सं ३। सं १। आ २। उ ६॥
भा १ ते

तेजोलेश्यापर्व्याप्तासंयतम्^०। गु १। अ सं। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४। ग ३।

प्रा १०। ७। सं ४। ग ३। ति म दे। इं १। पं। का १। त्र। यो १२। म ४। व ४। औ १। वै २। का १।
वे ३। क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। ले ६। भ १। स १। सा। सं १। आ २। उ ५।
भा १ ते

तत्पर्याप्तानां—गु १। सा। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४। ग ३। ति म दे। इं १। पं। का १। त्र। यो
१०। म ४। व ४। औ वै। वे ३। क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। ले ६। भ १। स १। सा।
भा १ ते

सं १। आ १। उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १। सा। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४। ग १। दे।
इं १। पं। का १। त्र। यो २। वै मि। का। वे २। स्त्री पुं। क ४। ज्ञा २। सं १। अ। द २। ले २। क ५।
भा १ ते

भ १। स १। सा। सं १। आ २। उ ४। सम्पन्मिध्यादृष्टां—गु १। मिधं। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४।
ग ३। ति म दे। इं १। पं। का १। त्र। यो १०। म ४। व ४। वै औ। वे ३। क ४। ज्ञा ३। सं १। अ। द २।
ले ६। भ १। स १। मिधं। सं १। आ १। उ ५। असंयतानां—गु १। अ। जी २। प। अ। प ६। द।
भा १ ते

प्रा १०। ७। सं ४। ग ३। ति म दे। इं १। पं। का १। त्र। यो १३। वे ३। क ४। ज्ञा ३। सं १। अ।
द ३। ले ६। भ १। स ३। सं १। आ २। उ ६। तत्पर्याप्तानां—गु १। अ। जी १। प। प ६। प्रा
भा १ ते



पद्मलेश्याजीवंगण्यो गु ७। जी २। प। अ। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। का १। यो १५। वे ३। क ४। ज्ञा ७। सं ५। अ। दे। सा। छे। प। व ३। ले ६। भ २। सं ६। सं १। आ २। उ १०॥
भा १ पद्य

पद्मलेश्यापर्व्यान्तिकर्णे गु ७। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। का १। यो ११। म ४। वा ४। ओ का। वै का। आ का। वे ३। क ४। ज्ञा ७। सं ५। अ। दे। सा। छे। प। व ३। ले ६। भ २। सं ६। सं १। आ १। उ १०॥
भा १ पद्य

पद्मलेश्यापर्व्यान्तिकर्णे गु ४। मि। सा। अ। प्र। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४। ग २। म। दे। इं १। पं। का १। यो ४। ओ मि। वै मि। का। आ मि। वे १। पुं। क ४। ज्ञा ५। कु। कु। म। थु। अ। सं ३। अ। सा। छे। द ३। ले २। क ३।
भा १ पद्य

पद्मलेश्यामिष्यादृष्टिगण्ये गु १। मि। जी २। प। अ। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। का १। यो १२। म ४। वा ४। ओ का १। वे २। का १। वे ३। क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। ले ६। भ २। सं १। मि। सं १।
भा १ प
आ २। उ ५॥

पद्मलेश्यामिष्यादृष्टिपर्व्यान्तिके गु १। जी १। प। प ६। प्रा १०। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। का १। यो १०। म ४। वा ४। ओ का। वै का। वे ३। क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। ले ६। भ २। सं १। मि। सं १। आ १। उ ५॥
भा १ प

आ १। उ ७। पद्मलेश्यानां—गु ७। जी २। प ६। प ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। का १। यो १५। वे ३। क ४। ज्ञा ७। सं ५। अ। दे। सा। छे। प। व ३। ले ६। भ २। सं ६।
भा १ प

सं १। आ २। उ १०। तत्पर्याप्तानां—गु ७। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। का १। यो ११। म ४। व ४। ओ वै। वे ३। क ४। ज्ञा ७। सं ५। अ। दे। सा। छे। प। व ३। ले ६।
भा १ प

भ २। सं ६। सं १। आ १। उ १०। तदपर्याप्तानां—गु ४। मि। सा। अ। प्र। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४। ग २। म। दे। इं १। पं। का १। यो ४। ओ मि। वै मि। आ मि। का। वे १। पुं। क ४। आ ५। कु। कु। म। थु। अ। सं ३। अ। सा। छे। द ३। ले २। क ३। भ २। सं ५। मि। सा। उ। वे। धा। सं १।
भा १ प

आ २। उ ८। तन्निष्यादृश्यां—गु १। मि। जी २। प ६। प ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। का १। यो १२। म ४। व ४। ओ १। वै २। का। वे ३। क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। द २। ले ६। भ २। सं १। मि। सं १। आ २। उ ५। तत्पर्याप्तानां—गु १। मि। जी १। प ६।
भा १ प

प्रा १०। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। का १। यो १०। म ४। व ४। ओ १। वै १। वे ३। क ४।
१३२

पचलेश्याऽसंयतसम्पद्दृष्टिगन्धो । गु १ । असं । जो २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
 ७ । सं ४ । प । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १३ । बाह्यरूपरहित । वे ३ । क ४ ।
 शा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । ये । क्षा । सं १ ।
 भा १ प
 आ २ । उ ६ ॥

पचलेश्याऽसंयतसम्पद्भिफग्नो । गु १ । अ । जो १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ३ ।
 ति । म । दे । इं १ । का १ । योग १० । म ४ । वा ४ । ओ का । वे का । वे ३ । क ४ । शा ३ ।
 सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । ये । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
 भा १ प

पचलेश्याऽसंयताऽप्यभिफग्नो । गु १ । असं । जो १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ ।
 ग २ । म । दे । इं १ । का १ । यो ३ । ओ मि । वे मि । का । वे १ । क ४ । शा ३ । म । श्रु ।
 अ । सं १ । अ । व ३ । ले २ क गु । भ १ । सं ३ । उ । ये । क्षा । सं १ । आ २ । उ ६ ॥
 भा १ प

पचलेश्यावेद्यप्रतिगन्धो गु १ । वेद्य । जो १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । म । ति ।
 इं १ । का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । शा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । वेद्य । व ३ । ले ६ । भ १ ।
 सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
 भा १ प

पचलेश्या-प्रमत्तसंयतग्नो । गु १ । प्र । जो २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
 गति १ । म । इं १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । आ का २ । वे ३ । क ४ ।
 शा ४ । म । श्रु । अ । म । र्च ३ । ता । छे । पा । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । ये । क्षा ।
 सं १ । आ १ । उ ७ ॥
 भा १ प

मिधामि, सं १ अ । व २ । ले ६ । भ १ । स १ मियं । सं १ । आ १, उ ५ । असंयतानां—गु १ अ, जी
 भा १ प
 २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १, का १ । यो १३ बाह्यरूपरहितानां—गु १ अ, जी
 भा १ प
 ३ म श्रु अ, सं १ अ, व ३, ले ६, भ १, स ३ उ बे धा, सं १, आ २, उ ६ । तत्पर्यायानां—गु १ अ ।

जी १ प । प ६ । प्रा १० । सं ४, ग ३ ति म दे । इं १ । का १ । यो १० म ४ व ४ ओका र्वेद्य । वे
 ३ । क ४ । शा ३ । सं १ अ । व ३ । ले ६ । भ १ । स ३ उ बे धा । सं १ । आ १ । उ ६ । तत्-
 भा १ प

पर्यायानां—गु १ अ, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग २ म दे, इं १, का १, यो ३ ओनि
 र्वेदि वा, वे १ पु, क ४, आ ३ म श्रु अ, सं १ अ, व ३ । ले २ क गु, अ १, स ३ उ बे धा, सं १,
 भा १ प

आ २ उ ६ । देयप्रदानां—गु १ दे । जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २ ति म, इं १ । का १ ।
 यो ९, वे ३, क ४, आ ३ म श्रु अ, सं १ दे, व ३ । ले ६ । भ १, स ३, सं १, आ १, उ ६ ।
 भा १ प

प्रदानां—गु १ प्र, जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १ म, इं १, का १ । जो ११ म ४ व
 ४ ओ १ आ २, वे ३, क ४ । शा ४ म श्रु अ । सं १ छे पा व ३ । ले ६ । व २ । व ३ उ बे धा,
 भा १ प

शुक्ललेश्यामिव्यावृष्टिपर्व्याप्रिकर्गे । गु १ । मि । जी १ । पा । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे का १ । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ १ ।
 भा १ शु
 उ ५ ॥

शुक्ललेश्यामिव्यावृष्टिपर्व्याप्रिकर्गे । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । अ । ६ । प्रा ७ । अ ।
 सं ४ । ग १ । दे । इं १ । का १ । यो २ । वे मि १ । का १ । वे १ । पुं । क ४ । ज्ञा २ ।
 कु । कु । सं १ । अ । व २ । ले २ क गु । भ २ । सं १ । मि सं १ । आ २ । उ ४ ॥
 भा १ शु

शुक्ललेश्यासासावनर्गे । गु १ । सासा । जी २ । पा । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
 सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे २ ।
 का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा ।
 भा १ शु
 सं १ : आ २ । उ ५ ॥

शुक्ललेश्यापर्व्याप्रिसासावनसम्यगृष्टिगर्गे । गु १ । सासा । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे कि का १ । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा सं १ ।
 भा १ शु
 आ १ । उ ५ ॥

शुक्ललेश्यासासावनापर्व्याप्रिकर्गे । गु १ । सासा । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
 सं ४ । ग १ । दे । इं १ । का १ । यो २ । वे मि । का १ । वे १ । पुं । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु ।
 सं १ । अ । व २ । ले २ क गु । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
 भा १ शु

बा २, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ ति म दे, इं १, का १,
 यो १० म ४ व ४ औ १ वे १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, व २, ले ६, भ २, सं १, सं १,
 भा १ शु

बा १, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी १ अ, प ६ । प्रा ७, सं ४, ग १ दे । इं १, का १, यो २, वे मि
 का, वे १ पुं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, व २, ले २ क गु । म २, सं १ मि, सं १, आ २, उ ४ ।
 भा १ शु

सासावनां—गु १ सा, जी २ प, अ, प ६, ६, प्रा १०, ७ । सं ४ । ग ३ ति म दे, इं १, का १,
 यो १२ म ४ व ४ औ १ वे २ का १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, व २ । ले ६ ।
 भा १ शु

म १, सं १ सा, सं १, आ २, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ सा, जी १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३
 ति म दे, इं १, का १, यो १० म ४, व ४ औ वे, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, व २, ले ६,
 भा १ शु

म १, सं १ सा, सं १, आ १, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ सा, जी १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४,
 ग १ दे, इं १, का १ । यो २ वे मि का । वे १ पुं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ व २, ले २ क गु ।
 भा १ शु

गुक्ललेश्याप्रमत्तसंयतर्णे । गु १ । प्र। जी २ । प। अ। प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
 सं ४ । म। इं १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । आ २ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ ।
 सं ३ । सा । छे । पा । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
 भा १ गु

गुक्ललेश्याअप्रमत्तसंयतर्णे । गु १ । अ प्र। जी १ । प। प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ ।
 म। इं १ । का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं ३ । सा । छे । पा । व ३ । ले ६ । भ १ ।
 सं ३ । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
 भा १ गु

गुक्ललेश्या अपूर्व्यकरणप्रभृतिसयोगकेवलिगुणस्थानपर्य्यंतं ओघभंगमेयवकुं । अलेशपरम्प
 अयोगकेवलिसिद्धपरमेष्ठिगण्डिगे ओघभंगमवकुं । इंतु लेश्यामार्गर्णे समाप्तमावुवु ॥

मभ्यानुवादवोक्तु भव्यरुगळ्णे ओघभंगमवकुं । मभव्यसिद्धरुगळ्णे । गु १ । मि। जी १४ ।
 प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ ।
 ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १३ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु। कु। वि। सं १ । अ । द २ ।
 ले ६ । भ १ । अवभ्य । सं १ । मिथ्या । सं २ । आ २ । उ ५ ॥
 ६

अभव्यपर्य्याप्तिकर्णे । गु १ । मि। जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ ।
 ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वै का १ । वे ३ । क ४ ।
 ज्ञा ३ । कु। कु। वि। सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । अवभ्य । सं १ । मि । सं २ ।
 भा ६
 आ १ । उ ५ ॥

सं १ । दे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ६ । प्रमत्तानां—गु १ प्र। जी २ प। अ।
 भा १ गु
 प ६ ६ । प्रा १०, ७ । सं ४ । ग १ म। इं १ । का १ । यो ११ म ४ व ४ ओ १ । आ २ । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा ४ । सं ३ । सा छे प, द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ७ । अप्रमत्तानां—गु १
 भा १ गु

अ प्र। जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ म। इं १ । का १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं ३ सा
 छे प । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ७ । अपूर्व्यकरणात्सयोगपर्य्यतानां अलेश्यामोपि-
 ना १ गु

प्रिदानां च ओघमंगो भवति । लेश्यामार्गणा गता ।
 मभ्यानुवादे मभ्यानामोपमंगः । अभव्यानां—गु १ मि। जी १४ प ६ ६ ५ ५ ४ ४ । प्रा १० ७
 ९ ७, ८ ७ ५ ६ ४ ४ ३, सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १३ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि ।
 सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । अ । सं १ मि । सं २ । आ २ । उ ५ । तत्पर्य्यतानां—गु १ मि ।
 ६
 जी ७ । प ६ ५ ४ । प्रा १० ९ ८ ७ ६ ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १० म ४ व ४ ओ व ।
 वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ १ । अ । सं १ मि । सं २ । आ १ ।
 ६

आधिक्यमनुष्ठित्यन्ते । गु ११ । जो २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । ४ । २ । १ ।
सं ४ । प ४ । ई । १ । वं । का १ । प्र । जो १५ । वे ३ । क ४ । सा ५ । सं ७ । र ४ । ले ६ ।
भा ६
भ १ । सं १ । सं १ । मा २ । उ २ ॥

आधिक्यमनुष्ठित्यन्तन्मो । गु ११ । जो १ । प ६ । प्रा १० । ४ । १ । सं ४ । प ४ ।
ई १ । क १ । जो ११ । प ४ । वा ४ । जो का १ । वे का १ । मा का १ । वे ३ । क ४ । सा ५ ।
मा ५ । मा ५ । मा ५ । सं ७ । र ४ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ । मा १ । प २ ॥
भा ६

आधिक्यमनुष्ठित्यन्तन्मो । गु १ । मा । प्र । लो । जो १ । मा । प ६ । मा । प्रा
७ । २ । सं ४ । प ४ । ई । १ । वं । का १ । प्र । जो १ । जो मि । वे मि । मा मि । कर्म । वे २ ।
मा ५ । क ४ । सा ४ । मा ५ । मा ५ । मा ५ । सं ४ । मा । ता । ऐ । मया । र ४ । पा । मा ।
मा ५ । ले २ क गु । भ १ । सं १ । सा । सं १ । मा २ । उ ८ ॥
भा ६

आधिक्यमनुष्ठित्यन्तन्मो । गु १ । मा । जो २ । प । मा । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
सं ४ । प ४ । ई । १ । वं । का १ । प्र । जो ११ । माहात्स्यरहित । वे ३ । क ४ । सा ३ । मा ५ ।
मा ५ । सं १ । मा । र ३ । पा । मा ५ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ । मा २ । उ ६ ॥
भा ६

आधिक्यमनुष्ठित्यन्तन्मो । गु १ । मर्म । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
प ४ । ई । १ । वं । का १ । प्र । जो १० । म ४ । पा ५ । जो का । वे का । वे ३ । क ४ । सा ३ ।
मा ५ । मा ५ । सं १ । मा । र ३ । पा । मा ५ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ ।
भा ६
मा १ । उ ६ ॥

आधिक्यमनुष्ठित्या—गु ११ । जो २ । प ६ । प्रा १० । ७ । २ । १ । सं ४ । प ४ । ई । १ ।
प १ । जो १५ । वे ३ । क ४ । सा ५ । सं ७ । र ४ । ले ६ । भ १ । प १ । सा । सं १ । भा २ ।

उ ६ । उपनिषदा—गु ११ । जो १ । प ६ । प्रा १० । ४ । १ । सं ४ । प ४ । ई । १ । का १ । प्र । जो ११
म ४ । व ४ । जो ११ । वे ३ । क ४ । सा ५ । म ५ । म ५ । सं ७ । र ४ । ले ६ । भ १ । प १ । सा । २०

ई १ । मा १ । उ ६ । उपनिषदा—गु १ । क प्र म । जो १ । प ६ । प्रा ७ । २ । सं ४ । प ४ ।
ई १ । वं । का १ । प्र । जो १ । जो मि । वे मि । मा मि । कर्म । वे २ । म । पुं । क ४ । सा ४ । म ५ । म ५ । सं
४ । म ५ । ले २ क गु । भ १ । प १ । सा । सं १ । भा २ । उ ८ । उपनिषदा—
भा ६

गु १ । मा । जो २ । प ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । प ४ । ई । १ । वं । का १ । प्र । जो ११ । माहात्स्य-
पाशु । वे ३ । क ४ । सा ३ । म ५ । मा । सं १ । मा । र ३ । पा । मा ५ । ले ६ । भ १ । प १ । सा । सं १ । २५

मा २ । उ ६ । उपनिषदा—गु १ । मा । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । प ४ । ई । १ । वं । का १ । प्र ।
प्रा १० । म ४ । व ४ । जो ११ । वे ३ । क ४ । सा ३ । म ५ । मा । सं १ । मा । र ३ । पा । मा ५ । ले ६ ।

वेदकसम्यग्दृष्ट्यसंयतसम्यग्दृष्टिगण्यो । गु १ । असं । जी २ प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
 ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ प्र । यो १३ । म ४ । वा ४ । औ २ । वे २ । का १ । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा ३ । मा ३ । अ । सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । वे । सं १ । आ २ ।
 भा ६

उ ६ ॥

वेदकसम्यग्दृष्ट्यसंयतपर्व्याप्तिकर्म्यो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । ५
 इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । मा ३ ।
 अ । सं १ । असंयम । व ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । वे । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
 भा ६

वेदकसम्यग्दृष्ट्यसंयतसम्यग्दृष्टिगण्यो । गु १ । अ । जी १ । अ । प ६ । प्रा ७ ।
 अ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो ३ । औ मि । वे मि । का । वे २ । पं । पुं । क ४ ।
 ज्ञा ३ । मा ३ । अ । सं १ । अ । व ३ । ले २ । भ १ । सं १ । वे । सं १ । आ २ । उ ६ ॥ १०
 भा ६

वेदकसम्यग्दृष्टिदेशव्रतिगण्यो । गु १ । देश । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ ।
 ति । म । इं १ । पं । का १ प्र । यो ९ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ ।
 सं १ । देश । व ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । वे । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
 भा ३

वेदकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तगो । गु १ । प्रम । जी २ । प । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
 सं ४ । ग १ । म । इं १ । पं । का १ प्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । औ १ । आ २ । वे ३ । १५
 क ४ । ज्ञा ४ । मा ३ । अ । म । सं ३ । सा । छे । प । व ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । वे ।
 सं १ । आ १ । उ ७ ॥
 भा ३

सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ प्र, यो ४ औमि वैमि आमि का, वे २ न पुं, क ४, ज्ञा ३ म थु अ, छं ३ अ
 सा छे, द ३, ले २, भ १, स १ वे, सं १, आ १, उ ६ । तदसंयतानां—गु १ अ, जी २ प, अ प ६, ६ ।
 प्रा १०, ७ सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ प्र, यो १३ म ४ व ४ औ २ व २ का १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म थु अ २०
 अ, सं १ अ, द ३, ले ६, भ १, स १ वे, सं १, आ २, उ ६ । तदसंयतानां—गु १ अ, जी १ प, प ६,
 प्रा १०, सं ४, ग ४, इं १, का १ प्र, यो १०, म ४ व ४ औ १ व १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ म थु अ,
 सं १ अ, द ३, ले ६, भ १, स १ वे, सं १, आ १, उ ६ । तदसंयतानां—गु १ अ, जी १ अ । प ६ अ,
 प्रा ७ अ, सं ४, ग ४, इं १, का १, यो ३ औमि वैमि का, वे २ पं पुं, क ४, ज्ञा ३ म थु अ, छं १ अ,
 द ३, ले २ क पु, भ १, स १ वे, सं १, आ २, उ ६ । देशव्रतानां—गु १ दे, जी १ प, प ६, प्रा १०, २५
 भा ६
 सं ४, ग २ ति म, इं १ पं, का १ प्र, यो ९ म ४ व ४ औ, वे ३, क ४, ज्ञा ३, छं १ दे, द ३ ले ६,
 भ १, स १ वे, सं १, आ १, उ ६ । प्रमत्तानां—गु १ प्र, जी २ प अ, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १ म,
 इं १ पं, का १ प्र, यो ११ म ४ व ४ औ १, आ २, वे ३, क ४, ज्ञा ४ म थु अ म, सं ३ सा छे प,

उपशमसम्यग्दृष्ट्यसंयतपर्याप्तकर्मो । गु १ । अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग ४ । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । जा ३ ।
 सं १ । वा ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
 भा ६

उपशमसम्यग्दृष्ट्यसंयतापर्याप्तकर्मो । गु १ । अ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । सं ४ ।
 ग १ । दे । इं १ । का १ । यो २ । वे मि १ । का १ । वे १ पुं । क ४ । जा ३ । सं १ । अ ।
 व ३ । ले २ क शु । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥
 भा ३

उपशमसम्यग्दृष्टिदेशवृत्तिगन्धो । गु १ । वे । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । ति ।
 मा । इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । व ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । वे । व ३ ।
 ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
 भा ३

उपशमसम्यग्दृष्टिप्रमत्तगो । गु १ । प्रम । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । म ।
 इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । व ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । जा ४ । म । ध्रु । अ । म । १०
 सं २ । सा । छे । व ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
 भा ३

उपशमसम्यग्दृष्टिअप्रमत्तसंयतगो । गु १ । अप्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ ।
 ग १ । म । इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । वा ४ । औ का १ । वे ३ । क ४ । हा ४ । सं २ ।
 सा । छे । व ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
 भा २

उपशमसम्यग्दृष्टि अपूर्वकरणप्रभृति उपशांतकपायछप्रस्यवीतरामपर्यंत बोधभंगमक्कुं ।
 मिय्यादृष्टिसादावननिध्रहविगन्धो बोधभंगमेवपुत्रु । इंतु सम्यक्त्वमार्गणे समाममावुवु ॥

वदनपानानां—गु १ । अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । व ४ । औ १
 वे ३ । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ६ ।
 ६

वदनपानानां—गु १ । अ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । सं ४ । ग १ । दे । इं १ । का १ । यो २ । वे मि
 का । वे १ पुं । क ४ । जा ३ । सं १ । अ । द ३ । ले २ क शु । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ २ । उ ६ । २०
 भा ३

देवव्रतानां—गु १ । दे । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । ति । म । इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । व ४
 औ १ । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । दे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ६ ।
 ३

प्रमत्तानां—गु १ । प्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । म । इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । व ४ । औ १ ।
 वे ३ । क ४ । जा ४ । म । ध्रु । अ । म । सं २ । सा । छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ७ ।
 भा ३

अप्रमत्तानां—गु १ । अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । ग १ । म । इं १ । का १ । यो ९ । म ४ । व ४
 औ । वे ३ । क ४ । जा ४ । सं २ । सा । छे । द ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ७ ।
 भा ३

अपूर्वकरणादुपशांतकपायपर्यंतबोधभंगः । तथा मिय्यादृष्टिसादावननिध्रहवीनानवि । सम्यक्त्वमार्गणा यत् ।

संज्ञिमिष्यादृष्टपर्व्याप्तिकर्मे । गु १ । मि । जी १ । अ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग ४ ।
 इं १ । पं । का १ । यो ३ । ओ मि १ । वै मि १ । का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु ।
 सं १ । अ । व २ । अ । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । व २ । उ ४ ॥
 भा ६

संज्ञितासादनगे । गु १ । सासा । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ ।
 इं १ । पं । का १ । प्रा । यो १३ । म ४ । वा ४ । ओ २ । वे २ । का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ ।
 कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । अ । व २ । उ ५ ॥
 भा ६

संज्ञिपर्व्याप्तिकसासादनगे । गु १ । सासा । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ ।
 इं १ । पं । का १ । प्रा । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वै १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ ।
 कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ । अ । व १ । उ ५ ॥
 भा ६

संज्ञितासादनसाम्यन्दृष्टपर्व्याप्तिकर्मे । गु १ । सासा । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । १० ।
 अ । सं ४ । ग ३ । ति । म । वे । इं १ । का १ । यो ३ । ओ मि । वै मि । का । वे ३ । क ४ ।
 ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ । ले २ क शु । भ १ । सं १ । सासा । सं १ । अ । व २ । उ ४ ॥
 भा ६

संज्ञिमिश्रगे । गु १ । मिथ । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ ।
 यो १० । म ४ । व ४ । ओ का १ । वै का १ । आहारकद्रवमिधद्रव-काम्मनरहित । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा ३ । मिथ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । मिथ । सं १ । अ । व १ । उ ५ ॥ १५
 भा ६

सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । व १ । उ ५ । तदवर्णानां-गु १ । मि । जी १ । अ ।
 ६

प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । यो ३ । ओ मि । वै मि । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु ।
 सं १ । अ । व २ । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । व २ । उ ४ । सासादानां-गु १ । सा । जी २ ।
 ६

प ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १३ । म ४ । व ४ । ओ २ । वे २ । का १ । वे ३ ।
 क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ । अ । व २ । उ ५ । २०
 ६

तदवर्णानां-गु १ । सा । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ । यो १० । म ४ । व ४ ।
 ओ १ । वे ३ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ ।
 ६

अ । उ ५ । तदवर्णानां-गु १ । सा । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग ३ । मि । वे ३ । इं १ ।
 का १ । यो ३ । ओ मि । वै मि । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ । ले २ । सं १ । सा ।
 ६

सं १ । अ । व २ । उ ४ । मिथानां-गु १ । मिथ । जी १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । २५
 यो १० । बोहारिकमिध-वैक्रियिकमिधकाम्मनाहारकद्रवानां-वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । मिथ । वि । सं १ । अ ।

असंख्यपर्याप्तिकर्मे । गु १ । मि । जी ६ । अ । प ५ । ४ । अ । प्रा ७ । ६ । ५ । ४ । ३ ।
 सं ४ । ग १ ति । ६ ५ । का ६ । यो २ । ओ मि । का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ ।
 व २ । ले २ क गु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंति । आ २ । उ ४ ॥
 भा ३ अगु

संख्यसंख्यपदेणरहितसयोगोपि सिद्धरुग्णो मूलोपभंगमवकं । इतु संज्ञिमागणे
 समानमावुतु ॥

आहारानुवादबोजु आहारिण्यो । गु १३ । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० ।
 ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । ४ । २ । सं ४ । ग ४ । ६ ५ । का ६ । यो १४ ।
 कार्मणकापयोगरहित । ये ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । व ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ ।
 वा १ । उ १२ ॥

आहारिपर्याप्तिकर्मे । गु १३ । जी ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ५ । १०
 ४ । ४ । सं ४ । ग ४ । ६ ५ । का ६ । यो ११ । म ४ । वा ४ । ओ का । वे का । आ का ।
 वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । व ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । वा १ । उ १२ ॥
 भा ६

आहारिजपर्याप्तिकर्मे । गु ५ । मि । सा । अ । प्र । सयो । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । अ ।
 प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ । सं ४ । ग ४ । ६ ५ । का ६ । यो ३ । ओ मि । वे मि । आ मि ।
 वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । कु । कु । म । भ्र । अ । के । सं ४ । अ । सा । छे । यया । व ४ । १५
 ले १ क । भ २ । सं ५ । मि । सा । उ । वे । क्षा । सं २ । वा १ । उ १० ॥
 भा ६

तदपर्याप्तानां-गु १ मि । जी ६ संनिपर्याप्तो नहि । प ५ । ४ । प्रा ९ । ८ । ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग १ ति ।
 ६ ५ । वा ६ । यो २ ओ । अनुभववचनं । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ कु कु । सं १ अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १
 भा ४ अ ३ गु १

मि । सं १ अ । आ १ । उ ४ । तदपर्याप्तानां-गु १ मि । जी ६ अ । प ४ अ । प्रा ७ । ६ । ५ । ४ । ३ ।
 सं ४ । ग १ ति । ६ ५ । का ६ । यो २ ओमि का । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । व २ । ले २ क गु । २०
 भा ३ अगु

भ २ । सं १ मि । सं १ अ । आ २ । उ ४ । संज्ञासंख्यपदेणरहिताना सयोगोपि सिद्धानां मूलोपभंगः ।
 षड्भिमागणा गदा ।

आहारानुवादे आहारिणां-गु १३, जी १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९, ७, ८, ६, ७,
 ५, ६, ४, ४, ३, ४, २, सं ४, ग ४, ६ ५, का ६, यो १४ कार्मणो नहि, वे ३, क ४, ज्ञा ८, सं ७, व ४,
 ले ६, भ २, स ६, सं २, वा १, उ १२ । तदपर्याप्तानां-गु १३, जी ७, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, २५
 ६, ४, ४, सं ४, ग ४, ६ ५, का ६, यो ११ म ४ व ४ ओ वे वा, वे ३, क ४, ज्ञा ८, सं ७, व ४, ले ६,
 ६

भ २, स ६, सं २, वा १, उ १२ । तदपर्याप्तानां-गु ५ मि सा अ प्र स, जी ७ अ, प ६, ५, ४, प्रा ७,
 ७, ६, ५, ४, ३, २, सं ४, ग ४, ६ ५, का ६, यो ३ ओमि वेमि आमि, वे ३, क ४, ज्ञा ६ कु कु म थु
 अ के, सं ४ अ वा छे यया, व ४, ले १ क, भ २, सं ५ मि सा उ वे क्षा, सं २, वा १, उ १० ।
 भा ६

ले ६। भ १। सं २। उ। क्षा। सं १। आ १। उ ७॥
भा १

आहार्युपशांतकपायवीतरागछद्यस्यंगे। गु १। उप। जी १। प ६। प्रा १०। सं ०।
ग १। म। इं १। पं। का १। त्र। यो ९। म ४। वा ४। ओ १। वे ०। क ०। ज्ञा ४। म
श्रु। अ। म। सं १। यया। व ३। च। अ। अ। ले ६। भ १। सं २। उ। क्षा। सं १।
भा १
वा १। उ ७॥

आहारिक्षीणकपायछद्यस्यवीतरागंगे। गु १। क्षीण। जी १। प ६। प्रा १०। सं ०।
ग १। म। इं १। पं। का १। त्र। यो ९। वे ०। क ०। ज्ञा ४। सं १। यया। व ३। ले ६।
भा १
भ १। सं १। क्षा। सं १। आ १। उ ७॥

आहारिसंयोगकेवलभट्टारकंगे। गु १ संयोग के। जी २। प। अ। प ६। ६। प्रा ४। २।
सं ०। ग १। म। इं १। पं। का १। त्र। यो ६। म २। वा २। ओ २। वे ०। क ०। १०
ज्ञा १। के। सं १। यया। व १। के। ले ६। भ १। सं १। क्षा। सं ०। वा १। उ २॥
भा १

ई प्रकारादिर्व संयोगकेवलभट्टारकंगे पय्याप्तापय्याप्तापट्टयं वक्तव्यमण्डु ॥

अनाहारिण्यगे। गु ५। मि सा। अ। सयोग अयोगि। जी ८। एकत्रियवावरसुशमद्वित्रि-
षतुःपंचत्रियसंन्यसंतिगळे अ पय्याप्ताक अयोगिकेवलरहितमागि। प ६। ५। ४। प्रा ७। ७।
६। ५। ४। ३। २। १। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १। कर्मण। वे ३। क ४। १५
ज्ञा ६। कु। कु। म। श्रु। अ। के। सं २। असंयममुं यथाव्यातमुं। व ४। ले १। गु। भ २।
भा ६
सं ५। मि। सा। उ। वे। क्षा। सं २। वा १। अनाहार उ १०॥

श्रु. द ३, ले ६, भ १, स २, उ क्षा, सं १, आ १, उ ७। उपशांतकपायाणां-गु १ उ, जी १, प ६,
प्रा १०, सं ०, ग १ म, इं १, का १, यो ९ म ४ व ४ ओ, वे ०, क ४, ज्ञा ४ म श्रु अ म, सं १ म,
द ३ व अ अ, ले ६, भ १, स २ उ क्षा, सं १, आ १, उ ७। क्षीणकपायाणां-गु १ क्षी, जी १, प ६, २०
प्रा १०, सं ४, ग १ म, इं १, का १ त्र, यो ९, वे ०, क ०, ज्ञा ४, सं १ म, द ३, ले ६, भ १, स १ धा,
सं १, वा १, उ ७। संयोगकेवलना-गु १ संयो, जी २ प अ, प ६ ६, प्रा ४, २, सं ०, ग १ म, इं १,
का १ त्र, यो ६ म २ व २ ओ २, वे ०, क ०, ज्ञा १ के, सं १ प, द १ के, ले ६, भ १, स १ धा,
सं ०, आ १, उ २। एषामवर्णात्तालाप्रीति वक्तव्यः।

अनाहारिणां-गु ५ मि सा अ स अ, जी ८ सप्याजय्याप्ता एकोज्जोदिनः, प ६, ५, ४, प्रा ७ ७ ६ २
५ ४ ३ २ १, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १, वे १, क ४, ज्ञा ६ कु कु म श्रु अ के, सं २ अ २, द ४,

विदियुवसमसम्मत्तं सेडीदो द्विष्ण अविरदादोसु ।

सगसगलेस्सामरिदे देव अपज्जचगेव हवे ॥७३०॥

द्वितीयोपशमसम्बन्धत्वं श्रेणितोऽवतीर्णाविरतादियु । स्वस्वलेदयामृते देवापम्यासके एव भवेत् ॥

असंयतादिगळोऽं द्वितीयोपशमसम्बन्धत्वसंभवमे बुदुपशमधेणियिदमिच्छिदु संक्लेषवद- ५
विदमसंयमादियोऽं परिपतितरादरोऽं दु निश्चैसुदु । अा द्वितीयोपशमसम्बन्धदृष्टिगळप्य
असंयतादिगळ तंतम्म लेदयेगळोऽं कळिड मृतरादरादोडे देवापम्यासकासंपतसम्बन्धदृष्टिगळे नियम-
विदमप्यरेके दोडे बद्धदेवापुष्यंगल्लदे मरणमुपशमश्रेणियोऽं संभविसदु । इतरापुत्प्रयवद्वापुष्यंगे
देगसंयममुं सकलसंयममुं संभविसदप्युर्वरिदं ।

सिद्धाणं सिद्धगई केवलणाणं च दंसणं खुयियं ।

सम्मत्तमणाहारं उवजोणाणकक्रमपउत्ती ॥७३१॥

सिद्धानां सिद्धगतिः केवलज्ञानं च दर्शनं क्षापिकं, सम्बन्धत्वमनाहारः उपयोगयोरक्रम- १०
प्रवृत्तिः ॥

सिद्धपरमेष्ठिगळो सिद्धगतियुं केवलज्ञानमुं केवलदर्शनमुं क्षापिकसम्बन्धत्वमुं अनाहारमुं १५
ज्ञानदर्शनोपयोगद्वयकक्रमप्रवृत्तिपुमरियल्पदुं ।

मत्तं सिद्धपरमेष्ठिगळः—

गुणजीवठाणरद्विया सण्णापज्जत्तिपाणपरिहीणा ।

सेसणवमग्गणूणा सिद्धा सुद्धा सदा हांति ॥७३२॥

गुणजीवस्थानरहिताः संज्ञापम्यासिप्राणपरिहीनाः । शेषनवमार्गमोनाः सिद्धाः शुद्धा- २०
स्तवा भवन्ति ॥

द्वितीयोपशमसम्बन्धत्वं संभवति । केव ? उपशमधेणितः संक्लेषवदादयः असंयतादियु अवतीर्नेषु । २५
ते ष असंयतादयः स्वस्वलेदयया श्रियन्ते तदा देवापम्यासयता एव नियमेन भवति । कुतः ? बरुदेशामुष्वा-
दन्यस्य उपशमश्रेण्यां मरणाभावात् । शेषविवद्वागुष्वाणां च देवसकलसंयमयोरेवासंभवात् ॥७३०॥

सिद्धपरमेष्ठिनां सिद्धगतिः केवलज्ञानं केवलदर्शनं क्षापिकसम्बन्धत्वं अनाहारः ज्ञानदर्शनोपयोग- २५
योरक्रमप्रवृत्तिश्च भवति ॥७३१॥

संक्लेष परिणामोक्ति वस उपशमश्रेणसे नोचे उवरनेपर असंयत आदि गुणस्थानोर्मे २५
द्वितीयोपशम सम्बन्धत्व होता है । वे असंयत आदि जब अपनी-अपनी लेदयके अनुसार
मरण करते हैं तो नियमसे देवगतिमें अपर्याप्त असंयत ही होते हैं, क्योंकि जिससे देवापुका
पन्थ किया है उसके सिवा अन्यका उपशमश्रेणिमें मरण नहीं होता । जिन्होंने देवापुके
सिवाय अन्य तीन आयुमें-से किसी एकका भी पन्थ किया है उसके तो देवसंयम और
सकलसंयम ही नहीं होते ॥७३०॥

सिद्ध परमेष्ठीके सिद्धगति, केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षापिक सम्बन्धत्व, अनाहार और २५
ज्ञानोपयोग दर्शनोपयोगकी एक साथ प्रवृत्ति, इतनी प्ररूपणार्थ होती है ॥७३१॥

अञ्जञ्जसेणगुणगणसमूहसंधारि अजियसेणगुरु ।

ध्रुवणगुरु जस्त गुरु सो राजो गोम्मटो जयत ॥७३४ ॥

आर्ष्यार्ष्यसेनगुणगणसमूह संधार्यजितसेनगुरुध्रुवनगुरुर्ष्यस्य गुरुः स राजो य गोम्मटो जयतु ॥

इंतु भगवदहंत्परमेश्वर चारुचरणारविद्वंद्वबंधनानंदितपुष्पपुंजायमानधोमद्रायराजगुरु-
भूमंडलाचार्य्यमहापादवादीश्वररायवादिपितामह सकलविद्वज्जनचक्रवर्तिभूमवभमसूरिसिद्धांत-
चक्रवर्ति श्रीपादपंकरजराजोरंजित ललाटपट्टं श्रीमत्केशवर्णधिरचितमप्य गोम्मटसारकर्णार्णवकृत्ति-
जीवतत्त्वप्रदीपिकेयोक्त आळापायिकारं निरूपितमादुतु ॥

गणनेगळिदिहै गुणगणमणिभूषण धम्मंभूषणश्रीमुनि स-। दगणियुपरोपदि नानोणहै गुणि
गोम्मटसारवृत्तियं केशरणं ।

१०

आर्ष्यार्ष्यसेनगुणगणसमूहसंधार्यजितसेनगुरुः भुवनगुरुर्ष्यस्य गुरुः स राजा गोम्मटो जयतु ॥७३४॥

इत्याचार्यधीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तिविरचिताया गोम्मटसारपरनामपञ्चसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिका-
स्यायां जीवकाण्डे विद्यतिप्ररूपणायु ओषादेशयोर्विद्यतिप्ररूपणालाप नाम
द्वाविद्यतिमयोर्दधिकारः समाप्तः ॥२२॥

आर्य आर्यसेनके गुण और गणसमूहको धारण करनेवाले अजितसेन—जो तीन
जगतके गुरु हैं—वे जिसके गुरु हैं वह गोम्मटराज चामुण्डराय जयवन्त हों ॥७३४॥

१५

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अहंन्व देव
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य महावादी
श्री भगवन्मदी सिद्धान्तचक्रवर्तीके चरणकमलोंकी धूलिसे शोभित छलाटवाले श्री केशववर्णी-
के द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी अनुसारीणी संस्कृतटीका
तथा बसकी अनुसारीणी पं. टोडरमल रचित सम्पूर्णज्ञानचन्द्रिका नामक
भाषाटीकाकी अनुसारीणी हिन्दी भाषा टीकामें जीवकाण्डके अन्तर्गत
यौल प्ररूपणाभोमै-से आळाप प्ररूपणा नामक बाईसवाँ
अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥२२॥

२०

गाथानुक्रमणो

१०७९

| | गाथा | पृष्ठ | | गाथा | पृष्ठ |
|------------------|------|-------|------------------------|------|-------|
| एदम्हि विभञ्जते | ३९८ | ६३८ | अंतरभावप्पवन्न | ४९२ | ६९७ |
| एदे भावा नियमा | १२ | ४३ | अंतरमवक्ककस्सं | ५५३ | ७८० |
| एयक्खरादु उवरि | ३३५ | ५७० | अंतोमुहुत्तकालं | ५० | ११२ |
| एयगुणं तु जहण्णं | ६१० | ८५६ | अंतोमुहुत्तमेत्ते | ५३ | ११३ |
| एयदवियम्मि जे अ | ५८२ | ८१३ | अंतोमुहुत्तमेत्ता | २६२ | ४४९ |
| एयपदादो उवरि | ३३७ | ५७१ | अंतोमुहुत्तमेत्तो | ४९ | ८१ |
| एया य कोटिकोटी | ११७ | २०५ | अंतोमुहुत्तमेत्तं | २५३ | ३८७ |
| एयंतवुद्धदरसी | १६ | ४७ | | | |
| एवं असंखलोगा | ३३२ | ५६५ | | | |
| एवं उवरि विणेओ | १११ | १९२ | कवकफलजुदजलं वा | ६१ | १२६ |
| एवं गुणसंजुत्ता | ६११ | ८५६ | कण्ववहारकप्पा | ३६८ | ६१२ |
| एवं तु समुग्घादे | ५४७ | ७६२ | कप्पमुराणं सग सग | ४३३ | ६६२ |
| | | | कमवण्णुत्तरवड्डिय | ३४९ | ५७८ |
| | | | कम्मइयकायजोगी | ६७१ | ८९७ |
| | | | कम्मइयवग्गणं धुव | ४१० | ६४६ |
| | | | कम्मैव कम्मभावं | २४१ | ३७५ |
| | | | कम्मोरालियमिस्स य | २६४ | ४५३ |
| | | | काज पीलं किण्हं | ५०२ | ७०३ |
| | | | काज काज काज | ५२९ | ७२३ |
| | | | कालविसेसेणवहिद | ४०८ | ६५५ |
| | | | काले पवण्ह उड्ढी | ४१२ | ६४७ |
| | | | कालो छत्तेस्साणं | ५५१ | ७७८ |
| | | | कालोत्ति य ववएणो | ५८० | ८१२ |
| | | | कालं अस्सिय दब्बं | ५७१ | ८०७ |
| | | | किण्हत्तवक्काणं पुणे | ५२७ | ७२२ |
| | | | किण्हत्तियाणं मण्डिम | ५२८ | ७२२ |
| | | | किण्हवरसेण मुदा | ५२४ | ७२० |
| | | | किण्ह्हा पीला काज | ४९३ | ६९८ |
| | | | किण्ह्हादिरासिमावलि | ५३७ | ७२८ |
| | | | किण्ह्हादिलेस्सरहिप्पा | ५५६ | ७८४ |
| | | | किण्हं सिलासमाणे | २९२ | ४८३ |
| | | | किमिरायचक्कतपुमल | २८७ | ४७९ |
| | | | कुम्भुण्णयजोगीए | ८२ | १५५ |
| | | | केवलणाणाणत्तिम | ५३९ | ७३१ |
| | | | केवलणाणदिवायर | ६३ | १२८ |
| | | | कोटिसयसहस्सादं | ११४ | २०४ |
| | | | कोट्टादिकसायाणं | २९० | ४८१ |

ओ

अं

क

गायानुक्रमणी

१०८१

| | गाथा | पृष्ठ | | गाथा | पृष्ठ |
|---------------------|------|-------|-------------------------|------|-------|
| बोहि व जानु व जीवा | १४१ | २७४ | व य सच्चमोसजुतो | २१९ | ३५७ |
| बोबदुगं उत्तुं | ६२२ | ८६२ | णरतिरिय लोहमाया | २१८ | ५०१ |
| बोवा अर्पतसंखा | ५८८ | ८१७ | णरलोएत्ति य वयणं | ४५६ | ६७३ |
| बोवा बोद्ध भेया | ४७८ | ६८८ | णरतिरियाणं ओषो | ५३० | ७२३ |
| बोवाजीवं दम्बं | ५६३ | ८०३ | ण रमति अतो गिच्चं | १४७ | २७८ |
| बोवार्णं व य रासी | ३२४ | ५३० | णरलद्धि अपग्गत्ते | ७१६ | ९४० |
| बोवादोर्णंतगुणा | २४९ | ३८४ | णवमी अणवसरगदा | २२६ | ३६३ |
| बोवादो णंतगुणो | ५९९ | ८३९ | णवि इंदियकरणजुदा | १७४ | ३०३ |
| बोविदरे कम्मवये | ६४३ | ८८२ | णवरिय दु सीराणं | २५५ | ४०८ |
| बेट्टावरबहुमज्झिम | ६३२ | ८६८ | णव य पदत्पा जीवा | ६२१ | ८६१ |
| बेहि अपेया जीवा | ७० | १४२ | णवरि विसेसं जाणे | ३१९ | ५२६ |
| बेहि दु लक्खिज्जंते | ८ | ३९ | णवरि य सुक्का लेस्सा | ६९३ | ९१४ |
| बेसि ण संति जोगा | २७३ | ३०८ | णवरि समुग्घादम्मि य | ५५० | ७७७ |
| बोइसिमयाणबोणिणि | २७७ | ४६७ | णाणुवजोगजुदायं | ६७६ | ९०१ |
| बोइसियादो बहिया | ५४० | ७३१ | णाणं णंबविहं पि य | ६७३ | ९०० |
| बोइसियंठाणोही | ४३७ | ६६४ | णारयतिरिसपरसुर | २८८ | ४७९ |
| बोमपउत्ती लेस्सा | ४९० | ६९७ | णिकित्तु विदियमेत्तं | ३८ | ६७ |
| बोणे षडरवखाणं | ४८७ | ६९३ | णिकसेवे एयत्थे | ७३४ | १०७५ |
| बोणं पडि जोमिअिणे | ७११ | ९३७ | णिक्विदरघादु सत्तय | ८९ | १५९ |
| बो मेव सच्चमोसी | २२१ | ३५८ | णिहा पयले णट्ठे | ५५ | ११८ |
| बो तसवहाउ विरदो | ३१ | ६० | णिहावंचणमहुलो | ५११ | ७०८ |
| बत्तस्स षहं ठत्तस्स | ५६७ | ८०५ | णिहंसवणपरिणा | ४९१ | ६९७ |
| बंबूदीवं भरहो | १९५ | ३२६ | णिज्जत्तं लुक्खत्तं | ६०९ | ८५४ |
| बं सामण्यं गहणं | ४८२ | ६९१ | णिज्जणिदा ण वज्जंति | ६१२ | ८५६ |
| | | | णिज्जदरोलीमग्गे | ६१३ | ८५७ |
| ठ | | | णिज्जस्स णिडेण दुराहिणण | ६१५ | ८५८ |
| ठाणेहि वि जोणीहि | ७४ | १४७ | णिद्धिदरगुणा बहिया | ६१९ | ८६१ |
| | | | णिद्धिदरवरगुणाणु | ६१८ | ८६० |
| ण | | | णिद्धिदरे समविसमा | ६१६ | ८५९ |
| णट्टकवाये लेस्सा | ५३३ | ७२५ | णिम्मूलखंमसाहु व | ५०८ | ७०७ |
| णट्टममाए पडमा | १३९ | २७१ | णियखेत्ते केवलियुय | २३६ | ३७३ |
| णट्टासेसपमादो | ४६ | ७८ | णिरया किण्हा कप्पा | ४९६ | ६९९ |
| ण य कुणइ पक्खवायं | ५१७ | ७१० | णित्थेस खोणमोहो | ६२ | १२७ |
| ण य जे भव्यामग्गा | ५५९ | ७८७ | णीलुक्कस्संसमुदा | ५२५ | ७२० |
| ण य पत्तिवइ परं सो | ५१३ | ७०९ | णेरइया खलु संदा | ९३ | १६१ |
| ण य परिणमदि सयं सो | ५७० | ८०७ | णेवित्थी मेव पुंमं | २७५ | ४६६ |
| ण य मिच्छत्तं पत्तो | ६५४ | ८८७ | णो इंदिय बाउरण | ६६० | ८९२ |

गायानुक्रमणो

१०८३

| गाथा | पृष्ठ | गाथा | पृष्ठ |
|----------------------|-------|------|----------------------|
| दसविहसन्धे वपणे . | २२० | ३५७ | म |
| दस सण्णीषं पाणा | १३३ | २६७ | |
| द्विगुडमिव वा मिस्तं | २२ | ५२ | नीलुक्कस्सं समुदा |
| दिग्गच्छेदेणवहिद . | २१५ | ३५१ | प |
| दिग्गच्छेदेणवहिद | ४२१ | ६५४ | |
| दिवसो पवसो मासो | ५७६ | ८१० | पञ्चवस्त्राणुदयादो |
| दोब्बंति जदो पिच्चं | १५१ | २८१ | पञ्चवस्त्राणे विज्जा |
| दुपत्तिगभवा हु अवरं | ४५७ | ६७४ | पञ्जत्तमणुस्साणं |
| दुगवारपाट्टुडादो | ३४२ | ५७४ | पञ्जत्तस्सरीरस्स य |
| दुविहं पि थपज्जत्तं | ७१० | ९३७ | पञ्जत्तस्स य उदये |
| देवाभं अवहारा | ६३५ | ८७० | पञ्जत्ती पट्टवणं |
| देवेहि सादिरयो . | ६६३ | ८९३ | पञ्जत्ती पाणावि य |
| देवेहि सादिरया | २६१ | ४४८ | पञ्जापवखरपदसं |
| देवेहि सादिरया | २७९ | ४६९ | पट्टिवादी देसोही |
| देसविरदे पमत्ते | १३ | ४४ | पट्टिवादी पुण पदमा |
| देसोद्विस्स य अवरं | ३७४ | ६२१ | पट्टमवखो अंतगदो |
| देसावहिवरदब्बं | ४१३ | ६४८ | पट्टमुवत्तमत्तहिदाए |
| देसोहि अवरदब्बं | ३९४ | ६३६ | पट्टमं पमदपमाणं |
| देसोहि मज्जाभेदे . | ३९५ | ६३७ | पणजुगले तससहिये |
| दोग्गण्णिदाणुस्स य | ६१४ | ८५७ | पण्णत्तदिसया वत्तु |
| दोण्हं पंच य छक्के | ७०५ | ९३३ | पण्णट्टाल पण्णीस |
| दोत्तिग पमवदुत्तर | ६१७ | ८६० | पण्णवण्णिज्जा भावा |
| दंसणमोहुक्कवणा | ६४८ | ८८४ | पण्णिवरस भोपणेण |
| दंसणमोहुदयादो | ६४९ | ८८५ | पण्णुवीस जोइणाइं |
| दंसणमोहुवसमसो | ६५० | ८८५ | पत्तेयवुद्धवित्थ |
| दंसणवयसाभाइय | ४७७ | ६८७ | पमादाविचवण्हजुदो |
| | | | पमस्स य सट्टापस |
| | | | पम्मुक्कस्संसमुदा |
| | | | परमणसिद्धियमट्टुं |
| | | | परमाणु आदियाई |
| | | | परमाणुवयणम्मि ण |
| | | | परमाणुहि जणंतहि |
| | | | परमावहिस्स भेदा |
| | | | परमावहिस्स भेदा |
| | | | परमावहिवरखेत्ते |
| | | | परमोहिदन्वभेदा |
| | | | परत्तियं उव्होपं |
| धनुवीसद्वसयकदो | १६८ | २९८ | |
| धम्मगुणमग्गाण्हय | १४० | २७३ | |
| धम्माधम्मादीणं | ५६९ | ८०७ | |
| धुदकौमुंभयवत्थं | ५८ | १२१ | |
| धुवद्दधुवरुवेण य | ४०२ | ६३९ | |
| धुवहारकम्मवग्गण | ३८५ | ६२८ | |
| धुवहारस्स पमार्यं | ३८८ | ६३० | |
| धुत्तिग छव्वट्टापे | २९४ | ४८८ | |

गायानुक्रमणौ

| | गाथा | पृष्ठ | | गाथा | पृष्ठ |
|--------------------|------|-------|----------------------|------|-------|
| मिष्णसमयद्विर्बेहि | ५२ | ११२ | मिच्छंतं वेदंतो | १७ | ४८ |
| भू आउ तेउ बाऊ | ७३ | १४६ | मिस्मुदए संमिस्सं | ३०२ | ५०८ |
| भू आउ तेउ बाऊ | ७२१ | ९४३ | मिस्ते पुण्णालाओ | ७१८ | ९४२ |
| भोगापुण्णसम्मो | ५३१ | ७२४ | भीमंसदि जो पुब्बं | ६६२ | ८९३ |
| | | | मूलगपोरबीजा | १८६ | ३१७ |
| | | | मूले कंदे छल्ली | १८८ | ३१९ |
| | | | मूलसरीरमछंडिय | ६६८ | ८९६ |
| | | | मंदो बुद्धिविहीणो | ५१० | ७०८ |
| मग्गणउवओयावि य | ७०३ | ९२० | | | |
| मग्गिम थंसेण मुदा | ५२२ | ७१९ | | | |
| मग्गिम चउमयववणे | ६७९ | ९०६ | | | |
| मग्गिमदव्वं सेतं | ४५९ | ६७५ | याजकनामेनानन | ३६४ | ६०३ |
| मग्गिम पदक्खरवहिद | ३५५ | ५९१ | | | |
| मय दव्ववग्गणाण | ४५२ | ६७२ | | | |
| मय दव्ववग्गणाणवि | ३८६ | ६२९ | रुक्कयवरे अवक | १०७ | १८७ |
| मणपज्जवं च णाणं | ४४५ | ६६८ | रुवुत्तरेण ततो | ११० | १९१ |
| मणपज्जवं च दुविहं | ४३९ | ६६५ | रुसइ गिदइ अण्णे | ५१२ | ७०८ |
| मणपज्जयपरिहाराओ | ७३९ | १०७२ | | | |
| मणवयपाणं मूल | २२७ | ३६४ | | | |
| मणवयपाण पठत्ती | २१७ | ३५५ | सद्धि अपुण्णं मिच्छे | १२७ | २६० |
| मणसहियाणं वयणं | २२८ | ३६६ | लिपइ अप्पो कीरइ | ४८९ | ६९६ |
| मण्णंति जदो पिच्चं | १४९ | २८० | लेस्साणुक्कसादो | ५०५ | ७०४ |
| मणुसिणि पमत्तविरदे | ७१५ | ९३९ | लेस्साणं खलु अंसा | ५१८ | ७११ |
| मदि आवरण खओव | १६५ | २९४ | लोगागासपदेसा | ५८७ | ८१७ |
| मदिमुदओहिमणेहिय | ६७४ | ९०१ | लोगागासपदेसा | ५९१ | ८१८ |
| मरणं पत्थेइ रणे | ५१४ | ७०९ | लोगागासपदेसे | ५८९ | ८१७ |
| मरदि असंखेज्जदिमं | ५४४ | ७४६ | लोगाणमसंखेज्जा | ४९९ | ७०० |
| मसुरंभुविडु सुई | २०१ | ३३३ | लोगाणमसंखमिदा | ३१६ | ५२४ |
| मायालोहे रदिपु | ६ | ३७ | लोयस्स असंखेज्जदि | ५८४ | ८१५ |
| मिच्छाइदट्ठी जीवो | १८ | ४८ | | | |
| मिच्छाइदट्ठी जीवो | ६५६ | ८८७ | | | |
| मिच्छाइदट्ठी पाया | ६२३ | ८६२ | वग्गणरासिपमाणं | ३९२ | ६३५ |
| मिच्छा सावयसासण | ६२४ | ८६३ | वण्णोदयसंपादिद | | |
| मिच्छे खलु ओददओ | ११ | ४२ | वण्णोदयेण जणिदो | | |
| मिच्छे चोददस जीवा | ६९९ | ९१७ | वत्तणहेत्त कालो | | |
| मिच्छे सासणसम्मो | ६८१ | ९०७ | वत्तावत्तपमादे | | |
| मिच्छोदयेण मिच्छ | १५ | ४६ | | | |
| मिच्छो सासणमिस्सो | ९ | ४० | | | |
| मिच्छो सासणमिस्सो | ६९५ | ९१४ | | | |

गायानुक्रमणो

१०८७

| गाथा | पृष्ठ | गाथा | पृष्ठ |
|----------------------|-------|------|-------|
| सामन्व जीव तदवा | ७५ | २८५ | ४७७ |
| सामन्वा मेरदवा | १५३ | ५१९ | ७१८ |
| सामन्वा पविदो | १५० | ३३६ | ५७० |
| सामन्वोप विपंती | ७८ | २६६ | ४५५ |
| सामन्वोप य एवं | ८८ | २३ | ५२ |
| सामन्वो पत्रसम | ७०९ | ६२७ | ८६४ |
| साहिनसहस्रमेकं | ९५ | ६३६ | ८७२ |
| साहासनमाहारो | १९२ | ६३७ | ८७३ |
| साहसनवाःदरेनु | २११ | ४३५ | ६६३ |
| साहारपोऽपेय | १९१ | ५०६ | ७०५ |
| विनया द्विरिदुबदेवा | ६६१ | ५०४ | ७०४ |
| विद्यामतिममायो | ५९७ | ४७० | ६८३ |
| विद्यापं विद्यापदं | ७३१ | ३५ | ६३ |
| विदं मुदं पममिय | १ | ४०३ | ६४१ |
| विलमुडविभेदपुलो | २८४ | ८१ | १५४ |
| विन्ने केत वेणुमूल० | २९१ | ६५८ | ८८८ |
| वीदी सट्टो धालं | १२४ | ३ | ३४ |
| वीलेति संनतां | ६५ | ४०७ | ६४३ |
| मुक्कस्य समुं रादे | ५४५ | १८६ | ८१६ |
| मुष्णं दुय र्णि टाणे | २९५ | ५९८ | ८३९ |
| मुसादी सं समं | २८ | ४२ | ७३ |
| मुदरेवलं च भाणं | ३६९ | ४५ | ७८ |
| मुदुवन्नमुवदुवसं | २८२ | ३२ | ६० |
| मुदमनिगोद अपग्ज | ३२० | ४६० | ६७६ |
| मुदमनिगोद अपग्ज | ३२१ | १५५ | २८४ |
| मुदमनिगोद धरग्ज | ३२२ | ५९५ | ८२२ |
| मुदमनिगोद धररग्ज० | ९४ | | |
| मुदमनिगोद अपग्ज | १७३ | | |
| मुदमनिगोद अप० | ३७८ | | |
| मुदमेदरगुणगारो | १०१ | | |
| मुदमनिवातेऽभाभु | ९७ | | |
| मुदमेगु संलभागं | २०८ | | |
| मुदुमो मुदुमकगाए | ६९० | | |
| सेदी मूर्द्धं अंगुण | १५७ | | |
| सेदी मूर्द्धं पस्ला | ६०० | | |
| सेलग रिण्णु मुष्णं | २९३ | | |
| | | ह | |
| | | ४४३ | ६६७ |
| | | ११२ | १९३ |
| | | १५४ | २८३ |
| | | १२८ | २६२ |
| | | ६०१ | ८४२ |
| | | ३८९ | ६३० |
| | | ५७ | १२० |
| | | ६३० | ८६७ |

द्वि जीवकाण्डप्रकरणस्याकारादिक्रमणिकासूची ।

| | | पद्यानुक्रमणो | १०८९ |
|-------------------------------------|----------|--|------|
| ख | | | |
| खंडं सयलसमत्वं [ति. प. ११५५] | २३१ | णिष्णद्धठरायदोसा [ति. प. ११८१] | २४ |
| | | णिष्मूठणाउर्द्धवर [ति. प. ११५८] | २१ |
| ग | | त | |
| गणरायमंतितलवर | १८ | तक्विय पंचसयाई [ति. प. १११०८] | २३३ |
| गालयदि विनासयदि [ति. प. ११९] | ११ | ततो रुवहियकमे | ५४५ |
| गुणपरिणदासणं [ति. प. ११२१] | १४ | तदप्यलञ्चमाहारम्यं | ५६ |
| गुणयारदञ्छेदा [त्रि. सा. १०५] | २४२, २४९ | तज्ज्वने पदरंगुल [ति. प. १११३२] | २४२ |
| घ | | तसरेणु रयरेणु [ति. प. १११०५] | २३२ |
| पणलोगगुणसंलांगा | ६९२ | तिरियपदे रुठणे | ५४५. |
| | | तिविकल्पमंगुलं तं [ति. प. १११०७] | २३३ |
| च | | व | |
| चउविह उवसमोहि [ति. प. ११५९] | २१ | दंडपमाणंगुलए [ति. प. १११२१] | २३४ |
| चामर बुंदुहिणीठ [ति. प. ११११३] | २३३ | दंसणमोहे णट्ठे [ति. प. ११७३] | २२ |
| छ | | दीवोवहि सेलाणं [ति. प. १११११] | २३३ |
| छक्खंड भरहणाहो [ति. प. १४८] | १९ | दुगुण परित्तासंखेण [त्रि. सा. १०९] | २४६ |
| छट्ठकदीए उवार् | २८९ | दुविहो हवेंद हेडु | १६ |
| छद्दब्बणवपदत्त्वे [ति. प. ११३४] | २८९ | दुसहस्समउडवदाण [ति. प. ११४६] | १८ |
| छहि अंगुले हि पादो [ति. प. ११३४] | २३४ | देवमणुस्सादीहि [ति. प. ११३७] | १७ |
| ज | | दोअट्ठ गुण्ण विय | २३५ |
| जणिदं इदं पडिदं [ति. प. ११४०] | १७ | देहावट्ठिठद केवल | १७ |
| जय्युद्वेसे जायदि [त्रि. सा. ८०] | २२२ | दोणिण वियप्पा वृत्ति ह्व [ति. प. १११०] | १२ |
| जदं चरे जदं चिट्ठे | ५९२ | दो भेदं च परोक्खं [ति. प. ११३९] | १७ |
| जस्सि जस्सि काले [ति. प. १११०९] | २३३ | न | |
| जादे अणंतणामे [ति. प. ११७४] | २३ | नरकजघन्यामुप्या | ७९६ |
| जेत्ति त्रि खेत्तमेत्तं | ८०९ | नानारमीयविद्येयेयु | ५५ |
| जो ण पमाणणएहि [ति. प. ११८२] | २५ | निमित्तमान्तरं तत्र | ८१३ |
| जो जो रासी दिस्सदि [त्रि. सा. ८८] | २३० | प | |
| जोयण पमाण संठिद [ति. प. ११६०] | २१ | पंचंबुर सहियाई [वसु. धा. ५७] | ६८७ |
| ठ | | पंच सपराजसानी [ति. प. ११४५] | १८ |
| ठावणमंगलभेदं [ति. प. ११२०] | १३ | पंचविधे संसारे | ८०० |
| ण | | पढमे मंगलकरणे [ति. प. ११२९] | १५ |
| णामएयपदेसरपो | ८०८ | पत्तेयमंगमेरं | ५८५ |
| णानं होदि पमाणं [ति. प. ११८३] | २५ | पदमेत्ते गुणयारे [त्रि. सा. २३१] | ७६७ |
| णायावरणणुडुडिय [ति. प. ११७१] | २३ | परमाणूहि यणंदागंतेहि [ति. प. १११०२] | २३२ |
| णामाणि ठावणाओ [ति. प. १११८] | १३ | परिणिकवमणं केवल | १४ |
| णासदि विरुधं भीदो [ति. प. ११२७] | १५ | परिहारद्विसमेउः | ६८६ |

पद्यानुक्रमणी

१०९१

सत्तासोदित्तुस्तद [त्रि. सा. १३९]
 सत्पादिमन्त्रा अबधामणम् [त्रि. प. १३१]
 सदाशिवः सदाशुभा
 समनं पदि एववेवर्क [त्रि. प. ११२७]
 समष्टुवाषवम् [त्रि. प. १११७]
 समेऽप्यनन्दरात्रिभवे
 सरागचीतरागारम [सो. उ. २२७]
 सर्वं जगद्गोत्रे
 सर्वेऽपि पुद्गलाः शलु
 सर्वथा स्वहितमाचरणाय
 सर्वद्रव्यैस्त्रिस्वित्पनु
 सममदमावलि अबरं
 साम्पू रराज कीर्तोरणाको

| | | |
|-----|---------------------------------------|-----|
| ७५७ | सुदगाणभावणाए [त्रि. प. ११५०] | १९ |
| १६ | सुद्धखरकुजलतेवा | १५३ |
| १४० | सुरसेयरमणहरणे [त्रि. प. ११५५] | २२ |
| २३६ | सुरसेयरमणुवाणं [त्रि. प. ११५२] | २० |
| २३४ | सुहृमं च गामक्रमं | १३८ |
| ५६ | सुहृमदिठदिसंजुतं | ७९१ |
| ८०१ | षेद जलरेणु [त्रि. प. ११११] | १२ |
| ७९४ | षेदरजादिमन्त्रेण [त्रि. प. ११५६] | २१ |
| ७९३ | शोक्तं वित्पयराणं [त्रि. प. ११४९] | १९ |
| १० | स्यान एव स्थितं | ५६ |
| ७९८ | स्याद्वादकेवलज्ञाने [आसमी. १०५] | ६१७ |
| ८१० | स्वकारितेऽर्हृषैत्यादौ | ५५ |
| २८७ | स्वहेतुजनितोऽप्यर्थ [लघीय० ५९ दलो.] | ९३३ |

□

विशिष्ट शब्द-सूची

१०९३

| | | | | | |
|-------------------|--------------------|----------------------|------------------|------------------------|---------------|
| इन्द्रिय | १२२ | कपोत छेदया | ७०९ | ग | |
| इन्द्रिय पर्वसि | २५२, २६५ | कर्मप्रवाद | ६१० | गतिमार्गणा | २७८ |
| इन्द्रिय प्राण | २६६ | कल्पव्यवहार | ६१५ | गर्भ (जन्म) | १५५, १५८, १६० |
| ई | | कल्प्याकल्प | ६१५ | गुण | ३३, ३४ |
| ईश्वर (दर्शन) | १४० | कल्याणवाद | ६११ | गुणकारशालावा | २२३ |
| ईहा | ५१५ | कर्मपुद्गलपरिवर्तन | ७९० | गुणप्रत्यय | ६१८ |
| उ | | कपाय | ४७३ | गुणधेष्णिनिर्जरा | १०४, ११८ |
| उच्छ्वास | ८०९ | काय | ९२२ | गुण संक्रमण | १०४, ११८ |
| उत्तराख्ययन | ६१५ | कायबल प्राण | २६६ | गुणस्थान | ३९, ४२ |
| उभयानुगामी | ६१९ | कायमार्गणा | ३११ | गुणहानि | १२२ |
| उभयानुगामी | ६१९ | धारणविपर्ययि | ४९ | गुणहानि आयाम | १२२ |
| उपयोग | ९०० | कार्मणकाययोग | ३७५, ९२४ | घ | |
| ऋ | | कालद्रव्य | ८०६, ८०७ | घनांगुल | २४२, २४४ |
| ऋजुमति | ६६५, ६५८, ६६९, ६७१ | काल परिवर्तन | ७९४ | च | |
| ए | | काल सामायिक | ६१३ | चक्षुदर्शन | ६९२ |
| एकज्ञान | ५१९ | कालाणु | ८१७ | चतुरंक | ५३१, ५५३, ५५५ |
| एकविधज्ञान | ५१९ | कुसुमि | ६०० | चतुर्विंशतिस्तव | ६१४ |
| एकान्तमिथ्यात्व | ४६ | कृत्तिकर्म | ६१४ | चन्द्रप्रज्ञप्ति | ६०१ |
| एलापुत्र | ६०० | कृष्णलेख्या | ७०७ | चल (दोष) | ५५ |
| ऐ | | केवलज्ञान | ६७६ | चारित्रमोह | ४४, ४५ |
| ऐन्द्र दत्त | ६०० | केवल दर्शन | ६९३ | चूर्णि | ५३८ |
| ओ | | केवल समुद्घात | ७५५ | चूर्णितचूर्णि | ५३८ |
| ओष | ३४ | कौत्कल | ५९९ | चुलिका | ६०२ |
| ओ | | कौशिक | ६०० | छ | |
| ओदयिक | ३९, ४३ | क्रियावाद | ६०० | छेदोपस्थापना | ६८४ |
| ओदारिक वाययोग | ३६८, ९२४ | क्रियाविशालपूर्व | ६११ | ज | |
| ओदारिकनिय | ३६९ | धार्मिक | ३९, ५५ | जयप्रतर | २४२ |
| ओपमन्यव | ६०० | धार्मिक सम्यक्त्व | ४३, ५७, ८८४, ९३१ | जगत्धेणी | २४२ |
| ओपशामिक | ३९, ४५ | धार्मिकसम्यग्दृष्टी | ८० | जघन्य अनन्तानन्त | २१४ |
| ओपशामिक सम्यक्त्व | ४३, ५७, ८८५ | धायोपशामिक | ३९, ४३ | जघन्य असंख्यातासंख्यात | २१० |
| क | | धायोपशामिक सम्यक्त्व | ५४ | जघन्य परीतासंख्यात | २०८ |
| कठ | ६०० | धायोपशामिक संयम | ४४ | जघन्य परीतानन्त | २११ |
| कण्ठेविद्धि | ५९९ | शोषकपाय | ४१, १२७ | जघन्य मुक्तानन्त | २१४ |
| कपाट समुद्घात | ७५५ | क्षिप्र (ज्ञान) | ५१९ | जघन्य मुक्तसंख्यात | २१० |
| कपिल | ६०० | क्षेत्र सामायिक | ६१३ | जतुकर्ण | ६०० |
| | | क्षेत्रानुगामी | ६१९ | जनपदवत्य | ३५९ |
| | | क्षेत्रानुगामी | ६१९ | | |

विशिष्ट शब्द-सूची

१०९३

| | | | | | |
|--------------------|--------------------|--------------------|------------------|------------------------|---------------|
| इन्द्रिय | १२२ | कपोत सेरया | ७०९ | ग | |
| इन्द्रिय पर्याप्ति | २५२, २६५ | कर्मद्रव्य | ६१० | गतिमार्गणा | २७८ |
| इन्द्रिय प्राय | २६६ | कलाभ्यवहार | ६१५ | गर्भ (जन्म) | १५५, १५८, १६० |
| ई | | कल्प्याकल्प | ६१५ | गुण | ३३, ३४ |
| ईश्वर (दत्तं) | १४० | कल्याणपार | ६११ | गुणकारणलाभा | २२३ |
| ईश | ५१५ | कर्मपुद्गलपरिवर्तन | ७९० | गुणप्रत्यय | ६१८ |
| उ | | कपाय | ४७३ | गुणश्रेणिनिर्जरा | १०४, ११८ |
| उन्व्यात | ८०९ | काय | ९२२ | गुण संक्रमण | १०४, ११८ |
| उत्तरान्मन्त्र | ६१५ | कायबल प्राय | २६६ | गुणस्थान | ३९, ४२ |
| उत्तराननुपासो | ६१९ | कायमार्गणा | ३११ | गुणहानि | १२२ |
| उत्तरानुपासो | ६१९ | कारणविपर्याय | ४९ | गुणहानि आयाम | १२२ |
| उत्तमोप | ९०० | कार्मणकाययोग | ३७५, ९२४ | घ | |
| ऋ | | कालद्रव्य | ८०६, ८०७ | घनांगुल | २४२, २४४ |
| ऋतुमति | ६६५, ६५८, ६६९, ६७१ | काल परिवर्तन | ७९४ | घ | |
| ए | | काल सामायिक | ६१३ | घ | |
| एकमान | ५१९ | कालागु | ८१७ | घटमुद्वानं | ६९२ |
| एकविधमान | ५१९ | मुगुमि | ६०० | घटुरक | ५३१, ५५३, ५५५ |
| एकान्तमिभ्यात् | ४६ | द्वितिकर्म | ६१४ | घटुविद्यतिस्तव | ६१४ |
| एतानुव | ९०० | दृष्णसेरया | ७०७ | चन्द्रप्रज्ञप्ति | ६०१ |
| ऐ | | केवलज्ञान | ६७६ | चल (दोष) | ५५ |
| ऐन्द्र दत्त | ६०० | केवल दत्तं | ६९३ | चारित्रमोह | ४४, ४५ |
| ओ | | केवल उमुद्वपात | ७५५ | पुणि | ५३८ |
| ओष | ३४ | कीरकल | ५९९ | पुणिपुणि | ५३८ |
| ओ | | कौतिक | ६०० | पुलिका | ६०२ |
| ओशविक | ३९, ४३ | क्रियावाद | ६०० | छ | |
| ओशरिक काययोग | ३६८, ९२४ | क्रियाविशालपूर्व | ६११ | छेदोपस्थापना | ६८४ |
| ओशरिकमित्र | ३६९ | दायिक | ३९, ५५ | ज | |
| ओषमन्यव | ६०० | दायिक सम्भवत् | ४३, ५७, ८८४, ९३१ | जगत्प्रतर | २४२ |
| ओशविक | ३९, ४५ | दायिकराम्य गृष्टी | ८० | जगत्श्रेणी | २४२ |
| ओषविक सम्भवत् | ४३, ५७, ८८५ | दायोपवामिक | ३९, ४३ | जघन्य अनन्तानन्त | २१४ |
| फ | | दायोपवामिक सम्भवत् | ५४ | जघन्य असंख्यातासंख्यात | २१० |
| फट | ६०० | दायोपवामिक संभव | ४४ | जघन्य परीतासंख्यात | २०८ |
| फष्टेविद्वि | ५९९ | शीणकपाय | ४१, १२७ | जघन्य परीतानन्त | २११ |
| फ्याट उमुद्वपात | ७५५ | क्षिप्र (ज्ञान) | ५१९ | जघन्य युक्तानन्त | २१४ |
| फलि | ६०० | क्षेत्र सामायिक | ६१३ | जघन्य युक्तसंख्यात | २१० |
| | | क्षेत्राननुपासो | ६१९ | जतुकर्ण | ६०० |
| | | क्षेत्रानुपासो | ६१९ | जनपदसत्य | ३५९ |

विशिष्ट शब्द-सूची

१०९३

| | | | | | |
|--------------------|--------------------|-----------------------|------------------|-----------------------|---------------|
| इन्द्रिय | १२२ | कपोल लेख्या | ७०९ | ग | |
| इन्द्रिय पर्वोत्ति | २५२, २६५ | कर्मप्रवाद | ६१० | गतिमार्गणा | २७८ |
| इन्द्रिय प्राय | २६६ | कल्पभ्यबहार | ६१५ | गर्भ (जन्म) | १५५, १५८, १६० |
| ई | | कल्प्याकृत्य | ६१५ | गुण | ३३, ३४ |
| ईत्वर (दरान) | १४० | कल्याणवाद | ६११ | गुणकारणालावा | २२३ |
| ईश | ५१५ | कर्मपुद्गलपरिवर्तन | ७९० | गुणप्रत्यय | ६१८ |
| उ | | कथाम | ४७३ | गुणधेगिनिर्जरा | १०४, ११८ |
| उच्छ्वास | ८०९ | काय | ९२२ | गुण संक्रमण | १०४, ११८ |
| उत्तरास्यपन | ६१५ | कायबल प्राय | २६६ | गुणस्थान | ३९, ४२ |
| उभयाननुगामी | ६१९ | कायमार्गणा | ३११ | गुणहानि | १२२ |
| उभयाननुगामी | ६१९ | शारदाविपर्याप्त | ४९ | गुणहानि आयाम | १२२ |
| उन्मोग | ९०० | कार्मणकाययोग | ३७५, ९२४ | घ | |
| ऋ | | कालद्रव्य | ८०६, ८०७ | घनागुल | २४२, २४४ |
| ऋजुमति | ६६५, ६५८, ६९९, ६७१ | काल परिवर्तन | ७९४ | घ | |
| ए | | काल सामायिक | ६१३ | घ | |
| एकज्ञान | ५१९ | कालावु | ८१७ | घट्टादर्शन | ६९२ |
| एकविषयज्ञान | ५१९ | मुष्मि | ६०० | चतुरंक | ५३१, ५५३, ५५५ |
| एकान्तमिष्यात्त्व | ४६ | कृत्तिकर्म | ६१४ | चतुर्विधतित्त्व | ६१४ |
| एशानुत्र | ६०० | शृष्णलेख्या | ७०७ | चन्द्रप्रज्ञप्ति | ६०१ |
| ऐ | | केवलज्ञान | ६७६ | चल (दोष) | ५५ |
| ऐन्द्र दत्त | ६०० | केवल दर्शन | ६९३ | चारियमोह | ४४, ४५ |
| ओ | | केवल समुद्रपाठ | ७५५ | चूणि | ५३८ |
| ओष | ३४ | कौरुल | ५९९ | चूणिचूणि | ५३८ |
| ओ | | कौत्तिक | ६०० | चुलिका | ६०२ |
| ओदयिक | ३९, ४३ | क्रियावाद | ६०० | छ | |
| ओदारिक काययोग | ३६८, ९२४ | क्रियानिबालपूर्व | ६११ | छेदोपस्थापना | ६८४ |
| ओदारिकमिश्र | ३६९ | द्यामिक | ३९, ५५ | ज | |
| ओनमन्वय | ६०० | द्यामिक सम्मन्वय | ४३, ५७, ८८४, ९३१ | जगत्प्रतर | २४२ |
| ओपशामिक | ३९, ४५ | द्यामिकसम्मन्वयशुद्धी | ८० | जगत्पथेणी | २४२ |
| ओपशामिक सम्मन्वय | ४३, ५७, ८८५ | द्यायोपशामिक | ३९, ४३ | जघन्य अनन्तानन्त | २१४ |
| क | | द्यायोपशामिक सम्मन्वय | ५४ | जघन्य अक्षयातासंख्यात | २१० |
| कठ | ६०० | द्यायोपशामिक संघम | ४४ | जघन्य परीतासंख्यात | २०८ |
| कण्ठेविट्टि | ५९९ | शोणकपाय | ४१, १२७ | जघन्य परीतानन्त | २११ |
| कशाट समुद्रपाठ | ७५५ | शिप्र (ज्ञान) | ५१९ | जघन्य युक्तानन्त | २१४ |
| कविल | ६०० | शेन सामायिक | ६१३ | जघन्य युक्तसंख्यात | २१० |
| | | शेनाननुगामी | ६१९ | जतुकर्ण | ६०० |
| | | शेनानुगामी | ६१९ | जनपदवर्त्य | ३५९ |

विशिष्ट ग्रन्थ-सूची

१०२३

| | | | | | |
|---------------------|--------------------|-----------------------|------------------|------------------------|---------------|
| इन्द्रिय | १२२ | कपोत सेवया | ७०९ | ग | |
| इन्द्रिय पर्यायि | २५२, २६५ | कर्मप्रवाद | ६१० | गतिमार्गणा | २७८ |
| इन्द्रिय प्राय | २६६ | कल्याणबहार | ६१५ | गर्भ (जन्म) | १५५, १५८, १६० |
| ई | | कल्याणकृत्य | ६१५ | गुण | ३३, ३४ |
| ईश्वर (दर्शन) | १४० | कल्याणवाद | ६११ | गुणकारणलाभा | २२३ |
| ईश | ५१५ | कर्मवृद्ध्यलपरिवर्तन | ७९० | गुणप्रत्यय | ६१८ |
| उ | | कषाय | ४७३ | गुणधेयिनिर्जरा | १०४, ११८ |
| उच्छ्वास | ८०९ | काय | १२२ | गुण संक्रमण | १०४, ११८ |
| उच्छ्वासपत्र | ६१५ | कायबल प्राय | २६६ | गुणस्थान | ३९, ४२ |
| उन्नयननुगामी | ६१९ | काममार्गणा | ३११ | गुणहानि | १२२ |
| उन्नयननुगामी | ६१९ | कारणविपर्याय | ४९ | गुणहानि आयाम | १२२ |
| उन्नयोप | ९०० | कामंशकामयोग | ३७५, ९२४ | घ | |
| ऋ | | कालग्रन्थ | ८०६, ८०७ | घनांगुल | २४२, २४४ |
| ऋतुनडि | ६६५, ६६८, ६६९, ६७१ | काल परिवर्तन | ७९४ | च | |
| ए | | काल सामायिक | ६१३ | चक्षुदर्शन | ६९२ |
| एकज्ञान | ५१९ | कालानु | ८१७ | चतुरंग | ५३१, ५५३, ५५५ |
| एकविषयज्ञान | ५१९ | मुमुक्षु | ६०० | चतुर्विधतिष्ठतव | ६१४ |
| एकान्तविष्णुत्व | ४६ | श्रुतिकर्म | ६१४ | चन्द्रप्रज्ञप्ति | ६०१ |
| एशानुत्र | ६०० | कृष्णलेखा | ७०७ | चल (दोष) | ५५ |
| ऐ | | केवलज्ञान | ६७६ | धारित्रमोह | ४४, ४५ |
| ऐन्द्र दत्त | ६०० | केवल दर्शन | ६९३ | धुणि | ५३८ |
| ओ | | केवल समुद्रपाठ | ७५५ | धुणितुणि | ५३८ |
| ओष | ३४ | कौस्तुभ | ५९९ | धुलिका | ६०२ |
| ओ | | कौशिक | ६०० | छ | |
| औद्यिक | ३९, ४३ | क्रियावाद | ६०० | छेदोपस्थापना | ६८४ |
| औद्यिक कामयोग | ३६८, ९२४ | क्रियाविशालपूर्व | ६११ | ज | |
| औद्यिकमित्र | ३६९ | द्यायिक | ३९, ५५ | जगत्प्रतर | २४२ |
| धौमन्यव | ६०० | द्यायिक सम्यक्त्व | ४३, ५७, ८८४, ९३१ | जगत्धेणी | २४२ |
| धौपद्यमिक | ३९, ४५ | द्यायिकसम्पन्नशुद्धी | ८० | जघन्य अनन्तानन्त | २१४ |
| धौपद्यमिक सम्यक्त्व | ४३, ५७, ८८५ | दाभोपद्यमिक | ३९, ४३ | जघन्य असंख्यातासंख्यात | २१० |
| क | | दाभोपद्यमिक सम्यक्त्व | ५४ | जघन्य परीतासंख्यात | २०८ |
| कट | ६०० | दाभोपद्यमिक संयम | ४४ | जघन्य परीतानन्त | २११ |
| कष्टेविद्धि | ५९९ | दीणकषाय | ४१, १२७ | जघन्य युक्तानन्त | २१४ |
| कषाट समुद्रपाठ | ७५५ | दिप्र (ज्ञान) | ५१९ | जघन्य युक्तसंख्यात | २१० |
| कथित | ६०० | दीन सामायिक | ६१३ | जतुकर्ण | ६०० |
| | | दीनाननुगामी | ६१९ | जनपदसत्य | ३५९ |
| | | दीनाननुगामी | ६१९ | | |

विशिष्ट ग्रन्थ-सूची

१०९३

| | | | | | |
|--------------------|--------------------|---------------------|------------------|------------------------|---------------|
| हिन्दु | १२२ | कनौज सेदवा | ७०९ | ग | |
| हिन्दु पत्रिका | २५२, २५५ | कर्मदास | ६१० | वृत्तिमार्गशा | २७८ |
| हिन्दु मान | २६६ | कर्मभद्रहास | ६१५ | गर्भ (जन्म) | १५५, १५८, १६० |
| ई | | कल्याणस्य | ६१५ | गुण | ३३, ३४ |
| ईसर (दर्शन) | १४० | कल्याणनाद | ६११ | गुणकारणलाभा | २२३ |
| ईश | ५१५ | कर्मसुखलखरिवर्तन | ७९० | गुणप्रत्यय | ६१८ |
| उ | | कपाय | ४७३ | गुणधैर्यनिर्जरा | १०४, ११८ |
| उत्तरास | ८०९ | काय | १२२ | गुण संक्रमण | १०४, ११८ |
| उत्तरास्यन | ६१५ | कायबल प्राण | २६६ | गुणस्थान | ३९, ४२ |
| उत्तरास्यनुनामी | ६१९ | कायमांगला | ३११ | गुणहानि | १२२ |
| उत्तरास्यनुनामी | ६१९ | कारणविनर्पाय | ४९ | गुणहानि आयास | १२२ |
| उत्तरास्य | ९०० | कामंनकायनोय | ३७५, ९२४ | घ | |
| उत्तरास्य | | कालस्य | ८०६, ८०७ | घनागुल | २४२, २४४ |
| उत्तरास्य | ६६५, ६६८, ६६९, ६७१ | काल परिवर्तन | ७९४ | घ | |
| ए | | काल सामाजिक | ६१३ | घटुदर्शन | ६९२ |
| एश्यास | ५१९ | कान्यासु | ८१७ | घटुदरक | ५३१, ५५३, ५५५ |
| एश्यास्यमान | ५१९ | कुमुदि | ६०० | घटुविद्यविस्तार | ६१४ |
| एश्यास्यविचारक | ४६ | कुमुदिर्कमं | ६१४ | घट्टप्रकृति | ६०१ |
| एश्यास्य | ९०० | कुम्भसेदवा | ७०७ | घल (दोष) | ५५ |
| ऐ | | केवलमान | ६७६ | घारिवमोह | ४४, ४५ |
| ऐन्द्र दत्त | ९०० | केवल दर्शन | ६९३ | घुनि | ५३८ |
| ओ | | केवल समुद्रपाठ | ७५५ | घुनिचुनि | ५३८ |
| ओष | ३४ | कौस्तुभ | ५९९ | घुलिका | ६०२ |
| ओ | | कौस्तुभ | ६०० | छ | |
| ओषधिक | ३९, ४३ | क्रियाशास्त्र | ९०० | छंदोपस्थापना | ६८४ |
| ओषधिक भाष्योप | ३९८, ९२४ | क्रियाविशालपूर्व | ६११ | ज | |
| ओषधिकमिथ | ३९९ | दायिक | ३९, ५५ | जगतप्रवर | २४२ |
| ओषध्यास | ६०० | दायिक सम्पत्तय | ४३, ५७, ८८४, ९३१ | जगत्येणी | २४२ |
| ओषध्यासिक | ३९, ४५ | दायिककाम्यःशुद्धी | ८० | जघन्य अनन्तानन्त | २१४ |
| ओषध्यासिक सम्पत्तय | ४३, ५७ | दायोपदायिक | ३९, ४३ | जघन्य असंख्यातासंख्यात | २१० |
| ओषध्यासिक सम्पत्तय | ८८५ | दायोपदायिक सम्पत्तय | ५४ | जघन्य परीतासंख्यात | २०८ |
| क | | दायोपदायिक संयम | ४४ | जघन्य परीतानन्त | २११ |
| कठ | ९०० | धीणकपाय | ४१, १२७ | जघन्य मुक्तानन्त | २१४ |
| कठेविद्य | ५९९ | द्विप्र (मान) | ५१९ | जघन्य गुत्तसंख्यात | २१० |
| कठस्य समुद्रपाठ | ७५५ | द्वेय सामाजिक | ६१३ | जतुकर्म | ६०० |
| कठस्य | ९०० | द्वेयाननुनामी | ६१९ | जनपदसंरय | ३५९ |
| | | द्वेयाननुनामी | ६१९ | | |

विशिष्ट शब्द-सूची

१०९३

| | | | | | |
|------------------|--------------------|-----------------------|------------------|------------------------|---------------|
| इन्द्रिय | १२२ | कपोत लेखा | ७०९ | ग | |
| इन्द्रिय पर्यायि | २५२, २६५ | कर्मप्रवाद | ६१० | गतिमार्गणा | २७८ |
| इन्द्रिय प्राण | २६६ | कल्पव्यवहार | ६१५ | गर्भ (जन्म) | १५५, १५८, १६० |
| ई | | कल्प्याकल्प | ६१५ | गुण | ३३, ३४ |
| ईश्वर (दर्शन) | १४० | कल्याणवाद | ६११ | गुणकारशलावा | २२३ |
| ईहा | ५१५ | कर्मपुद्गलपरिवर्तन | ७९० | गुणप्रत्यय | ६१८ |
| उ | | कपाय | ४७३ | गुणश्रेणिनिर्जरा | १०४, ११८ |
| उच्छ्वास | ८०९ | काय | ९२२ | गुण संक्रमण | १०४, ११८ |
| उत्तराप्ययन | ६१५ | कायबल प्राण | २६६ | गुणस्थान | ३९, ४२ |
| उभयानुगामी | ६१९ | कायमार्गणा | ३११ | गुणहानि | १२२ |
| उभयानुगामी | ६१९ | वारणविपर्यायि | ४९ | गुणहानि आयाम | १२२ |
| उपयोग | ९०० | कार्मणकाययोग | ३७५, ९२४ | घ | |
| ऋ | | कालद्रव्य | ८०६, ८०७ | घनांगुल | २४२, २४४ |
| ऋजुनति | ६६५, ६५८, ६६९, ६७१ | काल परिवर्तन | ७९४ | च | |
| ए | | काल सामायिक | ६१३ | चक्षुदर्शन | ६९२ |
| एकज्ञान | ५१९ | कालाणु | ८१७ | चतुरंक | ५३१, ५५३, ५५५ |
| एकविषयज्ञान | ५१९ | कुशुभि | ६०० | चतुर्विंशतिस्तय | ६१४ |
| एकान्तमिथ्यात्व | ४६ | कुतितकर्म | ६१४ | चन्द्रप्रज्ञप्ति | ६०१ |
| एलापुत्र | ६०० | कृष्णलेख्या | ७०७ | चल (दोष) | ५५ |
| ऐ | | केवलज्ञान | ६७६ | चारित्र्यमोह | ४४, ४५ |
| ऐन्द्र दत्त | ६०० | केवल दर्शन | ६९३ | चूर्णि | ५३८ |
| ओ | | केवल समुद्घात | ७५५ | चूर्णिचूर्णि | ५३८ |
| ओष | ३४ | कौरुकल | ५९९ | चुलिका | ६०२ |
| ओ | | कौशिक | ६०० | छ | |
| ओदयिक | ३९, ४३ | क्रियावाद | ६०० | छेदोपस्थापना | ६८४ |
| ओदारिक कामयोग | ३६८, ९३४ | क्रियाविशालपूर्व | ६११ | ज | |
| ओदारिकमिथ | ३६९ | द्यायिक | ३९, ५५ | जगत्प्रतर | २४२ |
| ओपमन्यव | ६०० | द्यायिक सम्पत्त्व | ४३, ५७, ८८४, ९३१ | जगत्श्रेणी | २४२ |
| ओपशमिक | ३९, ४५ | द्यायिकसम्पत् मूष्टी | ८० | जघन्य अनन्तानन्त | २१४ |
| ओपशमिक सम्पत्त्व | ४३, ५७, ८८५ | द्यायोपशमिक | ३९, ४३ | जघन्य असंख्यातासंख्यात | २१० |
| क | | द्यायोपशमिक सम्पत्त्व | ५४ | जघन्य परीतासंख्यात | २०८ |
| कठ | ६०० | द्यायोपशमिक संयम | ४४ | जघन्य परीतानन्त | २११ |
| कण्टेविट्टि | ५९९ | क्षीणकपाय | ४१, १२७ | जघन्य मुक्तानन्त | २१४ |
| कपाट समुद्घात | ७५५ | क्षिप्र (ज्ञान) | ५१९ | जघन्य मुक्तसंख्यात | २१० |
| कनिल | ६०० | क्षेत्र सामायिक | ६१३ | जलकर्म | ६०० |
| | | क्षेत्रानुगामी | ६१९ | जननदकत्व | ३५९ |
| | | क्षेत्रानुगामी | ६१९ | | |

विशिष्ट शब्द-सूची

१०९३

| | | | | | |
|-------------------|--------------------|------------------------|------------------|------------------------|---------------|
| दृष्टि | १२२ | कपोल लेखा | ७०९ | ग | |
| दृष्टि पर्याप्त | २५२, २९५ | कर्मप्रवाद | ६१० | गतिमार्गणा | २७८ |
| दृष्टि प्राय | २६६ | कल्पभ्रमवहार | ६१५ | गर्भ (जन्म) | १५५, १५८, १६० |
| ई | | कल्प्याकल्प | ६१५ | गुण | ३३, ३४ |
| ईस्वर (दर्शन) | १४० | कल्याणवाद | ६११ | गुणकारणलाभा | २२३ |
| ईश | ५१५ | कर्मसुखलनखिवर्तन | ७९० | गुणप्रत्यय | ६१८ |
| उ | | कपाय | ४७३ | गुणश्रेणिनिर्जरा | १०४, ११८ |
| उच्छ्वास | ८०९ | काय | ९२२ | गुण संक्रमण | १०४, ११८ |
| उत्तसम्पन्न | ६१५ | कायबल प्राय | २६६ | गुणस्थान | ३९, ४२ |
| उभयाननुगामी | ६१९ | कायमार्गणा | ३११ | गुणहानि | १२२ |
| उभयानुगामी | ६१९ | कारणविपर्याय | ४९ | गुणहानि व्यायाम | १२२ |
| उभयोग | ९०० | कार्यकाययोग | ३७५, ९२४ | घ | |
| ऋ | | कालशब्द | ८०६, ८०७ | घनांगुल | २४२, २४४ |
| ऋजुमति | ६६५, ६५८, ६६९, ६७१ | काल परिवर्तन | ७९४ | च | |
| ए | | काल सामायिक | ६१३ | चक्षुदर्शन | ६९२ |
| एकज्ञान | ५१९ | कालानु | ८१७ | चतुरंक | ५३१, ५५३, ५५५ |
| एकविषयज्ञान | ५१९ | कुप्यमि | ६०० | चतुर्विधवित्त्व | ६१४ |
| एकान्तमित्यात्म | ४६ | कृतिर्कर्म | ६१४ | चन्द्रप्रकृति | ६०१ |
| एशापुत्र | ६०० | कृष्णलेखा | ७०७ | चल (दोष) | ५५ |
| ऐ | | केवल दर्शन | ६९३ | चारिणमोह | ४४, ४५ |
| ऐन्द्र दत्त | ६०० | केवल समुद्रपात | ७५५ | चुणि | ५३८ |
| ओ | | कोरकल | ५९९ | चुणिचुणि | ५३८ |
| ओष | ३४ | कोरिक | ६०० | चुलिका | ६०२ |
| ओ | | क्रियावाद | ६०० | छ | |
| ओदयिक | ३९, ४३ | क्रियाविशालपूर्व | ६११ | छेदोपस्थापना | ६८४ |
| ओदारिक वाययोग | ३६८, ९२४ | द्यायिक | ३९, ५५ | ज | |
| ओदारिकमित्र | ३६९ | द्यायिक सम्पत्त्व | ४३, ५७, ८८४, ९३१ | जगत्प्रसर | २४२ |
| ओभन्वय | ६०० | द्यायिकसम्पत्तुष्टी | ८० | जगत्श्रेणी | २४२ |
| ओपरायिक | ३९, ४५ | द्यायोपरायिक | ३९, ४३ | जघन्य अनन्तानन्त | २१४ |
| ओपरायिक सम्पत्त्व | ४३, ५७ | द्यायोपरायिक सम्पत्त्व | ५४ | जघन्य असंख्यातासंख्यात | २१० |
| | ८८५ | द्यायोपरायिक संघम | ४४ | जघन्य परीतासंख्यात | २०८ |
| फ | | द्योगकपाय | ४१, १२७ | जघन्य परीतानन्त | २११ |
| फट | ६०० | दिप्र (ज्ञान) | ५१९ | जघन्य युक्तानन्त | २१४ |
| फण्टेविद्धि | ५९९ | दोत्र सामायिक | ६१३ | जघन्य युक्तसंख्यात | २१० |
| फपाट समुद्रपात | ७५५ | दोत्राननुगामी | ६१९ | जतुकर्म | ६०० |
| फपिल | ६०० | दोत्रानुगामी | ६१९ | जनपदसत्य | ३५९ |

विशिष्ट शब्द-सूची

१०९३

| | | | | | |
|-------------------|--------------------|-----------------------|------------------|------------------------|---------------|
| इन्द्रिय | १२२ | कपोत लेख्या | ७०९ | ग | |
| इन्द्रिय पर्याप्त | २५२, २६५ | कर्मप्रवाद | ६१० | गतिमार्गणा | २७८ |
| इन्द्रिय प्राण | २६६ | कल्पवृक्षहार | ६१५ | गर्भ (जन्म) | १५५, १५८, १६० |
| ई | | कल्प्याकल्प | ६१५ | गुण | ३३, ३४ |
| ईश्वर (दर्शन) | १४० | कल्याणवाद | ६११ | गुणकारसालाना | २२३ |
| ईहा | ५१५ | कर्मपुद्गलपरिवर्तन | ७९० | गुणप्रत्यय | ६१८ |
| उ | | कपाय | ४७३ | गुणश्रेणिनिर्जरा | १०४, ११८ |
| उच्छ्वास | ८०९ | काय | ९२२ | गुण संक्रमण | १०४, ११८ |
| उत्तराम्बयन | ६१५ | कायबल प्राण | २६६ | गुणस्थान | ३९, ४२ |
| उभयाननुगामी | ६१९ | कायमार्गणा | ३११ | गुणहानि | १२२ |
| उभयानुगामी | ६१९ | वारणविपर्याप्त | ४९ | गुणहानि आयाम | १२२ |
| उपयोग | ९०० | कार्यणकाययोग | ३७५, ९२४ | घ | |
| ऋ | | कालद्रव्य | ८०६, ८०७ | घनांगुल | २४२, २४४ |
| ऋजुमति | ६६५, ६५८, ६६९, ६७१ | काल परिवर्तन | ७९४ | घ | |
| ए | | काल सामायिक | ६१३ | च | |
| एकज्ञान | ५१९ | कालाणु | ८१७ | चक्षुदर्शन | ६९२ |
| एकविषज्ञान | ५१९ | कुमुदि | ६०० | चतुरंग | ९३१, ५५३, ५५५ |
| एकान्तमिच्छात्व | ४६ | कृतिकर्म | ६१४ | चतुर्विधातिष्ठत्व | ६१४ |
| एलापुत्र | ६०० | कृष्णलेख्या | ७०७ | चन्द्रप्रकृति | ६०१ |
| ऐ | | केवलज्ञान | ६७६ | चल (दोष) | ५५ |
| ऐन्द्र दत्त | ६०० | केवल दर्शन | ६९३ | चारित्रमोह | ४४, ४५ |
| ओ | | केवल समुद्घात | ७५५ | चुणि | ५३८ |
| ओष | ३४ | कौटुकल | ५९९ | चुणित्चुणि | ५३८ |
| ओ | | कौशिक | ६०० | चुलिका | ६०२ |
| औद्यिक | ३९, ४३ | क्रियावाद | ६०० | छ | |
| औदारिक वाययोग | ३६८, ९२४ | क्रियाविशालपूर्व | ६११ | छेदोपस्थापना | ६८४ |
| औदारिकमित्र | ३६९ | क्षायिक | ३९, ५५ | ज | |
| औपमन्यव | ६०० | क्षायिक सम्यक्त्व | ४३, ५७, ८८४, ९३१ | जगत्प्रवर | २४२ |
| औपशमिक | ३९, ४५ | क्षायिकसन्म्यभृष्टी | ८० | जगत्प्रेणी | २४२ |
| औपशमिक सम्यक्त्व | ४३, ५७, ८८५ | क्षायोपशमिक | ३९, ४३ | जघन्य अनन्तानन्त | २१४ |
| क | | क्षायोपशमिक सम्यक्त्व | ५४ | जघन्य अहंस्वाताहंस्वात | २१० |
| कठ | ६०० | क्षायोपशमिक संयम | ४४ | जघन्य परीताहंस्वात | २०८ |
| कष्टेविद्धि | ५९९ | क्षीणकपाय | ४१, १२७ | जघन्य परीतानन्त | २११ |
| कषाट समुद्घात | ७५५ | क्षिप्र (ज्ञान) | ५१९ | जघन्य युक्तानन्त | २१४ |
| कपिल | ६०० | क्षेत्र सामायिक | ६१३ | जघन्य युक्तसंस्वात | २१० |
| | | क्षेत्राननुगामी | ६१९ | जतुकर्म | ६०० |
| | | क्षेत्रानुगामी | ६१९ | जनपदसंय | ३५९ |

विशिष्ट शब्द-सूची

१०९३

| | | | | | |
|-------------------|--------------------|-------------------------|------------------|------------------------|---------------|
| इन्द्रिय | १२२ | कपोत लेख्या | ७०९ | ग | |
| इन्द्रिय पर्याप्त | २५२, २६५ | कर्मप्रवाद | ६१० | गतिमार्गणा | २७८ |
| इन्द्रिय प्राण | २६६ | कल्पव्यवहार | ६१५ | धर्म (जन्म) | १५५, १५८, १६० |
| ई | | कल्प्याकल्प | ६१५ | गुण | ३३, ३४ |
| ईश्वर (दर्शन) | १४० | कल्याणवाद | ६११ | गुणकारशलाका | २२३ |
| ईहा | ५१५ | कर्मपुद्गलपरिवर्तन | ७९० | गुणप्रत्यय | ६१८ |
| उ | | कपाय | ४७३ | गुणश्रेणिनिर्जरा | १०४, ११८ |
| उच्छ्वास | ८०९ | काय | १२२ | गुण संक्रमण | १०४, ११८ |
| उत्तराध्ययन | ६१५ | कायबल प्राण | २६६ | गुणस्थान | ३९, ४२ |
| उभयाननुगामी | ६१९ | कायमार्गणा | ३११ | गुणहानि | १२२ |
| उभयानुगामी | ६१९ | वारणविपर्यय | ४९ | गुणहानि आयाम | १२२ |
| उपयोग | ९०० | कार्मणकाययोग | ३७५, ९२४ | घ | |
| ऋ | | कालद्रव्य | ८०६, ८०७ | घनागुल | २४२, २४४ |
| ऋजुमति | ६६५, ६५८, ६६९, ६७१ | काल परिवर्तन | ७९४ | च | |
| ए | | काल सामायिक | ६१३ | चक्षुदर्शन | ६९२ |
| एकज्ञान | ५१९ | कालाणु | ८१७ | चतुरंक | ५३१, ५५३, ५५५ |
| एकविधज्ञान | ५१९ | कुयुमि | ६०० | चतुर्विंशतिस्तव | ६१४ |
| एकान्तमिथ्यात्व | ४६ | कृतिकर्म | ६१४ | चन्द्रप्रज्ञप्ति | ६०१ |
| एलापुत्र | ६०० | कृष्णलेख्या | ७०७ | चल (शेष) | ५५ |
| ऐ | | केवलज्ञान | ६७६ | चारित्र्यमोह | ४४, ४५ |
| ऐन्द्र दत्त | ६०० | केवल दर्शन | ६९३ | चूणि | ५३८ |
| ओ | | केवल समुद्घात | ७५५ | चूणिचूणि | ५३८ |
| वोष | ३४ | कौत्कल | ५९९ | चूलिका | ६०२ |
| ओ | | कौशिक | ६०० | छ | |
| वौदयिक | ३९, ४३ | क्रियावाद | ६०० | छेदोपस्थापना | ६८४ |
| वौदारिक काययोग | ३६८, ९२४ | क्रियाविशालपूर्व | ६११ | ज | |
| वौदारिकमिश्र | ३६९ | धार्मिक | ३९, ५५ | जगत्प्रतर | २४२ |
| वोपमन्यव | ६०० | धार्मिक सम्पत्त्व | ४३, ५७, ८८४, ९३१ | जगत्श्रेणी | २४२ |
| वोपशमिक | ३९, ४५ | धार्मिकसम्पत्त्व मृष्टी | ८० | जपन्य अनन्तानन्त | २१४ |
| वोपशमिक सम्पत्त्व | ४३, ५७, ८८५ | दायोपशमिक | ३९, ४३ | जपन्य असंख्यातासंख्यात | २१० |
| क | | दायोपशमिक सम्पत्त्व | ५४ | जपन्य परीतासंख्यात | २०८ |
| कठ | ६०० | दायोपशमिक संयम | ४४ | जपन्य परीतानन्त | २११ |
| कण्ठेविद्धि | ५९९ | दोषकपाय | ४१, १२७ | जपन्य मुक्तानन्त | २१४ |
| कपाट समुद्घात | ७५५ | क्षिप्र (ज्ञान) | ५१९ | जपन्य मुक्तसंख्यात | २१० |
| कपिल | ६०० | क्षेत्र सामायिक | ६१३ | जतुकर्म | ६०० |
| | | क्षेत्राननुगामी | ६१९ | जननदकत्व | ३५९ |
| | | क्षेत्रानुगामी | ६१९ | | |

विशिष्ट शब्द-सूची

१०९३

| | | | | | |
|-------------------|--------------------|-----------------------|------------------|-----------------------|---------------|
| इन्द्रिय | १२२ | कपोत लेखा | ७०९ | ग | |
| इन्द्रिय पराति | २५२, २६५ | कर्मप्रवाद | ६१० | गतिमार्गणा | २७८ |
| इन्द्रिय प्राय | २६६ | कल्पमयबहार | ६१५ | गर्भ (जन्म) | १५५, १५८, १६० |
| ई | | कल्प्याकल्प | ६१५ | गुण | ३३, ३४ |
| ईश्वर (दत्त) | १४० | कल्याणपाद | ६११ | गुणकारणलावा | २२३ |
| ईश | ५१५ | कर्मसुद्गलपरिवर्तन | ७९० | गुणप्रत्यय | ६१८ |
| उ | | कपाय | ४७३ | गुणश्रेणिनिर्जरा | १०४, ११८ |
| उच्छ्वास | ८०९ | काय | १२२ | गुण संक्रमण | १०४, ११८ |
| उत्तराम्पन्न | ६१५ | कायबल प्राय | २६६ | गुणस्थान | ३९, ४२ |
| उभयाननुगामी | ६१९ | कायमार्गणा | ३११ | गुणहानि | १२२ |
| उभयानुगामी | ६१९ | कारणविपर्याय | ४९ | गुणहानि आयाम | १२२ |
| उपयोग | ९०० | कार्मणकाययोग | ३७५, ९२४ | घ | |
| ऋ | | कालद्रव्य | ८०६, ८०७ | घनांगुल | २४२, २४४ |
| ऋजुनति | ६६५, ६५८, ६६९, ६७१ | काल परिवर्तन | ७९४ | च | |
| ए | | काल सामायिक | ६१३ | चक्षुदर्शन | ६९२ |
| एकज्ञान | ५१९ | कालाणु | ८१७ | चतुरंग | ५३१, ५५३, ५५५ |
| एकविषयज्ञान | ५१९ | कुसुमि | ६०० | चतुर्विधास्तित्व | ६१४ |
| एकान्तमिध्यात्व | ४६ | कृतिकर्म | ६१४ | चन्द्रप्रज्ञति | ६०१ |
| एकानुत्र | ६०० | कृष्णलेखा | ७०७ | चल (दोष) | ५५ |
| ऐ | | केवलज्ञान | ६७६ | चारित्रमोह | ४४, ४५ |
| ऐन्द्र दत्त | ६०० | केवल दर्शन | ६९३ | चूर्ण | ५३८ |
| ओ | | केवलि समुद्घात | ७५५ | चूर्णचूर्ण | ५३८ |
| ओष | ३४ | कीटकल | ५९९ | चूलिका | ६०२ |
| ओ | | कीशिक | ६०० | छ | |
| ओरमिक | ३९, ४३ | क्रियावाद | ६०० | छेदोपस्थापना | ६८४ |
| ओशरिक काययोग | ३६८, ९२४ | क्रियाविशालपूर्व | ६११ | ज | |
| ओशरिकमिथ | ३६९ | दायिक | ३९, ५५ | जगत्प्रतर | २४२ |
| ओषमन्यव | ६०० | दायिक सम्यक्त्व | ४३, ५७, ८८४, ९३१ | जगत्श्रेणी | २४२ |
| ओषरामिक | ३९, ४५ | दायिकसम्यक्त्वृष्टी | ८० | जघन्य बनन्तानन्त | २१४ |
| ओषरामिक सम्यक्त्व | ४३, ५७, ८८५ | दायोपशमिक | ३९, ४३ | जघन्य असंख्यातासंख्या | २१० |
| क | | क्षायोपशमिक सम्यक्त्व | ५४ | जघन्य परोटासंख्या | २०८ |
| कठ | ६०० | क्षायोपशमिक संयम | ४४ | जघन्य परोटानन्त | २०८ |
| कष्टेविद्धि | ५९९ | क्षीपकपाय | ४१, १२७ | जघन्य मुक्तनन्त | ११० |
| कषाट समुद्घात | ७५५ | क्षेत्र (ज्ञान) | ५१९ | जघन्य मुक्तसंख्या | ११० |
| कनिल | | क्षेत्र सामायिक | ६१३ | | |
| | | | ६१९ | | |
| | | | ६१९ | | |

विशिष्ट शब्द-सूची

१०९३

| | | | | | |
|------------------|--------------------|----------------------|------------------|------------------------|---------------|
| द्वन्द्व | १२२ | कपोत लेख्या | ७०९ | ग | |
| द्वन्द्व पर्यायि | २५२, २६५ | कर्मप्रवाद | ६१० | गतिमार्गणा | २७८ |
| द्वन्द्व प्राय | २६६ | कल्पव्यवहार | ६१५ | गर्भ (जन्म) | १५५, १५८, १६० |
| ई | | कल्प्याकल्प | ६१५ | गुण | ३३, ३४ |
| ईश्वर (दर्शन) | १४० | कल्याणवाद | ६११ | गुणकारशालावा | २२३ |
| ईहा | ५१५ | कर्मपुद्गलपरिवर्तन | ७९० | गुणप्रत्यय | ६१८ |
| उ | | कपाय | ४७३ | गुणधेयिनिर्जरा | १०४, ११८ |
| उच्छ्वास | ८०९ | काय | ९२२ | गुण संक्रमण | १०४, ११८ |
| उत्तराभ्ययन | ६१५ | कायबल प्राण | २६६ | गुणस्थान | ३९, ४२ |
| उभयानुगामी | ६१९ | काममार्गणा | ३११ | गुणहानि | १२२ |
| उभयानुगामी | ६१९ | कारणविपर्याय | ४९ | गुणहानि आमाम | १२२ |
| उपयोग | ९०० | कार्मणकाययोग | ३७५, ९२४ | घ | |
| ऋ | | कालद्रव्य | ८०६, ८०७ | घनांगुल | २४२, २४४ |
| ऋजुमति | ६६५, ६५८, ६६९, ६७१ | काल परिवर्तन | ७९४ | घ | |
| ए | | काल सामायिक | ६१३ | घट्टदर्शन | ६९२ |
| एकज्ञान | ५१९ | कालानु | ८१७ | चतुरंक | ५३१, ५५३, ५५५ |
| एकविधज्ञान | ५१९ | कुपुमि | ६०० | चतुर्विधवृत्तव | ६१४ |
| एकान्तमिथ्यात्व | ४६ | कृत्तिकर्म | ६१४ | चन्द्रप्रज्ञप्ति | ६०१ |
| एलानुव | ६०० | कुण्डलेदया | ७०७ | चल (दोष) | ५५ |
| ऐ | | केवलज्ञान | ६७६ | चारित्रमोह | ४४, ४५ |
| ऐन्द्र दत्त | ६०० | केवल दर्शन | ६९३ | चूणि | ५३८ |
| ओ | | केवल समुद्रघात | ७५५ | चूणिचूणि | ५३८ |
| ओष | ३४ | कौरकल | ५९९ | चुलिका | ६०२ |
| ओ | | कौशिक | ६०० | छ | |
| ओषधिक | ३९, ४३ | किमावाद | ६०० | छेदोपस्थापना | ६८४ |
| ओषाधिक काययोग | ३६८, ९२४ | किमाविशालपुर्व | ६११ | ज | |
| ओषाधिकमिथ | ३६९ | दायिक | ३९, ५५ | जगत्प्रतर | २४२ |
| ओषामन्वव | ६०० | दायिक सम्यक्त्व | ४३, ५७, ८८४, ९३१ | जगत्श्रेणी | २४२ |
| ओषामिक | ३९, ४५ | दायिकसम्यग्मुष्टी | ८० | जघन्य अनन्तानन्त | २१४ |
| ओषामिक सम्यक्त्व | ४३, ५७, ८८५ | दायोपचामिक | ३९, ४३ | जघन्य असंख्यातासंख्यात | २१० |
| क | | दायोपचामिक सम्यक्त्व | ५४ | जघन्य परीक्षासंख्यात | २१० |
| कठ | ६०० | दायोपचामिक संयम | ४४ | | |
| कण्ठेविद्धि | ५९९ | क्षीणकपाय | ४१, १२७ | | |
| कपाट समुद्रघात | ७५५ | क्षिप्र (ज्ञान) | ५१९ | | |
| कपिल | ६०० | क्षेत्र सामायिक | ६१३ | | |

विवादाष्ट सङ्ग-सूची

| | | | | | |
|-----------------------------|----------|------------------|-----------------|------------------|----------|
| प्रत्ययकारण | ५९७ | मतिक्रान | ५२१, ५२३ | ल | |
| प्रस्ताव | ६५ | मध्यमरव | ५७० | लम्प्यर | ५१८, ५१९ |
| प्राण ३४, ३५, २६४, २६६, ८०९ | | मनःपर्याय | ६६५, ६६७ | लम्प्यर धु. | ५२९, ५५७ |
| प्रानुवधु. | ५७४ | मनःपर्यायि | २५३, २६५ | लम्प्यपर्यायिक | २५६, २६१ |
| प्रानुवधुप्रानुव | ५७३ | मनुष्यगति | २८० | लव | ८१० |
| प्रानुवधुसमास | ५७४ | मनप्राप | २६५, २६६ | लेखा | ६१६, ९२८ |
| | व | मरीचि | ६०० | | |
| | | मलिन (दोष) | ५६ | व | |
| बहुमान | ५१८ | मस्करी | ४७, १४० | वचन प्राप | २६५, २६६ |
| बहुविध | ५१८ | महाकल्प्य | ६१५ | वचनयोग | १२४ |
| बादरकृष्टि | १२१, १२५ | महानुपद्रोक | ६१५ | वन्दना | ११४ |
| बादर निमोदवर्गणा | ८३१, ८३३ | माठर | ६०० | वर्ग | १२२ |
| बुद्धदर्शी | ४७ | माध्यन्दिन | ६०० | वर्षणा | १२२, १८० |
| | भ | मान्यपिक | ६०० | वर्षमान | १२० |
| भट्टाकलंक | ५१५ | मायागता | ६०१ | यजिष्ठ | ६०० |
| भयसंज्ञा | २७० | मागंणा | ३४, ३७४ | वसु | ६०० |
| भयपरिवर्तन | ७९५ | मिथ्यात्व | ४६, ४८ | वस्तु धु. | ५७५ |
| भयप्रत्यय | ६१८ | मिथ्यात्वप्रकृति | ४६ | वस्तुसमास | ५७६ |
| भवानुगामी | ६१९ | मिथ्यादृष्टि | ४०, ४२, ४८, ८८७ | बाह्वलि | ६०० |
| भवाननुगामी | ६१९ | मिथ (गु) | ४०, ४२, ५३ | बादरपान | ६०० |
| भव्य | ९२८ | मिथ (योनि) | १५६ | बाह्वलि | ६०० |
| भावनपुंल्लिक | ४६२ | मुग्ध | ६०० | बाह्वलि | ६०० |
| भावपुंल्लिक | ४६२ | मुहुर्त | २५९, ८१० | विशेषकीकृपा | ५९७ |
| भावप्रमाथ | २१८ | मैथुनसंज्ञा | २७० | विज्ञानुवाद | ११० |
| भावप्राप | २६४ | मोद | ६०० | विपरीत मिथ्यात्व | ४७ |
| भावमन | ९२४ | मोदुल्लासन | ६०० | विनाकमुत्र | ५१८ |
| भावधामाधिक | ६१३ | | य | विदुषमति | ११५-१७२ |
| भावसत्य | ३६० | यथाक्यात | ६८६ | विनाकप्राप | ५११ |
| भावरतो | ४६२ | यात्रिक | ४७ | विनाकविरत | ६० |
| भावेन्द्रिय | २९४ | योग | ३५४, ३५५, ९२२ | विभुज (योनि) | १५६ |
| भावानर्जाति | २५३, २५५ | योनि | १५४, १५९ | विशार | ३४ |
| भावपरिवर्तन | ७९६ | | र | विशालोचन | ३८६ |
| भावेरेखा | ७२७ | | | विशालोचन | ७१६ |
| भावेबाह्व | ८५० | रामान | ६१० | विशालोचन | ८०१ |
| भावेभेद विपर्याय | ४९ | रुद्रता | १०२ | विशालोचन | ८०६ |
| | म | रुद्रता | ३६० | विशालोचन | ४६२ |
| मर्त्याक (रथान) | १४० | रुद्रता | ६०० | विशालोचन | ४६२ |
| मति ब्रह्म | ५०९ | रोमय | ६०० | विशालोचन | ४६२ |
| | | रोम्यविनी | ६०० | विशालोचन | ४६२ |

विशिष्ट शब्द-सूची

१०९५

| | | | | | |
|-----------------------------|----------|------------------|-----------------|------------------|-------------|
| प्रदन्व्याकरण | ५९७ | मतिज्ञान | ५२१, ५२३ | ल | |
| प्रस्तार | ६५ | मध्यमनद | ५७० | लक्ष्यशर | ५६८, ५६९ |
| प्राण ३४, ३५, २६४, २६६, ८०९ | | मनःपर्यय | ६६५, ६६७ | लक्ष्यशर ध्रु. | ५२९, ५५७ |
| प्रानृतध्रु. | ५७४ | मनःपर्याप्ति | २५३, २६५ | लक्ष्यपर्याप्तिक | २५६, २६१ |
| प्रानृतप्रानृत | ५७३ | मनुष्यगति | २८० | लव | ८१० |
| प्रानृतसमास | ५७४ | मनप्राण | २६५, २६६ | लेखा | ६९६, ९२८ |
| | | मरीचि | ६०० | | |
| व | | मलिन (दोष) | ५६ | व | |
| बहुज्ञान | ५१८ | मस्करी | ४७, १४० | वचन प्राण | २६५, २६६ |
| बहुविषय | ५१८ | महाकल्प | ६१५ | वचनयोग | १२४ |
| बादरकुट्टि | १२१, १२५ | महापुण्डरीक | ६१५ | वन्दना | ६१४ |
| बादर निमोदवर्गणा | ८३१, ८३३ | माठर | ६०० | वर्ग | १२२ |
| बुद्धदर्शी | ४७ | माध्यन्दिन | ६०० | वर्षणा | १२२, ३८० |
| | | मान्यपिक | ६०० | वर्षमान | ६२० |
| भ | | मायागदा | ६०१ | वर्षाछ | ६०० |
| मट्टाकलंक | ५१५ | मायणा | ३४, ३७४ | वसु | ६०० |
| भयसंज्ञा | २७० | मिथ्यात्व | ४६, ४८ | वस्तु ध्रु. | ५७५ |
| भयपरिवर्तन | ७९५ | मिथ्यात्वप्रकृति | ४६ | वस्तुसमास | ५७६ |
| भयप्रत्यय | ६१८ | मिथ्यादृष्टि | ४०, ४२, ४८, ८८७ | वाह्वलि | ६०० |
| भवानुगामी | ६१९ | मिथ (यु) | ४०, ४२, ५३ | वादरायण | ६०० |
| भवाननुगामी | ६१९ | मिथ्र (योनि) | १५६ | वाल्कल | ६०० |
| भव्य | ९२८ | मुण्ड | ६०० | वाल्मीकि | ६०० |
| भावनपुंसक | ४६२ | मुहूर्त | २५९, ८१० | विलोपनीकया | ५९७ |
| भावपुरुष | ४६२ | मैथुनसंज्ञा | २७० | विद्यानुवाद | ६१० |
| भावप्रमाण | २१८ | मीद | ६०० | विपरीत मिथ्यात्व | ४७ |
| भावप्राण | २६४ | मीदुगलायन | ६०० | विपाकमूत्र | ५९८ |
| भावमन | ९२४ | | | विपुलमति | ६६५-६७२ |
| भावसाभाविक | ६१३ | य | | विभंगज्ञान | ५११ |
| भावसत्य | ३६० | यथास्थात | ६८६ | विरवाधिरत | ६० |
| भावस्त्री | ४६२ | यात्रिक | ४७ | वियुत (योनि) | १५६ |
| भावेन्द्रिय | २९४ | योग | ३५४, ३५५, ९२२ | विस्तार | ३४ |
| भाषापर्याप्ति | २५३, २६५ | योनि | १५४, १५९ | विस्रसोपचय | ३८४ |
| भावपरिवर्तन | ७९६ | | | विहारवत्स्वस्थान | ७३५ |
| भावलेखा | ७२७ | र | | बीतरागसन्मगदर्शन | ८०१ |
| भावबाहू | ८५० | रामायण | ५१० | बीर्मानुदवाद | ६०५ |
| भेदाभेद विपर्याप्त | ४९ | रूपगता | ३६० | वेदनायणा | ४६२ |
| | | रूपसत्य | ६०० | वेदकसम्पत्त्व | ४३, ५४, ८८५ |
| म | | रोनछ | ६०० | वेदक सम्पद्गुणो | ७९ |
| मण्डल (दर्शन) | १४० | रोमहृपिनी | — | | |
| मति बज्रान | ५०९ | | | | |

सं १। आ १। उ ५॥

सामान्यतिर्य्यंचापर्म्यान्नासादावन्गे। गु १। जो १। प ६। प्रा ७। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो २। ओ मि। का। वे ३। क ४। जा २। सं १। आ २। ले २ क गु। भ १।
३ अ गु भ

सं १। सा। सं १। आ २। उ ४॥ कु। कु। च। अ॥

५ सामान्यतिर्य्यंचसम्यग्मिम्यादृष्टिगन्धो। गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १।
इं १। का १। यो ९। वे ३। क ४। जा ३। सं १। व २। ले ६ भ १। सं १। सं १।
६

आ १। उ ५॥

सामान्यतिर्य्यंचासंयतंगे। गु १। जो २। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो ११। वे ३। क ४। जा ३। म। थु। अ। सं १। आ २। व ३। चा। आ। ले ६

१० भ १। सं ३। उ। वे। क्षा। सं १। आ २। उ ६॥

सामान्यतिर्य्यंचासंयतपर्यान्गे। गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो ९। वे ३। क ४। जा ३। सं १। व ३। ले ६ भ १। सं ३। सं १।

आ १। उ ६॥

१५ सामान्यतिर्य्यंचापर्म्यान्नासंयतंगे। गु १। जो १। प ६। अ। प्रा ७। सं ४। गति १।
इं १। का १। यो २। वे १। पुं। क ४। जा ३। म। थु। अ। सं १। आ २। व ३। चा। आ।
अ। ले २ क गु। भ १। सं २। क्षा। वे। सं १। आ २। उ ६॥
मा १ क

का १, यो ९, वे ३, क ४, जा ३, सं १ अ, द २, ले ६, भ १, स १, सं १, आ १, उ ५, तदपर्यान्नां
भा ६

गु १, जी १, प ६, प्रा ७, सं ४, ग १, इं १, वा १, यो २ ओ मि का, वे ३, क ४, जा २, सं १ अ,
द २, ले २ क गु, भ १, स १ सा, सं १, आ २, उ ४, कु कु च अ। सम्यग्मिम्यादृशां—गु १, जो १,
भा ३ अ गु भ

२० प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे ३, क ४, जा ३, सं १, व २, ले ६ भ १, स १,
भा ६

सं १, आ १, उ ५। असंयतानां—गु १, जो २, प ६ ६, प्रा १०, ७, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११,
वे ३, क ४, जा ३, म थु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६, भ १, स ३ उ वे दा, सं १, आ २, उ ६,
भा ६

तदपर्यान्नां—गु १, जो १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे ३, क ४, जा ३ म थु
अ, सं १, द ३, ले ६, भ १, स ३, सं १, आ १, उ ६, तदपर्यान्नां—गु १, जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ,
भा ६

२५ सं ४, ग १, इं १, का १, यो २, वे १ पुं, क ४, जा ३ म थु अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले २ गु क,
भा १ क

~~पंचदशतिथ्यं~~ गु १। जो २। नं ३। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इ १। का १।
 १। सं ७। य १। इ १। का १। जो २। वे ३। क ४। ज्ञा ३। कु। कु। तं १। वा २। व ४।
 उ ५। वा ३। ले ६। न २। सं १। नि। सं २। वा १। उ ५।

~~पंचदशतिथ्यं~~ गु १। जो २। नं ३। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इ १। का १।
 १। सं ७। य १। इ १। का १। जो २। वे ३। क ४। ज्ञा ३। सं १। व २। ले ६। न २। सं १। नि। सं २।
 वा १। उ ५।

पंचदशतिथ्यं प्रसादनये। गु १। जो २। सं = प ६। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इ १। का १।
 ग १। इ १। का १। जो २। वे ३। क ४। ज्ञा ३। सं १। व २। ले ६। न २। सं १। नि। सं २।
 वा १। उ ५।

पंचदशतिथ्यं स्वप्नप्रसादनये। गु १। जो २। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इ १। का १।
 इ १। का १। जो २। वे ३। क ४। ज्ञा ३। सं १। व २। ले ६। न २। सं १। नि। सं २।
 वा १। उ ५।

पंचदशतिथ्यं सासादनान्स्वप्नप्रसादनये। गु १। जो २। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इ १। का १।
 १। सं ७। य १। इ १। का १। जो २। वे ३। क ४। ज्ञा ३। कु। कु। तं १। वा २। व ४।
 उ ५। वा ३। ले ६। न २। सं १। नि। सं २। वा १। उ ५। कु। कु। वा ३।

पंचदशतिथ्यं निधायं। गु १। जो २। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इ १। का १।

वि, सं २, वा २, उ ५, गणपतिनामा—गु १, जो २ सं ५, प ६ ५, प्रा १० ९, सं ४, ग १, इ १, का १,
 २० यो १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ व, द २ व ४, ले ६, न २ सं १ नि, सं २, वा १, उ ५
 ना ६

गणपतिनामा—गु १ जो २ सं ५, प सं ६ व ५, प्रा सं ७, व ७, सं ४, ग १, इ १, का १, जो २ नि का,
 वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु, सं १ व, द २ व ४, ले २ क गु न २, सं १, सं २, वा २, उ ५,
 ना ३ वगुन

सासादनानां—गु १, जो २ सं ५ व, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४, ग १, इ १, का १, जो १ १, वे ३, क ४,
 वा १, सं १, व २, ले ६, म १, सं १ सा, सं १, वा २, उ ५ कु कु वि व ४, तत्पतिनामां—गु १,
 ना ६

२५ जो १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इ १, का १, यो १, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १, द २, ले ६, व १,
 व १ सा, सं १, वा १, उ ५, गणपतिनामा—गु १, जो १ व, प ६, प्रा ७, सं ४, ग १, इ १, का १ व,
 यो २ वि का, वे ३, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ व, द २ व ४, ले २ क गु, म १, सं १ सा, सं १,
 ना ३ वगु

वा २, उ ५ कु कु व ४, निधायानां—गु १, जो १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इ १, का १, यो १

पंचेंद्रियतिर्य्यंचयोनिमतिजीवंगळो गु ५। जो ४। संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्त भेदवि। प ६।
 १६। सं ५। ५। अ। सं। प्रा १०। ७। संज्ञि ९। ७। असंज्ञि। सं। ४। ग १। इं १। का १।
 योग ११। वे १। स्त्री। क ४। ज्ञा ६। म। थु। अ। कु। कु। वि। सं २। अ। वे। व ३। च।
 अ। अ। ले ६। भ २। सं ५। उ। वे। मि। सा। मि। सं २। आ २। उ ९। म। थु। अ।
 ६

५ कु। कु। वि। च। अ। अ॥

तिर्य्यग्योनिमतिपर्याप्तजीवंगळो। गु ५। जो २। सं। अ। प ६। ५। प्रा १०। सं ९।
 अ। सं ४। ग १। ति। इं १। पं। का १। प्र। यो ९। वे १। स्त्री। क ४। ज्ञा ६। म। थु।
 अ। कु। कु। वि। सं २। अ। वे। व ३। ले ६। भ २। सं। ५। उ। वे। मि। सा। मि।
 ६

सं २। आ १। उ ९। सं ३। मि ३। व ३। तिर्य्यवपंचेंद्रिययोनिमत्यपर्याप्तगो ॥ गु २। मि।
 १० सा। जो २। संज्ञ्यपर्याप्ता संज्ञ्यपर्याप्ता। प ६। सं। अ। ५। अ। प्रा ७। अ ७। अ। सं ४।
 ग १। ति। इं १। पं। का १। प्र॥ यो २। मिथ। का। वे १। स्त्री। क ४। ज्ञा २। कु।
 कु। सं १। अ। व २। च। अ। ले २ क गु भ २। सं २। मि। सा। सं २। आ २। उ ४।
 भा ३ अ गु
 कु। कु। च। अ॥

पंचेंद्रियतिर्य्यग्योनिमतिमिथ्यादृष्टिगे। गु १। मि। जो ४। संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ता।
 १५ प ६। ६। ५। ५। असंज्ञि। प्रा १०। ७। संज्ञि ९। ७। असंज्ञि। सं ४। ग १। इं १। पं।
 का १। प्र। यो ११। वे १। स्त्री। क ४। ज्ञा ३। सं १। अ। व २। ले ६। भ २। सं १।
 ६।

मिथ्यात्व। सं २। आ २। उ ५। कु। कु। वि। च। अ॥

तिर्य्यग्योनिमतीनां—गु ५, जो ४ संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताभेदतः प ६ ६ सं, ५ ५ अ सं, प्रा १० ७
 संज्ञि ९ ७ असंज्ञि, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ६ म थु अ कु कु वि, सं २
 २० व दे, द ३ च अ अ, ले ६, भ २, स ५ उ वे मि सा मिथाः, सं २, आ २, उ ९ म थु अ कु कु वि च

अ अ, तत्पर्याप्तानां—गु ५, जो २ सं अ, प ६ ५, प्रा १० सं, ९ अ, सं ४, ग १ ति, इं १ पं, का १ न,
 यो ९, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ६ म थु अ कु कु वि, सं २ अ वे, द ३, ले ६, भ २, स ५ उ वे मि सा
 ६

मिथाः, सं २, आ १, उ ९ स ३ मि ३ द ३, तदपर्याप्तानां—गु २ मि सा, जो २ संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्ती, प ६
 सं
 अ ५ अ, प्रा ७ अ, ७ अ, सं ४, ग १ ति, इं १ पं, का १ न, यो २ मिथ का, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा २
 अ सं अ

कु कु, सं १ अ, द २ अ अ, ले २ क गु, भ २, स २ मि सा, सं २, आ २, उ ४ कु कु च अ, मिथ्या-
 ना ३ अ गु

दुगा—गु १ मि, जो ४ संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्ताः, प ६ ६ संज्ञि, ५ ५ अ संज्ञि, प्रा १० ७ सं, ९ ७ असंज्ञि,
 सं ४, ग १ ति, इं १ पं, का १ न, यो ११, वे १ स्त्री, क ४, ज्ञा ३, सं १ आ, व २, ले ६, भ २, स १
 ६

पंचेन्द्रियतिर्यग्गोनिमतिमिध्रणे । गु १ । मिध्र । जो १ । पं० । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । मिध्र । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

पंचेन्द्रियतिर्यग्गोनिमत्यसंयतंगे । गु १ । अ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । आ ३ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । वे । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

पंचेन्द्रियतिर्यग्गोनिमतिसंपतासंयतंगे । गु १ । वे । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ । स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । आ ३ । वे । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

१० । तिर्यक्पंचेन्द्रियलक्ष्यपप्यतिर्यग्गो । गु १ । मि । जो २ । सं १ । अ । प ६ । प । प्रा ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मिध्र । का । वे १ । वं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । व २ । ले २ । क गु । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥
भा ३ अशु

मनुष्यह चतुर्विधकल्पमप्यह । अल्लि सामान्यमनुष्यग्ये । गु १ । जो २ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो १३ । वैश्विकद्वयपरहितं । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं ७ । व ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ २ । उ १२ ॥

सामान्यमनुष्यपर्याप्तकर्म । गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ॥

ले २ । क गु । भ १ । व १ । सं १ । आ २ । उ ४ । कु कु व अ । मिथानां—गु १ मिध्रं । जो १ सं ५ । प ५ । भा ३ अशुभ

प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले ६ । भ १ । व १ मिध्रं । सं १ । आ १ उ ५ । अर्धयतानां—गु १ अ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले ६ । भ १ । व १ मिध्रं । सं १ । आ १ । उ ६ । संयतासयतानां—गु १

२० । दे । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले ६ । भ १ । व १ मिध्रं । सं १ । आ १ । उ ६ । संयतासयतानां—गु १

२१ । दे । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ स्त्री । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले ६ । भ १ । व १ मिध्रं । सं १ । आ १ । उ ६ । संयतासयतानां—गु १ मि । जो २ सं ५ । भा ३

प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ मिध्र का । वे १ वं । क ४ । ज्ञा २ कु कु । सं १ । व २ । ले २ । क गु । भ २ । व १ मि । सं २ । आ २ । उ ४ । चतुर्विधमनुष्ये सामान्यानां—गु १ । जो २ । भा ३ अशुभ

२५ । प ६ । प्रा १० । उ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो १३ । वैश्विकद्वयं नहि । वे ३ । क ४ । ज्ञा २ । सं ७ । व ४ । ले १ भ २ । व १ । सं १ । आ २ । उ १२ । वृत्तयानां—गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । भा ३

सामान्यमनुष्यसासावनंगे । गु १ सा । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । म ।
 ई १ । पं का १ प्र । यो ११ । वे ३ । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । आव २ । ले ६ । भ १
 सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥

सामान्यमनुष्यसासावनपर्याप्तिकर्मा । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । म ।
 ५ ई १ । पं १ । का १ । प्र । यो ९ । वे ३ । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । आव २ ।
 ले ६ । भ १ । सं १ । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

सामान्यमनुष्यापर्याप्तसासावनंगे । गु १ । सा । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
 सं ४ । ग १ । ई १ । का १ । यो २ । औ । मिथ । फा । वे ३ । क ४ । जा २ । सं १ । आव २ ।
 ले । क । शु । भ १ । सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥
 भा ३ अशुभ

१० सामान्यमनुष्यसम्यग्मिथ्यादृष्टिगे । गु १ । मिथ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । गति १ ।
 म । ई १ । पं । का १ । प्र । यो ९ । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । आव २ । ले ६ । भ १ ।
 सं १ । मिथ । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

सामान्यमनुष्यासंयतगे । गु १ । अ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
 ई १ । का १ । यो ११ । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ ।
 १५ आ २ । उ ६ ॥

सामान्यमनुष्यपर्याप्तिसंयतगे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । ई १ ।
 फा १ । यो ९ । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । आव ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । आ ।
 ६

सासादनानां—गु १ सा । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ म । इ १ पं । का १० व ।
 यो ११ । वे ३ । क ४ जा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले ६ । भ १, स १ सा, सं १ । आ २ । उ ५ ।
 भा ६

२० तत्पर्याप्तानां गु १ सा । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४, ग १ म, ई १ पं । का १ प्र । यो ९ । वे ३ । क
 ४ । जा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले ६, भ १ । स १ सा । सं १, आ १ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु
 भा ६

१ सा । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । ई १ । का १ । यो २ । मि । का । वे ३ । क ४ । म ।
 र । सं १, द २ ले २ क शु, भ १, स १ सा सं १; आ २, उ ५, सम्यग्मिथ्यादृशां—गु १ मि, जी १, प ६,
 भा ३ अशुभ

प्रा १०, सं ४, ग १ म, ई १, का १, यो ९, वे ३, क ४, जा ३, सं १, द २ । ले ६, भ १ स १
 भा ६

२५ मिथ । सं १ । आ १ । उ ५ । असंयतानां—गु १ असं । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग १ । ई
 १ । का १ । यो ११ वे ३, क ४, जा ३, सं १ अ - द ३, ले ६ । भ १, स ३, सं १, आ २; उ ६, तत्-
 पर्याप्तानां—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, ई १ पं, का १, यो ९, वे ३, क ४, जा ३, सं १ अ,

ग १। म। इं १। पं। का १। प्र। यो १। वा मि = ॥ वे १। पुं। क ४। ज्ञा ३। म। थु। वा।
 सं २। सा। छे। द ३। च। अ। अ। ले १। क भ १। सं २। वे ३। शा। सं १। आ १। उ ६।
 भा ३ शु
 म। श्रु। अ। च। अ। अ ॥

सामान्यमनुष्याप्रमत्तगो०। गु १। जि १। प ६। प्रा १०। सं ३। आहारसंज्ञेइल्लेकेवो
 ५ प्रमत्तगो० असातसातावेवोवीरणे व्युच्छित्तियुंष्टपुवरिवं। ग १। इं १। का १। यो ९। वे ३।
 क ४। ज्ञा ४। सं ३। व ३। ले ६। भ १। सं ३। सं १। वा १। उ ७ ॥
 भा ३

मनुष्यसामान्यापूर्वकरणगो०। गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं ३। ग १। इं १। का १।
 यो ९। वे ३। क ४। ज्ञा ४। सं २। सा छे। द ३। ले ६। भ १। सं २। द्वितीयोपसम-
 क्षापिकंगु। सं १। वा १। उ ७ ॥
 भा १ शु

१० सामान्यमनुष्यप्रथमभागानिवृत्तिगो०। गु १। जो १ प ६। प्रा १०। सं २। मे। पा। ग १।
 इं १। का १। यो ९। वे ३। क ४। ज्ञा ४। सं २। सा छे। द ३। ले ६। भ १। सं २।
 उ। क्षा। सं १। वा १। उ ७ ॥
 भा १

द्वितीयभागानिवृत्तिगो०। गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। परिग्रह। ग १। इं १।
 का १। यो ९। वे ०। क ४। ज्ञा ४। सं २। सा छे। द ३। ले ६। भ १। सं २। उ। क्षा।
 १५ सं १। वा १। उ ७ ॥
 भा १

सामान्यमनुष्यतृतीयभागानिवृत्तिगो०। गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। परिग्रह।

१। जो १। प ६। प्रा ७। अ। सं ४। ग १। मं। इं १। पं। का १। वा। यो १। वा मि। वे १। पुं। क ४।
 ज्ञा ३। म थु। अ। सं २। सा छे। द ३। च। अ। अ। ले १। क भ १। सं २। वे ३। शा। सं १। आ १। उ ६। म थु
 भा ३ शु

२० अप्रमत्तानां—गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं ३। आहारसंज्ञा नहि सासासातानुवीरणात्।
 ग १। इं १। का १। यो ९। वे ३। क ४। ज्ञा ४। सं ३। व ३। ले ६। भ १। सं ३। सं १। वा
 १। उ ७। अपूर्वकरणानां—गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं ३। ग १। इं १। का १। यो ९। वे

३। क ४। ज्ञा ४। सं २। सा छे। द ३। ले ६। भ १। सं २। द्वितीयोपसमक्षापिको। सं १। वा १।
 भा १

उ ७। अनिवृत्तिकरणप्रथमभागे—गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं २। मे। पा। ग १। इं १। का १। यो
 ९। वे ३। क ४। ज्ञा ४। सं २। सा छे। द ३। ले ६। भ १। सं २। उ। क्षा। सं १। वा १। उ ७।
 भा १

२५ द्वितीयभागे—गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं १। परिग्रहः। ग १। इं १। का १। यो ९। वे ०।
 क ४। ज्ञा ४। सं २। सा छे। द ३। ले ६। भ १। सं २। उ। क्षा। सं १। वा १। उ ७। तृतीयभागे—
 भा १

सामान्यमनुष्यसयोगकेवलिनो । गु १ । जो २ । प ६ । ६ । प्रा ४ । २ । सं ० । ग १ ।
 इं १ । का १ । यो ७ । म २ । वा २ । बी २ । का १ । वे ० । क ० । ज्ञा १ । सं १ । व १ ।
 ले ६ । भ १ । सं १ । ० । वा २ । उ २ ।
 भा १

सामान्यमनुष्यायोगिकेवलिनो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १ । आयुष्य । सं ० । ग १ ।
 ०५ इं १ । का १ । यो ० । वे ० । क ० । ज्ञा १ । सं १ । व १ । ले ६ । भ १ । सं १ । सं ० ।
 भा ०

अनाहार । उ २ ॥

पर्याप्तमनुष्यो मूलोद्यं वस्तुव्यमककुं । मानुषियगर्गे । गु १४ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
 ७ । सं ४ । ० । संज्ञारहितं । ग १ । इं १ । का १ । यो ११ । ० । अयोगिगळु । वे १ । ० ।
 वेदरहितं । क ४ । कयापरहितं । ज्ञा ७ । म । श्रु । अ । म । के । कु । कु । वि । सं ६ । वा ।
 १० वे । सा । छे । सू । य । व ४ । च । अ । अ । के । ले ६ । लेश्यारहितं । भ २ । सं ६ । सं १ ।
 १० । रहितसंज्ञित्वं । वा २ । उ ११ ॥

मनःपर्ययज्ञानोपयोगरहितं ॥ पर्याप्तमानुषियगर्गे । गु १४ । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
 सं ४ । ० । संज्ञारहितं । ग १ । इं १ । का १ । यो ११ । ० । योगरहितं । वे १ । स्त्री ० ॥
 वेदरहितं । क ४ । ० । कयापरहितं । ज्ञा ७ । सं ६ । व ४ । ले ६ । अलेश्यं । भ २ । सं ६ ।
 १५ सं १ । ० । संज्ञित्वशून्यं । वा २ । उ ११ ॥

सं १ यथास्यातः । द ३ । ले ६ । भ १ । व १ । वा १ । सं १ । वा १ । उ ७ । समोगिजिने—गु १ । जी २ ।

प ६ । प्रा ४ । २ । सं ० । म १ । इं १ । का १ । यो ७ । म २ । वा २ । बी २ । का १ । वे ० । क ० । ज्ञा १ ।
 सं १ । व १ । ले ६ । भ १ । सं १ । सं ० । वा २ । उ २ । अयोगिजिने—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
 भा १

१. आयुष्यं । सं ० । ग १ । इं १ । का १ । यो ० । वे ० । क ० । ज्ञा १ । सं १ । द १ । ले ६ । भ १ ।

२० व १ । सं ० । वा १ । अनाहारः । उ २ । पर्याप्तमनुष्याणां मूलोद्यं वस्तुव्यः । मानुषीणां—गु १४ । जी २ ।
 प ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । शून्यं च । ग १ । इं १ । का १ । यो ११ । शून्यं च । वे १ । क ४ । शून्यं च ।
 ज्ञा ७ । म । श्रु । अ । म । के । कु । कु । वि । सं ६ । अ । वे । सा । छे । सू । य । व ४ । च । अ । अ । के । ले ६ । शून्यं च । भ २ । सं ६ ।
 सं १ । शून्यं च । वा २ । उ ११ । मनुष्यो ज्ञि ।

उत्तरार्धानां—गु १४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । शून्यं च । ग १ । इं १ । का १ । यो ११ ।
 २५ शून्यं च । वे १ । स्त्री शून्यं च । क ४ । शून्यं च । ज्ञा ७ । सं ६ । व ४ । ले ६ । शून्यं च । भ २ । सं ६ । सं १ ।

१. भावद्वीपां ।

सं १। सं १। आ २। उ ५ ॥

मानुषि सासावनपर्याग्निके । गु १। सा । जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो ९। वे १। स्त्री । क ४। ज्ञा ३। सं १। अ । व २। ले ६ भ १। सं १। सं १।
आहा १। उ ५ ॥

५ मानुषिसासावनापर्याग्निके । गु १। सा । जी १। प ६। अ । प्रा ७। अ । सं ४। ग १।
इं १। का १। यो २। वे १। स्त्री । क ४। ज्ञा २। सं १। अ । व २। ले २ क शु । भ १। सं १।
सा । सं १। आ २। उ ॥

भा ३ अशुभ

मानुषिसम्यग्मिथ्यादृष्टिगळो । गु १। मिथ । जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १।
इं १। का १। यो ९। वे १। स्त्री । क ४। ज्ञा ३। सं १। अ । व २। ले ६। भ १। सं १।
६

१० मिथ । सं १। आ १। उ ५ ॥

मानुष्यसंयतसम्यादृष्टिगळो । गु १। अ । जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो ९। वे १। स्त्री । क ४। ज्ञा ३। सं १। अ । व ३। ले ६ भ १। सं ३। सं १।
आ १। उ ६ ॥

मानुषिवेशसंयतगे । गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। का १। इं १। यो
१५ ९। वे १। स्त्री । क ४। ज्ञा ३। सं १। वे । व ३। ले ६ भ १। सं ३। सं १। आ १। उ ६ ॥
भा ३ शुभ

मानुषिप्रमत्तसंयतगे । गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १। का १।
यो ९। वे १। स्त्री । क ४। ज्ञा ३ ॥

क ४। ज्ञा ३ कु कु वि । सं १। द २। ले ६ भ १। स १ सा । सं १। आ २। उ ५। तत्पर्या-

शासावनामा—गु १ सा । जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १। का १। यो ९। वे १ स्त्री । क ४।
२० ज्ञा ३। सं १ अ । द २। ले ६। भ १। स १ सा । सं १। आ १ ॥ उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १ सा । यो

१। प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४। ग १। इं १। का १। यो २। वे १ स्त्री । क ४। ज्ञा २। सं १ अ ।
द २। ले २ क शु । भ १। स १ सा । सं १। आ २। उ ४। सम्यग्मिथ्यादृष्टेः—गु १ मिथ । जी १।
भा ३ अशुभ

प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १। का १। यो ९। वे १ स्त्री । क ४। ज्ञा ३। सं १ अ । द २।
ले ६। भ १। स १ मिथ । सं १। आ १। उ ५। अर्थयत्नानां—गु १ अ । जी १। प ६। प्रा १०।
६

२५ सं ४। ग १। इं १। का १। यो ९। वे १ स्त्री । क ४। ज्ञा ३। सं १ अ । द ३। ले ६। भ १। व
३। सं १। आ १। उ ६। देवसंयतस्य—गु १। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १। का १।

मानुषितृतीयभागानिवृत्तिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे ० । क ३ । मा । या । लो । जा ३ । सं २ । सा । छे । व ३ । ले ६ भ १ ।
भा १
सं २ । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

मानुषिचतुर्व्यभागानिवृत्तिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । ग १ । इं १ ।
५ का १ । यो ९ । वे ० । क २ । या । लो । जा ३ । सं २ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । सं १ ।
भा १
आ १ । उ ६ ॥

मानुषिपंचमभागानिवृत्तिगच्छे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । परिग्रह । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क १ । या = लो । जा ३ । सं २ । सा । छे । व ३ । ले ६
भा १
भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

१० मानुषिसूक्ष्मसांपरायणे । गु १ । सू । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । परिग्रह । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क १ । सू = लो । जा ३ । सं १ । सू । व ३ । ले ६ । भ १ । सं २ ।
भा १
उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ ॥

मानुष्युपजातकषायणे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं । ० । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ९ । वे ० । क ० । जा ३ । सं १ । यया । व ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ ।
भा १

१५ आ १ । उ ६ ॥

तृतीयभागे—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे १ ।
क ३ । मा । या । लो । जा ३ । सं २ । सा छे । व ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । सं १ । आ १ । उ ६ । चतुर्व्य
भा १

भागे—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं १ । परि । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क २ । य
लो । जा ३ । सं २ । सा छे । व ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । सं १ । आ १ । उ ६ । पंचमभागे—गु १ । जी १ ।
भा १

२० प ६ । प्रा १० । सं १ । प । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क १ । या लो । जा ३ । सं २ । सा
व ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ । सूक्ष्मसांपरायणस्य—गु १ । जी १ । प ६ ।
भा १

प्रा १० । सं १ । परिग्रहः । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क १ । सू लो । जा ३ । सं १ । सू । इं १ ।
ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ६ । उपातकषायस्य—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० ।
भा १

सं ० । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे ० । क ० । जा ३ । सं १ । या । व ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । क्षा ।
भा १

देवसामान्यपर्याप्तिकर्गे । गु ४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । वे १ । इं १ ।
का १ । प्र । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ६ । सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ ।
भा ३

आ १ । उ ९ ॥

देवसामान्यापर्याप्तिकर्गे । गु ३ । मि । सा । अ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ ।
५ ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । ज्ञा ५ । मा । थु । अ । कु । कु । सं १ ।
व ३ । ले २ । क । शु । भ २ । सं ५ । उ । वे । क्षा मि । सा । सं १ । आ २ । उ ८ । मा । थु । अ ।
भा ६

कु । कु । च । अ । अ ॥

देवसामान्यमिष्यादृष्टिगर्भे । गु १ । मि । जी २ । प ६ । इं । प्रा १० । ७ । सं ४ ।
ग १ । इं १ । का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । च । अ ।
१० ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ५ । कु । कु । वि । च । अ ॥
भा ६

देवसामान्यमिष्यादृष्टिपर्याप्तिकर्गे । गु १ । मि । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि ।
भा ३

सं १ । आ १ । उ ५ ॥

देवसामान्यापर्याप्तिमिष्यादृष्टिगर्भे । गु १ । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
१५ सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व २ ।
ले २ । क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । ऊ ४ ॥
भा ६

अ अ अ । ले ६ । भ २ । उ ६ । सं १ । आ २ । उ ९ । म थु अ कु कु वि ष अ अ । तत्पर्याप्तानां—
६

गु ४ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । वे १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ५ ।
सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ २ । उ ६ । सं १ । आ १ । उ ९ । तत्पर्याप्तानां—गु ३ मि सा अ जी १
भा ३

२० अ । प ६ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ मि का । वे २ । क ४ । ज्ञा ५ म थु अ कु
कु । सं १ । अ । व ३ । ले २ क शु । भ २ । उ ५ उ वे क्षा मि सा । सं १ । आ २ । उ ८ म थु अ कु
भा ६

कु ष अ अ । मिष्यादृष्या—गु १ मि । जी २ । प ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ । अ । व २ च अ । ले ६ । भ २ । उ १ मि । सं १ ।
भा ६

अ २ । उ ५ कु कु वि ष अ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
२५ का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । उ १ मि । सं १ । आ १ ।
भा ३ गु ३

उ ५ । तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी १ । अ । प ६ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ मि ।

देवसामान्यासंपत्तापर्माप्तिकर्मो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ ।
भा ३
आ १ । उ ६ ॥

देवसामान्यासंपत्तापर्माप्तिकर्मो । गु १ । जी १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
५ इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे १ । पु ० । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व ३ । ले २ क गु
भा ३ गु
भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

भवनप्रयवेवकर्मो । गु ४ । जी २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ६ । सं १ । व ३ । ले ६ । भ २ । सं ५ । उ । वे । मि ।
भा ४
सा । मि । सं १ । प्रा २ । उ ९ । म । थु । अ । कु । कु । वि । च । अ । अ ॥

१० भवनप्रयपर्माप्तिवेवकर्मो । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ ।
यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ६ । म । थु । अ । कु । कु । वि । सं १ । व ३ । ले ६ । भ २ ।
भा १
सं ५ । उ । वे । मि । सा । मि । सं १ । आ १ । उ ९ ॥

भवनप्रयापर्माप्तिवेवकर्मो । गु २ । मि । सा । जी १ । प ६ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । व २ । ले २ क गु भ २ ।
भा ३ अ गु

१५ सं २ । मि । सा । सं १ । आ २ । उ ४ ॥

उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे २ ।
क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । द ३ । ले ६ । भ १ । व ३ । सं १ । आ १ । उ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ जी १
भा ३

अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । यो २ । मि । का । वे १ । पुं । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व ३ ।
ले २ क गु । भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ । भवनप्रयदेवानां—गु ४ । जी २ । प ६ । प्रा १० ।
भा ३ अ गु

२० सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ६ । सं १ । व ३ । ले ६ । भ २ । सं ५ । उ ।
भा ४

मि सा मि । सं १ । आ २ । उ ९ म थु अ कु कु वि च अ अ । तत्पर्याप्तानां—गु ४ । जी १ । प ६ ।
प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ६ म थु अ कु कु वि । सं १ । व ३ ।
च अ अ । ले ६ भ २ । सं ५ उ वे मि सा मि । सं १ । आ १ । उ ९ । तदपर्याप्तानां—गु २ मि सा । जी १ ।
भा ३

अ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । मि । का । वे २ । क ४ । ज्ञा २ । सं १ ।
२५ व २ । ले २ क गु । भ २ । सं २ मि सा । सं १ । आ २ । उ ४ ।
भा ३ अ गु

भवनप्रयसम्यग्मिम्यादृष्टिगळ्णे । गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले ६ । भ १ । सं १ । मिथ्र । सं १ ।
भा १
आ १ । उ ५ ॥

भवननयासंयतर्णे ॥ गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो ९ ।
वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । वे । सं १ । आ १ । उ ६ ॥
भा १

सौधर्मोदानदेवस्कळ्णे । गु ४ । जो २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ६ । सं १ । व ३ । ले ३ । पी । पा । गु । भ २ । स ६ ।
भा १
सं १ । आ २ । उ ९ ॥

सौधर्मद्वयपर्याप्तदेवस्कळ्णे । गु ४ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग १ । इं १ ।
का १ । यो ९ । वे २ । क ४ । ज्ञा ६ । सं १ । व ३ । ले १ । ते । भ २ । सं ६ । सं १ ।
भा १
आ १ । उ ९ ॥

सौधर्मद्वयापर्याप्तदेवस्कळ्णे । गु ३ । मि । सा । अ । जो १ । प ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
सं ४ । ग १ । इं १ । का १ । यो २ । वे २ । क ४ । ज्ञा ५ । कु । कु । म । थु । अ । सं १ ।
द ३ । ले २ । भ २ । सं ५ । उ । वे । क्षा । मि । सा । सं १ । आ २ । उ ८ । म । थु । अ ।
भा १
कु । कु । च । अ । अ ॥

सौधर्मद्वयमिम्यादृष्टिगळ्णे । गु १ । जो २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग १ ।
इं १ । का १ । यो ११ । वे २ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । व २ । ले ३ । भ २ । सं १ । मि ।
भा १
सं १ । आ २ । उ ५ ॥

ले २ क गु भ १, स १ सा, सं १ आ २, उ ४, सम्यग्मिम्याद्दृष्टी—गु १, जी १, प ६, प्रा १०, सं ४, प १,
भा ३ अथु

इं १, का १, यो ९, वे २, क ४, ज्ञा ४, सं १, द २, ले ६, भ १, स १ मिथ्रं, सं १, आ १, उ ५,
भा १

असंयतार्णा—गु १, जो १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १,
द ३, ले ६, भ १, स २ उ वे, सं १, आ १, उ ६, सौधर्मोदानदेवार्णा—गु ४, जो २, प ६, प्रा १० ७,
भा १

सं ४, ग १, इं १, का १, यो ११, वे २, क ४, ज्ञा ६, सं १ व ३, ले ३ पी क गु, भ २, स ६, सं १,
भा १ ते

आ २, उ ९, तल्पपर्याप्तार्णा—गु ४, जो १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे २, क ४,
ज्ञा ६, सं १, द ३ ले १ ते, भ २, स ६, सं १, आ १, उ ९, तल्पपर्याप्तार्णा—गु ३ मि स अ, जी १,
भा १

प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १, इं १, का १, यो २, वे २, क ४, ज्ञा ५ कु कु म थु अ, सं १, द ३,
ले २, भ २, स ५ उ वे धा मि सा, सं १, आ २ उ ८ म थु अ कु कु च अ अ, मिम्याद्दृष्टी—गु १,
भा १

सौधर्मद्वयासंयतगो० गु १। जो २। प ६। ६। प्रा १०। ७। सं ४। ग १। इं १।
का १। यो ११। वे २। क ४। ज्ञा ३। सं १। व ३। ले ३। ते क। गु १। भ १। सं ३। उ।
भा १। ते

वे। क्षा। सं १। आ २। उ ६॥

सौधर्मद्वयपर्याप्तासंयतगो० गु १। जो १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। इं १। का
५। १। यो ९। वे २। क ४। ज्ञा ३। सं १। व ३। ले १। भ १। सं ३। सं १। आ १। उ ६॥
भा १

सौधर्मद्वयापर्याप्तासंयतगो० गु १। जो १। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४। ग १।
इं १। का १। यो २। मि। का। ये १। पु ०। क ४। ज्ञा ३। सं १। व ३। ले २। क। गु
भा १। ते

भ १। सं ३। सं १। आ २। उ ६॥

अपर्याप्तकालबोद्धुपशमसम्यक्त्यमं तु संभविसुगुमे बोद्धे पेठल्पदुगु। श्रेणियिवमवतीर्ण-
१० गच्छे असंयतादिचतुर्गुणस्यानंगच्छे द्वितीयोपशमसम्यक्त्यमुं टप्पुवरिवं अल्लि मध्यमतेजोलेख्ये-
योद्धु कालगोष्ठ्यु सौधर्मद्वयदेवकंठोद्धु उत्पन्नगो० अपर्याप्तकालबोद्धुपशमसम्यक्त्यमं पठेयत्प-
दुगुमेके बोद्धे :-

तिण्हं वोण्हं वोण्हं छण्हं वोण्हं च तेरसण्हं च ।

एत्तो य घोइसण्हं लेस्सा भवणाविदेवाणं ॥

तेऊ तेऊ तह तेउ पम्मा पम्मा य पम्मसुक्का य ।

१५ सुक्का य परमसुक्का लेस्सा भवणाविदेवाणं ॥

इत्याविसूत्रसूचितक्रमादिवमल्लपर्याप्तकालबोद्धुपशमसम्यक्त्यवस्तित्वमरिपल्पदुगु। असंयत-
सम्यग्दृष्टिगे स्त्रोथेदबोद्धु उत्पत्तिसंभविसवे वितु आतंगे पर्याप्ताच्छापमोदे वत्तध्यमवहुमल्लि
क्षायिकसम्यक्त्यमुमिल्लेके बोद्धे देवगतिपोद्धु दर्शनमोहनोपक्षणाभावमप्युवरिवनिते विशेषमरि-
पल्पदुगु ।

२० द २। ले १। ते, भ १, स १। मिश्रं, सं १, आ १, उ ५, असंयतानां—गु १, जो २, प ६। ६, प्रा १०, ७, सं ४,
ग १, इं १, का १, यो ११, वे २, क ४, ज्ञा ३, सं १, व ३, ले ३। ते क। गु, भ १। स ३। उ। वे क्षा, सं १,
भा १। ते

आ २, उ ६, उत्पत्तानां—गु १, जो १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग १, इं १, का १, यो ९, वे २, क ४,
ज्ञा ३, सं १, व ३, ले १, भ १, स ३, सं १, आ १, उ ६, तदपर्याप्तानां—गु १, जो १, प ६। अ, प्रा ७। अ,
भा १

सं ४, ग १, इं १, का १, यो २। मि। का, वे १। पुं, क ४, ज्ञा ३, सं १, व ३, ले २। क। गु। भ १, स ३। सं १,
भा १। ते

२५ आ २, उ ६, वैमानिकेषु द्वितीयोपशमसम्यक्त्यं आरोहकापूर्वकरणप्रथमभागवजितोपशमश्रेण्यारोहकावरोहकाणां
तदवतीर्णचतुरसंयतादीनां च तत्सम्यक्त्यमूढानां तत्तल्लेख्यया तत्रोत्पत्तेरपर्याप्तकाले संभवति, असंयतस्त्रीणामेक-
पर्याप्तच्छाप एव सम्यग्दृष्टीनां तथागुत्पत्तेः, पर्याप्तकर्मभूमिमनुष्याणामेव दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभसंभवेऽपि
तन्निष्ठापर्याप्तानां चतुर्गुणित्पत्तेः, क्षायिकसम्यक्त्यमव संभवतीति विशेषः स्मर्तव्यः ।

इन्द्रियानुवादेऽन्तु मूलोघालापमवकुं । सामान्यैकेन्द्रियंग्रगे पेळल्पडुवल्लि । गु१। मि।
 जो ४। वा। सू = १। प। अ। प ४। ४। प्रा ४। ३। सं ४। ग १। ति। इं १। ए। का ५।
 त्रसरहितमागि योग ३। औदारिक तन्मिधकाम्मर्ण। वे १। पंढ। क ४। ज्ञा २। कु। कु। सं १।
 अ। द १। अचक्षु। ले ६। भ २। सं १। मि। सं १। आ २। उ ३। कु। कु। अचक्षु।
 भा ३ अशुभ

५ सामान्यैकेन्द्रिय पर्याप्तकामे । गु १। मि। जि २। वा ० सू ०। प ४। प्रा ४। ए। का
 उ। आयुः। सं ४। ग १। ति। इं १। ए। का ५॥ त्रसरहितमागि। यो १। औ का वे १। पंढ।
 क ४। ज्ञा २। कु। कु। सं १। अ। द १। अचक्षु ले ६। भ २। सं १। मि। सं १।
 भा ३ अशु
 असंज्ञि। आ। उ ३। कु। कु। अचक्षुदर्शन ॥

१० सामान्यैकेन्द्रियापर्याप्तकामे । गु १। मि। जो २। वा। अ ० सू अ। प ४। अ प्रा ३।
 अ सं ४। ग १। ति इं १। ए। का ५। यो २। मि। का। वे १। प ०। क ४। ज्ञा २। कु। कु।
 सं १। अ। द १। अचक्षु ले २ क शु भ २। सं १। मि। सं १। अ सं १। आ २। उ ३।
 भा ३ अशु
 कु। कु। अच ॥

वादेकेन्द्रियंग्रगे । गु १। मि। जो २। प। अ। प ४। ४। प्रा ४। ३। सं ४। ग १।
 ति। इं १। ए। का ५। यो ३। औ। मि। का। वे १। पं। क ४। ज्ञा २। कु। कु। सं १। अ।
 १५ द १। अ च। ले ६। भ २। सं १। मि। सं १। असंज्ञि। आ २। उ ३ ॥
 भा ३ अशु

वादेकेन्द्रिय पर्याप्तकामे । गु १। मि। जो १। प ४। प्रा ४। सं ४। ग १। ति इं १।
 ए। का ५ यो १। औ काय। वे १। पं। क ४। ज्ञा २। सं १। अ। द १। अ च ले ६ भ २।
 भा ३ अशु
 सं १। मि। सं १। असंज्ञि। आ १। उ ३ ॥

इन्द्रियानुवादे मूलोपः—तत्र सामान्यैकेन्द्रियाणां—गु १ मि, जो ४ वा सू प अ, प ४ ४, प्रा ४ ३,
 २० सं ४, ग १ ति, इं १ ए, का ५ त्रसो नहि, यो ३ औदारिकतन्मिधकाम्मर्णाः, वे १ पं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १
 अ, द १ अ, ले ६ भ २, स १ मि, सं १ अशंती, आ २, उ ३ कु कु अचक्षुः। तल्पपातानां—गु १ मि,
 भा ३ अशु

जो २ वा प गू प, प ४ ए, प्रा ४ ए का उ आयुः, सं ४, ग १ ति, इं १ ए, का ५, त्रसो नहि, यो १ औ,
 वे १ पं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द १ अच, ले ६ भ २, स १ मि, सं १ अशंती, आ १, उ ३ कु कु
 भा ३ अशु
 अचभुदंशनं, तल्पपातानां—गु १ मि, जो २ वा अ मू अ, प ४ अ, प्रा ३ अ, सं ४, ग १ ति, इं १ ए,
 २५ का ५, यो २ मि का, वे १ पं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द १ अच, ले २ क गु, भ २, स १ मि,
 सं १ अशंती, आ २, उ ३ कु कु अच, वादराणां—गु १ मि, जो २ प अ, प ४ ४, प्रा ४ ३, स ४, व १
 ति, इं १ ए, का ५, यो ३ औ मि का, वे १ पं, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द १ अच, ले ६, भ २,
 सं १ अशु

सं १ अशंती, आ २, उ ३, तल्पपातानां—गु १ मि, जो १ प, प ४, प्रा ४, सं ४, ग १ ति, इं १

सूक्ष्मेकेंद्रियाऽप्यर्थात्कर्मणे । गु १ । जी १ । प ४ । अ । प्रा ३ । ए । का । आ । सं ४ । ग १ । इ १ । का ५ । यो २ । मि । का । वे १ । पं ० । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । आ । व १ । अ । व । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ २ । उ ३ ॥
भा ३

इंतु पर्याप्तनामकर्मोदय सहितरस्य सूक्ष्मेकेंद्रिय निवृत्त्यप्यर्थात्कर्मणे आलापप्रयं वेदलपदुत्तु ।

५ सूक्ष्मेकेंद्रियलब्ध्यपर्याप्तनामकर्मोदयसहितगणे ओदे अप्यर्थात्कर्मणे यत्कर्ममशुभमुत्तु सूक्ष्मेकेंद्रियाप्यर्थात्प्राज्ञापवंतश्चकु । यिदोपमित्तल ॥

द्वौद्रियंगळगे । गु १ । मि । जी २ । प । अ । प ५ । ५ । प्रा ६ । सं ४ । ग १ । ति । इ १ । द्वि । का १ । त्र । यो ४ । ओ २ । या १ । का १ । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । आ । व १ । अ । च । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ २ । उ ३ ॥
भा ३ अ शु

१० द्वौद्रियपर्याप्तिकर्मणे । गु १ । जी १ । प ५ । प्रा ६ । सं ४ । ग १ । इ १ । का १ । यो २ । वा १ । का १ । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । आ । व १ । अ । च । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । असंज्ञि । आ १ । उ ३ ॥
भा ३

द्वौद्रियाप्यर्थात्कर्मणे । गु १ । जी १ । अ । प ५ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ । ति । इ १ । द्वौ । का १ । त्र । यो २ । मि । का । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । आ । व १ । आ । च । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ । आ २ । उ ३ ॥
भा ३ अ शु

१५ द्वौद्रियलब्ध्यपर्याप्तगोदे अप्यर्थात्प्राज्ञापं मादलपदुत्तुगे । त्रीन्द्रियंगळगे गु १ । जी २ । प ५ । प्रा ७ । ५ । सं ४ । ग १ । ति । इ १ । त्रि । का १ । त्र यो ४ । ओ २ । वा १ । का । १ । वे १ । पं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । आ । व १ । आ । च । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ । आ २ । उ ३ ॥
भा ३

२० आ १, उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १, जी १, प ४ अ, प्रा ३ ए का आ, सं ४, ग १, इ १, का ५, यो २ मि का, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ च अशु, ले २ क शु, भ २, सं १ मि, सं १ अ, आ १, उ ३ ।
भा ३ अ शु

तल्लब्ध्यपर्याप्ताना तदपर्याप्तवत्, द्वौन्द्रियाणां—गु १ मि, जी २ प अ, प ५ ५, प्रा ६, ४, सं ४, ग १ ति, इ १ द्वौ, का १ त्र, यो ४, ओ २, वाक् १, का १ वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ च अ, ले ६, भ २, सं १ मि, सं १ अ, आ २, उ ३ ।
भा ३ अ शु

२५ सं १ मि, सं १ अ संज्ञी, आ २, उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जी १, प ५, प्रा ६, सं ४, ग १ ति, इ १ द्वौ, का १ त्र, यो २, वा १, का १, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अ च, ले ६, भ २, सं १ मि, सं १ अ, आ २, उ ३ ।
भा ३

सं १ अ, आ १, उ ३ । तदपर्याप्तानां—गु १, जी १, प ५ अ, प्रा ४ अ, सं ४, ग १, इ १, का १, यो २ मि का, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अ च, ले २ क शु, भ २, सं १ मि, सं १, आ २, उ ३ ।
भा ३ अ शु

तल्लब्ध्यपर्याप्तानां तदपर्याप्तवत्, त्रीन्द्रियाणां—गु १, जी २, प ५ ५, प्रा ७ ५, सं ४, ग १ ति, इ १ त्रौ, का १ त्र, यो ४ ओ २ वा १ का १, वे १ पं, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द १ अ च, ले ६, भ २, सं १ मि, सं १ अ, आ २, उ ३ ।
भा ३

गो० जीवहाण्डे

संप्रतितामान्यपंचेंद्रियलक्ष्यपर्याप्तकर्मो० गु१। मि। जो२। संशयसंभ्यपर्याप्तो०
प६। अ। सं५। अ। अ। प्रा७। सं। अ। अ। अ। अ। अ। ग२। ति। मा। इ१। वं। अ।
१। प्रा। यो२। ओमि१। का१। वे१। प०। क४। ज्ञा२। सं१। अ। व२। वा।
ले२। का। यु। भ२। सं१। मि। सं२। आ२। ऊ४॥
५ भा३ अयु

संज्ञिपंचेंद्रियलक्ष्यपर्याप्तकर्मो० गु१। मि। जो१। सं०। अ। प६। अ। प्रा७। अ।
सं४। ग२। ति। मा। इ१। वं। का१। प्रा। यो२। जो। मि। का१। वे१। प०। क४।
ज्ञा२। सं१। अ। व२। ले२। क। यु। भ२। सं१। मि। सं१। संज्ञि। आ२। ऊ४॥
भा३ अयु

असंज्ञिपंचेंद्रियलक्ष्यपर्याप्तकर्मो० गु१। मि। जो१। प५। अ। प्रा७। अ३। य।
१० ग१। ति। इ१। वं। का१। प्रा। यो२। ओमि। का१। वे१। वं। क४। ज्ञा२। सं।
अ। व२। च। अ। ले२। क। यु। भ२। सं१। मि। सं१। असंज्ञि। आ२। उ४॥
भा३ अयु

अनिन्द्रियरगन्त्रो सिद्धगतिर्योऽन्वेत्तयस्कुमेकं दोषे सिद्धरगन्त्रो एकैन्द्रियादिनामकर्म्मोदिक
भावमप्युदरिदमितौन्द्रियमार्गणे समाप्तमावुडु ॥

कायानुवादवोळु। गु१। जो५। १८। ४०। ६। प६। ६। ५। ५। ४। ४। वा। १०।
१५। ७। १। ७। ८। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। ४। २। १। सं४। ग४। इ५। का६। यो। १५।
वे३। क४। ज्ञा८। सं७। व४। ले६। भ२। सं६। सं२। आ२। उ१२॥
६

स१ मि, सं१ अ३ंती, आ२, उ४। पंचेंद्रियलक्ष्यपर्याप्तानां—गु१ मि, जो२ संशयसंभ्यपर्याप्तो, १६
अ, सं५ अ अ, प्रा७ सं अ, उ अ अ, सं४, ग२ ति म, इ१ वं, का१ व, यो२ ओमि१ अ।
वे१ वं, क४, ज्ञा२, सं१ अ, द२ च अ, ले२ क गु, भ२, स१ मि, सं२, आ२, व४।
भा३ अयु

२० तदसंज्ञिनां—गु१ मि, जो१ प५ अ, प६ प, प्रा७ अ अ, सं४, ग२ ति म, इ१ वं, का१ व, यो२ ओमि१ अ।
ओमि का, वे१ वं, क४, ज्ञा२, सं१ अ, द२, ले२ क गु, भ२, स१ मि, सं१ संती, आ२, उ४।
भा३ अयु

तदसंज्ञिनां—गु१ मि, जो१, प१ अ, प्रा७ अ, सं४, ग१ ति, इ१ वं, का१ व, यो२ ओमि१ अ।
वे१ वं, क४, ज्ञा२, सं१ अ, द२ च अ, ले२ क गु, भ२, स१ मि, सं१ अ, आ२, व४।
भा३ अयु

अतीन्द्रियाणां सिद्धगतिवन्। इति इन्द्रियमार्गणा गता।
कायानुवादे—गु१। जो५। १८। ४०। ६। प६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा१०। ७। १७। ८। ६। ७। ६।
६। ४। ४। ३। ४। २। १। सं४। ग४। इ५। का६। यो१५। वे३। क४। ज्ञा८। सं७। व४। ले६। भ२।
६। सं२। आ२। उ१२।

प्रत्येकशरीरवनस्पतिपर्याप्तिकर्मो । गु १ । मि । जी २ । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति ।
इं १ ए । का १ वन । यो १ ओ । वे १ यं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । द १ अच । ले ६ भ २ ।
भा ३

सं १ । मि । सं १ । अ सं । आ २ । उ ३ ॥

प्रत्येकशरीरापपर्याप्तियवनस्पतिर्गो । गु १ मि । जी १ । प ४ । प्रा ३ । अ । सं ४ । ग १ ति ।
इं १ ए । का १ वन । यो २ । मि । का । वे १ यं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व १ । अ च
ले २ क शु भ २ । सं १ मि । सं १ अ । आ २ । उ ३ ॥
भा ३ अ द्यु

इंतु निर्वृत्यपर्याप्तिकर्मो आलापत्रयं पेठत्पट्टुत् । लब्धपर्याप्तिकर्मो यो वै आलापमरकुम-
बुवुं प्रत्येकबादरनिगोदप्रतिष्ठितं गच्छेत्तु पेठदंते वत्तव्यमक्कुं ॥

साधारणवनस्पतिगच्छेत् गु १ मि । जी ८ ॥ नित्यचतुर्गतिबादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्ति ।
१० प ४ । ४ । प्रा ४ । ३ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ वन । यो ३ । ओ २ । का १ । वे १ यं ।
क ४ । ज्ञा २ । सं १ । अ । व १ । अ च ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं १ अ । आ २ । उ ३ ॥
भा ३

साधारणवनस्पतिपर्याप्तिकर्मो । गु १ । मि । जी ४ । नित्यचतुर्गतिबादरसूक्ष्मपर्याप्तिकर्ह ।
प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ वन । यो १ ओ । वे १ यं । क ४ । ज्ञा २ ।
सं १ । अ । व १ । अ च । ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं १ । अ । आ १ । उ ३ ॥
भा ३

११ क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । व १ अच । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ अ सं । आ २ । उ ३ । तत्पर्याप्ताना-
३

गु १ मि । जी २ । प ५ । ४ । प्रा ४ सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो १ ओ । वे १ यं । क ४ ।
ज्ञा २ । सं १ अ । व १ अच । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ अ सं । आ १ । उ ३ । तदपर्याप्तानां—
३

१ । जी २ अ । प ५ । ४ । प्रा ३ अ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो २ मि का । वे १ यं ।
क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । व १ अच । ले २ क शु भ २ । सं १ मि । सं १ अ सं । आ २ । उ ३ ।
३

२० तच्छब्दापर्याप्तानां ननिर्वृत्यपर्याप्तिकर्ह ।

साधारणानां—गु १ मि । जी ८ बादरसूक्ष्मनित्येतरनिगोदाः पर्याप्तपर्याप्ताः । प ४ । ४ । प्रा ४ । ३ ।
सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो ३ ओ २ क १ । वे १ यं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । व १
अच । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ अ । आ २ । उ ३ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी ४ बादरसूक्ष्म-
३

नित्यचतुर्गतिनिगोदाः पर्याप्ताः । प ४ । प्रा ४ । सं ४ । ग १ ति । इं १ ए । का १ व । यो १ ओ । वे १
२१ यं । क ४ । ज्ञा २ । सं १ अ । व १ अच । ले ६ । भ २ । ग १ मि । सं १ अ । आ १ । उ ३ ।
३

मातुर्वेदोडे नाल्कु जीवसमासेगळं सूक्ष्मसाधारणयनस्पतिये वितु यत्कव्यमरकुं । मुञ्जिदंते निम्बिने-
मक्कुं । चतुर्गति निगोदंगळग साधारणयनस्पतिये पेळ्द क्रममेयक्कुं । नित्यनिगोदंगळगुन
क्रममेयक्कुं । अस्तिगुपयोगिगाया :—

पुढयीआदिचउरणं केवळिआहारदेवणि रपंग ।

अपदिट्टिदा ह्रु सध्वे पदिट्टिदंगा ह्वे सेसा ॥

५

प्रसकायंगळगे । गु १४ । जी १० । वि । ति । च सं पं । अ पं । प ६ । ६ । ५ । ५ ।

२ २ २ २ २

प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । २ । १ । सं ४ । ग ४ । इं ४ । वि । ति ।
चा पं । का १ । त्रा । यो १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ ।

आ २ । उ १२ ॥

१० प्रसपर्याप्तकगं । गु १४ । जी ५ । वि । ति । चा । पं । सं । पं । अ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ ।

१ १ १ १ १

८ । ७ । ६ । ४ । १ । सं ४ । ग ४ । इं ४ । वि । ति । चा । पं । का १ । त्रा । यो १ । वे ३ । क ४ ।
ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ । प्रसाप्यप्यस्तिकगं गु ५ ।

मि । सा । अ । प्रा । स । यो । जी ५ । वि । ति । चा । पं । सं । अ सं । प ६ । अ ५ । अ प्रा । ७ ।

१ १ १ १ १

७ । ६ । ५ । ४ । २ । सं ४ । ग ४ । इं ४ । वि । ति । चा । पं । का १ । त्रा । यो ४ । मिथप्र-
१५ काम्मणयोगंगळु । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । म । ध्रु । अ । के । कु । कु । सं ४ । अ । सा । छे ।

साधारणवद् । अनेपयोगिगाया—

पुढयीआदिचउरणं केवळिआहारदेवणिरपंग ।

अपदिट्टिदा ह्रु सध्वे पदिट्टिदंगा ह्वे सेसा ॥१॥

नसकायानां—गु १४ । जी १० । वि । ति । च सं । अ सं । पं ६ । ६ । ५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ ।

२ २ २ २ २

२० ७ । ६ । ४ । ४ । २ । १ । सं ४ । ग ४ । इं ४ । वि । ति । च पं । का १ । त्रा । यो १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ ।
सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ । तत्पर्याप्तानां—गु १४ । जी ५ । वि । ति । च

सं । अ सं । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । ७ । ६ । ४ । १ । सं ४ । ग ४ । इं ४ । वि । ति । च पं । का १ । त्रा । यो १ । वे ३ ।

क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ १२ । तत्पर्याप्तानां—गु ५ । वि

२१ सं । अ प्रसा । जी ५ । वि । ति । च सं । अ सं । प ६ । अ । ५ । अ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । २ । सं ४ । ग ४ ।
इं ४ । वि । ति । च पं । का १ । त्रा । यो ४ । मिथाः ३ । काम्मणः । वे ३ । क ४ । ज्ञा ६ । म । ध्रु । अ । के । कु । कु ।

१ १ १ १

अकार्यरुग्णे । गु० । जो० । प० । प्रा० । सं० ॥ ग१ । सिद्धगति । का० ।
यो० । वे० । क० । ज्ञा० । सं० । व० । ले० । भ० । सं० । शा० । सं० ।
आ० । अनाहार । उ० ॥

प्रसलभ्यपर्याप्तारुगे । गु१ । मि । जो५ । वि । ति । चा । पं । अ । प६ । प५ । प्रा० ।
१ । १ । १ । १ ।
५ । ७ । ६ । ५ । ४ । सं । ४ । ग२ । ति । मा । इं । ४ । वि । ति । चा । पं । का । १ । प्रा । यो । २ । जो
१ । १ । १ । १ ।
मि । का । १ । वे । १ । पं । क । ४ । ज्ञा । २ । सं । १ । अ । व । च । ज । ले । २ । क । नु । भ । २ । सं । १ । मि ।
भा । ३ । अ । नु ।
सं । २ । आ । २ । उ । ४ । इ । नु । का । य । मार् । ग । णे । समा । प्त । मा । नु । ॥

योगानुवादवोळ् मूलोधनंगमशकुं । विशेषमानुवेवोडे प्रयोदशगुणस्थानंगळणुयु । मनोनि
गळ्णे । गु१३ । जो१ । पं० । प१ । प६ । प्रा१० । सं४ । ग४ । इं१ । का१ । प्रा । यो । ४ ।
१० । नाल्कं । मनोयोग । वे३ । क । ४ । ज्ञा । ८ । सं । ७ । व । ४ । ले । ६ । भ । २ । सं । ६ । सं । १ ।
भा । ६ ।
आ१ । उ१२ ॥

मनोयोगिमिव्याट्टिगळ्णे । गु१ मि । जो१ । प६ । प्रा१० । सं४ । ग४ । इं१ ।
का१ । यो४ । नाल्कं । मनोयोगंगळ् । वे३ । क । ४ । ज्ञा३ । सं१ । अ । व२ । ले६ । भ२ ।
भा६ ।
सं१ । मि । सं१ । आ१ । उ५ ॥

१५ । मनोयोगिसादादनंगे । गु१ । सा । जो१ । प६ । प्रा१० । सं४ । ग४ । इं१ । पं ।
का१ । प्रा । यो४ । मनोयोगंगळ् । वे३ । क । ४ । ज्ञा३ । कु । कु । वि । सं१ । आ । व२ ।
ले६ । भ१ । सं१ । सासा । सं१ । आ१ । उ५ ॥

आ२ । उ४ । सासादानाद्योगांवेयु मूलोधवत्, अकार्यानां—गु०, जो०, प०, प्रा०, सं० ग१ सिद्धगति,
इ०, का०, यो०, वे०, क०, ज्ञा० के, सं० द० ले०, भ० । सं० १ शा, सं० आ१ अनाहार, उ०, उल्लभ्य-
२० पर्याप्तानां—गु१, जो५ वि ति व सं अ प६, ५ अ, प्रा७, ७, ६, ५, ४, सं४, ग२ ति म, इं४
१ । १ । १ । १ ।

वि ति च पं । का१ व, यो२ यो मि । का१, वे१ पं, क४, ज्ञा२, सं१ अ, द२ च अ, ले२ क म् ।
१ । १ । १ । १ ।
भा३ अ नु ।

भ२ । सं१ मि । सं२ । आ२ । उ४ । कायमार्गणा गता ।

योगानुवादे मूलोपः किनु गुणस्थानानि त्रयोदशैव, मनोयोगिनां—गु१३, जो१, पं५, प६, प्रा१०,
सं४ । ग४, इं१, का१ व, यो४ म, वे३, क४, ज्ञा८, सं७, व४, ले६ भ२, स६, सं१ आ१,
६ ।

२५ । उ१२ । तन्मिव्याट्टा—गु१ मि, जो१, प६, प्रा१०, सं४, ग४, इं१, का१, यो४ म, वे३, क४,
ज्ञा३, सं१ अ, द२ ले६ भ२, सं१ मि, सं१, आ१, उ५ । तत्सादादनस्य—गु१ सा, जो१, प६,
६ ।

प्रा१० । सं४ । ग४ । इं१ पं, का१ व । यो४ म । वे३ । क४ । ज्ञा३ कु कु वि । सं१ अ ।

असत्यमनोयोगिगच्छो । गु १२ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ ।
 यो १ । असत्यमनोयोग वे ३ । क ४ । जा ७ । कु । कु । वि । म । थु । अ । म । सं ७ । जा ३ ।
 सा । छे । प । सू । यया । द ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । मि । सा । मि । उ । वे । सा । सं १ ।
 भा ६

आ १ । उ १० ॥

५ मिय्यादृष्टिप्रभृतिशोणरूपायपर्वंतमसत्यमनोयोगिगच्छमुभयमनोयोगिगच्छं स्वस्वयोगने
 यत्कथ्यमस्त्वं इति विशेषमस्त्वं ॥

वाग्योगिगच्छो । गु १३ । जो ५ । बि । ति । घ । सं । अ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । ८ ।
 ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ४ । का १ । प्र । यो ४ । यचनयोगंगच्छ । वे ३ । क ४ । जा ८ ।
 सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । प्रा १ । उ १२ ॥

६

१० वाग्योगिमिय्यादृष्टिगच्छो । गु १ । मि । जो ५ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ ।
 सं ४ । ग ४ । इं ४ । का १ । प्र । यो ४ ॥ वाग्योगंगच्छ । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । अ ।
 व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

६

सासावनप्रभृतिसयोगकेवलपर्यंत मनोयोगिभंगं यत्कथ्यमस्त्वं । विशेषमिदु नाल्लुवाग्यो
 गंगच्छं यत्कथ्यमस्त्वं । सयोगरिगं एल्लेल्लि मनोयोगं येत्तल्पट्टुवल्लिल्लि वाग्योगं यत्कथ्यमस्त्वं ॥

१५ काययोगिगच्छो । गु १३ । जो १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ ।
 ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ८ । ३ । ४ । २ ॥ सयोगिकेवलि । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ ।
 यो ७ ॥ काययोगंगच्छ । वे ३ । क ४ । जा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ ।
 आ २ । उ १२ ॥

६

असत्यमनोयोगिनां—गु १२ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १

२० असत्यमनः । वे ३ । क ४ । जा ७ । कु कु वि म थु अ म । सं ७ । अ वे सा छे प सू यया । द ३ । ले ६ । भ २ ।

६

स ६ । मि सा मि उ वे शा । सं १ । आ १ । उ १० । तन्मिय्यादृष्ट्यादिशोणकपायांतं योग्यं । उभयमनो-
 योगिनामप्येवं । स्वस्वयोग एव यत्कथ्यः ।

वाग्योगिनां—गु १३ । जो ५ । बि ति च सं अ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ ।
 सं ४ । ग ४ । इं ४ । का १ । प्र । यो ४ । वा । वे ३ । क ४ । जा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ ।

६

२५ स ६ । सं २ । आ १ । उ १२ । तन्मिय्यादृष्ट्यां—गु १ । मि । जो ५ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ ।
 ६ । सं ४ । ग ४ । का १ । प्र । यो ४ । वा । वे ३ । क ४ । जा ३ । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ ।

६

स १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ । सासावनादिष्योगांतं मनोयोगिवत् किंतु योगस्त्वाने वाग्योगो यत्कथ्यः ।

काययोगिनां—गु १३ । जो १४ । प ६ । ६ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ४ । ३ । ४ । २ ।
 सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ७ । कायस्वा । वे ३ । क ४ । जा ८ । सं ७ । द ४ । ले ६ । भ २ । व ६ ।

६

काययोगि अपूर्वकरणप्रभृतिक्षीणकपायपर्यंतं काययोगिगर्भे मूलीघनंगमश्कं । विशेष-
 मानुर्वेदोऽर्धे औदारिककाययोगिने यत्कथ्यमकं । काययोगि सयोगकेवलिगर्भे । गु १ । सके ।
 जो २ । प । अ । प । प । प्रा ४ । २ । सं । ० । ग १ । म । इ १ पं । का १ । त्र । यो ३ ।
 ओ २ । का १ । वे ० । क ० । ज्ञा १ । के । सं १ । यया । व १ के । ले ६ भं १ । सं १ । क्षा ।
 भा १ ।

५ सं । ० । आ २ । उ २ । के । के ॥

औदारिककाययोगिगर्भे । गु १३ । जो ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ ।
 ४ । ४ । सं ४ । ग २ । म । ति । इ ५ । का ६ । यो १ । ओ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ ।
 व ४ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ १ । उ १२ ॥

औदारिककाययोगिमिथ्यादृष्टिगर्भे । गु १ । मि । जो ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ ।
 ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग २ । ति । म । इ ५ । का ६ । यो १ । ओ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ ।
 अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

औदारिककाययोगितासादनंगे । गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग २ । म । ति ।
 इ १ । पं । का १ । त्र । यो १ । ओ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ व २ । ले ६ । भ १ ।
 सं १ । सासा । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

औदारिककाययोगिसम्पग्मिथ्यादृष्टिगर्भे । गु १ मिथ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग २ । ति । म । इ १ । पं । का १ । त्र । यो १ । ओ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ । व २ ।
 ले ६ । भ १ । सं १ । मिथ । सं १ । आ १ । उ ५ ॥

ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ १ । उ ७ । अर्धेऽपूर्वकरणात् क्षीणकपायपर्यंतं मूलीघवत् किनु औदारिक-
 योग एव वक्तव्यः ।

२० सयोगकेवलिनो—गु १ सा, जो २ प अ, प ६ ६, प्रा ४ २ सं ०, ग १ म, इ १ पं, का १ त्र,
 यो ३ ओ २ वा १, वे ० क ०, ज्ञा १ के, सं १ यया, द १ के, ले ६ । भ १ सं १ क्षा, सं ०, आ २,
 उ २ के के । औदारिकयोगिना—गु १३, जो ७ प, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, ४, सं ४, ग २

म ति, इ ५, का ६, यो १ ओ, वे ३, क ४, ज्ञा ८, सं ७, द ४, ले ६ । भ २, सं ६, सं २, आ १,
 उ १२ । तन्मिथ्यादुगा—गु १ मि, जो ७, प ६ ५ ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४, ग २ ति म, इ ५,
 का ६, यो १ ओ, वे ३, क ४, ज्ञा ३, सं १ अ, द २, ले ६ । भ २, सं १ मि, सं २, आ २, उ ५ ।
 भा १

२५ तन्मिथ्यादुगा—गु १, जो १, प ६, प्रा १०, सं ४, ग २ म ति, इ १ पं, का १ त्र, यो १ ओ, वे ३,
 क ४, ज्ञा ३, सं १ अ व २, ले ६, भ १, ग १ सा, सं १, आ १, उ ५, सम्पग्मिथ्यादुगा—गु १ मिथ,

भा १

सं १। अ। व २। ले १ क। भ १। सं १। सासा। सं १। आ १। उ ४॥
भा ६

वैक्रियिकमिथकाययोगि असंयतराम्पशुष्टिगन्धे। गु १। जी १। अ। प ६। ज। प्रा ७।
अ। सं ४। ग २। न वे। इ १। पं। का १। यो १। वै मि। वे २। वं पुं। क ४। जा ३। म।
श्रु। अ। सं १। अ। व ३। ले १ क। भ १। सं ३। उ। वे। क्षा। सं १। आ १। उ ६॥
भा ४

५ आहारककाययोगिगन्धे। गु १। प्र। जी १। प ६। प्रा १०। सं ४। ग १। म। इ १।
पं। का १। यो १। आ का। वे १ पुं। क ४। जा ३। म। श्रु। अ। सं २। सा। छे। व ३।
ले १ गु १। भ १। सं २। वे। क्षा। सं १। आ १। उ ६॥
भा ३

आहारकमिथकाययोगिगन्धे। गु १। जी १। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४। ग १।
म। इ १। पं। का १। यो १। आ मि। वे १। पुं। क ४। जा ३। म। श्रु। अ। सं २। सा।
१० छे। व ३। च। अ। अ। ले १ क। भ १। सं २। वे। क्षा। सं १। आ १। उ ६॥
भा ३ शु

कार्मणकाययोगिगन्धे। गु ४। मि। सा। अ। सयो। जी ७। अ। प ६। अ ५। व ४।
अ। प्रा ७। उ। ६। ५। ४। ३। २। सं ४। इ ५। का ६। यो १। का। वे ३। क ४। जा ६।
कु। कु। म। श्रु। अ। के। सं २। अ। यया। व ४। च। अ। अ। के। ले १ गु १। भ २।
सं ५। मि। सा। उ। वे। क्षा। सं २। आ १। अनाहार। उ १०॥
भा ६

१५ कार्मणकाययोगिमिथ्याहृष्टिगन्धे। गु १। मि। जी ७। अ। प ६। ५। ४। अ। प्रा ७।
उ। ६। ५। ४। ३। सं ४। ग ४। इ ५। का ६। यो १। का। वे ३। क ४। जा २। कु। कु।

द २, ले १ क। भ १, सं १ सा। सं १, आ १, उ ४।
भा ६

तदसंयतानां—गु १ अ। जी १ अ। प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग २ न वे, इ १ पं, का १ य, यो
१ वै मि, वे २ वं पुं, क ४, जा ३ म श्रु अ, सं १ अ। द ३, ले १ क। भ १। सं ३, उ वे क्षा,
भा ४ गु ३ क १

२० सं १, आ १, उ ६। आहारकयोगिना—गु १ प्र, जी १। प ६, प्रा १०, सं ४, ग १ म, इ १ पं, का
१ य। यो १ आ, वे १ पु, क ४, जा ३ म श्रु अ, सं २ सा छे, द ३, ले १ गु, भ १, सं २ वे क्षा, सं १,
भा ३

आ १, उ ६। तन्मिथयोगिनां—गु १ प्र, जी १, प ६ अ, प्रा ७ अ, सं ४, ग १ म, इ १ पं, का १ य,
यो १ आ मि, वे १ पुं, क ४, जा ३ म श्रु अ, सं २ सा छे, द ३ च अ अ, ले १ क। भ १, सं २ वे क्षा,
भा ३

सं १ आ १, उ ६। कार्मणयोगिनां—गु ४ मि सा अ स, जी ७ अ, प ६ अ, ५ अ, ४ अ, प्रा ७, उ, ६,
२५ ५, ४, ३, २, सं ४, ग ४, इ ५, का ६, यो १ का, वे ३, क ४, जा ६ कु कु म श्रु अ के, सं २ अ य,
द ४ च अ अ के, ले १ गु १, भ २, सं ५ मि सा उ वे क्षा, सं २, आ १ अनाहार, उ १०। तन्मिथ्यादुषां—
भा ६

गु १ मि, जी ७ अ, प ६ ५ ४ अ, प्रा ७ उ ६ ५ ४ ३, सं ४, ग ४, इ ५, का ६, यो १ का, वे ३,

स्त्रीवेदिवर्ष्याप्तकर्म० गु ९। जी २। सं ॥ अ। प।
 ति। म। दे। इं १। पं। का १ प्र। धो १०। म ४।
 जा ६। कु। कु। वि। म। श्रु। अ। सं ४। अ। दे। सा।
 भ २। सं ६। मि। सा। मि। उ। ये। क्षा। सं २। आ १।

५ स्त्रीवेदिवर्ष्याप्तकर्म० गु २। मि। सा। जी २।
 अ प्रा ७। ७। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। पं।
 का १। वे १। स्त्री। क ४। जा २। कु। कु। सं १। आ ६।
 सं २। मि। सा। सं २। आ २। उ ४। कु। कु। च। अ ॥

१० स्त्रीवेदिवर्ष्यादृष्टिगच्छो। गु १। मि। जी ४।
 ६। ५। ५। प्रा १०। ७। ९। ७। सं ४। ग ३। ति। म। दे।
 आहारकण्डपरहित वे १। स्त्री। क ४। जा ३। कु। कु। वि।
 भ २। सं १। मि। सं २। आ २। उ ५ ॥

१५ स्त्रीवेदिवर्ष्यादृष्टिपर्व्याप्तकर्म० गु १। जी २।
 प्रा १०। ९। सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। पं। का १ प्र
 वे १। वे १। स्त्री। क ४। जा ३। कु। कु। वि। सं १। अ सं ६
 सं १। मि। सं २। आ १। उ ५ ॥

स्त्रीवेदिवर्ष्यादृष्टिअपर्व्याप्तकर्म० गु १। मि। जी २।
 ५। अ। प्रा ७। ७। सं ४। ग ३। ति। म। इं १। पं। का १ प्र।

२० तत्पर्याप्ताना—गु ९। जी २ सं अ। प ६ ५। प्रा १० ९। सं ४। ग ३।
 यो १० म ४ व ४ धो १ वे १। वे १ स्त्री। क ४। जा ६ कु कु वि म श्रु
 च अ अ। ले ६। भ २। स ६ मि सा मि उ वे क्षा। सं २। आ १। उ

सा। जी २ संयसंयपर्याप्तो। प ६ ५ अ। प्रा ७ ७। सं ४। ग ३ ति म दे
 ३ धीमि वंमि का। वे १ स्त्री। क ४। जा २ कु कु। सं १ अ। द २ च अ।

२५ मि सा। सं २। आ २। उ ४ कु कु च अ। तन्मिष्यादृशा—गु १ मि। जी ४
 ६ ६ ५ ५। प्रा १० ७ ९ ७। सं ४। ग ३ म ति दे। इं १ पं। का १ प्र। यो।
 वे १ स्त्री। क ४। जा ३ कु कु वि। सं १ अ। द २। ले ६। भ २। स १ मि

तत्पर्याप्ताना—गु १ मि। जी २ संयसंयपर्याप्तो। प ६ ५। प्रा १० ९। सं ४।
 का १ प्र। यो १० म ४ व ४ धो १ वे १। वे १ स्त्री। क ४। जा ३ कु कु वि।
 म ६। भ २। स १। सं २। आ १। उ ५। तत्पर्याप्ताना—गु १ मि। जी २

स्त्रीवेदिपर्याप्तकर्मो । गु १ । जी २ । सं । अ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । सं ४ । ग ३ ।
 ति । म । दे । इं १ । पं । का १ त्र । यो १० । म ४ । व ४ । जी वै । वे १ । स्त्री । क ४ ।
 जा ६ । कु । कु । वि । म । श्रु । अ । सं ४ । अ । दे । सा । छे । व ३ । च । अ । अ । ले ६ ।
 भ २ । सं ६ । मि । सा । मि । उ । वे । क्षा । सं २ । आ १ । उ ९ ॥

५ स्त्रीवेदिपर्याप्तकर्मो । गु २ । मि । सा । जी २ । संज्यसंज्यपर्याप्तक । प ६ । ५ ।
 अ प्रा ७ । ७ । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । पं । का १ त्र । यो ३ । ओमि १ । वै मि ।
 का १ । वे १ । स्त्री । क ४ । जा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ । च । अ । ले २ क गु । भ २ ।
 सं २ । मि । सा । सं २ । आ २ । उ ४ । कु । कु । च । अ ॥
 भा ३ अ यु

१० स्त्रीवेदिमिव्यादृष्टिगळो । गु १ । मि । जी ४ । संज्यसंज्यपर्याप्तिकापर्याप्तक । प ६ ।
 ६ । ५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । पं । का १ त्र । यो १३ ।
 आहारकद्वयरहित वे १ । स्त्री । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । सं । व २ । ले ६ ।
 भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ५ ॥

१५ स्त्रीवेदिमिव्यादृष्टिपर्याप्तकर्मो । गु १ । जी २ । संज्यपर्याप्तिसंज्यपर्याप्तक । प ६ । ५ ।
 प्रा १० । ९ । सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । पं । का १ त्र । यो १० । म ४ । व ४ । जी ।
 वै । वे १ । स्त्री । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । सं । व २ । च । अ । ले ६ । भ २ ।
 सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

स्त्रीवेदिमिव्यादृष्टिअपर्याप्तकर्मो । गु १ । मि । जी २ । संज्यपर्याप्तिसंज्यपर्याप्ति । प ६ ।
 ५ । अ । प्रा ७ । ७ । सं ४ । ग ३ । ति । म । इं १ । पं । का १ त्र । यो ३ । ओ । मि । वे मि ।

२० तत्पर्याप्तानां—गु १ । जी २ सं अ । प ६ ५ । प्रा १० ९ । सं ४ । ग ३ ति म दे । इं १ पं । का १ त्र ।
 यो १० म ४ व ४ ओ १ वै १ । वे १ स्त्री । क ४ । जा ६ कु कु वि म श्रु अ । सं ४ अ दे सा छे । द ३
 च अ अ । ले ६ । भ २ । स ६ मि सा मि उ वे सा । सं २ । आ १ । उ ९ । तदपर्याप्तानां—गु २ मि

सा । जी २ संज्यसंज्यपर्याप्तो । प ६ ५ अ । प्रा ७ ७ । सं ४ । ग ३ ति म दे । इं १ पं । का १ त्र । यो
 ३ ओमि वैमि का । वे १ स्त्री । क ४ । जा २ कु कु । सं १ अ । द २ च अ । ले २ क गु । भ २ । सं २
 भा ३ अ गु

२५ मि सा । सं २ । आ २ । उ ४ कु कु च अ । तन्मिव्यादृशा—गु १ मि । जी ४ संज्यसंज्यपर्याप्तानां । प
 ६ ६ ५ ५ । प्रा १० ७ ९ ७ । सं ४ । ग ३ म ति दे । इं १ पं । का १ त्र । यो १३ आहारकद्वयानावाव ।
 वे १ स्त्री । क ४ । जा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ । ले ६ । भ २ । स १ मि । सं २ । आ २ । उ ५ ।

६ तत्पर्याप्तानां—गु १ मि । जी २ संज्यसंज्यपर्याप्तो । प ६ ५ । प्रा १० ९ । सं ४ । ग ३ ति म दे । इं १ पं ।
 का १ त्र । यो १० म ४ व ४ ओ १ वै १ । वे १ स्त्री । क ४ । जा ३ कु कु वि । सं १ अ । द २ च अ ।
 म ६ । भ २ । सं १ । सं २ । आ १ । उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि । जी २ संज्यसंज्यपर्याप्तो ।

पुंवेदिमिव्याहृष्टिगण्डो । गु १ । मि । जो ४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७
 सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । ई १ । पं । का १ प्र । यो १३ । आहारद्वपरहित । वे १ । पुं । क ४
 जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ५ ।

पुंवेदिमिव्यावृष्टिपय्यामिकं । गु १ । मि । जो २ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । सं ४ । ग ३
 ५ ति । म । दे । ई १ । का १ । यो १० । म ४ । व ४ । ओ १ । वे १ । वे १ । पुं । क ४ । जा ३ ।
 कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

पुंवेदिमिव्याहृष्टिअपय्यामिकं । गु १ । मि । जो २ । प ६ । ५ । अ । प्रा ७ । ७ । सं ४ ।
 ग ३ । ति । म । दे । ई १ । का १ । यो ३ । ओमि । वेमि । का । वेव १ । पुं । क ४ । जा २ ।
 सं १ । अ । व २ । ले २ क शु । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥
 भा १

१० पुंवेदिसासादनप्रभृति प्रयमानिवृत्तिपय्यंतं मूलोपभंग वक्तव्यमवकुमल्लि विशेषमापुवेदोऽः
 सर्वत्र पुंवेदमोदे वक्तव्यमवकुं । सासादनमिभासंयतये गतित्रयं यक्तव्यमवकुं । वेगसंयतगे गति-
 द्वयं वक्तव्यमवकुंमन्वत्र विशेषमिल्ल । नपुंसकवेदिगण्डो । गु ९ । जो १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ ।
 ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ३ । न । ति । म ।
 ई ५ । का ६ । यो १३ । आहारद्वपरहित । वे १ पं । क ४ । जा ६ । कु । कु । वि । म । धु । अ ।
 १५ सं ४ । अ । दे । सा । छे । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ ५ ॥

नपुंसकवेदिपय्याप्तिकं । गु ९ । जो ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ ।
 सं ४ । ग ३ । न । ति । म । ई ५ । का ६ । यो १० । म ४ । व ४ । ओ १ । वे १ । वे १ पं ।

तन्मिव्यादृशा—गु १ मि, जो ४, प ६, ६, ५, ५, प्रा १०, ७, ९, ७, सं ४, ग ३ ति म, दे,
 ई १ पं, का १ प्र, यो १३ आहारकद्वयं नहि, वे १ पुं, क ४, जा ३ कु कु वि, सं १ अ, व २, ले ६, भ २,

२० स १ मि, सं २, आ २, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जो २, प ६ ५, प्रा १०, ९, सं ४, ग ९ ति म
 दे, ई १ का १ प्र, यो १० म ४ व ४ ओ व, वे १ पु, क ४, जा ३ कु कु वि, सं १ अ, व २, ले ६, भ २,

स १ मि, सं २, आ २, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जो २, प ६, ५, अ, प्रा ७, ७, सं ४, ग ३ ति
 म दे, ई १ पं, का १, यो ३ ओमि वेमि का, वे १ पुं, क ४, जा २, सं १ अ, व २ । ले २ क शु, भ २,
 भा ६

२५ सासादनमिभासंयतानां गतित्रयं । देवसंयतस्य गतिद्वयं, अन्यत्र विशेषो नास्ति ।
 नपुंसकवेदिनां—गु ९ । जो १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ ।

७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४, ग ३ न ति म, ई ५, का ६ । यो १३ आहारद्वयाभावात् । वे १ पं, क ४,
 जा ६ कु कु वि म धु अ, सं ४ अ दे सा छे, द ३ अ अ अ, ले ६ भ २, स ६, सं २, आ २, उ ९ । तदपर्या-
 प्तानां—गु ९, जो ७, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४ । ग ३ न ति म, ई ५, का ६, यो

पुवेदिमिव्याहृष्टिगङ्गो । गु १ । मि । जो ४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७
 सं ४ । ग ३ । ति । म । दे । इं १ । पं । का १ । यो ३ । आहारद्वयरहित । वे १ । पुं । क ४ ।
 ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ५

पुवेदिमिव्याहृष्टिपर्व्याप्तिकंगे । गु १ । मि । जो २ । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । सं ४ । ग ३
 ५ ति । म । दे । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । व ४ । ओ १ । वे १ । वे १ । पुं । क ४ । ज्ञा ३
 कु । कु । वि । सं १ । अ । द २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ १ । उ ५ ॥

पुवेदिमिव्याहृष्टिअपर्व्याप्तिकंगे । गु १ । मि । जो २ । प ६ । ५ । अ । प्रा ७ । ७ । सं ४ ।
 ग ३ । ति । म । दे । इं १ । का १ । यो ३ । ओमि । वैमि । का । वेव १ । पुं । क ४ । ज्ञा २ ।
 सं १ । अ । व २ । ले २ क गु । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥
 भा १

१० पुवेदिसासादनप्रभृति प्रयमानिवृत्तिपर्व्यंतं मूलौघमंग वक्तव्यमक्कुमल्लि विशेषमायुदेवोढे :
 सर्वत्र पुवेदमो वे वक्तव्यमक्कुं । सासादनमिधासंयतर्षे गतिप्रयं वक्तव्यमक्कुं । देगसंयतर्षे गति-
 द्वयं वक्तव्यमक्कुमन्यत्र विशेषमिल्ल । नपुंसकवेदिगङ्गो । गु ९ । जो १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ ।
 ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ३ । न । ति । म ।
 इं ५ । का ६ । यो १३ । आहारद्वयरहित । वे १ पं । क ४ । ज्ञा ६ । कु । कु । वि । म । धु । अ ।
 १५ सं ४ । अ । वे । सा । छे । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ ९ ॥

नपुंसकवेदिपर्व्याप्तिकंगे । गु ९ । जो ७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ । ४ ।
 सं ४ । ग ३ । न । ति । म । इं ५ । का ६ । यो १० । म ४ । व ४ । ओ १ । वे १ । वे १ पं ।

तन्मिव्यादुया—गु १ मि, जो ४, प ६, ६, ५, ५, प्रा १०, ७, ९, ७, सं ४, ग ३ ति म दे,
 इं १ पं, का १ न, यो १३ आहारकद्वयनेदि, वे १ पुं, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६, भ २,

२० ग १ मि, सं २, आ २, उ ५ । तदपर्व्याप्ताना—गु १ मि, जो २, प ६ ५, प्रा १०, ९, सं ४, ग ९ डि म दे,
 इं १ पं, का १ न, यो १० म ४ व ४ ओ दे, वे १ पु, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द २, ले ६, भ २,

ग १ मि, सं २, आ २, उ ५ । तदपर्व्याप्ताना—गु १ मि, जो २, प ६, ५, अ, प्रा ७, ७, सं ४, ग ३ डि
 म दे, इं १ पं, का १, यो ३ ओमि वैमि का, वे १ पु, क ४, ज्ञा २, सं १ अ, द २ । ले २ क गु, भ २,
 भा ६

ग १ मि, भ २, आ २, उ ४ । तन्मासादनान् प्रयमानिवृत्तिपर्यंतं मूलौघः अत्र सर्वत्र पुवेदो वक्तव्य-
 २५ मासादनमिधार्थं नाना गतिप्रयं । देगसंयतस्य गतिद्वयं, अन्यत्र विशेषो नास्ति ।
 नपुंसकवेदिना—गु ९ । जो १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ ।

३ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४, ग ३ न डि म, इं ५, का ६ । यो १३ आहारद्वयमाभा । वे १ पं, क ४,
 ज्ञा ६ कु कु वि म धु अ, सं ४ व दे मा छे, द ३ अ अ अ, ले ६ न २, सं ६, सं २, आ २, उ ९ । तदपर्व्या-
 ६

प्ताना—गु ९, जो ७, प ६, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४ । ग ३ न डि म, इं ५, का ६, यो

पां क४। जा२। सं१। अ। व२। ले२ क शु। भ२। सं१ मि। सं२। आ२। उ४।
भा३ अशु

नपुंसकसासादनर्गे। गु१। जी२। प६। ६। प्रा१०। ७। सं४। ग३। न। ति। म।
इं१। पां। का१। त्र। यो१२। म४। व४। ओ२। वे१। काम्मंण का१। वे१ नपुं। क४।
जा३। कु। कु। वि। सं१। अ। व२। च। अ। ले६। भ१। सं१। सासा। सं१।
५ आ२। उ५॥

नपुंसकवेदिसासादनपर्ष्याप्तिकंगे। गु१। सा। जी१। प६। प्रा१०। सं४। ग३।
न। ति। म। इं१। पां। का१। त्र। यो१०। म४। व४। ओ१। वे१। वे१ नपुं।
क४। जा३। कु। कु। वि। सं१। अ। व२। ले६। भ१। सं१। सा। सं१।
आ१। उ५॥

१० नपुंसकवेदिसासादनापर्ष्याप्तिकंगे। गु१। सासा। जी१। अ। प६। अ। प्रा७। अ।
सं४। ग२। ति। म। इं१। का१। यो२। ओ मि। का। वे नपुं। क४। जा२। कु। कु।
सं१। अ। व२। च। अ। ले२ क शु। भ१। सं१। सासा। सं१। आ२। उ४॥
भा३ अशु

नपुंसकवेदिसाम्यग्मिव्यादृष्टिगज्जगे। गु१। मिथ। जी१। प६। प्रा१०। सं४। ग३।
न। ति। म। इं१। पां। का१। त्र। यो१०। म४। व४। ओ का। ये का। वे१ नपुं। क४।
१५ जा३ कु। कु। वि। सं१। अ। व२। च। अ। ले६। भ१। सं१ मिथ। सं१। आ१।
उ५॥

यो३ ओमि वैमि का, वे१ पां, क४, जा२, सं१ अ, द२, ले२ क, शु भ२, सं१ मि, सं२, आ२,
भा३ अशु

उ४, तस्यसादना—गु१। जी२, सं प अ, प६, ६, प्रा१०, ७, सं४, ग३ न ति म, इं१ पां,
का१ त्र, यो१२ म४ व४ ओ२ वे१ का१, वे१ पां, क४, जा३ कु कु वि, सं१ अ, द२ व अ,
२० जे६, भ१, ग१ सा, सं१, आ२, उ५, तस्यपित्तानां—गु१ सा, जी१ प, प६, प्रा१०, सं४,
६

ग३ न ति म, इं१ पां, का१ त्र, यो१० म४ व४ ओ२ वे१ का, वे१ न, क४, जा३ कु कु वि, सं१
अ, द२, जे६, भ१, ग१ सा, सं१, आ१, उ५। तस्यपित्तानां—गु१ सा, जी१ अ, प६ अ।
६

प्रा७ अ, सं४, ग२ ति म, इं१, का१, यो२ ओमि का, वे१ न, क४, जा२ कु कु, सं१ अ, द२
व अ, जे२ क शु। भ१, ग१ सा, सं१, आ२, उ४। तस्यम्यग्मिव्यादृष्टिनां—गु१ मिथं, जी१ प,
भा३ अशु

२५ प६, प्रा१०, सं४, ग३ न ति म, इं१ पां, का१ त्र, यो१० म४, व४ ओ२ वे१, वे१ न, क४,

अपगतवेदंगे । गु ६ । अ । सू । उ । ली । सा । अ । जी । रा । प । अ । प । ६ । प्रा ११ ।
 २ । १ । सं १ । परि । ग । र । म । इ । १ । पं । का । १ । प्र । यो । १ । १ । म । ४ । वा । ४ । जी । रा । म ।
 वे ० । क । ४ । २ । १ । लो । ज्ञा । ५ । म । श्रु । अ । म । के । सं । ४ । सा । छे । सू । यवा । १ । १ ।
 चा । अ । अ । के । ले ६ । भ । १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ । २ । उ ९ ॥
 भा ६

५ इतो द्वितीयभागानिवृत्तिप्रभृति सिद्धपर्यन्तं मूलोद्यमंगमरुं । मितु वेदमन्त्रे
 समाप्तमावुदु ॥

कपायानुवाददोऽऽ ओषाळापं मूलोद्यमंगमरुं । विदोपमावुदेदोडे दशगुणस्वानंगम् ॥
 क्रोधकपायिगल्गे । गु ९ । जी १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ ।
 ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो १५ । वे ३ । क १ । क्रो । ज्ञा ७ ।
 १० कु । कु । वि । म । श्रु । अ । म । सं ५ । अ । वे । सा । छे । १ । प । १ । व । ३ । चा । ३ ।
 ले ६ । भ । २ । सं ६ । सं २ । आ । २ । उ १० ॥

क्रोधरुपायिपर्यातिरुगे । गु ९ । जी ५७ । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० । ९ । ८ । ७ । ६ ।
 सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो ११ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वै का १ । आ का १ । वे ३ ।
 क १ । क्रो । ज्ञा ७ । कु । कु । वि । म । श्रु । अ । म । सं ५ । अ । वे । सा । छे । पा । व । ३ ।
 १५ चा । अ । अ । ले ६ । भ । २ । सं ६ । सं २ । आ । २ । उ १० ॥

क्रोधरुपायिरुपर्यातिरुगे गु ४ । मि । सा । अ । प्र । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ ।
 आ । सं ४ । ग ४ । इ ५ । का ६ । यो ४ । ओ मि । वे मि । अ मि ।
 का । वे ३ । क १ । क्रो । ज्ञा ५ । कु । कु । म । श्रु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । व । ३ । अ ।

२० अथमववेदानां—गु ६ अनि, गू, उ, ली, स, अ, जी २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ४, २, १, सं १
 परि, ग १ म, इ १ पं, का १ प्र, यो ११ म ४ प ४ ओ २ का १, वे ०, क ४, ३, २, १ लो । ज्ञा ५
 म श्रु अ म के, सं ४ सा छे गू य, द ४ प अ अ के, ले ६, भ १, स २ उ क्षा, सं १, आ, २, उ ९ ।
 भा १

द्वितीयभागानिवृत्तिः सिद्धपर्यन्तं मूलोद्यो भवति, वेदमार्गंगा गता ।

२५ कपायानुवादे ओषः तदपवा-ओषिता—गु ९, जी १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ९,
 ७, ८, ९ उ ९ ९, ४, ४ ३, सं ४, ग ४, इ ५, का ६, यो १५, वे ३, क १ क्रो, ज्ञा ७ कु कु वि म श्रु अ
 म, सं ५ अ द सा छे य, द ३ प अ अ अ, ले ६ भ २, स ६, सं २, आ २, उ १० । तदपर्याप्तानां—गु ६

ओ ७ र, द ९, ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ५, सं ४, ग ४ इ ५, का ६, यो ११, म ४, व ४, ओ ६
 वा, वे ३, क १ क्रो, ज्ञा ७ कु कु वि म श्रु अ म, सं ५ अ द सा छे य, द ३ प अ अ, ले ६, भ २, क १

व २, आ १, उ १० । तदपर्याप्तानां—गु ४ वि मा अ य । जी ७ प्र, प ६, ५, ४ अ, प्रा ७, ७, ९,
 ५, ६, ६ अ, सं ६, ग ६, इ ५, का ६, यो ४ ओ मि वे मि अ मि का, वे ३, क १ क्रो, ज्ञा ५ कु कु

क्रोधरूपायिप्रयमानिवृत्तिकरणगे । गु १ । अनि । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं १ ।
 मी । पा । ग १ । मा । इं १ । पी । का १ । प्र । यो ९ । वे ३ । क १ । को । ज्ञा ४ । मा । श्रु । अ । म । सं २ ।
 सं २ । सा । छे । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ।
 भा १

क्रोधरूपायिद्वितीयभागानिवृत्तिकरणगे । गु १ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं १ ।
 ग १ । म । इं १ । पी । का १ । प्र । यो ९ । वे ० । क १ । को । ज्ञा ४ । मा । श्रु । अ । म । सं २ ।
 सा । छे । व ३ । च । अ । अ । ले ६ । भ १ । सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ।
 भा १

ई प्रकारविद्वमे माननापाकपायंगळगे मिथ्यादृष्टिप्रभृति अनिवृत्तिकरणपर्यंत यत्तव्यमव
 विशेषमायुर्वेदो एल्लि एल्लि क्रोधरूपायमल्लल्लि माननापाकपायंगळ वस्तव्यंगळपुत्रु । लो
 कपायमल्लं क्रोधरूपायभंगमेयशकुं । विशेषमायुर्वेदो ओघाच्छापदोऋ वश गुणस्यानंगळं बु वत्त
 १० मशुमान संयमगळं लोभरूपायमोवे यत्तव्यमवकु ॥

प्ररूपायमगळगे । गु ४ । उ । क्षी । सा । अ । जो २ । प ६ । ६ । प्रा १० । ४ । २ । १ ।
 सं १ । ग १ । म । इं १ । पी । का १ । प्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । जो २ । का १ । वे ० ।
 क ० । शा ५ । म । श्रु । अ । म । के । सं १ । यथा । व ४ । च । अ । अ । के । ले ६ । भ १ ।
 सं २ । उ । क्षा । सं १ । आ २ । उ ९ ॥
 भा १

१५ अरूपायसामान्यं पेच्छल्पदुदु । विशेषविद्वमुपशांतरूपायप्रभृति सिद्धपरमेदिगज्यम्यं
 सामान्यभंगगळपुत्रु । इनु कवायभागणे समाप्तमायुदु ॥

ज्ञानानुयावदोऋ ओघालांगळ मूलोयभंगगळपुत्रु । कुमतिकुभ्रतजानिगळगे । गु २ । नि ।
 सा । जो १ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ ।

२० अ । सं १ । आ १ । उ ७ । अनिवृत्तिकरणानां प्रथमभागे—गु १ अनि । जो १ प । प ६ । प्रा १० ।
 म २ । वे १ । म । इं १ । पी । का १ । प्र । यो ९ । वे ३ । क १ । को । ज्ञा ४ म श्रु अ म । सं २ ।
 छे । व ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । म २ उ क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । द्वितीयभागे—गु १ । यो १ ।
 प ६ । प्रा १० । सं १ । प १ । म । इं १ । पी । का १ । प्र । यो ९ । वे ० । क १ । को । ज्ञा ४ म श्रु अ म ।
 म २ सा छे । व ३ च अ अ । ले ६ । भ १ । म २ उ क्षा । सं १ । उ ७ । एव माननायमोर्ति ह्यसति

गुणवत्पदं वत्त विदु क्रोधस्थाने वृत्तनामरूपायः, तथा लोभस्थायि, विदु गुणस्थानानि दश ।

२५ अरूपायि—गु १ उ क्षी सा अ । जो २ । प ६ ६ । प्रा १० ४ २ १ । सं ० । म १ म । इं १ ।
 का १ । प्र । यो ११ । म ४ । वा ४ । जो २ । का १ । वे ० । क ० । शा ५ । म । श्रु । अ । म । के । सं १ । यथा । व ४ च अ अ के ।
 सं १ । उ ९ ॥ एव सामान्यरूपने विद्यतेन जायते इत्यस्य विदुः ॥

३० अरूपायि—गु १ उ क्षी सा अ । जो २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ ९ ७ ८ ६ ७ ५ ६ ४ ४ ।

माश्रु।अ।म।सं३।सा।छे।पा।व३।चा।अ।अ। ले६ भ१।सं३।उ।वे।
सा।सं१।आ१।उ७॥

अप्रमत्तसंयंतगे। गु१। अ। जो१। पा।प६। प्रा१०। सं३। आहारसंज्ञारहित।
ग१।म।ई१।पं।का१।त्र।यो९।वे३।क४।ज्ञान४।म।श्रु।अ।म।सं३।सा।
छे।पा।व३। ले६। भ१।सं३।उ।वे।सा।सं१।आ१।उ७॥

अपूर्वकरणाप्रभृति अयोगिकेवलपध्वंते मूलोपभंगमक्कुं। सामाधिकसंयंतगे। गु४।प्रा।
अ।अ।जो२।पा।अ।प६।द।प्रा१०।उ।सं४।ग१।म।ई१।पं।का१।त्र।
यो११।म४।वा४।ओ।का१।आ२।वे३।क४।ज्ञा४।म।श्रु।अ।म।सं३।सा।
सामाधिक।व३।चा।अ।अ। ले६। भ१।सं३।उ।वे।सा।सं१।आ१।उ७॥

१० अनिवृत्तिपध्वंतमूलोपभंगमक्कुं। छेवोपस्थापनसंयमकमुनी प्रकारमे वक्तव्यमक्कुं॥
परिहारवियुद्धिसंयमिगच्छ्ये गु२। प्रा।अ। जो१। प६। प्रा१०। सं४। ग१। म।
ई१।पं। का१।त्र। यो९। वे१। पुं। क४। ज्ञा३। म।श्रु। अ।सं१। परिहारवियुद्धि।
व३।चा।अ।अ। ले६। भ१।सं२।वे।सा।सं१।आ१।उ६॥

प्रमत्ताप्रमत्तपरिहारवियुद्धिसंयतदगच्छ्ये वेत्तुपडुवल्लि ओघभंगमेयक्कुं। सूक्ष्मसांपराय-
संयमकमे मूलोपभंगमेयक्कुं। यथास्थातसंयमिगच्छ्ये। गु४।उ।ओ।सा।अ।जो२।पा।अ।
प६।द।प्रा१०।उ।सं४।ग१।म।ई१।पं।का१।त्र।यो११।म४।वा४।

११ आ२।वे३।क४।ज्ञा४मश्रुअम।सं३साछेव।द३चअअ।ले६।भ१।स३
उवेद्या।सं१।आ१।उ७।अप्रमतार्ता-गु१अत्र।जो१पाप६।प्रा१०।सं३।आहार-
संज्ञानश्रु।ग१।म।ई१।पं।का१।त्र।यो९।वे३।क४।ज्ञा४मश्रुअम।सं३साछेव।
२० द३।ले६।भ१।स३उवेद्या।सं१।आ१।उ७।अपूर्वकरणाद्योगिपध्वंतं मूलोपभंगो भवति।

साधारिद्धमपज्ञान-गु४प्रवअअ।जो२वअ।प६।प्रा१०।उ।सं४।प१।म।
ई१।पं।का१।त्र।यो११।म४व४ओ१।आ२।वे३।क४।ज्ञा४मश्रुअम।सं३।
साधारिद्ध।द३चअअ।ले६।भ१।स३उवेद्या।सं१।आ१।उ७।अनिवृत्तिपध्वं

२१ मूलोपभंगो भवति। छेवोपस्थापनसंयतानामपेक्षं।
परिहारवियुद्धिसंयमिगच्छ्ये-गु२प्रवअ।जो१।प६।प्रा१०।सं४।प१।म।ई१।पं।
सा१।व३।वा१।वे१।पुं।क४।ज्ञा३मश्रुअम।सं३साछेव।द३चअअ।ले६।भ१।
स३उवेद्या।सं१।आ१।उ७।अप्रमत्ताप्रमत्तपरिहारवियुद्धिसंयतानां च मूलोपभंगः।
द्वयवस्थादवधिविना-गु१उधोअअ।जो२वअ।प६।प्रा१०।उ।सं४।प१।म।ई१।पं।

वर्दानुवावोऽनु ओषाञ्चानं मूनीपभंगमरुं । चधुर्दानिगन्धो । गु १२ । जी ३ । सं ३ व
२ २ २

प ६ । ६ । ५ । ५ । प्रा १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ सं ४ । ग ४ । इ २ । पं । च । का १ प्र ।
यो १५ । वे ३ । क ४ । जा ७ । केवलानरहित । सं ७ । अ । दे । सा । छे । पा । मू । यया ।
वर् १ । च ले ६ भ २ । सं ६ । सं २ । आ २ । उ ८ ॥

५ चधुर्दानिपप्याप्तिको । गु १२ । जी ३ । गं । अ । चा । प ६ । ५ । प्रा १० । ९ । ८ । सं ४ ।
१ १ १
ग ४ । इ २ पं च । का १ प्र । यो ११ । म ४ । या ४ । ओ का । ये का । आ का । वे ३ । क ४ ।
जा ७ । कु । कु । वि । म । श्रु । अ । म । सं ७ । अ । दे । सा । छे । पा । मू । यया । व १ । व ।
ले ६ । भ २ । सं ६ । मि । सा । मि । उ । वे । क्षा । सं २ । आ १ । उ ८ ॥

चधुर्दानिपप्याप्तिको । गु ४ । मि । सा । अ । प्र । जी ३ । सं अ च प ६ । ५ । अ ।
१ १ १
प्रा ७ । ७ । ६ । अ । सं ४ । ग ४ । इ २ । पं । का १ प्र । यो ४ । ओ मि । वे मि । आ मि । का ।
वे ३ । क ४ । जा ५ । कु । कु । म । श्रु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । व १ च । ले २ क गु । भ २ ।
सं ५ । मि । सा । उ । वे । क्षा । सं २ । आ २ । उ ६ ॥ भा ६

चधुर्दानिपप्याप्तिको । गु १ मि । जी ६ । सं अ च प ६ । ६ । ५ । ५ । प्रा १० ।
२ २ २
७ । ९ । ७ । ८ । ६ । सं ४ । ग ४ । इ २ । पं । च । का १ प्र । यो १३ । आहारद्वयरहित । वे ३ ।
१५ क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ अ । व १ । च । ले ६ भ २ । सं १ । मि । सं २ ।
आ २ । उ ४ ॥

चधुर्दानिनां—गु १२, जी ६, सं अ च । प ६, ६, ५, ५, प्रा १०, ७, ९, ७, ८, ६, सं ४,
२ २ २
ग ४ । इ २ च, पं, का १ प्र, यो १५, वे ३, क ४, जा ७, कु कु वि म श्रु अ म, सं ७ अ, दे, सा, छे, प, मू,
य । द १ चधु, ले ६ । भ २ । स ६ मि सा मि उ वे क्षा, सं २, आ २, सं ८ । तत्पर्याप्तानां—

२० गु १२, जी ३ सं अ च, प ६, ५, प्रा १०, ९, ८, सं ४, ग ४ । इ २ पं च, का १ प्र, यो ११ म ४ व
४ ओ १ वे १, आ १, वे ३, क ४, जा ७ कु कु वि म श्रु अ म, सं ७ अ दे सा छे प मू प, द १ च । ले ६ ।
भ २ । स ६ मि सा मि उ वे क्षा, सं २ । आ १ । उ ८ । तदपर्याप्तानां—गु ४ मि, मा, अ, प्र । जी ३
सं अ च । प ६, ५, अ, पा ७ ७, ६ अ, सं ४, ग ४, इ २ पं च । का १ प्र, यो ४ ओ मि वं मि आ मि क,
१ १ १
वे ३, क ४, जा ५ कु कु म श्रु अ । सं ३ अ, सा छे द १ च । ले २ क गु । भ २, स ५ मि सा उ वे क्षा,
भा ६

२५ सं २ । आ २ । उ ६ । तन्मिप्यानुयां—गु १ मि । जी ६ सं अ च । प ६, ६, ५, ५, प्रा १०, ७, ९,
२ २ २

अचक्षुर्दंशनिमिष्यामिकर्मो । गु ४ मि । सात्ता । अ । प्रा । जो ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । ३ ।
 अ । प्रा ७ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ४ । ओ मि । वै मि । आ मि ।
 का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । कु । कु । मा । भ्रु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । व १ । अ ।
 ले २ क शु । भ २ । सं ५ । मि । सा । उ । वे । क्षा । सं २ । आ २ । उ ६ ॥

५ अचक्षुर्दंशनिमिष्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जो १४ । प ६ । ६ । ५ । ५ । ४ । ४ । प्र
 १० । ७ । ९ । ७ । ८ । ६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १२ ।
 आहारद्वयरहित । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व १ । अच ले ६ । भ २ ।
 सं १ मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥

अचक्षुर्दंशनिमिष्यादृष्टिगच्छे । गु १ । मि । जो ७ । प । प ६ । ५ । ४ । प्रा १० ।
 १० । ८ । ७ । ६ । ४ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो १० । म ४ । या ४ । ओ का । वे का ।
 वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व १ । अच । ले ६ । भ २ । सं १ मि ।
 सं २ । आ १ । उ ४ ॥

अचक्षुर्दंशनिमिष्यादृष्टिगच्छे । गु १ मि । जो ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । अ प्रा ७ ।
 ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । ओ मि । वै मि । का । वे ३ ।
 १५ क ४ । ज्ञा २ । कु । कु । सं १ । अ । व १ । अच । ले २ क शु । भ २ । सं १ मि । सं २ ।
 आ २ । उ ३ ॥

अचक्षुर्दंशनि सात्तावनप्रभृतिक्षीणकपायपर्यंतं अचक्षुर्निगच्छे तु वक्तव्यमवकुं ।

नहि, सं ७, द १ अ, ले ६ । भ २, स ६, सं २, आ १, उ ८ । उदपर्याप्तानां—गु ४ मि सा अ प, ओ

७ अ, प ६, ५, ४ अ, प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो ४ ओमि वैमि आमि का,
 २० वे ३, क ४, ज्ञा ५, कु कु म ध्रु अ, सं ३ अ, सा, छे । द १ अ, ले २ क शु । म २, स ५ मि सा उ वे
 भा ६

द्या, सं २, आ २, उ ६ । तमिम्यादृशां—गु १ मि, जो १४, प ६, ६, ५, ५, ४, ४, प्रा १०, ७, ६,
 ७, ८, ६, ७, ५, ६, ४, ४, ३, सं ४, ग ४ । इं ५, का ६, यो १३ आहारद्वयं नहि, वे ३, क ४, ज्ञा ३,
 कु कु वि, सं १ अ, द १ अ, ले ६, भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ४ । तत्पर्याप्तानां—गु १ मि ।

जो ७ प, प ६ । ५, ४, प्रा १०, ९, ८, ७, ६, ४, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो १० म ४ व ४ ओ १
 २५ वे १, वे ३ । क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, द १ अ, ले ६ । म २, स १ मि, सं २, आ १, उ ४ ।

उदपर्याप्तानां—गु १ मि, जो ७ अ, प ६, ५, ४ अ, प्रा ७, ७, ६, ५, ४, ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६,
 यो ३ ओमि वैमि का, वे ३, क ४, ज्ञा २ कु कु, सं १ अ, द १ अ, ले २ क शु । भ २, स १ मि, सं २,
 आ २ उ ३ । तत्सासादनात् क्षीणकपायांतं यथायोग्यं योग्यं । भा ६

गो० जीवकाण्डे

प्रा १०।९।८।७।६।५।४।३।२।१। न। ति। न। इं५। का६। यो१०। म४।
 वा४। ओ। का। वे३। क४।। न। ति। न। इं५। का६। यो१०। म४।
 व३। च। अ। अ। ले६। भ२। सं६। नि। सा। नि। उ। वे। सा। सं३।
 आ१। उ९॥ भा१कृ

५ कृष्णलेश्यास्पृश्यामिकर्णे। गु३। मि। सा। अ। जी७। अ। प६। ५।४। प्र। १०।
 प्रा७। ७। ६। ५। ४। ३। सं४। ग४। इं५। का६। यो३। ओ। मि। वे। नि। का। वे३।
 क४। न। ति। न। इं५। का६। यो३। ओ। मि। वे। नि। का। वे३।
 सा। वे। पंचमादिपृथिव्यगृहं वर्षं असंपतनोऽप्येवं संभयितुं। सं२। आ२। उ८॥
 भा१कृ

१० कृष्णलेश्यामिष्यादृष्टिगन्धो। गु१। मि। जी१। प६। ६। ५। ५। ४। ४। प्रा१०।
 ७। ७। ६। ५। ४। ३। सं४। ग४। इं५। का६। यो१३। वे३।
 क४। न। ति। न। इं५। का६। यो१३। वे३।
 सा। वे। पंचमादिपृथिव्यगृहं वर्षं असंपतनोऽप्येवं संभयितुं। सं२। आ२। उ८॥
 भा१कृ

१५ कृष्णलेश्यामिष्यादृष्टिपर्वान्तिकर्णे। गु१। मि। जी७। प। प६। ५। ४। प्रा१०।
 ९। ८। ७। ६। ५। ४। ३। सं४। ग४। इं५। का६। यो१०। म४। वा४। ओ। का।
 वे३। क४। न। ति। न। इं५। का६। यो१०। म४। वा४। ओ। का।
 मि। सं२। आ१। उ५॥ भा१कृ

कृष्णलेश्यामिष्यादृष्ट्यपर्वान्तिकर्णे। गु१। मि। जी७। अ। प६। ५। ४। प्रा७। ६।
 ५। ४। ३। अ। सं४। ग४। इं५। का६। यो३। ओ। मि। वे। नि। का। वे३। क४।
 गु४। मि। सा। नि। अ। जी७। प। प६। ५। ४। प्रा७। ६।
 २० का६। यो१०। म४। वा४। ओ। वे३। क४।

२० का६। यो१०। म४। वा४। ओ। वे३। क४। तदप्यतिना—गु३। मि। सा। अ। जी७। अ। प६। ५। ४। प्रा७। ६।
 म२। स६। मि। सा। नि। उ। वे। सा। सं२। आ२। उ८। तदप्यतिना—गु३। मि। सा। अ। जी७। अ। प६। ५। ४। प्रा७। ६।
 ५। ४। अ। प्रा७। ७। ६। ५। ४। ३। सं४। ग४। इं५। का६। यो३। ओ। मि। वे। नि। का। वे३। क४।
 कुकुमं शुभं सा१ अ। द३। ले२ क यु। म२। सं३। मि। सा। वे। पंचमादिपृथिव्यागजापंचमतेषु वेदं-
 भा१कृ

सम्पन्नत्वसंभवान् सं२। आ२। उ८। तदप्यतिना—गु३। मि। सा। अ। जी७। अ। प६। ५। ४। प्रा७। ६।
 २५ ७। ९। ७। ८। ६। ७। ५। ४। ३। सं४। ग४। इं५। का६। यो३। ओ। मि। वे। नि। का। वे३। क४।
 सं३। अ। द३। ले२ क यु। म२। सं३। मि। सा। वे। पंचमादिपृथिव्यागजापंचमतेषु वेदं-
 भा१कृ
 ५। प्रा१०। ९। ८। ७। ६। ५। ४। ३। सं४। ग४। इं५। का६। यो३। ओ। मि। वे। नि। का। वे३। क४।
 आ३। कुकुमं शुभं सा१ अ। द३। ले२ क यु। म२। सं३। मि। सा। वे। पंचमादिपृथिव्यागजापंचमतेषु वेदं-
 भा१कृ
 ७। अ। प६। ५। ४। अ। प्रा७। ७। ६। ५। ४। ३। सं४। ग४। इं५। का६। यो३। ओ। मि। वे। नि। का। वे३। क४।

गो० जीवकाण्डे

यो १२। म ४। वा ४। ओ २। वै का १। काम्मे १। कृष्णलेश्यासंयतासाम्यगुष्टि भवनयते
 पुद्गनपुर्वरिदं वैक्रियिकमिथमिल्ल। अथवा घम्मे'यं चिट्टु मिस्क नरकंगळोळ पुद्गनपुर्वरिदं
 वैक्रियिकमिथमिल्ल। घम्मे'योळुदुदुयवं कपोतलेश्यासंयतासाम्यगुष्टि भवनयते कृष्णलेश्यासंयतं
 संभावनेयिल्लपुर्वरिदंयु वैक्रियिकमिथयोगं संभविसतु। वे ३। क ४। ता ३। मा ३। प्र ३।
 सं १। अ ३। व ३। च ३। ज ३। भा १ कृ

कृष्णलेश्यासंयतसाम्यगुष्टिपर्याप्तकगो'। पु १। अ सं। जो १। प। प ६। प्रा १०
 सं ४। ग ३। न। ति। मा ३। वं। का १। त्र। यो १०। म ४। वा ४। ओ का ३। वै।
 क ४। ता ३। म ३। अ ३। सं १। अ ३। व ३। च ३। ज ३। भा १ कृ

कृष्णलेश्यासंयतापप्याप्तकगो'। पु १। अ सं। जो १। अ। प ६। अ। प्रा ७। ३
 सं ४। ग १। म। इ १। पं। का १। त्र। यो २। ओ मि। का १। वे १। पुं। क ४। ता ३
 म। अ ३। व ३। च ३। ज ३। भा १ कृ

नीललेश्येगो कृष्णलेश्येगोळुदुदुयवंते पेळु कोळ्गो। विशेषमाजुवे बोडे सव्वथ नीललेश्ये
 वक्तव्यमवकुं। कपोतलेश्याजीवंगळो'। पु ४। मि। सा। मि। अ। जो १४। प ६। ६। ५। ५।
 ४। ४। प्रा १०। ७। ९। ७। ८। ६। ६। ७। ५। ६। ४। ४। ३। सं ४। ग ४। इ ५। का ६।
 यो १३। म ४। व ४। ओ २। वै २। का १। वे ३। क ४। ता ६। कु। कु। वि। मा ३।
 अ। सं १। अ ३। व ३। च ३। ज ३। भा १ कृ

यो १२ म ४ व ४ ओ २ वै का १ तेषां साम्यगुष्टित्वात् भवनयतिद्वितीयादिपृथ्वीष्वनुत्पत्तेः। धर्मात्मना
 तु कपोतलेश्या अथवाचित्वादेक्रियिक मिथयोगो नहि। वे ३, क ४, ता ३ म ३ अ, सं १ अ, द ३ व
 अ, ले ६। म १, स ३ उ वे सा, सं १, आ २, उ ६। तत्पर्याप्तानां—गु १ अ सं, जो १ प, प ६,
 भा १ कृ
 प्रा १०, सं ४, ग ३ न वि म, इ १ पं, का १ न, यो १० म ४ व ४ ओ वै, वे १, क ४, ता ३ म ३ अ,
 सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६, म १, स ३ उ वे सा, सं १, आ १, उ ६। तदथवाप्तानां—गु १ अ सं, जो
 भा १ कृ
 ५, ५, ६, ४, ४, ३, सं ४, ग ४, इ ५, ता ६, यो १३ म ४ व ४ ओ २ वै २ का १, वे ३, क ४, प्रा ६
 कु कु वि म ३ अ, सं १ अ, द ३ च अ अ, ले ६। म २, सं ६ मि सा मि उ वे सा, सं २, आ २, उ ६।
 भा १ कृ

कपोतलेश्यासामिथ्यादृष्ट्यप्यपि कर्मो । गु १ मि । जो ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । अ । प्रा ७ ।
 ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । ओ मि । वै मि । का । वे ३ । क ४ ।
 जा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ । ले २ । क शु । भ २ । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ५ ॥
 भा १ क

कपोतलेश्यासासादनसम्यग्दृष्टिगच्छो । गु १ । सा सा । जो २ । प अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
 ५ । ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो १३ । वे ३ । क ४ । जा ३ । कु । कु । वि ।
 सं १ । अ । व २ । च । अ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
 भा १ क

कपोतलेश्यासासादनपर्याप्तकर्मो । गु १ । सा । जो १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग ३ । न । ति । म । इं १ । पं । का १ त्र । यो १० । म ४ । या ४ । ओ का । वै का । वे ३ ।
 क ४ । जा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । च । अ । ले ६ । भ १ । सं १ । सा ।
 १० । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
 भा १ कृ

कपोतलेश्यासासादनापर्याप्तकर्मो । गु १ । सा । जो १ । अ । प । ६ । अ । प्रा ७ । अ ।
 सं ४ । ग ३ । ति । म । वे । इं १ । पं । का १ त्र । यो ३ । ओ मि । वै मि । का । वे ३ । क ४ ।
 जा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ । च । अ । ले २ क शु । भ २ । सं १ । सासादनदृष्टि ।
 सं १ । आ २ । उ ४ ॥
 भा १ क

कपोतलेश्यासाम्यग्मिथ्यादृष्टिगच्छो । गु १ । मिथ् । जो १ । प । प ६ । प्रा १० । सं ४ ।
 ग ३ । न । ति । म । देवगतिषु भूभलेषु पर्याप्तकर्मो संभ्विसदु । इं १ । पं । का १ त्र । यो
 १० । म ४ । या ४ । ओ का । वै का । वे ३ । क ४ । जा ३ । मिथ्यज्ञानंगच्छ । सं १ । अ । व २ ।
 ले ६ । भ १ । सं १ । मिथ् । सं १ । आ १ । उ ५ ॥
 भा १ क

१९ स १ मि, सं २, आ १, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ मि, जो ७ अ, प ६, ५, ४, अ, प्रा ७, ७, ६, ५, ४,
 २० ३, सं ४, ग ४, इं ५, का ६, यो ३ औमि वैमि का, वे ३, क ४, जा २ कु कु, सं १, सं १ अ, व २, ले २ क
 भा १ क

गु । भ २, स १ मि, सं २, आ २, उ ४ । तस्यासादनानां—गु १ सा, जो २ प अ, प ६, ६, प्रा १०, ७,
 सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो १३, वे ३ क ४, जा ३, कु कु वि, सं १ अ, व २ च अ, सं ६ ।
 क १

म १, स १ सा, सं १, आ २, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ सा, जो १ प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ न
 २५ त्रि म, इं १ पं, का १ त्र, यो १० म ४ व ४ ओ वै, वे ३, क ४, जा ३ कु कु वि, सं १ अ, व २ च अ,
 ले ६, भ १, स १ सा, सं १, आ १, उ ५ । तदपर्याप्तानां—गु १ सा, जो १ अ, प ६ अ, प्रा ७ अ,
 भा १ क

सं ४, प ३ त्रि म दे, इं १ पं, का १ त्र, यो ३ औमि वैमि का, वे ३, क ४, जा २ कु कु, सं १ अ,
 व २ च अ, ले २ क शु, अ १, स १ सा, सं १, आ २, उ ४ । सम्यग्मिथ्यादृष्ट्यां—गु १ मिथ्, जो १ प,
 भा १ क

प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३ न त्रि म, देवगतिर्नष्टि, इं १ पं, का १ त्र, यो १० म ४ व ४ ओ वै, वे ३,
 भा १ क

तेजोलेश्याऽपर्व्याप्तकर्मो गु ४। मि। सा। अ। प्र। जो १। अ। प ६। अ। प्रा ३।
अ। सं ४। ग २। म। दे। इं १। पं। का १। त्र। यो ४। ओ मि। वेमि आमि। का। वे २।
स्त्री। पुं। क ४। ज्ञा ५। कु। कु। मा। भ्रु। अ। सं ३। अ। सा। छे। व ३। ले ६। कृ ५।
भा १। ते

भ २। सं ५। मि। सा। उ। वे। क्षा। सं १। आ २। उ ८।

५ तेजोलेश्यामिष्यादृष्टिगन्धो गु १। मि। जो २। प। अ। प ६। ६। प्रा १०। ३।
सं ४। ग ३। ति। म। दे। इं १। पं। का १। त्र। यो १२। म ४। वा ४। ओ का। वे का।
वे मि। काम्मंण। वे ३। क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। अ। व २। ले ६। भ २। सं १।
मि। सं १। आ २। उ ५। भा १। ते

१० तेजोलेश्यामिष्यादृष्टिपर्व्याप्तकर्मो गु १। मि। जो १। प। प ६। प्रा १०। सं ४।
ग ३। ति। म। दे। इं १। पं। का १। त्र। यो १०। म ४। वा ४। ओ का। वे का। वे ३।
क ४। ज्ञा ३। कु। कु। वि। सं १। व २। ले ६। भ २। सं मि। सं १। आ १। उ ५।
भा १। ते

तेजोलेश्यामिष्यादृष्टिअपर्व्याप्तकर्मो गु १। मि। जो १। अ। प ६। अं। प्रा ७। अ।
सं ४। ग १। वे। इं १। पं। का १। त्र। यो २। वे मि। का। वे २। स्त्री। पुं। क ४। ज्ञा २।
कु। कु। सं १। अ व २। ले २। क ५। भ २। सं १। मि। सं १। आ २। उ ४।
भा १। ते

१५ तेजोलेश्यासासावनसम्यग्दृष्टिगन्धो गु १। सासा। जो २। प। अ। प ६। ६। प्रा १०।
७। सं ४। ग ३। ति म वे। इं १। पं। का १। त्र। यो १२। म ४। वा ४। ओ का १। वे २।

इं १। पं, का १। त्र, यो ११। म ४। व ४। ओ वे आ, वे ३, क ४, ज्ञा ७। केवलं नहि, सं ५। अ दे सा छे ५,
द ३। ले ६। भ २, घ ६, सं १, आ १, उ १०। तदपर्याप्तानां—गु ४। मि सा अ प्र, जो १। अ, प ६। अ,
भा १। ते

२० प्रा ७। अ, सं ४, ग २। म दे, इं १। पं, का १। त्र, यो ४। ओ मि वे मि आमि का, वे २। स्त्री पुं, क ४, ज्ञा ५।
कु कु म धु अ, सं ३। अ सा छे, द ३, ले २। क ५, भ २, घ ५। मि सा उ वे क्षा, सं १, आ २, उ ८।
भा १। ते

तन्मिष्यादृश्या—गु १। मि, जो २। प, अ, प ६। ६, प्रा १०। ७, सं ४, ग ३। ति म दे, इं १। पं, का १। त्र,
यो १२। म ४। व ४। ओ वे वे मि का, वे ३, क ४, ज्ञा ३। कु कु वि, सं १। अ, द २, ले ६। भ २, घ १। मि,
भा १। ते

सं १, आ २, उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १। मि, जो १। प, प ६, प्रा १०, सं ४, ग ३। ति म दे, इं १। पं,
वा १। त्र, यो १०। म ४। व ४। ओ वे, वे ३, क ४, ज्ञा ३। कु कु वि, सं १। अ, द २, ले ६। भ २। घ १।
भा १। ते

५२ मि। सं १। आ १। उ ५। तदपर्याप्तानां—गु १। मि। जो १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ। सं ४। ग १। दे।
इं १। पं। का १। त्र। यो २। वे मि का। वे २। स्त्री पुं। क ४। ज्ञा २। कु कु। सं १। अ। द २।
ले २। क ५। भ २। घ १। मि। सं १। आ २। उ ४। सासावनानां—गु १। सा। जो २। प। अ। प ६। ६।
भा १। ते

ति। म। दे। इं१। का१। यो१०। म४। या४॥ ओ० का। वे० का। वे३। क४। जा३।
सं१। आ० व३। ले६। भ१। सं३। सं१। आ१। उ६॥

भा१ते

तेजोलेश्याअपर्याप्तसंयतगणे। गु१। अ। जी१। अ। प६। अ। प्रा०। अ। सं४। ग२। ति।
ग२। म। दे। इं१। का१। यो३। ओ० मि। वे० मि। का। वे१। पुं। क४। जा३। सं१।
५ आ० व३। ले२। भ१। सं३। सं१। आ२। उ६॥

भा१ते

तेजोलेश्यादेशप्रतिगच्छे। गु१। वे। जी१। प। प६। प्रा१०। सं४। ग२। ति।
म। इं१। का१। यो९। म४। वा४। ओ० का। वे३। क४। जा३। म। धृ। आ। सं१।
दे। व३। ले६। भ१। सं३। सं१। आ१। उ६॥

भा१ते

तेजोलेश्याप्रमत्तगणे। गु१। प्र। जी२। प। अ। प६। ६। प्रा१०। ७। सं४। ग२।
१०। म। इं१। का१। यो११। वे३। क४। जा४। मं३। सा। छे। प। व३। ले६। भ१।
सं३। सं१। आ१। उ७॥

भा१ते

तेजोलेश्याप्रमत्तगणे। गु१। अ। प्र। जी१। प। प६। प्रा१०। सं३। ग२। म।
इं१। का१। यो९। वे३। क४। जा४। म। धृ। अ। म। सं३। सा। छे। प। व३।
ले६। भ१। सं३। सं१। आ१। उ७॥

भा१ते

१५ १०। सं४। ग३। ति। म। दे। इं१। का१। यो१०। म४। व४। ओ० वी। वे३। क४। जा३। सं१।
आ० व३। ले६। भ१। सं३। सं१। आ१। उ६।

भा१ते

वदपर्याप्ताना—गु१। अ। जी१। अ। प६। अ। प्रा०। अ। सं४। ग२। म। दे। इं१। का१।
यो३। ओ० मि। वे० मि। का। वे१। पुं। क४। जा३। सं१। अ। व३। ले२। भ१। सं३। सं१।
आ२। उ६।

भा१ते

२० देवप्रतिनां—गु१। दे। जी१। प। प६। प्रा१०। सं४। ग२। ति। म। इं१। का१।
यो९। म४। व४। ओ० वी। वे३। क४। जा३। म। धृ। अ। सं३। दे। व३। ले६। भ१। सं३। सं१।
आ१। उ६।

भा१ते

प्रमत्तानां—गु१। प्र। जी२। प। अ। प६। ६। प्रा१०। ७। सं४। ग२। म। इं१। का१।
यो११। वे३। क४। जा४। सं३। सा। छे। प। व३। ले६। भ१। सं३। सं१। आ१।
उ७।

भा१ते

अप्रमत्तानां—गु१। अ। प्र। जी१। प। प६। प्रा१०। सं३। ग२। म। इं१। का१।
यो९। वे३। क४। जा४। म। धृ। अ। म। सं३। सा। छे। प। व३। ले६। भ१। सं३। सं१।
आ१। उ७।

भा१ते

१०५०

पपलेश्यामिम्यादृष्टपप्याप्तकर्म० गु१। मि। जो१। अ। प६। अ। प्रा७। अ।
सं४। ग१। वे। इं१। का१। यो२। वेमि। का। वे१। पुं। क४। ज्ञा२। कु। कु।
सं१। अ। व२। ले२। क३। भ२। सं१। मि। सं१। आ२। उ४॥
भा १ प

पपलेश्यासासावनर्ग० गु१। सासा। जो२। प। अ। प६। अ। प्रा१०। अ। सं४।
५ ग३। ति। मा। वे। इं१। का१। यो२। म४। वा४। ओ। का१। वे। का२। का१।
वे३। क४। ज्ञा३। कु। कु। वि। सं१। अ। व२। ले६। भ१। सं१। सा। सं१।
भा १ प

आ२। उ५॥

पपलेश्यासासावनपप्याप्तकर्म० गु१। सा। जो१। प। प६। अ। प्रा१०। सं४।
ग३। ति। मा। वे। इं१। का१। यो१०। म४। वा४। ओ। का१। वे। का१। वे३।
१० क४। ज्ञा३। कु। कु। वि। सं१। अ। व२। ले६। भ१। सं१। सासा। सं१।
भा १ प

आ१। उ५॥

पपलेश्यासासावनापप्याप्तकर्म० गु१। सा। जो१। अ। प६। अ। प्रा७। अ।
सं४। ग१। वे। इं१। का१। यो२। वेमि। का। वे१। पुं। क४। ज्ञा२। कु।
सं१। अ। व२। ले२। क३। भ१। सं१। सं१। आ२। उ४॥
भा १ प

१५

पपलेश्यासम्यगिमिम्यादृष्टिगळ्ळो० गु१। मिथ। जो१। प। प६। प्रा१०। सं१।
ग३। ति। मा। वे। इं१। का१। यो१०। वे३। क४। ज्ञा३। मिथ। सं१। अ। व२।
ले६। भ१। सं१। मिथरुचि। सं१। आ१। उ५॥
भा १ प

जा३। कु। कु। वि। सं१। अ। व२। ले६। भ२। सं१। मि। सं१। आ१। उ५। तदप्याप्तानां-
भा १ प

मि। जो१। अ। प६। अ। प्रा७। अ। सं४। ग१। वे। इं१। का१। यो२। वेमि। का। वे३।
२० क४। ज्ञा२। कु। कु। सं१। अ। व२। ले२। क३। भ२। सं१। मि। सं१। आ२।
भा १ प

तत्सासावनानां—गु१। सा। जो२। प६। अ। प्रा१०। अ। सं४। ग३। ति। म। वे। इं१।
यो२। म४। व४। ओ१। वे३। का१। वे३। क४। ज्ञा३। कु। कु। वि। सं१। अ। व२।
भा १

सं१। सा। सं१। अ। आ२। उ५। तत्प्याप्तानां—गु१। सा। जो१। प। प६। प्रा१०।
ग३। ति। म। वे। इं१। का१। यो१०। म४। व४। ओ१। वे३। क४। ज्ञा३।
२५ सं१। अ। व२। ले६। भ१। सं१। सा। सं१। आ१। उ५। तदप्याप्तानां-
भा १ प

जो१। अ। प६। अ। प्रा७। अ। सं४। ग१। वे। इं१। का१। यो२। वेमि। का। वे३।
ज्ञा२। कु। कु। सं१। अ। व२। ले२। क३। भ१। सं१। सा। सं१। आ२। उ४। सम्य-
भा १ प

गु१। मिथं। जो१। प६। प्रा१०। सं४। ग३। ति। म। वे। इं१। का१। यो१०। वे३।

पद्मलेश्येय अग्रमत्तर्गो । गु १ । अ प्र । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ । गति १ । मा । ई १ ।
 पं । का १ । प्र । यो ९ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । म । भु । ज । मा । सं ३ ।
 सा । छे । पा । व ३ । ले ६ । भ २ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ ॥
 भा १ प

शुक्ललेश्याजीवंगन्धो । गु १३ । जो २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । उ । ४ । २ ।
 ५ सं ४ । ग ३ । ति । मा । वे । ई १ । का १ । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ । सं ७ । व ४ ।
 ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ २ । उ १२ ॥
 भा १ शु

शुक्ललेश्यापर्याप्तिकर्गो । गु १३ । जो १ । प । प ६ । प्रा १० । ४ । सं ४ । ग ३ । ति ।
 मा । वे । ई १ । का १ । यो ११ । म ४ । वा ४ । ओ का । ये का । आ का । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ ।
 सं ७ व ४ । चा । अ । अ । के । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ १२ ॥
 भा १ शु

१० शुक्ललेश्या अपर्याप्तिकर्गो । गु ५ । मि । सा । अ । प्र । स यो । जो १ । अ । प ६ । अ ।
 प्रा ७ । र । सं ४ । ग २ । मा । वे । ई १ । का १ । यो ४ । ओ मि । ये मि । का । आ । मि । वे १ ।
 पुं । क ४ । ज्ञा ६ । सं ४ । अ । सा । छे । या । व ४ । ले २ क शु । भ २ । सं ५ । मि । सा ।
 उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ १० ॥
 भा १ शु

शुक्ललेश्यामिव्याहृष्टिगन्धो । गु १ । मि । जो २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । उ । सं ४ ।
 १५ ग ३ । ति । मा । वे । ई १ । का १ । यो १२ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । ये का २ । कर्म
 का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ ।
 मि । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
 भा १ शु

सं १, आ १ । उ ७ । अग्रमत्ताना—गु १ अग्र, जी १ प, प ६ । प्रा १०, सं ३, ग १ मा । ई १ पं ।
 का १ प्र । यो ९ म ४ व ४ ओ १ । वे ३, क ४, ज्ञा ४ म थु अ म । सं ३ सा छे प । व ३ । ले ६ ।
 भा १ प

२० म १ । सं ३ उ वे क्षा । सं १ । आ १ । उ ७ । शुक्ललेश्यानां—गु १३ । जी २ प अ । प ६ । ६ ।
 प्रा १० । उ । सयोग ४ । र । सं ४ । ग ३ ति म वे, ई १ । का १ । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ८ ।
 सं ७ । व ४, ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १, आ २, उ १२ । तदपर्याप्तानां—गु १३ । जी १ प, प ६,
 भा १ शु

प्रा १० ४, सं ४, ग ३ ति म वे, ई १, का १, यो ११ म ४ व ४ ओ १ वे १, आ १ । वे ३, क ४, ज्ञा ८ ।
 सं ७, व ४ व अ अ के, ले ६ । भ २, सं ६, सं १ । आ १, उ १२ । तदपर्याप्तानां—गु ५, मि सा अ प्र स,
 भा १ शु

२५ जो १ अ, प ६ अ, प्रा ७, र, सं ४, ग २ म वे, ई १, का १ यो ४ ओ मि वै मि आ मि का, वे १ पुं,
 क ४, ज्ञा ६, सं ४ अ सा छे य, व ४ ले २ क शु । भ २, सं ५ मि सा उ वे क्षा, सं १, आ २, उ १० ।
 भा १ शु

तन्मिव्यादुषां—गु १ मि, जी २ प अ, प ६ ६, प्रा १०, उ, सं ४, ग ३ ति म वे, ई १, का १, यो १२
 म ४ व ४ ओ १ वे २ का १, वे ३, क ४, ज्ञा ३ कु कु वि, सं १ अ, व २, ले ६, भ २, सं १ मि, सं १,
 भा १ शु

अभय्यापर्व्याप्तिकर्णे । गु १ । मि । जी ७ । अ । प ६ । ५ । ४ । प्रा ७ । ७ । ६ ।
 ५ । ४ । ३ । अ । सं ४ । ग ४ । इं ५ । का ६ । यो ३ । औ मि । वै मि । का । वे ३ । क ४ ।
 जा २ । सं १ । अ । व २ । ले २ क गु । भ १ । अभव्य । सं १ । मि । सं २ । आ २ । उ ४ ॥
 भा ६

भव्यरुमभव्यरुमल्लव सिद्धपरमेष्ठिगच्छे गुणस्थानातीतगं मुं पेन्द्रवैतेयकं । इतु भव्य-
 ५ मार्गणे समाप्तमाहुतु ॥

सम्पत्त्वानुवादबोळु सम्पद्गृष्टिगच्छे । गु ११ । असंयतादि । जी २ । प । अ । प ६ । ६ ।
 प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ । म । श्रु । अ ।
 म । के । सं ७ । व ४ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ९ ॥
 भा ६

सम्पद्गृष्टिपर्व्याप्तिकर्णे । गु १ । जी १ । प ६ । प्रा १० । ४ । १ । सं ४ । ग ४ । इं १ ।
 १० का १ । यो ११ । म ४ । व ४ । औ का । वै का । आ का । वे ३ । क ४ । जा ५ । म । श्रु । अ ।
 म । के । सं ७ । व ४ । ले ६ । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ १ । उ ९ ॥
 भा ६

सम्पद्गृष्टि अपर्व्याप्तिकर्णे । गु ३ । अ । प्रा । सयो । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ ।
 अ २ । सं ४ । ग ४ । इं १ । पं । का १ त्र । यो ४ । औ मि । वै मि । आ मि । काम्म । वे २ ।
 न पं । क ४ । ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । के । सं ४ । अ । सा । छे । यया । व ४ च । अ । अ के ।
 १५ ले २ गु क । भ १ । सं ३ । उ । वे । क्षा । सं १ । आ २ । उ ८ ॥
 भा ४ क ते प गु

असंयतसम्पद्गृष्टिप्रभृति अपो गिकेवलपर्व्यतं मूलोपभंगमक्कं ॥

उ ५ । तरुपर्याप्ताना—गु १ मि । जी ७ अ । प ६ ५ ४ अ । प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३ अ । सं ४ । ग ४ ।
 इं ५ । का ६ । यो ३ औमि वैमि का । वे ३ । क ४ । जा २ कु कु । सं १ अ । व २ । ले २ क गु ।
 भा ६

२० भ १ अ । स १ मि । सं २ । आ २ । उ ४ । भव्याभव्यलक्षणरहितसिद्धानां प्राखत् । भव्यमार्गणा गता ।

सम्पत्त्वानुवादे सम्पद्गृष्टीनां—गु ११ असंयतादीनि । जी २ प अ । प ६ ६ । प्रा १० ७ ४ २ १ ।
 सं ४, ग ४, इं १ पं, का १ त्र, यो १५ । वे ३, क ४, ज्ञा ५ म धु अ म के, सं ७, द ४ ले ६, भ १,
 भा ६

स ३ उ वे दा, सं १, आ २, उ ९ । तरुपर्याप्ताना—गु ११, जी १, प ६ ४, प्रा १० ४ १, सं ४,
 ग ४, इं १, का १, यो ११ म ४ व ४ औ वै आ, वे ३ । क ४, ज्ञा ५ म धु अ म के, सं ७ । द ४,
 २५ ले ६, भ १, स ३ उ वे दा । सं १ । आ २ । उ ९ । तरुपर्याप्ताना—गु ३ अ प्र स । जी १ अ ।
 भा ६

प ६ अ । प्रा ७ अ । २ । सं ४ । ग ४ । इं १ पं । का १ त्र । यो ४ औमि वैमि आमि का । वे २ न पं ।
 क ४ । ज्ञा ४ अ धु अ के । सं ४ अ दा छे य । द ४ व अ अ के । ले २ क गु । भ १ । स ३ उ वे
 भा ४

दा । सं १ । आ २ । उ ८ । असंयतारुपर्याप्तानां मूलोपभंगः ।

येदकसम्यग्दृष्ट्यप्रमत्तसंयतगो० । गु १ । अग्र । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ३ ।
ग १ म । इं १ पं । का १ त्र । यो ९ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं ३ । सा । छे । प । व ३ ।
ले ६ । भ १ । सं १ । ये । सं १ । आ १ । उ ७ ॥

भा ३

उपशमसम्यग्दृष्टिगन्धो० । गु ८ । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ ।
५ इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे २ । का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ ।
सं ६ । अ । वे । सा । छे । सू । य । व ३ । ले ६ । भ १ । सं १ उ । सं १ । आ २ । उ ७ ॥
भा ६

उपशमसम्यग्दृष्टिपर्याप्तकगो० । गु ८ । अ । वे । प्रा । अ । अ । सू । उ । जी १ । प ६ ।
प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १० । म ४ । व ४ । ओ का १ । वे का १ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ४ । म । श्रु । अ । म । स ६ । अ । वे । सा । छे । सू । य । व ३ । ले ६ । भ १ ।
भा ६

१० सं १ । उ । सं १ । आ १ । उ ७ ॥

उपशमसम्यग्दृष्ट्यपर्याप्तकगो० । गु १ । असंयत । जी १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ ।
सं ४ । ग १ । वे । इं १ । का १ । यो २ । वे मि । का । वे १ । पुं । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ । अ ।
व ३ । ले २ क गु । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥
भा ३ शुभ

उपशमसम्यग्दृष्ट्यसंयतगो० । गु १ । असंयत । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० ।
१५ ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १२ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे २ । का १ । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ३ । म । श्रु । अ । सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं १ । उ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥
भा ६

द ३ । ले ६ । भ १ । स १ वे । सं १ । आ १ । उ ७ । अप्रमत्तानां—गु १ अ, जी १, प ६, प्रा १०,

सं ३, ग १ म, इं १ पं, का १ त्र, यो ९, वे ३, क ४, ज्ञा ४, सं ३ सा छे प, द ३, ले ६ । भ १,

२० स १ वे, सं १, आ १, उ ७ । उपशमसम्यग्दृष्टीनां—गु ८, जी २ प अ, प ६ ६, प्रा १० ७, सं ४,
प ४, इं १ । का १ त्र । यो १२ म ४ व ४ ओ १ वे २ का १ वे ३ । क ४ । ज्ञा ४ । सं ६ अ वे सा छे
सू य । व ३ । ले ६ । भ १ । स १ उ । सं १ । आ २ । उ ७ । तत्पर्याप्तानां—गु ८ अ वे प्र अ अ अ

गु उ । यो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । वा १ । यो १० म ४ व ४ ओ वे । वे ३ ।
क ४ । ज्ञा ४ म थु अ म । सं ६ अ वे सा छे सू य । व ३ । ले ६ । भ १ । स १ उ । सं १ । आ १ ।

२५ उ ७ । तदपर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ अ । प ६ अ । प्रा ७ । सं ४ । ग १ वे । इं १ । का १ । यो २
वे मि का । वे १ पुं । क ४ । ज्ञा ३ । सं १ अ । द ३ । ले २ क गु । भ १ । स १ उ । सं १ । आ १ ।
भा ३ गु

उ ६ । अप्रमत्तानां—गु १ अ । जी २ । प ६ ६ । प्रा १० ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १२ म ४ व ४
ओ १ वे २ का १ वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ म थु अ । व ३ । ले ६ । भ १ । स १ उ । सं १ । आ २ । उ ६ ।

संज्ञानुवाचोक्तः । संज्ञिगर्भो । गु १२ । जो २ । पा ५ । प ६ । प्रा १० । उ । सं ४ । ग ४ । इ १ । का १ । यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ७ । व ३ । ले ६ । भ २ ।
भा ६
सं ६ । सं १ । आ २ । उ १० ॥

संज्ञिपर्याप्तकर्मो । गु १२ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इ १ । का १ ।
५ यो ११ । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे का १ । आ का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ७ । व ३ ।
ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ १० ॥
भा ६

संज्ञ्यपर्याप्तकर्मो । गु ४ । मि । सा । अ । प्र । जो १ । अ । प ६ । अ । प्रा ७ । सं ४ ।
ग ४ । इ १ । का १ । यो ४ । ओ मि १ । वे मि १ । आ मि १ । का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ ।
कु । कु । म । थु । अ । सं ३ । अ । सा । छे । द ३ । ले २ क तु । भ २ । सं ५ । मि । सा । उ ।
भा ६
१० वे । धा । सं १ । आ २ । उ ८ ॥

संज्ञिमिव्यावृष्टिगर्भो । गु १ । मि । जो २ । पा ५ । प ६ । प्रा १० । उ । सं ४ ।
ग ४ । इ १ । पां । का १ । यो १३ । आहारद्वयपरहितः । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि ।
सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ५ ॥
भा ६

संज्ञिमिव्यावृष्टिपर्याप्तकर्मो गु १ । मि । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इ १ ।
१५ का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का १ । वे का १ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ । कु । कु । वि ।
सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं । आ १ । उ ५ ॥
भा ६

संज्ञ्यनुवादे संज्ञिनां-गु १२ । जो २ प ५ । प ६ । प्रा १० । उ । सं ४ । ग ४ । इ १ । का १ ।
यो १५ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ७ । व ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ २ । उ १० ।
भा ६

तत्पर्याप्तानां-गु १२ । जो १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इ १ । का १ । यो ११ म ४ व ४ ओ वे
२० आ । वे ३ । क ४ । ज्ञा ७ । सं ७ । व ३ । ले ६ । भ २ । सं ६ । सं १ । आ १ । उ १० । तत्पर्याप्तानां-
भा ६

गु ४ मि सा अ प्र । जो १ अ । प ६ अ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग ४ । इ १ । का १ । यो ४ ओ मि वे मि
आ मि वा । वे ३ । क ४ । ज्ञा ५ कु कु म थु अ । सं ३ अ सा छे । द ३ । ले २ क तु । भ २ । सं ५ मि
भा ६
सा उ वे धा । सं १ । आ २ । उ ८ । तन्मिष्यावृष्टां-गु १ मि । जो २ प ५ । प ६ । प्रा १० । उ ।

सं ४ । ग ४ । इ १ । का १ । यो १३ आहारद्वयाभावात् । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि । सं १ अ ।
२५ व २ । ले ६ । भ २ । सं १ मि । सं १ । आ २ । उ ५ । तत्पर्याप्तानां-गु १ मि । जो १ । प ६ ।
भा ६

प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इ १ । का १ । यो १० म ४ व ४ ओ वे । वे ३ । क ४ । ज्ञा ३ कु कु वि ।

संयसंयतसम्पदृष्टिगन्धो । गु १ । असं । जी २ । प । अ । प ६ । ६ । प्रा १० । ७ ।
सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १३ । आहारद्वयरहित । वे ३ । क ४ । जा ३ । म । ध्रु । अ ।
सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

भा ६

संजिपर्याप्तसंयतसम्पदृष्टिगन्धो । गु १ । असं । जी १ । प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ ।
५ इं १ । का १ । यो १० । म ४ । वा ४ । ओ का । वै का । वे ३ । क ४ । जा ३ । म । ध्रु । अ ।
सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । आ १ । उ ६ ॥

भा ६

संयपर्याप्तसंयतसम्पदृष्टिगन्धो । गु १ । असं । जी १ । प ६ । प्रा ७ । सं ४ । ग ४ ।
इं १ । का १ । यो ३ । ओ मि । वै मि । काम्म । वे २ । न पुं । क ४ । जा ३ । म । श्रु । अ ।
सं १ । अ । व ३ । ले २ क शु । भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ ॥

भा ६

१० संजिदेश्यतिप्रभृतिक्षीणकषायपर्वतं मूलौघभंगमक्कुं ।
असंजिगन्धो । गु १ मि । जी १२ । संजिद्वयरहित प ५ । ५ । ४ । ४ । प्रा ९ । ७ । ८ ।
६ । ७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग १ ति । इं ५ । का ६ । यो ४ । जी २ । का १ । अनु-
भयवायोगे १ । वे ३ । क ४ । जा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ ।

भा ४ अशुभ । ते

सं १ । मि । सं १ । आ २ । उ ४ ॥

१५ असंजिपर्याप्तकंगे । गु १ । मि । जी ६ । अ । संयपर्याप्तरहित प ५ । ४ । प्रा ९ । ८ ।
७ । ६ । ४ । सं ४ । ग १ । ति । इं ५ । का ६ । यो २ । ओ का १ । अनुभयवचन । वे ३ ।
क ४ । जा २ । कु । कु । सं १ । अ । व २ । ले ६ । भ २ । सं १ । मि । सं १ ।
असंजितयं । आ १ । उ ४ ॥

भा ३ । अशुभ । ते १

२ । ले ६ । भ १ । सं १ मि यं । सं १ । आ १ । उ ५ । असंयतानां—गु १ अ । जी २ प अ । प ६ ।

२० ६ । प्रा १० । ७ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १३ । आहारकद्वयाभावात् । वे ३ । क ४ । जा ३ म
ध्रु अ । सं १ । अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ । तत्पर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ ।

प ६ । प्रा १० । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो १० । वे ३ । क ४ । जा ३ म ध्रु अ । सं १ । अ । व ३
अ । व ३ । ले ६ । भ १ । सं ३ उ वे दा । सं १ । आ १ । उ ६ । तदपर्याप्तानां—गु १ अ । जी १ अ ।

२५ ५ । प्रा ७ अ । सं ४ । ग ४ । इं १ । का १ । यो ३ ओ मि वै मि का क वे २ पुं । न । क ४ । जा ३ म ध्रु
अ । सं १ । अ । व ३ अ । व ३ अ । ले २ क गु । भ १ । सं ३ । सं १ । आ २ । उ ६ । देगप्रवात्क्षीणकषाय-
पर्वतं मूलौघभंगः ।

असंजितानां—गु १ मि । जी १२ संजिपर्याप्तानपर्याप्तौ नहि । प ५ ५ । ४ ४ । प्रा ९ । ७ । ८ । ६ ।
७ । ५ । ६ । ४ । ४ । ३ । सं ४ । ग १ ति । इं ५ । का ६ । यो ४ । जी २ । का १ अनुभयवचनं ।
वे ३ । क ४ । जा २ कु कु । सं १ अ । २ ले ६ । भ १ । सं १ मि । सं १ । आ २ । उ ४ ।
भा ४ अ ३ गु १

अनाहारकमिव्यादृष्टिगच्छे। गु १। मि। जी ७। प ६। ५। ४। प्रा ७। ७। ६। ५।
 ४। ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १। काम्मं। वे ३। क ४। ज्ञा २। कु। कु। सं १।
 अ। व २। ले १। शु। भ २। सं १। मि। सं २। आ १। अनाहार उ ४॥
 भा ६

अनाहारिसासादनसम्यग्दृष्टिगच्छे। गु १। सासा। जी १। अ। प ६। प्रा ७। सं ४।
 ५। ग ३। ति। म। वे। इं १। पं। का १। त्र। यो १। काम्मंणकाय। वे ३। क ४। ज्ञा २। कु।
 कु। सं १। अ। व २। ले १। शु। भ १। सं १। सासा। सं १। आ १। अनाहार। उ ४॥
 भा ६

अनाहारि असंयतसम्यग्दृष्टिगच्छे। गु १। असं। जी १। अ। प ६। अ। प्रा ७। अ।
 सं ४। ग ४। इं १। पं। का १। त्र। यो १। काम्मंणकाय। वे २। पं। पुं। क ४। ज्ञा ३।
 म। श्रु। अ। सं १। अ। व ३। ले १। शु। भ १। सं ३। सं १। आ १। अनाहार। उ ६॥
 भा ६

१० अपर्ष्यान्नकत्वदिदमुं प्रमतसंयतंगे। गु १। जी १। प ६। प्रा ७। सं ४। ग १। म।
 इं १। पं। का १। त्र। यो १। आहारमिधमप्युदरिदनीदारिकापेभ्यिनाहारियक्कुं। वे १। पुं।
 क ४। ज्ञा ३। म। श्रु। अ। सं २। सा। छे। व ३। ले १। क। भ १। सं ३। सं १।
 आ १। उ ६॥
 भा ३

अनाहारिसयोगिकेवल्लिगच्छे। गु १। सयोग। जी १। अ। प ६। अ प्रा २। कायबल।
 १५ आयुष्य। सं ०। ग १। म। इं १। पं। का १। त्र। यो १। काम्मंण। वे ०। क ०। ज्ञा १। के।
 सं १। यया। व १। के। ले १। भ १। सं १। क्षा। सं ०। आ १। अनाहार। उ २॥
 भा १

ने ६, भ २, स ५ मि सा उ वे दा, सं २, आ १, उ १०। तन्मिव्याद्गुं—गु १ मि, जी ७, प ६ ५ ४,
 भा ६

प्रा ७ ७ ६ ५ ४ ३। सं ४। ग ४। इं ५। का ६। यो १ का। वे ३। क ४। ज्ञा २ कु कु। सं १ अ।
 व २। ले १ शु। भ २। सं १ मि। सं २। आ १ अ। उ ४। सासादनानां—गु १ सा। जी १ अ।
 भा ६

२० प ६। प्रा ७। सं ४। ग ३ ति म वे। इं १ पं। का १ त्र। यो १ का। वे ३। क ४। ज्ञा २ कु कु।
 सं १ अ। व २। ले १ शु। भ १। सं १ सा। सं १ अ। आ १ अ। उ ४। असंयतानां—गु १ अ।
 भा ६

जी १ अ। प ६ अ। प्रा ७ अ। सं ४। ग ४। इं १ पं। का १ त्र। यो १ का। वे २ पुं। पं। क ४।
 ज्ञा ३ म श्रु अ। छे। व ३। ले १ शु। भ १। छे। सं १। आ १ अ। उ ६। प्रमतानां—
 भा ६

गु १ म। जी १। प ६। प्रा ७। सं ४। ग १ म। इं १। का १। यो १ अमि तेन बोदारिकापेभ्यां-
 २५ नाशार वे १ पु। क ४। ज्ञा ३ म श्रु अ। सं २ सा छे। व ३। ले १ क। भ १। सं २। सं १।
 भा ३

आ १। उ ६। सनोमिहेरिनां—गु १ म। जी १ अ। प ६ अ। प्रा २। कायबलं। आयुष्यं। सं ०।
 व १ म। इं १ पं। का १ त्र। यो १ का। वे ०। क ०। ज्ञा १ के। सं १ यया। व १ के। के।
 ना १

मणपञ्जवपरिहारो षट्सुवसम्मत्त दोष्णि आहारा ।

एदेसु एककपगदे णत्थित्तियसेसयं जाणे ॥७२९॥

मनःपर्ष्यायः परिहारः प्रथमोपशमसम्पक्त्वं द्वायाहारो । एतेष्वेकस्मिन् प्रकृते नास्तीत्यशेषकं जानीहि ॥

मनःपर्ष्यायज्ञानमुं परिहारविगुद्धिसंयममुं प्रथमोपशमसम्पक्त्वमुं आहारकाहारकमित्यनु-
मितयरोत्रमोत्रु प्रकृतमागुत्तं बिरलुङ्घितुमित्ते दितु शिष्य नोनरिये बु संबोधने मादल्पदुदु ।

मनःपर्ष्यायज्ञान परिहारविगुद्धिसंयमः प्रथमोपशमसम्पक्त्वं आहारकद्विकं च इत्येतेषु मध्ये एकस्मिन्
नाते प्रपुणे विरहते मति अस्तेन उद्धरितं नास्ति-न संभवतीति जानीहि [तेषु मध्ये एकस्मिन्मुदिते तस्मिन्
पुमि तदा सम्पत्तेस्तित्तिरोयान्] ॥७२९॥

१०. ऐश्वर्यवान्, पचाभ्यात् । दत्तं चार, लेश्या छद्, भक्ष्यत्व-प्रसम्पत्त्व, सम्पत्त्व मार्गणाके पांच भेद सम्प-
त्त्विभ्यारवके दिना । मशो-प्रसंज्ञो, आहारक-अनाहारक, उपयोग दत्त-विषंग और मनःपर्यय अपर्याप्त अवस्थामें
पदा होते ।

इसो उक्त प्राये शौरह गुणस्थानोंमें क्रमशः शीघ्र प्ररूपणाओंका कथन संकेताक्षर द्वारा किया है ।
उसके पदवाच्य क्रमशः शौरह मार्गणाओंमें कथन किया है ।

११. यत्र मार्गणामे कथन करने हुए सातों नरकोंमें, तिर्यकके भेदोंमें, मनुष्योंमें, देवोंमें गुणस्थानोंको आहार
बनाकर शीघ्र प्ररूपणाओंका कथन विस्तारसे किया है । जैसे नरकगतिमें—नारक सामान्य, नारक सामान्य
पर्याप्त, सामान्य नारक अपर्याप्त, सामान्य नारक मिथ्यादुष्टि, सामान्य नारक पर्याप्त मिथ्यादुष्टि, सामान्य
नारक अपर्याप्त मिथ्यादुष्टि, सामान्य नारक सासादन सम्पदुष्टि, नारक सामान्य मिथ्र, नारक सामान्य
असंयत, सासादन नारक पर्याप्त असंयत, सामान्य नारक अपर्याप्त असंयत, यहाँ सामान्य नारक, यहाँ
२०. सामान्य नारक पर्याप्त, यहाँ सामान्य नारक अपर्याप्त, यहाँमिथ्यादुष्टि, यहाँनारक अपर्याप्त मिथ्यादुष्टि,
यहाँ पर्याप्त सासादन, यहाँ मिथ्रगुणस्थान, यहाँ असंयत गु., यहाँ पर्याप्त नारक असंयत, यहाँ नारक
अपर्याप्त असंयत सम्पदुष्टि, द्वितीयादि पृथ्वी नारक सामान्य, द्वितीयादि पृथ्वी नारक पर्याप्त, द्वितीयादि
पृथ्वी नारक अपर्याप्त, द्वितीयादि पृथ्वी नारक सामान्य मिथ्यादुष्टि, द्वितीयादि पृथ्वी नारक पर्याप्त
मिथ्यादुष्टि, द्वितीयादि पृथ्वी नारक अपर्याप्त मिथ्यादुष्टि, द्वितीयादि पृथ्वी नारक सामान्य, द्वितीयादि
३०. पृथ्वी नारक अपर्याप्त मिथ्यादुष्टि, द्वितीयादि पृथ्वी नारक असंयत सम्पदुष्टि, इतने विस्तारसे शीघ्र प्ररूपणाओं-
का कथन करने कथन किया है । इसी प्रकार तिर्यकगति, मनुष्यगति, देवगति, इन्द्रिय मार्गणाके भेद-वर्णनोंमें
शीघ्र प्ररूपणाओंका कथन किया है ।

२१. यत्रे इत्येव च. दोहरवकको दोहरके अनुकार नद्वयों द्वारा अधिक करनेवा विचार किया वा ।
सिन्धु इत्ये वा नद्वयवर्णनां द्वा प्रकाश करवा पङ्क्ति । और इत्येववर्णने वा कश्चाई भा जगो । कथना
३०. यत्र वा वद आशा इति उक्त अत्र किया । यद्वारा प्रकृत लेनेसे दोहरको समझा जा सकता है ।]

मनःपर्ष्यायज्ञान, परिहारविगुद्धि संयम, प्रथमोपशम सम्पक्त्वं, आहारक, आहारक-
मिथ्र इत्येकेके एक पङ्क्ति होनेपर उसके साथ शेष सब नहीं होते ॥७२९॥

२. ३ इति ७२९-नरकः सात्त नरकः ।

प्रशस्ति

१३१ श्री बुधवारिवाहन शके १२०५ वर्षे क्रोधिनाम संवत्सरे फाल्गुणमासे शुक्लपक्षे जिनिरती
उत्तराश्विने प्रयागं तटिण्यां तिस्रो बुधवारो सत्तावीसघटिका उपरातिरु सप्तम्यां तिस्रो अनु-
राधावसरे तीस घटिका उपरातिरु ज्येष्ठा नक्षत्रे व्याघातनामयोगे बहू घटिका
उपरातिरु हर्षनामयोगे बरहरजे सत्तावीस घटिका यस्मिन् पंचांग-
विट्ठि तत्र मोठेड मुनस्थाने धोपंच परमेष्ठिप्रियचैत्यालयस्थिते,
श्रीमच्छंभुवर्षण विरचितमप्य गोम्मटसारकृष्णाटक-
वृत्ति जीवतच्चप्रदीपिकेयोलु जीवकांडं
संपूणंमादुदु ।
मगळं भुवान् ॥
धो धो धो ॥

| | गाथा | पृष्ठ | | गाथा | पृष्ठ |
|---------------------|------|-------|---------------------|------|-------|
| कंदस्स व मूलस्स व | १८९ | ३२० | चदुगदि भञ्जो सण्णो | ६५२ | ८८६ |
| ख | | | चदुगदिमदिमुदवोहा | ४६१ | ६७७ |
| खमउवसमियविषोही | ६५१ | ८८५ | चरमघरासाणहरा | ६३८ | ८७६ |
| खयगे य खोणमोहे | ६७ | १२९ | चरिमव्वंकेणवहिद | ३३३ | ५६६ |
| खीणे दंसणमोहे | ६४६ | ८८३ | चागी भद्दो चोवखो | ५१६ | ७१० |
| खेत्तादो अमुहत्तिया | ५३८ | ७३० | चितियमचितियं वा | ४३८ | ६६४ |
| खंधा अर्थखलोगा | १९४ | ३२५ | चितियमचितियं वा | ४४९ | ६७० |
| खंधं सयलसमत्थं | ६०४ | ८४७ | चोद्दस मग्गण संजुद | ३४० | ५७३ |
| ग | | | चण्डो ण मुचइ वेरं | ५०९ | ७०७ |
| गइ इंदियेसु काये | १४२ | २७५ | चंदरवि जम्भुदोव य | ३६१ | ६०० |
| गइ उदयजपज्जाया | १४६ | २७८ | छ | | |
| गच्छसमा त्वकालिय | ४१८ | ६५१ | छट्टाणाणं आदो | ३२८ | ५५३ |
| गतनम मनगं मोरम | ३६३ | ६०३ | छट्टोत्ति पडम सण्णा | ७०२ | ९१९ |
| गदिटाणोग्गह किरिया | ५६६ | ८०५ | छद्दव्वावट्टाणं | ५८१ | ८१३ |
| गदिटाणोग्गहकिरिया | ६०५ | ८४८ | छद्दव्वेसु य णामं | ५६२ | ८०२ |
| गइभञ्जोवाणं पुण | ८७ | १५८ | छणयणीलकवोदसु | ४९५ | ६९९ |
| गइभण पुइत्थिय सण्णो | २८० | ४७० | छण्यं च णवविहाणं | ५६१ | ८०१ |
| गाउय पुपत्तमवरं | ४५५ | ६७३ | छण्यं चाधियवीसं | ११६ | २०५ |
| गुगजोवठाणरहिया | ७३२ | १०७३ | छस्स य जोयणकदिह्दि | १५६ | २८५ |
| गुगजोवा पग्गत्तो | २ | ३३ | छत्सयपण्णासाइं | ३६६ | ६०४ |
| गुगजोवा पग्गत्तो | ७२५ | ९४६ | छादयदि सयं दोषे | २७४ | ४६५ |
| गुगजोवा पग्गत्तो | ६७७ | ९०४ | छेतूण य परिपायं | ४७१ | ६८४ |
| गुगारव्वइवो छट्टा | ३७२ | ६१९ | ज | | |
| गुइमिरसंधि पम्भं | १८७ | ३१९ | जगवद सम्मदियणा | २२२ | ३५९ |
| गोमयपेरे पणमिय | ७०६ | ९३५ | जत्थेइइ मरइ जीवो | १९३ | ३२२ |
| घ | | | जम्मं खलु सम्मुच्छण | ८३ | १५५ |
| घग अंगुल पइमपदं | १६१ | २९० | जइ कंथण मग्गिययं | २०३ | ३३५ |
| घ | | | जइयारउअमो पुण | ४६८ | ६८३ |
| घउपइइइइइइइ | ३३९ | ५७३ | जइ पुण्णापुग्गाइ | ११८ | २५१ |
| घउपय चोइय चउरो | १७८ | ९०४ | जइ भारवद्दो पुरिषो | २०२ | ३३५ |
| घउरव्वपावउरइइ | ६९१ | ९१२ | जइहा उअरिय भावा | ४८ | ८० |
| घउमट्टइइं विउत्थिय | ३५३ | ५८२ | जाइउरामरगमया | १५२ | २८२ |
| घअण्णय उं पउमइ | ४८४ | ६९२ | जाई अविनाभावो | १८१ | ३११ |
| घअण्णु वेरं चण्णं | १७१ | ३०० | जागइ कउवाकउइं | ५१५ | ७०९ |
| घअण्णिउं धेत्ताइ | ६९३ | ८८५ | जागइ त्रिइअकियण्ण | २९९ | ५०५ |

| | गाथा | श्ल | | गाथा | श्ल |
|------------------------|------|-----|---------------------|------|-----|
| पोहंदिद्यत्ति सण्णा | ४४४ | ६६८ | तिरिय गदोए चोहस | ७०० | ९१८ |
| पोहंदिदेसु विरसे | २९ | ५९ | तिरिय चवक्काणोवे | ७१३ | ९३८ |
| पोहम्मुरालसंचं | ३७७ | ६२२ | तिरियंति कुडिलमावं | १४८ | २०९ |
| | | | तिविपचपुण्यपमाणं | १८० | ३०८ |
| त | | | तिव्वतमा तिव्वतरा | ५०० | ७०१ |
| तज्जोगो सामण्यं | २६३ | ४५० | तिसयं मणति केई | ६२६ | ८६४ |
| तत्तां उवरि उवसम | १४ | ४५ | तिनु तेरं दस मिस्से | ७०४ | ९२५ |
| ततो कम्मदयस्सिगि | ३९७ | ६३७ | तीसं बासो जम्मे | ४७३ | ६८५ |
| ततो ताणुत्ताणं | ६३९ | ८७६ | तेउत्तिमाणं एवं | ५५४ | ७८० |
| ततो लांठय कम्म० | ४३६ | ६६३ | तेउदु असंखरुप्पा | ५४२ | ७३३ |
| तत्तां संतेजग्गुणो | ६४० | ८७७ | तेउस्स य सट्ठाणे | ५४६ | ७६२ |
| ततो एगारगव | १६२ | २९० | तेऊ तेऊ तेऊ | ५३५ | ७२६ |
| तदियकसायुदयेण य | ४६९ | ६८३ | तेऊ यम्मे मुक्के | ५०३ | ७०३ |
| तदियसतो अंतगदो | ३९ | ६८ | तेजा सरीरजेट्ठं | २५८ | ४११ |
| तद्देहमंगुलस्साय | १८४ | ३१४ | तेसोस बेंजणाई | ३५२ | ५८१ |
| तल्लोत्तममुगविमलं | १५८ | २८६ | तेरस कोदो देसे | ६४२ | ८८१ |
| तत्त्वहृदोए चरिमो | १०५ | १८४ | तेरिच्छिय लद्धिय य | ७१४ | ९३९ |
| तन्निदियं कप्पाणम | ४५४ | ६७३ | तेवि विसेसेणहिया | २१४ | ३४९ |
| तसच्चदुजुगाणमज्जे | ७१ | १४३ | तेसि च समासेहि | ३१८ | ५२५ |
| तसच्चोवाचं धोये | ७२२ | ९४३ | तो बासय अज्जयणे | ३५७ | ५९५ |
| तसरासिपुडविश्रायो | २०६ | ३४० | तत्सुद्धसलागाहिद | २६८ | ४९८ |
| तसहीणो संघारो | १७६ | ३०४ | | | |
| तस्समयवडवग्गय | २४८ | ३८३ | | | |
| तस्सुवरि र्गिणदेसे | १०४ | १८३ | यावरकायप्पहुदो | ६८५ | ९०९ |
| तद्दि तेसदेवणारय | २६९ | ४५९ | यावरकायप्पहुदो | ६८६ | ९०९ |
| तद्दि सञ्जे सुद्धसला | २६७ | ४५६ | यावरकायप्पहुदो | ६८७ | ९१० |
| ताण ममयवडडा | २४६ | ३८१ | यावरकायप्पहुदो | ६९२ | ९१३ |
| ताणि विरिणःपट्टिय | ५४ | ११८ | यावरकायप्पहुदो | ६९४ | ९१४ |
| तिनुत्ता सत्तमुत्ता वा | १६३ | २९१ | यावरकायप्पहुदो | ६९८ | ९१७ |
| तिणकारि तिनुत्ताक | २७६ | ४६६ | यावरससगिपोलिय | १७५ | ३०१ |
| तिण्णिमद कोरवाचं | १९० | २८९ | पोवा तिनु संघमुत्ता | २८१ | ४०० |
| तिण्णिवयमदुंरिदिहिट्ट | १७० | २९९ | | | |
| तिण्णिवसा छणोवा | १२२ | २५६ | | | |
| तिण्ण दोहू दोहू | ५३४ | ७२६ | दम्भं धेतं कामं | ४५० | ६७० |
| तिण्णो विविउववि | ४४१ | ६६७ | दम्भं धेतं कामं | ३७३ | ६२२ |
| तिण्णिय इयवणदो | १३५ | ८९४ | दम्भं टाण्डमहाळं | ६२० | ८६१ |
| तिण्णिय वरर ओपो | ४२५ | ६९८ | दस चोदसट्टवट्टा | ३४४ | ५७५ |

य

व

| गाथा | शृङ्खला | शृङ्खला | गाथा | शृङ्खला |
|----------------------|---------|---------|------------------------|---------|
| वयणेहि वि हेद्विहि | ६४७ | ८८४ | सग सग असंखभागे | २०७ |
| वरकाओदंसमुदा | ५२६ | ७२१ | सग सग खेपत्तदेसस | ४३४ |
| ववहारो पुण कालो | ५७७ | ८११ | सट्टाणसमग्घादे | ७३५ |
| ववहारो पुण कालो | ५९० | ८१८ | सण्णाणतिग्गं अविरेद | ६८८ |
| ववहारो पुण तिविहो | ५७८ | ८११ | सण्णाणरासि पंच य | ४६४ |
| ववहारो य वियप्पो | ५७२ | ८०८ | सण्णित्त वारसोदे | १६९ |
| वडुविह वहुप्पयारा | ४८६ | ६९२ | सण्णो ओपे मिच्छे | ७२० |
| वापणनरनोनानं | ३६० | ५९९ | सण्णो सण्णित्तुडि | ६९७ |
| वास पुधत्ते खड्वा | ६५७ | ८८८ | सत्तण्हं पुड्डीणं | ७१२ |
| विउलमदी वि य छडा | ४४० | ६६६ | सत्तण्हं उवत्तमदो | २६ |
| विकहा तहा कसाया | ३४ | ६२ | सत्तमसिदिमि कोसं | ४२४ |
| विग्गहृगदिमावण्णा | ६६६ | ८९६ | सत्तदिणा छम्मासा | १४४ |
| विति वपपुण्णजहणं | ९६ | १६६ | सत्तादी अट्टंता | ६३३ |
| विवरोयमोहिणाणं | ३०५ | ५११ | सदसिवसंखो मवकडि | ६९ |
| विविहृगुणइद्विगुत्तं | २३२ | ३७० | सट्टहणासट्टणं | ६५५ |
| वित्तजंतकूड पंजर | ३०३ | ५०९ | सग्भावमणो सच्चो | २१८ |
| वित्तयाणं विसर्दणं | ३०८ | ५१५ | समयत्तय संखावलि | २६५ |
| वीरमुहकमलगिभय | ७२८ | ९४९ | समयो वु वट्टमाणो | ५७९ |
| वीरियजुदमदिलउवस | १३१ | २६६ | सम्मत्तरयणपब्बय | २० |
| वीसं वीसं पादुड | ३४३ | ५७५ | सम्मत्तमिच्छपरिणा | २४ |
| वेगुब्बं पत्रत्ते | ६८२ | ९०७ | सम्मत्तुत्तौए | ६६ |
| वेगुत्तिय वरसंबं | २५७ | ४१० | सम्मत्तदेसपादी | २५ |
| वेगुत्तिय उत्तत्थं | २३४ | ३७१ | सम्मत्तदेससयल | २८३ |
| वेगुत्तिय आहारय | २४२ | ३७६ | सम्माइट्ठी जीवो | २७ |
| वेत्थम अत्थ अवग्गह | ३०७ | ५१३ | सम्मामिच्छुरयेण य | २१ |
| वेत्थमूलोरग्गभय | २८६ | ४७८ | सब्बमरूची दब्बं | ५९२ |
| वेत्थमुदीरणाए | २७२ | ४६४ | सब्बसमात्तो णियमा | ३३० |
| वेत्थाहाहारीत्ति य | ७२४ | ९४४ | सब्बसमात्तेणवहिद | २९७ |
| वेत्थमइत्तायवेगु | ६६७ | ८९६ | सब्बगुराणं ओपे | ७१७ |
| वेत्थमउत्पण्णंगुल | ५४१ | ७३३ | सब्बावहिस्स एवको | ४१५ |
| | | | सब्बेअत्ति पुग्गभंग्या | ३६ |
| | | | सब्बेअत्ति मुट्टमाणं | ४९८ |
| | | | सब्बोहिस्सिय कम्मथो | ४२३ |
| | | | सब्बं च सोयमालि | ४३२ |
| | | | सब्बंग अंग संभर | ४४२ |
| | | | मायारो उवज्जोमो | ७ |
| | | | यामारय चउत्तोग | ३६७ |
| | | | | ६१२ |

स

सहस्रोमाया पदमं

४३०

सहस्रो बंधुदीर्घं

२२४

सहस्रगुण्डि तमस्व य

७७

सहस्र भवशरैर्हि

६४१

सहस्रभागेर्हि विवत्ते

४१

६६०

३६१

१४९

८७९

७१

६६०

३६१

१४९

८७९

७१

गो० जीवकाण्डटीकागतपगानुक्रमणी

अ

| | |
|------------------------------------|-----|
| अद्वयद्वैहि रोमं [ति. प. ११२०] | २२४ |
| अगह्निर्मस्यं गह्निं | ७१२ |
| अग्र मुमुच्छिगिगम्ने | १५३ |
| अन्नवसाण गिगोद गरीरे | ६९२ |
| अद्वयस्य महाभाषा [ति. प. ११६१] | २१ |
| अद्वयस्य टानेमु | २३५ |
| अद्वैहि गुणद्वैहि [ति. प. ११०४] | २३२ |
| अद्वैतस्य अणलयस्य | ८०९ |
| अणुनागपदेदेहि [ति. प. ११२२] | १२ |
| अणोहि अणोहि [ति. प. ११७५] | २३ |
| अदार्यालच्छेदो [ति. प. ११३१] | २४१ |
| अमंतर दम्बमलं [ति. प. ११३३] | १२ |
| अभिमतफलसिद्धे | २५ |
| अरिहाणं सिद्धाणं [ति. प. १११९] | १३ |
| अवरं मज्जिम उत्तम [ति. प. ११२२२] | २३५ |
| अवाच्यानामनन्तांजो | ५६९ |
| अहवा भेदगयं [ति. प. १११४] | १२ |
| अहवा मंगं सौख्यं [ति. प. १११८] | १३ |

आ

| | |
|-----------------------------------|-----|
| आक्यानलसानुपहृत | २५९ |
| आदिम संपणणजुदो [ति. प. ११५७] | २१ |
| आद्यन्तरहितं द्रव्यं | ८०४ |
| आप्तो प्रते ध्रुवे [सो. उ. २३१] | ८०२ |
| आयुरन्तर्भूतः | २५९ |

इ

| | |
|--------------------------------|-----|
| इगिबउदुगमुष्णं | २८० |
| इगिबिगले इगसोदी | १५३ |
| इय मूलतंतकसुा [ति. प. ११८०] | २४ |
| इय सखा पचवर्षं [ति. प. ११३८] | १७ |

उ

| | |
|---------------------------------|-----|
| उच्छेद् अंगुलेण [ति. प. १११०] | २३३ |
| उत्तम भोगविरोध [ति. प. १११९] | २३४ |
| उत्तमपणावसर्पण | ७५९ |
| उपगज्जि जो रायो [ति. सा. ७३] | २४३ |

ए

| | |
|-------------------------------|-----|
| एककरसवण्णगंधं [ति. प. ११७७] | २३१ |
| एककेवकं रोमगं [ति. प. ११२५] | २३६ |
| एत्थावसप्पणीए [ति. प. ११६८] | २२ |
| एदस्स उदाहरणं [ति. प. ११२२] | १४ |
| एदासि भासाणं [ति. प. ११६२] | २२ |
| एदेहि अणोहि [ति. प. ११६४] | २२ |
| एदाणं पल्लाणं [ति. प. ११३०] | २३९ |
| एवं अपोयभेदं [ति. प. ११२७] | १५ |

ओ

| | |
|--------------------------------|-----|
| ओसण्णासण्णा जे [ति. प. ११०३] | २३३ |
|--------------------------------|-----|

औ

| | |
|-------------|-----|
| औपरलेपिकवै- | ८१४ |
|-------------|-----|

अं

| | |
|--------------------------------|-----|
| अंताइ मज्जहोणं [ति. प. ११९८] | २३१ |
| अंताइ सूहजोगं [ति. सा. ३१५] | २४० |

क

| | |
|-----------------------------------|-----|
| कः प्रजापतिवदिदष्टः | ३० |
| कणपघराघरघोरं [ति. प. ११५१] | १९ |
| कन्तारो दुवियप्पो [ति. प. ११५५] | २० |
| कम्ममहोए वालं [ति. प. ११०६] | २३२ |
| करितुरगरहाहिवर्धं [ति. प. ११४३] | १८ |
| केवलणाणविवायर [ति. प. ११३३] | १६ |
| क्षणिकं निर्गुणं चैव | १४० |

| | |
|-------------------------------------|--|
| फलं समुद्द उवमं | |
| पावं मलेति भण्णद [ति. प. १११७] | |
| पुष्पं पुद पविता [ति. प. ११८] | |
| पुंवेदं वेदंता पुरिसा [सिद्ध भ ६] | |
| पुत्रिलाहरिवेहि [ति. प. १११५] | |
| पुत्रिलाहरिवेहि उतो [ति. प. १११८] | |
| पूरंति गलंति जशो [ति. प. १११९] | |
| पूर्वापरविहङ्गादे | |
| प्रदेशप्रचयात् काया | |
| प्रथमवयसि पीतं | |

य

| | |
|-----------------------------------|--|
| बाहिरमूर्द्धवमं [त्रि. सा. ३१६] | |
| बाहिरमूर्द्धवलय [त्रि. सा. ३१८] | |
| वे किवकूर्ह दंडो | |

भ

| | |
|------------------------------------|--|
| भज्जमिददुग्गुणु | |
| भज्जस्सद्धच्छेदा [त्रि. सा. १०६] | |
| भव्वान जेण एसा | |
| भवणतियाण विहारो | |
| भावणवैतर जोइसिय [ति. प. ११६३] | |
| भावसुदपज्जएण [ति. प. ११७९] | |
| भावियसिद्धंताणं | |
| भियारकलसदप्पण [ति. प. १११२२] | |

म

| | |
|--------------------------------------|--|
| मंगलमिचित्तेतु | |
| मंगल पञ्जाएहि [ति. प. ११२८] | |
| मलविद्धमणिब्यक्ति [लघीय. ५७ श्लो.] | |
| महमंडलियाण [ति. प. ११४१] | |
| महमंडलीयणामो [ति. प. ११४७] | |
| महवीरभासिदरथो [ति. प. ११७६] | |
| मूर्तिमरुपु पदाथेपु | |
| मेह्व गिण्णकंवं | |
| मोहो खाइयसम्मं | |

य

| | |
|--------------------------|--|
| यया च पितृयुद्ध्या | |
| यदीन्द्रस्यात्मनो लिङ्गं | |
| यद्यपि विमलो योगी | |

| | | |
|-----|---|--------------------|
| २३० | र | |
| १३ | कञ्ज गणा सारण | ७५४ |
| ११ | रोमद्वारं छात्रेण [ति. गा. १०४] | २४० |
| ४५३ | स | |
| १३ | सत्रगंमुद्दि मुमुग्गो [ति. गा. १०३] | २४० |
| १५ | सोमासागाण तद्दा [ति. प. ११७७] | २४ |
| २३१ | व | |
| २२ | वभापुआरिमाणो [ति. गा. ७४] | २४४ |
| ८०२ | वण्णरगमंभाणे [ति. प. १११००] | २३२ |
| २६ | वररथणमउत्तभारो [ति. प. ११४२] | १८ |
| | वर्गणभरणस्योः | ८०३ |
| ७६४ | वयद्दारोरोमराणि [ति. प. ११२६] | २३६ |
| ७६५ | वयद्दाण्डारण | २३० |
| २३४ | वामस्स पइममाणे [ति. प. ११६९] | २२ |
| | विष्णं नासवित्तुं | २६ |
| २४७ | विष्णोपाः प्रकयं मान्ति | १० |
| २४९ | विउले मोदमगोसं [ति. प. ११७८] | २४ |
| २० | विरजिज्जमाणरासि [त्रि. सा. १०७] | २३७, २४३, २४५, २४६ |
| ७७४ | विरिएण तद्दा पाइअ [ति. प. ११७२] | २३ |
| २२ | विरलिदरासिच्छेदा [त्रि. सा. १०८] | २४६ |
| २४ | विरलिदरासोदो पुण [त्रि. सा. ११०, १११] | २४० |
| ३२ | | ३५२, ३९४, ७७० |
| २३३ | विविहत्थेहि अणतं [ति. प. ११५३] | २० |
| | विविह वियुष्पं दब्बं [ति. प. ११३२] | १६ |
| ११ | विस्साणं लोगाण [ति. प. ११२२] | १४ |
| १५ | व्येकपदोत्तरघातः | ५४३ |
| २९६ | श | |
| १८ | शामबोधवृत्तपसं [आत्मानु० १५] | ३० |
| १९ | श्रेयोमार्गस्य सतिद्धिः [आसप० २] | २५ |
| २४ | ष | |
| ८२३ | षट्केन युगपद् योगात् | ८०४ |
| ३२ | स | |
| १३८ | सकतापचवसपरंवर [ति. प. ११३६] | १७ |
| ३१ | सद्दो सत्तसएहि [त्रि. सा. १४०] | ७५७ |
| २९६ | सत्तणवसुण्णपंच य | ७६३ |
| ११ | | |

विशिष्ट शब्द-सूची

अ

| | | | | | |
|------------------|--------------|----------------------------|-------------------|--------------------|--------------------|
| अक्रियावाद | ६०० | अनुत्तरोपपादिकदश | ५९६ | अवयव | ५१७ |
| अक्षर (के भेद) | ५६८ | अनुपक्रमकाल | ४५६ | अधिनाभावसम्बन्ध | ५२१ |
| अक्षर समास | ५७० | अनुपक्रमायुक्त | ७१३ | अविभागप्रतिच्छेद | १२२ |
| अक्षरार्थक थु. | ५२४ | अनुभागकाण्डकोटकरण | १०४ | अविरतसम्यन्दृष्टि | ४०, ४३, ५९ |
| अक्षिप्र | ५१९ | अनुभयवचन | ३६२, ३६३ | अष्टाङ्क | ५३१, ५५३, ५५५, ५६७ |
| अगस्त्य | ६०० | अनुभागवन्धाध्यवसाय स्थान | | असंख्यात गुणवृद्धि | ५३१ |
| अगाड (दोष) | ५६ | | २२८ | असंख्यात भागवृद्धि | ५३१ |
| अङ्ग बाह्य | ६१२ | अनुमान | ५२० | असंख्याताणुवर्गणा | ८२३ |
| अघ्रायणीयपूर्व | ६०५ | अनुयोगथु. | ५७३ | असंज्ञी | ८९२, ९३२ |
| अघ्रायुदधान | ६९२ | अन्तकृद्दशांग | ५९६ | असंयत | ५७ |
| अचिञ्च (योनि) | १५६ | अन्तर्भूत | ८१० | अस्तिनास्तिप्रवाद | ६०५ |
| अज्ञान मिथ्यात्व | ४७ | अन्योन्याम्यस्तराशि | १२२ | | |
| अज्ञानवाद | ६०० | अपकर्ष | ७११, ७१२ | आ | |
| अङ्गज | १५७ | अपगतवेद | ४६६ | आकारयोनि | १५४ |
| अणु वर्गणा | ८२३ | अपर्याप्तिक | २५१ | आकाशगता | ६०२ |
| अपःप्रवृत्तकरण | ८०, ८१, १०४ | अपूर्वकरण | ४१, ११२, ११३, ११८ | आशेषणीकथा | ५९७ |
| अडापत्तयोपम | २३९ | अपूर्वस्पर्धक | १२१, १२२, १२५ | आचाराण | ५९२ |
| अद्भुत | ५१९ | अप्रतिष्ठित प्रत्येक | ३१७ | आत्मप्रवाद | ६०८ |
| अनन्तगुणवृद्धि | ५३१ | अप्रत्याख्यानावरण | ४७३ | आत्मागुल | २३२ |
| अनन्तभानवृद्धि | ५३१ | अप्रमत्त विरत } ४१, ४४, ७८ | | आदेन | ३४, ३५ |
| अनन्तरात्मक थु. | ५२३ | „ संयत } | | आभीत | ५१० |
| अनन्तानुबन्धी | ५७, ४७४ | अप्रतिपाति | ६२१ | आयुप्राण | २६६ |
| अनन्ताणुवर्गणा | ८२४ | अभिनिबोधिक (मतिज्ञान) | ५१२ | आवली | २१६, ८०९ |
| अननुवायो | ६१९ | अयोग्यकेवलिजिन | ४१, १२८ | आरत्नलायन | ६०० |
| अनवस्थित | ६२० | अर्थपद | ५७० | आमुरण | ५१० |
| अनाहार उपयो | १०१ | अर्थोत्तर थु. | ५६६, ५६८ | आस्तित्व | ८०२ |
| अनाहारक | ८९६ | अर्थोत्तर | ५१४ | आहाररूपाययोग | ३७४ |
| अनिवृत्तकरण | ४१, ११९, १२० | अर्थोत्तर | ५१५ | आहारपर्याप्ति | २५२ |
| अनिवृत्त | ५१९ | अर्थोत्तर | ५१५ | आहारक मिथ्याकाययोग | ३७५ |
| अनुकृति | ८१ | अर्थोत्तर | ६१७ | आहार संज्ञा | २६९ |
| अनुक्त | ५१९ | अर्थोत्तर | २३१ | आहारक | ८९६ |
| अनुमानो | ६१९ | अर्थोत्तर | ६९२ | | |
| | | अर्थोत्तर | ६२० | इ | |
| | | | | इन्द्र (ऋ. गुह) | ४७ |

विशिष्ट शब्द-सूची

अ

| | | | | | |
|--------------------|--------------|--------------------------|-------------------|---------------------|--------------------|
| अक्रियावाद | ६०० | अनुत्तरोपपादिकदश | ५९६ | अपाय | ५१७ |
| अक्षर (के भेद) | ५६८ | अनुपक्रमकाल | ४५६ | अविनाभावसम्बन्ध | ५२१ |
| अक्षर समास | ५७० | अनुपक्रमायुक्त | ७१३ | अविभागप्रतिच्छेद | १२२ |
| अक्षरारम्भक ध्रु. | ५२४ | अनुभागकाण्डकोटकरण | १०४ | अविरतसम्बन्धवृद्धि | ४०, ४३, ५९ |
| अक्षिप्र | ५१९ | अनुभववचन | ३६२, ३६३ | अष्टाङ्ग | ५३१, ५५३, ५५५, ५६७ |
| अगस्त्य | ६०० | अनुभागवन्धाध्यवसाय स्थान | २२८ | असंख्यात गुणवृद्धि | ५३१ |
| अगाढ (दोष) | ५६ | अनुमान | ५२० | असंख्यात भागवृद्धि | ५३१ |
| अङ्ग बाह्य | ६१२ | अनुयोगध्रु. | ५७३ | असंख्यातानुसंगता | ८२३ |
| अप्रायणीयपूर्व | ६०५ | अन्तकृद्दशांग | ५९६ | असंज्ञी | ८९२, ९३२ |
| अचक्षुदर्शन | ६९२ | अन्तर्मुखी | ८१० | असंयत | ५७ |
| अचित्त (योनि) | १५६ | अन्योन्याम्यस्तराशि | १२२ | अस्तित्वास्तिप्रवाद | ६०५ |
| अज्ञान मिथ्यात्व | ४७ | अपकर्ष | ७११, ७१२ | अ | |
| अज्ञानवाद | ६०० | अपगतवेद | ४६६ | आकारयोनि | १५४ |
| अण्डज | १५७ | अपर्याप्तक | २५१ | आकाशगता | ६०२ |
| अणु वर्गणा | ८२३ | अपूर्वकरण | ४१, ११२, ११३, ११८ | आक्षेपणीकथा | ५९७ |
| अधःप्रवृत्तकरण | ८०, ८१, १०४ | अपूर्वस्पर्धक | १२१, १२२, १२५ | आचारांग | ५९२ |
| अज्ञापन्योपम | २३९ | अप्रतिष्ठित प्रत्येक | ३१७ | आत्मप्रवाद | ६०८ |
| अधुव | ५१९ | अप्रत्याख्यानावरण | ४७३ | आत्मांगुल | २३२ |
| अनन्तगुणवृद्धि | ५३१ | अप्रमत्त विरत | ४१, ४४, ७८ | आदेश | ३४, ३५ |
| अनन्तभागवृद्धि | ५३१ | „ संयत | | आभीत | ५१० |
| अनन्तारात्मक ध्रु. | ५२३ | अप्रतिपाति | ६२१ | आयुप्राण | २६६ |
| अनन्तानुबन्धी | ५७, ४७४ | अभिनिवोधिक (मतिज्ञान) | ५१२ | आवली | २१६, ८०९ |
| अनन्तानुसंगता | ८२४ | अयोगकेवलिजिन | ४१, १२८ | आश्वलायन | ६०० |
| अननुगामी | ६१९ | अर्थपद | ५७० | आमुरक्ष | ५१० |
| अनवस्थित | ६२० | अपारिहार ध्रु. | ५६६, ५६८ | आस्तित्वय | ८०२ |
| अनाकार उपयोग | १०१ | अपारिवह | ५१४ | आहारवकाययोग | ३७४ |
| अनाहारक | ८९६ | अवग्रह | ५१५ | आहारपर्याप्ति | २५२ |
| अनिवृत्तिकरण | ४१, ११९, १२० | अवधिज्ञान | ६१७ | आहारक मिथकाययोग | ३७५ |
| अनिमूव | ५१९ | अवसन्नासन्न | २३१ | आहार संज्ञा | २६९ |
| अनुकृष्टि | ८४ | अवधिदर्शन | ६९२ | आहारक | ८९५ |
| अनुक | ५१९ | अवस्थित | ६२० | इ | |
| अनुगामी | ६१९ | | | इन्द्र (स्वे. गुह) | ४७ |

विशिष्ट शब्द-सूची

अ

| | | | | | |
|-------------------|--------------|--------------------------|-------------------|-----------------------|--------------------|
| अक्रियावाद | ६०० | अनुत्तरोपपादिकदश | ५९६ | अवाय | ५१७ |
| अक्षर (के भेद) | ५६८ | अनुपक्रमकाल | ४५६ | अविनाभावसम्बन्ध | ५२१ |
| अक्षर समास | ५७० | अनुपक्रमायुष्क | ७१३ | अविभागप्रतिच्छेद | १२२ |
| अक्षरारम्भक श्रु. | ५२४ | अनुभागकाण्डकोटकरण | १०४ | अविरतसम्यग्दृष्टि | ४०, ४३, ५९ |
| अग्निप्र | ५१९ | अनुभववचन | ३६२, ३६३ | अष्टाङ्ग | ५३१, ५५३, ५५५, ५६७ |
| अगस्त्य | ६०० | अनुभागवन्धाध्यवसाय स्थान | २२८ | असंख्यात गुणवृद्धि | ५३१ |
| अगाड (दोष) | ५६ | अनुमान | ५२० | असंख्यात भागवृद्धि | ५३१ |
| अङ्ग बाह्य | ६१२ | अनुयोगश्रु. | ५७३ | असंख्याताधुवर्गणा | ८२३ |
| अक्षयणीयपूर्व | ६०५ | अन्तच्छब्दसंग | ५९६ | असंज्ञी | ८९२, ९३२ |
| अक्षय्यदर्शन | ६९२ | अन्तर्भूत | ८१० | असंयत | ५७ |
| अक्षित (योनि) | १५६ | अन्योन्याम्यस्तराशि | १२२ | अस्तित्वास्तित्प्रवाद | ६०५ |
| अज्ञान मिथ्यात्व | ४७ | अपकर्ष | ७११, ७१२ | | आ |
| अज्ञानवाद | ६०० | अपगतवेद | ४६६ | आकारयोनि | १५४ |
| अष्टाङ्ग | १५७ | अपर्याप्तक | २५१ | आकारगतता | ६०२ |
| अधु वर्णना | ८२३ | अपूर्वकरण | ४१, ११२, ११३, ११८ | आक्षेपणीकृपा | ५९७ |
| अधःप्रवृत्तकरण | ८०, ८१, १०४ | अपूर्वस्पर्शक | १२१, १२२, १२५ | आधारसंग | ५९२ |
| अडापत्न्योपम | २३९ | अप्रतिष्ठित प्रत्येक | ३१७ | आत्मप्रवाद | ६०८ |
| अधुव | ५१९ | अप्रत्याख्यानावरण | ४७३ | आत्मांगुल | २३२ |
| अनन्तगुणवृद्धि | ५३१ | अप्रमत विरत | ४१, ४४, ७८ | आदेश | ३४, ३५ |
| अनन्तवायवृद्धि | ५३१ | „ संयत | ४१, ४४, ७८ | आभीत | ५१० |
| अनधरात्मक श्रु. | ५२३ | अप्रतिराशि | ६२१ | आयुप्राण | २६६ |
| अनन्तानुबन्धी | ५७, ४७८ | अभिनिर्गोषिक (मतिज्ञान) | ५१२ | आवलो | २१६, ८०९ |
| अनन्तानुबन्धना | ८२४ | अयोग्यैवनिश्चित | ४१, १२८ | आवलायन | ६०० |
| अननुपारनी | ६१९ | अयंपद | ५७० | आमुरध | ५१० |
| अनन्तविषय | ६२० | अयंक्षर श्रु. | ५६६, ५६८ | आस्तित्वय | ८०२ |
| अनाहार उपयोक्त | ५०१ | अयंविषय | ५१४ | आहारककाययोग | ३७४ |
| अनाहारक | ८१९ | अयंविषय | ५१५ | आहारपर्याप्ति | २५२ |
| अनिवृत्तिकरण | ४१, ११९, १२० | अयंविषय | ६१७ | आहारक मिथ्यकाययोग | ३७५ |
| अनिवृत्त | ५१९ | अयंविषय | २३१ | आहार संज्ञा | २६९ |
| अनुष्टुप् | ८४ | अयंविषय | १९२ | आहारक | ८१५ |
| अनुष्टुप् | ५१९ | अयंविषय | ६२० | | इ |
| अनुबन्ध | ११९ | | | इन्द्र (दे. मुक्) | ४७ |
| अनुबन्धी | ११९ | | | | |

विशिष्ट शब्द-सूची

अ

| | | | | | |
|-------------------|--------------|--------------------------|-------------------|--------------------|--------------------|
| अक्रियावाद | ६०० | अनुत्तरोपपादिकदश | ५९६ | अवयव | ५१७ |
| अक्षर (के भेद) | ५६८ | अनुपक्रमकाल | ४५६ | अविनाभावसम्यग्त्व | ५२१ |
| अक्षर समास | ५७० | अनुपक्रमायुष्क | ७१३ | अविभागप्रतिच्छेद | १२२ |
| अक्षरान्तक श्रु. | ५२४ | अनुभागकाण्डकोटकरण | १०४ | अविरतसम्यग्दृष्टि | ४०, ४३, ५९ |
| अक्षिप्र | ५१९ | अनुभयवचन | ३६२, ३६३ | अष्टाङ्क | ५३१, ५५३, ५५५, ५६७ |
| अगस्त्य | ६०० | अनुभागवन्धाध्यवसाय स्थान | २२८ | असंख्यात गुणवृद्धि | ५३१ |
| अगाड (शेष) | ५६ | अनुमान | ५२० | असंख्यात भागवृद्धि | ५३१ |
| अङ्ग बाह्य | ६१२ | अनुयोगश्रु. | ५७३ | असंख्याताणुवर्गणा | ८२३ |
| अक्षयणीयपूर्व | ६०५ | अन्तकृद्दशांग | ५९६ | असंज्ञी | ८९२, ९३२ |
| अक्षध्वादन | ६९२ | अन्तर्मूर्द्धा | ८१० | असंयत | ५७ |
| अक्षित (योनि) | १५६ | अन्योऽन्याम्यस्तराशि | १२२ | अस्तिनास्तिप्रवाद | ६०५ |
| अज्ञान मिथ्यात्व | ४७ | अपकर्ष | ७११, ७१२ | अ | |
| अज्ञानवाद | ६०० | अपगतवेद | ४६६ | आकारयोनि | १५४ |
| अशुद्ध | १५७ | अपर्याप्तिक | २५१ | आकाशगता | ६०२ |
| अणु वर्णणा | ८२३ | अपूर्वकरण | ४१, ११२, ११३, ११८ | आशेषणीकया | ५९७ |
| अवःप्रवृत्तकरण | ८०, ८१, १०४ | अपूर्वस्वर्धक | १२१, १२२, १२५ | आचारांग | ५९२ |
| अडातयोपम | २३९ | अप्रतिष्ठित प्रत्येक | ३१७ | आत्मप्रवाद | ६०८ |
| अधुव | ५१९ | अप्रत्यास्थानावरण | ४७३ | आत्मागुल | २३२ |
| अनन्तगुणवृद्धि | ५३१ | अप्रमत्त विरत | ४१, ४४, ७८ | आदेश | ३४, ३५ |
| अनन्तभाववृद्धि | ५३१ | अप्रतिराति | ६२१ | आभीत | ५१० |
| अनन्तरात्मक श्रु. | ५२३ | अभिनिर्गोषिक (मतिज्ञान) | ५१२ | आयुषाण | २६६ |
| अनन्तानुबन्धी | ५७, ४७४ | अयोग्यैवलिखित | ४१, १२८ | आवली | २१६, ८०९ |
| अनन्ताणुवर्णणा | ८२४ | अयंयद | ५७० | आरत्नलापन | ६०० |
| अननुषासी | ६१९ | अयंशर श्रु. | ५६६, ५६८ | आमुरता | ५१० |
| अनन्तरिवृत्त | ६२० | अयंशब्द | ५१४ | आस्तित्वय | ८०२ |
| अनाहार उपयोग | १०१ | अन्यद् | ५१५ | आहारकाययोग | ३७४ |
| अनाहारक | ८१६ | अन्यज्ञान | ६१७ | आहारपर्याप्ति | २५२ |
| अनिवृत्तकरण | ४१, ११९, १२० | अन्यमन्नामन्त्र | २३१ | आहारक मिथकाययोग | ३७५ |
| अनिन्द | ५१९ | अन्यधिरदान | ६९२ | आहार संज्ञा | २१९ |
| अनुष्टुप् | ८१ | अन्यधिवृत्त | ६२० | आहारक | ८१५ |
| अनुष्ट | ५१९ | | | इ | |
| अनुयायी | ११९ | | | इष्ट (संज्ञे. गुण) | ४७ |

विशिष्ट शब्द-सूची

अ

| | | | | | |
|------------------|--------------|--------------------------|-------------------|------------------------------|----------|
| अक्रियावाद | ६०० | अनूत्तरोपपादिकदश | ५९६ | अयम | ५१७ |
| अक्षर (के भेद) | ५६८ | अनुपक्रमकाल | ४१६ | अविनाभावसाम्यव्य | ५२१ |
| अक्षर समास | ५७० | अनुपक्रमायुक्त | ७१३ | अविभागप्रतिच्छेद | १२२ |
| अक्षरात्मक श्रु. | ५२४ | अनुभागकाण्डकोटकरण | १०४ | अविरतसम्यग्दृष्टि ४०, ४३, ५९ | |
| अक्षिप्र | ५१९ | अनुभववचन | ३६२, ३६३ | अष्टाङ्ग ५३१, ५५३, ५५५, ५६७ | |
| अगस्त्य | ६०० | अनुभागवन्धाष्यवसाय स्थान | २२८ | असंख्यात गुणवृद्धि | ५३१ |
| अगाढ (दोष) | ५६ | अनुमान | ५२० | असंख्यात भागवृद्धि | ५३१ |
| अङ्ग बाह्य | ६१२ | अनुयोगश्रु. | ५७३ | असंख्याताणुवर्गणा | ८२३ |
| अप्रायणीयपूर्व | ६०५ | अन्तकृद्दशांग | ५९६ | असंज्ञी | ८९२, ९३२ |
| अचक्षुदर्शन | ६९२ | अन्तर्मूर्त | ८१० | असंयत | ५७ |
| अचित्त (योनि) | १५६ | अन्योन्याम्यस्तराशि | १२२ | अस्तित्वास्तित्प्रवाद | ६०५ |
| अज्ञान मिथ्यात्व | ४७ | अपकर्ष | ७११, ७१२ | आ | |
| अज्ञानवाद | ६०० | अपगतवेद | ४६६ | आकारयोनि | १५४ |
| अण्डज | १५७ | अपर्याप्तिक | २५१ | आकारागतता | ६०२ |
| अणु वर्गणा | ८२३ | अपूर्वकरण | ४१, ११२, ११३, ११८ | आक्षेपणीकथा | ५९७ |
| अवःप्रवृत्तकरण | ८०, ८१, १०४ | अपूर्वस्पर्शक | १२१, १२२, १२५ | आचारांग | ५९२ |
| अढापत्स्योपम | २३९ | अप्रतिष्ठित प्रत्येक | ३१७ | आत्मप्रवाद | ६०८ |
| अध्रुव | ५१९ | अप्रत्याख्यानावरण | ४७३ | आत्मांगुल | २३२ |
| अनन्तगुणवृद्धि | ५३१ | अप्रमत्त विरत | ४१, ४४, ७८ | आदेश | ३४, ३५ |
| अनन्तभागवृद्धि | ५३१ | „ संयत | | आभीत | ५१० |
| अनधारात्मक श्रु. | ५२३ | अप्रतिपाति | ६२१ | आयुप्राण | २६६ |
| अनन्तानुबन्धी | ५७, ४७४ | अभिनिबोधिक (मतिज्ञान) | ५१२ | आवली | २१६, ८०९ |
| अनन्ताणुवर्गणा | ८२४ | अयोगकेवलिजिन | ४१, १२८ | आश्वलायन | ६०० |
| अननुगामी | ६१९ | अर्थपद | ५७० | आमुरस | ५१० |
| अनवस्थित | ६२० | अर्थद्वार श्रु. | ५६६, ५६८ | आस्तिसव्य | ८०२ |
| अनाकार उपयोग | १०१ | अर्थविग्रह | ५१४ | आहारककाययोग | ३७४ |
| अनाहारक | ८९६ | अवग्रह | ५१५ | आहारपर्याप्ति | २५२ |
| अनिवृत्तिकरण | ४१, ११९, १२० | अवधिज्ञान | ६१७ | आहारक मिश्रकाययोग | ३७५ |
| अनिमृत् | ५१९ | अवसन्नासन्न | २३१ | आहार संज्ञा | २६९ |
| अनुकृष्टि | ८४ | अवधिदर्शन | ६९२ | आहारक | ८९५ |
| अनुक | ५१९ | अवस्थित | ६२० | इ | |
| अनुगामी | ६१९ | | | इन्द्र (इवे. गुह) | ४७ |

विशिष्ट शब्द-सूची

अ

| | | | | | |
|-------------------------|-------------|-----------------------------|-------------------|------------------------------|----------|
| अक्रियावाद | ६०० | अनुत्तरोपपादिकदश | ५९६ | अवाय | ५१७ |
| अक्षर (के भेद) | ५६८ | अनुपक्रमकाल | ४५६ | अविनाभावसम्यग्ध | ५२१ |
| अक्षर समास | ५७० | अनुपक्रमायुक्त | ७१३ | अविभागप्रतिच्छेद | १२२ |
| अक्षरार्थक श्रु. | ५२४ | अनुभागकाण्डकोटकरण | १०४ | अविरतसम्यग्दृष्टि ४०, ४३, ५९ | |
| अक्षिप्र | ५१९ | अनुभववचन | ३६२, ३६३ | अष्टाङ्ग ५३१, ५५३, ५५५, ५६७ | |
| अगस्त्य | ६०० | अनुभागवन्धाध्यवसाय स्थान | | असंख्यात गुणवृद्धि | ५३१ |
| अगाड (दोष) | ५६ | | २२८ | असंख्यात भागवृद्धि | ५३१ |
| अङ्ग बाह्य | ६१२ | अनुमान | ५२० | असंख्याताणुवर्गणा | ८२३ |
| अद्याप्यणीपूर्व | ६०५ | अनुयोगश्रु. | ५७३ | असंज्ञी | ८९२, ९३२ |
| अद्यथादर्शन | ६९२ | अन्तच्छब्दसंग | ५९६ | असंयत | ५७ |
| अचित्त (योनि) | १५६ | अन्तर्मूर्ध्व | ८१० | अस्तिनास्तिप्रवाद | ६०५ |
| अज्ञान मिथ्यात्व | ४७ | अन्योन्यात्म्यस्तराशि | १२२ | आ | |
| अज्ञानवाद | ६०० | अपकर्ष | ७११, ७१२ | आकारयोनि | १५४ |
| अष्टाङ्ग | १५७ | अपगतवेद | ४६६ | आकारागता | ६०२ |
| अणु वर्णणा | ८२३ | अपर्याप्तिक | २५१ | आक्षेपणीकथा | ५९७ |
| अणुःप्रवृत्तकरण | ८०, ८१, १०४ | अपूर्वकरण | ४१, ११२, ११३, ११८ | आचारांग | ५९२ |
| अडास्योपम | २३९ | अपूर्वस्पर्धक १२१, १२२, १२५ | | आत्मप्रवाद | ६०८ |
| अधुव | ५१९ | अप्रतिष्ठित प्रत्येक | ३१७ | आत्मांगुल | २३२ |
| अनन्तगुणवृद्धि | ५३१ | अप्रत्याख्यानावरण | ४७३ | आदेश | ३४, ३५ |
| अनन्तभाववृद्धि | ५३१ | अप्रमत्त विरत } ४१, ४४, ७८ | | आभीत | ५१० |
| अनन्तरात्मक श्रु. | ५२३ | „ संयत } | | आयुषाण | २६६ |
| अनन्तानुबन्धी | ५७, ४७४ | अप्रतिराशि | ६२१ | आकली | २१६, ८०९ |
| अनन्ताणुवर्णणा | ८२४ | अभिनिर्गोषिक (मतिज्ञान) | ५१२ | आरवलापन | ६०० |
| अननुषासी | ६१९ | अयोगदेवलिङ्गिन | ४१, १२८ | आमुरदा | ५१० |
| अनरक्षित | ६२० | अर्थपद | ५७० | आस्तिक्य | ८०२ |
| अनाकार उपयोग | १०१ | अर्थाक्षर श्रु. | ५६६, ५६८ | आहारककाययोग | ३७४ |
| अनाहारक | ८१६ | अर्थावच्छेद | ५१४ | आहारवर्णिति | २५२ |
| अनिकृतिकरण ४१, ११९, १२० | | अर्थपद | ५१५ | आहारक मिथकाययोग | ३७५ |
| अनिर्गुण | ५१९ | अर्थपद | ६१७ | आहार संज्ञा | २१९ |
| अनुष्टुप् | ८१ | अर्थपद | २३१ | आहारक | ८१५ |
| अनुक्त | ५१९ | अर्थपद | १९२ | इ | |
| अनुशासो | ११९ | अर्थपद | ६२० | इन्द्र (इन्द्र. गुण) | ४७ |

विशिष्ट शब्द-सूची

| | | | | | |
|-------------------|--------------|-----------------------------|-------------------|-----------------------------|----------|
| अ | | अनुत्तरोपनादिरुदरा | ५९६ | अपाय | ५१७ |
| क्रियावाद | ६०० | अनुपकमकाल | ४५६ | अपिताभावसम्बन्ध | ५२१ |
| क्षर (के भेद) | ५६८ | अनुपक्रमायुष्क | ७१३ | अधिभागप्रतिच्छेद | १२२ |
| क्षर समास | ५७० | अनुभागकाण्डकोटकरण | १०४ | अविरतसम्बन्धि ४०, ४३, ५९ | |
| क्षरात्मक ध्रु. | ५२४ | अनुभववचन | ३६२, ३६३ | अष्टाङ्ग ५३१, ५५३, ५५५, ५६७ | |
| क्षिप्र | ५१९ | अनुभागवन्धाध्यवसाय स्थान | | असंख्यात गुणवृद्धि | ५३१ |
| गस्त्य | ६०० | | २२८ | असंख्यात भागवृद्धि | ५३१ |
| गाय (दोष) | ५६ | अनुमान | ५२० | असंख्याताणुसर्गगा | ८२३ |
| गङ्गा बाह्य | ६१२ | अनुयोगध्रु. | ५७३ | असंज्ञी | ८९२, ९३२ |
| प्रायणीयपूर्व | ६०५ | अन्तकृद्दशांग | ५९६ | असंयत | ५७ |
| वक्षुदर्शन | ६९२ | अन्तर्भूत | ८१० | अस्तित्वास्तित्प्रवाद | ६०५ |
| विचि (योनि) | १५६ | अन्वोन्वाम्यस्तराधि | १२२ | | |
| ज्ञान मिथ्यात्व | ४७ | अपकर्ष | ७११, ७१२ | आ | |
| ज्ञानवाद | ६०० | अपगतवेद | ४६६ | आकारयोनि | १५४ |
| गुणद्वय | १५७ | अपर्याप्तक | २५१ | आकारगतता | ६०२ |
| गुण वर्गणा | ८२३ | अपूर्वकरण | ४१, ११२, ११३, ११८ | आक्षेपणीकषा | ५९७ |
| मपःप्रवृत्तकरण | ८०, ८१, १०४ | अपूर्वस्पर्धक १२१, १२२, १२५ | | आचाराग | ५९२ |
| मन्दापत्योपम | २३९ | अप्रतिष्ठित प्रत्येक | ३१७ | आत्मप्रवाद | ६०८ |
| अप्रवृ | ५१९ | अप्रत्याख्यानावरण | ४७३ | आत्मांगुल | २३२ |
| अनन्तगुणवृद्धि | ५३१ | अप्रमत्त विरत } ४१, ४४, ७८ | | आदेश | ३४, ३५ |
| अनन्तभागवृद्धि | ५३१ | अप्रतिपाति | ६२१ | आभीत | ५१० |
| अनक्षरात्मक ध्रु. | ५२३ | अभिनिवोधिक (मतिज्ञान) | ५१२ | आयुप्राण | २६६ |
| अनन्तानुबन्धो | ५७, ४७४ | अयोगकेवलजिन | ४१, १२८ | आवली | २१६, ८०९ |
| अनन्ताणुवर्गणा | ८२४ | अर्थपद | ५७० | आस्त्रलायन | ६०० |
| अननुगामी | ६१९ | अर्थाक्षर ध्रु. | ५६६, ५६८ | आमुरथा | ५१० |
| अनवस्थित | ६२० | अपविषह | ५१४ | आस्तित्व | ८०२ |
| अनाकार उपयोग | ५०१ | अवषह | ५१५ | आहारकामयोग | ३७४ |
| अनाहारक | ८९६ | अवधिज्ञान | ६१७ | आहारपर्याप्ति | २५२ |
| अनिवृत्तिकरण | ४१, ११९, १२० | अवघन्नासम्भ | २३१ | आहारक मिथकाययोग | ३७५ |
| अनिमृत् | ५१९ | अवधिदर्शन | ६९२ | आहार संज्ञा | २६९ |
| अनुकृष्टि | ८४ | अवस्थित | ६२० | आहारक | ८९५ |
| अनुक | ५१९ | | | | |
| अनुगामी | ६१९ | | | | |

इ

इन्द्र (स्व. गुह) ४७

विशिष्ट शब्द-सूची

अ

| | | | | | |
|-------------------|--------------|--------------------------|-------------------|---------------------|--------------------|
| अक्रियावाद | ६०० | अनुत्तरोपवादिकदश | ५९६ | अवाय | ५१७ |
| अक्षर (के भेद) | ५६८ | अनुपक्रमकाल | ४५६ | अविनाभावसम्बन्ध | ५२१ |
| अक्षर समास | ५७० | अनुपक्रमायुक्त | ७१३ | अविभागप्रतिच्छेद | १२२ |
| अक्षरात्मक श्रु. | ५२४ | अनुभागकाण्डकोटकरण | १०४ | अविरतसम्बन्ध | ४०, ४३, ५९ |
| अक्षिप्र | ५१९ | अनुभयवचन | ३६२, ३६३ | अष्टाङ्क | ५३१, ५६३, ५५५, ५६७ |
| अगस्त्य | ६०० | अनुभागवन्धाध्यवसाय स्थान | २२८ | असंख्यात गुणवृद्धि | ५३१ |
| अगाध (दोष) | ५६ | अनुमान | ५२० | असंख्यात भागवृद्धि | ५३१ |
| अज्ञ बाह्य | ६१२ | अनुयोगश्रु. | ५७३ | असंख्याताणुवर्गणा | ८२३ |
| अज्ञापणीयपूर्व | ६०५ | अन्तःकृद्दशांग | ५९६ | असंज्ञी | ८९२, ९३२ |
| अचशुदर्शन | ६९२ | अन्तर्मूर्च्छ | ८१० | असंयत | ५७ |
| अचित्त (योनि) | १५६ | अन्योन्याभ्यस्तराशि | १२२ | अस्तित्वास्तिप्रवाद | ६०५ |
| अज्ञान मिथ्यात्व | ४७ | अपकर्ष | ७११, ७१२ | आ | |
| अज्ञानवाद | ६०० | अपगतवेद | ४६६ | आकारयोनि | १५४ |
| अशब्द | १५७ | अपर्याप्तिक | २५१ | आकाशगत | ६०२ |
| अणु वर्णना | ८२३ | अपूर्वकरण | ४१, ११२, ११३, ११८ | आक्षेपणीकृथा | ५९७ |
| अणुःप्रवृत्तकरण | ८०, ८१, १०४ | अपूर्वस्पर्धक | १२१, १२२, १२५ | आचारांग | ५९२ |
| अज्ञापनयोग | २३९ | अप्रतिष्ठित प्रत्येक | ३१७ | आत्मप्रवाद | ६०८ |
| अश्रुत | ५१९ | अप्रत्याख्यानावरण | ४७३ | आत्मांगुल | २३२ |
| अनन्तगुणवृद्धि | ५३१ | अप्रमत्त विरत | ४१, ४४, ७८ | आदेश | ३४, ३५ |
| अनन्तभाष्यवृद्धि | ५३१ | अप्रतिराशि | ६२१ | आभीत | ५१० |
| अनन्तरात्मक श्रु. | ५२३ | अभिनिर्वापिक (मतिज्ञान) | ५१२ | आयुदान | २६६ |
| अनन्तानुबन्धी | ५७, ४७८ | अयोग-देवलिङ्गिन | ४१, १२८ | आवली | २१६, ८०९ |
| अनन्ताणुवर्णना | ८२४ | अर्षण | ५७० | आरत्नलापन | ६०० |
| अननुषांगी | ६१९ | अर्षाक्षर श्रु. | ५६६, ५६८ | आमुरण | ५१० |
| अनन्तरिचय | ९२० | अर्षावप्रह | ५१४ | आस्तिवय | ८०२ |
| अनाकार वानोप | ५०१ | अर्षवह | ५१५ | आहारककाययोग | ३७४ |
| अनाहारक | ८९६ | अर्षिज्ञान | ६१७ | आहाररूपान्ति | २५२ |
| अनिर्दिष्टकरण | ४१, १११, १२० | अर्षिज्ञान | २३१ | आहारक मिथ्याकाययोग | ३७५ |
| अनिन्द | ५१९ | अर्षिदग्ध | ६९२ | आहारक संज्ञा | २६९ |
| अनुष्ठान | ८१ | अर्षिचय | ६२० | आहारक | ८९९ |
| अनुष्ठ | ५१९ | | | इ | |
| अनुष्ठा | ११९ | | | इन्द्र (दे. गुरु) | ४७ |

विशिष्ट शब्द-सूची

अ

| | | | | | |
|-------------------|--------------|--------------------------|-------------------|--------------------|--------------------|
| अक्रियावाद | ६०० | अनुत्तरोपपादिकदश | ५९६ | अवाय | ५१७ |
| अक्षर (के भेद) | ५६८ | अनुपक्रमकाल | ४५६ | अविनाभावसम्बन्ध | ५२१ |
| अक्षर समास | ५७० | अनुपक्रमायुष्क | ७१३ | अविभागप्रतिच्छेद | १२२ |
| अक्षरात्मक श्रु. | ५२४ | अनुभागकाण्डकोटकरण | १०४ | अविरतसम्बन्धि | ४०, ४३, ५९ |
| अक्षिप्र | ५१९ | अनुभयवचन | ३६२, ३६३ | अष्टाङ्ग | ५३१, ५५३, ५५५, ५६७ |
| अगस्त्य | ६०० | अनुभागवन्पाष्यवसाय स्थान | | असंख्यात गुणवृद्धि | ५३१ |
| अगाठ (शोष) | ५६ | | २२८ | असंख्यात भागवृद्धि | ५३१ |
| अङ्ग बाह्य | ६१२ | अनुमान | ५२० | असंख्यातानुवर्गणा | ८२३ |
| अप्रायणीयपूर्व | ६०५ | अनुयोगश्रु. | ५७३ | असंज्ञी | ८९२, ९३२ |
| अचक्षुदर्शन | ६९२ | अन्तकृद्दशाग | ५९६ | असंयत | ५७ |
| अचित्त (योनि) | १५६ | अन्तर्मूर्त | ८१० | अस्तिनास्तिप्रवाद | ६०५ |
| अज्ञान मिथ्यात्व | ४७ | अन्योन्याम्यस्तराशि | १२२ | | |
| अज्ञानवाद | ६०० | अपकर्ष | ७११, ७१२ | आ | |
| अण्डज | १५७ | अपगतवेद | ४६६ | आकारयोनि | १५४ |
| अणु वर्गणा | ८२३ | अपर्याप्तिक | २५१ | आकाशगता | ६०२ |
| अपःप्रवृत्तकरण | ८०, ८१, १०४ | अपूर्वकरण | ४१, ११२, ११३, ११८ | आक्षेपणीकषया | ५९७ |
| अपत्योपम | २३९ | अपूर्वस्पर्शक | १२१, १२२, १२५ | आचारांग | ५९२ |
| अधुव | ५१९ | अप्रतिष्ठित प्रत्येक | ३१७ | आत्मप्रवाद | ६०८ |
| अनन्तगुणवृद्धि | ५३१ | अप्रत्याख्यानावरण | ४७३ | आत्मांगुल | २३२ |
| अनन्तभागवृद्धि | ५३१ | अप्रमत्त विरत | } ४१, ४४, ७८ | आदेश | ३४, ३५ |
| अनन्तरात्मक श्रु. | ५२३ | „ संयत | | | आभीत |
| अनन्तानुबन्धी | ५७, ४७४ | अप्रतिपाति | ६२१ | आयुप्राण | २६६ |
| अनन्तानुवर्गणा | ८२४ | अभिनिबोधिषिक (मतिज्ञान) | ५१२ | आवली | २१६, ८०९ |
| अननुगामी | ६१९ | अयोगकेवलजिन | ४१, १२८ | आश्वलायन | ६०० |
| अनवस्थित | ६२० | अर्थपद | ५७० | आमुरश | ५१० |
| अनाहार उपयोग | १०१ | अर्थाक्षर श्रु. | ५६६, ५६८ | आस्तित्वय | ८०२ |
| अनाहारक | ८१६ | अर्थावग्रह | ५१४ | आहारककाययोग | ३७४ |
| अनिवृत्तिकरण | ४१, ११९, १२० | अवग्रह | ५१५ | आहारपर्याप्ति | २५२ |
| अनिगूढ | ५१९ | अवधिज्ञान | ६१७ | आहारक मिथकाययोग | ३७५ |
| अनुदृष्टि | ८४ | अवसन्नासन्न | २३१ | आहार संज्ञा | २६९ |
| अनुक. | ५१९ | अवधिदर्शन | ६९२ | आहारक | ८९५ |
| अनुपामी | ६१९ | अवस्थित | ६२० | | |

इ

विशिष्ट मन्द-पुत्री

| | | |
|-------------------|--------------|-----------------------------|
| | अ | |
| अक्रियावाद | | अनुत्तरोपपादिकदश ५९६ |
| अक्षर (के भेद) | ६०० | अनुपक्रमकाल ४५६ |
| अक्षर समास | ५६८ | अनुपक्रमायुक्त ७२३ |
| अक्षरात्मक ध्रु. | ५७० | अनुभागकाण्डकोटकरण १०४ |
| अक्षिप्र | ५२४ | अनुभववचन ३६२, ३६३ |
| अगस्त्य | ५१९ | अनुभागवन्पाण्यवसाय स्थान |
| अगाड (दोष) | ६०० | अनुमान २२८ |
| अङ्ग बाह्य | ५६ | अनुयोगध्रु. ५२० |
| अश्रायणीयपूर्व | ६१२ | अन्तच्छब्दसांग ५७३ |
| अश्वत्थद्वयं | ६०५ | अन्तर्मुख ५९६ |
| अचित्त (योनि) | ६९२ | अन्योन्याम्यस्तरादि ८१० |
| अज्ञान सिध्यात्व | १५६ | अपकर्ण १२२ |
| अज्ञानवाद | ४७ | अपगतवेद ७११, ७१२ |
| अण्डज | ६०० | अपर्याप्तिक ४६६ |
| अणु वर्गणा | १५७ | अपूर्वकरण ४१, ११२, ११३, ११८ |
| अपःप्रवृत्तकरण | ८२३ | अपूर्वस्पर्शक १२१, १२२, १२५ |
| अज्ञापत्योपन | ८०, ८१, १०४ | अप्रतिष्ठित प्रत्येक ११८ |
| अष्टव | २३९ | अप्रत्याख्यानावरण ३१७ |
| अनन्तगुणवृद्धि | ५१९ | अप्रमत विरत } ४१, ४४, ७८ |
| अनन्तभागवृद्धि | ५३१ | अप्रतिपाति ६२१ |
| अनक्षरात्मक ध्रु. | ५३१ | अभिनिवोधिक (मतिमान) ५१२ |
| अनन्तानुबन्धी | ५३३ | अयोग्यैवतिविजिन ४१, १२० |
| अनन्त्यागुवर्गणा | ५७, ४७४ | अर्षपद ५७० |
| अननुगामी | ८२४ | अर्षाक्षर ध्रु. ५६६, ५६८ |
| अनरक्षित | ६१९ | अर्षप्रद ५१४ |
| अनाक्षर उपयोग | ६२० | अर्षविज्ञान ५१५ |
| अनाक्षरक | १०१ | अवघन्नाघन्न ६१७ |
| अनिकृतिकरण | ४१, १११, १२० | अवधिद्वयं २३१ |
| अनिगुण | ८३६ | अवस्थित ६९२ |
| अनुकृष्टि | ५१९ | ६२० |
| अनुक | ८४ | |
| अनुगामी | ५१९ | |

| | |
|--------------------|--------------------|
| अपय | ५१७ |
| अविनाभावसम्बन्ध | ५२१ |
| अविभागप्रतिच्छेद | १२२ |
| अविरतसम्बन्ध | ४०, ४३, ५९ |
| अष्टाङ्ग | ५३१, ५५३, ५५५, ५६७ |
| असंख्यात गुणवृद्धि | ५३१ |
| असंख्यात भागवृद्धि | ५३१ |
| असंख्यातागुणवर्गणा | ८२३ |
| असंज्ञी | ८९२, ९३२ |
| असंयत | ५७ |
| अस्तिनास्तिप्रवाद | ६०५ |

आ

| | |
|------------------|----------|
| आकारयोनि | १५४ |
| आकाशगतता | ६०२ |
| आक्षेपणीकथा | ५९७ |
| आचारांग | ५९२ |
| आत्मप्रवाद | ६०८ |
| आत्मगुण | २३२ |
| आदेश | ३४, ३५ |
| आभीत | ५१० |
| आयुषाण | २६६ |
| आबली | २१६, ८०९ |
| आपन्नलायन | ६०० |
| आमरुध | ५०२ |
| आस्तिय | ८०२ |
| आहारतत्काययोग | ३७४ |
| आहारपर्याप्ति | २५२ |
| आहारक निधनवापयोग | ३७५ |
| आहार घन्ना | २६९ |
| आहारक | ८९५ |

इ
इन्द्र (त्वे. गुरु)

| | | | | | |
|----------------------------|----------------|--------------------------|---------------|---------------------|---------------|
| जन्मुद्वीपप्रवृत्ति | ६०१ | द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी | ७९, | परिग्रहसंज्ञा | २७१ |
| जरायुज | १५७ | | ९३१ | परिहारविमुक्ति | ६८४, ६८५ |
| जलगता | ६०२ | द्विरूपधनधारा | २२१ | पर्याप्तक | २५१, २५५ |
| जीवसमाप्त ३३, ३४, ४२, १४२- | | द्विरूपधनाधनधारा | २२३ | पर्याप्ति | ३४, ३५, २५१ |
| | १५३ | द्विरूपवर्गधारा | २१५, ५३० | पर्याप्तज्ञान | ५२७, ५२९, ५५२ |
| जैमिनि | ६०० | द्वीपसागर प्रवृत्ति | ६०१ | पर्याप्तसमाप्त | ५२९, ५५२ |
| ज्ञान धर्मकथा | ५९५ | | | पत्न्य | २१६ |
| ज्ञानप्रवाद | ५०६ | ध | | पाराशर | ६०० |
| ज्ञानभारंगणा | ५०५ | धारणा | ५१७ | पारिणामिक भाव | ४२, ४३ |
| ज्ञानोपयोग | ९३३ | ध्रुव (ज्ञान) | ५१९ | पिशाचि | ५३८ |
| | | ध्रुवभागहार | ६२८, ६३० | पिशाचि पिशाचि | ५३८ |
| त | | | | पुण्डरीक | ६१५ |
| तर्क | ५२१ | न | | पुद्गल | २३१ |
| तापस | ४७ | नष्ट | ६३, ७१ | पूर्वस्पर्धक | १२१, १२५ |
| तिर्यंभयति | २७९ | नारायण | ६०० | पैन्नाद | ६०० |
| तेजोदेवता | ७१० | नानागुणहानि | १२२ | पोत | १५७ |
| तृणकाय | २३१ | नारकगति | २७८ | प्रक्षेपक | ५३८ |
| तृणनालो | २३२ | नामसत्य | ३५९ | प्रक्षेपक प्रक्षेपक | ५३८ |
| त्रिलोकद्विन्दुवार | ६१२ | नाम सामायिक | ६१३ | प्रथमानुयोग | ६०१ |
| | | निषोदकपयस्विति | २२८ | प्रतिपाती | ५७३ |
| व | | नित्यनिषोद | ३३० | प्रतिपत्तिसमाप्त | ५७३ |
| वन्द्यसमुद्रपात | ७५५ | निर्जृम्भयधर | ५१८, ५६९ | प्रतराकाश | २१७ |
| दृष्टिवाद | ५९९ | निर्जृम्भयपर्याप्त | २५५, २६१ | प्रतरांगुल | २१६, २४२, २४४ |
| दर्शन | ६९१ | निर्जृम्भयकथा | ५९७ | प्रतरावली | २१६ |
| दर्शनकोट | ४३, ४६ | निर्पिच्छका | ६१६ | प्रतिक्रमण | ६१४ |
| दर्शनोपयोग | ९३३ | निमृत् | ५१९ | प्रतिपत्तिपु. | ५७२ |
| दण्डकालिका | ६१५ | नोक्तलेखा | ७०८ | प्रतीत्यसत्य | ३६० |
| देववृत्ति | २८१ | नोक्तम् पुद्गलपरिवर्तन | ७१० | प्रत्यय | ५२१ |
| देवद्विराज | ४०, ४१, ४६, ६७ | नोक्तमंशरीर | ३७९ | प्रत्यभिज्ञान | ५२०, ५२१ |
| देववृत्ति | ६२०, ६२२ | | | प्रत्यास्थानपूर्व | ६१० |
| दोषगुणहानि | १२२ | घ | | प्रत्येक शरीर | ३१६ |
| द्वय नपुमक | ४६३ | पंचाङ्ग | ५३१, ५५३, ५५५ | प्रत्येकशरीरवर्गणा | ८१० |
| द्वय पुंशु | ४६३ | परमजान | ५७० | प्रमत्तविरत | ४१, ४४, ६१ |
| द्वय शून्य | २६८ | परममासभू. | ५७२ | प्रमाणपद | ५७० |
| द्वयधन | ६१७, ६१९ | पद्यदेवता | ७१० | प्रमाणांगुल | २३३ |
| द्वयदेवता | ६१८ | परधेव | ७१३ | प्रमाद | ६२, ६३ |
| द्वयधनार्थक | ६१९ | परधेव परिवर्तन | २३१, ८०४ | प्रकल्पना | ३३, ३५ |
| द्वयधनो | ४५३ | परमात्मा | ६२०, ६८८ | प्रवचन | ४८ |
| द्वयधनो | ३९६, ३९६ | परिच्छेद | ६०१ | | |

| | | | | | |
|--------------------------|----------------|---------------------------|---------------|---------------------|---------------|
| जम्बुद्वीपप्रसक्ति | ६०१ | द्वितीयोपसाम सम्यग्दृष्टी | ७९, | परिग्रहसंज्ञा | २७१ |
| जरायुज | १५७ | | ९३१ | परिहारविमुक्ति | ६८४, ६८५ |
| जलगता | ६०२ | द्विरूपपनधार | २२१ | पर्याप्तक | २५१, २५५ |
| जीवसमास ३३, ३४, ४२, १४२- | | द्विरूपपनधारधारा | २२३ | पर्याप्ति | ३४, ३५, २५१ |
| | १५३ | द्विरूपवर्गधारा | २१५, ५३० | पर्यायज्ञान | ५२७, ५२९, ५५२ |
| जैमिनि | ६०० | द्वोपसागर प्रज्ञप्ति | ६०१ | पर्यायसमास | ५२९, ५५२ |
| जानु धर्मव्या | ५९५ | | | पल्य | २१६ |
| मानप्रवाद | ५०६ | घ | | पाराशर | ६०० |
| मानमार्गणा | ५०५ | घारणा | ५१७ | पारिणामिक भाव | ४२, ४३ |
| मानोपयोग | ९३३ | ध्रुव (ज्ञान) | ५१९ | पिद्मलि | ५३८ |
| | | ध्रुवभागहार | ६२८, ६३० | पिद्मलि पिद्मलि | ५३८ |
| त | | | | पुण्डरीक | ६१५ |
| ठकं | ५२१ | न | | पुद्गल | २३१ |
| ठापस | ४७ | नष्ट | ६३, ७१ | पूर्वस्पर्धक | १२१, १२५ |
| तिथ्यंशगति | २७९ | नारायण | ६०० | पैप्पलाद | ६०० |
| तेजोदेव्या | ७१० | नानामुण्डानि | १२२ | पोत | १५७ |
| तद्यथा | २३१ | भारकगति | २७८ | प्रक्षेपक | ५३८ |
| तद्यनाथी | २३२ | नामसरय | ३५९ | प्रक्षेपक प्रक्षेपक | ५३८ |
| तिलोद्विन्दुहार | ६१२ | नाम सामायिक | ६१३ | प्रथमानुयोग | ६०१ |
| त | | निगोदकायस्थिति | २२८ | प्रतिपातो | ६२१ |
| तद्वसमुद्धार | ७५५ | नित्यनिगोद | ३३० | प्रतिपत्तिघमास | ५७३ |
| दृष्टिहार | ५९९ | निर्गुण्यसर | ५१८, ५६९ | प्रतराकाश | २१७ |
| दर्यन | ६९१ | निर्गुण्यपर्याप्ति | २५५, २६१ | प्रतरागुल | २१६, २४२, २४४ |
| दर्यनकीर् | ४३, ४६ | निर्वैजनी कथा | ५९७ | प्रतरावली | २१६ |
| दर्यनोपयोग | ९३३ | निर्विद्विक्ता | ६१६ | प्रतिक्रमण | ६१४ |
| दशरैहाडिक | ६१५ | निमृत् | ५१९ | प्रतिपत्तिधु. | ५७७ |
| देवदत्ति | २८१ | नौलक्षेया | ७०८ | प्रतीत्यसरय | ३६० |
| देवविरड | ४०, ४१, ४४, ६७ | नोदमं पुद्गलारिवर्तन | ७१० | प्रत्यक्ष | ५२१ |
| देव्यावधि | ६२०, ६२२ | नोदमंघटीर | ३७२ | प्रत्यभिज्ञान | ५२०, ५२१ |
| दोमुण्डानि | १२२ | | | प्रत्याख्यानपूर्व | ११० |
| द्वय नदुमक | ४५३ | प | | प्रत्येक घटीर | ३१६ |
| द्वय पुत्र | ४५३ | पंचाङ्ग | ५३१, ५५३, ५५५ | प्रत्येकघटीरवर्गणा | ८१० |
| द्वय दाय | २६८ | पदभूतज्ञान | ५७० | प्रमत्तविरत | ४१, ४४, ११ |
| द्वयन | ६१७, ९९३ | पदमनामधु. | ५७२ | प्रमाणपद | ५७० |
| द्वयदेवरा | ६१८ | पददेवता | ७१० | प्रधानागुल | २३३ |
| द्वयकार्यादिक | ६११ | परक्षेप परिवर्तन | ७९३ | प्रमाद | ६२, ६१ |
| द्वयहाते | ४५३ | परधामु | २३१, ८०४ | प्रक्षयना | ३३, ३५ |
| द्वयविद्व | २१४, २१६ | परमार्थि | ६२०, ६४८ | प्रक्षयन | ४८ |
| | | परिद्वर्ष | ६०१ | | |

| | | | | | |
|----------------------------|----------|------------------------|-----------------|----------------------------|-------------------|
| वैक्रियिक काययोग | ३७० | संयत्तासंयत | ४० | सिद्ध | ४२, १३७ |
| वैक्रियिक मिश्रका. | ३७१ | संयम | ६८१ | सिद्धगति | २८२ |
| वैनयिक | ६१४ | संवृति सत्य | ३५९ | सिद्धपरमेष्ठो | ४५ |
| वैनयिकवाद | ६०० | संवृत् (योनि) | १५६ | सूक्ष्मनिगोद लभ्यपर्याप्तक | |
| वैशेषिक | १४० | संवेजनी कया | ५९७ | ५२८, ५२९, ५३० | |
| व्यंजनावग्रह | ५१४ | सांख्यवहारिक प्रत्यक्ष | ५२१ | सूक्ष्मकृष्टि | १२१, १२५ |
| व्यवहारकाल | ८०८, ८११ | सत्यदत्त | ६०० | सूक्ष्मसांख्य (गु.) | ४१, १२१, १२५, १२६ |
| व्यवहारपत्य | २३५ | सत्यप्रवाद | ६०६ | सूक्ष्मसांख्य संयम | ६८६ |
| व्यवहारपत्योपम | २३६ | सत्यमनोयोग | ३५६ | सूक्ष्मगुल | २१६, २४२, २४४ |
| व्यवहारसत्य | ३६० | सत्यवचनयोग | ३५७ | सूत्र | ६०१ |
| व्याख्याप्रज्ञप्ति | ६०१ | सदाशिव | १४० | सूत्र कृतांग | ५९३ |
| व्याख्याप्रज्ञप्ति (अंग) | ५९५ | सतांक | ५३१, ५५३, ५५४ | सूत्रप्रज्ञप्ति | ६०१ |
| व्याघ्रभूति | ६०० | सप्रतिष्ठित प्रत्येक | ३१७ | सोपक्रमकाल | ४५६ |
| व्यास | ६०० | समय | ८०८ | सोपक्रमामुष्क | ७१३ |
| | | समवायांग | ५९४ | स्तोक | ८१० |
| | | समयप्रबद्ध | ३८० | स्थलगता | ६०२ |
| घ | | समुद्घात | ७३५, ८९६ | स्थापनाक्षर | ५६८, ५६९ |
| घरीरपर्याप्ति | २५२, २६५ | सम्पत्त्व | ८०१ | स्थापनांग | ५९३ |
| शाकल्य | ६०० | सम्पत्त्व (प्रकृति) | ५४, ५७ | स्थापना सत्य | ३५९ |
| शोत (योनि) | १४६ | सम्पद्दुष्टो | ४० | स्थापनासामायिक | ६१३ |
| शुबललक्ष्या | ७१० | सम्पद्मिथ्यात्व प्र. | ५१ | स्पर्श (क्षेत्र) | ७६० |
| श्वसोच्छ्वास | २६१, २६६ | सम्पद्मिथ्यादुष्टो | ५२, ८८७ | स्मृति | ५२१ |
| श्रुत अज्ञान | ५१० | सयोगकेवलजिन | ४१, १२८ | स्वधेन परिवर्तन | ७९३ |
| श्रुतज्ञान | ५२३ | सरागसम्पद्दर्शन | ८०१ | स्वरूपविपर्याप्त | ४९ |
| | | सर्वाविधि | ६२०, ६२१ | स्वस्थानाप्रमत्त | ७९ |
| | | साकार उपयोग | ९०१ | स्वस्थान स्वस्थान | ७३५ |
| | | सागरोपम | २४१, २४९ | स्वष्टिकय | ६०० |
| | | साविशयाप्रमत्त | ७९, ८० | स्वित्तिकाण्डकोटरकरण | १०४ |
| | | सात्यमुषि | ६०० | स्वित्तिबन्धापसरण | १०५ |
| | | साधारणघरीर | ३१६, ३२१ | स्वित्तिबन्धाध्यवसायस्थान | २२७ |
| | | सान्तरमार्गंगा | २७६ | | |
| | | सामायिक | ६१३ | | |
| | | सामायिक संयम | ६८४ | | |
| | | सासादन गु. | ४३, ५० | | |
| | | सासादनसम्पद्दुष्टो | ४०, ५०, ५१, ८८७ | हृदिस्मथु | ६०० |
| | | | | हारीत | ६०० |
| | | | | होममान | ६२० |

| | | | | | |
|----------------------------|----------|--------------------------|---------------|---------------------|---------------|
| बन्धुद्वेषप्रति | १०१ | द्वितीयोपसम सम्मग्नृष्टो | ७९, | परिग्रहयंता | २७१ |
| बरातुन | १५७ | | ९३१ | परिहारविगुञ्जि | ६८४, ६८५ |
| बपदशा | ६०२ | द्विरूपयनपारा | २२१ | पर्याप्तक | २५१, २५५ |
| बीरप्रदान ३३, ३४, ४२, १४२- | | द्विरूपयनपतनपारा | २२३ | पर्याप्ति | ३४, ३५, २५१ |
| | १५३ | द्विरूपयनपारा | २१५, ५३० | पर्याप्तज्ञान | ५२७, ५२४, ५५२ |
| बीरवि | ६०० | द्वोषागार प्रगति | ६०१ | पर्याप्तमास | ५२९, ५५२ |
| बन्धु संबंधका | ५५५ | | | पल्य | २१५ |
| ब्राह्मण | ५०१ | घ | | पारागार | ६०० |
| ब्राह्मणसंबंध | ५०५ | घारणा | ५१७ | पारिणामिक भाव | ४२, ४३ |
| ब्राह्मणसंबंध | ५३३ | मृग (मान) | ५१९ | पिप्तुलि | ५३८ |
| | | मृगभागहार | ५२८, ६३० | पिप्तुलि पिप्तुलि | ५३८ |
| च | | | | पुण्डरीक | ६१५ |
| चर्च | ५२१ | न | | पुद्गल | २३१ |
| चक्र | ६३ | नष्ट | ६३, ७१ | पूर्वस्पर्धक | १२१, १२५ |
| चक्रवर्ति | २०५ | नारायण | ६०० | शैपलाय | ६०० |
| चक्रवर्ति | ३१० | नानागुणश्रुति | १२२ | पोत | १५७ |
| चक्रवर्ति | २३१ | नारदवनि | २७८ | प्रक्षोभक | ५३८ |
| चक्रवर्ति | २३२ | नामपद | ३५९ | प्रक्षोभक प्रक्षोभक | ५३८ |
| चक्रवर्ति ३-मुद्रा | ५१२ | नाम नामाधिक | ६१३ | प्रथमानुयोग | ६०१ |
| | | निषेधकपरिस्थिति | २२८ | प्रतिपाती | १२१ |
| चक्रवर्ति | ५५५ | निर्दिष्टपद | ५१८, ५६९ | प्रतिपातिषमास | ५३३ |
| चक्रवर्ति | ५५५ | निर्दिष्टपद | २५५, २५१ | प्रवराकाय | २१७ |
| चक्रवर्ति | ५५५ | निर्दिष्टपद | ५५७ | प्रवरागुण | २१६, २४२, २८६ |
| चक्रवर्ति | ५५५ | निर्दिष्टपद | ६१६ | प्रवरावली | २१५ |
| चक्रवर्ति | ५५५ | निर्दिष्टपद | ५१९ | प्रतिक्रमण | ६१६ |
| चक्रवर्ति | ५५५ | निर्दिष्टपद | ७०८ | प्रतिपातिपु. | ५३३ |
| चक्रवर्ति ३०, ३१, ३६, ५३ | | निर्दिष्टपद | ७३० | प्रकारवर्ण | ३५० |
| चक्रवर्ति | ५५०, ५५२ | निर्दिष्टपद | ३३३ | प्रत्यय | ५३१ |
| चक्रवर्ति | १२३ | घ | | प्रत्ययज्ञान | ५२०, ५३१ |
| चक्रवर्ति | ६५३ | घातक | ५३३, ५५३, ५५५ | प्रत्ययज्ञानपूर्व | ६१० |
| चक्रवर्ति | ६५३ | चक्रवर्ति | ५३० | प्रत्ययक घटित | ३१६ |
| चक्रवर्ति | ५५६ | चक्रवर्ति | ५३३ | प्रत्ययकघटितवर्ण | ८३० |
| चक्रवर्ति | ५५६ | चक्रवर्ति | ७३० | प्रत्ययकघटित | ४१, ४६, ५१ |
| चक्रवर्ति | ५५६ | चक्रवर्ति | ७३० | प्रत्ययकघटित | ५३० |
| चक्रवर्ति | ५५६ | चक्रवर्ति | ७३० | प्रत्ययकघटित | ३३३ |
| चक्रवर्ति | ५५६ | चक्रवर्ति | ७३० | चक्रवर्ति | ६२, ६३ |
| चक्रवर्ति | ५५६ | चक्रवर्ति | ७३० | चक्रवर्ति | ३३, ३५ |
| चक्रवर्ति | ५५६ | चक्रवर्ति | ७३० | चक्रवर्ति | ४८ |

| | | | | | |
|--------------------------|----------------|-------------------------|---------------|---------------------|---------------|
| जम्बुद्वीपप्रज्ञप्ति | ६०१ | द्वितीयोपसंग सस्यगृष्टी | ७९, | परिग्रहसंज्ञा | २७१ |
| जरायुज | १५७ | | ९३१ | परिहारविमुक्ति | ६८४, ६८५ |
| जलगतता | ६०२ | द्विरूपपथनधारा | २२१ | पर्याप्तक | २५१, २५५ |
| जीवधमास ३३, ३४, ४२, १४२- | | द्विरूपपथनापनधारा | २२३ | पर्याप्ति | ३४, ३५, २५१ |
| | १५३ | द्विरूपवर्गधारा | २१५, ५३० | पर्यायज्ञान | ५२७, ५२९, ५५२ |
| जैमिनि | ६०० | द्वोपसागर प्रज्ञप्ति | ६०१ | पर्यायसमास | ५२९, ५५२ |
| जातु धर्मकथा | ५९५ | | | पल्य | २१६ |
| ज्ञानप्रसार | ५०६ | घ | | पाराधर | ६०० |
| ज्ञानमासंगता | ५०५ | घारणा | ५१७ | पारिणामिक भाव | ४२, ४३ |
| ज्ञानोपयोग | ९३३ | घृब (ज्ञान) | ५१९ | पिदालि | ५३८ |
| | | घृनभागहार | ६२८, ६३० | पिदालि पिदालि | ५३८ |
| त | | | | पुण्डरीक | ६१५ |
| ठकं | ५२१ | न | | पुद्गल | २३१ |
| ठानग | ४७ | नष्ट | ६३, ७१ | पूर्ववर्धक | १२१, १२५ |
| त्रिभुवणप्रति | २७२ | नारायण | ६०० | पिप्पलाद | ६०० |
| तेजोदेवता | ७१० | नानागुणहानि | १२२ | पोत | १५७ |
| थपठान | २३१ | नारकगति | २७८ | प्रक्षेपक | ५३८ |
| थयनाली | २३२ | नामसत्य | ३५९ | प्रक्षेपक प्रक्षेपक | ५३८ |
| थि लोहविन्दुवार | ६१२ | नाम सामायिक | ६१३ | प्रथमानुयोग | ६०१ |
| थ | | निगोदकार्यस्थिति | २२८ | प्रतिपाती | ६२१ |
| थकमुद्गलः | ७५५ | नित्यनिगोद | ३३० | प्रतिपत्तिसमास | ५७३ |
| दृष्टिकार | ५९९ | निर्दुष्टघर | ५१८, ५६९ | प्रवराकार | २१७ |
| दर्थन | ६९१ | निर्दुष्टपगति | २५५, २६१ | प्रवरागुल | २१६, २४२, २४४ |
| दर्थनगोद | ६३, ४६ | निर्वर्तनी कथा | ५९७ | प्रवराबली | २१६ |
| दर्थनोपसंग | ९३३ | निर्विच्छिन्ना | ६१६ | प्रतिग्रमण | ६१४ |
| दर्थनोपसंग | ६१५ | निमुक्त | ५१९ | प्रतिगतियु. | ५७२ |
| दर्थनोपसंग | २८१ | नोचलेदवा | ७०८ | प्रतीत्यसत्य | ३५० |
| दर्थनोपसंग | ४०, ६१, ४८, ६७ | नोद्धर्मपुत्रकारित्वजन | ७१० | प्रत्यय | ५२१ |
| दर्थनोपसंग | ६२०, ६२२ | नोद्धर्मघटीर | ३७१ | प्रत्ययभिज्ञान | ५२०, ५२१ |
| दर्थनोपसंग | १२२ | प | | प्रत्याख्यानपूर्व | ६१० |
| दर्थनोपसंग | ४९३ | पंचाङ्क | ५३१, ५५३, ५५५ | प्रत्येक घटीर | ३१६ |
| दर्थनोपसंग | ४९३ | पञ्चमुद्राः | ५७० | प्रत्येकघटीरसम्भवा | ८३० |
| दर्थनोपसंग | २१६ | पदपमापधु. | ५७२ | प्रपत्तिरिक्त | ४१, ४६, ६१ |
| दर्थनोपसंग | ११७, ११९ | पदपदेवता | ७१० | प्रमाणपर | ५७० |
| दर्थनोपसंग | ६१८ | परश्वेक परिवर्जन | ७१३ | प्रमाणागुल | २३२ |
| दर्थनोपसंग | ११३ | परमागु | २३१, ८०६ | प्रमाद | ६२, ६३ |
| दर्थनोपसंग | ४५३ | परमाः | ६२०, ६१८ | प्रकृत्या | ३३, ३५ |
| दर्थनोपसंग | २९६, २९९ | परिच्छेद | ६०१ | प्रकृत्यन | ४८ |

| | | | | | |
|--------------------------|----------------|----------------------------|---------------|---------------------|---------------|
| बन्धुद्वीपनजति | १०१ | द्वितीयोपपन्न सम्मग्दृष्टी | ७९, | परिग्रहघंटा | २७१ |
| जरायुज | १५७ | | ९३१ | परिहारविमुक्ति | ६८४, ६८५ |
| जलगत | ६०२ | द्विरूपयनधारा | २२१ | पर्याप्तक | २५१, २५५ |
| जीवघमाय ३३, ३४, ४२, १४२- | | द्विरूपयनोपनधारा | २२३ | पर्याप्ति | ३४, ३५, २५१ |
| | १५३ | द्विरूपवर्गधारा | २१५, ५३० | पर्याप्तज्ञान | ५२७, ५२९, ५५२ |
| जीमिनि | ६०० | द्विोपसागर प्रतिति | ६०१ | पर्याप्तमास | ५२९, ५५२ |
| मातृ धर्मकथा | ५९५ | | | पल्य | २१५ |
| मानसवाद | ५०६ | घ | | पाराधर | ६०० |
| माननार्थमा | ५०५ | धारणा | ५१७ | पारिणामिक भाव | ४२, ४३ |
| मानोपयोग | ९३३ | ध्रुव (मान) | ५१९ | पिचुलि | ५३८ |
| | | ध्रुवभागहार | ६२८, ६३० | पिचुलि पिचुलि | ५३८ |
| त | | | | पुण्डरीक | ६१५ |
| ठक | ५२१ | न | | पुद्गल | २३१ |
| ठाग | ४७ | नट | ६३, ७१ | पूर्वस्पर्धक | १२१, १२५ |
| तिर्द्विपति | २७२ | नारायण | ६०० | पैपलाद | ६०० |
| तेजोपेक्षा | ७१० | नानागुणहानि | १२२ | पोत | १५७ |
| वपदान | २३१ | भारकगति | २७८ | प्रक्षेपक | ५३८ |
| वपकाली | २३२ | नामधरय | ३५९ | प्रक्षेपक प्रक्षेपक | ५३८ |
| विजोःकविन्दुवार | ६१२ | नाम सामाधिक | ६१३ | प्रथमानुयोग | ६०१ |
| | | निगोदकामयसिधिति | २२८ | प्रतिपादी | ६२१ |
| व | | निरनिगोद | ३३० | प्रतिपात्तिसमास | ५७३ |
| वक्रवन्दुवन्द | ७५५ | निर्गुणधर | ५१८, ५६९ | प्रत्यकाच | २१७ |
| दृष्टिः | ५९९ | निर्गुणधरति | २५५, २६१ | प्रत्यगुल | २१६, २४२, २४४ |
| दर्वि | ६९१ | निर्गुणधरति | ५९७ | प्रत्यगुली | २१६ |
| दर्विनेह | ४३, ४६ | निर्गुणधरति | ६१६ | प्रतिक्रमण | ६१६ |
| दर्विनेपान | ९३३ | निर्गुणधरति | ५१९ | प्रतिपत्तिपु. | ५७२ |
| दर्विनेपानि | ९३५ | निर्गुणधरति | ७०८ | प्रतीत्यवस्थ | ३१० |
| दर्विनेपानि | २८१ | निर्गुणधरति | ७२० | प्रत्यय | ५३१ |
| दर्विनेपानि | ६०, ६१, ४६, ६७ | निर्गुणधरति | ३७९ | प्रत्यभिज्ञान | ५२०, ५३१ |
| दर्विनेपानि | ६३०, ६३२ | प | | प्रत्यास्मानुर्द | ९१० |
| दर्विनेपानि | १२३ | पंचाङ्क | ५३१, ५५३, ५५५ | प्रत्येक धरीर | ३१६ |
| दर्विनेपानि | ४९३ | पञ्चभुजान | ५७० | प्रत्येकधरोपरवर्षमा | ८३० |
| दर्विनेपानि | ४९३ | पञ्चवक्त्रधनु. | ५७२ | प्रत्यक्षिरेत | ४१, ४६, ६१ |
| दर्विनेपानि | २१४ | पञ्चवक्त्रधनु. | ७१० | प्रत्यापार | ५७० |
| दर्विनेपानि | ११७, ११९ | पञ्चवक्त्रधनु. | ७१३ | प्रत्यापानुज | २३२ |
| दर्विनेपानि | ६१८ | पञ्चवक्त्रधनु. | ७१३ | प्रत्यापार | ६२, ६३ |
| दर्विनेपानि | ६१९ | पञ्चवक्त्रधनु. | ७१३ | प्रत्ययमा | ३१, ३५ |
| दर्विनेपानि | ४५५ | पञ्चवक्त्रधनु. | ७१३ | प्रत्यय | ४८ |
| दर्विनेपानि | २१६, २१९ | पञ्चवक्त्रधनु. | ७१३ | | |

| | | | | | |
|-------------------------|----------|-----------------------|-----------------|--------------------------|-------------------|
| वैदिकिक काययोग | ३७० | संज्ञासंयत | ४० | गिद्ध | ४२, १३७ |
| वैदिकिक विप्रका. | ३७१ | संनम | १८१ | गिद्धवति | २८२ |
| वैदिकिक | ११४ | संवृति तस्य | ३१९ | गिद्धवत्प्रेतो | ४९ |
| वैदिकिकवाद | १०० | संज्ञा (योनि) | १९९ | गुणमनिगोर लभ्यप्राप्तक | |
| वैदिकिक | १४० | संज्ञेयो कथा | ५९७ | ५२८, ५२९ ५३० | |
| व्यवहारनाल | ५१४ | सांख्यद्वारिक प्रत्यय | ५२१ | गुणमद्वि | १२१, १२५ |
| व्यवहारनाल | ८०८, ८११ | गणपरत | १०० | गुणमगासाय (गु.) | ११, १२१, १२५, १२६ |
| व्यवहारनाल | २३५ | गणप्रवाद | ६०९ | गुणमगासाय संयम | १८६ |
| व्यवहारनाल | २३६ | गणप्रयोग | ३५५ | गुणंगुण | २१६, २४२, २८४ |
| व्यवहारनाल | ३६० | गणप्रयोग | ३५७ | गुण | १०१ |
| व्याख्याप्रज्ञाति | १०१ | गणप्रज्ञाति | १४० | गुण कर्ताय | ५९३ |
| व्याख्याप्रज्ञाति (अंग) | ५९५ | गणक | ५३१, ५५३, ५५४ | गुणंप्रज्ञाति | १०१ |
| व्याख्याप्रज्ञाति | ६०० | गणप्रतिष्ठित प्रत्येक | ३१७ | गणकमहा | ४५६ |
| व्याख्या | ६०० | गणप्र | ८०८ | गणकमहा | ७१३ |
| | | गणप्रयोग | ५९४ | स्तोक | ८१० |
| | | गणप्रयोग | ३८० | स्वल्पता | १०२ |
| | | गणप्रयोग | ७३५, ८९६ | स्थापनाशर | ५६८, ५६९ |
| | | गणप्रयोग | ८०१ | स्थानाग | ५९३ |
| | | गणप्रयोग | ५४, ५७ | स्थापना शरय | ३५९ |
| | | गणप्रयोग | ४० | स्थापनासामाधिक | ६१३ |
| | | गणप्रयोग | ५१ | स्पर्श (धोत्र) | ७६० |
| | | गणप्रयोग | ५२, ८८७ | स्मृति | ५२१ |
| | | गणप्रयोग | ४१, १२८ | स्वधेन परिवर्तन | ७९३ |
| | | गणप्रयोग | ८०१ | स्वरूपविपर्यय | ४९ |
| | | गणप्रयोग | ६२०, ६२१ | स्वस्थानाप्रमत्त | ७९ |
| | | गणप्रयोग | १०१ | स्वस्थान स्वस्थान | ७३५ |
| | | गणप्रयोग | २४१, २४९ | स्वष्टिभय | ६०० |
| | | गणप्रयोग | ७९, ८० | स्थितिकाष्ठकोत्तरण | १०४ |
| | | गणप्रयोग | ६०० | स्थितिकान्धापसरण | १०५ |
| | | गणप्रयोग | ३१६, ३२१ | स्थितिकान्धाप्यवसायस्थान | २२७ |
| | | गणप्रयोग | २७६ | | |
| | | गणप्रयोग | ६१३ | | |
| | | गणप्रयोग | ६८४ | | |
| | | गणप्रयोग | ४३, ५० | | |
| | | गणप्रयोग | ४०, ५०, ५१, ८८७ | | |
| | | | | ह | |
| | | | | हरिश्मथु | ६०० |
| | | | | हारीत | ६०० |
| | | | | हीयमान | ६२० |